अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Synthesis, Structure And Spectral Studies Of Some Thorium (IV) And Dioxouranium (VI) Complexes With Nitrogen Donor Ligand (Narendra Kumar Sharma, S. N. Dikshit) 12

06. Different Treatment Techniques For Organic Pollutants (Advance Oxidation Process) (Sunaina Chouhan) 15

07. Flora Of Kanha National Park - An Overview (Dr. Shail Bala Sanghi) 17

08. Studies On Recycling Of Agricultural Waste By Earthworm, For Sustainable Development Of Environment (Dr. Seema Bhola) 21

09. Incidence Of Cancer Of Ear Nose & Throat At Satna (Dr. Rashmi Singh) 23

10. ग्लोबल वार्मिंग – जीव अस्तित्व के लिये चुनौतियाँ एवं समाधान (डॉ. साधना जैन) 25

(Home Science / गृह विज्ञान)

11. Socio Economic Status Of Bhariya Tribes Of Patalkot Valley, Tamia Block, Chhindwara Distt Madhya Pradesh (Kavita Juneja, Dr. Meera Vaidya, Dr. Nandita Sarkar) 28

12. Parent Child Relationship And Academic Achievement Of Early Adolescent Year (Dr. Nandini Rekhade) 31

13. A Comparative Study Of Packed Lunch Brought By Children Of Working And Non-Working Mothers (Dr. Shakti Sharma) 33

14. Fortification Of Food & Its Significance (Dr. Rashmi Verma) 35

15. A Cross Sectional Study For Assessment Of Awareness Regarding Nutrition Among Adolescent Girls in Rewa City (Dr. Abha Goel, Sangita Sharma) 37

16. बालक–बालिकाओं द्वारा भोजन संबंधी आदतों में बदलाव पर अध्ययन सागर शहर के संदर्भ में (डॉ. आराधना श्रीवास, डॉ. रेनूबाला शर्मा, डॉ. मंजू दुबे) 39

17. मधुमेह देखभाल में मनोवैज्ञानिक की भूमिका (डॉ. मोहिनी सकरगायें) 42

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

18. A Study On Consumer Buying Preference Towards Original Jewellery V/S Plated Jewellerye (Prof. Rajesh Jain, Astha Gupta, Shikha Agrawal) 45

19. Role Of Self Help Groups And Micro Finance For Development Of Rural Women (A Case Study Of Rewa District) (Gaurav Trivedi) 49

20. Role Of Intermediary In Transport Department (A Government Undertaking) In India (Dr. Pradeep Chaurasia) 54
21. Impact Of Modernization On Productivity Growth In Agricultural Sector (Dr. D. N. Purohit, Dr. Rajesh Jain) 58
22. Impact Economic Liberalization On The Economics Of State Government With Special Reference To India (Dr. Deepali Behere) 61
23. A Role Of Microfinance Institution Development In India (Dr. Rajiv Jhalani, Pinky Joshi) 64
24. Women Entrepreneurship And Govt. Policies In India (Dr. Iffat Khan) 67
25. म.प्र. सरकार के राजस्व – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 69
26. होशंगाबाद जिले के कृषि विकास में किसान क्रेडिट कार्ड योजना के योगदान का एक अध्ययन (जागेश्वर प्रसाद चौरे) 75
27. निवेश, वृद्धि और विकास के लिए सुधार (डॉ. राजू रैदास) 77
28. उद्यमिता एवं कौशल विकास में चुनौतियां (डॉ. डी. एस. आकरे) 80
29. रंगीन कपास का व्यवसायिक उत्पादन एवं शासकीय नीति – एक अध्ययन (डॉ. दिपेश आर. उपाध्याय) 82
30. म.प्र. में कृषि आधारित उद्योगों का आर्थिक विकास में महत्व (डॉ. पी. सी. काशिव) 85
31. मध्यप्रदेश बजट 2015–16 का अध्ययन (प्रो. जयराम बघेल, डॉ. जयराम सोलंकी) 87
32. मेक इन इंडिया–भारत को विनिर्माण हब बनाने की सबसे बड़ी कवायद (डॉ. भावना बर्मन, प्रो. अंचल रामटेके) 89
33. जलवायु परिवर्तन आर्थिक विकास में चुनौति (डॉ. रमेश कुमार रावत) 91
34. पर्यटन विकास की असीम संभावनाओं वाला जिला – छिन्दवाड़ा (डॉ. डी. एस. आकरे) 93

(Economics / अर्थशास्त्र)

35. असंगठित क्षेत्र में कार्यरत प्रवासी महिला श्रमिकों के जीवन स्तर एवं कार्यदशाओं का एक अध्ययन (बड़वानी जिले की सेंधवा तहसील के संदर्भ में) (डॉ. प्रकाशचंद रांका, हीरालाल खर्ते) 94
36. जनजातीय अर्थव्यवस्था पर जनसंख्या के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन (झाबुआ विकासखंड के विशेष संदर्भ में) (डॉ. गीता दुबे) 97
37. भारतीय गांवो का बदलता परिवेश (किरण अग्रवाल) 101

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

38. Panchayati In Rajasthan - An Historical Perspective (Sangeeta Rachiyata, Mahesh Kumar Rachiyata) 103
39. Impact Of Coalition Politics On Indian Democracy (Ishfaq Ahmad Wani) 106
40. Coalition Scenario In India-At National Level (Hilal Ahmad Mir, Dr. Ranjana Mishra) 109
41. India And Globalization - A New Outlook (Dr. Prevesh Pandey, Tariq Mohiuddin) 112
42. भारत में महिलाओं की राजनैतिक जागरूकता एवं सशक्तिकरण (डॉ. ज्योति मार्टिन) 115
43. महात्मा गांधी के सिद्धांत तथा नई पीढ़ी का दृष्टिकोण – एक अध्ययन (डॉ. प्रदीप कुमार चतुर्वेदी) 117

(History / इतिहास)

44. विन्ध्य क्षेत्रीय इतिहास पर भूगोल का प्रभाव (डॉ. आर. के. शर्मा) 118
45. अवध का नवाब सआदत खां बुर्हानुल्मुल्क व्यक्तित्व एवं कृतित्व (डॉ. आकाश ताहिर) 121
46. आतंकवाद के कारण और उसके विशिष्ट क्षेत्र (नीलेश शर्मा) 123

(Sociology / समाजशास्त्र)

47. Role Of Communication In Development Of Rural Society (Vasudha Jahagirdar) 125
48. बिखरते रिश्ते समाजशास्त्रीय अध्ययन विशेष सन्दर्भ – रीवा शहर (डॉ. गौहर हुजैफा खान) 128
49. डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय एवं जातिविहीन समतामूलक समाज (डॉ. मनोज वानखेड़े) 131
50. बालश्रम – एक सामाजिक समस्या (मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन) 134
(सुमन सिंह)
51. सोशल मीड़िया का समाज पर प्रभाव (महाविद्यालयीन छात्राओं के अध्ययन पर आधारित) (डॉ. राजश्री शाह) 138
52. 'एच.आई.वी./एड्स और जागरूकता' (खरगोन जिले के सनावद तहसील के संदर्भ में) (आशीष नीलकंठ) 140
53. वनाधिकार कानून और जनजातीय महिलाओं की स्थिति (अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में) 143
(प्रो. आई. एस. सस्त्या)
54. महिला अधिकार (कानून) एवं सशक्तिकरण (फरहत मंसूरी, डॉ. अर्चना गौर) 148
55. भिक्षावृत्ति एक सामाजिक समस्या भोपाल शहर के विशेष सन्दर्भ में एक अध्ययन (डॉ. रंजना श्रीवास्तव) 150
56. प्रगतिशील समाज और बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार (डॉ. रेणुका उपाध्याय) 152
57. भारत में चिकित्सकीय लापरवाही और कानून (डॉ. ज्योति मेहता) 154

(Geography / भूगोल)

58. सिंचाई परियोजनाओं का पर्यावरण पर प्रभाव–मण्डला जिले के संदर्भ में (डॉ. रामसिंह धुर्वे) 155
59. जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास (मोहिनी जादौन) 159
60. धार जिले में पर्यटन की संभावनाएँ (किरण मण्डलोई) 162
61. वैश्विक जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभाव–एक आकलन (डॉ. प्रतीक चौबे, जियालाल राठौर) 164

(Philosophy / दर्शनशास्त्र)

62. एकात्म मानव वाद – कुछ मुख्य बिंदु (डॉ. आशा चौधरी) 166

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

63. Metaphor Of Painting In The Waste Land By T. S. Eliot (Sehbha Jafri) 168

64. A Critical Study Of Vedanta Philosophy In The Novels Of Raja Rao (Dr. Rajkumari Sudhir) 171
65. A Study of Social Realism in Charles Dickens's Novels (With Special Reference to Oliver Twist and David Copperfield) (Yogshikha Kanhere) 174
66. The Concept Of Humanity In Kalidas And Wordsworth (Dr. Seema Sharma) 176
67. Nostalgia In Modern Literature (Dr. Uma Pandya) 178
68. Partition - Impact On Human Values (Dr. Vikas Jaoolkar, Tanuja Sharma) 180
69. Need for Value Based Politics in India (V.M. Audichya) 182

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

70. भारत रत्न अटल बिहारी वाजपेयी का रचनात्मक संसार (डॉ. अनसूया अग्रवाल) 184
71. चुटकुला विधा और ध्रुवस्वामिनी नाटक में निहित हास्य'व्यंग्य (डॉ. इला द्विवेदी) 187
72. मानस में नारी चरित्र – सृष्टि (डॉ. अंजली सिंह) 189
73. प्रवासी साहित्यकार सुनीता जैन के उपन्यासों में नारी– एक अनुशीलन (डॉ. चन्दा तलेरा जैन, संध्या प्रजापति) 191
74. इक्कीसवीं सदी में राष्ट्रभाषा का योगदान (मंशाराम बघेल) 193
75. नील नीलधर श्याम (डॉ. नीलमणि दुबे) 195
76. ग्रामीण समाज एवं संचार योजना (डॉ. वंदना अग्निहोत्री) 197
77. प्रवासी भारतीय लेखक सुरेशचन्द्र शुक्ल शरद आलोक के साहित्यिक और राजनैतिक यात्रा के विभिन्न पड़ाव (दीपक कुमार काकेश्वर, डॉ. उमेश काकेश्वर) 199
78. अरूण कमल के काव्य संग्रह – एक अध्ययन (डॉ. दद्दु सिंह कनेल) 202
79. अनुभूत सत्यों को उद्घाटित करता महादेवी वर्मा का गद्य साहित्य (डॉ. कल्पना श्रीवास्तव) 205
80. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों में नारी (प्रमीला) 207
81. शुक्ल जी के निबंधों में मनोभाव निरूपण (डॉ. पारसमणि गुप्ता) 209

(Music / संगीत)

82. संगीत कला – ऐतिहासिक परिचय तथा महत्व (डॉ. बी. वर्षा) 210
83. संत ज्ञानेश्वर जी के अभंग (एक सांगीतिक प्रदेय) (डॉ. श्रीपाद आरोणकर) 213

(Education / शिक्षा)

84. Shift From Objective To Subjective Factors For Improving Education In Government Schools (Dr. Anil Kumar Jain, Gaurav Jain) 215
85. Reading On Text Paper Versus Computer Screen - Effects On Reading Skill (Dr. Sarita Garg) 219
86. Theoretical Rationale Of Effectiveness In Mathematics Teaching- An Overview (Kumud Dikshit) 222
87. शिक्षा आयोग एवं शिक्षा – (एक अध्ययन) (डॉ. प्रीति जोशी) 224
88. विद्यार्थी जीवन और रैगिंग (पूजा नागर) 227

89. विद्यार्थियों में कौशल उन्नयन समाज की महत्वपूर्ण गतिविधि (विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय –2)(सुनील कुमार सिकरवार) 230
90. भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता के आयाम (डॉ. मंजु सक्सेना, डॉ. ए. के. सक्सेना) 233
91. विशिष्ट शिक्षा की अवधारणा एवं समन्वित शिक्षा की उसमें उपादेयता (जयबाला गुप्ता) 235
92. उच्च शिक्षा की भूमिका और समाज के प्रति संस्थागत जवाबदेही (प्रो. एस.सी. राठौर) 237
93. गुणवत्ता व गुणवत्ता विस्तार वर्ष की कार्ययोजना (विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय –1)239 ... (सुनील कुमार सिकरवार)
94. रैगिंग निवारण में विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय की भूमिका (पूजा नागर) 241

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

95. Yoga And Traditional Exercise Cures Dental, Bones And Muscles Problems .....243 (Dr. Rajesh Masatkar)
96. Effect Of Ujjaiyei Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players .....248 (Grace S. Singh, Dr. V. Perumal)
97. लिम्बाराम अहारी का खेल प्रशिक्षक के रुप में प्रदर्शन (डॉ. गजेन्द्र सिंह सरोहा, मधु कंवर) 252

(Others / अन्य)

98. स्मार्ट फोन का नर्सिंग छात्राओं पर प्रभाव (नर्सिंग स्कूल इन्दौर के विशेष संदर्भ में) ..... 254 (कमलिनी विनसेन्ट, डॉ. अमृता खत्री)
99. महिलाओं के विरूद्ध हिंसा (घरेलू हिंसा निषेध अधिनियम, 2006 के विशेष संदर्भ में) (चित्रा कुँवर चुन्ड़ावत) 256
100. भारत में पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का विवेचनात्मक अध्ययन (प्रो. हेमन्त शर्मा, अरविन्द अतुलकर) 259
101. पर्यावरण प्रदूषण और उसके नियन्त्रण (डॉ. जे. एल. हनोते) 262
102. जनजातीय महिलाओं के विकास में स्वसहायता समूह की भूमिका (अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में) ..... 264 (दिलीप चौंगड)
103. प्रधानमंत्री जन धन योजना –2014 (डॉ. नीना गोयल) 267
104. भारत में पर्यावरणीय समस्याएँ और सरकार की नीतियाँ (महेन्द्र सिंह चौहान) 269
105. नारी सशक्तिकरण एवं वर्तमान परिवेश (डॉ. कविता चौकसे) 271
106. Effect of some selected Agrochemicals on stomatal behaviour of *Cyamopsis tetragonoloba* .....273 (Linn) Taub. (Dr. Indu Bala Soni)
107. महावीरचरित का रस–विवेचन (डॉ. कौशल्या शर्मा) 277
108. The Views of Sri Aurobindo on Philosophy and Education (Dr. Sitaram) 279
109. XRD Studies of Locally Sourced Asbestos (Dr. Nira Talesra) 282
110. Mossbauer Spectroscopic Study of Rajsamandasbestos (Dr. Nira Talesra) 284
111. सौराष्ट्र विलय में सरदार बल्लभ भाई पटेल का योगदान (डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान) 286
112. परिवर्तनों का युग – सल्तनत युग (डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख) 288
113. The Doctors' Ways Are Best, When We Are In Our Worst (Dr. Chakrapani Upadhyay) 291
114. अमूर्त कला के विविध आयाम (डॉ. चेतना टिक्कीवाल) 293
115. Strategies for Prevention of lake degradation with special reference to lakes of Udaipur, ...295 Rajasthan (Dr. Vinita Rathore)
116. प्रकृति की संवेदनाओं के चितेरे लालचन्द मारोठिया (डॉ. रेखा पंचोली) 297
117. चतुरी चमार और वाजिब उल अर्ज का कर्ज: निराला के कथा–शिल्प और नव–जागरण का अनुशीलन (डॉ. रमेश यादव) 300

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ..... प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✲✲✲ विज्ञान संकाय ✲✲✲

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:– ..... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

✲✲✲ वाणिज्य संकाय ✲✲✲

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

✲✲✲ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✲✲✲

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✲✲✲ विधि संकाय ✲✲✲

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✲✲✲ कला संकाय ✲✲✲

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Synthesis, Structure And Spectral Studies Of Some Thorium (IV) And Dioxouranium (VI) Complexes With Nitrogen Donor Ligand

Narendra Kumar Sharma * S. N. Dikshit **

Abstract - We report here series of new the (IV) and $V0_2$ (VI) complexes with Schiff base having general composition Th X_4.nL (X=NO_3, n=2) and UO_2X_2.nl (X=CH_3 COO, n=2), Where L = Schiff base.The complexes were characterized on the basis of analytical conductance, molecular weight and spectral studies. The Schiff base behave as neutral monodentate ligand which coordinate to the central metal atom through azomethine nitrogen.
Key words – Schiff base ligand, Th(IV) and UO_2 (VI)

Introduction - A number of complexes with linear UO_2 (VI) ion in 6- or 8- coordinator number and with th(IV) in 6- , 8- or 10 coordination number known ref (1-6). In the present work, we wish to report the synthesis and characterization of series of complexes of these metal ins with Schiff base ligand which is derived from the condensation of p-toludine and 2-methyl 4-(NN-bis -2'-cyanoethyl) aminobenzaldehyde.

Preparation of 4-(N-N bis – 2'- Cyanoethyl) amino benzaldehyde -

It was moduled on the procedure give in the literature ref. J.T. Brain Holtz F.g. Mann I. chem.. Soc. 1817 (1953)
Ref. V.S. Jolly and P.I. Ittyrah J. Indian Chem. Soc. 46, 997 (1969)

Preparation of Schiff base ligand -

A mixture of the aldehyde (1 mmol) and the. P-toluidine (1 mmol) in absolute ethanol in taken in a round bottom flask and two drops of piperdine were added. The mixture was refluxed for 4-5 hrs. On cooling dark coloured solid separated which was filtered under suction and recrystalized, from ethanol as yellow solids.

Stru.of Ligand

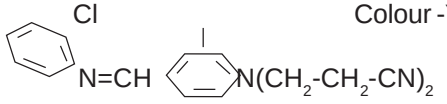

M.P. -160^{0}C
Yield -87%
Colour -Yellow

4-NN-bis-2'- Cyanoethyl amino bengalidine o-chloroaniline (4CABCA)

Synthesis of complexes - The respective metal salt solutions were treated with ligand solution in the required molar concentrations. Fn some of the casers complexes were isolated immediately in cold while in some cases in not solutions. In other cases the resulting solutions were refluxed for 2-3 hrs at Ca 65-70^{0}c. The solvents uses were ethanol, Isopropanol or acetone. The complexes were collected washed with the solvents and finally with ether and dried in vacuo over anlyd. $CaCl_2$.

$$Th(NO_3)_4 + 2L \xrightarrow[heat\ and\ reflux]{Isopropanol,\ 65-70^0 c} Th(L)_2(NO_3)_4$$

$$UO_2(CH_3COO)_2 + 2L \xrightarrow[heat\ and\ reflux]{Isopropand\ 65-72^0 c} UO_2(L)_2(CH_3COO)_2$$

Results and Discussion- The analytical data Table – 1 indicate that the complex are non-ionic in nature the complexes are fairly stable at room temperature except. The lodo complexes which convert in to stickly mass after some time (7-12)

Table – 1 (See in the next page)

I.R. SPECTRAL STUDIES-The complexes are characterized on the basis of their I.R. spectra. It is clear from the spectral data that on complex formation there is a considerable shift in the azomethine V(-C=N-). show that the bonding site is the azomethine nitrogen through which the ligand binds to the metal ion (13-14).

I.R. spectral bonds are given in table -02

Table – 2

Compounds	ν (C=N)	(C-N)	(M-N)
Ligand	1597.1 S	1178.5	-
Complex 1	1520.6 m	1174.5 s	542 w
Complex 2	1531 m	1162 s	540 w

The preferred coordination number of Th(IV) metal atom is 6 o10 but higher coordination numbers have also been observed (15). In the nitrate complex of this ligand the thorium metal is then coordinated it is surrounded by 8-coordinated oxygen atoms and two azomethine nitrogen atoms.

Electronic Spectral Studies - The electronic spectral studies of these complexes are of loss interest since metal ion does not contain any unpaired electrons in its outer most

* Deptt. of Chemistry, S.M.S. Govt. Science College, Gwalior (M.P.) INDIA
** Deptt. of Chemistry, S.M.S. Govt. Science College, Gwalior (M.P.) INDIA

shell. All the complexes which are studies on the bases of electronic spectra exhibit $n \rightarrow \pi^*$ bands which are around 240-220 mm and bands at 330-250 nm which corresponds to $\pi - \pi^*$ transition (14-16).

The electronic spectral data of some of the representative complexes along with their corresponding ligands in listed in table-3

Table-3

Compound	$n \rightarrow \pi^*$	$\pi - \pi^*$	O-U-O absorption/ Metal-N- absorption
Ligand	238.8 nm	322 nm	-
Complex - 1	235 nm	260 nm	361
Complex - 2	220 nm	285 nm	315

Suggested structures of the complexes - The preffered coordination number of Th(IV) metal atom is 6 or 10 but higher coordination numbers have also been observed (15). It has been observed by conductance and molecular weight value. The nitrato group are linked to through two oxygen atoms, each nitrate group functioning as.a bidentate ligand (16). In the nitrate complex of this ligand the thorium metal is 10 coordinated as it is surrounded by eight coordinated oxygen atoms and two azomethine nitrogen atoms.

For dioxouranium (VI) acetato complex I.R. data reveal that the anions are bidentately covalently bonded to the metal atom there by generating an 8-coordination number on the central Uranium atom.

The probable coordination structure is forth(IV) and UO_2 (VI) metal complexes of the Schiff base are given in fig. 1 and 2. **(See in next page)**

References :-

1. Zacharsiasan W.H. Acta Cryst, 1,795 (1954)
2. Arora Kishore, Asian J. Che., 7(2), 424 (1991)
3. Agarwal R.L., Arora Kishore, Agarwal Himanshu and Sarin R.K. Synth. R.K. Synth. react in Inorg. Met-Org. Chem., 25(6), 899(1995)
4. Arora Kishore, Sharma DP and Pathak M.C. Orient J. Chem.,15 (2), 331 (1999)
5. Agarwal R.K. Arora Kishor and Dutt Prashant, Synth. React. Inorg. and Met-Org. Chem., 24 (2) 301 (1994)
6. S.S. Sandhu S.S. Sandhu (Jr.) Indian J. chem.; 11A, 369 (1973)
7. N.V. Sidgewick, the Chemical elements and their compounds Oxford University, Press (1952)
8. N.V. Sawant and C.C. Patel J. Inorg. NuCl. che., 34, 1462 (1972)
9. K.Aruna, sakina Bootwala, Mobasna shera, Tariq, Christopher Fernandes and Sachin Somasundaran, International J.Pharm., Sci. and Res. 5(2) 400, 2014.
10. P. Ramamurti, J. Inorg NuCl Che., 25, 310 (1963)
11. Arora KishorAgarwal D.D. and Goyal R.C. Asian J. Che 12(3) 893(2000)
12. Smith B.C. and Wasset M.A. I. Che., Soc. (A), 1817 (1967)
13. B.C. Smith and M.a. Wassef, J. Chem. Soc. (A), 1817(1968)
14. J.r. Ferraro and A.O. Walker, J. Chem. Soc., 45, 550 (1960)
15. William, H., Stephen, V. Theory and Application of microbiological assay, Academic Press: SAN Diego, CA, USA, 1989, P.320
16. Shivankar V.S., Vaidya R.B, Dharwadkar S.R., Jhankar N.V., Syn. React, Inorg. Metal-Org. Chem., 33, 1597 (2003).

Table – 1

Complexes	Colour	M.P.	Yield	M.W. found (calcd.)	Analysis	Found	(Calcd.) Analysis	^(Ohm^{-1} cm^{2}mole^{-1}
					C	H	N	
$Th(NO_3)_4$ 2(4CABCA)	Yellow	160	75	1000 (1170)	46.20 (44.10)	3.90 (4.60)	12.20 (13.10)	3.9
$UO_2(CH_3COO)_2$ 2(4CABCA)	Yellow	150	80	900 (1078)	44.18 (47.20)	3.90 (3.20)	10.11 (12.20)	3.8

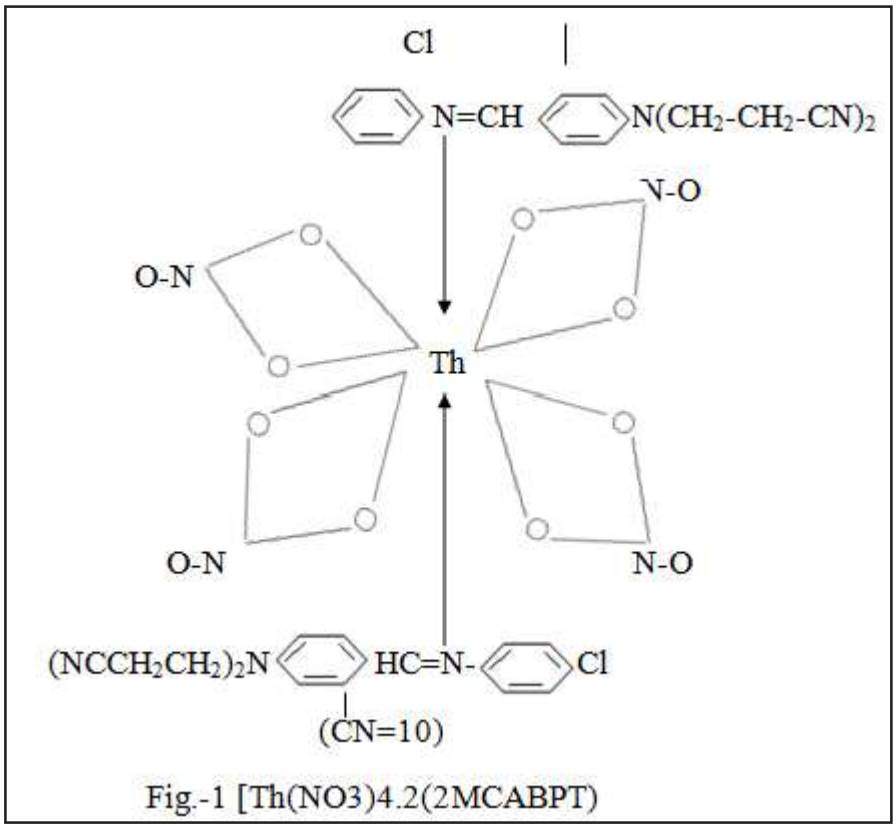

Fig.-1 [Th(NO3)4.2(2MCABPT)

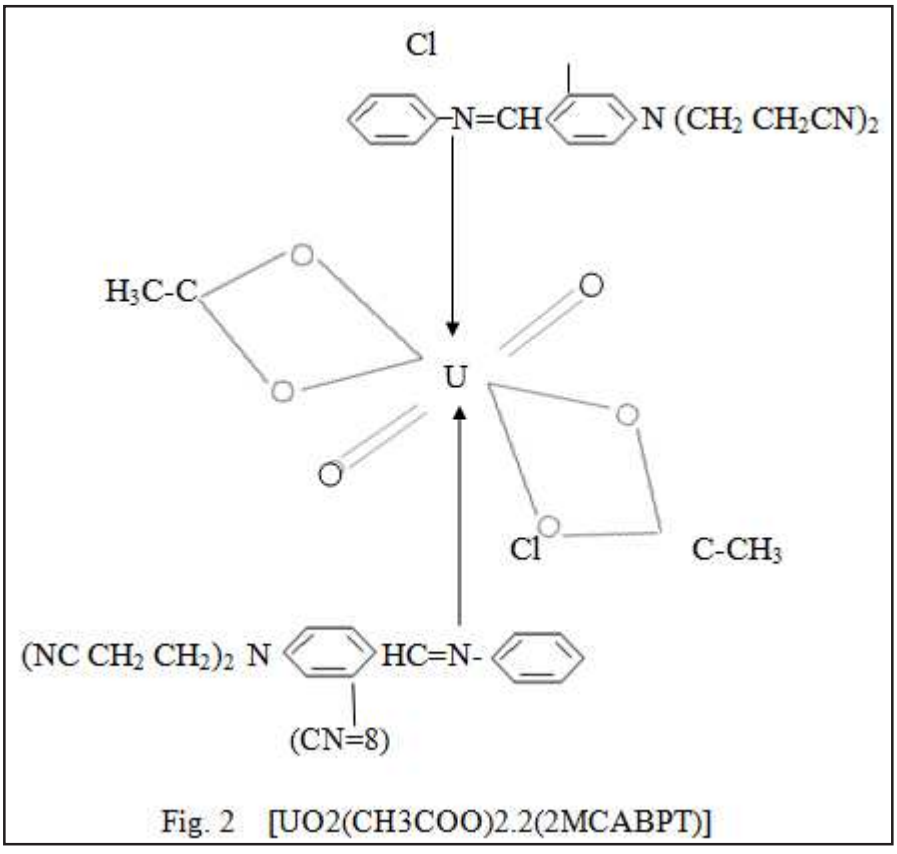

Fig. 2 [UO2(CH3COO)2.2(2MCABPT)]

****

Different Treatment Techniques For Organic Pollutants (Advance Oxidation Process)

Sunaina Chouhan *

Introduction - The beginning of industrialization the variety and quantity of pollutants emitted into the environment have steadily increased. These pollutants may originate from industrial applications such as textile processing, petroleum refining, pesticides, fertilizers, herbicides, detergents insecticides and disinfection byproducts pharmaceuticals volatile organic compounds plastics noxious gases like NO_x, So_x, CO, ammonia and pathogens like bacteria, fungi. Many dyes discharged into rivers are harmful to the aquatic life, because some of these effluent streams contain mixtures of heavy metal ions (i. e. Cr, Al, Cu) and other toxic organic pollutants including poly vinyl alcohol, starches, various surfactants, biocides and other all of which have varying biochemical oxygen demand. Also the resulting wastewaters are highly toxic as some of them contain a large amount of metal complexing dyes Dyes often contain elements such as nitrogen, chlorine or sulphur, The oxidation products of these molecules may be more toxic than the parent molecule . Many of the dyes are however, difficult to removes they are stable to light and heat and are biologically non degradable and can bring about adverse impacts on the living organism being exposed to the contaminated water. A widely used colorant in textile and foodstuffs can induce irritation to human skin, eyes and respiratory tract also it is carcinogenic and chromically toxic towards human beings Textile dyeing not only impart color to water sources but also can cause environmental damage to living organisms by stopping the reoxygenation capacity of water and also blocking sunlight, thereby, Disturbing the natural growth activity of aquatic life. Textile wastewater includes a large variety of dyes and chemicals additions that make the environmental challenge for textile industry not only as liquid waste but also in its chemical composition. Main pollution in textile waste water comes front dyeing and finishing processes. These processes require the input of a wide range of chemicals and dyestuff which generally are organic compounds of complex structure. major pollutants in textile wastewater are high suspended solids, chemical oxygen demand, heat, color acidity and other soluble substances. The removal of color from textile industry and dyestuff manufacturing industry wastewater represents a major environmental concern the use of conventional water and wastewater treatment processes becomes increasingly challenged with the identification of more and more contaminants rapid growth of population and industrial activities and diminishing availability of water resources. Conventional methods used to treat dye effluents are classified as physical, biological or chemical methods each having its own drawbacks, physical methods such as chemical or electro-flocculation, reverse osmosis and adsorption are not destructive and mainly create pollutant concentrates one difficulty with this method, is that they are not destructive but only transfer the contamination from one phase to another therefore, a new and different kind of pollution is faced which calls for further treatment the large degree of aromatics present in dye molecules and the stability of dyes prevent mineralization of these compounds by conventional aerobic biological treatment processes Anaerobic treatment can remove the color of dyes by transforming the bond to aromatic amine (in case of azo dye) that are carcinogenic and more dangerous than dyes on other hand, chemical treatment using strong oxidant chlorine or ozone, has led to more successful results, but they are not economically feasible due to the required high dosages, Advanced oxidation processes (AOPS)have been proposed as the alternative methods for water purification. These methods were based on the generation of very reactive species such as hydroxyl radicals (OH) which are the second strongest oxidative species after fluorine (reduction potential Eo=2.8 V) that oxidize a broad range of pollutants quickly and none selectively (22-23) The versatility of AOP is also enhanced by the fact that they offer different possible ways for OH radicals Generation of OH is commonly accelerated by combining O_3, H_2O_2, TiO_2, UV radiation and electron beam irradiation. Of these, O_3/H_2O_2,O_3/UV hold the greatest promise to oxidize textile wastewater. Among AOPs, heterogeneous photo catalysis using ZnO as photo catalyst appears as the most emerging destructive technology, various types of dyes have been successfully degraded in a batch scale by using both artificial irradiation and solar technology. The key advantage of this method is its destructive nature, it does not involve mass transfer and it can be carried our under ambient conditions and may lead to complete mineralization of organic pollutants. Solar technology can be used as alternative to UV lamps to reduce the degradation process costs Thus, ZnO assisted photo catalytic degradation of contaminants using solar light has been successfully used being an economically variable process since solar energy is an

*Asst. Professor (Chemistry) Govt. P. G. College, Khargone (M.P.) INDIA

abundant natural energy source and can be used instead of artificial light source which are costly and hazardous. Advanced oxidation processes (AOPs) are alternative techniques of destruction of harmful organic pollutants from wastewaters. These processes involve chemical oxidation processes using hydrogen peroxide, ozone and peroxide Fenton reagent ultra-violet enhanced oxidation such as UV/O_3,UV/H_2O_2,UV/air, wet air oxidation and catalytic wet air oxidation (where air is used as the oxidant). AOPs have been applied for destructing hazardous organic chemical in water, destroys the contaminants through an oxidative breakdown initiated by a powerful oxidizing species such as hydroxyl radicals which are the most powerful oxidizing species after fluorine.

Process of AOPs - Photocatalysis is a phenomenon by which a relatively small amount of light absorbing substance called a photocatalyst change the rate of chemical reaction without itself being consumed Photocatalysis has become an increasingly important field and a heavily researched topic by all field of science, including physic, chemistry and surface science and is pursued today to solve an ever widening variety of environmental problems However the first mention of photocatalysis was by Plotnikov in the 1930s in his book entitled "Allaemeine Photochemie" . The next major development followed in the 1950s when Markhani and Laidler performed a kinetic study of photo –oxidation on the surface of zinc oxide in a aqueous suspension.

AOPs increase the rate of an oxidation process by the use of highly reactive species, the most widely used being the hydroxyl radical OH, which can increase a reaction rate by a million to a billion times. Basic oxidation processes involve the conversion of a chemical state of a contaminants and through a series of multi step reactions form the end products such as low molecular weight carboxylic acids that are biodegradable, non-toxic, and unregulated for surface discharge, complete, mineralization to CO_2, H_2o, and mineral acids.

Applications of AOPs - AOPs can be applied to many processes involving contaminated industrial wastewater, groundwater, drinking water ultrapure water and process water. Many applications have been for groundwater remediation and the removal of volatile and semi-volatile organic compounds such as chlorinated alkenes, ethers chlorinated alkenes and pesticides. AOPs are also applied for the treatment of industrial wastewater and removal of phenolic compounds, COD, cyanides and ketones. These compounds are commonly encountered in wastewater generated from various industries such as the explosives, resins, wood preservation, aerospace, and electronic industries. Conventional wastewater treatment is based upon various mechanical, biological, physical and chemical processes. This is a combination of many operations like filtration, ultra filtration, flocculation and coagulation adsorption on activated carbon, reverse osmosis, sterilization, active sludge or chemical oxidation on organic pollutants. After filtration and elimination of particles in suspension, biological treatment is needed and the post treatment of the adsorbent materials or solid wastes is necessary and expensive. The drawbacks of these methods are the creation of phases with more concentrated pollutants and unfortunately not all organic pollutants are biodegradable. Among the AOPs, heterogeneous photocatalysis has appeared as the most promising destructive technology leading to the total mineralization of most organic pollutants.

Heterogeneous photocatalysis - Heterogeneous photocatalysis us a technology based on the irradiation of a catalyst usually a semiconductor which may be photo excited to form electron-donor sites (reducing sites) and electron-accentor sites (oxidizing sites), providing great scope as redox reagents. The process is heterogeneous because there are two active phases, solid and liquid. Among several semiconductors, titanium dioxide has proven to be the most suitable for widespread environmental application. TiO_2 is stable to photo and chemical corrosion and inexpensice.TiO_2 has an appropriate energetic separation between its valence and conduction bands, which can be surpassed by the energy of a solar photon. The VB and CB energies of the TiO_2 are estimated to be +3.1 and -0.1 volts, respectively, which means that its band gap energy is 3.2 eV and absorbs in the UV light Hydroxyl radical (OH) is the main oxidizing species responsible for photo oxidation of the organic compounds.

Homogeneous photodegradtion - The applications of homogeneous photo degradation (single-phase system) to treat contaminated waters concerned the use of UV/H_2O_2 and UV/O_3. The use of UV light for photodegradation of pollutants can be classified into two principal areas Direct photodegradation, which proceed from direct excitation of the pollutant by UV light and photo-oxidation, where light, leads oxidative processes principally initiated by hydroxyl radicals. This process involves the use of an oxidant to generate radicals, which attack the organic pollutants to initiate oxidation The three major oxidants used are: hydrogen peroxide (H_2O_2) ozone and photo-fenton system (Fe^{3+}/H_2O_2).

References :-

1. Pare B., Singh P. and Bhagwat v.w. Chmenviron., 4(2008) 12.
2. Kaniou S. Pitarakis K., Barlagianni I., Chemosphere, 60 (2005) 372
3. GalindoC., Jacques P.and Kait A., J.Photochem. Photobiol.A: Chem.141 (2001)47.
4. Internet.

****

Flora Of Kanha National Park - An Overview

Dr. Shail Bala Sanghi *

Abstract - Kanha National Park is the largest National Park and Tiger Reserve located in Mandla and Balaghat districts of Madhya Pradesh, India. Kanha's flora or trees, is the under pinning of the entire ecosystem of the park. Tigers could not live here without prey such as chital, sambar, barasingha & wild boar. These animals in turn, could not sustain without forage that the plant life furnishes for them. Langurs, sloth bears and birds depend on fruits, flowers, nectars and forbs for survival. By many other similar examples an ecosystem approach is as always, the key to a more sensitive accurate understanding and appreciation of the park. The present paper highlights 27 species of trees, which are found in Kanha National Park. Botanical name, Local Name, Family and uses of Plants are given in the table. These plants are the most prominent features of Kanha's extensive flora.
Key Words - Kanha National Parks, flora, Ecosystem.

Introduction - Kanha National Park, also called kanha tiger reserve is one of the largest national parks of Madhya Pradesh state in india. In 1930 s, the present day kanha area was divided into two sanctuaries, Hallon and Banjar of 250 and 300 km^2 respectively. Kanha National Parks was created on 1st june 1955 and in 1973 was made the kanha tiger Reserve. Today it stretches area an area of 940 Km^2 in the two districts Mandla and Balaghat. This makes it the largest national park in central India. The area is the ancestral home of the Gond and Baiga tribes. There are so many varieties of species of plants in the park. For the preservation of the flora some eco- development process are being organized for the buffer zone of Kanha Reserve under the MP forestry project.

The moderate and favourable climate and varied topography supports the growth of rich and varied flora in the park. Over 70 species of Trees are found in Kanha. Sal, saja, Dhawa, Palash, Bija, Mahua, Aam, Aamla, Achar, Harr, Bahera, Arjun, Tendu are the most comman and useful trees species are found in the forest of Kanha Park. The present paper highlights 27 species of Trees with their local name, Botanical name, Families & their useful parts shown in the table -

References :-

1. http//www.kanha.co.uk/tree-in-kanha.html
2. "Kanha Tiger Reserve" Madhya Pradesh forest Department Retrieved 14 April 2010.
3. http//www.Mponline.gov.in/portal/servies/forest/final forest/Foresthome.html
4. http//www.kanha.net/kanha-flora-fauna.html.

Table

S.No.	Botanical Name	Local Name	Family	Discription Of Plant & Uses
1	Shorea robusta	Sal	Dipterocar Paceae	Sal is a moderate slow growing tree and found in abundance in forest of Kanha Park. Its wood is termite resistant and useful in making of furnitures, railway sleepers etc. its stem exudes a gum (viscous paste) used in marine yards for caulking boats, shoe polish etc. Butter extracted from its seed is used in making chocolates.
2	TerminaliaTomentosa (Roxb.) Wight & Arn.	Saja	Combretaceae	They are source of non-wood products like gums, oil, drug preparation etc. it is called crocodile bark tree due to its unique patterns on the bark. Its long and clear bole makes it a good timber value.

* Asst. Prof. (Botany) Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto.) College, Bhopal (M.P.) INDIA

3	Madhuca longifolia (J. Konig) J.F. Macbr.	Mahua/ Indian Butter tree	Sapotaceae	Indian butter tree is very popular among villagers of central India. It is found in majority of areas of Madhya Pradesh. Oil extracted from its seed used as edible oil and in soap industry. Its fleshy flowers are rich source of Vitamin, calcium, sugar source to birds and animals. Its flowers are used in making strong alcoholic brew consumed by local villagers.
4	Butea monosperma (Lam.) Taub.	Palash	Fabaceae	It is also called Palash Tree. Its bright orange flowers appears in month of February & March. During this period it changes the view of forest. Its average height is 6-12 meter. Flower is boiled to extract colour for dye, ink etc. Local people call it “Cheola”. It is good host plant for lac producing insects.
5	Pterocarpus marsupiumRoxburgh	Bija	Fabaceae	It is popularly known as Indian Kino Tree. It is a medium to large in height and have medicinal value in Ayurveda. It is used for treatment of diabetes, inflammation etc.
6	Aegle marmelos (L.) Correa	Bel	Rutaceae	Bel is also known by the name of “stone apple”. Its juice is used in making refreshing drinks and is considered good for stomach. It is used as a ayurvedic remedy for ailments as diarrhea, dysentery, dryness of eye, constipation etc.
7	Ficus bengalensis (L.)	Bar or Bargad	Moraceae	Banyan or Indian Banyan can grow into a giant tree covering several hectares. Seed of fig are dispersed by birds like Indian Mynas, studies have shown that seeds passed through digestive system of bird are more likely to germinate.
8	Syzygium cumini (L.) Skeels	Jamun	Myrtaceae	On first appearance of fruit is in green colour then its changes into pink and later become black on fully ripe stage. Fruit is good for digestive system and other parts of tree also have significant medicinal value. Wild animals like langur, fruit bat, chital relish them. Honey produced from its flower has great medicinal value.
9	Terminalia chebula Retz.	Harra	Combretaceae	Harra or harad tree has great medicinal value in ayurveda. It is moderate to large tree with rounded crown, yellowish-white flowers, spreading branches. Its fruit is used to cure many common disorders like piles, vomiting, throat problem, bleeding disorder, hyperacidity, constipation, hiccough, arthritis ets. It is one of the prominent content of famous Indian household appetizer called “Trifala/triphala churan”
10	Terminalia bellerica (Gaertn.) Roxb.	Bahera	Combretaceae	It is a large tree with leaves 10 to 25cm. long, clustered near ends of branches, small pale green foul-smelling flowers in simple spikes. Healing power of dried bahera fruit is well known in India. Bahera is also one of the three constituents of Triphala. It is also used during cough, stomach disorder, soar throat, constipation, eye disorder, intestinal worms etc.

11	Emblica offcinalis Gaertn.	Indian gooseberry Amla	Euphorbiaceae	Indian gooseberry or Amla is known for ediable spherical fruit. Tree is medium sized tree of 7 to 17mtr. Height. It grows relatively slowly. Fruit is light green color and have great medicinal value. If we observe fruit carefully we can notice six divisions in its body. Amla is another important ingredient of Indian Triphala/Trifala.
12	Adina cordifolia (Roxb.) Hook. F.	Haldu	Rubiaceae	Adina cordifolia is found in forest area of Kanha National Park. Local people know it by the name of Kadam or Haldu. It blossoms during winter season. Its flowers are usually yellow with some shade of pink colour. Bark of tree have been used as antiseptic.
13	Bombax ceiba (L.)	Semal	Malvaceae	Bombox ceiba is commonoly known as cotton tree. Its red flowers with five petals in spring give it beautiful look. Its trunk is straight, tall and has spikes.
14	Ficus religiosa (L.)	Pipal	Moraceae	Papal (Peepal or pepal tree) is a sacred tree for Hindus & Buddhists. Specialty of this tree is that it produces oxygen in day time as well in night also. It belongs to the Ficus species and have great ecological value. They provide feeding, roosting & nesting sites for birds & mammals.
15	Diospyros melanoxylon (Roxb.)	Tendu	Ebenaceae	Madhya Pradesh is the largest Tendu leaves producer state of India. Diospyros melanoxylon leaf is the most suitable wrapper as it can be rolled easily and available in mass. Its leaves are widely used in Indian Bidis. Iit is widely available in forest Kanha National Park. Many villagers use to enter village to collect its leaves.
16	Buchanania lanzan(Spreng.)	Achar	Anacardiaceae	Buchanania lanzan is from family of Anacardium and its common name is Charoli or Chironji. It is a medium sized tree with tiny, hard shelled fruits. Kernel inside the shell is used for garnishing sweets in India.
17	Lagerstroema parviflora(Roxb.)	Lendia	Lythraceae	It is very common tree in both moist & dry forest areas. Its speciality is light demander, drought resistand, good coppicer & fire- resistant. Its fruits ripes in December to February.
18	Grewia tiliifolia	Dhaman	Malvaceae	It is a flowering plant. Its fruits called “Phalsa” are delicious in taste and liked by languars & deers of Kanha National Park.
19	Zizyphus xylopyrus(Retz.) willd	Ghont	Rhamnaceae	It is found in Central India as well as south – west part of India. Zizyphus is a small tree in the buckthorn family Rhamnaceae. Its leaves are alternate, entire with three prominent basal veins, size 2-8 cm. long. It is found in warm temperature and subtrophical region of forested areas of Kanha Park.
20	Randia dumentorum (Lam.)	Maniphal	Rubiaceae	It is a small tree of rigid shrub. It have long spines with strong horizontal leaves of 1-2 inches long. Plant is covered with white flowers turning yellow over a few days. It attracts maximum number of butterflies and daytime moth like clearwing hawk moth. Its seeds have medicinal properties and often used as fish poison.

21	Terminalia arjuna (Roxb.) wight & Arn.	Arjun	Combretaceae	It is known for its medicinal value and widely used by Ayurvedic physicians. It is known for its curative properties in hypertension, heart problem etc. other names of it are Koha, Kahu, Arjan etc. it is large size deciduous tree of height approx 50-90 feet. It is evergreen tree with yellow flowers and conical leaves. Its flowers can be seen in the month of March to June.
22	Cordia dichotoma (G. Forst)	Lasoda	Boraginaceae	It is medium high tree with average height of 12 mtr. Cordia dichotoma has known for medicinal value. It is useful in disease of cough, chest, colic paints etc. its fruits, kernel, mucilage and barks are useful portions of tree.
23	Bamboo	Bans	Poaceae	It belongs to grass family. Bamboo is a tree that flowers gregariously only once in 30 to 45 years. Birds and animals feed on it as bamboo is in abundant and nutritious too. Two main species of bamboo founds in Kanha National Park. Dendrocalamus strictus & Bamboosa arundinacea.
24	Zizyphus mauritiana(Lam.)	Ber	Rhamnaceae	Ber is also known by the name of Indian jujube, Chinee Apple, boroi. Its fruit is good source of vitamin “C”, presented to god in Hindus and considered sacred. Tree is of medium height i.e. of 6-14 mtr. High with thorns in branches. Its leaves are about 3-8 cm. long and thick.
25	Anogeissus latifolia(Roxb.)	Dhaora	Combretaceae	Dhaora is a small medium sized tree of 20-35 mtr. High. It is considerd as one of the most useful tree in India. It is a good source of gum which is used for calico printing. It is found in semi evergreen forest area.
26	Mangifera indica (L.)	Mango	Anacardiaceae	Mango is very famous fruit of India. Mango tree can be widely seen in Central India and other parts of India. Its fruit is available in summer season i.e. in the month of May, June, July. It is considered as king of all fruits in India. It is favorite fruits of local tribal people close to Kanha National Park. Mango can be consumed in both raw & ripe form.
27	Bridelia squamosa(Lam.) Gehrm.	kasahi	Phyllanthaceae	It is a medium to large sized tree. Its height is up to 10-20 mtr. High with pointed thorns in trunk area. Its bark is dark brown in colour and roughly cracked.

****

Studies On Recycling Of Agricultural Waste By Earthworm, For Sustainable Development Of Environment

Dr. Seema Bhola *

Introduction - In present investigation, the epigeic species of earthworm have been tested for decomposition of agricultural refuse along with soil and cow dung. Among the five groups of vermibed prepared, the fourth group (A-4) was found to be an ideal substrate and it shows comparatively maximum increase in macronutrients liks Nitrogen (146.88%), Phosphorus (66.66%) and Potassium (335.60%) over the control and other groups. Vermibed containing wheat straw and maize with cow dung were acts as next best vermicompost, it shows appreciable amount of macronutrients as compared with remaining vermibed groups. Except the calcium and sulphur, the other micronutrients like Mg, Fe, Mn, Zn, Cu, Na and organic carbon etc were significantly increased over the control group.

Biomass burning is a major problem. Huge amount of air pollutants are produced world wide by the annual burning of three billion metric tons of biomass such as wood, leaves, trees, grasses and trash[1]. Biomass burning is the largest source of air pollution in many rural areas of the developed and developing countries. Globally, biomass burning is estimated to produce 40% of CO_2, 32% CO, 20% of particulate and 50% of the carcinogenic polycyclic aromatic hydrocarbon from all sources[2]. Smoke from biomass burning is dangerous, since most of the particulates are smaller than 10 micron in size and are easily travel deep into the lungs cans significantly increased level of respiratory problems[3]. Stubble from wheat, corn, rice and other crops is often burned away in the field. A ten year study in California, noted that hospital asthma admissions were 29% higher than average on days when large quantities of rice stubble was burned[4]. Some times burning of residential wastage can produce significant amount of carbon monoxide, particulates, heavy metals and toxic gases like dioxins[5]. Biomass burning is to make room for agricultural crops.

Every year thousand tons of biomass remained in the field after harvesting in the form of agricultural refuse. What can be done with these agricultural wastages not being burned? This is the basic problem of farmers. Naturally this agricultural biomass may be easily composed by throwing them in to an open pile, where they will decompose easily in a year. Using special composting pits and adding other nutrients and microbes may speed up decomposition or produce richer compost. Leaf compost is excellent for enriching gardens, mulching or filling in low spots. Mandated leaf composting is a triple victory viz., less air pollution, less fire risk and production of rich soil. An earthworm naturally acts as decomposers. They help to process wastes simultaneously giving biofertilizers and proteins. Earthworms eat and mix large amount of soil and organic matter and deposit their caste on the soil surface. The caste contains high concentration of organic material, slit, clay and cations such as iron, calcium, magnesium and potassium. They release nitrogen into soil in their caste and mucus. The exchangeable cations such as Ca, Mg, Na, K, available P and Mo in worm castes are more than surrounding soil[6].

In India, agricultural wastes from crop residue, is the major source of organic wastes these create environmental problems like occupying vast area, spreading foul odour and forming breeding home for pathogenic micro-organisms and mospuito vector. Presently, the population of domestic animals has been drastically reduced at same time farmers prefer to use the mechanical method viz; application of tractor for cultivation and harvesting purposes. No doubt they prefer the burning of such refuse in the fields. Therefore, the earthworms are major contributors to break down the organic wastes. They also have the capacity to detoxify several inorganic substances.

Materials And Methods - Earthworms were kept in the mixture of partially digested cow dung and soil for 15 days before commencement of experiment. Simultaneously agricultural biomass like sugar cane thrush, leaves of eucalyptus, bajara, maize, and wheat straw were collected from near by places of Pimpalner village and brought to laboratory. The material was dried and chopped into small pieces. Similarly, cow dung, quality soil and sheep pellets obtained and brought to the laboratory. Five Vermibed were prepared in the laboratory, the content of the Vermibed are shown in Table 1. Vermibed were prepared in plastic trays of approximately 60 cm x 60 cm x 30 cm size, which easily accommodate 200-300 worms. After preparation of vermibed, they were properly mixed and sufficient amount of water was added so that vermibed becomes moist. On second day 200 earthworms were released on the bed. Control (without worms) was run parallel with experiential vermibeds. These plastic tray contain different vermibed was kept in the laboratory for 90 days without any disturb. Water was sprinkled at the interval of 3 to 4 days. At the end of 90 days, the top layer soil containing worm cast removed and

*Asst. Professor (Zoology) Govt. Auto. P.G. College,Satna (M.P.) INDIA

analyzed nutrients.

Results And Discussions - The result of biomass (agricultural refuse) decomposition and its conversion into valuable macro and micronutrients are presented in table 2. From this table it is clearly observed that the macronutrients like N, P and K are significantly increased over the control. Among the Vermibed tested, A-4 Vermibed (50% Bajara refuse along with soil and cow dung in 25% each) were found to be an ideal Vermibed. The amount of N, P and K were increased 146.88%, 66.66% and 335.60% over the control values respectively. Other Vermibed were also shows increased in nutrient contents over the control. Least amount of nutrients was reported from A-5 Vermibed which contain leaves of eucalyptus and sheep pellets along with soil. In all Vermibeds except calcium and sulphur the other micronutrients like magnesium, iron, zinc, copper, sodium, organic carbon as well as percentage of moisture content were increased in appreciable amount.

In general PH values goes towards neutrality in the inoculated Vermibeds with earthworms. These are the soil invertebrates, along with soil microorganisms carry out a yeomen's service of degrading organic waste materials and thus maintain the nutrient flux in the system[8]. Earlier workers reported the importance and use of various species of earthworm for decomposition of agricultural biomass. They observed appreciable increases in population of earthworms and nutrient content of soil. Jadhav[11] conducted a field experiment on composting of wastes such as cow dung along with rice straw, grasses, mango leaves, cashew leaves and forest litters with and without earthworms. The results on the changes in various physico-chemical characteristics revealed that humification of cow dung with earthworms. The decomposition efficiency of Perrier sansibanicus for vermicomposting was evaluated by using variety of wastes resulted in sufficient increase in total nitrogen, phosphorus and potassium where as decrease in C: N ration[12]. Production of vermifertilizer from guar gram industrial waste by using earthworm species showed converting industrial waste into value added biofertilizer[13]. More or less our result are corroborate with earlier workers. We conclude that the earthworm might help to the farmers to reduce the huge amount of agricultural wastes by simple process of decomposition and also prevent the land from barren soil and air pollution due to burning of this organic waste.

References:-

1. Levine, J. (1990). Williamsburg, Vivginia, March 19.
2. Abelson, P. (1994). Sources of Dioxin. Science, 266:350.
3. Jacob, J. (1998). Enviro. Health Persp. 105 (9): 980
4. Morris, R. (2001). Enviro. Health Persp. 109: 495.
5. Tripathi, G. (2003). In: Proc. 7th int. Col. Soil Zool., New York, USA. 129.
6. Suthar, Surendra. (2006). Bioreso. Techno. 123.
7. Suthar, Surendra. (2007). Bioreso. Techno. 98 (8): 1608.
8. J.Dominguez, "The microbiology of vermicomposting," in Vermiculture Technology Earthworms, Organic Wastes, and Environmental Management, C.A. Edwards, N.Q. Arancon, and R. Sherman, Eds.,2011.
9. J. Pathma and N. Sakthivel, "Microbial diversity of vermicompost bacteria that exhibit useful agricultural traits and waste management potential," SpringerPlus, vol. 1, article 26, 2012.
10. G. Zervas and E. Tsiplakou, "An assessment of GHC emissions from small ruminants in comparison with GHG emissions from large ruminants and monogastric livestock," Atmospheric Environment, vol. 49, pp. 13-23, 2012.

****

Incidence Of Cancer Of Ear Nose & Throat At Satna

Dr. Rashmi Singh *

Introduction - Cancer is defined as group of diseases characterized by abnormal growth of cells and ability to invade adjacent tissues and distant organs leads to eventual death of affected patients, there are 3 categories of cancer
1. Carcinoma 2. Sarcoma 3. Lymphomas

10 Million people are affected world wide and about 6 million deaths per year world wide, there is 18% mortality in cancer patients, in India there are about 2 to 2.5 million cases per year of those only about 7 to 9 lakh cases are detected every year. In males 4 main cancers are Mouth and oropharynx, esophagus, stomach and lungs, in female's cancer cervix, ovary and breast are commonest. Incidence of Mouth and oropharynx in males is 12.48 / 100000 population and in females 5.52/ 100000 population, main causes of cancer in India are mainly tobacco, alcohol, Dietary factors, occupational exposures, viruses, parasites, customs, habits, life style, sunlight, radiation, water pollution, medication, pesticides, genetic factor also plays a major role mainly in blood cancer.

Material and Methods - This study has been conducted in Satna from 1/04/13 to 31/03/2014 about 14 thousand patient attending Ear nose & throat dept out door at distt. Hospital satna, out of these 12000 were new patient and 2000 were old patient out of these 9500 were Males and 4500 were females, a detail history was taken regarding consumption of alcohol, tobacco chewing bidi or cigarets smoking habit of eating pan, gutkha, betal nuts, using of tobacco powder for teeth cleaning, age at which tobacco chewing and consumption of alcohol was started, duration of these habits, frequency of taking alcohol and tobacco, any history of cases in their family members affected, sex ratio, age at which sign and symptoms started, duration of disease and its treatment, and survival after treatment, urban and rural background, literate and illiterate also considered

Observation - It was observed that about 112 patients were diagnosed as cancer probables, out of these 65 were males and 47 were females, after follow up it was found that ear nose and throat cancer was confirmed in 34 males and 4 females total 38 confirmed ENT cancer patient also took benefits of package provided to them by M.P. Govt, it was observed that maximum number of ENT cancer patient were between 40 to 60 year of age, only 3 patients were found between 25 to 40 year of age only 2 patient were above 60 year of age, most of the patients gave history of tobacco chewing gutkha and betal nut chewing, maximum cases were seen where duration of tobacco chewing was more than 5 years to 30 years, maximum incidence was seen where males were consuming alcohol with tobacco chewing, in females tobacco chewing with betal nut chewing was the main cause

Result - It was found that 95% of diagnosed cancer patients were tobacco chewers, 5% were betal nut chewers, 60% of the males patient were habitual of alcohol consumption and tobacco chewing, Male female ratio was 3:2, in suspected cases and in confirmed cases male female ration was 8.5:1 Maximum incidence 80% was seen between 40 to 60 years of age, 10% between 25 to 40 year of age, 10% above 60 year of age. ENT cancer was found more in rural population and illiterate persons. In 1 to 2% cases there was history of oral cancer in their family and the deceased were also tobacco chewers.

Discussion - All the data collected in this study shows that male population was affected more than females, main cause of cancer was tobacco chewing in any form rural population and illiterate people were affected more, consumption of alcohol was additional cause of cancer in male patients, betal nut chewing and gutkha was the main cause in females of low socioeconomic group.

Prevention - A series of measures to be taken for prevention of cancer includes early detection, diagnosis, treatment, after care, rehabilitation, it is estimated that at least one third of all cancers are preventable.

Primary Prevention - Includes control of tobacco and alcohol consumption personal hygiene, radiation, occupational exposure, immunization, cancer education.

Secondary Prevention - Includes cancer registration, early detection of cases, treatment, cancer screening legislative and restrictive measures, national and international coordination to control the tobacco chewing and smoking epidemic.

References :-

1. ABC of Ear, Nose and Throat, 5th Edition **Harold S.** Ludman (Editor), Patrick J. Bradley (Editor) ISBN: 978-1-118-70013-6 120 pages May 2013, BMJ Books
2. Otolaryngology Head and Neck Surgery: Clinical Reference Guide Paperback – Import, 1 Oct 2013 by Raza Pasha (Author), Justin S. Golub (Author)
3. Head and Neck Cancer Treatment, Rehabilitation, and Outcomes Second EditionEdited by: Elizabeth C. Ward, Corina J. van As-Brooks

* **Professor (Zoology) Govt. P. G. College, Satna (M.P.) INDIA**

4. Esche BA, Haie CM, Gerbaulet AP, Eschwege F, Richard JM, Chassagne D. Interstitial and external radiotherapy in carcinoma of the soft palate and uvula. Int J Radiat Oncol Biol Phys. 1988 Sep;15(3):619–625. [PubMed]
5. Jorgensen K, Elbrond O, Andersen AP. Carcinoma of the lip. A series of 869 cases. Acta Radiol Ther Phys Biol. 1973 Jun;12(3):177–190. [PubMed]
6. Marchese MJ, Nori D, Anderson LL, Hilaris BS. A versatile permanent planar implant technique utilizing iodine-125 seeds imbedded in gelfoam. Int J Radiat Oncol Biol Phys. 1984 May;10(5):747–751. [PubMed]
7. Marcus RB Jr, Million RR, Mitchell TP. A preloaded, custom-designed implantation device for stage T1–T2 carcinoma of the floor of mouth. Int J Radiat Oncol Biol Phys. 1980 Jan;6(1):111–113. [PubMed]
8. Mendenhall NP, Parsons JT, Cassisi NJ, Million RR. Carcinoma of the nasal vestibule. Int J Radiat Oncol Biol Phys. 1984 May;10(5):627–637. [PubMed]

****

ग्लोबल वार्मिंग – जीव अस्तित्व के लिये चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. साधना जैन *

शोध सारांश – ग्लोबल वार्मिंग पिछले कुछ वर्षो से दुनिया भर के वैज्ञानिकों के लिये गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है। धरती का क्रमश: बढ़ता तापमान, उसके कारण जलवायु परिवर्तन तथा इस सबका विभिन्न जीवों और मनुष्य पर पड़ते प्रभाव ने पर्यावरणविदों के माथे की सलवटों को और गहरा कर दिया है। बढ़ते तापक्रम के कारण जीव अपने को उसी के अनुसार अनुकूलित करने में लग जाते हैं, जिससे उनकी अधिकांश ऊर्जा व्यय हो जाती है। इसका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनके वितरण, व्यवहार, प्रवास, आनुवांशिकी, चयापचयी क्रियाओं पर पड़ रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह जानकारी देने का प्रयास किया गया है कि– ग्लोबल वार्मिंग के खतरों को रोकने के लिय शोध पत्र में दिये गये तथा वैज्ञानिकों के प्रयासों साथ – साथ तथा शोध –पत्र में दिये गये सुझावों पर हम सभी को योगदान देना होगा ताकि सभी जीवों के साथ–साथ मनुष्यों का जीवन भी सुरक्षित रहे।

प्रस्तावना – धरती पर कयामत का काउंट–डाउन शुरू हो गया है 'ये कहना है प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग का। उन्होंने हाल ही में कहा है कि ' ग्लोबल वार्मिंग, जेनेटिकली इंजीनियर्ड वायरस और न्यूक्लियर वार के कारण पृथ्वी के अस्तित्व पर संकट मँडरा रहा है।' विज्ञान की प्रगति के नकारात्मक पक्ष पर हम आँखे मूँदे हैं। ये खतरे की घंटी है, हमें सचेत होना है। आने वाली पीढ़ियों के भविष्य के लिये अभी से कदम उठाने होंगे, नहीं तो वो दिन दूर नहीं जब धरती शुक्र ग्रह के समान हो जायेगी, जहाँ तापमान 250 डिग्री सेल्सियस होता है और एसिड की बारिश होती है।

पृथ्वी पर पाये जाने वाले विविध जीवों पर ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव अत्यंत खतरनाक है, क्योंकि जीव की अधिकांश ऊर्जा अपने पर्यावरण की भौतिक परिस्थितियों के प्रति अनुकूलित होने में ही व्यय हो जाती है। इसके प्रभाव से एक छोटे मच्छर का बनना तथा इसमें अनुवांशिक परिर्वतन से नये जीव का बनना, तापक्रम में बढ़ोत्तरी से मछलियों का ठंडे प्रदेशों में प्रवास करना, कोरल रीफ का नष्ट होने की कगार पर पहुँचना, पक्षियों के व्यवहार में परिर्वतन, मैमट, चिपमंक्स, ब्राउन बियर में हारबरनेशन में कमी या खात्मा, परागण के लिये जरूरी पक्षी, मधुमक्खियाँ तथा चमगादड़ की संख्या में लगातार कमी, भारत में अगले 25 वर्षो में 25% जंतुओं के नष्ट होने की संभावना, ग्लोबल वार्मिंग द्वारा पर्यावरण को हो रही हानि की भरपायी के लिये कॉर्बन–डाइऑक्साइड संग्रहण आदि के सुझाव के साथ यह शोध – पत्र प्रस्तुत है।

डूबने लगी हैं कश्तियाँ, किनारों पर ठहर जाओ।
बहुत धूल है इस शहर में, जरा ठहर जाओ।।
कहाँ हैं वो परिंदे जो चहकते थे डालियों पर।
मरने लगे हैं फड़फडा़कर, जरा ठहर जाओ।।

ग्लोबल वार्मिंग – विभिन्न जीवों पर प्रभाव –

'इनकी जान पर टिकी है हमारी जान'

आनुवांशिक अनुकूलन – वाशिंगटन में हुई रिसर्च में यह तथ्य सामने आया कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण एक छोटा सा जीव जो जीव मच्छर की ही प्रजाति है, विकसित हुआ है जो पिचर प्लांट पर रहता है। शीत ऋतु में यह आनुवांशिक रूप से पिचर प्लांट पर हाइबरनेशन के लिये तैयार हो जाता है। इसके लिये इसमें एक नया जीन उत्पन्न हुआ है जो कि आम मच्छरों में पाये जाने वाले जीन से भिन्न होता है, जो कि उसे बसंत में विकसित तथा जनन के लिये प्रेरित करता है।

यूनिवर्सिटी ऑफ ऑरगेन (यूरोप) में हुये ये परिणाम दशति हैं कि इस प्रकार के 'आनुवांशिक अनुकूलन' अन्य स्पीशीज में भी पाये जा सकते हैं।

"This Show "Global warming has forced animals to evolve".

जलीय जीव – ग्लोबल वार्मिंग से जलीय जीवन भी अछूता नहीं है, जलीय परिस्थितिक तंत्र के अध्ययन से स्पष्ट है कि अनेक जलीय जंतु एक सीमित ताप में ही जीवित रहते हैं। जैसे – सीलेन्टरेटा, फ्रेश वाटर फिश, समुद्री फिश, एनीलिडा तथा आर्थोपोडा के सदस्यों के लिये अनुकूलतम तापक्रम 27^0c के लगभग रहता है, 30^0 पर वे नष्ट हो जाते हैं।

- कार्यिकी प्रभाव के अंतर्गत देखा गया है कि जल के वातावरण में 10^0c ताप वृद्धि से जलीय माध्यम और जंतुओं के शरीर के बीच घुलित लवणों का आदान–प्रदान बढ़ जाता है तथा विषैले पदार्थ भी बाहरी माध्यम से जीवों के शरीर में तेजी से प्रवेश करने लगते है।
- 21 वीं सदी के अंत तक ग्लोबल वार्मिंग के कारण 2–10^0c तापमान बढ़ने से समुद्री जल स्तर 40 सेमी. बढ़ जायेगा, जिससे समुद्री जीवन प्रभावित होगा।
- अनेक मछलियाँ अधिक तापक्रम से बचने के लिये ठंडे पानी की खोज में उत्तरी दिशा की ओर जा रही हैं तथा इनकी उत्पादकता पर भी इसका प्रत्यक्ष प्रभाव देखा जा रहा है।
- समुद्री जल तापक्रम यदि इसी प्रकार बढ़ता रहा तो ऑस्ट्रेलिया के ग्रेट बेरियर रीफ के खत्म होने में 20 वर्ष से ज्यादा नहीं लगेगें। 2050 तक रीफ अपने लगभग सारे कोरल कवर खो चुकेगी और 2100 तक तहस–नहस हो जायेगी। 'क्वीनसलैंड यूनिवर्सिटीस् सेन्टर फॉर मेराइन स्टडीज के वैज्ञानिकों का विचार है कि हिंद महासागर अगले 50 वर्षो में अपने कोरल आइलैंड को ग्लोबल वार्मिंग के कारण खो देगा।

पक्षी – वैज्ञानिक रूट के अनुसार ' प्रत्येक जीव बाहरी वातावरण में होने वाली क्रिया की प्रतिक्रिया अंदर से देता है' ग्लोबल वार्मिंग के द्वारा होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप पक्षियों का व्यवहार, मेटाबोल्जिम, ब्रीडिंग तथा माइग्रेशन प्रभावित होता है।

* प्राध्यापक (प्राणीशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

- ग्लोबल वार्मिंग पक्षियों के घोंसला बनाने के चक्र को प्रभावित कर रहा है वर्ष 1971 से हुए अध्ययन के अनुसार पक्षी प्रत्येक वर्ष जल्दी अंडे दे रहे है।
- रिंग्ड प्लोवर पक्षी जो कि सर्दियाँ ब्रिटेन के पश्चिमी तट पर व्यतीत करते थे अब पूर्वी तट पर करने लगे है।
- माइग्रेटरी चिप पूरे वर्ष भर यू.के. में रहने लगे हैं. अब इनमें दक्षिण की ओर माइग्रेशन नहीं पाया जाता है।
- आर्कटिक क्षेत्र में पाये जाने वाले पेंग्विन भी भारी हिमपात, बर्फ के पिघलने से प्रभावित हो रहे हैं
- स्वेलो पक्षी में अंडे देने की अवधि 9 दिन बढ़ गई हैं।

तापक्रम में बढ़ोत्तरी का स्पष्ट प्रभाव पक्षियों की विभिन्न प्रजातियों में देखने को मिलता है तथा पिछले तीन दशकों में ध्रुवों के समीप प्रदेशों में हेबिटेट नष्ट होने के प्रमाण मिले हैं। अत: इन्हें "Primary Indicators of Global Climate change" कहा जाता है।

ग्लोबल वार्मिंग का दूसरा प्रभावी कारक है- अवक्षेपण (Precipitation) स्तर में परिवर्तन, जो खासतौर पर प्रवासी पक्षियों के व्यवहार में काफी परिवर्तन दिखाता है।

मधुमक्खी – विश्व भर में पायी जाने वाली यूरोपियन एपिस मेलीफेरा मधुमक्खी की विभिन्न प्रजातियाँ आर्थिक महत्व के कारण कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं तथा यह परागण द्वारा जैव विविधता को बनाए तथा बचाए रखने का महत्वपूर्ण कार्य भी करती हैं, अत: इनके संरक्षण के समुचित उपाय किये जाने आवश्यक हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण इस प्रजाति की मधुमक्खियों के वितरण, व्यवहार, कार्यिकी, सामाजिक संगठन तथा अनुवांशिक विभिन्नता में परिवर्तन हो रहे हैं, जो इनके विकास पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाल रहें है।

स्थलीय जंतुओं के हाइबरनेशन पर प्रभाव – वैज्ञानिकों के अनुसार ग्लोबल वार्मिंग के कारण हाइबरनेशन पीरियड में कमी कुछ स्पीशीज की संख्या में कमी का कारण बन सकती हैं।

- मेगट, चिपमंक्स, ब्राउन बियर के हाईबरनेशन पीरियड की अवधि में कमी आयी है तथा कुछ में यह बंद हो गया हैं, जिसके कारण इनको भूख तथा शिकारियों का सामना करना पड़ता हैं। इसका एक ठोस सबूत कोलाराडो से आया है, जहाँ के 'राँकी माउंटेन बॉयोलॉजिकल लैब' के रिसर्च स्कालर्स ने वर्ष 1970 से अध्ययन के द्वारा पाया है कि मेमट ने अपना हाइबरनेशन पीरियड एक महीने कम कर लिया है, यह तापक्रम में 2.5c फेरनहीट बढोत्तरी के कारण था।
- हाइबरनेशन अवधि में कमी से मेटाबोल्जिम की दर कम हो जाती है, जिससे हार्ट रेट कम हो जाती है तथा जंतुओं को कम ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है तथा जब जंतु जागते हैं, तो मेटाबोल्जिम सामान्य हो जाता है।
- ग्लोबल वार्मिंग के कारण मैमट जल्दी जाग रहे हैं, क्योंकि वे ऊँचे तापक्रम से भ्रमित होकर शीत को ही बसंत समझ लेते हैं, जबकि इस समय फोटोसिंथेसिस की कमी के कारण पौधे भोजन नहीं बनाते अत: उन्हें भुखमरी का सामना करना पड़ता है तथा वे लंबे पेड़ों को खाने के लिये अनुकूलित हो रहे हैं।

चमगादड़ – पारिस्थितकीय तथा आर्थिक दोनों दृष्टि से महत्वपूर्ण चमगादड़ किसी खास लाइफ जोन या हेबिटेट को प्राथमिकता देते हैं। ज्यादातर प्रजातियाँ ट्रॉपिकल तथा सबट्रापिकल लेकिन एक महत्वपूर्ण संख्या टेम्परेट क्षेत्रों में भी पायी जाती है , जो ग्लोबल वार्मिंग से प्रभावित होती हैं। चमगादड़ की जो प्रजातियाँ परिवर्तित तापक्रम में अपने को अनुकूलित नहीं कर पा रही हैं, वे विलुप्त होती जा रही हैं।अत: इनके संरक्षण की दिशा में सार्थक प्रयास आवश्यक है।

जीवों का विलुप्तीकरण– यूनिवर्सिटी ऑफ अलास्का में अनुसार 12,500 वर्ष पूर्व अलास्का के घोड़ों का विलुप्तीकरण किसी और कारण से नहीं बल्कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण ही हुआ था। जैवविविधता का यह ह्रास आज भी जारी है। पूरे विश्व के संदर्भ में देखें तो पिछले 400 वर्षो में 58 जीवों की प्रजातियाँ तथा 115 पक्षियों के प्रजातियाँ लुप्त हो गयी तथा स्तनधारियों की 12 प्रतिशत प्रजातियाँ संकट ग्रस्त है। यही दर रही तो अगले 25 वर्षों में पृथ्वी से 15% प्रजातियाँ विलुप्त हो जायेंगी। भारत में 25 वनस्पति तथा जीव जंतुओं के विलुप्त होने के आशंका है।

पृथ्वी के बढ़ते तापमान को कम करने की दिशा में हो रहे प्रयास – आज पूरे विश्व की चिंता पृथ्वी के बढ़ते तापमान एवं उससे उत्पन्न होने वाली स्थिति पर है। पर्यावरण को हो रही हानि की भरपायी के लिये विश्व भर के वैज्ञानिकों का एक पैनल अलग-अलग सुझावों को लेकर सामने आया है।

इसमें सबसे महत्वपूर्ण सुझाव वातावरण में घुल चुके कॉर्बन-डाई-ऑक्साइड को संग्रहीत कर तथा सोखकर आबोहवा को स्वास्थ्य के लिहाज से अनुकूल बनाया जाये।

उपाय –

लौह-कणों को समुद्र में फैलाना – इससे प्लैंक्टान का स्तर बढ़कर कॉर्बन डॉइ आक्साइड को सोखेगा।

हवा से कार्बन उत्सर्जन – कार्बन के मुख्य स्त्रोतों गैस, चिमनियों, और पावर स्टेशनों से सोखने की तकनीक पर भी काम हो रहा है। न्यूयॉर्क के कोलंबिया यूनिवर्सिटी के जियोफिजिक्स के प्रो. डॉ क्लज लेकनर के अनुसार मनुष्य के द्वारा छोड़ी जाने वाली कार्बनडाइऑक्साइड को प्लास्टिक ट्री के जरिये इकट्ठा किया जा सकता है।

अरिजोना में चल रहे प्रयोग – डॉ0 लेकनर 2003 से अरिजोना की ग्लोबल रिसर्च टेक्नोलॉजी कंपनी के साथ प्रोटोटाइप मॉडल विकसित करने में जुटे है। कार्बन सोखने वाली मशीन 'एटमोस्फेरिक कार्बन केप्चर सिस्टम' पर जी आर टी के एलन राइट कहते है कि डिवाइस का एक हिस्सा वायु के संपर्क में रहता है इस सतह पर कार्बन-डाई-ऑक्साइड आकर्षित होकर संग्रहीत होती रहती है। 'यू.एस.नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज' ने सुझाव दिया कि अंतरिक्ष में बड़ी संख्या में मिरर सीधे खड़े करने से कुछ मात्रा में सूर्य की किरणें परावर्तित होंगीं, इससे पृथ्वी का तापमान कम करने में मदद मिलेगी।

- नोबल पुरूस्कार विजेता डच केमिस्ट पॉल कुट्र्ज के अनुसार यदि सल्फर गैस से लदे रॉकेट वायुमंडल में छोड़ा जायें तो ये पृथ्वी के लिये 'कूलिंग ब्लेंकेट का कार्य कर तापमान कम करेंगे।
- स्काय फार्मिंग- पर्यावरण प्रदूषित करने में सबसे बड़ा हाथ कार्बन-डाई-ऑक्साइड का है। अत: पारंपरिक खेती के स्थान पर कार्बन-डाई-ऑक्साइड सोखने वाले पेड़ लगाने से ग्लोबल वार्मिंग में होगी।

ग्लोबल वार्मिंग कम करने के सुझाव –

- कार्बन-डाई-ऑक्साइड तथा क्लोरो-फ्लोरो कार्बन के उत्सर्जन पर प्रतिबंध।
- वनीकरण।
- शीशा मुक्त पैट्रोल का उपयोग।
- सौर ऊर्जा तथा सी. एफ. एल. बल्ब का उपयोग।
- सप्ताह में एक दिन 'नो ड्राइविंग डे' तथा इलेक्ट्रिक कारों का उपयोग।

- बहुमंजिला इमारतों को बढ़ावा।
- पब्लिक ट्रांसपोर्ट को बढ़ावा।
- पेपर का उचित उपयोग।
- कम्प्यूटर, लेपटाप, फ्रिज, ए. सी. तथा अन्य इलेक्ट्रिक यंत्रों का सर्तकता पूर्वक उपयोग।
- जन चेतना।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि यदि ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को हल नहीं किया गया तो इस ग्रह के तापमान का लगाातार बढ़ना अनेक समस्याओं को जन्म देगा। अत: मनुष्य के सुखद भविष्य के लिये ग्लोबल वार्मिंग कम करने हेतु प्रयास आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. National services on global warming and its impact on atmosphere – 16 th February 2008 govt. Tilak P.G. College Katni
2. पत्रिका न्यूजपेपर 31 जन. 2016.
3. दैनिक भास्कर के आलेख।
4. नेशनल ज्योग्राफिक चैनल।
5. www.bbc.couk/nature/19346348
6. https:/www.researchgate.net/publication/23285587 climate change impact on honey bee populations and diseases.
7. www.eoearth.org/view/article/5/cbed 457896 bb431 f 690 fbd
8. World focus- Indocentric foreign affairs monthly journal vol. XXXV, Feb 2014.

****

Socio Economic Status Of Bhariya Tribes Of Patalkot Valley, Tamia Block, Chhindwara Distt Madhya Pradesh

Kavita Juneja* **Dr. Meera Vaidya** ** **Dr. Nandita Sarkar** ***

Abstract - The present paper aims to investigate the socio-economic status of Bharia tribes in Patalkot Valley,Chhindwara District of Madhya Pradesh state. Primary data was obtained with the help of pre-structured questionnaire the results were interpreted with help of tabular analysis. The results reveal that, more than 85% of the population were living in kutcha houses. educational level among the Bhariya population was very low and especially the education level of females was lower than males population was very low and especially the education level of females was lower than males. The primary occupation of the Bhariyas are cultivation, agricultural labor, basket making, rope making. Collection of minor forest produce adds income to their subsistence economy.

Introduction - The State of Madhya Pradesh has been reorganized many times changing its boundaries. One phenomenon has, however, remained unchanged in that it always has the largest population of the Scheduled Tribes as compared to any other state in the country. Even after the present reorganization carving out Chhattisgarh as a separate state, Madhya Pradesh comprises 96.27 lakhs Scheduled Tribe population. (Tribal research institute Bhopal) The concept of tribe is ambiguous which has been further compounded by the word primitive. There have been many number of attempts to define the term tribe but none has been found to be distinctive enough. The literature on tribe clearly indicates that there was no term equivalent to tribe in any of the Indian languages. As these community are presumed to constitute the oldest ethnological segment of the Indian society the word 'Adivasi' (Adi means oldest and Vasi means inhabitant) is commonly used to designate them.

The Human Development Index (HDI) of tribal population is quite low as compared to the rest of the population the rest terms of all parameters such as education, health, income, etc. This is mainly because they live in clusters, generally in remote areas, which are remote or in the vicinity of forests. The development programmes meant for the general public often elude the tribal population for the reasons for inaccessibility and difficult terrain. (Annual Report 2004-05, Ministry of Tribal Affairs, Government of India.) Some tribal communities have adopted a mainstream way of life at one of the spectrum but there are 75 Primitive Tribal Groups (PTGs) in 17 States and Union Territories of Andaman and Nicobar Islands, who are characterized by: (i) a pre-agriculture level of technology, (ii) a stagnant or declining population, (iii) extremely low literacy, (iv) a subsistence level of economy.

Bharias listed as one of the primitive tribe of Madhya Pradesh mainly inhabitants of the district Chhindwara. A small section of this community lives in an area known as Patalkot valley.

Review of literature - Laxmaiah, A. et al (2007) demonstrated that the majority of the households of tribeswere living in kutcha houses(85%), while only small proportion were living in semi pucca (8%) & pucca (7%) houses. The study further revealed that the major occupation of head of the household was either agriculture labour or other labour 48%, followed by cultivation 44%. One fourth of the households had no land (<2.5%) about 41% were marginal farmers (2.5-5acers). 72% of adult men and 88% of adult women were illiterate.

Manju Rani and Sharma (2007) conducted a study on socio economic and demographic characterstics of tribes of Uttrakhand reported that the tribal population include has a large proportion of children and small proportion of aged person.The study further reported regarding literacy that among scheduled tribes 63.2% of the tribal population was literate. Bhotia tribes were well ahead with 79% literacy rate. Literacy rates were lower in Buksa and Ranji tribes. The study further revealed regarding the occupation of tribes that 68% tribes were cultivators. More than three fourth tribal workers were engaged in agriculture and most of them were cultivators i.e. had own agriculture land. About 5% workers were engaged in household industries and 19.2% were classified as other worker i.e. salaried/waged jobs.

Methodology - The survey was conducted in 6 villages of Patalkot valley of Tamia block of Chhindwara district of Madhya Pradesh. The valley is located at the distance of 78 km from Chhindwara. Interview schedule was developed to elicit background information of the tribe families. Direct interview was the technique adopted for data collection.

*Guest Lecturer (Home Science) Rajmata Scindia Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) INDIA
**Professor & H.O.D. (Home Science) Govt. M.H. College of Home Science and Science, Jabalpur (M.P.) INDIA
***Professor (Home Science) Govt. M.H. College of Home Science and Science, Jabalpur(M.P.) INDIA

Information regarding age, sex, size of the family, types of houses, education, and occupation of the family members were recorded.

Result and discussion

Types of houses

Figure no. 1 (a)

Distribution of the family according to the type of house

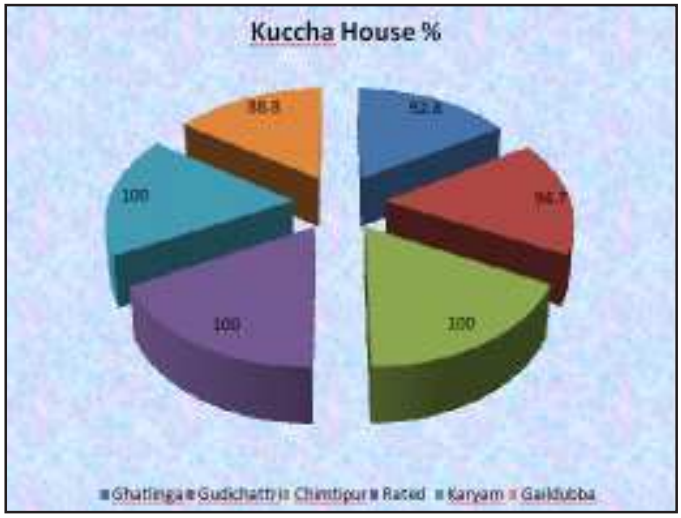

Figure no. 1(b)

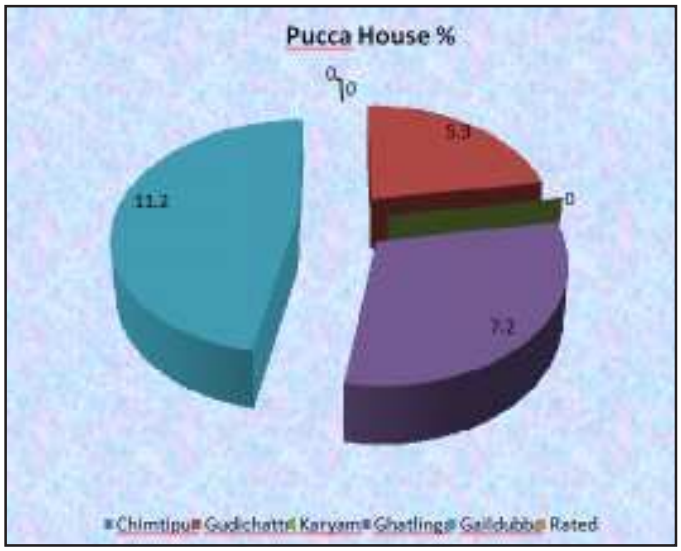

The figures show the distribution of families living according to the type of house. It can be seen from the above given fiure that out of total number of houses surveyed from the selected villages, pucca houses were found only in Ghatlinga, Gudichattri, and Gaildubba where as 100% kuccha houses were found in chhimtipur, Rated, and karyam. This may be due to that Ghatlinga, Gudichatri, Gaildubba villages are accessible by roads, however it is very difficult to reach Rated, Karyam, Chhimtipur. Laxmaiah,A. et al (2007) demonstrated that the majority of the households of tribes were living in kutcha houses(85%), while only small proportion were living in semi pucca (8%) and pucca (7%) houses.

Education level - Tribes lag behind not only the general population but also the Scheduled Caste population in literacy and educational attainment. This disparity is even more marked among Scheduled Tribe women, who have the lowest literacy rates in the country (Maharatna, 2005).

Figure no. 2(a)

Distribution of adults according to educational level

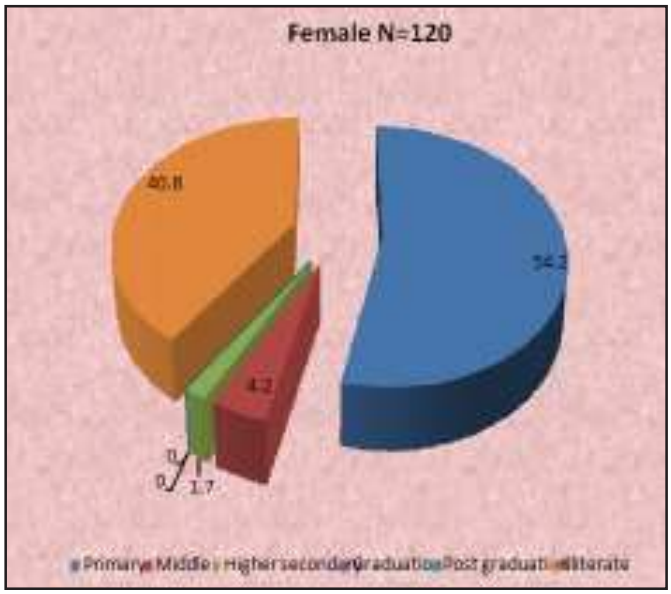

Figure no 2(b)

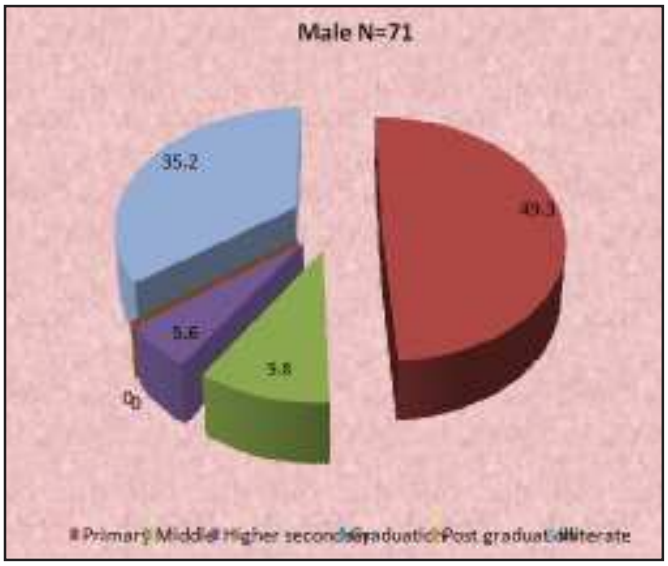

The figures show that 49.3% and 54.2% of adults male and female respectively had gained education up to primary level.9.8% male and 4.2% female gained education up to middle classes. 5.6 % and 1.7% male and female were educated to higher secondary. The analysis of data thus reveals that the educational level among the Bhariya population was very low and especially the education level of females was lower than males population was very low and especially the education level of females was lower than males.

Occupations
Figure no. 3(a)

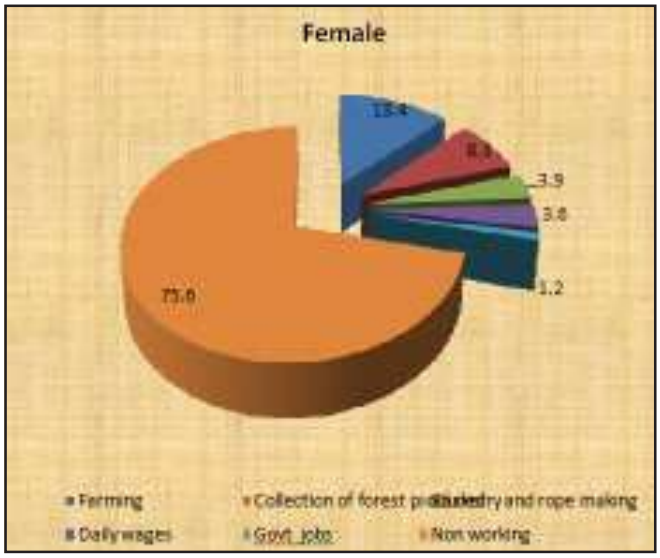

Figure no. 3(b)

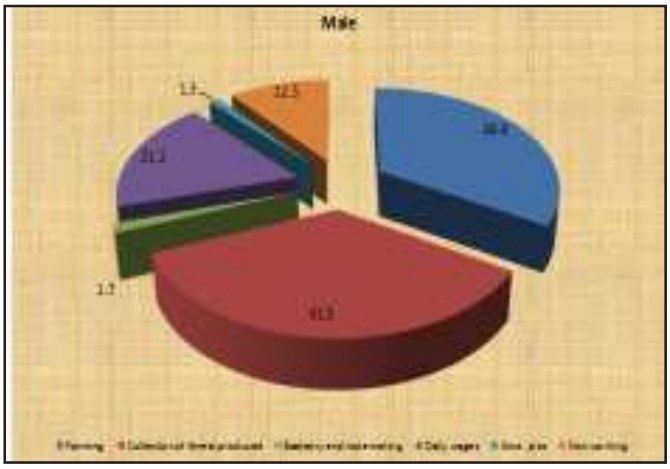

The primary occupation of the Bhariyas are cultivation, agricultural labor, basket making, rope making. Collection of minor forest produce adds income to their subsistence economy. They still collect forest produce such as Mahua flower, Harra fruits and Mango fruits and seeds, except Harra, rest of these make part of their food, when food crops of their small plots short to sustain their food requirements. The figures illustrate that 39.6% of males depend on farming as their occupation where as only 13.4% females were involved in farming. 41.3% and 8.3% males and females respectively collect forest produce. 1.7% males and 3.9% females were involved in basketry and rope making. 21.1% of male and 3.6% female were employed in labour work on daily wages whereas only 1.3% male and1.2% females were engaged in government jobs. Similar findings were revealed by Rao (2013) in his study on tribes of Visakhapatnam district in Andhra Pradesh that in the district out of the sample of 138 households, 107 (77.5%) are in cultivation and the remaining are wage labour, employees, housewives and others practicing nonagricultural activities. Here the majority of the households depend on agriculture for their livelihoods in which, males go for the lion's share but it is interesting to see some women are also depending on cultivation. It was also observed that both men and women are wage labourers. Laxmaiah et al (2007) demonstrated that the major occupation of head of the household was either agriculture labour or other labour 48%, followed by cultivation 44%.

Conclusion - The selected Bhariya tribes were from low socio economic status. The educational level among the Bhariya population was very low and especially the education level of females was lower than males. The primary occupations of the Bhariyas were cultivation, agricultural labor, basket making and rope making.

References :-

1. Laxmaiah, A. Mallikharjuna, K. Rao, R. Hari Kumar, Arlappa, N. Venkaiah,K and Brahmam, G.N.V. 2007. Diet and nutritional status of tribal population in IDTA project of Khammam district Andra Pradesh. *J.Hum.Eco;21(2):79-86.*
2. Manju Rani and R.K. Sharma. 2007. Socio economic and demographic characteristics of tribes of Uttrakhand, India. *Tribal Health Bulletin. 13 (1&2):23-41.*
3. Tribal research institute Bhopal available from tribal.mp.gov.in/tri.htm
4. http://www.merinews.com/article/tribal-health-and-education-in-poor-condition/15796701.shtml

****

Parent Child Relationship And Academic Achievement Of Early Adolescent Year

Dr. Nandini Rekhade *

Abstract - This study has been conducted on adolescent girls and boys of 15 to 17 year of age, regarding parent child relationship and academic achievement of adolescent girls & boys. Results of the study indicated that avoidance of parents has great impact on academic performance of girls and boys wentzel & others (2008) reported that parental hard discipline was related directly and negatively to son's class room performance, low grade in class room performance, low cognitive self worth.

Introduction - Family plays a pivotal role in providing the most congenial atmosphere to the children, in which the child form his style of life and basic pattern of behaviour. Family enable the child to establish fundamental relationship with parents and other family members. Studies have shown that most of the children who are successful and well adjusted they come from home where wholesome relationship existed, and children who rejected by their parents, they fail to develop desirable skills in academic performance and other areas of development (Begem 1940) Douglas (1964) reported that poor family environment has cumulative effect on their academic performance.

This study has been conducted on parent child relationship and its effect on academic achievement of early adolescent year. Adolescence is process rather than a period, a process of achieving the attitude & belief needed for effective participation in the society (Dorthy Roger). Academic achievement means "As a level of proficiency attained in academic work or as formerly acquired knowledge in school subject which is often represented by percentage or marks attained by student in examination (Kohli 1975)." Academic achievement of adolescent depend on parent child relationship. Family plays an important role in the educational and vocational progress of adolescent. Roe hypothesized three types of parental attitudes acceptance, concentration and avoidance are associated with academic performance of adolescent. The formation of attitude in the early stages of life plays very significant role in the developmental process of any individual.

Objective – Objective of the study has been formulated as follows –

1. To study the relation between parental acceptance and academic achievement of adolescent girls and boys.
2. To study the relation between parental concentration and academic achievement of adolescent girls and boys.
3. To study the relation between parental avoidance and academic achievement of adolescent girls and boys.

Sample – For the present study 100 adolescent girls and boys of 15 to 17 yrs of age. Selected randomly from different schools like Kendriya Vidyalaya, Shri Vaishnava Academy, Sarafa Vidya Niketan of Indore city.

Tools – For collection of data, family relationship inventory (FRI) by G.P. Shery and Sinha and for academic achievement general classroom achievement test (GCAT) by Dr. K.K. Singh and Dr. (Mrs.) Sengupta were used correlation was used for statistical analysis.

Results & Discussion -

Table No. – 1 (See in the next page)

Table shows the correlation value of parental acceptance & academic achievement of girls is + 0.34 and, +0.64 which shows moderate degree of correlation, lower side for girls & higher side for boys. It shows the relationship between parental acceptance & academic achievement of girls & boys.

Table No. – 2 (See in the next page)

Table shows parental concentration & academic achievement of adolescent girls & boys. The correlation value of parents concentration and academic achievement of girls is + 0.25 which shows moderate degree of positive correlation and for boys it is + 0.78 which is high degree of positive correlation. It shows the parents concentration affect academic achievements of girls & boys.

Table No. – 3 (See in the next page)

Regarding avoidance and academic achievement of girls & boys is shows -0.26 and –0.78 values which shows low degree of correlation for girls, it is lower side & for boys it shows high degree of negative correlation in higher side.

Study indicates that parents are equally responsible for academic achievements of adolescent girls & boys.

Research (Burt Alexandra-2006) indicated that differential treatment is linked with academic performance of their children. Study result shows parent child conflict has an impact on child behaviour. Another study conducted by Nuttel and Enav 2007 on 233 teenager girls and boys and it was found that achievement of teenagers related to parent child

*Professor, Child Development (Home Science) Govt. M.L.B. Girls P.G. College, Fort, Indore (M.P.) INDIA

relationship. Children who were accepted by their parents have higher achievement traits like hard work, obedience and caring than those who were neglected. Nuttel, Enav - 2007

References :-

1. Bert Alexandra-2006 - "Differential parent child relationship and adolescent externalizing symptoms", Michigan State University - 2006
2. Nuttel, Enav et, al, 2007 – "Parent child relationship and effective academic motivation" Research paper by American educational research association – San Fransisco, California.
3. Sherry J.P. & Sinha J.C. - Family relationship inventory, National Psychological . Corpn, Agra, India.
4. Singh A.K. & Sengupta - "A general classroom achievement test, National Psychological Corpn. Agra.
5. Wentzel R, Katheryn, Feldman Sherley – S - "Parent child rearing and academic achievement of boys" university of Maryland – 2008.

Table No. – 1
Parental Acceptance & Academic Achievement

S. No.	Description	No. of Sample	Degree of Correction	R Value
1.	Parental acceptance and academic achievement of girls	50	Moderate degree of +ve correlation	+ 0.34
2.	Parental acceptance and academic achievement of boys	50	Moderate degree of +ve correlation	+ 0.64

Table No. – 2
Parental Concentration & Academic Achievement of Adolescent Girls & Boys

S. No.	Description	No. of Sample	Degree of Correction	R Value
1.	Parental concentration and academic achievement of girls	50	Moderate degree of + ve correlation	+ 0.25
2.	Parental concentration and academic achievement of boys	50	High degree of +ve correlation	+ 0.78

Table No. – 3
Parental Avoidance & Academic Achievement of Adolescent Girls & Boys

S. No.	Description	No. of Sample	Degree of Correction	R Value
1.	Parental avoidance & academic achievement of adolescent girls	50	Low degree of –ve correlation	- 0.26
2.	Parental avoidance & academic achievement of adolescent boys	50	High degree of –ve correlation	- 0.78

****

A Comparative Study Of Packed Lunch Brought By Children Of Working And Non-Working Mothers

Dr. Shakti Sharma *

Abstract: The study was carried out to assess the impact of maternal employment on nutrient content of packed lunch brought by children of primary classes. 100 children (50 with working mothers and 50 with non-working mothers) in the age group of 6-9 years were taken randomly from classes 1-3 of little world school of Jabalpur city. Mean nutrient content of tiffins brought by children was assessed by weighment method and compared to the recommended allowances of ICMR for age and sex. The tiffin brought by children of non working mothers was better as compared to that of 'working mothers' children in term of quality than quantity.

Introduction - A child spends greater part of day in school and is likely to participate in group activities, sports and recreational programmes. In school the child eats in peer and develops self eating habits in a friendly environment. The child also develops food choice which is largely affected by the food brought.

Hence, it is important to observe school lunch boxes under the light of modern knowledge regarding nutritional requirement of the child for the optimal growth, development and overall good health.

The vital and vulnerable years of childhood are protected and well cared by mothers since mothers are sculptress-in-chief in these formative years. She plays the most important part in proper bringing up of a child. This is evident from the very fact that the most important daily routine of a mother starts with preparing a meal for her child's school tiffin.

In recent years a transition has taken place in the role of a female from wife and mother to member of a work force. The increased workload have resulted in decrease of time spent by a mother for her child; thus affecting the quality and quantity of food especially, the tiffins of children as the mother wants to meet both the ends.

Methodology - The present study was undertaken to assess the influence of maternal employment on the nutritional content of packed school lunch brought by primary school children.

The random sample included 100 primary school children (50 with working mothers and 50 with non working mothers)

Assessment of packed lunch - The tiffin content for three consecutive days was assessed by weighment method. The actual amount of food brought and consumed by children was converted to raw weight.

The mean nutrient intake was computed using the ICMR standard food composition table Gopalan et.al. (2007) and was compared to the RDA.

Result and Discussion -

Analysis of tiffin/packed lunch brought by subjects - The nutrient content of tiffins is brought by subjects were analysed and compared to the amount recommended by I.C.M.R. to be met by school tiffins.

Table I Common recipes analysed in the tiffins (percentage)

Recipes	Working Mothers	Non Working Mothers
Aloo ka Paratha	10.2	7.6
Paratha with paneer	1.08	2.4
Paratha with aloo ki Sabji	11.72	13
Poori	12	11
Paratha with pickle / Sauce	17.7	15.85
Chapati with Sabji	7.6	8.6
Bread-Butter	4	1.12
Mooli/Gobhi Paratha	3.2	3.12
Palak Paratha	1.08	3.125
Paratha/Bread Omelette	2.17	2.4
Onion Besan Paratha	1.08	3.125
Dhokla	-	1.96
Poha	4.34	4.08
Bread Sandwitch	5.4	4.04
Bread Jam	4.34	3.04
French Toast	1.08	1.36
Idli	-	0.82
Upma	-	1.72
Bread Pakora/Bhajiya	1.08	1.20
Pav Bhaji	- .	72
French Fries	4.5	-
Sago Wada	1.08	0.72
Maggi/Noodles	5.43	3.12
Aloo ke Cutlet	2	1.3
Cookies/Biscuit	3.26	2.3
Laddoo/ Burfi	-	2.16
Gajar Ka Halwa	-	1.92
Cake	-	1.68
Total Percentage	**100**	**100**

*Lecturer, Sadabai Raisoni Women's College, Nagpur (Maharashtra) INDIA

The recipe brought mostly in tiffin was paratha, either as stuffed paratha or plain paratha with sabji.

Further, it was observed that the working mothers gave parathaswith chutney or sauce. Non working mothers took more care to send parathas with sabji or stuff it with paneer, aloo besan or palak which is nutritious and increased the calorie intake as well.

It was further observed that non-working mothers sent Dhokla, idli, Upma and Pav Bhaji in tiffin whereas, working mothers never sent such dishes in tiffin, the reason may be lack of time devoted in cooking. However, working mothers gave French fries to children which may be called a junk food and increase the calorie intake and can lead to obesity.

The non-working mothers took more care of sending desserts and sweets like laddoo, burfi, and gajar ka hakwa in tiffin than working mothers. The working mothers preferred to send cookies or biscuits in tiffin as they were ready made and required no time for prepration.

Sandwitch and bread jam were equally liked by both working and non-working mothers as packed lunch. The working mothers showed more preference for sending Maggi/ Noodles in tiffins. This may be due to less time and less preparation required for cooking or it may be due to liking of child, being influenced by various audio visual aids. Both working and non working mothers did not send fruits in tiffins.

Table II (See)

The mean calorie content of tiffin brought by children of working mothers (330kcal) was significantly higher than that of tiffin brought by children of non-working mothers (362kcal). The mean fat content of tiffin brought by children of working mothers was also found to be significantly higher(12.02gms) than that found in tiffin brought by children of non-working mothers (8.76gms).

Whereas, the mean protein content was found to be higher in tiffins brought by children of non-working mothers (9.71 gms) as compared to that brought in tiffin by children of working mothers (8.34 gms). The iron content was also found to be higher in tiffin brought by children of non-working mothers.

Thus, it is found that tiffins sent by working mothers had less variety, and had recipes rich in calories but deficient in various protective nutrients, whereas, more variety was observed in tiffins sent by non-working mothers.

Conclusion - The analysis of results revealed a poor intake of protective nutrients and high intake of fat by children of working mothers as compared to RDA. The tiffin content of non-working mothers children was found to be higher in protective nutrients like protein and iron than that of working mothers children although the mean calorie content was lower than that of working mothers.

Thus, the dietary survey pointed towards a poor intake of food in tiffin brought by children of working mothers compared to non-working mothers in term of quality than quantity.

References :-

1. Jose M. and Indira V (2000) “Maternal Employment and nutritional status of preschool children”. The Ind. J Nutr. Dietet, 37.110
2. National Institute of Nutrition (1995), “The Impact of women’s work on child and maternal health”. A summary report of the women’s work and child development network.
3. Sangwan S, Chikkara S. and Punia S. (1993), “Factors affecting nutritional status.” The Ind. J. Nutr. Dietet. 30,159.

Table II Comparison of mean nutrient content of tiffins brought by children of working and non-working mothers

Nutrient	RDA	Working mothers	Non working mothers	t-value	Sig
Calorie (kcal)	650	362	330	3.3	**
Protein (gms)	14	8.34	9.71	2.45	*
Fat (gms)	8	12.02	8.76	5.57	**
Carbohydrate(gms)	120	55.09	51.33	1.44	NS
Calcium (mgs)	133	50.32	46.78	0.82	NS
Iron (mgs)	8	4.129	4.624	1.20	NS
Vitamin C (mgs)	13	Negligible	Negligible	-	-

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01 level

NS Not significant

****

Fortification Of Food & Its Significance

Dr. Rashmi Verma *

Introduction - Food Fortification can be used to increase the micronutrients content of foods or to replace nutrient lost in food processing, thus playing a valuable role in preventing dietary deficiencies. We look at how fortification can benefit both individuals and population groups .

Fortification involves the addition of nutrients to foods irrespective of whether or not the nutrients were originally present in the food. The aim of fortification is to help the population achieve the recommended amounts of nutrients. Fortification is often undertaken to address low intakes of a nutrient. Dietary surveys can suggest which groups of the population might benefit from having higher intakes of some nutrients. Fortification is defined as "the practice of deliberately increasing the content of an essential micronutrients , ie vitamin and minerals (including trace elements) in a food, so as to improve the nutritional quality of the food supply and provide a public health benefit with minimal risk to health"(1)

Historically, widespread deficiencies of iodine and vitamin D were seen in all over the world, making goitre and rickets commonplace. Goitre indicate severe iodine deficiency, but a degree of mental impairment can occur even when deficiency is mild. An effective strategy to control iodine deficiency has been the iodisation of salt .(2). Since the introduction of iodised solt in 1922, Switzerland has reduced its high goitre rates dramatically and today maintains an adequate level of intake in its population . a similar success story was told by countries fortifying milk with vitamin D, almost eliminating childhood reckets. .(3). Likewise ,mandatory fortification of margarine with vitamin A and D to mirror amount found in butter, for which it is commonly used as a substitute, has helped establish what is termed nutritional equivalence . .(1).

Restoration and substitution-Nutrients or food components may be added for a variety of reasons: **Restoration** – this is where nutrients lost during food processing are replaced. For example iron, thiamine and niacin must be added to brown and white flour, as they are removed with the bran during the milling of wheat to make white and brown flour. **Substitution –** nutrients are sometimes added to produce a substitute product with similar nutritive value. For example, some soya based drinks sold as a substitute for cow's milk may have calcium voluntarily added.

Why fortify foods? - Adding nutrients to foods, particularly staple foods such as cereals, milk products, sugar, oil and salt, can increase intakes among most of the population. In countries where intakes of certain nutrients are very low, fortification can help to reduce nutrient deficiency diseases. For example, the addition of iodine to salt to decrease iodine deficiency disorders such as goitre. Fortification of some foods may also be seen as providing a marketing advantage, especially where the purchasers have some awareness of the 'benefits' of the nutrient being added. This may include adding nutrients to products that would not normally be a natural source, such as adding omega-3 fatty acids to breads and fibre to yogurts. The addition of a nutrient may also offer some technical benefit (for example, vitamin C is an antioxidant and can reduce the rate of spoilage in some products), or a direct health benefit for a subgroup of the population (for example fortification of flour with folic acid to prevent neural-tube defects in babies).

Fortification of food under the government supported programmes -

a) Fortification of ICDS Supplementary cooked food .
b) Fortification of food for the mid day meal .
c) Fortification of factory products ready to eat (RTE) food.
d) Fortification of wheat flour supplied through targeted public distribution system (TPDS)
e) However, for the packaged food available in the open market there are no clear guideline on nutrients that can be fortified or are permissible under law.
f) Under the prevention of food adulteration Act (PFA), The food safety and standards Act (FSSA)

Voluntary fortification guidelines are only given for: whole wheat flour (Atta) and Refined wheat flour (Maida)

Vehicles for fortification with combination of micronutrients

Vehicles	Micronutrients
Edible common salt	Iron and iodine
Whole wheat flour & Maida	Iron ,folic acid , calcium, zinc
Rice	Iron ,folic acid , calcium, zinc
Vegetable oils	Vitamins A &D
Milk and dairy products	Vitamins A &D , iron ,folic acid , calcium , omega -3,6 fatty acids
ICDS supplementary foods sugar	Iron ,folic acid , calcium , Zink Vitamins A

*Asst. Professor (Home Science) Govt. Girls College, Neemuch (M.P) INDIA

Criteria for Fortification -

1. Nutrient deficiency should be widespread.
2. The vehicle food must be consumed by the target group.
3. The high consumption of fortified food will not lead to toxicity.
4. Addition of micronutrient should not change the taste, colour , flavour, texture and shelf-life of food item .
5. The main item of food should be centrally controlled and monitored. 6) The cost of fortification should be affordable.

Advantages of food fortification - Providing certain nutrients simultaneously in the same food improves the utilization of certain ,vitamins and minerals, eg vitamin C enhances the absorption of iron. Food fortification also providing nutrients through the regular food supply and distribution system reduces costs.

Disadvantages of food fortification - shelf life of fortified milled cereals is reduced . regular quality control is essential. Fortified food can fill certain nutrient gaps , yet they do not replace the need for a healthy , balanced diet comprising a variety of foods. Fortification can be self –limiting due to high levels of additional nutrients altering the taste and appearance of food .A diet providing the optimal level and balance of nutrients is potentially worthless if it dose not look or taste good enough to eat . in general fortified food users show better nutrient adequacy level attained through commonly consumed foods compared to non users. This effect may be related to higher nutritional awareness among users of fortified foods.

Future challenges of food fortification - Efforts are on – going to decipher the relationship between dietary needs and genetic make-up so that one day nutrient recommendations may be made on an individual basis. Furthermore, nutrient stability and absorption within fortified foods are continuously being improved. Together with refined and standardised methods to accurately assess dietary supply. They pave the way for a personal approach to optimising nutrient intake. And also create community awareness about benefits of food fortification , private sector, governments & International agencies need to make commitments for investing in food fortification .

References :-

1. WHO/FAO (2006).Guidelines on food fortification with micronutrients. Geneva ,Switzerland.
2. Zimmmmermann Mb et al.(2008) Iodine – deficiency disorders. Lancet 372(9645):1251-1262.
3. Gordon CM et al.(2008) Prevalence of vitamin Ddeficiency among healthy infants and toddlers Arc pediatr Adolese Med 162;505-512.
4. http://www.gainhealth.org/events/staple-food fortification – crucial-fight-against-malnutrition-India.

****

A Cross Sectional Study For Assessment Of Awareness Regarding Nutrition Among Adolescent Girls in Rewa City

Dr. Abha Goel * Sangita Sharma **

Introduction - Adolescence is described as the period in life when individual is no longer a child ,but not yet as adult I, e the age group of 11 to 19 years . the term adolescence is derived from the Latin word , adolescence meaning to grow to mature.

Definition- the period of transition from child hood to adult hood is called adolescence with accelerated physical , biochemical and emotional development . growth velocity is maximum for boys between 12-15 years and for girls between 10-13 years.

Early adolescence – 11 to 13 years.
Mid adolescence – 14 to 16 years.
Late adolescence – 17 to 19 years.

Food Habits And Eating Behaviors

Food habits that are seen more frequently among teens that other age-group include irregular consumption of meals, excessive snacking, eating away from home (especially fast-food venues), dieting, and meals skipping. Many factors contribute to these behaviors, including decreasing influence of family and increasing influence of peers on food and health choices, increasing exposure to media, increasing prevalence of employment outside the home, greater discretionary spending capacity, and increasing responsibilities, leaving less time for teen to eat meals with their families. Most adolescent are aware of the importance of nutrition and the components of a healthy diet; however, there are many barriers to choosing health food and beverages.Teens cite taste, time, and convenience as the key factors that affect their food and beverage choice .lack of time to locate or prepare health food is frequently mentioned as the most significant barrier to eating properly. Other factors identified as important influences on food and beverages choices by teens are the availability of food, the perceived benefits of food, and the context or situation in which eating takes place.

Developmentally, many teens lack the ability to associate current eating habits with future disease risk and show little concern for their future health. Teens are often more focused on "fitting in" with their peers will adopt health behaviors that demonstrate their quest for autonomy and make them feel more like adults such as drinking alcohol, smoking, and engaging in sexual activity. Nutrition education and counseling should focus on short –term benefits, such as improving school performance, looking good, and having more energy. Messages should be positive, developmentally appropriate, and concrete, emphasizing skills to help teens make healthy choices. Specific skills such as looking for food with no more than 5 g of fat per serving, ordering broiled rather than fried meats, and choosing baked rather than fried snack chips are key concepts to include in nutrition education and counseling for adolescents.

Irregular meals and snacking - Meal skipping is a common behavior among adolescent. Meal skipping increases to early throughout adolescent as teens try to sleep longer in response to early school start time, try to lose weight through calorie restriction, and as their lives become busier in general. Breakfast is the most commonly skipped meals, especially among adolescent females. National data suggest that 24% of females and 20% of males skip breakfast on a given day (1996). Breakfast is skipped by 15% of 9-to 13 year-olds; however, it is skipped by 34% of female and 28% of 14- to 18-year-old males (2001). Breakfast skipping has been associated with poor health outcomes including higher BMI, poorer concentration and school performance, and increased risk of inadequate nutrient intake, especially of calcium and fiber.

Material method - This cross sectional study was conducted among school going in rewa in order to assess knowledge about nutrition . this survey included 100 girls of 9ht to 12th class.

25 girls were taken each Mahesh memorial school ,martand school ,s k school and other school from 20-10-2010 to 20-11-2010.During this project nutrition related question were asked to girls according prediction questioner.

Girls were asked about need for daily food, daily breakfast , calories requirement , type of food question about source of minerals, and vitamins, were included form milk on of egg etc. were examine , it asked also that wither they doing unnecessary fasting etc.

1. **Table (See in the last page)**
2. **Table (See in the last page)**

Discussion – in this study survey was conducted among school going girls in rewa order to assessment of awareness regarding nutrition among adolescent girls.

This survey included 100 girls 9 to 12 class student each from Mahesh memorial school ,martand school , s k school and other school .the profarma well distributed among these girls to fill in the details asked about nutrition the proformas had a net of 16 objectives question .is age group which had 50% of 14-16 year of girls and represent family income out of the total 76% girls belong to families having low income group and 75% girls belong to nuclear families which shows inclination of to days generation to words nuclear families.

* Professor, Govt. Girls Degree College, Satna (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Awadhesh Pratap Singh University, Rewa (M.P.) INDIA

61% girls said that major source of income to the family is father's occupation which shows the level of knowledge , literacy which leads to unemployment.And puts up a question that what is the need to take food daily .out of the total only 54% think that if they take food daily, they are ought to get some energy to work and survive.And 73 % girls take break fast daily. again put up a question about daily calories requirement .majorly of girls I.e 73 % girls had no idea about daily calorie intake and its need. What all thing should be included in diet 68 % girls said that proteins as well as vitamin should be included in daily diet.

Is about good source of iron only 45% girls thing that suggested, god, spinach and ground nut all good source of iron. about extra source of iron majorly of girls do not take any extra source of iron in his diet .whether they take egg in his diet 61% don't take egg in this diet and 80% of girls are vegetarian. this could be one of the reason why only 61% of girls do not take eggs.

89% a good no of girls take iodized salt in diet which shows this knowledge about over non iodized salt. This also sufficient their level of awareness about their health.70% girls like to have green vegetable is their daily diet.61% girls drink milk daily .on asking some said that don't like the taste ,they feel nauseating by the only sight or smell of the milk which is nearly an issue for concern.Out of total 55% girls take 50-75% of the required calories.49% girls take protein 50-75% of the protein .theyactually require 33% girls take 50-75% of daily iron requirement.Only 56% girls take apart from routine meals after like other food. 67% girls are like fasting , its major cause in girls to health damage related problem. 59 % girls like eating during sickness. So 59 % girls said refiner's this level of awareness.

45% girls asked I don't avoid eating food .it result fever for health for health and girls are aware for health.

Result - Total no of girls 100. 89% girls use iodized salt,81% don't use extra source of iron, 80%girls are vegetarian, 76% girls belong to low income families, 75% girls live in nuclear families, 73% girls take breakfast daily, 73%girls don't know about calories,70% girls take green vegetable in their diet, 68% girls in diet included protein and vitamins, 67% girls don't take egg,67% girls like fasting, 61% girls drink milk daily, 59% girls eating like to regular meal during sickness, 56% girls take other food apart from regular meals, 56% girls take between 50-75% calories, 54 % girls take food for energy, 50% girls belong to 14-16 age group, girls take between 50-75% protein, 45% girls take godh, spinach ground nut and think that they are source of iron, 45% girls don't avoid a require meals, 33% girls take between 50-75% iron.

Suggestions – teens who skip meals often snack in response to hunger instead of eating a meal. Adolescent consume approximately two snacks per day, accounting for 25% of daily calorie intake and averaging 612 kcal/day. Snack food consumed by teens are often high in added fats, sweeteners, and sodium. Soft drinks are the most commonly consumed snacks, accounting for 6% of daily calorie intake among teens. Because snacking is prevalent among adolescent and snacks are often consumed in place of meals, teens should be encouraged to make healthy choices when choosing snack food and beverages rather than to avoid snacking.

References :–

1. L.Kathleen mahan : food nutrition & diet therapy
2. O.P ghai : essential pediatrics
3. B . srilakshmi : dietetics

1. Table

S.No	Age		Income		Family		Occupation	
1.	14-16	60%	1-15000	76%	nuclear	75%	Service	61%
2.	17-19	40%	16-30000	24%	Joint	25%	Biasness	39%

2. Table

S.No	Items	No of percentage
1	Girls take food for energy	54%
2	Girls take breakfast daily	73%
3	Girls don't know about calorie	73%
4	Girls in diet include protein and vitamin	68%
5	Girls take good source if iron like- gudh, spinach ,ground nut etc	45%
6	Girls don't take egg	67%
7	Girls are vegetarian	80%
8	Girls use iodized salt	89%
9	Girls take green vegetable in their diet	70%
10	Girls drink milk daily	61%
11	Girls take between 50-75% calories	55%
12	Girls take between 50-75% protein	49%
13	Girls take between 50-75% iron	33%
14	Girls like fasting	67%
15	Girls eating like to regular meal during sickness	59%
16	Girls don't avoid a require meals	45%

बालक-बालिकाओं द्वारा भोजन संबंधी आदतों में बदलाव पर अध्ययन सागर शहर के संदर्भ में

डॉ. आराधना श्रीवास * डॉ. रेनूबाला शर्मा ** डॉ. मंजू दुबे ***

शोध सारांश – बाल्यावस्था जीवन की महत्वपूर्ण अवस्था है इस अवस्था में वृद्धि की तीव्रता के कारण पोषक तत्वों की अत्यन्त आवश्यकता होती है। जीवन में पोषण का महत्वपूर्ण स्थान है स्वस्थ रहने के लिये उचित पोषण आवश्यक है। भोजन जीवन की आधारीय आवश्यकता है और भोजन ही शरीर का पोषण करता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, 'स्वास्थ्य वह स्थिति होती है, जिसमें न केवल बीमारी की ही अनुपस्थिति हो बल्कि संपूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक कुशलता होती है।'

भारत और अन्य विकासशील देशों के शालेय बालकों के आहार के जो सर्वेक्षण किये गये हैं उनसे मालूम हुआ है, कि इनके आहार में कैलोरी, प्रोटीन, विटामिन-ए, राइबोफ्लेबिन, फोलिक एसिड और आयरन की कमी रहती है। इन बालकों में फोलिक एसिड और आयरन की कमी के कारण से होने वाले एनीमिया के चिन्ह और लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं। अत: आहार की संतुलितता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। जहाँ उच्च आय वर्ग में मांसल पदार्थ, दूध तथा दूध से बने पदार्थ, अण्डा, मछली, मेवे आदि दिये जा सकते है। वहीं दूध और प्राणिज खाद्य पदार्थों की मात्रा मध्यम आय वर्ग समूह में स्थान पाती है जबकि निम्न आय वर्ग में अनाज, मूँगफली तथा हरी पत्तेदार सब्जियों की पर्याप्तता होती है।

प्रस्तावना – परिवार बालक की प्रथम पाठशाला होती है, शालेय अवस्था में बालक अपने परिवार निकट सम्बन्धी तथा मित्रों से घनिष्ठता स्थापित कर एक विस्तृत क्षेत्र में प्रवेश करता है। जहाँ मैत्री भाव, नेतृत्व की भावना तथा अनुकरण ये तीन महत्वपूर्ण भाव बालक में होते हैं। भोजन की आदतों पर इन सबका प्रभाव होता है। 8 से 10 वर्ष की आयु में बच्चों को भूख अधिक लगती है परन्तु अत्यन्त चंचल रहने के कारण वे भोजन के लिये समय नष्ट नहीं करना चाहते हैं।

आज के सम्पन्न भौतिकवादी युग में लुभावने भोज्य पदार्थों की ओर आकर्षित होने के कारण पौष्टिक भोजन सम्बन्धी आदतों में अनेक बदलाव प्रतीत होते हैं।

1. बालक-बालिकाओं को स्वयं की भोज्य पदार्थों की आवश्यकता का ज्ञान न रहने की स्थिति में एवं बड़ों की भोजन सम्बन्धी आदतों की नकल करने पर बालक-बालिकाएँ अपनी स्वयं की भोज्य तत्वों की आवश्यकता की पूर्ति करने में असफल हो जाते हैं, जिससे वह उचित खाद्य पदार्थों का चयन नहीं कर पाते हैं।
2. बालक-बालिकाओं द्वारा उनके मित्रों की खाने-पीने सम्बन्धी आदतों को आदर्श मान लिया जाता है। इस आदर्श पर आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक मान्यताओं का प्रभाव सम्पूर्णत: पड़ता है, जिससे कि बालक-बालिकाएँ कई भोज्य/खाद्य पदार्थों को उच्च अथवा निम्न समझने लगते हैं तथा उच्च वर्ग के मित्रों के खान-पान की नकल करने की पूर्णत: कोशिश करते हैं,जिससे बच्चे फास्ट-फूड को अपनाने लगते हैं।
3. परिवार में जहाँ सभी बड़े व्यक्ति घर के बाहर काम करने लगते हैं, वहाँ पर इस आयु के बालक-बालिकाओं के समक्ष विशेष समस्या उपस्थित हो जाती है। उनके भोजन के समय घर में पालकों का उपस्थित न रहना बालक-बालिकाओं में फास्ट-फूड लेने की आदत को विकसित करता है।
4. कई परिवारों में अभिभावक अपने समय की बचत करने के लिये बच्चों को फास्ट-फूड खिलाना अधिक पसन्द करते हैं,जिससे बच्चे फास्ट-फूड लेने के आदि हो जाते हैं।

आदते बच्चों को जीवन में सही दिशा देती हैं, जिनके आधार पर वे देश के कर्णधार बनते हैं। अच्छी आदतों का देश और समाज पर बहुत बड़ा असर पड़ता है अत: उन्हें अपनाने का भरसक प्रयास करना चाहिए।

- **मिडिलमेन एवं उनके साथी (1998)** बालक-बालिकाओं के भोजन करने की आदतों, शारीरिक क्रिया और उनके वजन में क्या परिवर्तन पाए गए इसका अवलोकन किया।
- **शॉ एवं मैरी (1998)** ने अध्ययन में यह दर्शाया है कि भोजन सम्बन्धी आदतों के अन्तर्गत अधिकांश बच्चे नाश्ते को महत्व नहीं देते, जबकि यह एक अनिवार्य आहार है।
- **होल्ड (2009)** बाल्यावस्था में स्वस्थ भोजन सम्बन्धी आदते स्थापित कर महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। यदि बालक-बालिकाओं के द्वारा अपर्याप्त भोजन लिया जाता है, तो बाद में दीर्घकालिक रोग, मोटापा, हृदय सम्बन्धी रोग, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, ओस्टियोपोरोसिस और कैंसर आदि की सम्भावना बढ़ जाती है।
- **वेश्लर व अन्य (2000)** ने स्कूली छात्रों पर किये अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला कि बालक-बालिकाओं में भोजन सम्बन्धी आदते सुधारने में स्कूल के शिक्षकों को अधिक रूचि लेनी चाहिये।
- **डॉ. मुनीरा एम. हुसैन एवं रशिदा कांचवाला इन्दौर (2006)** के

* अतिथि विद्वान (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या कमला नेहरू महिला महाविद्यालय, दमोह (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
*** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

कथन के अनुसार बालक–बालिकाओं में खाने के तरीके प्रौढ़ावस्था में सेहत को प्रभावित कर सकते हैं क्योंकि भोजन के चुनाव से सम्बन्धित व्यवहार को हम 2 से 18 वर्ष की आयु से जान सकते हैं विशेषज्ञों का कहना है कि व्यवधान (Intervention) का आरम्भ इस आयु के पूर्व या इसी समय में होना चाहिए जब व्यवहारों के प्रतिमान परिवर्तन के कम विरोधी होते हैं जिससे व्यवधान अधिक प्रभावशाली हो सके।

इस आयु में बालक–बालिकाएँ अधिक स्वतन्त्र होकर नई–नई पसन्द की ओर आकर्षित होते हैं जो आगे अस्वास्थ्यकर आदतों की ओर ले जाती हैं आजकल युवाओं का स्वास्थ्य से सरोकार मीडिया मित्र मंडली परिवार और सामाजिक क्रिया कलापों से संचालित होते हैं। इसके बावजूद भी अस्वास्थ्यकर आहार आदतें बालक–बालिकाओं में अधिकता से उपस्थित होती है। जो हमें उनके खानपान की गड़बड़ियों जैसे बुलिमिया (बार–बार अधिक खाना) अनेक्झेरिया (anexoria½) (किशोरियों में मोटे हो जाने का भय) के रूप में दिखाई देता है।

प्रस्तुत अध्ययन के अवलोकन से स्पष्ट है कि बालक–बालिकाओं में खान–पान की आदतें नियमित नहीं होती जिसके कारण खानपान की आदतों तथा वजन के मध्य सम्बन्ध भी देखा गया है बालक–बालिकाओं में खानपान की अनुचित आदतों एवं उनके शरीर के वजन का स्तर स्पष्ट करता है कि युवाओं के लिये शिक्षा का ऐसा पैकेज तैयार किया जाना चाहिए जो उनमें एकदम सही आहार आदतें तथा सन्तुलित वजन का संदेश दे सकें क्योंकि यह अवस्था बालक–बालिकाओं में बनी आदतें आजीवन बनी रहती हैं।

शोध अध्ययन की प्राक्कल्पना– बालक–बालिकाएँ फास्ट फूड के साथ – साथ भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द नहीं करते है ।

शोध अध्ययन का उद्देश्य– इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बालक–बालिकाओं के भोजन सम्बन्धी आदतों की जानकारी ज्ञात करना है।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु सागर शहर के विभिन्न विद्यालयों में से 8 से 13 वर्ष के 300 बालक–बालिकाओं का दैव निर्दशन विधि से चयन किया गया। इसमें बालक–बालिकाओं के द्वारा भोजन सम्बन्धी आदतों के संबंधों को ज्ञात करने के लिये प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। सांख्यिकी विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन विधियों का उपयोग किया गया। (तालिका क्रमांक 1,2 ग्राफ क्रमांक 1,2) परिणामों की सार्थकता ज्ञात करने हेतु टी' टेस्ट का उपयोग किया गया।

तालिका क्र. 1

परिवार के भोजन के प्रति सचेत रहना

क्र.	परिवार के भोजन के प्रति सचेत रहना	बालक		बालिकाएँ	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	75	50	81	54
2.	नहीं	35	23.33	15	10
3.	कभी–कभी	40	26.66	54	36
	कुल	**150**	**100**	**150**	**100**

तालिका क्र. 1 में परिवार के भोजन के प्रति सचेत रहने की स्थिति को संकलित किया गया है जिसके अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 में से 150 बालक व 150 बालिकाएँ हैं। 150 बालकों के परिवारों में से 75(50 प्रतिशत) परिवार भोजन के प्रति सचेत रहते पाए गए, 35(23.33 प्रतिशत) परिवार भोजन के प्रति सचेत नहीं रहते पाए गए व 40(26.66 प्रतिशत) परिवार भोजन के प्रति कभी–कभी सचेत रहते पाए गए। इसी प्रकार 150 बालिकाओं के परिवारों में से 81(54 प्रतिशत) परिवार भोजन के प्रति सचेत रहते पाए गए। क्रमश: 15(10 प्रतिशत) व 54(36 प्रतिशत) परिवार ऐसे पाये गए जो भोजन के प्रति सचेत नहीं रहते हैं व भोजन के प्रति कभी–कभी सचेत रहते हैं।

प्रस्तुत तालिका के विवरण से स्पष्ट होता है कि बालिकाओं के परिवार बालकों के परिवार की तुलना में भोजन के प्रति अधिक सचेत रहते पाए गए।

ग्राफ क्र.1 : (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 2

भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव

क्र.	भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव	बालक		बालिकाएँ	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	पसन्द	8	5.33	12	8
2.	नापसन्द	142	94.66	138	92
	कुल	**150**	**100**	**150**	**100**

प्रस्तुत अध्ययन तालिका क्र. 2 बालक–बालिकाओं के भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव को प्रदर्शित किया गया है। जिसमें 150 बालकों में से 8(5.33 प्रतिशत) बालक अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द करते पाये गये व 145(94.66 प्रतिशत) बालक अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द नहीं करते पाये गये इसी प्रकार 150 बालिकाओं में से 12(8 प्रतिशत) बालिकाएँ अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द करती पायी गयी व 138(92 प्रतिशत) बालिकाएँ अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द नहीं करती पायी गयी।

5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर काई वर्ग का परिगणितीय मान 1.99 है जो सारणी मूल्य 3.84 से कम है।

ग्राफ क्र.2 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

निष्कर्ष –

1. प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि बालक/बालिकाएँ फास्ट–फूड के साथ भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव पसन्द नहीं करते पाये गये।

   0.05 स्तर पर टी का परिगणितीय मूल्य 0.77 है जो कि उसके सारणी मूल्य 12.71 से कम है अत: उपकल्पना सत्य प्रमाणित हुई। जो यह दर्शाती है कि बालक–बालिकाएँ अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों में कोई बदलाव नहीं चाहते।
2. प्रस्तुत अध्ययन में देखा गया कि बालक–बालिकाओं के परिवार भोजन के प्रति सचेत तो रहते पाये गये परन्तु वह अपने बच्चों की भोजन सम्बन्धी आदतों को सुधार नहीं करते पाये गये।

स्वामी विवेकानन्द जी का ध्येय था कि प्रत्येक नागरिक को उत्तम पोषण मिले। मानव जीवन के निर्माण काल से ही पोषण को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। बाल्यावस्था में पोषण का महत्व द्विगुणित हो जाता है क्योंकि यह वृद्धि एवं विकास की तीव्र अवस्था है। आज का बालक कल का नागरिक है तथा बालिका भावी जननी है ये स्वस्थ पीढ़ी को जन्म देकर राष्ट्र को सबल बनाने में सहयोगी होगी, इस दृष्टि से बालक और बालिकाओं के पोषण का स्तर और भी बढ़ जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Subulaksmi G., Shobha A., Ddipin (2009): "Food processing & preservation.

2. Venkaiah K., Damayanti K., Nayak M.V., Vijayraghavan K. (2002) : "Diet and Nutritional status of rural adolescents in India Ex. J. Clin Nutr. 56:1119-1125.
3. Jellife D.B., : The Assessment of the nutritional status of the Community no. 53,Geneva, W.H.O.
4. Joanne Hendrick, "The whole child developmental education for the early years', sixth edition P.N. 67-77.
5. Dr. Joshi Subhangi (2004), "Nutrition and Dietetics', Tata McGraw Hill, Delhi, p. 422-424.
6. गोस्वामी सुबुद्धि, बाल विकास की दिशाएँ, श्याम प्रकाशन जयपुर, पृ. 122-125।
7. त्रिवेदी आर.एन., शुक्ला डी.पी. (2008), रिसर्च मैथडोलॉजी, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
8. चांदेकर रमेश (2009), सामाजिक अनुसंधान, सत्य प्रकाशन, संचार केन्द्र, इन्दौर, पृ. 21-22।
9. श्रीवास्तव डी.एन. (1996), सामाजिक व मनोवैज्ञानिक अनुसंधान, पंचम संस्करण, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

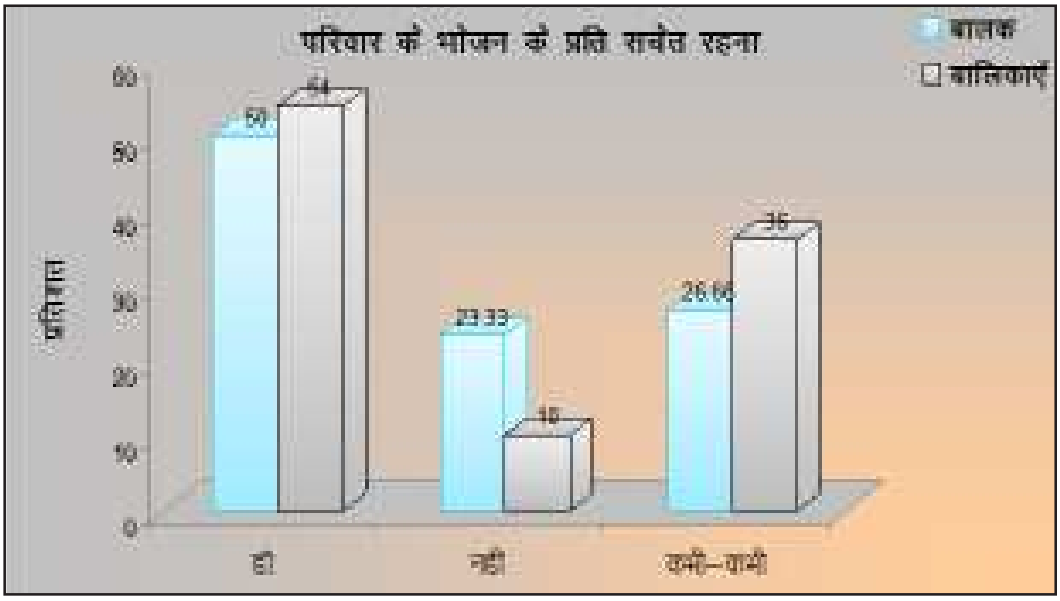

ग्राफ क्र 1 - परिवार के भोजन के प्रति सचेत रहना

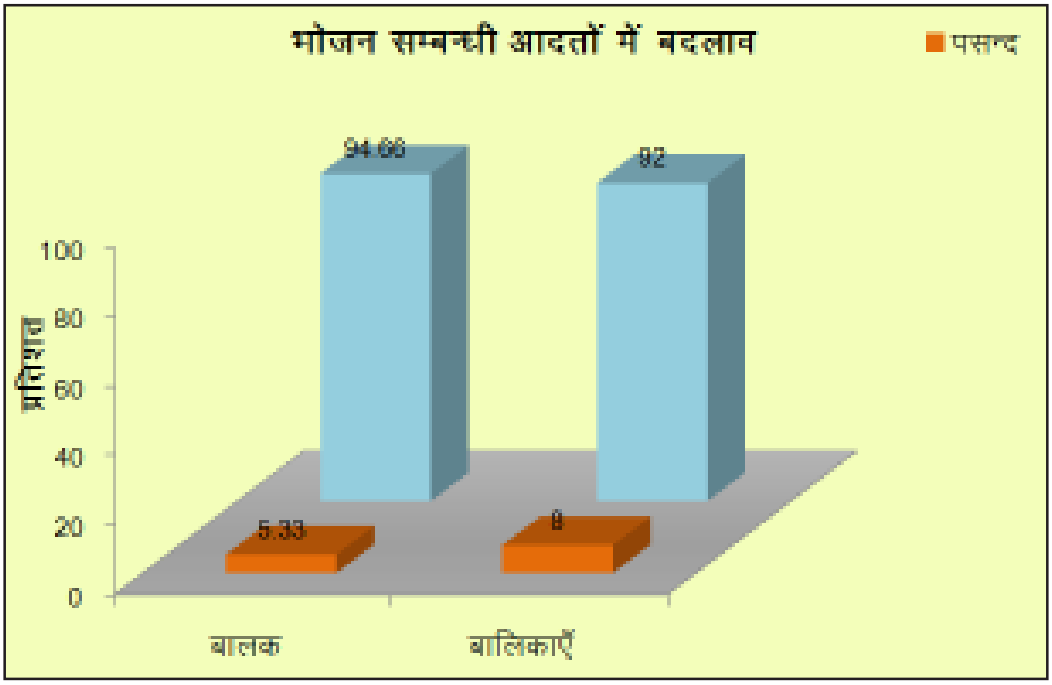

ग्राफ क्र.2 - भोजन सम्बन्धी आदतों में बदलाव

****

मधुमेह देखभाल में मनोवैज्ञानिक की भूमिका

डॉ. मोहिनी सकरगायें *

प्रस्तावना – आज की बदलती शैली हमारी दिनचर्या को बदल रही है। कार्य घंटों में बदलाव कार्य की अधिकता, व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा, समूह में सर्वोच्च बने रहने की लालसा अधिकाधिक भौतिक सुखों को प्राप्त करने की हमारी मंशा हमें लगातार एक ऐसी दिनचर्या में ढकेल रही हैं जहाँ हम स्वास्थ्य को नजर अंदाज कर मात्र भौतिक सुख रूपी फल को प्राप्त करने में प्रयासरत् है।

उपरोक्त सभी स्थितियाँ एक सामान्य मनुष्य में चिंता, तनाव एवं दबाव को दो गुना कर रही है। ऐसे में हमारे शरीर में चयापचय से संबंधित कई क्रियाएँ प्रतिक्रियाएँ प्रभावित हो रही है। जिसके विपरीत परिणामों के रूप में एक आम व्यक्ति उच्च रक्तचाप, हाइपर टेंशन एंव मधुमेह जैसी बीमारियों से पीड़ित हो रहा है।

'चिकित्सक मधुमेह को चयापचयिक बीमारियों का समूह मानते है। जिसमें रोगी के शरीर में इन्सुलिन का निर्माण न होना, इन्सुलिन की मात्रा में कमी या रोगी के शरीर की पेशियाँ इंसुलिन का सही उपयोग नहीं कर पाती है। जिसके कारण रोगी के रक्त में शर्करा की मात्रा सामान्य से अधिक हो जाती है।'

सामान्यत: मधुमेह तीन प्रकार में जनमानस में व्याप्त हैं–

1. Type- I – मधुमेह के कुल रोगियों में इनकी संख्या मात्र 10 प्रतिशत होती है। इसमें रोगी के शरीर में Insulin निर्मित ही नहीं होता है। इसे Javenile diabetes या फिर early onset diabetes भी कहते है। कुछ चिकित्सक इसे Insulin dependent diabetes भी कहते है। ऐसे रोगियों को सम्पूर्ण जीवन Insulin Inject कर बिताना पड़ता है। इन रोगियों को अतिरिक्त देखभाल की आवश्यकता होती है।

2. Type- II – मधुमेह के कुल रोगियों में इनकी संख्या मात्र 90 प्रतिशत होती है। इस प्रकार में रोगी के शरीर में आवश्यक या अनिवार्य मात्रा में Insulin बन नहीं पाता है या फिर शरीर के cells सही तरीके से Insulin के साथ क्रिया नहीं कर पाते है। इस प्रकार में कुछ लोग वजन कम करके, healthy diet लेकर, प्रचुर मात्रा में व्यायाम करके तथा Blood sugar की monitoring करके कुछ समय के लिए मधुमेह को रोक लेते है पर अतंत: उन्हें Insulin का सहारा लेना ही पड़ता है।

3. Gestational Diabetes – गर्भावस्था में कई महिलाओं के रक्त में शकर्रा की मात्रा बढ़ जाती है। आमतौर पर 80 प्रतिशत गर्भवती माताएँ व्यायाम तथा खानपान से Blood sugar को नियंत्रित कर लेती है। केवल 10–20 प्रतिशत महिलाओं को इंसुलिन की आवश्यकता होती है। अनियंत्रित मधुमेह शिशु जन्म में जटिल समस्याएँ उत्पन्न करता है।

मधुमेह के सभी रोगियों में सामान्यत: पाए जाने वाले लक्षणों में Three `P' Symptoms अत्यधिक प्रसिद्ध है –

i. P – Polyuria (Frequent Urinatione)
ii. P – Ploydipsia (Disproportionate thirst)
iii. P – Polyohagia (Intense hunger)

इनके अलावा अचानक वजन का बढ़ना, या घटना, अत्यधिक थकान, आँखों में धुंधलापन, घाव का जल्दी ना भरना, त्वचीय संक्रमण बार–बार होना, खुजली आना, मसूढ़ों का लाल होना या उनमें सूजन आना उनमें संक्रमण होना, पुरूषो में नपुंसकता का बढ़ना, हाथ एवं पैरों में झुनझुनी आना या सुन्न हो जाना आदि।

अनियंत्रित मधुमेह से जुड़ी हुई विकारग्रस्त बीमारियाँ –

1. Eye Complications – ग्लूकोमा, मोतियाबिंद, डायबिटिक, रैटिनोपैथी आदि।
2. Foot Complications – न्यूरोपेथी, अल्सर एवं गैंगरीन
3. Skin Complications – सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा Skin infection एवं Skin Disorders अधिक होते है।
4. Heart Problem – Ischemic heart disease
5. Hypertension – Very Common इसके कारण – Kiddney disease, eye problem, heart attack and stroke.
6. Mental Health – Uncontrolled disease – Depression, Anxiety etc.
7. Hearing loss
8. Gum disease
9. Gastroparesis – Stomach properly work Zht H$aVm h¡&
10. Ketoacidosis – Ketosis and acidosis
11. HHNS – (Hyper osmolar, Hyper glycemic Nonketonic Syndrome) Blood sugar level shoot up very hiegh ब्लड तथा यूरीन में किटोन्स नहीं होते है। यह एक आपातकालीन अवस्था है।
12. Nephorpathy – अनियंत्रित ब्लड प्रेशर के कारण किडनी डिसीज
13. PAD – (peripheral arterial disease) पैरों में दर्द, झुनझुनी आना, चलने में कठिनाई।
14. Stoke – ब्लड प्रेशर, कोलेस्ट्राल लेवल एवं ब्लड ग्लुकोज अनियंत्रित हो तो स्ट्रोक की संभावनाएं बढ़ जाती है।
15. Erectie disfunction – Male impotence.
16. Infection – अनियंत्रित ब्लड शुगर को संक्रमण की संभावना को बढ़ा देता है।
17. Healing of wounds – शरीर पर लगे घाव को भरने में सामान्य से अधिक समय लगता है।

मधुमेह देखभाल में मनोवैज्ञानिक की भूमिका – वास्तव में मधुमेह का उपचार एक प्रशिक्षित टीम के द्वारा किया जाना चाहिए इस टीम में चिकित्सक, नर्स (जो मधुमेह की जानकारी प्रदान करेगी) पोषण विशेषज्ञ एवं मनोवैज्ञानिक होना चाहिए इस टीम में मनोवैज्ञानिक दोहरी भूमिका निभाते है एक ओर वे रोगी को प्रत्यक्ष रूप से स्वास्थ्य व्यवहारों एवं उसकी मानसिक

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

परेशानियाँ- चिंता, तनाव एवं दबाव के व्यवस्थापन में सहायता करते है वहीं दूसरी ओर चिकित्सक एवं नर्स को रोगी के रोग के स्तर के साथ उसकी देखभाल एवं उपचार के लिए परामर्श देते है।

वैसे यह भी सच है कि प्रत्येक मधुमेह रोगी मानसिक परेशानियों से ग्रस्त नहीं होता है। परंतु फिर भी मधुमेह रोगियों को मनोवैज्ञानिक से सलाह लेना चाहिए क्योंकि आमतौर पर लगभग 93 प्रतिशत से 97 प्रतिशत तक मधुमेह रोगियों के व्यवहारों में कुछ समानता दिखाई देती है-

Rates of Nonadherence to Diabetes Regimen tasks	Percentage
Diet – Not following meal plan	35-75%
Insulin – improper administration	20-80%
Blood glucose testing – inaccurate recording	30-70%
Footcare – inadequate care	23-52%
Exercise – Inadequate amounts	70-81%

उपरोक्त सारणी को देखते ही एक सामान्य व्यक्ति भी यह जान सकता है कि मधुमेह के रोगी को मनोवैज्ञानिक परामर्श की आवश्यकता क्यों होती है क्योंकि हम या आप यह तो जानते ही है कि मधुमेह एक ऐसा रोग है जो कभी ठीक नहीं होता है। यह वह अवस्था है जो अपने साथ कई और बीमारियाँ भी साथ लाती है। मधुमेह के रोगियों में अक्सर मधुमेह से जुड़े कुछ अंधविश्वास प्रचलित है जिनका निराकरण एवं उससे संबंधित परामर्श एक मनोवैज्ञानिक ही दे सकता है।

मधुमेह से जुड़े अंधविश्वास -

1. मधुमेह के रोगियों को व्यायाम नहीं करना चाहिए।
2. मोटे व्यक्तियों को टाईप-2 डायबिटिज होती ही है।
3. मधुमेह कष्टदायक है गंभीर नहीं।
4. बच्चों में उम्र बढ़ने के साथ-साथ मधुमेह भी चला जाएगा। (अधिकांशत: बच्चों को टाईप-1 मधुमेह होता है।)
5. अधिक शक्कर खाने से डायबिटिज हो जाती है।
6. मुझे पता है मेरी ब्लड शुगर कब अधिक कब कम होती है।
7. मधुमेह के रोगी का खाना अन्य लोगों के खाने की अपेक्षा भिन्न होता है।
8. कुछ लोगों के लिए अधिक ब्लड शुगर ठीक है। जबकि अन्य लोगों में वहीं स्थिति डायबिटिज कहलाती है।
9. मधुमेह के रोगी ब्रेड, आलू और पास्ता नहीं खा सकते।
10. मधुमेह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हो सकता है।
11. केवल बुजुर्गों को ही टाईप-2 डायबिटिज होता है।
12. मुझे इंसुलिन लेना है मतलब मैं गंभीर मधुमेह की अवस्था में हूँ।
13. यदि आपको मधुमेह है तो आप चॉकलेट या मिठाई नहीं खा सकते।
14. सामान्यत: मधुमेह के रोगियों को सर्दी और बीमारियाँ ज्यादा होती है।

उपरोक्त सभी अंधविश्वासों के अलावा मधुमेह में एक स्थिति और होती है। किसी भी व्यक्ति में जब सर्वप्रथम मधुमेह की पुष्टि होती है तो व्यक्ति इस बीमारी के इलाज का हर संभव प्रयत्न करता है इन प्रयत्नों में ऐलोपेथी, आयुर्वेद, होमियोपैथी, नैचरोपैथी और यहाँ तक की कई चुर्ण, भस्म, आदि का भी प्रयोग कर लेता है और अचानक रोगी यह पाता है कि उसकी रक्त शर्करा सामान्य है। वह रोगी संतुष्ट हो जाता है तथा उसने किए हुए तमाम उपाय को वो कारगर मान लेता है और उसी का सेवन करने लग जाता है। तथा अन्य मधुमेह रोगियों को भी वहीं उपचार करने की सलाह देने लगता है। परंतु वास्तविकता कुछ और ही है। चिकित्सकों के अनुसार प्रत्येक मधुमेह रोगी में पहली बार ब्लड शुगर डिटेक्ट होने के बाद मधुमेह का विंडो पीरियड प्रारंभ होता है। इस अवस्था में रोगी में 6-8 महिने तक रक्तशर्करा सामान्य होती है। प्रत्येक रोगी के व्यक्तिगत बॉडी केमिस्ट्री पर यह निर्भर होता है कि उसमें यह विंडो पीरियड कितने दिनों का होगा। अर्थात् सच तो यह है कि मधुमेह का व्यवस्थापन इंसुलिन एवं संतुलित दिनचर्या से ही संभव है।

मधुमेह के व्यवस्थापन में मनोवैज्ञानिक की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है, मनोवैज्ञानिक जहाँ एक ओर मधुमेह से जुड़ी विभिन्न शंका, कुशंकाओं तथा अंधविश्वासों को दूर करते है वहीं दूसरी ओर रोगी को जीवन में मधुमेह के साथ ताल मेल स्थापित करने हेतु परामर्श भी देते है।

मनोवैज्ञानिक की भूमिका उस समय और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जब रोगी टाइप-1 से पीड़ित हो क्योंकि आमतौर पर यह स्थिति छोटे-छोटे बच्चों में अधिकांशत: देखी जाती है। इस अवस्था में मनोवैज्ञानिक परामर्श या सलाह की आवश्यकता पीड़ित को कम वरन् उसके माता-पिता, अभिभावकों को अधिक होती है। मूलत: अनिवार्य हो जाता है कि ऐसे रोगियों एवं उनके परिवार के सदस्यों को यह समझना कि अब आगे से रोगी को सम्पूर्ण जीवन इंसुलिन पर निर्भर रहना होगा, क्योंकि उसके शरीर में पेनक्रियाज में पाए जाने वाले लगरस ऑफ आयलेंड के Beta cells ने इंसुलिन बनाना बंद कर दिया है। अत: रोगी को इंसुलिन के साथ-साथ Meal Management की अनिवार्यता रहेगी।

मधुमेह का भयंकर एवं क्रुरतम् रूप हमें तब देखने को मिलता है जब किसी मधुमेह रोगी को Heart attack आता है। न्यूरोपैथी के कारण मधुमेहके रोगी को वो दर्द नहीं होता है जो सामान्यत: Heart patients को होता है। जिसके कारण sudden death के Chances Diabetes patients में बढ़ जाते है।

इसके अतिरिक्त भी शरीर में होने वाले अन्य complications की तीव्रता मधुमेह के कारण बढ़ जाती है। इसलिए चिकित्सक Diabetes को 'SILENT KILLER'भी कहते है।

मधुमेह के साथ जीवन यापन हेतु मनोवैज्ञानिकों की क्यों आवश्यकता हैं। इस बारे में चर्चा करें तो हम कह सकते हैं कि वर्तमान में चिकित्सकों के पास इतना समय नहीं होता है कि वो मधुमेह से ग्रसित प्रत्येक व्यक्ति को बीमारी के बारें में उसके दुष्परिणाम एवं उसके व्यवस्थापन के बारे में विस्तार से बताये। इन परिस्थितियों में मनोवैज्ञानिकों की भूमिका अहम् ही नहीं वरन् महत्वपूर्ण हो जाती है कि वे रोगियों को मधुमेह की सम्पूर्ण जानकारी दे क्योंकि मधुमेह के बारे में अज्ञानता, अपूर्ण ज्ञान एवं अंधविश्वास ही वे कारण हैं जो मधुमेह के रोगियों को complicated life या फिर sudden death तक पहुँचा रहे हैं।

वर्तमान में कई मनोवैज्ञानिक मधुमेह देखभाल के कार्य में निरंतर प्रयासरत् है। वे रोगियों को मधुमेह की जानकारी के साथ इस रोग से समायोजन एवं व्यवस्थापन किस प्रकार करे इसका प्रशिक्षण दे रहे है। जिससे रोगियों में मधुमेह से लड़ने का आत्मविश्वास पैदा हो रहा है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा सामान्यत: उपयोग में लिए जाने वाले Good Diabetes care के सिद्धांत है -

1. रोगी मधुमेह के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करें।
2. मधुमेह की नियमित देखभाल करें।
3. मधुमेह को किस तरह नियंत्रित किया जाय यह जानियें-सीखियें।
4. आपके मधुमेह के ABC'S की देखभाल करिये।
   A- Blood glucose Average
   B- Blood pressure

C- Cholesterol

5. मधुमेह के ABC'S को monitor करना सीखियें।
6. दीर्घकालीन बीमारियों को चेक करना एवं उनका उपचार कराना।

आमतौर पर 1/3 मधुमेह रोगी ही अपने सामान्य जीवनकाल में मानसिक परेशानियों से पीड़ित पाए जाते है। गंभीर अवसाद से प्रत्येक 5 रोगियों में से एक रोगी पीड़ित होता है। ऐसे रोगियों में अक्सर poor glycemic control पाया जाता है। जिससे Heart problems के होने की risk अधिक होती है। अत: कहा जा सकता है कि मधुमेह की देखभाल में मनोवैज्ञानिकों की अहम् भूमिका है। भूमिका का निर्वहन सम्पूर्ण जिम्मेदारी से करना यह मनोवैज्ञानिक का कर्तव्य हैं, परंतु साथ ही हम सभी का भी यह उत्तरदायित्व है कि मधुमेह का रोगी रोग की जानकारी एवं देखभाल हेतु मनोवैज्ञानिक तक पहुँचे। क्योंकि–

'मधुमेह राजरोग नहीं हैं, जिसका कोई इलाज न हो, यह एक शारीरिक असंतुलन हैं जिस पर, चिकित्सा उपचार और मनोवैज्ञानिक परामर्श द्वारा जीत हासिल की जा सकती हैं।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Diabetes – Wikkipedia
2. The psychologist in diabetes care- Michel a. Harris, Ph.D, and Patrick j. Lustman, Ph.D
3. Interview – Dr. Shirish Dingre

****

A Study On Consumer Buying Preference Towards Original Jewellery V/S Plated Jewellerye

Prof. Rajesh Jain* Astha Gupta Shikha Agrawal*****

Abstract - Jewellery is a form of personal adornment, such as brooches, rings, necklaces, earrings and bracelets. Jewellery may be made from a wide range of materials, but gemstones, precious metals, beads and shells have been widely used. The purpose of the present study is to analyze consumer buying preference towards original and plated jewelry. Objective of Study To study the perception and customer buying preference when prices are high what will be the customer's choice between real and imitated jewellery items. The random sampling technique is used to collect data from the respondents. The research design is based on exploratory research. Questionnaires were given to 100 respondents in jewellery industry in Indore city. On an analysis done, we can see that 62% of customers would go for purchasing of jewellery just on an occasion, whereas 25% of the customers would go for once in a year and only 13% of customers would go for once in a long time. Analysis shows that 39% of customers would if they prefer imitation jewellery, then they would prefer negotiable prices and 38% of customers would prefer low price or if prices would go down and only 22% of customers would go for the product buying if the jewellery is on credit. Budget is the primary factor for buying any jewelry since generally it is observed that imitation jewellery costs lower than the original.
Key words - Exploratory research, occasion, Budget, negotiable prices, imitation jewellery.

Introduction - Jewellery is a form of personal adornment, such as brooches, rings, necklaces, earrings and bracelets. Jewellery may be made from a wide range of materials, but gemstones, precious metals, beads and shells have been widely used. Depending on the culture and times jewellery may be appreciated as a status symbol, for its material properties, its patterns, or for meaningful symbols. Jewellery has been made to adorn nearly every body part form hairpins to toe rings. Most American and European gold jewellery is made of an alloy of gold, the purity of which is stated in karats, indicated by a number followed by the letter K. American gold jewellery must be of at least 10K purity (41.7% pure gold) and typically found up to 18K (75% pure gold). The silver used in jewellery is usually sterling silver, or 92.5% fine silver. The demand for jewellery is dependent upon consumer income, as well as the global cost of gold and silver.

Review of Literature - Prezemyslaw Radomski (2006): Although prices of gold, silver, imitated gold, imitated silver and mining stocks are reaching their own resistance levels, such a correction will most likely be caused by some kind of catalyst, probably a strong move in the U.S. Dollar, or in the general stock market." It turned out the catalyst was in fact the U.S.Dollar.

Barbara Goldsmith (2009): Central banks around the world have become net buyers of gold for the first time in 20 years. This is a radical change as for several years the European central banks had been net sellers of gold. Very large purchases have been made by central banks in Mexico, Russia, South Korea and Thailand in addition to large purchases by the usual buyers in China and India.

Peter A.Grant (2012): The tradition of wearing jewelry has been drawn from queens of past time. They used to wear elegant necklace and earrings with beautiful gem stones. New jewelry is lighter in weight with the same beauty of past.

Rational of Study - The purpose of the present study is to analyze consumer buying preference towards original and plated jewelry and the differences between original gold and gold plated items and original silver and silver plated items rates and its impact on customer preference given to which one whether original gold or imitating gold or silver and imitated silver. It should be confessed it takes something very special to make feel just how bullish silver really is. This study has that effect.

Objective of Study - The whole study concentrates on the following objectives-

- To study the perception and customer buying preference when prices are high what will be the customer's choice between real and imitated jewellery items.
- To study customer buying behavior while purchasing gold and imitated/plated jewellery.
- To study how important design is while making a purchase decision between real or imitated jewelery.

*Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA
** DOC, IPSA, INDIA
*** DOC, IPSA, INDIA

Research Methodology - The purpose of research is to discover answers to questions through the application of scientific procedures. The main aim of research is to find out the truth which is hidden and which has not been discovered as yet.

- **Research Design –** A Research design encompasses the methodology and procedure employed to conduct scientific research. The design of a study defines the study type and sub-type, research question and hypotheses, independent and dependent variables, experimental design if applicable, data collection methods and a statistical analysis plan. The research design is based on exploratory research.
- **Sample Design –** Sample size determination is the act of choosing the number of observations or replicates to include in a statistical sample. The sample size is an important feature of any empirical study in which the goal is to make inferences about a population from a sample. Questionnaires were given to 100 respondents in jewellery industry in Indore city.
- **Sampling Method –** In statistics, a sample is a subject chosen from a population for investigation; a random sample is one chosen by a method involving an unpredictable component. Random sampling can also refer to taking a number of independent observations from the same probability distribution, without involving any real population. The random sampling technique is used to collect data from the respondents.
- **Tools for Data Collection & Data Analysis –** Primary data through questionnaires and observations. Secondary data through magazines, journals, articles, online networking and information through the particular industry. Percentage analysis has been done to all the survey.

Data Analysis and Interpretation

1. How frequently is jewellery purchased?

Options	No. of Respondents	Analysis
Once in a long time	13	13%
Once in a year	25	25%
On an occasion	62	62%
Total	100	

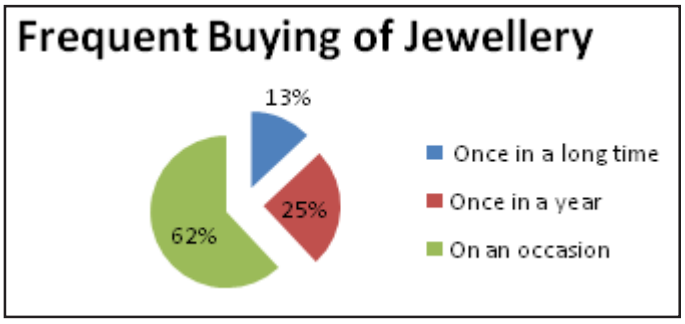

Interpretation - On an analysis done, we can see that 62% of customers would go for purchasing of jewellery just on an occasion, whereas 25% of the customers would go for once in a year and only 13% of customers would go for once in a long time.

2. What kind of jewellery would you prefer buying?

Options	No. of Respondents	Analysis
Imitated Jewellery	28	28%
Original Jewellery	72	72%
Total	100	

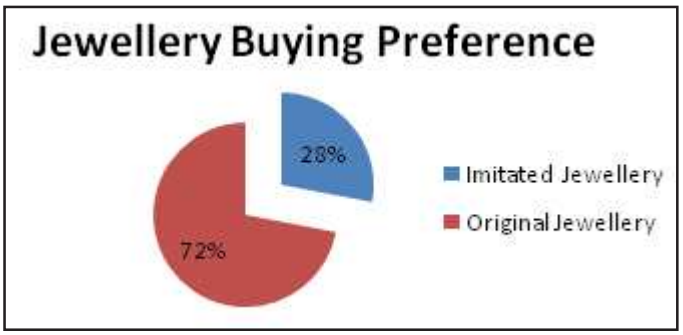

Interpretation - Above analysis shows that 72% of the customers would go for original jewellery, whereas only 28% of customers only would prefer imitated jewellery, as per the requirements of the customers.

3. If original, what are the factors responsible for this choice?

Options	No. of Respondents	Analysis
Wide variety of designs	25	25%
Quality of the product	33	33%
Jewellery is Trusted	42	42%
Total	100	

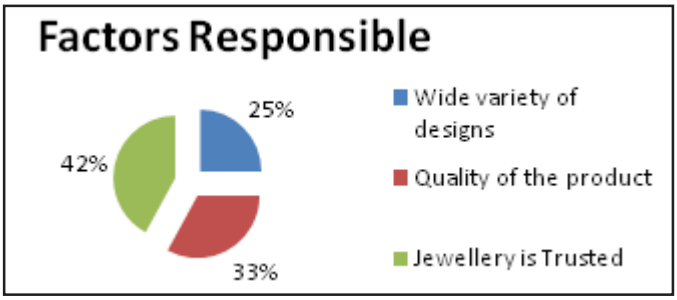

Interpretation - Above analysis shows that 42% of customers would go for trusted jewellery and 33% of customers would go for the quality of the product. 25% of customers would go for the wide variety and availability of that jewellery.

4. If imitation jewellery, what factors affect this decision?

Options	No. of Respondents	Analysis
I can buy that product on credit	22	22%
Prices are negotiable	40	40%
Comparatively Low Price	38	38%
Total	100	

Graph See in next page -

Interpretation: Above analysis shows that 40% of customers would if they prefer imitation jewellery, then they would prefer negotiable prices and 38% of customers would prefer low price or if prices would go down and only 22% of customers

would go for the product buying if the jewellery is on credit.

5. How satisfied you are with that jewellery?

Options	No. of Respondents	Analysis
Satisfied	67	67%
Dissatisfied	11	11%
Neither satisfied nor Dissatisfied	22	22%
Total	100	

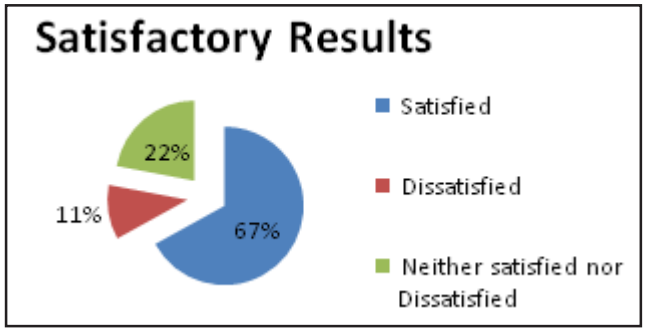

Interpretation - Above analysis shows that 67% of customers are satisfied with that jewellery they buy. 22% of customers are neither satisfied not dissatisfied. Only 11% of customers are dissatisfied with the jewellery they purchase.

6. Before making any jewellery purchase, do you compare the designs and prices?

Options	No. of Respondents	Analysis
Always	25	25%
Sometimes	45	45%
Rarely	22	22%
Never	8	8%
Total	100	

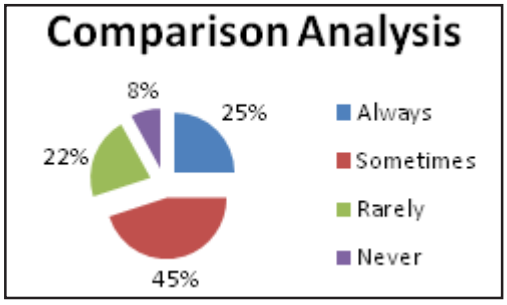

Interpretation - Above analysis shows that 45% of customers would sometimes go for variation and design and variations and 25% of customers would always go jewellery designs and prices, it would matter for them and 22% of customers would rarely go for price and wide variations and only 8% of customers would never go for price decision and variety selection.

7. What are the traditional factors which influence you to buy original jewellery?

Options	No. of Respondents	Analysis
Occasion	26	26%
Investment	43	43%
Attraction	31	31%
Total	100	

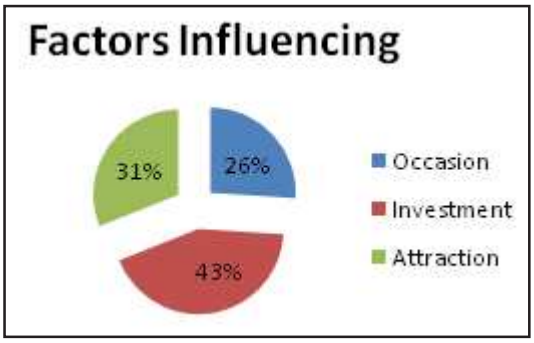

Interpretation - Above analysis shows that 43% of customers would think of buying for a good investment. 31% of customers would go for attraction matter and would make a jewellery purchase. Only 26% of customers would go for making jewellery purchase on an occasion only.

8. What factors affect you to buy imitated jewellery?

Options	No. of Respondents	Analysis
Reasonable Prices	44	44%
Quality of the Product	34	34%
Reliable Retailer	22	22%
Total	100	

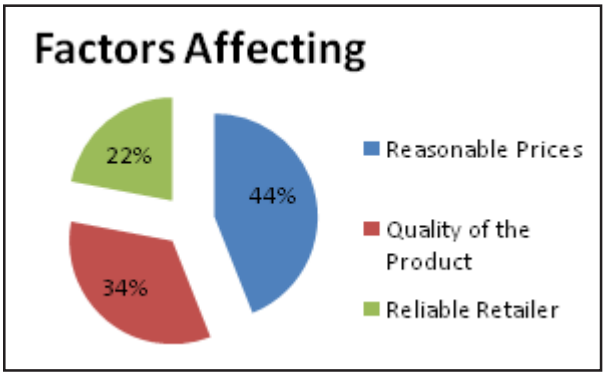

Interpretation - Above analysis shows that if customer is getting reasonable price then 44% of customers would go for that imitated jewellery. 34% of customers would go for the quality of the product and only 22% of customers would go for the reliable retailer.

Findings -

- Customers falling in the category of 25-45 of age group would prefer real jewelry as per their choice of good investment, status quo and personal requirement.

- Mostly customers who fall in the category of teenagers would go for imitation jewelry as per the attraction towards it.
- Customers would firstly option for the usefulness while buying that jewellery, whether original jewellery or plated jewellery.
- Research analysis shows that if customers would go for imitated jewellery then prices and designs would vary definitely.

Suggestions -

- Budget is the primary factor for buying any jewelry since generally it is observed that imitation jewellery costs lower than the original.
- Customers can go for imitation jewellery while doing a purchase as the customer is getting a wide variety of designs reason being customers is getting that jewellery on credit and retailer being reliable.
- Purchasing original gold/silver/diamond/platinum is a good investment for future perspective as the prices of real jewelery would not go down at any cost.
- Widest inclination showed that buying original jewellery would be having more inclination as compared to plated or artificial jewellery.

Conclusions - From this research we can conclude that buying original jewellery would play a crucial role. As the customer buying preference inclines more toward original gold, silver or any other jewellery. This can be seriously counted as per the data collected that customer would less vary between the prices and designs of the imitation jewellery as the customers believes about the good investment and future perspectives would be more clear. Budget is the primary factor for buying any jewelry since generally it is observed that imitation jewellery costs lower than the original.

References :-

1. Kothari, C.R.(2013). Research Methodology, second edition, Himalaya Publications, New Delhi, 27-40.
2. Kotler Philip (2014). Marketing Management, third edition, Ramesh Book Depo. Publication, New Delhi 139-154.
3. http://www.sify.com/finance/gold_rates
4. www.goldandsilverbullionsales.com
5. http://ezineratciles.com

****

Role Of Self Help Groups And Micro Finance For Development Of Rural Women (A Case Study Of Rewa District)

Gaurav Trivedi *

Abstract - A self-help group is a small, economically homogeneous and attractive group of 10-20 rural poor people which comes together to save small amounts regularly. The SHG method is used by the government, NGOs and others worldwide. Thousands of the poor and the marginalized population in India are building their lives, their families and their society through Self help groups. The purpose of this paper is to investigate the impact of SHGs and microfinance in Social and economic growth of India. Self-help Groups have been playing considerable role in training of infrastructure development and technology support, skill of members, confidence among members, change in family violence, frequency of interaction with outsiders, interpersonal skill, habbit of saving, change in the cumulative saving pattern of SHG members, involvement in politics, achieving social recognition, social justice, accountability, equity within SHGs recoveries, and financial value.

The microfinance through self-help groups is considered as most successful, promising and widely accepted model in India. The study it has been found that after joining the SHGs the poor people particularly the women have not only increase their income but also improve their living standard by performing various economic activities independently.
Key words - Growth, Models, Micro finance, Self- Help Group, Socio-economic development.

Introduction - Self-help group is a method of organising the poor people and the marginalized to come together to solve their individual problem. The SHG method is used by the government, NGOs and others worldwide. The poor collect their savings and save it in banks. In return they receive easy access to loans with a small rate of interest to start their micro unit enterprise. There are still around 200 million people in rural areas that live below the poverty line and for whom banking access is still not a reality. The development of a country is depends on the development of the rural economy. During the last few decades it has been seen that due to the vicious cycle of poverty these overall development cannot be achieved. In India, most of the people lives in the rural areas are below the poverty line and finance to these indigenous peoples is considered as important issues for the Government of India. Microfinance to Self Help Groups (SHGs) may be considered as a vital option for meeting the financial needs of those poorer sections of the society.

Concept of Self-Help-Groups - Self-help groups are generally facilitated by NGOs, and increasingly advise and train members in a variety of on- and off-farm income-generating activities. Indeed, in a number of recent projects, NGOs were substituted by trained facilitators and animators drawn from self-help groups. The SHG is an informal organization of persons from the homogeneous poor section of the society and it is controlled and managed by the members itself. It is an association of 10 to 20 local individual members who are financially weak and from the same socio-economic backgrounds. These groups start with saving and not with credit; the group then uses its savings to give loans to members to meet their emergency and other needs. The members decide on savings per members, maximum size of loans, guarantee mechanisms in loan sanction. The SHG is the platform or forum to the members to come together for emergency, disaster, social reasons, economic support to each other have ease of conversation, social interaction and economic interactions.

Concept and Evaluation of Micro Finance - Micro finance is a broad term that includes deposits, loans, payment services and insurances to poor. The concept of micro finance and micro credit are used interchangeably But micro credit does not include savings; hence micro finance is more appropriate term. Microfinance is a term used for the practice of providing financial services such as micro credit, micro savings and micro insurance to poor people. Microcredit belongs to the group of financial service innovations under the term of microfinance, other services according to microfinance is microsavings, money transfer vehicles and microinsurance. Micro Finance is a participative model that can address the needs of the poor specially the women. Its origin can be traced back to 1976, when Muhammad Yunus set up the Grameen Bank, as experiment, on the outskirts of Chittagong University campus in the village of Jobra, Bangladesh. The concept of lending extremely small amounts of capital to poor entrepreneurs has developed by Mohammed Yunus of Bangladesh during the 1970's.

*Research Scholar (Business Adminisration) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

Objectives of the study -

1. To study the socio-economic background of SHG members.
2. To investigate the Before joining SHG and After joining SHG status of SHG members.
3. To study the impact of SHGs on the SHG members.
4. To study the benefits received by the respondents through various income generating activities.
5. To study the various problems faced by the SHG members.

Methodology adopted - The primary data were collected from field survey and interview through filling questionnaire and interview method. The secondary data were collected from books, journals, many relevant documents, news papers and magazines, records of NGO's and internet. Three stage sampling . At the first stage, out of the nine blocks in Rewa District. Five blocks from Rewa district have been selected. Secondly, twenty SHGs were randomly selected from each of the sample blocks. At the third stage, from each sample SHGs four members were randomly selected. Thus 400(5x20x4=400) respondents were selected for the purpose of the present study. For analysing the data, tools, like percentages, simple average, have been used.

Results from the study -

1. Socio-economic profile of the respondents..
2. Before Joining SHG and After Joining SHG status of the respondents..
3. Social impact of SHG activities on the respondents.
4. Economic impact of SHG activities on the respondents.
5. Benefits derived from the income generating activity by the respondents.
6. Problem faced by the respondents in functioning of the SHGs.

1. Socio-Economic profile of the respondents -

Table - 1 (Table see in the last page)

It has been observed that majority of the respondents i.e. 60 percent were middle aged, while 38.0 percent were young and remaining i.e. 2.0 per cent were old aged. The education level of the respondents showed that 32.5 percent of them were literate, 23 percent had received high school education, 21 percent of the respondents had education upto primary school, 18 percent received middle school education, and 5.5 percent were received college level education. The marital status of respondents indicated that majority i.e. 78.5 percent of the respondents were married, 9 percent were separated, 6.5 percent of the respondents were unmarried and 6 percent were reported as widows.Economic position of the family of the respondents indicated 21.25 percent of them belonged to high income category, followed by respondents belonging to semi-medium income category (35.25%), medium income category (34.5%) and only 9 percent of them belonged to low income category. It is revealed from the data indicated i.e.86.25% of the respondents had low and medium social participation while 13.75 percent of respondents belonged to the high social participation category.

2. Income status of the respondents in before joining SHG and after joining SHG stage -

Table - 2

Monthly income	Before joining SHG	After joining SHG
No income	61(15.25)	Nil
Up to 1500	112(28)	129(32.25)
1501-2000	163(40.75)	155(38.75)
2001-2500	64(16)	94(23.5)
Above 2500	Nil	22(5.5)
Total	**400(100)**	**400(100)**

Source: Field survey.

It is inferred from the above Table 6.b.(i) that before joining SHG 15.25 percent of the respondents were no income and none of the respondent had income more than 2500/-. But after joining SHG there is no respondent without any income and 5.5 percent respondents crossed their income level above 2500/-. 40.75 percent have monthly income of 1501-2000 after joining the group.

3. Social impact of SHG activities on the respondents: Table - 3 (See in the last page)

56.25 percent of the women respondents felt that they were equally take important decisions with their family. After joining the group 89.25 percent of the respondents have immense their literacy. After joining the groups 70.5 percent of the respondents were felt self dependent and 79.5 percent of respondents have their good inter-personal relationship. A huge number respondent i.e. 93.0 percent had opined that they were aware about the various developmental programmes such as the LIC scheme for the poor, MNREGA etc. Their standard of living had also increased from 19.25 percent to 47.25 percent after joining the group.

4. Economic impact of SHG activities on the respondents - Table - 4 (See in the last page)

84.5 percent of the respondents were better access to the credit facilities after joining the group which was only 13.25 percent before joining the group. Family dependence on money lenders was also reduced from 94.25 percent to 30.5 percent after joining the group. After joining the group the number of respondents had also increased their savings from 20.75 percent to 70.75 percent. 46.75 percent of the respondents were feeling economically independent. The results of the study indicate that 68.5 percent of the respondents were better control of their financial resources and households.

5. Advantage of the income generating activity by the respondents - Table 5 (Table see in the last page)

73.75 per cent of the respondents had opined about their low incremental income which came upto 2000, while 22.0 per cent had medium income in the range of 2000 to 3500 and only 2 per cent had high incremental income of more than 3500. majority of the respondents felt that their communication ability was increased, followed by increase in their confidence level (84.75%). While, 67.5 percent of respondents opined that they were respected by society.

6. Problem faced by the respondents in Running of

the SHGs - Table - 6 (See in the last page)

It has been found that the majority of the respondents i.e. 83.0 percent had stress and tension because of the dual responsibility of the group as well as of home. Improper utilization of funds was also another problem faced by the respondents as 69.75 percent of the respondents had complained about that. Another problem faced by the SHG members (70.5 percent) was the improper keeping of record of accounts. That was because of lack of training programmes organized for the groups at regular intervals as there were 36.25 percent of the respondents had complained about that. 40.75 percent of the respondents said that their families pressurized them into taking loans for family needs. 28.25 percent of the respondents said that various supporting agencies were not always cooperating; they were rude to the members. 19.75 percent of the respondents felt that some banks were charging higher interest rate than the usual rate for the SHG members. To many formalities were the main reasons for difficulties faced by the respondents in operation with the banks as 46.0 percent of the respondents were reported in this regards.

7. Interpretation of the study -

1. 60.0% of respondents belonged to middle age group where three-forth of the respondents (i.e.78.5%)were married.
2. More than one-third (41.0%) of respondents were middle and high school passed.
3. More than half of the respondents (56.5%) belonged to backward caste.
4. More than half (53.25%) of respondents were landless.
5. Nearly one-third (21.25%) of the respondents belonged to the high income category.
6. After joining SHG there is no respondent without any income and 5.5 percent of the respondents crossed their income level above 2500/-.
7. 93.0 percent of the respondents were aware about the new govt. schemes and around 89.25percent were capable of being read, sign. etc after joining the group.
8. Majority of the respondents (83.6%) had economically benefited and better access to the credit facilities, followed by their better saving habits (67.6%).
9. The73.75% respondents were getting economic benefits upto 2000 from income generating activity.
10. Majority of the respondents(96.25%)felt Improvement in their communication ability followed by increased confidence level (84.75%), respect from the family (67.5%).
11. The major problem faced by the respondents was excessive stress and tension in women (83.0%)followed by improper utilization of fund (69.75%), poor accounts keeping(70.5%) etc.

8. Suggestions -

1. Training programme should be provided regarding the proper accounts keeping so that the beneficiaries can enhance their accounting knowledge.
2. Women should be properly educated and periodical training at regular intervals may be made .
3. The study was conducted in only one district of Madhyapradesh with reference to role of Self Help Groups And Micro Finance for Development of Rural Women in rewa it is necessary to have studies in other areas also.

Conclusions - Finance is an element which everyone needs. Regular and immediate finance can play an vital role for development of socio-economic conditions of the rural poor. Microfinance is expected to play a significant role in poverty alleviation and rural development particularly the rural women. The potential for growing micro finance institutions in India is very high. Major cross-section can have been benefited if this sector will grow in its fastest pace. From the analysis of data it can be concluded that numbers of members have started savings only after joining the groups while majority of the members have no savings in the pre-SHG era.

References :-

1. Narashimban,Sakuntala(1999)"Empowerment of Women: An Alternative Strategy for Rural India," Saga Publication India Pvt. Ltd, New Delhi.
2. Kapoor,Pramilia(2001)"Empowering the Indian women,"Ministry of Information and Broadcasting,Government of India.
3. Lalithe N and B.S. Nagarejan(2002)"Self- Help Groups in rural Development," Dominant publisher and Distributors,New Delhi.
4. Bhai L.T,Karuppiah C and Geetha B(2004"Micro credit and social capitalism in ruralTamil Nadu", Social WelfareVol. 50,no.10,30-35.
5. Joseph E. Imhanlahimi, (2010),"Poverty Alleviation through Micro financing in Nigeria- Prospects and challenges",Journal of Financial Management and Analysis,No.23(1),January, 66.
6. Bera S.K.(2011)"A study of SHG-Microfinance Initiative in Purbo Midnapore District of West Bengal" Economic Affairs, Vol.56, No2, June,107.

Table - 1 - Socio-Economic profile of the Respondents

S.No.		Variables and Categories	Frequency	Percentage
1	Age	Young age (18 to 35 years)	152	38
		Middle age (35 to 55 years)	240	60
		Old age (above 55 years)	8	2
		Total	**400**	**100**
2	Educational status	Illiterate	130	32.5
		Primary school	84	21
		Middle school	72	18
		High school	92	23
		College education(and above)	22	5.5
		Total	**400**	**100**
3	Marital status	Unmarried	26	6.5
		Married	314	78.5
		Widow	24	6
		Separated	36	9
		Total	**400**	**100**
4	Size of Family	Small family	298	74.5
		Large family	102	25.5
		Total	**400**	**100**
5	Family income	Low income	36	9
		Semi medium	141	35.25
		Medium	138	34.5
		High income	85	21.25
		Total	**400**	**100**
6	Social participation	Low	303	75.75
		Medium	42	10.5
		High	55	13.75
		Total	**400**	**100**

Source: Field Survey.

Table - 3 - Social impact of the respondents (Multiple Responses)

Social impact	Before joining SHG	After Joining SHG
Well Social recognition	103(25.75)	274(68.5)
Equally participated in family decisions	111(27.75)	225(56.25)
Immense in Literacy	65(16.25)	357(89.25)
Gained Self dependence	135(33.75)	282(70.5)
Improved inter-personal relationships	155(38.75)	318(79.5)
Awareness regarding new Govt. schemes	83(20.75)	372(93.0)
Better standard of living	77(19.25)	189(47.25)

Source: Field Survey

Table - 4 Economic impact of SHG activities on the respondents

Economic impact	Before joining SHG	After Joining SHG
Better access to the credit facility	53(13.25)	338(84.5)
Minimized family dependence to money lenders	377(94.25)	122(30.5)
Economically independent	57(14.25)	187(46.75)
Better control of financial resources & households	78(19.5)	272(68.5)
Increased savings	83(20.75)	283(70.75)
Minimized family indebtedness	287(71.75)	145(36.25)

Source: Field Survey

Table - 5 Advantage of the income generating activity by the respondents

Benefits	Variables	Frequency(No.)	Percentage(%)
a) economic (./month)	500 to 2000	295	73.75
	2001 to 3500	88	22.0
	>3500	8	2.0
b) Non-economicbenefits	Increased communication skill	385	96.25
	Increased confidence	339	84.75
	Social and family Respect	270	67.5

Source: Field Survey.

Table - 6 - Problem faced by the respondents in Running of the SHGs

Problem	Frequency	Percentage
Repayment of loan	110	27.5
Improper utilization of funds	279	69.75
Poor accounts keeping	282	70.5
Stress and tension	332	83.0
Lack of training programmes	145	36.25
Lack of support from various agency	113	28.25
Conflict among group members	235	58.75
Family Pressure to take loan	163	40.75
High interest	79	19.75
Lenthy formalities	184	46

Source: Field survey

****

Role Of Intermediary In Transport Department (A Government Undertaking) In India

Dr. Pradeep Chaurasia *

Abstract - India has one of the largest road networks in the world, of 3314 million kilometers, consisting of National Highways, Expressways, State Highways, Major District Roads, Other District Roads and Village Roads. Regional Transport Officer or as well acknowledged as RTO is a licensing, registration, taxation authority of a particular region. Regional transport offices in India are working as a revenue collecting departments of Indian government. India had 72.718 million registered motor vehicles at the end of the fiscal year 2003-04. Compound annual growth rate of the vehicle population between 1951 and 2004 was close to 11 percent. Motor vehicle act 1988 is the central vehicle act made by government of India centrally and followed by all regional transport departments in India as a whole. Number of population in India using transport service and all of them are not very much aware about how to use the services given by regional transport offices and for the same they all are looking for a person that who can help them to work as mediator between the Regional Transport Offices and consumer. This mediator is known as intermediary or agent. Regional Transport Offices working is dominated by intermediary and whole work of transportation revolving around the intermediary. There are two types of intermediary working in regional transport office. First are those who are working inside the Regional Transport Offices and they are known as internal intermediary and the others are the person or agents who are working out side of the Regional Transport Offices and they are known as external intermediary. The income of intermediary is very high, they are earning more and more 10 thousand to 1 lakh rupees per month, there average earning is 25 thousand rupees monthly. Government need to take corrective steps to resolve the problem of intermediary in transport department.
Key words - Overview of Transport Sector in India, Types Of Intermediary, Role of Intermediary, Income of Intermediary, Government Corrective Action

Introduction - Overview Of The Transport Sector In India - India has one of the largest road networks in the world, of 3.314 million kilometers, consisting of National Highways, Expressways, State Highways, Major District Roads, Other District Roads and Village Roads. About 65 per cent of freight and 86.7 per cent passenger traffic is carried by the roads. Motor vehicle population has recorded significant growth over the years. Two-wheelers and cars (personalized mode of transport) constitute more than four-fifth of the motor vehicles in the country. Roads are used not only by the motorized transport, but also by the non-motorized transport as well as pedestrians. In India, the share of the transport sector in GDP (gross domestic product) in 1997/98 was 7.3% (1993/94 prices). Road transport and the railways account for the majority of this contribution. The transport sector is also the second largest consumer of energy, next only to industry and commercial energy consumption about 98% of which is in the form of HSD and gasoline grew at the rate of 3.1% per annum in the 1970s and at 5.6% per annum in the 1990s.

Who Is Intermediary? - The whole work of RTO is handled by Intermediary or agent and they are the people who are working between the consumers and RTO offices. For the earning they are charging brokerage from their customers on the basis of services required by them.

Regional Transport Offices working is dominated by intermediary and whole work of transportation revolving around the intermediary. As such the permanent employees who are working with regional transport offices are also accepted the necessity of intermediary that may be because of conveniences in working. The intermediary working in regional transport offices are fully trend with all types of services and charges. They know what to do, where to go, how to charge, how to handle quarry, etc. it is well accepted that the public also feel the necessity of intermediary in Regional Transport offices even they may have some bad experience with them.

Types of Intermediary -

1. Internal Intermediary - The internal intermediaries are those who are not the employee of Regional Transport Offices but they are working inside of RTO. RTO not paying them salary, they are earning with the help of agents or the customers. Mostly they are working on contract basis and they are employed as Babus, Computer Operators in different department.

Internal Intermediary are -

A. Computer Operators Intermediary
B. IT Engineer Intermediary
C. Secretary Intermediary

*Asst. Professor (Management Studies) A. K. S. University, Satna (M.P.) INDIA

D. Babu Intermediary

A. Computer Operator Intermediary - Computer operator intermediary are the permanent employee of a software company and they are working in RTO on contract basis. The software companies are hired by RTO offices for their internal work in computers like data feeding, designing, accounting, etc. the computer operator working under the software company and getting salary by their company only but they are also demanding some brokerage from the agents for completion of their works and that is only why they are known as intermediary.

B. IT Engineer Intermediary - Information Technology Engineer Intermediary is working under the software company as computer operator intermediary. They are appointed by the software company in RTO offices for the technical works in computers. Software Company is liable for paying salary to I T Engineer for their work. IT engineer intermediaries are also demanding brokerage from the agents for the completion of works.

C. Secretary Intermediary - Secretary intermediary is a person working under the transport officer. He is appointed by regional transport officers by himself only and he is not working as the employee of RTO. Secretary intermediary is spending his whole day with transport officer and worked with him. The transport officer are paying him salary amount. He is also demanding for brokerage directly from the consumer as per the consumer requirement. In there are one secretary appointed by each transport officer.

D. Babu Intermediary - There are so many persons are working in different department of Regional Transport Offices as Babu Intermediary. They are not the employee of RTO but they are working in side of the office. They are working in number without any record of their employment in RTO. They all are working on brokerage basis. They are demanding for brokerage from the consumer and they are also working on the basis of "Hissa". Here the Hissa means the partial amount of brokerage given by agents.

2. External Intermediary - The external intermediaries are also not working as employee of Regional Transport Offices and they are working out side of the Regional Transport Offices. They are available in number and sitting outside of the offices with their own belonging. They always keep all the forms related to RTO services like vehicle registration forms, license from, permit form, etc. with them. External Intermediary always keeps the book related to transport act and they use it time to time. The main work they are doing is to deliver the services of Regional Transport Offices to customers. In fact they are only the mediator who is working directly between the Regional Transport Offices and consumers.

External Intermediary are-

A. Brokers or Agents Intermediary
B. Sub Broker or Sub Agent Intermediary
C. Corporate Agent Intermediary

A. Brokers or Agents Intermediary

Broker intermediaries are available in number in RTO and they all are working in brokerage basis. They are using their own chairs and table and canopies for their sitting outside of the RTO office and investing their whole day in RTO campus. They are fully depending on the RTO brokerage for their whole life. They always have sound knowledge of rules related to RTO and they are very clever in their working style. They know how to handle the consumer, how to talk about the brokerage amount and many more. They are making good relation with the RTO employee and with the internal intermediary for their purpose.

B. Sub Broker or Sub Agent Intermediary - Sub brokers are also working in number in outside the RTO. They are working under the brokers and brokers are paying them brokerage for their work. Most of them are belong to age group of 16 to 25. The sub brokers are becoming the brokers after some time, when they got the full experience of working they start their own work as broker.

C. Corporate Agent Intermediary - They are the intermediary are working only for companies or corporate and transports. They are making their contacts with the transporter and companies and charging brokerage for giving them services. They never look for the walk in consumer. They always work with high brokerage amount.

Role Of Intermediary -

1 Role of Internal Intermediary in RTO-

- Not working as employee of RTO offices.
- Always working inside of offices.
- Working on salary and contract basis.
- Very close to the RTO employees.
- Helping the consumer to get aware them about the services of RTO.
- Helping the external intermediary or agents for their works.
- Have good knowledge of RTO related all services.
- Sometimes they are also charging some brokerage form the customers.
- They are always in contact with the high profile employees like RTO, ARTO.

2 Role of Agents / External Intermediary in RTO

- Agents are not the employee of RTO.
- Working as mediator between RTO and consumers.
- Always in contact with customer.
- Worked as services provided for transportation related works.
- Working on brokerage basis for different services.
- Always interact with the RTO employees.
- Good knowledge of all types of services provided by RTO.
- Keeps each and every forms related to RTO.
- They are in number but they are working as team.
- Have very good relation with transporters.

Intermediary Income - Intermediary working in Regional Transport Offices fixed their brokerages amount for the each services and this brokerage amount also vary some time because of the customer requirement. Particularly

in Regional Transport offices the amount of income generated by external intermediary and that amount is supposed to distribute to other internal intermediary means the income of internal intermediary is fully depending upon the income of external intermediary. Here it is necessary to calculate to income of external intermediary to know the whole income of intermediary. The brokerage of intermediary is written below with separate services.

Table No. 1 (See in the next page)
Table No. 2 (See in the next page)
Table No. 3 (See in the next page)
Table No. 4 (See in the next page)

Corrective Actions - There is basically a very weak point in transport office which related to communication. In fact there is no proper communication system used in-between department as well it would be very typical for the general people to understand where to go for the particular work. Government need to do some expenses particularly for communication system in-between departments like the facility of intercom, computer networking between departments. For the public government need to open the enquiry in both of the district that the general public can understand where to go for what.

- The intermediary working under the regional transport offices are internal as well as external. The internal intermediary is the Babus who are working in-side of the office and they are also earning with brokerage amount. Government need to eliminate all of this type of intermediary with recruiting permanent employee in those departments of regional transport offices. This will help the general public that who are paying more for using and retaining transport services.
- The external intermediaries are agents. The agents working in regional transport offices are dominated in all working; they are charging more and delayed the services. They are also fighting for the customers sometimes, they always make the relation with customers and exploit them mostly with corporate customers like transporter, bus owner, etc. the customers are also complaining some time for the behavior of agents and their autocracy, but no one in regional transport office listing to them. Most of the people who want to use transport department related services are depending upon the services of agents and this all is not enough. Now, it is very necessary for the government to take corrective action against the agent ship. Government need to eliminate the entire agent ship from the regional transport offices and if it is not possible government need to fix the charges of brokerage for all the services. The brokerage charges which are affordable for the general public.
- There should be a team to train the employee and to the guide the employees about proper use of the law and regulation of regional transport offices. That the each employee have proper knowledge of everything and he/she can help the general people as a whole.
- There should be a separate office where regional transport offices could be able to train the general public about the rules and regulation related to transportation that the public would be able to save them from the intermediary.
- Government need to make proper planning with starting of financial year for the betterment of regional transport offices and should make plan for the further growth.

Research Methodology - The research work done as per the data collected from the many sources. The data collected on the basis of primary and secondary data. In primary data the interview has been conducted with the broker and the public to know about the brokerage and the technique of observation also being used to know the clear picture about brokerages. In secondary data the government report and the RTO report has been used. The total sample size used for the collection of data is 70.

Conclusion - This is well known that the RTO is one of the revenue collection department of the government of India. There are so many employees are working under the RTO as a government employee. But it is well found that there are some employee working inside the RTO are not the permanent employee of RTO and they are working in contract basis. They are the employee helping the external brokers' for their dealing with the customers. Government need to take corrective action as mentioned above in government action to remove the brokers from the RTO.

References :-

1. Eleventh Five Year Plan, Planning Commission Government of India, Vol. III, 2007-12, P.289
2. Government of India (1978), Report of the Indirect Taxation Inquiry Committee, Ministry of Finance, New Delhi.
3. Government of India (1996), Report of the Working Group on Road Transport for the Ninth Five Year Plan (1997-2002), Ministry of Surface Transport, New Delhi.
4. Government of India (1997), Report of the Motor Transport Statistics of India 1997, Transport Research Wing Ministry of Surface Transport, New Delhi.
5. Government of India (1998), Traffic and Transportation Policies and Strategies in Urban Areas in India, Final Report, Ministry of Urban Development, New Delhi.
6. Government of India (1999), Motor Transport Statistics of India-1997, Transport Research Wing, Ministry of Surface Transport, New Delhi.
7. Government of India (2001), Report of the working group on road accidents, injury prevention and control, Planning Commission, New Delhi.
8. Interview and Observation.

Table No. 1

Product	License		
Type	Learning	(Permanent) Lite	Renewal
Agent's Brokerage	400/- To 1000/-	700/- To 1500/-	500/-To 1000/-

Table No. 2

Product	Registration						
Type	Two Wheeler	Four Wheeler	Mini Bus	Bus	Auto	Truck	Tractor
Agent's Brokerage	500/- To 1000/-	1000/- To 2000/-	1000/- To 3000/-	1000/- To 4000/-	500/- To 1000/-	1000/- To 4000/-	1000/- To 4000/-

Table No. – 3

Product	Permit	
Type	Bus	Truck
Agent's Brokerage	1500/- To 5000/-	1500/- To 5000/-

Table No. 4

Product	Fitness Certificate	Transfer Certificate	No Objection Certificate
Type	Bus or Truck	All Type Vehicles	All Type Vehicles
Agent's Brokerage	750/- To 5000/-	1000/- To 5000/-	1000/- To 5000/-

****

Impact Of Modernization On Productivity Growth In Agricultural Sector

Dr. D. N. Purohit * Dr. Rajesh Jain **

Abstract - Increased productivity in agriculture has been achieved in several parts of the world mainly by modernizing agriculture. The results of the two regression equations imply that the contribution of the growth of agricultural income to the growth of total income on the margin has fallen considerably from 39.4% during 1998-2008 to 18.63% during 2008-2014.As against this, the marginal contribution of the growth of industrial income has gone up from 18.26% during 1998-2008 to 49.61% during 2008-2014. The period of Green Revolution was also marked by a significant increase in capital investment in agriculture, with the capital investment per ha. increasing at an average rate of 3.9% per annum during 1998-2008 to 2008-2014, as compared to the average growth rate of 1.54% observed during the earlier period. Modernization of agriculture leads to resilience of agriculture and makes it less sensitive to weather conditions and fluctuations in rainfall.

Key words - Modernizing, regression equations, Green Revolution, investment, productivity.

Introduction - Bringing more land area under agriculture is becoming more and more difficult in most countries. Since prosperous agriculture is considered to be the most crucial base for economic development particularly in the less developed countries (LDCs), the only viable option for them is to continue to enhance the productivity of land and labour in agriculture. Increased productivity in agriculture has been achieved in several parts of the world mainly by modernizing agriculture. Modernization consists largely of using improved seeds, modern farm machinery such as tractors, harvesters, threshers, etc., chemical fertilizers and pesticides in an optimal combination with water. It addresses itself to the following specific questions: (a) What is the role of agriculture in the economic growth of LDCs? (b)What is the impact of modernization of agriculture on the productivity growth? (c)What role can the governments in LDCs play to promote modernization of agriculture?

Role of Agriculture in Economic Growth of LDCs - Agriculture is a predominant activity in most developing countries. As economic growth and development take place, importance of agriculture tends to decline according to the famous hypothesis. The declining share of agriculture is, however, a slow phenomenon and is felt only over a relatively long time horizon. The implication is that growth of total income exceeds that of agricultural income over a long time. In an international cross-sectional perspective, the role of agriculture in economic growth is generally examined by considering the extent to which agricultural growth explains variations in the growth of total income among different countries. The growth of total income in a country is basically an average of the growth of income originating in agriculture, industry and service sectors. In order to estimate the relative importance of these three broad sectors in explaining the variations in the growth of total income, the following multiple regression is run:

GY= ao+a, GA+^G, +a., 0, +U.... (1)

where G represents annual trend rate of growth; subscripts Y, A, I and S represent total GDP, GDP in agriculture, GDP in industry and GDP in services, respectively; U is a random error term and a's are the parameters to be estimated. Equation (1) is estimated by using the cross section data on the trend rates of growth of GDP by sectors, available from the World Development Report 2015 for the selected developing countries. The regression is run for two time periods: (a) 1998-2008 and (b) 2008-2014.The choice of the year 2001 is again dictated by the ready availability of data on trend rates of growth by sectors. The results of the two regressions are -

(a) For the period 1998-2008: GT= -0.3787 + 0.5064GA + 0.2187G,+0.4160GSt-values: (-1.869)(9.889) (8.973)(9.192) R-square = 0.9597; R-bar-square = 0.9566 F-statistic (3,39) = 309.597

(b) For the period 2008-2014: GY= 0.2456+0. 1677GA+ 0.4687G, +0.2243GSt-values: (1.085)(2.401) (10.136X3.365) R-square = 0.9070 R-bar-square = 0.8999 F-statistic (3,39)= 126.834.

The results of this exercise are quite interesting. Both the equations are statistically highly significant. They clearly show the importance of the growth of agricultural income in determining the variations in the growth of total GDP in

* Professor, G.A.C.C., Indore (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

developing countries. The growth of incomes in all the three broad sectors is individually significant in both the periods in explaining the growth variation across countries. Agriculture, however, is the most dominating sector during the period 1998-2008, whereas it is the industrial sector which dominates the scene during the eighties. The results of the two regression equations imply that the contribution of the growth of agricultural income to the growth of total income on the margin has fallen considerably from 39.4% during 1998-2008 to 18.63% during 2008-2014. As against this, the marginal contribution of the growth of industrial income has gone up from 18.26% during 1998-2008 to 49.61% during 2008-2014. These trends, however, have to be interpreted in the context of the overall growth trends over the two sub-periods.

Some Aspects of Modernization of Indian Agriculture - Since the inception of National Economic Planning in India in 1951, sustained efforts have been made by the planners to accelerate the pace of agricultural development in the economy. However, the main emphasis during the early stages of planning was on broadening the industrial base through rapid development of basic and capital goods industries. It is evident from the information given in the period of Green Revolution was marked by spectacular increases in the area under high yielding varieties (HYV), extent of fertilizer use and extent of irrigation. Thus, during the period 1998-2014, the area under HYV increased from less than two million ha. to more than 134 million ha., the extent of fertilizer use increased from around one million tons to 39 million tones, the extent of irrigation increased from less than 41 million ha. to around 117 million ha., the number of tractors increased from 187 thousand to 1338 thousand and the extent of double cropping increased from 12.79% to 23.44% of net area sown. The period of Green Revolution was also marked by a significant increase in capital investment in agriculture, with the capital investment per ha. increasing at an average rate of 3.9% per annum during 1998-2008 to 2008-2014, as compared to the average growth rate of 1.54% observed during the earlier period.

Impact of Modernization on Productivity Growth - On the basis of an analysis of various indicators presented above, we can identify three distinct phases of development of Indian agriculture. Phase I consists of the period from 1998 to 2005, which was marked by a significant increase in the net area brought under cultivation through a sustained process of land reclamation and land improvements. The period from 2005 to 2010 represents Phase II of agricultural development, which was marked by widespread modernization of agriculture coupled with a significant increase in capital investment. In fact, during this period the gross capital formation as a proportion of gross domestic product in agriculture increased sharply to more than 8.79% from the average level of around 6.43% observed during the pre-Green Revolution period. The period after 2011-2014 represents Phase III, which is marked by simultaneous and significant improvements in the productivity of land, labour and capital. During this period, the average annual growth rate of land productivity has been 3.87%, of labour productivity 2.39%and capital productivity around 1%. During this period there has been a significant improvement in the utilization of the basic infrastructure and growth potential created during the earlier phase of modernization.

Role of Government in Modernization of Agriculture- Government intervention for the development of the agricultural sector is a common feature in most LDCs. In India, the government has played a major role in promoting agricultural development in general and its modernization in particular. Of the various aspects of government intervention in Indian agriculture, the following two aspects deserve special mention: (a) direct intervention in the market mechanism through price support/procurement policy; and (b) subsidization of major agricultural inputs. The Indian government follows administered price policy in respect of several agricultural commodities by fixing their procurement/ support prices. The government announces the procurement or minimum support price for each season for each crop and also arranges for the corresponding procurement or price support operations through public, cooperative and other state-designated agencies. In fixing the agricultural prices, various factors such as the cost of agricultural inputs, trends in market prices, inter-crop price parity, etc. are taken into account.

Finding - The strategy of modernizing agriculture is likely to succeed only to the extent to which the individual farmers actually use modern agricultural inputs. In India the government, therefore, adopted the policy of providing a wide range of incentives to the farmers in the form of specific subsidies on modern agricultural inputs. Thus, the subsidies have been provided to the farmers to encourage the use of chemical fertilizers, irrigation facilities, and electricity and also to avail credit facilities. Total input subsidies increased from the level of 539.84 billion rupees in 1998-2008 to 1072.35 billion rupees in 2008-2014. In relative terms, total input subsidies represent 18.79% of NDP in agriculture in 1998-2008 and this proportion has risen to 21.46% by 2008-2014. Thus, the rapid pace of modernization of Indian agriculture has been sustained to a considerable extent by a significant

subsidization of agricultural inputs.

Suggestion - Modernization of agriculture leads to an increase in the total factor productivity in agriculture. Higher the pace of modernization, higher is the growth of TFP in agriculture. Acceleration in TFP more than compensates for the deceleration in factor inputs, especially land, and thereby leads to acceleration of the output of agriculture. Whether the emergence of a major thrust for modernization of Indian agriculture at a time when the expansion of net area sown almost petered off was a mere coincidence or a likely sequence in the process of agricultural development that could recur in other LDCs is a question requiring in-depth research. The early stages of modernization require significant stepping up of investment in agriculture. Gross capital formation as a proportion of net domestic product in agriculture has to rise considerably as this appears to be the precondition of modernization. Modernization of agriculture leads to resilience of agriculture and makes it less sensitive to weather conditions and fluctuations in rainfall.

Conclusion - Since the success of modernization depends on the farmers switching over to modern inputs, the government is required to intervene primarily in the form of ensuring remunerative prices of crops and providing direct incentives for the use of modern inputs. At this stage, it is important to recognize that modernization of agriculture has significant implications on the balance of payments (BOP) of the country. In as much as LDCs are unlikely to be self-sufficient in the production of fertilizers, pesticides and farm machinery, modernization of agriculture would necessarily have a high degree of import intensity which would put severe strain on the county's BOP. In the Indian case, however, adverse impact of modernization of agriculture on BOP has been mitigated largely on account of the highly diversified industrial base thanks to the 15 years of planned development that pre-ceded the advent of the Green Revolution in the country. In fact, Indian industry could (a) meet the growing demand of modern agricultural inputs to a large extent, especially after 2001-02. Thus, the precondition for successful modernization of agriculture imposed by the BOP considerations is that the country should have either (i) a reasonably sound industrial base or (ii) readily available export market for its agricultural products. India meets the first of these conditions but not so much the second. But an LDC not having an industrial base but assured of export markets for its agricultural products can still overcome the BOP (b) problem in modernizing agriculture.

References :-

1. Basant Rakesh (2015). Agricultural Technology and Employment in India, Sagar Publication, New Delhi, 19-31.
2. Bhalla, G.S. and Tyagi, D.S. (2014). Patterns in Indian Agricultural Development ,JN Publication, Meerut, 64-71.
3. http://www.indianagriculture.com
4. http://www.modernagroculture.com
5. http://www.agrotechnique.com

****

Impact Economic Liberalization On The Economics Of State Government With Special Reference To India

Dr. Deepali Behere *

Abstract - Trade liberalization, by aligning domestic prices with world prices, is envisaged to bring in welfare gains to a country. In the case of Indian agriculture, owing to the vastness and diversity of the sector, the impact is likely to be profoundly unequal across regions especially when liberalization is double edged, acting on both output and input sides. This paper views returns from land resource as a primary determinant of farmers economic well-being and production incentive and considers paddy both as the dominant support for rural population and as a product with comparative advantage, as most studies have demonstrated. Working with state and sub-state level data and taking account of the differences in technologies, productivities and transport costs, the paper finds that the gains vary regionally and may not be positive in all cases when both output and input prices are globally aligned. Thus, from the Indian Perspective the effect of liberalization, globilization and WTO regime on India's agriculture is a kind of mixed bas with plus points out weighing the minus. No doubt that liberalization and the new WTO arrangements are definitely raising the prices of Agricultural inputs but India's State Market opportunities in exports of agricultural commodities will increasing. Thus, Indian agricultural-business should get the kind of boost, it has never known before exposing itself to the larger world market. Today the farm lobby are seeing major growth in exports of superior rice, vegetables, fruits, fisheries and Meat products, vegetable oil processed and flowers. Therefore under the present context, it can be finally observed that under the liberalization, globalization and WTO agreement, good things are here to emerge. Whatever the negative aspect the Indian agriculture are facing today can be suitably neutralized by responding to its positive aspects, as liberalization of the economy has created ample scope for the development of agricultural sector, Industrial sector, service and foreign Trade with reference to different states, in terms of increased production and Trade.

Key words - Rice market, State - Trading, liberalization, Indian cost of Agriculture cultivation.

Introduction - Agriculture sector is now standing on the cross-roads of development particularly after the introduction of Economic Liberalization since 1991. Here, the economic Liberalization has made attempt to reduce Govt. interference and has removed unnecessary restrictions in economic activities and has been encouraging privatization of the economy.

Under this new economic Liberalization wave, the agricultural sector of the country is facing the challenges to rationalize its activities and to face international competition in marketing its products as well as in its factor market.

Never the less, Trade liberalization, by aligning domestic prices with world prices, is envisaged to bring in welfare gains to a country. In the case of Indian agriculture, owing to the vastness and diversity of the sector, the impact is likely to be profoundly unequal across regions especially when liberalization is double edged, acting on both ouput and input sides. This paper views returns from land resource as a primary determinant of farmers economic well-being and production incentive and considers paddy both as the dominant support for rural population and as a product with comparative advantage, as most studies have demonstrated.

Working with state and sub-state level data and taking account of the differences in technologies, productivities and transport costs, the paper finds that the gains vary regionally and may not be positive in all cases when both output and input prices are globally aligned. Thus, from the Indian Perspective the effect or liberalization, globalization WTO regime on India's agriculture is a kind of mixed bag with plus points out weighing the minus. No doubt that liberalization and the new WTO arrangements are definitely raising the prices of Agricultural inputs but India's State Market opportunities in exports of agricultural commodities will increasing.

Thus, Indian agricultural-business should get the kind of boost, it has never known before exposing itself to the larger world market. Today the farm lobby are seeing major growth in exports of superior rice, vegetables, fruits, fisheries and Meat products, vegetable oil processed products and flowers. Therefore under the present context, it can be finally observed that under the liberalization, globalization and WTO agreement, there is considerable reduction in production subsidies paid by developed countries to the farmers and rolling back some of the non-tariff barriers which have restricted agricultural trade. The provisions provide benefit to Indian agriculture as the agricultural exports of the country

*Asst. Professor, Career College, Bhopal (M.P.) INDIA

enjoy a comparative advantage. As a result India's agricultural exports will receive a welcome stimulus, at a time when the incentive structure in domestic economy is beginning to work to their advantage but the major problem which the agricultural sector might face is increase in price of Agricultural inputs like HYV seeds, Fertilizers, Pesticides etc. due to the introduction of the system of product patents.

Whatever the negative aspect the Indian agriculture are facing today can be suitably neutralized by responding to its positive aspects, as liberalization of the economy has created ample scope for the development of agricultural sector, Industrial sector, service sector and foreign Trade with reference to different states, in terms of increased production and Trade. Thus, if the Indian Agriculture can meet the challenges and opportunities open to it, and if the developed countries do not put any trade barrier before the flow of an Indian Agricultural exports, then India will definitely will be able to overcome this threat and also becomes successful to gain sufficiently from this new world trade regin.

Kewywords - Rice - Market, State-trading, Cost of Cultivation, Indian-Agriculture, Liberalization.

Research Methodology - The research methodology used to write this paper is based secondary data i.e. magazines, journals, websites, magazines and previous studies.

Review of Literature - Ghose (2002) Studies on the impact on liberalization and domination of Regional Crop Patterns. Bhagwati et al (1998) gains from exports, Vyas (2001), Rao (2002) Food Security of farmers, Gulati (1993), (1994) Chand (1999) Datta (1997).

Emerging Trends in Indian Agriculture - The new international economic order envisaged in the TWO agreement is one of fair competition among nations bringing out efficient production patterns. While a clear cut deification of the competitiveness is not available, from a less developed country's point of view, the more relevant one is the ability to generate rapid growth in output in a manner that leads to rising employment and income for large numbers (Becker et al. 2002). Comparative advantage based on resource endowments has become largely inconsistent with empirical tendencies, the reasons being technologies advancement, innovation and global sourcing of factors and the exceptions being natural resources based production activities (Porter 1990) such as agriculture.

Agricultural production is conditioned principally by the availability and qualitative nature of immovable or internationally non-tradable resources like land, climate, irrigation and even unskilled labour. To that extent factor endowments can be a source of competitive strength of agriculture. However, agriculture is not excluded from the reach of technologies change and certain tradable and mobile factors like improved or hybrid seeds, fertilizers and farm and irrigation equipment can apparently confer a change in the qualitative nature of the immovable factors to improve the competitiveness of the sector. Besides, in a large country the issue of competitiveness is more complex with varied comparative advantages of regions, unequal transport cost over inland and overland distances and different local demand conditions where the rule of international trade even work within the nation's territory.

For a developing country like India with rich natural resource endowments the WTO agreement promises to open more than the constraints it creates, by increasing access into foreign markets for agri-products. But to make use of the opportunity the country has to put its house in order. In India the market has to come out of the shackles that have been binding it through decades of state control and domination. India signed the Agreement on Agriculture of the WTO in 1994 when she was already into a vigorous structural adjustment programme launched in response to a balance of payment crisis in 1991. The measures undertaken were often consistent, complementary ad overlapping with the WTO compatibility rules and it is not easy to delineate the effect of one from the other. What can be agreed on is that despite an approach justifiably cautioned by food security of the poor and expectedly distracted by political tensions.

Indian did take a departure towards a more globalized regime directed to giving greater freedom to private incentives ad market forces. In Indian agriculture rice holds a special place, being suited to the soil and climate of the country and cultivated extensively and by all classes of farmers. More importantly, being a labour intensive crop, rice absorbs a large section of the rural labour force and in that sense is a dominant source of employment in the country. This role becomes all the more significant since the domination of regional crop pattern by rice is found to be positively associated with the level of poverty, poor income and weak infrastructure within the country (Ghosh 2002). Above all, several studies have demonstrated India's comparative advantage in rice and under the given conditions the prospect of rice export has a potential to deal a forntal blow on rural poverty. True to the hypothesis, the product emerged as a prominent export item with the initiation of economic reforms. The Government of India has been supporting this prospect but the market remains distorted and controlled and the question raised in this study is : Would farmers in the country gan from the exports when free market forces are allowed to operate ?

The rice market in India at cross-roads - The rice market comes under the purview of the GOI's (Government of India) foodgrain policy, which originated in a time of shortage in the 1940s. The infamous Bengal famine and Worlds War II were events the transpired against the background of a low productivity agriculture and abysmal market integration in India. The crisis brought the State in to intervene in the market but only sporadically with no long-term vision. It was in the 1960s that certain developments strengthened the will of the independent country's government for a long-term policy. These were (1) poor crop performance and resulting food shortage, (2) shortage of foreign exchange for imports, (3) two successive wars and the political unacceptability of food aid from USA, (4) availability of a new technology for agrarian

development at hand and (5) the new optimism that framers in a traditional agriculture are capable of responding to economic incentive (Schultz 1964, Raj Krishna 1963). All this laid the foundation of the Food Corporation of India (FCI) in the public sector in 1965 that went in tune with the socialistic spirit of the time. A price policy promulgated soon after and that to follow in subsequent decades was designed to be executed by the FCI and integrated several and conflicting objectives (Tyagi 1990; Mellor and Ahmed 1986). It aimed to provide incentive to farmer, prevent distress selling and usher in self-sufficiency in grains. It also aimed to protect consumer interest through low food prices, stabilize prices, hold buffer stocks and serve the needs of the poor and the vulnerable.

Food security and farmer's livelihood being vital issue in Indian polity, opening up of trade to world market is a contentious issue (Vyas 2001; Rao 2002). The competitiveness of India's food grain production is not borne out by empirical estimates except for rice (Vyas 2001). Studies by Gulati et al. (1994), Chand (1991) and Datta (1997) agreed on the comparative advantage of rice through the measures of nominal protection through the 1990s.

Gains at external prices - Supporting numerous studies that noted Indi'a advantages in exporting rice, actual experience in the 1990s found improvement in India's position when trade liberalization and domestic decontrols began to open up the market. The development however occurred in a market still distorted by controls and FCI's dominance. This paper examines if the actual producers benefit from exports while market opens up, given the heterogeneous conditions they operate in. This is done by evaluating returns at prevailing domestic and external reference prices for the reference year and comparing them. The gains would come from liberalization in both output and input markets.

Conclusions - Thus it can be observed and concluded that Liberalization has created several favourable positive impacts rather than negative impacts on agricultural sector of the country, which includes the rising productivity, growing investments, diversification of the sector, application of modern techniques, development of Horticulture and floriculture, growing volume of experts and development of Food Processing Industry, India with its rising population are advantageous position to develop its agricultural and allied sectors which are mostly labour intensive. Liberalization has also provided ample scope for Modernization and development sector and also reap the maximum benefit from the increasing scope of agricultural exports out of the path of globalization adopted by the economy.

References :-

1. Alagh, Y.K. (1991), Indian Development Planning and Policy. New Delhi : Vikas.
2. Becker C.M., A. Mitra, and Balseca, E. (2002). Competitive Cities. Background Study for Inter.
3. American Development Bank.
4. Bhagwati, J.N., A. Panagariya, and T.N. Srinivisan (1998). Lectures on International Trade London :
5. The MIT Press.
6. Chand, R. (1999) 'Liberalisation of Agricultural Trade and Social Welfare', Economic and Political.
7. Weekly, 25 December.
8. Datta, S.K. (1997) 'Why Does India Need a Total Perspective on Rice Exports?' in B.M. Desai (ed.).
9. Oxford and IBH Publishing Co.
10. Fertliser Association of India. Fertilizer Statistics. New Delhi (various).
11. Food and Agricultural Organisation (FAO) (1998), Trade Year book.
12. Food Corporation of India Annual Report (various).
13. Ghosh N. (2002), 'Infrastructure, Cost and Labour Income in Agriculture', Indian Journal of Agricultural.

****

A Role Of Microfinance Institution Development In India

Dr. Rajiv Jhalani * Pinky Joshi**

Abstract - The present paper highlights the microfinance & evaluates the position of microfinance. The concept of microfinance is not new in India. Traditionally, people have saved with and taken small loans from individuals and groups within the context of self-help to start businesses or farming ventures. Majority of poor are excluded from financial services. Microfinance is a programme to support the poor rural people to pay its debt and maintain social and economic status in the villages. Microfinance is an important tool for improving the standard of living of poor. Inspite of many organizations of microfinance, microfinance is not sufficient in India. The study explores some suggestions to make microfinance more effective. The potential for growing micro finance institutions in India is very high. Microfinance market in India is expected to grow rapidly, supported by government of India's initiatives to achieve greater financial inclusion, and growth in the country's unorganized but priority sector. Growth of the microfinance industry, however, the microfinance is important as a minimum condition for achieving these social missions. Globally, over a billion poor people are still without access to formal financial services. Some 200 million of these people live in India. Microfinance, the provision of a wide range of financial services to poor people, has proved a very successful way of providing immensely valuable services to poor people on a sustainable basis.The Indian Government should find an avenue for creation of awareness on how microfinance can benefit from loans and monitors closely to ensure disbursement of loans and grants to entrepreneurs.

Introduction - Micro Finance may be defined as "provision of thrift, the wide network of the organized banking system deep credit and other financial services and products of very into rural areas. Market and the government both failed to small amounts to the poor in rural, semi urban or urban provide credit access to the poor. In fact the failure of areas, for enabling them to raise their income levels and institutional initiatives of rural credit and to the improve living standards. Microfinance is the provision of financial services to low income clients who traditionally lack access to banking and related services. It helps in reaching out to the vulnerable segments of the society like women, SC,ST which are outside the purview of formal institution. It is a form of financial development that has primarily focused on alleviating poverty through providing financial services which help poor to take up income generating activities and secondly it focuses on women empowerment Microfinance has been a development and economic tool which has helped in bringing about financial inclusion in India. It has been viewed as an important tool of women empowerment and to alleviate poverty. It has served to provide financial services and credit to the unprivileged and unbanked sector in India thereby bringing about financial inclusion. The loans provided by microfinance institutions serve the low-income population in various ways are-They provide working capital loans for business purposes. They provide loans for accessing necessities such as food, clothes, shelter and education. They serve as alternatives to the loans provided by money lenders. Majority of the population in India belong to the unbanked sector. Though India has a dense and a robust formal financial system, it has failed to reach the deprived segment of the population. Next to China, India has the highest size of unbanked population in the world. Thus, microfinance sector aims to improve the living of the poor income households thereby providing banking services to the deprived low income population.

Literature review - Sarangi (2007) evaluated the impact of microfinance programme on rural poor households in some backward regions of Madhya Pradesh in India. The findings suggested that on the one hand, many of the very poor households were excluded from the programme, and on the other, the gains from participation of the programme were mostly observed for the better-off section of households, particularly those with high per capita income or the large Land holders. He concluded that credit to serve as a sole instrument of poverty alleviation did not seem to be plausible, without other corroborative mechanisms that help in increasing the potential of credit use by the poor or the small farmers. **Pankaj K Agarwal and S.K.Sinha (2010)5 found in their study that t**he sustainability of microfinance institutions is important in order to pursue their objectives through good financial performance. This paper studies the

* **Principal, R.P.L.M. College, Indore (M.P.) INDIA**
** **Research Scholar, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA**

various players in the microfinance sector which range from not-for-profit organizations which work towards a developmental objective to commercial banks which view microfinance as a good source of deposits with sound banking and as a measure to reach their priority lending targets. **Jayasheela, Dinesha.P.T and V.Basil Hans (2008)6** studied the role of microfinance in the empowerment of people and provision of a sustainable credit availability to the rural low income population. The research studies theopportunities available for the microfinance institutions with an increasing demand for credit in the rural areas due to inadequate formal sources of credit. **"Performance and Sustainability of Self-Help Groups in India: A Gender Perspective"** by **Purna Chandra Parida and Anushree Sinha (2010)** studies performance and sustainability of Self-help group in India. It is been reported that the self-help group (SHG) programmes is an effective tool which has been used in various countries in order to address a range of socio-economic issues. The performance and sustainability of self-help groups vary based on income generating activities, gender composition of members in the group etc.

Objectives of the study -The study is aimed at studying the various aspects of microfinance sector

1 .To study the performance of Indian microfinance institution in India.
2. To analyse financial structure of MFIs in India.

Channels of microfinance - In India microfinance operates through two channels:

1. SHG – Bank Linkage Programme (SBLP)
2. Micro Finance Institutions (MFIs)

SHG – Bank Linkage Programme - This is the bank-led microfinance channel which was initiated by NABARD in 1992. Under the SHG model the members, usually women in villages are encouraged to form groups of around 10-15. The members contribute their savings in the group periodically and from these savings small loans are provided to the members. In the later period these SHGs are provided with bank loans generally for income generation purpose. The group's members meet periodically when the new savings come in, recovery of past loans are made from the members and also new loans are disbursed. This model has been very much successful in the past and with time it is becoming more popular. The SHGs are self-sustaining and once the group becomes stable it starts working on its own with some support from NGOs and institutions like NABARD and SIDBI.

Micro Finance Institutions - Those institutions which have microfinance as their main operation are known as micro finance institutions. A number of organizations with varied size and legal forms offer microfinance service. These institutions lend through the concept of Joint Liability Group (JLG). A JLG is an informal group comprising of 5 to 10 individual members who come together for the purpose of availing bank loans either individually or through the group mechanism against a mutual guarantee. The reason for existence of separate institutions i.e. MFIs for offering microfinance are as follows.

High transaction cost – generally micro credits fall below the break-even point of providing loans by banks

Absence of collaterals – the poor usually are not in a state to offer collaterals to secure the credit

Loans are generally taken for very short duration periods

Higher frequency of repayment of installments and higher rate of Default

Non-Banking Financial Companies (NBFCs), Co-operative societies, Section-25 companies, Societies and Trusts, all such institutions operating in microfinance sector constitute MFIs and together they account for about 42 percent of the microfinance sector in terms of loan portfolio. The MFI channel is dominated by NBFCs which cover more than 80 percent of the total loan portfolio through the MFI channels.

Need For development microfinance -

According to the latest research done by the World Bank, India is home to almost one third of the world's poor (surviving on an equivalent of one dollar a day). Though many central government and state government poverty alleviation programs are currently active in India, microfinance plays a major contributor to financial inclusion. In the past few decades it has helped out remarkably in eradicating poverty. Reports show that people who have taken microfinance have been able to increase their income and hence the standard of living. About half of the Indian population still doesn't have a savings bank account and they are deprived of all banking services. Poor also need financial services to fulfill their needs like consumption, building of assets and protection against risk. Microfinance institutions serve as a supplement to banks and in some sense a better one too. These institutions not only offer micro credit but they also provide other financial services like savings, insurance, remittance and non-financial services like individual counselling, training and support to start own business and the most importantly in a convenient way. The borrower receives all these services at her/his door step and in most cases with a repayment schedule of borrower's convenience. But all this comes at a cost and the interest rates charged by these institutions are higher than commercial banks and vary widely from 10 to 30 percent. Some claim that the interest rates charged by some of these institutions are very high while others feel that considering the cost of capital and the cost incurred in giving the service, the high interest rates are justified.

Conclusion - Indian Microfinance today is a dynamic space with multitude of players offering various products and services to low income clients with different approaches. Banking system along with other legal forms such as NBFCs, Section 25 companies, cooperatives and NGO-MFIs all are approaching rural markets. Many new forms of relationships are emerging among these entities to leverage on each others strength. However, despite such new developments the penetration of microfinance remains low and spread highly skewed in Southern India. Indeed there are ample gaps to be filled and this would lead to further changes in Microfinance space in future. Microfinance a powerful tool to address challenge of poverty eradication, raise caution regarding

overwhelming push for MFIs to become financially self sustainable, mission drift / questionable practices, call for greater transparency and (public) awareness. Indeed, microfinance in India is a multifaceted and dynamic industry. The country's unique economic circumstances in the mid-1980s created a situation that was ripe for a commercialized microfinance industry. With the help and support from international organizations, local businessmen and the government, the microfinance sector in India has evolved into a highly profitable and commercialized industry. As the sector began to flourish, a few microfinance institutions proved to lead the way with regard to innovation and profitability. The path these institutions paved eased the road for other institutions that followed. Their strong institutional structure and tailored lending technologies created a wave of emulation that resulted in a highly competitive commercial industry. Consequently, competition provoked more efficient operations which lent to lower costs and more options for clients; in addition, outreach expanded and profits increased. Therefore, commercialization has produced effective and successful financial institutions that positively contribute to the banking system in India.competitive forces have helped to integrate the low-income population into a more formal financial sector. Thus, while the microfinance industry in India promotes development of the country's financial system, the informal sector is both included and empowered. New opportunities and new challenges are being felt in the field of microfinance. In recent years microfinance is in news for bad reasons. There are a number of suicide cases of micro credit clients all over India for excess interest charges and high handedness of recovery agents in recovery of loans. So, government of India has brought out a legislation loans. So, government of India has brought out a legislation to check the high interest rate on micro credit and protect the poor from clutches of greedy MFIs. Government of India introduced Micro Finance Institutions (Development and Regulation) Bill to check the high interest rate on micro credit and protect the poor from clutches of greedy MFIs. New opportunities and new challenges are being felt in the field of microfinance. . In recent years microfinance is in news for bad reasons .There are a number of suicide cases of micro credit clients all over India for excess interest charges and high handedness of recovery agents in recovery of loans. So, government of India has brought out a legislation to check the high interest rate on micro credit and protect the poor from clutches of greedy MFIs. Government of India introduced Micro Finance Institutions (Development and Regulation) Bill 2012 on May 22, 2012 to establish a regulator under RBI to regulate and supervise the activities of NGOs and MFIs. New opportunities and new challenges are being felt in the field of microfinance. In recent years microfinance is in news for bad reasons there are a number of suicide cases of micro credit clients all over India for excess interest charges and high handedness of recovery agents in recovery of loans. So, government of India has brought out a legislation to check the high interest rate on micro credit and protect the poor from clutches of greedy MFIs. In addition, the Government of India must take initiative to monitor microfinance system which would assist the lower income micro-entrepreneurs, resulting in an improvement in income earnings and expenditure leading them to enjoy a higher living-standard. Microfinance industry have made gains coverage of rural poor people population with financial services but mainstreaming of impact assessment and incorporation of local factors in service delivery to maximize its impact on achievement of goals of poverty alleviation considered. Microfinance evolutionary growth has given a great opportunity to the rural poor to attain reasonable economic, social and cultural empowerment, leading to better living standard and quality of life for participating households.

References :-

1. Microfinance and Its Delivery Models. experiences, options and future. Journal of Study Mode.com. Retrieved 08,2007,.http://www.study mode.com/essays/Microfinance
2. Sarangi, Niranjan (2007), "Microfinance and the Rural Poor: Impact Assessment Based on Fieldwork in Madhya Pradesh, India", Paper Presented in Conference on Sustainable Development & Livelihoods, Delhi School of Economics, Delhi, 6-8 February.
3. Pankaj K Agarwal and S.K.Sinha (2010) The financial performance of microfinance institutions in India *Delhi Business Review* X *Vol. 11, No. 2 (July - December 2010)*
4. Jayasheela, Dinesha.P.T and V.Basil Hans (2008), "Financial inclusion and microfinance in India: An overview" http://india.microsave.org/node/1270
5. Purna Chandra Parida and Anushree Sinha (2010) "Performance and Sustainability of Self-Help Groups in India: A Gender Perspective.

****

Women Entrepreneurship And Govt. Policies In India

Dr. Iffat Khan *

Introduction - Due to growing industrialization liberalization and globalization, women entrepreneurship is gaining importance in India. Women constitute around half of India's population. More and more women are taking up entrepreneurial work especially in micro, small and medium enterprises. This sector contributes 45% of manufactured output and provide employment to over 60 million persons. In recent years this sector registered higher growth rate. Entrepreneurship is not confined to any one gender. During the last two decades increased number of women entered in the field of entrepreneurship in India. According to recent global survey, one third enterpreneur in India are women. Women entrepreneurs are growing faster in developed countries than in developing countries. There is a grave need of women enterpreneurs due to current state of our economy. Self determination and career goal are the key factors for taking up entrepreneurship by women. Women owned business enterprises are playing an important role in the development of Indian economy.

Liberalization in India resulted in rapid economic growth. Due to urbanization, education and democratic system, number of women enterpreneurship increased at a faster rate. Economic globalization has benefitted female population. Peter Drucker rightly remarked, "By transferring resources from areas with less or decreasing productivity to the areas with increasing or more productivity an enterpreneur contribute to national development. According to Govt. of India, a women enterpreneur is "an enterprise owned and controlled by a women having a minimum financial interest of 51 percent of the capital and giving atleast 51 percent of the employment generated in the enterprises to women"

Methodology -

Objectives :

1. To study growth of women enterpreneur in India.
2. To study the challenges for women enterpreneurs.
3. To know the factors of hinderances for women enterpreneurship.
4. Recent trend in the development of women enterpreneur.

Hypothesis - 'Hypothesis is a tentative answer to a problem'.

1. Position of women is low compared to their counterparts.
2. Development of women enterpreneurship help in employment opportunities of women.
3. Women enterpreneur are helpful in economic development.
4. Regular training and exposure to current trends lead to better management of enterprises.
5. Government measures is helping in removal of challenges faced by women enterpreneur.

This research paper is based on secondary data. The researcher herself has meeting with women enterpreneurs. Simple statistical techniques such as mean and co-efficient of variation are used to draw inferences.

Problems - Shortages of finance, scarcity of raw materials, marketing problems, stiff competition from male enterpreneurs and organised sector, lack of education, limited mobility, male-dominated society and high cost of production are the main problems women enterpreneurs are facing. Main problem of women enterpreneurs is that they are women. They suffer from male domination.

Schemes For Women Enterpreneurs - The scheme of the Govt. of India including support for training and employment programmes (STEP) have provided employment through training in traditional sectors - dairy development, animal husbandary, social forestry and handloom. The Government of India has the following schemes forwomen enterpreneurs -

1. Intregrated Rural Development Programmes (IRDP)
2. Khadi & Village Industries Commission
3. Prime Minister Rojgar Yojana (PMRY)
4. Training of Rural Youth for Self-employment.
5. Management Development Programmes.
6. Entrepreneurial Development Programme (EDP)
7. Marketing of Non farm products of rural women.
8. Women's Development Corporation Scheme.
9. Trade related Enterpreneurship Assistance.
10. Assistance to Rural women in Non-farm Development.
11. Indira Mahila Yojna.
12. Working Women's Forum.
13. Mahila Samiti Yojana.
14. Indira Mahila Kendra.
15. Mahila Vikas Nidhi.
16. Rashtriya Mahila Kosh.
17. SBI's Stree Shakti Scheme.
18. Micro and Small Enterprises development programme.
19. Rajiv Gandhi Mahila VIkas Pariyojana (RGMVP)
20. National Bank for Agriculture & Rural Development.
21. Prayadarshni Project - Programme for rural women empowerment and livelihood.

*Guest Lecturer (Commerce) M.L.B. Govt. Girls P. G. Collge, Bhopal (M.P.) INDIA

22. Exhibition for women under promotional package for micro and small enterprises.
23. NABARD - Sewa Bank Project.

Conclusion - Women enterpreneurs are playing an important role in industrial development of India, Today with the development of micro small and medium enterprises number of women enterpreneurs have increased to one third of total enterpreneurs. Problems of women enterpreneurs will be removedby encouragement, motivation, training, incentives and family moral support. Women enterpreneurship cell should be set up in all states for handling various problems of women enterpreneurs. Government has come forward with facilities and incentives.

Refereces :-

1. Dhameja SK; Women Enterpreneurs - opportunities performance, problems, 2002.
2. Gupta & Shrinivasan; Enterpreneurship - Development in India, 2001.
3. Kothari,C.R.; Research Methodology, 1997.
4. Sharma Sheetal; Educated women, powered women yojana, Vol. 50 No. 12, 2006.
5. India Today -November, 2014.
6. Websites - wwwgoogle.co.in www.wikipedia.com.

****

म.प्र. सरकार के राजस्व - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

शोध सारांश – म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में राजस्व के अंतर्गत कुल प्राप्तियों में 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 में लगातार वृद्धि हुई है। परन्तु 2013-14 में 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 15 प्रतिशत की गिरावट चिन्ता का विषय है। कुल प्राप्तियों में विशेषकर राजस्व प्राप्तियों के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि वर्ष 2013-2014, 2014-2015 एवं 2015-16 में लगातार वृद्धि हुई है परन्तु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 19 प्रतिशत की गिरावट विशेष चिन्ता का कारण है। हालांकि इसकी भरपायी पूंजीगत प्राप्तियों ने की है वर्ष 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 में पूंजीगत प्राप्तियों में लगातार वृद्धि हुई है विशेषकर 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो शुभ संकेत है। प्रदेश सरकार के राजस्व में वर्ष 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 में कुल व्यय से लगातार वृद्धि हुई है, परन्तु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में 15 प्रतिशत की वृद्धि दर में गिरावट ने कुल प्राप्तियों की कमी की पूर्ति करने में अहम् भूमिका अदा की गई है इसी प्रकार कुल व्यय में राजस्व व्ययों में 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 में लगातार वृद्धि तो हुई है परन्तु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 23 प्रतिशत की विशेष गिरावट हुई है तथा पूंजीगत परिव्ययों में 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 में लगातार वृद्धि हुई है परन्तु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में, विनियोग की राशि में तो लगातार वृद्धि हुई है। परंतु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 16 प्रतिशत की गिरावट चिन्ता का विषय है बजट अनुमान में राजस्व आधिक्य 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 सभी में रहा है। परन्तु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में 39 प्रतिशत की अभूतपूर्व वृद्धि दर रही है। राजस्व प्राप्ति के लक्ष्य निर्धारण एवं लक्ष्य प्राप्ति में कही न कहीं चूक हो रही है। अतः इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है तथा राजस्व में वृद्धि हेतु नये राजस्व की खोज अति आवश्यक है।

शब्द कुंजी – राजस्व, जनवित्त, सार्वजनिक वित्त, राजस्वशास्त्र, करअपवचन, अनुदान, लोकऋण, पूंजीगत परिव्यय, विनियोग।

प्रस्तावना – संस्कृत के शब्द राजस्व दो अक्षरो से बना है - राजन् + स्व जिसका अर्थ होता है राजा का धन। अंग्रेजी Public finance के शब्द का अर्थ जनवित्त या सार्वजनिक वित्त होता है तथा राजस्वशास्त्र के अंतर्गत जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली राज्य सरकार की वित्तीय व्यवस्थाओं का अध्ययन किया जाता है। स्पष्ट हैं कि सार्वजनिक सत्ताओं के आय-व्यय संबंधी कार्यो के अध्ययन का ही राजस्व माना गया है। इस बात की पुष्टि डॉ. डाल्टन ने अपने विचारों में की है कि 'राजस्व के अंतर्गत लोक सत्ताओं के आय-व्यय तथा उनके पारस्परिक समायोजन और समन्वय का अध्ययन किया जाता है।' श्रीमती हिक्स ने भी अपने विचारों में इस बात का उल्लेख किया है कि 'राजस्व में उन पद्धतियों एवं प्रणालियों का विश्लेषण किया जाता है जिनके अनुसार शासन संस्थाएँ जनसाधारण के हितार्थ धनराशि एकत्र करके महानत्तम सुख-सुविधाओं की व्यवस्था करती है।'राजस्व को विस्तृत रुप देते हुए ओटो ईस्केस्टीन ने कहा है कि 'राजस्व अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले बजट के प्रभावों का अध्ययन है, विशेषकर जो आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति पर पड़ता है जैसे-विकास, स्थायितत्व, न्याय एवं कुशलता आदि 'निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि राजस्व सरकार के आय एवं व्यय सम्बन्धी प्रबंध प्रशासन का एक शास्त्र है,जिसमें सार्वजनिक बजट भी समस्या को प्रमुखता दी जाती है और इसके अंतर्गत विधियों एवं सिद्धांतों दोनो का एक साथ अध्ययन किया जाता है।

शोध का उद्देश्य – आज सम्पूर्ण विश्व में विकास की होड़ लगी हुई है। अविकसित राष्ट्र विकासशील राष्ट्र की श्रेणी में आना चाहते है तथा विकासशील राष्ट्र विकसित राष्ट्र की श्रेणी में आना चाहते है। भारत भी तेजी से विकास करके विकसित राष्ट्र बनना चाहता है तथा भारत के प्रांतों में भी विकास की होड़ प्रांरभ हो चुकी है। प्रत्येक प्रांत नंबर 01 बनना चाहता है या प्रथम तीन पायदानों को प्राप्त करने के भरसक प्रयास कर रहे है। म.प्र. भी जो विगत15 वर्षो पूर्व बीमारु राज्यों की श्रेणी में आता था जिसका वर्तमान यषस्वी मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान के नेतृत्व में विगत् 10 वर्षो में तेजी से प्रदेश का विकास हुआ है। म.प्र. के विकास में राजस्व की महत्वपूर्ण भूमिका है। उक्त शोध पत्र में म.प्र. सरकार के राजस्वों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है एवं राजस्व में किस स्त्रोत की कितनी भूमिका एवं योगदान है तथा राजस्व का कौन सा स्त्रोत कमजोर है। म.प्र. सरकार के राजस्व में वृद्धि की दर क्या हैं तथा राजस्व बढ़ाने के क्या सुझाव हो सकते है ताकि प्रदेश का ओर तेजी से विकास हो सके एवं भारत का नंबर 01 राज्य बन सके आदि सभी का अध्ययन करना शोध का मुख्य उद्देश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध - पत्र में म.प्र. सरकार के राजस्व के द्वितीयक संमकों का अध्ययन किया गया है तथा तीन वित्तीय वर्ष 2013-14, 2014-15 तथा 2015-16 के बजट अनुमान राजस्व में कुल प्राप्तियाँ एवं कुल व्ययों का ही तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

शोध व्याख्या – म.प्र. सरकार के बजट अनुमान 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 के राजस्व में कुल प्राप्तियाँ, कुल व्यय, विनियोग एवं राजस्व आधिक्य की स्थिति तालिका क्रं. 01 से स्पष्ट है -

तालिका क्रं. 01 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

तालिका क्रं. 01 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में कुल प्राप्तियों में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। परंतु वर्ष 2013–14 से वर्ष 2014–15 की तुलना करने पर राजस्व की कुल प्राप्तियों में 27 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर यह वृद्धि 12 प्रतिशत ही रही अर्थात् राजस्व को कुल प्राप्तियों में 15 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
2. बजट अनुमान की कुल प्राप्तियों की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल राजस्व प्राप्तियों में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर राजस्व प्राप्तियों में 11 प्रतिशत की वृद्धि ही हुई अर्थात् राजस्व प्राप्तियों में 19 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
3. बजट अनुमान में पूंजीगत प्राप्तियों में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर केवल 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर पूंजीगत प्राप्तियों में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है अर्थात पूंजीगत प्राप्तियों में 20 प्रतिशत की वृद्धि दर में वृद्धि हुई है।
4. बजट अनुमान में कुल व्यय में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 में 2014–15 की तुलना करने पर 27 प्रतिशत वृद्धि हुई थी, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर कुल व्यय का केवल 12 प्रतिशत ही वृद्धि हुई अर्थात कुल व्यय में 15 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
5. बजट अनुमान की कुल व्यय की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल राजस्व व्यय में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 33 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर राजस्व व्यय में 10 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई अर्थात राजस्व व्यय में 23 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
6. बजट अनुमान में पूंजीगत परिव्यय में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर केवल 3 प्रतिशत की वृद्धि हुई ,जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर पूंजीगत परिव्यय में 24 प्रतिशत की वृद्धि हुई अर्थात् पूंजीगत परिव्यय में 21 प्रतिशत वृद्धि दर में वृद्धि हुई।
7. बजट अनुमान में विनियोग की राशि में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना करने पर 26 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर 10 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई अर्थात् विनियोग की राशि में 16 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई है।
8. बजट अनुमान में राजस्व आधिक्य में 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 14 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी हुई थी, जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना करने पर 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई अर्थात् कुल 39 प्रतिशत वृद्धि दर में वृद्धि हुई है।

म.प्र. सरकार के बजट में कुल प्राप्तियों में राजस्व प्राप्तियों एवं पूंजीगत प्राप्तियों की स्थिति तालिका क्रं. 02 से स्पष्ट है –

तालिका क्रं. 02 व वृत्त चित्र (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 02 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में कुल प्राप्तियों में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 27 प्रतिशत बढ़ी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 12 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई इस प्रकार वृद्धि दर में 15 प्रतिशत की कमी आई।
2. कुल प्राप्तियाँ की अलग अलग मदों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि राज्य कर में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई इस प्रकार 6 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई।
3. केंद्रीय करों में हिस्से में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 10 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई इस प्रकार 7 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई।
4. कर भिन्न राजस्व में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 11 प्रतिशत की कमी आई थी जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 50 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई इस प्रकार कुल वृद्धि दर में 61 प्रतिष की रिकार्ड वृद्धि हुई।
5. केंद्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 101 प्रतिशत की अभूतपूर्व वृद्धि हुई जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में केवल 01 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई इस प्रकार 100 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है।
6. उधार एवं अग्रिम की वसूली में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार कमी हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 3 प्रतिशत की कमी आई है जबकि वर्ष 2014–15 से 2015–16 से तुलना मे 75 प्रतिशत वृद्धि में कमी आई है इस प्रकार कुल 78 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है।
7. शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 9 प्रतिशत की कमी आई है जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में 26 प्रतिशत की वृद्धि हुई है इस प्रकार कुल 35 प्रतिशत वृद्धि दर में वृद्धि हुई है।
8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में वर्ष 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में अभूतपूर्व वृद्धि 387 प्रतिशत दर्ज की गई जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में केवल 25 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई इस प्रकार 362 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी आई है।

म.प्र. सरकार के बजट में कुल व्यय में आयोजनेतर व्यय एवं कुल आयोजना व्यय का मदवार अध्ययन निम्न तालिका क्रं. 03 से स्पष्ट है।

तालिका क्रं. 03 व रेखाचित्र (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 03 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में कुल व्यय में 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में कुल व्यय में 27 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जबकि 2014–15 से 2015–16की तुलना में 12 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई इस प्रकार कुल व्यय की वृद्धि दर में 15 प्रतिशत की कमी आई है।
2. कुल व्यय की अलग अलग मदों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि कुल आयोजनेत्तर व्यय में 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में वृद्धि दर 13 प्रतिशत ही हुई इस प्रकार 02 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है।
3. कुल आयोजना व्यय में 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16 में लगातार वृद्धि हुई है। 2013–14 से 2014–15 की तुलना में कुल आयोजना व्यय में 44 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि 2014–15 से 2015–16 की तुलना में केवल 11 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई है। इस प्रकार कुल 33 प्रतिशत वृद्धि में कमी आई है।

शोध निष्कर्ष एवं परिणाम –

1. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में तालिका क्रं. 01 के अनुसार कुल प्राप्तियों में 15 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी चिंताजनक है क्योंकि इससे विकास प्रभावित होगा।
2. कुल प्राप्तियों की अलग–अलग मदों के अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि राजस्व प्राप्ति की वृद्धि दर में 19 प्रतिशत की कमी विशेषकर चिंता का कारण है जो सरकार की आय का प्रमुख स्त्रोत है।
3. पूंजीगत प्राप्तियों वृद्धि दर में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो शुभ संकेत है।
4. कुल व्यय की वृद्धि दर में 15 प्रतिशत में कमी आई है परंतु इसे अच्छा नहीं माना जा सकता है क्योंकि प्रदेश के तीव्र विकास में आय की वृद्धि दर बढ़ाने के साथ साथ व्यय की वृद्धि दर भी बढ़ना चाहिये।
5. राजस्व व्यय में 23 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी शुभ संकेत है क्योंकि राजस्व व्ययों में कमी लाना अति आवश्यक है।
6. पूंजीगत परिव्यय में 21 प्रतिशत की वृद्धि दर भी शुभ संकेत है क्योंकि आधारभूत संरचना में किया गया व्यय विकास की नींव है।
7. विनियोग की राशि में वृद्धि दर में 16 प्रतिशत की कमी अच्छी नहीं है क्योंकि विनियोग लगातार बढ़ने से प्रदेश का विकास तेजी से होगा।
8. राजस्व आधिक्य में 39 प्रतिशत की वृद्धि दर शुभ संकेत है।
9. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में तालिका क्रं. 02 के अनुसार कुल प्राप्तियों का मदवार अलग अलग अध्ययन करने से निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि राज्य करों के योगदान में 6 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी विशेष चिंता का कारण हैं
10. केंद्रीय करों में हिस्सा के योगदान में भी 7 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी भी विशेष चिंता का कारण है।
11. कर विभिन्न राजस्व में 61 प्रतिशत की वृद्धि दर शुभ संकेत है।
12. केंद्र से सहायता अनुदान में 100 प्रतिशत की वृद्धि दर में कमी विशेष चिंता का कारण हैं
13. उधार एवं अग्रिम ऋण की वसूली लगातार घट रही है और उसमें 78 प्रतिशतम वृद्धि दर में कमी भी विशेष चिंता का कारण है।
14. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों की वृद्धि दर में 362 प्रतिशत की कमी भी विशेष चिंता का कारण है।
15. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में तालिका क्रं. 03 के अनुसार कुल व्यय की अलग अलग मदों का अध्ययन करने पर निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि कुल आयोजनेतर व्यय की वृद्धि दर में 15 प्रतिशत की कमी हुई है जो शुभ संकेत है।
16. कुल आयोजना व्यय में 33 प्रतिशत वृद्धि दर में कमी आई है। इसे भी शुभ संकेत कहा जा सकता है।

सुझाव –

1. म.प्र. सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियों में तेजी से वृद्धि हो इस हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिये क्योंकि राजस्व प्राप्तियों की वृद्धि दर में गिरावट से यह ज्ञात हो रहा है कि लक्ष्य के निर्धारण वं लक्ष्य प्राप्ति में कहीं न कहीं लापरवाही हो रही है। अत: इस मद पर विशेष जोर दिया जाना चाहिये।
2. सामान्यत: प्रदेश सरकार राजस्व प्राप्ति में वृद्धि करके एवं व्ययों पर नियंत्रण करके बजट घाटे को कम करने का प्रयास करती है परंतु व्ययों को भी विकास का प्रतीक माना गया है। अत: राजस्व प्राप्तियों में लगातार एवं उत्तरोत्तर वृद्धि से व्ययों में भी वृद्धि करना संभव होगा और म.प्र. का तेजी से विकास होगा।
3. विनियोग की राशि में भी और वृद्धि हो जो प्रदेश के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे इस हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिये।
4. राज्य करों की वसूली पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये क्योंकि कर अपवंचन लक्ष्य प्राप्ति में सबसे बड़ा बाधक है। अत: कर अपवंचन रोकने हेतु विशेष नीति की आवश्यकता है।
5. केन्द्रीय करो में हिस्सा लगातार बढ़ना चाहिये परंतु इसमें कमी इस बात की ओर संकेत कर रही है कि कर अपवंचन दोनों क्षेत्रों में है। प्रदेश सरकार एवं केंद्र सरकार दोनों के करो में अपंवचन हो रहा है जिसे सख्ती से रोका जाना चाहिये। कर प्रोत्साहन हेतु केंद्र सरकार की भांति जन जागरण किया जाना चाहिये।
6. प्रदेश व देश में एक ही पार्टी की सरकारे होने के बावजूद भी केंद्र से सहायता अनुदान में कमी विशेष चिंता का कारण है। अत: इसकी समीक्षा होना चाहिये इसके कारणों को ज्ञात करके इसमें आने वाली समस्याओं को दूर किया जाना चाहिये ताकि केंद्र से अधिक से अधिक सहायता अनुदान प्राप्त हो एवं प्रदेश का विकास तेजी से हो।
7. उधार एवं अग्रिम की वसूली में लगातार गिरावट आ रही है जबकि कुल प्राप्तियों में वृद्धि में इस घटक की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अत: इस मद में वृद्धि पर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये।
8. म.प्र. सरकार द्धारा ऐसी विशेष नीति बनाई जानी चाहिये जिससे अधिक से अधिक शुद्ध लोक ऋण की प्राप्ति हो।
9. प्रदेश सरकार को देश के अन्य प्रान्तों की सरकारे के राजस्व में राजस्व प्राप्तियों के विभिन्न घटकों के अध्ययन हेतु एक विशेष दल का गठन करना चाहिये और यह ज्ञात करना चाहिये कि कौन–कौन मदों से सरकार के राजस्व में वृद्धि हो सकती है अर्थात् नये राजस्व की खोज की जाना अति आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लोकवित्त सिद्धांत एवं व्यवहार – डॉ. डी. एन. गुर्टू।
2. अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं राजस्व – डॉ. वी.सी. सिन्हा।
3. उच्च आर्थिक विश्लेषण – डॉ. पी.डी. माहेश्वरी, डॉ. शीलचंद गुप्ता।

4. आर्थिक विकास के सिद्धांत – डॉ. विमल कुमार जैन, डॉ. नैनी, आर.के. जैन।
5. शोध प्रणाली तथा सांख्यिकीय तकनीके – शर्मा, जैन, पारीख।
6. बजट अनुमान 2013–14, 2014–15 एवं 2016–17
7. नवीन शोध संसार (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2320–8767
8. दिव्य शोध समीक्षा (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2394–3807
9. Research in Finance – A. Rahman & A. Bhojwani
10. Financial Crisis and Stability in Global Economy – M.A. Patel
11. www.finance.mp.gov.in

म.प्र. सरकार के राजस्व का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 01 **(रू. करोड़ में)**

क्रं.	मद	बजट अनुमान 2013–14	बजट अनुमान 2014–15	बजट अनुमान 2015–16	वृद्धि (प्रतिशत में)	
					2013–14 से 2014–15	2014–15 से 2015–16
1	कुल प्राप्तियाँ	92019.1	116582.5	130815.3	27	12
2	राजस्व प्राप्तियाँ	79603.5	103493.2	114422.9	30	11
3	पूंजीगत प्राप्तियाँ	12415.6	13089.3	16392.4	5	25
4	कुल व्यय	91946.9	117041.0	131199.1	27	12
5	राजस्व व्यय	74388.6	99013.8	108834.9	33	10
6	पूंजीगत परिव्यय	17558.2	18027.2	22364.1	03	24
7	विनियोग की राशि	102461.8	129001.0	142094.3	26	10
8	राजस्व आधिक्य	5214.8	4479.4	5588.0	(–) 14	25

स्त्रोत – बजट प्रस्ताव 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16

तालिका क्र.01 में म.प्र. सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियाँ एवं कुल व्यय का ग्राफ द्वारा प्रदर्शन

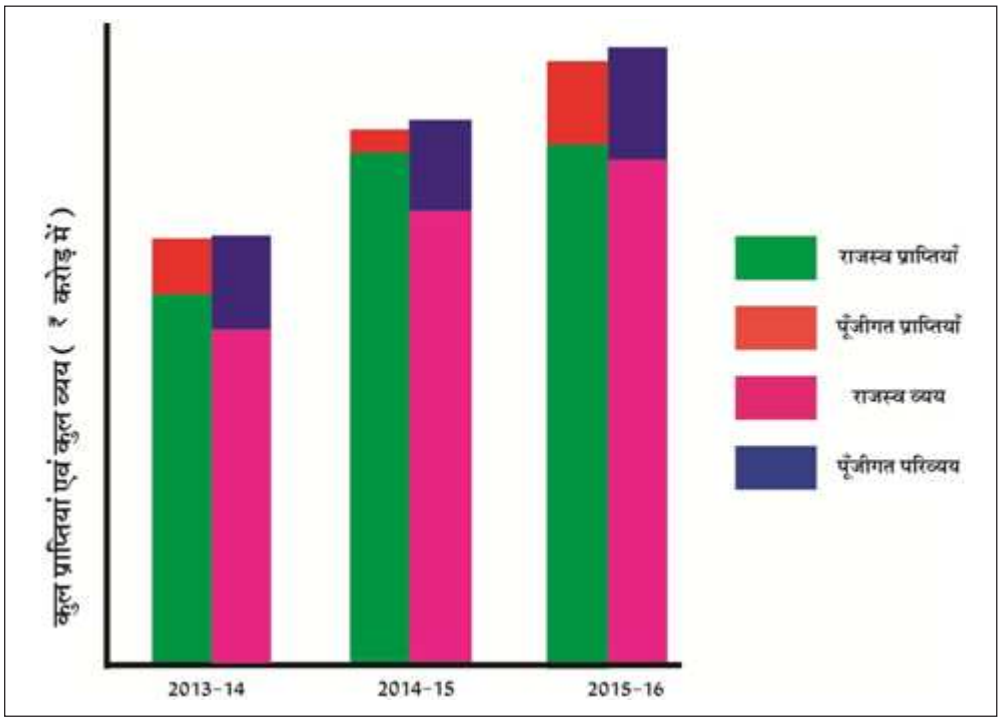

म.प्र. सरकार के राजस्व में कुल प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 02 **(रू करोड़ में)**

क्रं.	मद	बजट अनुमान 2013-14	बजट अनुमान 2014-15	बजट अनुमान 2015-16	वृद्धि (प्रतिशत में)	
					2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	कुल प्राप्तियाँ	92019	116582	130815	27	12
2	राज्य कर	33382	38990	43448	17	11
3	केंद्रीय करों में हिस्सा	23694	27681	30450	17	10
4	कर विभिन्न राजस्व	7583	6759	10124	-11	50
5	केंद्र से सहायता अनुदान	14945	30063	30401	101	01
6	आधार एवं अग्रिम की वसूली	125	122	31	-03	-75
7	शुद्ध लोक ऋण	11841	10776	13628	-09	26
8	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	450	2191	2734	387	25

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

तालिका क्रं.2 की कुल प्राप्तियों का वृत्त चित्र द्वारा प्रदर्शन

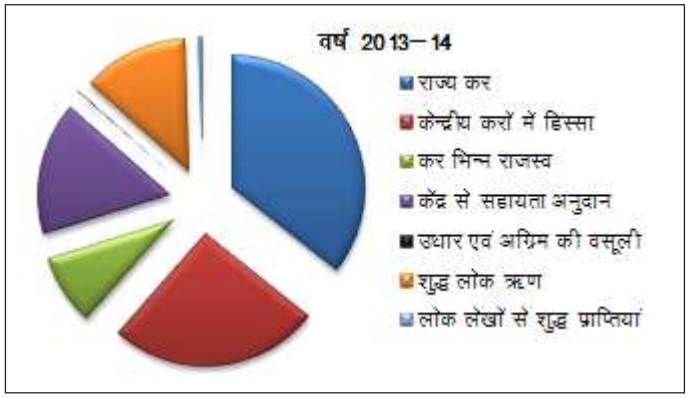

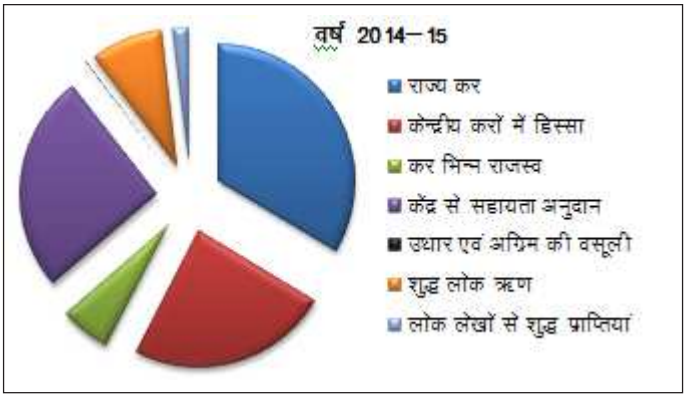

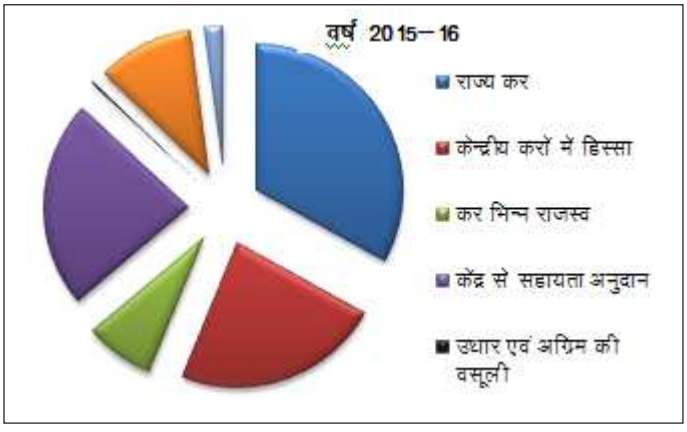

म.प्र. सरकार के राजस्व में कुल व्ययों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 03 **(रू. करोड़ में)**

क्रं.	मद	बजट अनुमान 2013-14	बजट अनुमान 2014-15	बजट अनुमान 2015-16	वृद्धि (प्रतिशत में)	
					2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	कुल व्यय	91947	117041	131199	27	12
2	कुल आयोजनेत्तर व्यय	54339	62751	70850	15	13
3	कुल आयोजना व्यय	37608	54290	60349	44	11

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

तालिका क्रं. 3 का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

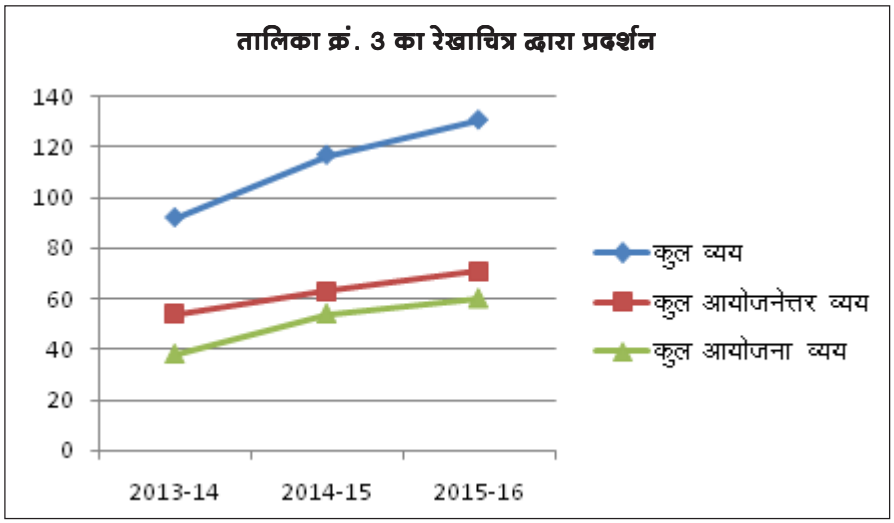

****

होशंगाबाद जिले के कृषि विकास में किसान क्रेडिट कार्ड योजना के योगदान का अध्ययन

जागेश्वर प्रसाद चौरे *

शोध सारांश – देश से लेकर जिले तक की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। कृषि के विकास के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। कृषि क्षेत्र को अल्पकालीन वित्त के रूप में किसान क्रेडिट कार्ड योजना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। यह योजना 1998–99 से लागू की गई है। इसका मुख्य उद्देश्य छोटे–बडे कृषकों को बैंकों से जोड़कर उन्हें सस्ती ब्याज दरों पर व आसानी से फसल ऋण के रूप में वित्त प्रदान करके सेठ, साहूकारों, महाजनों की ऊँची ब्याज दरों के कारण कृषकों के शोषण से मुक्ति दिलाना है। इस योजना के द्वारा होशंगाबाद जिले के कृषकों को अल्पकालीन ऋण के रूप में वित्त उपलब्ध कराया जा रहा है। इसी के परिणामस्वरूप जिले का कृषि क्षेत्रफल व उत्पादन में वृद्धि हो रही है। प्रस्तुत शोध पत्र में होशंगाबाद जिले के कृषि विकास में किसान क्रेडिट कार्ड योजना के योगदान का अध्ययन किया गया है।

कुंजी शब्द– अर्थव्यवस्था, किसान क्रेडिट कार्ड, वित्त, बैंक, वित्तीय समावेशन।

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है। देश की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है। देश में कुल जनसंख्या का लगभग 69 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या है। इनका मुख्य कार्य कृषि है। इसी प्रकार मध्यप्रदेश की स्थिति है। राज्य की 72 प्रतिशत जनसंख्या गॉवों में रहती है। जिले की जनसंख्या का 69 प्रतिशत भाग गॉवों में रहती है। जो मुख्य रूप से कृषि कार्य करते है। इसलिए कृषि क्षेत्र के विकास के लिए हर स्तर पर प्रयास की आवश्यकता है। अन्य व्यवसायों की भॉति कृषि के लिए भी वित्त आवश्यक है। कृषि के विकास में वित्त एक महत्वपूर्ण कारक है।

परिकल्पना–जिले में कृषि के विकास में अल्पकालीन वित्त के रूप में किसान क्रेडिट कार्ड योजना की एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र–प्रस्तुत शोध अध्ययन में द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है, जिसमें जिला सांख्यिकी कार्यालय, भू–अभिलेख कार्यालय, वार्षिक साख योजना (अग्रणी बैंक) उपसंचालक कृषि एवं कृषि विभाग, जनगणना 2011, म.प्र. का कृषि आर्थिक सर्वेक्षण 2015 से आंकड़ों का संकलन व विश्लेषण कर सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग द्वारा परिणाम ज्ञात किये गये है। समंकों का संकलन वर्ष 2010–11 से लेकर 2014–15 तक के किये गये है। अध्ययन का क्षेत्र होशंगाबाद जिला है।

होशंगाबाद जिले का परिचय–होशंगाबाद एक कृषि प्रधान जिला है। यहाँ का कुल क्षेत्रफल 668.69 हजार हेक्टेयर है। इसमें से कृषि क्षेत्र 568.42 हजार हेक्टेयर है। जिले में कृषि भू–जोतो की संख्या 133288 है। इनमें से लघु व सीमांत कृषकों की संख्या 82012 है जिनके पास कुल कृषि भूमि का सिर्फ 28 प्रतिशत हिस्सा है। जिले की कुल जनसंख्या 1240975 है। इसमें से 851126 ग्रामीण जनसंख्या है। जिले की मुख्य फसले गेहूँ, चना, सोयावीन, धान, अरहर है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना– किसान क्रेडिट कार्ड योजना अल्पकालीन ऋण व्यवस्था व वित्तीय समावेशन का एक सशक्त माध्यम है। यह योजना कृषि क्षेत्र में कृषकों को वित्त उपलब्ध कराने के लिए वरदान साबित हुई है। इसके द्वारा सभी छोटे–बडे कृषकों को अपनी फसलीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वित्त प्राप्त हो जाता है। बैंकों द्वारा कृषकों को किसान क्रेडिट कार्ड योजना के माध्यम से वित्त उपलब्ध कराया जा रहा है। इस योजना ने कृषकों को साहूकारों, महाजनों की ऊँची ब्याज दरों के चंगुल से बचाया है। इसके लिए सरकार, रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया व नाबार्ड बैंक के सहयोग से 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना लागू की गई है। इसे सभी वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और केन्द्रीय सहकारी बैंक इसे कार्यान्वित कर रहे है। इसके माध्यम से कृषकों को दिये गये ऋण का सामान्य बीमा योजना द्वारा बीमा भी किया जाता है। कार्डधारक की मृत्यु हो जाने पर 50000 रू. एवं अस्थाई अशक्तता की स्थिति में 25000 रू. व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा के तहत प्रदान किये जाते है। यह योजना जिले के कृषकों में लोकप्रिय बन गयी है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना के उद्देश्य –

1. नकद के रूप में अल्पकालीन वित्त उपलब्ध कराना है।
2. फसल उत्पादन में होने वाले व्ययों की समय पर पूर्ति हो सकें।
3. सेठ, साहूकारो, महाजनों की ऊँची ब्याज दरों के ऋणो के शोषण से मुक्ति दिलाना है।
4. छोटे–छोटे कृषकों की बैंक तक पहुँच बनाना है।
5. कम ब्याज दर पर कृषकों को अल्पकालीन वित्त उपलब्ध कराना है।
6. फसलीय ऋण सुविधा सम्पूर्ण वर्ष के लिए प्रदान करना है।
7. कृषि संबद्ध क्रिया कलापों को बढ़ावा देकर ग्रामीण आर्थिक विकास करना है।
8. ऋण सीमा बनाकर चालू खाते की तरह इस्तेमाल की सुविधा प्रदान करना।
9. कृषक बीमा व फसल बीमा का लाभ पहुंचाना है।
10. इसके द्वारा बार–बार की बैंक ऋण स्वीकृति की प्रक्रिया से बचाना है।
11. इसके तहत ऋण सीमा तक कितने ही बार रूपये निकाला व जमा किया जा सकता है। लेकिन वर्ष में एक बार इसे लौटाना अवश्य रहता है इसके बाद तुरंत ही पुन: ऋण प्राप्त किया जा सकता है।
12. संक्षेप में किसान क्रेडिट कार्ड योजना के द्वारा कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है।

इस प्रकार किसान क्रेडिट कार्ड योजना के रूप में कृषकों के कृषि वित्त के लिए एक अभिनव विकल्प का उद्भव हुआ है। इसे किसानों की खुशहाली के लिए

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महात्मा गांधी स्मृति स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इटारसी (म.प्र.) भारत

प्रभावी चक्रीय साख के रूप में उपयोग किया जा रहा है।

अवलोकन एवं व्याख्या – होशंगाबाद जिले में कृषि वित्त व्यवस्था के लिए विभिन्न बैंक क्रियाशील हैं। जिले में कुल 18 राष्ट्रीयकृत बैंक अपनी 68 शाखाओं के द्वारा यह कार्य कर रही हैं। भारतीय स्टेट बैंक अपनी 25 शाखाओं के द्वारा कृषि वित्त व्यवस्था कर रही हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की 32 शाखाएं है। जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की कुल 16 शाखाएं स्थापित है। जिले में भूमि विकास बैंक की कुल 05 शाखाएं कार्यरत हैं। जिले में प्रायवेट (निजी) बैंक की संख्या 10 है। इनकी कुल 29 शाखाएं जिले में क्रियाशील हैं। इस प्रकार सभी बैंकों की कुल 175 शाखाएं कार्यरत है जो अपनी विभिन्न योजनाओं के माध्यम से कृषि वित्त उपलब्ध करा रही हैं। इनमें से किसान केडिट कार्ड योजना महत्वपूर्ण है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना के तहत सभी बैंकों ने वर्ष 2010–11 से लेकर वर्ष 2014–15 तक जारी किये गये कार्ड व इनमें वितरित की गयी ऋण राशि को तालिका 1.1 में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 1

जिले की सभी बैंकों द्वारा जारी किसान क्रेडिट कार्ड एवं वितरित ऋण राशि

क्र.	वर्ष	जारी कार्ड संख्या	वितरित ऋण राशि (लाख रूपयों में)
1	2010–11	114806	139897
2	2011–12	145767	132069
3	2012–13	138274	122702
4	2013–14	147803	166582
5	2014–15	152567	188522

स्रोत– वार्षिक साख योजना, प्रगति प्रतिवेदन (अग्रणी बैंक) होशंगाबाद– विभिन्न वर्ष।

उपरोक्त तालिका के आंकड़ों में बैंकों द्वारा जारी किसान क्रेडिट कार्डो की संख्या से स्पष्ट होता है कि बैंकों ने वर्ष 2010–11 में कुल 114806 कार्ड जारी किये गये थे जो बढ़कर वर्ष 2011–12 में 145767 हो गये। इनमें पिछले वर्ष 2010–11 की तुलना में 30961 कार्ड अधिक जारी किये गये। इस वृद्धि का प्रतिशत 27: रहा है। वर्ष 2012–13 में पिछले वर्ष 2011–12 की तुलना में कुछ कमी रही है। लेकिन वर्ष 2013–14 में अपने पिछले वर्ष की तुलना में 9529 कार्ड अधिक वितरित किये गये। यह वृद्धि 6.89 प्रतिशत की रही। वर्ष 2014–15 में भी वृद्धि रही है जो वर्ष 2013–14 की तुलना में 4764 कार्ड की रही हैं जिसका वृद्धि का प्रतिशत 3.22 रहा है।

इस प्रकार बैंकों द्वारा इस ऋण योजना के तहत जारी कार्ड संख्या में सिर्फ 2012–13 में पिछले वर्ष की तुलना में कमी देखी गई है। शेष वर्षो में वृद्धि स्पष्ट हुई है। इन कार्डो की संख्या में अधिक वृद्धि न होने का कारण यह कार्ड एक बार बन जाता है तो वह 03 वर्षों तक निरंतर चलते रहता है। प्रारंभ के वर्षो में बैंकों द्वारा अधिक कार्ड जारी किये गये है जिसके कारण आगामी वर्षो में कार्डो की संख्या में अधिक वृद्धि नहीं हुई है।

बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना के तहत वितरित की गई ऋण राशि में प्रत्येक वर्ष वृद्धि स्पष्ट हुई है सिर्फ वर्ष 2012–13 में कुछ कमी रही है। वर्ष 2010–11 में बैंकों ने 139897 लाख रूपयों का ऋण वितरण इस ऋण योजना के माध्यम से किया गया था जो बढ़ते हुए वर्ष 2014–15 में 188522 लाख रूपये हो गये। इस दौरान ऋण राशि में 48625 लाख रूपयों की वृद्धि बैंकों ने की है। इस वृद्धि का प्रतिशत लगभग 38: रहा है।

जिले में बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना के माध्यम से बढचढ़ कर कृषि ऋण वितरण किया है। इस अल्पकालीन कृषि ऋण योजना को सफल बनाने का कार्य बैंकों द्वारा किया जा रहा है।

सुझाव– किसान क्रेडिट कार्ड योजना वास्तव में कृषकों के लिए एक महत्वपूर्ण योजना है। इसमें बैंकों द्वारा ऋण वितरण करके प्रसंशनीय कार्य किया जा रहा है। लेकिन इसे और अधिक सफल बनाने के लिए निम्न सुझाव है–

1. इस योजना के तहत सभी कार्ड धारी कृषकों को ए.टी.एम. कार्ड व चैक बुक सुविधा दिया जाना चाहिए।
2. इस योजना में ब्याज दर और कम किया जाना चाहिए।
3. फसल क्षति होने के कारण ऋण राशि वर्ष में न लौटाने पर भी ऋण प्रदान किया जाना चाहिए।
4. फसल बीमा व व्यक्तिगत बीमा की जानकारी कृषकों को प्रदान किया जाना चाहिए। इसका लाभ कृषकों तक पहुंचाया जाना चाहिए।
5. इस ऋण योजना को और अधिक सरल बनाया जाना चाहिए।
6. कृषकों का एक बार कार्ड बन जाने पर 03 वर्ष बाद पुन: नवीनीकरण बिना कागजी कार्यवाही के किया जाना चाहिए तथा स्वत: ही फसलमान के आधार पर ऋण सीमा में वृद्धि की जानी चाहिए।

परिकल्पना का सत्यापन– बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना के द्वारा आसान, सुगम व कम ब्याज दरों पर निरंतर ऋण सुविधा प्रदान करने के फलस्वरूप कृषि क्षेत्र व कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी हो रही है। जिले में इस योजना से कृषि विकास हो रहा है। अत: इससे शोध परिकल्पना का सत्यापन होता है।

निष्कर्ष–होशंगाबाद जिले में किसान क्रेडिट कार्ड योजना एक सफल अल्पकालीन ऋण योजना साबित हुई है। यह योजना अपने उद्देश्य को सफल बना रही है। इसके माध्यम से कृषि का विकास संभव हो रहा है। जिले में इस ऋण योजना का कृषि उत्पादन वृद्धि पर सीधा प्रभाव हुआ है।

जिले का फसल उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। जिले का फसल उत्पादन वर्ष 2010–11 में 68190 हजार मेट्रिक टन था जो प्रत्येक वर्ष वृद्धि करते हुए वर्ष 2014–15 में 179538 हजार मेट्रिक टन हो गया है। इसी प्रकार जिले के कृषि क्षेत्रफल में भी वृद्धि हो रही है। यह योजना कृषि के अल्पकालीन वित्त उपलब्ध कराकर कृषि उत्पादन व कृषि विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इस योजना का विशेष लाभ लघु–सीमान्त कृषकों को हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दत्त, गौरव, महाजन अश्विनी (2012), 49 वा संस्करण भारतीय अर्थव्यवस्था, एस चन्द एण्ड कम्पनी लि. नई दिल्ली : पृष्ठ क्र. 615
2. माहेश्वरी, पी.डी., गुप्ता, शीलचन्द्र (2014), भारतीय आर्थिक नीति, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल पृष्ठ क्र . 293
3. कुरूक्षेत्र (दिसम्बर 2013), सूचना एवं प्रसारण विभाग–ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 5–18
4. कुरूक्षेत्र (दिसम्बर 2015), सूचना एवं प्रसारण विभाग–ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली पृष्ठ क्र . 29–34
5. योजना (अप्रैल 2014), प्रकाशन विभाग–योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 7–9
6. वार्षिक साख योजना, प्रगति प्रतिवेदन (अग्रणी बैंक) होशंगाबाद वर्ष 2010–11 से 2014–15
7. जिला सांख्यिकी कार्यालय, हस्त पुस्तिका–2014
8. भू–अभिलेख कार्यालय, होशंगाबाद 2013
9. म.प्र. का कृषि आर्थिक सर्वेक्षण 2015
10. बेवसाइट जनगणना 2011

निवेश, वृद्धि और विकास के लिए सुधार

डॉ. राजू रैदास *

प्रस्तावना – आम चुनाव 2014 के पहले भारतीय उद्योग जगत, निवेशक और आम जनता में उच्च मुद्रास्फीति, लचर आर्थिक वृद्धि, निवेशकों के अल्प आत्मविश्वास और कई क्षेत्रों में पिछले कुछ वर्षों से व्याप्त नीति–रूग्णता को लेकर जो निराशा थी, उसने भारतीय उद्योग जगत, निवेशक और आम लोगों के मन में नई सरकार के प्रति काफी अपेक्षा पैदा कर दी। अपनी पीड़ा से मुक्ति पाने और अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए हर कोई नई सरकार की ओर देखने लगे। मौजूदा सरकार ने घरेलू निवेश को पुनर्जीवन देने, कारोबार को सुगम बनाने, विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए गई कदम उठाए हैं ताकि मेक इन इंडिया की पहल को सफल बनाया जा सके और विनिर्माण आधारित रोजगार सृजन और आर्थिक वृद्धि प्राप्त हो सके। निस्संदेह, बीते एक साल में सुशासन देखने को मिला। जो वृद्धि और विकास हुए हैं वे महत्वपूर्ण हैं। हालांकि अभी भी सौ करोड़ लोगों के सपने पूरे होने बाकी हैं। बीते एक साल में सरकार द्वारा हासिल की गई उपलब्धियाँ और नीतिगत ध्यान के बारे में आगे बताया जा रहा है।

कारोबार में सुगमता – सरकार ने देश में व्यवसाय को आसान बनाने के लिए कई कदम उठाए हैं। देश की बागडोर संभालते ही सरकार ने 16 लाख करोड़ रूपये मूल्य की निवेश प्रक्रिया शुरू की। पिछले वर्षों से जारी नीति रूग्णता और पिछली तारीखों से प्रभावी कर नीतियों ने निवेशकों को दूर कर दिया था। मौजूदा सरकार ने नए कानून बनाकर और पुराने कानूनों में बदलाव कर इनमें से कई खामियों को दूर किया है। ऐसा दावा नहीं किया जा सकता कि निवेश गतिविधियों में कोई नाटकीय बदलाव आया है, हालांकि सरकार आकलन के मुताबिक वित्तीय वर्ष 2014–15 में पूंजी निर्माण 4.1 प्रतिशत की दर से बढ़ा है। कारोबार को आसान बनाने की जो विशिष्ट नीतियां देखने को मिली हैं उनमें वोडाफोन इंडिया के साथ चल रहे कर विवाद पर आग्रह न करने का फैसला शामिल है। इसके अलावा 2014 के अंतरिम बजट में भूतगामी कर प्रणाली को समाप्त करने की घोषणा भी विशिष्ट नीतियों में शामिल है।

वैश्विक प्रतिस्पर्धा सूचकांक 2014 के अनुसार, भारत में कारोबार करना आसान नहीं है। भारत 160 देशों की इस सूची में 144वें स्थान पर है। 2015–16 के बजट में कारोबार को भारत में आसान बनाने के लिए कई उपाय किए गए हैं। इनमें से कुछ प्रमुख उपाय हैं – मल्टीपल प्रायर परमिसंस के समाधान के लिए एक्सपर्ट कमेटी का गठन, गुड्स और सेवा कर (जीएसटी) को लेकर प्रतिबद्धता, वेल्थ टैक्स का खात्मा, कॉरपोरेट टैक्स दर को अगले चार वर्षों में मौजूदा 30 प्रतिशत से 25 प्रतिशत पर लाना, 14 नियामक अनुमतियों को विलय कर और एक जगह लाकर ई–बिजनेस पोर्टल की स्थापना, निवेशकों को बाहर जाने देने के लिए नए दिवालियापन कानून बनाने का प्रस्ताव, विवादों के समाधान के लिए पब्लिक कंट्रैक्ट विधेयक लाने का प्रस्ताव, जनरल एंटी–अव्यॉडेंस रूल को और दो वर्षों के लिए टालना, वाणिज्यिक विवादों के जल्द निपटारे के लिए अदालतों में इसके लिए समर्पित शाखा के खोलना। ये सभी उपाय देश में व्यापारिक माहौल की स्थिति को बेहतर बनाने की दिशा में हैं। 1 अप्रैल 2016 से जीएसटी को लागू करने की प्रतिबद्धता, कॉरपोरेट को कर मुक्ति और कर छूट देने जो कि अनगिनत कर–विवाद पैदा करते हैं, को हटाना, ये सब प्रावधान इस बात के लिए हैं ताकि पारदर्शी और सुसंगत कर ढांचा बन सके। इसके अलावा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और विदेशी पोर्टफोलियो निवेश के बीच के अंतर का समाधान और बाजार नियमन के लिए फारवर्ड मार्केट कमीशन का सिक्योरिटी ऐंड एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इंडिया का विलयन प्रशासनिक बहुलता, नियमन की समस्याओं को कम करेंगे। इससे कारोबार सुगम होंगे।

विनिर्माण, सामानों और सेवा की बिक्री और उपभोग के लिए एक समान और सर्वग्राही कर लागू करना जीएसटी विधेयक के उद्देश्य हैं। जीएसटी वर्तमान में केन्द्र और राज्य स्तरों पर लागू विभिन्न करों को एक साथ कर देगा। इनमें उत्पाद कर, सेवा कर, बिक्री कर, वैट, प्रवेश शुल्क, लक्जरी और मनोरंजन कर और उत्पाद व सेवा से संबंधित सेस के अलावा सरचार्ज शामिल हैं। जीएसटी बेहतर कर प्रणाली को लागू करने में मददगार होगा और कर के आधार क्षेत्र में फैलाव भी लाएगा। यह मौजूदा कर प्रणाली की खामियों को दूर करने में मदद करेगा जो कि विविध करों के कारण पैदा होती है और अवांछित मुकदमों का कारण बनती है। सरकार का आकलन है कि जीएसटी के लागू होने से जीडीपी में 1 से 2 प्रतिशत की वृद्धि होगी। अभी वे प्रावधानों के मुताबिक इस संशोधन में राज्यों को पांच साल तक क्षतिपूर्ति दी जाएगी। इसके अलावा अंतर्राज्यीय परिवहन पर 1 प्रतिशत अतिरिक्त कर लगेगा और शराब को इसके दायरे से बाहर रखा जाएगा जबकि पेट्रोलियम उत्पादों पर जीएसटी फिलहाल टाल दिया गया है।

भारतीय व्यापार के आड़े आने वाली बहुत सी प्रक्रियागत और प्रशासनिक बाधायें निपटाई जा चुकी हैं या निपटाए जाने की स्थिति में है। इनमें से कई कागजी कार्रवाइयों की जटिलता और विविधता से संबंधित है, जो भारत में प्रशासनिक अड़चनों की मुख्य वजह है। ई–बिज पोर्टल की स्थापना प्रौद्योगिकी आधारित ई–गवर्नेंस का एक प्रयास है। ई–बिज पोर्टल सिंगल विंडो व्यवस्था है। इसके जरिए कंपनियां दस्तावेजों से संबंधित औपचारिकताएं पूरी कर भारत में अपने कारोबार को प्रबंधित कर सकती हैं। फिलहाल जी2बी, ईबिज पोर्टल पर 11 तरह की सेवायें 24 गुना 7 ली जा सकती हैं। सरकार नौ विभागों में फैली केन्द्र सरकार की 26 सेवाओं को एक जगह लाना चाहती है।

वस्तुओं के आयात निर्यात के लिए जरूरी दस्तावेजों की संख्या 10 से घटाकर तीन करने से लेनदेन खर्च में महत्वपूर्ण बचत होगी, जो भारत में व्यापार करने की राह की बड़ी अड़चनों में एक है। विदेशी निवेश प्रोत्साहन बोर्ड (एफआईपीबी) के प्रस्ताव को 30 दिनों के दरम्यान सुरक्षा मंजूरी मिल

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया(म.प्र.) भारत

जाएगी जो कि पहले 90 दिन थे। इस मामले में राज्य भी कदमताल कर रहे हैं। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र को लिया जा सकता है। पहले वहां बिजली कनेक्शन के लिए न्यूनतम समय सीमा 67 दिन थी जिसे घटाकर 21 दिन की गई है और इसके लिए प्रक्रियाओं की संख्या को मौजूदा 7 दिन से घटाकर 3 किया गया है। वृहतर गवर्नेंस की संरचना बनाने के मद्देनजर सरकार ने नियामक व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए लागू करने वाली प्राधिकार एजेंसी के विलय की इच्छा प्रकट की है। फारवर्ड मार्केट कमीशन (एफएमसी) और सिक्योरिटी एंड एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इंडिया (एसईबीआई) के विलय, विविध और परस्पर मिलते कानून (उदाहरणस्वरूप श्रम कानून से संबंधित 44 पुराने कानूनों की जगह प्रस्तावित पांच धारदार श्रमिक कोड) को जोड़ने की पहल इसके उदाहरण हैं। इससे जहां बेहतर अनुपालन सुनिश्चित होंगे वहीं देश में उद्यम के काम आसान बनेंगे।

भारत के श्रम बाजार से व्याधि को हटाने के लिए हाल में तीन कानूनों के जरिए नई पहल की गई है जो कि व्यापक तौर पर देश के श्रम बाजार को प्रशासित करती है। ये हैं–फैक्ट्रीज लॉ (1998), लेबर लॉ एक्ट (1988) और द अप्रेन्टिसशिप एक्ट (1961)। इन सभी कानूनों में मौजूद कुछ कड़े प्रतिबंधक प्रावधानों में संशोधन को मंत्रिमंडल ने पास कर दिया और यह संसद में रखने के लिए तैयार है। प्रबंधकों और नियोक्ता को लचीलापन देने के लिए फैक्ट्रीज एक्ट में जो संशोधन किए गए हैं उनमें ओवरटाइम काम को एक तिमाही में 50 घंटे से बढ़ाकर 100 घंटे करना और अन्य मामलों में जहां जनहित निहित हैं वहां इसे 75 घंटे से बढ़ाकर 125 घंटे करना शामिल है।

यह देखने में श्रमिक विरोधी लगता है और प्रतीत होता है कि यह श्रमिकों की सुरक्षा और कल्याण सुनिश्चित किए बगैर काम के ज्यादा घंटे थोप रहा है। हालांकि मजदूरों के शोषण को रोकने के लिए कानून के उल्लंघन करने पर दंड बढ़ा दिया गया है। काम के घंटे बढ़ाने से भारत में व्याप्त कम कामगार उत्पादकता को बढ़ाने में मदद मिलेगी। हालांकि उत्पादकता के मामले को बेहतर एफडीआई के जरिए इसे टुकड़ों में हल किया जाना चाहिए। मजदूरों के शोषण को रोकने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि अधिकतम काम–घंटे के प्रावधानों को कड़ाई से लागू किया जाए। अन्य रियायतों में कुछ खास औद्योगिक प्रक्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी के प्रावधानों को हल्का किया गया है। (यह भारतीय संदर्भ में मददगार है।) महत्वपूर्ण बात यह कि मजदूरों को कई तरह के लाभ मसलन मजदूरी राशि के साथ छुट्टी पाने की योग्यता अर्जित करने के प्रावधानों को आसान किया गया है। पहले 240 दिन काम करने वाले मजदूर ये लाभ ले सकते थे जिसे घटाकर 90 दिन कर दिया गया है। यह श्रमिकों के हित में उठाया गया कदम है।

श्रमिक विधि 1998 में जो संशोधन किए गए है वे कंपनियों को भारी–भरकम श्रम कानून को पूरा किए बगैर कामगार नियुक्त करने की अनुमति देते हैं। जैसा कि प्रस्तावित है कंपनी श्रम कानून के विविध पहलू के रिटर्न फाइल करने से मुक्त होकर 10 से 40 कामगारों को रख सकते हैं। यह काफी महत्वपूर्ण कदम है। इससे अनावश्यक प्रक्रियागत देरी दूर होगी। यह भारत में व्यापार करने की दृष्टि से एक असाधारण पहलू है।

आधरभूत संरचना, विनिर्माण और निवेश – विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ाना भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए जरूरी है। हर महीने करीब 10 लाख कामगार रोजगार के लिए आते हैं। सन् 2013 में बेरोजगारी 3.7 प्रतिशत बढ़ चुकी थी लेकिन शिक्षा का स्तर और सामान्य कौशल का अभाव है। यही कारण है कि कम कौशल वाले विनिर्माण के काम में बेरोजगारी से निपटने की संभावना है। हालांकि वर्षों से विनिर्माण क्षेत्र का जीडीपी में योगदान 15 प्रतिशत के आसपास शिथिल है। सरकार ने समस्या की सही पहचान की है और विनिर्माण क्षेत्र को मिशन की तरह चलाने पर ध्यान केंद्रित किया है। सरकार की 'मेक इन इंडिया' स्कीम मूल रूप से यह घोषणा करती है कि निवेश के लिए भारत अब पहले से बेहतर जगह है। सरकार कानूनों को सरल बना रही हैं, प्रक्रिया को आसान बना रही हैं जबकि भौतिक आधारभूत संरचना में निवेश कर रही है। भारत को दुनिया की विनिर्माण कंपनियों के लिए उत्पादन हब बनाने के लिए सरकार स्कीमों को देश के अंदर और बाहर गहन रूप से चला रही है। ध्यान के मुख्य क्षेत्र हैं – खनन, टेलीकॉम, ऑटोमोबाइल, बायोटेक्नोलॉजी, कैमिकल्स, निर्माण, रक्षा, खाद्य प्रसंस्करण, लेदर, फार्मास्यूटिकल्स और रेलवे। फरवरी तक सरकार ने 21 हजार करोड़ रूपये के प्रस्ताव प्राप्त किए थे जिनमें 6000 करोड़ रूपये की परियोजना को मंजूरी भी दी जा चुकी है।

इसके अलावा सरकार ने व्यापार के लिए भौतिक आधारभूत संरचना के विकास पर ज्यादा ध्यान दिया है। कार्य भार संभालने के बाद सरकार ने आधारभूत संरचना पर खर्च के लिए व्यापक योजना बनाई है जो कि खास तौर पर कनेक्टिविटी केंद्रित है। इसी के मद्देनजर सरकार ने परियोजना को पर्यावरण अनुमति को समयबद्ध बनाने का निश्चय किया है।

वैचारिक बदलाव के लिए सरकार पीपीपी मॉडल पर ज्यादा जिम्मेदारी देने का विचार कर रही है क्योंकि कुछ पीपीपी परियोजना फंसी जा रही थी और जल्द ही गैर निष्पादित परिसंपत्तियों में तब्दील हो रही थी। ऐसा इसलिए कि निजी क्षेत्र कार्यान्वयन के विविध जोखिम का प्रबंधन नहीं करते। आर्थिक सर्वेक्षण के मुताबिक दिसंबर 2014 तक ठप परियोजनाओं का आकार 8.8 ट्रिलियन रूपये तक पहुंच गया है जोकि जीडीपी का 7 प्रतिशत है।

सरकार ने आधारभूत संरचना की परियोजना के लिए धन प्रबंधन हेतु इंफ्रास्ट्रक्चर बांड के अलावा एक नेशनल इनवेस्टमेंट ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर फंड बनाने की घोषणा की है। नीतिगत और आवंटन दोनों स्तरों पर आधारभूत संरचना के विकास की बात बजट में है जो कि नोट करने योग्य कदम है। संपूर्णता में कहें तो इन सब उपायों और प्रावधानों का उद्देश्य प्रतिस्पर्धा बढ़ाना और निवेश को आकर्षित करना है।

सूक्ष्म, लघु और मध्यम आकार के इंटरप्राइज (एमएसएमई) भारत के विनिर्माण प्रक्षेत्र की रीढ़ है। ये इंटरप्राइज देश के विनिर्माण उत्पाद में 40 प्रतिशत योगदान देते हैं और कुल निर्यात में इसकी हिस्सेदारी भी 40 फीसदी है। इसी कारण रोजगार प्रदान करने में भी इसकी हिस्सेदारी काफी है। आकलनों के मुबाबिक महज 10 प्रतिशत एमएसएमई को ही संस्थागत वित मिल पाते हैं। इस प्रकार मार्केट इंस्ट्रयूमेंट के जरिए क्रेडिट डिलेवरी पर जोर का अपना अर्थ है क्योंकि बैंकिंग सेक्टर अब तक अपने लक्ष्य के अनुरूप नहीं रहा है। माइक्रोक्रेडिट को पुनर्वित्त प्रदान करने के लिए माइक्रोफायनेंस यूनिट डेवलपमेंट रीफायनेंस (एमयूडीआरए) बैंक स्थापित करने का प्रस्ताव साख को वहन करने योग्य बनाएगा जबकि माइक्रोफायनेंस उद्योग को वित्तीय तौर पर बल प्रदान करेगा। 20 हजार करोड़ रूपये के प्रारंभिक कोष और 3000 करोड़ रूपये के गारंटी कोष से बनने वाला एमयूडीआरए बैंक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को प्राथमिकता देगा।

वित्तीय विकेंद्रीकरण और सहकारी संघवाद – चौदहवें वित्त आयोग (एफसी) की सिफारिशें तब सामने आई हैं जब नई सरकार सहकारी और प्रतिस्पर्धी संघीयता के लिए प्रतिबद्ध है। मौजूदा सरकार ने चौदहवें वित्त आयोग की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया है और वित्तीय संघीयता की दिशा में देश में एक नए युग की शरूआत की है। डिविजिवल पूल की हिस्सेदारी–कर राजस्व जो कि संघ और राज्यों के बीच आवंटित है–वह

राज्यों को बिना किसी जटिलता के मिलेगा और यह 32 प्रतिशत से 42 प्रतिशत होगा। स्थानीय निकाय को मिलने वाले अनुदान, राजस्व घाटे वाले 11 राज्यों को मिलने वाले अनुदान और कोयला नीलामी की हिस्सेदारी आदि से स्पष्ट है राज्यों के वित में भारी इजाफा होगा। यह सब केंद्र की वित्तीय क्षमता कम करेगी। राज्यों के मामले में केंद्र के हस्तक्षेप को हतोत्साहित करेंगे। एकीकृत संसाधनों में भारी बढ़ोतरी राज्यों को अपनी विशिष्टता के अनुरूप विकासोन्मुख कार्यक्रम और स्कीम बनाने में मददगार होगी। हालांकि राज्यों द्वारा धन के उपयोग को लेकर कुछ शंकाएं भी हैं क्योंकि गुणवत्ता और क्षमता के स्तर पर राज्यों के बीच भिन्नताएं हैं। इसलिए बढ़ी हुआ एकीकृत वित के हस्तांतरण और संयुक्त विकास योजनाओं में कमी पैसे के दुरूपयोग को बढ़ावा दे सकती है।

सन् 2014-15 वास्तव में राज्यों को परिव्यय की संरचना में बदलाव के द्वारा बेहतर वित्तीय स्वायत्ता की शुरूआत भी है। वित्तीय वर्ष 2013-14 में राज्यों को योजना मद के 4,75,532 करोड़ रूपये में से 1,19,039 करोड़ रूपये मिले थे। राज्यों को 2014-15 में 3,38,408 करोड़ रूपये आवंटित किए गए जबकि कुल योजना मद का आकार 5,75,000 रूपये का था जो कि अतिरिक्त संसाधनों के बराबर और जीडीपी के लगभग 1.6 प्रतिशत है और केन्द्र से राज्यों को आया है। प्रतिस्पर्धी और सहकारी संघवाद के प्रति केंद्र की प्रतिबद्धता इस तथ्य से भी पता चलती है कि उसने श्रम व भूमि कानून समेत कई महत्वपूर्ण कानूनों के अमलीकरण को राज्य विशेष पर छोड़ दिया है। बेहतर शासन और संस्थान वाले राज्य अब वित्त निकासी के बल पर आर्थिक सशक्ति प्राप्त कर सकेंगे।

संपूर्णता में देखें, तो सरकार के पहले साल के कार्यकाल में आर्थिक नीतियां सुधार, आधारभूत ढांचा, कारोबार को आसान बनाने पर केंद्रित है ताकि विनिर्माण के प्रक्षेत्र पुनर्जीवित हो सके और तद्नुसार रोजगार सृजन हो और लोगों का जीवन स्तर बेहतर हो। यद्यपि इन नीतियों का मूल्यांकन अभी जल्दबाजी होगा, लेकिन निश्चित तौर पर भारत का आर्थिक-भविष्य चमकदार दिखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'इंडियाज 2015-16 बजट : टारगेट रिफार्मस टू प्रोमोट इनवेस्टमेंट', नेशनल ब्यूरो 'ऑफ एशियन रिसर्च, वाशिंगटन डी.सी., अप्रैल।
2. 'मेकिंग इंडिया एन अटरैक्टिव इनवेस्टमेंट डेस्टिनेशन : एनाइजिंग एफडीआई पॉलिसी ऐंड चेंज्स।' नेशनल ब्यूरो ऑफ एशियन रिसर्च, वाशिंगटन डी.सी. दिसंबर 204
3. 'इज द रिजीम ऑरवर ?' डेक्कन हेराल्ड, ओपीईडी, दिसंबर 2, 2014।
4. 'फाइनली, अ पुश फार लेबर रिफार्मस' द हिंदू-बिजनेस लाइन, 23 अक्टूबर 2014
5. 'रोडमैप टू फायनेनसियल इनक्लूजन : प्रधानमंत्री जन धन योजना', योजना, वॉल्यूम 38, अक्टूबर 2014, पीपी 30-36

****

उद्यमिता एवं कौशल विकास में चुनौतियाँ

डॉ. डी. एस. आकरे *

प्रस्तावना – सफलता जादू से नहीं मिलती है। सफल होने के लिए जरूरी प्रयास के साथ कौशल में वृद्धि करने से ही सफलता पाना संभव हो पाता है। सरकार के हाल के प्रयासों के कारण कौशल विकास के कार्यक्रम 'आंदोलन' का रूप धर लिया है। निकट भविष्य में 'कुशल भारत' देश को प्रसन्न, स्वस्थ एवं संपन्न अर्थात् 'कौशल भारत' होने की दिशा में ले जायेगा और इस तरह कुशल भारत, 'कौशल भारत' का नारा चरितार्थ हो जायेगा।

कौशल विकास को खास ध्यान में रखते हुए मौजूदा सरकार ने स्किल इण्डिया मिशन की शुरूआत की है। प्रधानमंत्री के इस ड्रीम प्रोजेक्ट 'स्किल इण्डिया' का मकसद 2022 तक तकरीबन 40 करोड़ लोगों से भी ज्यादा को हुनरमंद बनाने का है। कौशल विकास संबंधी लक्ष्यों को हासिल करने के लिए प्रधानमंत्री के नेतृत्व में राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन की शुरूआत की गई है। साथ ही, 15 जुलाई 2015 में प्रधानमंत्री कौशल विकास और उद्यमिता नीति 2015 भी बनाई गई है। इसके अलावा, संयुक्त राष्ट्र संघ के आह्वान पर 15 जुलाई 2015 को पहली बार दुनिया भर में युवा कौशल दिवस का आयोजन हुआ।

भारत में उद्यमिता की दशा एवं दिशा – 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड़ है। इसमें कार्यशील जनसंख्या 15 से 59 वर्ष के बीच के व्यक्ति 67.2 करोड़ है। इनमें से लगभग 25 करोड़ व्यक्ति 15 से 24 वर्ष की आयु के हैं जो 2011 की कुल जनसंख्या का 21 प्रतिशत है। यदि हम इस युवा शक्ति की ऊर्जा का सदुपयोग करते हैं तो यह भारत की विशिष्ट मानव संपदा के रूप में देश के आर्थिक विकास में मददगार होगी। साथ ही अन्य देशों में कुशल श्रम की कमी, बढ़ती आउटसोर्सिंग की प्रवृत्ति के कारण विदेश में भी भारतीय के लिए रोजगार के अवसर बढ़ेंगे। योजना आयोग के 12वीं पंचवर्षीय योजना के मसौदे के अनुसार अगले 20 वर्षों में भारत की श्रम शक्ति में 32 प्रतिशत की वृद्धि होने की संभावना है जबकि अन्य औद्योगिक देशों में इसमें 4 प्रतिशत की कमी एवं चीन में 5 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है। इसीलिए भारत की अर्थव्यवस्था में वृद्धि की संभावनाओं के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा एवं कौशल विकास में उच्च स्तर प्राप्त करना और आजीविका के गुणवत्तापूर्ण साधन उपलब्ध कराना जरूरी है।

भारत में उद्यमिता नवाचार – भारत में उद्यमिता के क्षेत्र में नये प्रयोग हो रहे हैं और नये विचारों द्वारा उद्यम स्थापित हो रहे हैं। आई.आई.एम. एवं आई.आई.टी. जैसे प्रतिष्ठित संस्थानों में युवा अच्छे वेतन वाली नौकरियों को नकार कर उद्यमिता के क्षेत्र में हाथ आजमा रहे हैं और सफलता प्राप्त कर रहे हैं। ऐसे भारतीय उद्यमियों की एक लंबी फेहरिस्त है जिन्होंने नवाचार द्वारा अपने उत्पादों, सेवाओं, प्रक्रियाओं, अभिकल्पों एवं तकनीक में बदलाव कर आशातीत सफलता अर्जित की है। उदाहरण के लिए रेल्वे स्टेशनों पर गुणवत्ता युक्त गर्म भोजन की ऑनलाइन सुविधा, बिजली समस्या के समाधान के लिए सोलर पैनल की सुविधा, महानगरों में चिकित्सकों की सेवाओं को ऑनलाइन उपलब्ध करवाना, मोबाइल एप्स के उपयोग द्वारा चंद मिनटों में टैक्सी की उपलब्धता होना, बसों का घर बैठे रिजर्वेशन करवाने की सुविधा, प्रतिस्पर्धात्मक दरों पर विभिन्न उत्पादों की घर तक पहुंच सेवा आदि सभी तकनीकी ज्ञान के समावेश एवं नवाचार आधारित उद्यमों के उदाहरण हैं जो भारत में सफल हुए हैं। कौशल विकास कार्यक्रम में इतने बड़े स्तर पर व्यक्तियों को रोजगार सुलभ कराने के लिए नवाचार आधारित उद्यमों को स्थापित कराना, स्वरोजगार को प्रेरित करना भारत की आवश्यकता है जिससे कि सीमित संगठित क्षेत्र की कमी को दूर किया जा सके। यदि भारत में भी कौशल विकास कार्यक्रमको सफल बनाना है तो उद्यमिता एवं स्वरोजगार से बेहतर अन्य कोई विकल्प सामने नहीं है।

कौशल विकास योजना – भारत सरकार ने प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना नामक महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। विश्व युवा कौशल दिवस पर 15 जुलाई 2015 को प्रधानमंत्री ने इस योजना का शुभारंभ किया। इस योजना की सफलता के लिए व्यापक प्रचार प्रसार और युवाओं को प्रेरित करना एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पंडित दीनदयाल उपाध्याय श्रमेव जयते की अभिनव पहल की शुरूआत की। राष्ट्र निर्माण में श्रमेव जयते अहम है। समझने की बात यह है कि औद्योगिक विकास और श्रमिकों का उत्थान दोनों को संभव बनाना आवश्यक है।

यह योजना भारत सरकार की परिणाम आधारित फ्लैगशिप कौशल विकास स्कीम है जो राष्ट्रीय कौशल विकास संस्थान द्वारा जारी की गई है। इस कौशल प्रमाणन एवं प्रोत्साहन स्कीम का लक्ष्य अधिकाधिक युवाओं को कौशल प्रशिक्षणों के लिए योग्य बनाना एवं उत्साहित करना है।

कौशल विकास की वैश्विक स्थिति – कौशल विकास के क्षेत्र में भारत में हुए अब तक के प्रयासों की दूसरे देशों से तुलना करें तो पायेंगे कि भारत में अभी इस क्षेत्र में गंभीर काम नहीं हो पाया है। वहीं चीन, जर्मनी और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों ने अपने यहां हजारों, लाखों की संख्या में कौशल विकास संस्थान स्थापित किए हैं। चीन में पांच लाख, जर्मनी और ऑस्ट्रेलिया में एक-एक लाख एस.डी.आई. है। भारत में सिर्फ 15 हजार कौशल विकास संस्थान है। चीन में तीन हजार से अधिक तरह के कौशलों के बारे में ट्रेनिंग दी जाती है। चीन अपने सफल घरेलू उत्पाद का करीब 2.5 फीसदी व्यवसायिक शिक्षा पर खर्च करता है जबकि भारत सिर्फ 0.1 फीसदी।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15 से 29 साल की उम्र के बीच के युवाओं में से सिर्फ 2 फीसदी को ही संस्थागत व्यवसायिक प्रशिक्षण और 8 फीसदी लोगों को गैर संस्थानिक व्यवसायिक प्रशिक्षण हासिल हुआ है। जबकि कोरिया में ये आंकड़ा 96 फीसदी, जापान में 80 फीसदी, जर्मनी में 75 फीसदी और यूनाइटेड किंगडम में 68 फीसदी है।

कौशल विकास में चुनौतियाँ – भारत एक युवा देश है। प्रधानमंत्री के अनुसार यदि इस युवा शक्ति को वांछित कौशलों द्वारा प्रशिक्षित नहीं किया गया तो यही युवा शक्ति देश के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकती है और बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप ले सकती है। इसीलिए भारत के कौशल विकास कार्यक्रम के समक्ष अनेक चुनौतियां भी हैं, जिनका समाधान करके ही इस

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

कार्यक्रम को सफल बनाया जा सकता है।

1. **कौशल प्रशिक्षण का बड़ा लक्ष्य –** भारत की राष्ट्रीय कौशल विकास नीति में वर्ष 2022 तक लगभग 50 करोड़ लोगों को कौशल प्रशिक्षण देने का लक्ष्य रखा गया। संभवत: यह किसी भी देश द्वारा शिक्षा एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में अब तक निर्धारित लक्ष्यों में सबसे बड़ा लक्ष्य है। इतने बड़े लक्ष्य की प्राप्ति केवल सरकार के प्रयासों से नहीं हो सकती। अकादमिक जगत, उद्योग जगत, सरकार, निजी संस्थाऐं, समाज नीति निर्धारक, रोजगार प्रदाताओं, प्रशिक्षकों, युवाओं, अभिभावकों सभी को इसके लिए मिलकर कार्य करना होगा।

2. **प्रशिक्षण में गुणवत्ता का अभाव –** वर्तमान में 31 लाख लोगों को प्रतिवर्ष व्यवसायिक प्रशिक्षण सुलभ है। देश में हर साल कार्यरत जनसंख्या में नए जुड़ने वाले युवाओं के करीब 20 प्रतिशत व्यक्तियों को ही प्रशिक्षण दिया जा सकता है। शेष 80 प्रतिशत तक तो पहुंच ही नहीं है। प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा जो प्रशिक्षण दिया जाता है वह भी गुणवत्ता पूर्ण नहीं है। एक तरफ प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या अपर्याप्त है वहीं इनमें प्रशिक्षण की गुणवत्ता का अभाव है।

3. **कुशल प्रशिक्षकों की कमी –** कौशल विकास नीति के बड़े लक्ष्य को मात्रात्मक के साथ गुणात्मक रूप से भी प्राप्त करना आवश्यक है। इसके लिए कुशल प्रशिक्षकों की बड़े स्तर पर आवश्यकता है। वर्ष 2022 तक देश में लगभग 7 लाख प्रशिक्षकों की आवश्यकता होगी।

4. **आधारभूत संरचना संतोषप्रद नहीं –** भारत में व्यवसायिक शिक्षा तथा तकनीकी प्रशिक्षण के संसाधन भी पर्याप्त नहीं है। व्यवसायिक शिक्षण एवं तकनीकी प्रशिक्षण हेतु प्रशिक्षण संस्थानों में पर्याप्त संसाधन उपलब्ध करवाये जाये और आधारभूत संरचना का विकास एवं विस्तार किया जावे।

5. **असंगठित क्षेत्र का आकार एवं समस्याऐं –** असंगठित क्षेत्र की कुल कार्यरत जनसंख्या में 90 प्रतिशत व्यक्ति एवं कुल राष्ट्रीय उत्पाद में 50 प्रतिशत उत्पाद की भागीदारी है। असंगठित क्षेत्र में आंशिक या मौसमी बेरोजगारी, अपर्याप्त बंधुआ मजदूरी, ऋणग्रस्तता, शोषण का शिकार खराब कार्य परिस्थितियां, अनिश्चित कार्यस्थल आदि अनेक समस्याऐं हैं। असंगठित क्षेत्र की समस्यायें हल करने के भरपूर प्रयास किए जायें और आवश्यक ज्ञान, कौशल, संसाधन, बेरोजगारी भत्ता आदि द्वारा असंगठित श्रमिकों की समस्याओं को कम किया जा सकता है।

6. **कौशल का अभाव एवं प्रभाव –** एस्पायरिंग माइंडस द्वारा देशभर के स्नातक छात्रों पर कराए गए एक सर्वेक्षण से मालूम हुआ कि भारत में हर साल 50 लाख स्नातक तैयार होते हैं। हम उन्हें रोजगार प्राप्त करने लायक कौशल प्रदान करने में नाकाम रहे हैं। नौकरियां संभावित कार्यबल की रफ्तार से नहीं बढ़ रही है, जिससे असंतोष पनप रहा है। हमें तेजी से कारगर ढंग से इस समस्या को हल करना होगा।

7. **शिक्षा संबंधी चुनौतियां –** उच्च शिक्षा में गैर तकनीकी क्षेत्रों यथा कला, वाणिज्य एवं विज्ञानकी ओर अधिक ध्यान दिया गया है। अधिकांश युवा उत्पादन एवं क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त करने हेतु वांछित कौशल, ज्ञान आदि अर्जित नहीं कर पाते हैं। अकादमिक जगत द्वारा प्रदत्त ज्ञान एवं उद्योगों की आवश्यकताओं के मध्य बढ़ती खाई के कारण भारत में बेरोजगारी बढ़ रही है और व्यवसायिक कौशल विकास की नितांत आवश्यकता है।

8. **अभिवृत्तिकारक –** अभिभावक अपने बच्चों को या तो कला, विज्ञान, वाणिज्य जैसे परंपरागत क्षेत्रों में अध्ययन कराते हैं या विधि, आयुर्विज्ञान, चिकित्सा, इंजीनियरिंग आदि क्षेत्रों में भेजते हैं। समाज में ब्लूकॉलर नौकरियों की तुलना में व्हाइट कॉलर नौकरियों को अधिक महत्व दिया जाता है। इस अभिवृत्ति में बदलाव कर कौशल विकास कार्यक्रमों में समाज की भागीदारी बढ़ाना अत्यावष्यक है।

9. **कौशल विकास मार्ग की अन्य अड़चनें –** गुणवत्तापूर्ण व्यवसायिक कौशलों का अभाव, भारतीय अभिभावकों की मानसिकता और छात्रों का रोजगार पाने लायक कौशल प्राप्त किए बिना सिर्फ डिग्री प्राप्त करना, ये सभी गंभीर अड़चनें हैं। सेवाक्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर आवश्यकता से अधिक निर्भरता और निरंतर वृद्धि बरकरार रखने में प्राथमिक एवं माध्यमिक रोजगार क्षेत्रों की अयोग्यता ने इन समस्याओं को और अधिक बढ़ा दिया है।

निष्कर्ष – भारत में कौशल विकास कार्यक्रम की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि उपलब्ध प्रशिक्षण विकल्पों से संबंधित समस्त जानकारी का व्यापक प्रचार प्रसार हो। गुणवत्तापूर्ण कौशल द्वारा रोजगार प्राप्ति बढ़ाने वाले प्रशिक्षकों, संस्थाओं को भी आर्थिक प्रोत्साहन मिलना चाहिए। प्रशिक्षण प्रदान करने से पूर्व प्रशिक्षण आवश्यकताओं का मूल्यांकन होना एवं प्रशिक्षण समाप्ति के पश्चात् सीखे गए कौशल का मूल्यांकन, पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है। कौशल विकास कार्यक्रमों में प्रदान किए जाने वाले कौशलों का निर्धारण वर्तमान आवश्यकताओं के साथ साथ भविष्य की संभावनाओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

कौशल विकास कार्यक्रम में बड़े स्तर पर व्यक्तियों को रोजगार सुलभ कराने के लिए नवाचार आधारित उद्यमों को स्थापित कराना, स्वरोजगार को प्रेरित करना भारत की नितांत आवश्यकता है। कौशल विकास कार्यक्रम की पूरी प्रक्रिया में नई नौकरियों के सृजन और कौशल संबंधी नई पहलों की अपार संभावनायें हैं। कौशल विकास से सिर्फ विदेशी मुद्रा की बचत ही नहीं होगी, बल्कि स्थानीय क्षमताओं और आत्मनिर्भरता पर नया भरोसा कायम होगा और उसके बाद हम गतिशील रह सकेंगे, विश्व की एकता और कल्याण के लिए संघर्ष कर सकेंगे तथा विश्व के समक्ष आत्मनिर्भर, पुनरूत्थित और सर्वशक्तिमान राष्ट्र के रूप में खड़े हो सकेंगे।

कौशल विकास मिशन की आशातीत सफलता के लिए स्कूलों में उपस्थिति बढ़ाना, स्कूलों का बुनियादी ढांचा सुधारना, शिक्षा प्रशिक्षण को कामकाजी दुनिया से जोड़ना, पुरानी शिक्षा को मान्यता देना, लक्षित योजनाओं द्वारा दुर्गम क्षेत्रों पर ध्यान देना और सभी हितधारकों की सक्रिय सहभागिता की आवश्यकता है।

भारत एक युवा देश है। युवा वर्ग वांछित कौशल प्राप्त कर देश के विकास में महती भूमिका निभा सकता है। सरकार द्वारा कौशल विकास पर जोर देना इसी दिशा में उठाया गया एक कदम है लेकिन इसके साथ ही कौशल विकास कार्यक्रम के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों की पड़ताल और उनका समाधान भी आवश्यक है। यह भी ध्यान रखना होगा कि इतनी बड़ी संख्या में युवाओं को केवल संगठित क्षेत्र में समाहित नहीं किया जा सकता। इसके लिए स्वरोजगार एवं उद्यमिता के क्षेत्र में संभावनाओं को तलाशना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जनगणना 2011 के आंकड़े : महापंजीयक सह जनगणना आयुक्त का कार्यालय
2. योजना आयोग : ट्वेल्थ फाइव इयर प्लान एम्प्लाएबिलिटी एण्ड स्किल डेवेलप्मेन्ट
3. प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, प्रक्रिया पुस्तिका, खंड 1 एवं 2
4. योजना आयोग की वेबसाइट
5. रोजगार एवं बेरोजगारी सर्वेक्षण 2011–12
6. स्किल्स फॉर इंप्लॉयबिलिटी, पॉलिसी ब्रीफ आई.एल.ओ.

****

रंगीन कपास का व्यवसायिक उत्पादन एवं शासकीय नीति - एक अध्ययन

डॉ. दिपेश आर. उपाध्याय *

प्रस्तावना - प्राकृतिक रंगीन कपास के सफल उत्पादन एवं विपणन के विविध लाभ जानने के पश्चात् सम्पूर्ण भारत में रंगीन कपास के बीजो की मांग अचानक बढने लगी यहा तक की मध्यप्रदेश के कुछ इलाको में रंगीन कपास का उत्पादन का प्रारंभ भी हुआ। मध्यप्रदेश के पूर्व निमाड़ में वर्ष 1995-96 के सफल उत्पादन के पश्चात् मध्यप्रदेश का हर कृषक जो कपास की खेती करता था अब वह अपने खेत में रंगीन कपास ही लगाना चाहता था खासकर पूर्व निमाड़ जिला खण्डवा के कृषक रंगीन कपास बोने के लिए काफी आतुर थे; परन्तु यह समय था इस बात पर विचार करने का कि रंगीन कपास का उत्पादन प्रारंभ कर दिया जाए तो यह परम्परागत सफेद कपास को किस प्रकार प्रभावित करेगा ? अर्थात रंगीन कपास का सफेद कपास पर क्या प्रभाव पढ़ता है? तथा व्यवसायिक उत्पादन के सम्बन्ध में शासन का क्या रूख है।

परिकल्पना- प्रस्तुत शोध पत्र में अनुसंधान कार्य हेतु निम्न परिकल्पनाएँ सुनिश्चित की गई हैं।

1. रंगीन कपास का सफेद कपास की फसल पर प्रतिकुल प्रभाव पढ़ता।
2. रंगीन कपास तथा सफेद कपास की सममिश्रण की समस्या का समाधान शासकीय नीति बनाकर किया जा सकता हैं।

कपास संबंधी शासकीय निति- रंगीन कपास के व्यवसायिक उत्पादन में सामान्य सफेद कपास के उत्पादन पर होने वाले प्रभाव का यदि गहराई से अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होता है, कि रंगीन कपास की मॉग को देखते हुए यदि रंगीन कपास का व्यवसायिक उत्पादन प्रारंभ हो गया तो धीरे - धीरे सफेद कपास के उत्पादन में कमी आ जाएगी और हो सकता है इसके उपयोगकर्ता तथा व्यापारियों की संख्या नाम मात्र रह जाए। रंगीन कपास का सफेद कपास की फसल पर भी प्रभाव पड़ता है। अगर रंगीन कपास और सफेद कपास को पास पास लगा दिया जाए तो वे एक दूसरे से प्रभावित होकर रंगीन कपास सफेद कपास को दूषित (Contaminated) कर देता है, परिणाम स्वरूप सफेद कपास की गुणवत्ता में कमी आ जाती है, सफेद कपास का बीज दूषित हो जाता है। कपास का यह Contamination (दूषित करना) खेतों में तो होता ही हैं परन्तु फसल पकने के पश्चात् चुनाई करते समय भी होता है तथा कपास की चुनाई के पश्चात् अन्य प्रक्रियाओं में जैसे भण्डारण करने में ट्रान्सपोर्टेशन करने में जीनिंग प्रक्रिया में भी संभवत: Contamination पाया गया। शायद यही कारण है की शासन इस संबंध में व्यवसायिक उत्पादन हेतु कोई ठोस नीति निर्धारित नहीं कर सका है। रंगीन कपास तथा सफेद कपास के मध्य पाई गई इस कन्टेमीनेशन कि समस्या के मद्दे नजर रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन के लिये सबसे पहले Contamination को रोकने के प्रयास करना चाहिये तथा रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन को लेकर भारत सरकार द्वारा किसी नीति का निर्धारण करना चाहिये जिसके तहत रंगीन कपास का सफल व्यावसायिक उत्पादन हो सके।

रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन तथा सफेद कपास के साथ Contamination के संबंध में शासन के द्वारा कुछ प्रस्ताव जरूर पारित किये हैं इस संबंध में प्राप्त जानकारी के अनुसार जो एक्ट पहले कपास के (Admixture) मिश्रीकरण को रोकने के लिए पारित किए थे तथा जो नीति बनाई थी वही नीति रंगीन कपास के संबंध में उपयुक्त हो सकती है।

Cotton Transport Act भारत सरकार द्वारा 1923 में पारित किया गया था जिसके तहत् न्यून किस्म के बीजों की आवक को रोका जाना, तथा कपास उत्पादित हर क्षेत्र तक उच्च किस्म का कपास बीज पहुँचाया जाना था। कपास की मिली-जुली किस्म को रोकने के लिए भारत सरकार ने इसी क्रम में 1925 में Cotton Ginning & Pressing Act-1925 में पारित किया। यह अधिनियम फैक्ट्री के मालिकों के लिए था जो जीनिंग व प्रेसिंग का कार्य करते थे। इस अधिनियम के अन्तर्गत जीनिंग एंव प्रेसिंग किए गए कपास का सम्पूर्ण विवरण लिखित रूप में प्रस्तुत करने को कहा गया। इसके पश्चात् राज्य सरकारों ने केन्द्रीय अधिनियम संशोधित कर दिया गया जिसमें जिनिंग व प्रेसिंग फैक्ट्री के लिए लायसेंस बनाना आवश्यक था। कपास के मिश्रण (Contamination) को रोकने के लिए कई राज्य सरकारों ने Cotton Contral Act बनाया जो कि खेतों में कपास के मिश्रण को रोकने के लिए बनाया गया था। इस एक्ट में कपास की अन्य प्रक्रिया में होने वाले मिश्रण को रोकने संबंधी नियम भी थे। इस अधिनियम के अन्तर्गत एक किस्म कि कपास को किसी अन्य किस्म की कपास के साथ मिलाने पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगा दिया गया था यहॉ तक कि इस प्रकार मिली-जुली कपास के व्यापार को भी निषिद्ध माना जाता था। इसके अतिरिक्त Essential Commodities Act भी पारित किया गया जो कपास के बीजों की बिक्री के संबंध में हैं। उपरोक्त सभी अधिनियम जो संशोधित नहीं किये गये हैं या लागू नहीं हैं। उन अधिनियमों का पुन: निरीक्षण प्राकृतिक रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन के लिए आवश्य किया जाना चाहियें। रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन को ध्यान में रखते हुए उक्त अधिनियमों में आंशिक परिवर्तन कर रंगीन कपास हेतु नया अधिनियम तैयार किया जा सकता है

कपास उत्पादन एवं विपणन संबंधी विभिन्न अधिनियम

* प्राचार्य, किशोरीलाल वर्मा मेमोरियल कॉलेज, पंधाना, जिला - खण्डवा (म.प्र.) भारत

वर्ष 1996-97 में मध्यप्रदेश में कपास अनुसंधान केन्द्र पूर्व निमाड़ खण्डवा के कृषि वैज्ञानिकों के सफल प्रयासों के चलते लगभग 200 हेक्टेयर में रंगीन कपास लगाया गया था जिसका सम्पूर्ण उत्पादन राज्य सरकार के नियंत्रण में था जिसमें किसानों का पंजीकरण, बीज वितरण, उत्पादन की देखरेख और कपास चुनाई के बाद की प्रक्रिया तथा विपणन प्रक्रिया भी राज्य सरकार के नियंत्रण में थी। इस प्रकार पूर्व निमाड़ में रंगीन कपास का प्रथम व्यावसायिक उत्पादन सफल एवं लाभदायक रहा। इस सफलता के बाद राज्य सरकार द्वारा रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन के संबंध में कुछ शासकीय नियम, रंगीन कपास तथा सफेद कपास के सम्मिश्रण (Contamination) की समस्या को ध्यान में रखते हुए बनाए गए जो कुछ इस प्रकार थे-

- रंगीन कपास की खेती वही कृषक कर सकता है, जो राज्य सरकार द्वारा पंजीकृत होगा।
- शासकीय नियमों के अंतर्गत अगर रंगीन कपास की खेती अपंजीकृत कृषक द्वारा व्यावसायिक स्तर पर की गई तो यह अपराध माना जावेगा।
- Essential Commodities Act के अन्तर्गत Ginned किये बीज बिक्री या आगे खेती के लिये और खुल्ले बेचने के लिए अनुमति नहीं होगी।
- रंगीन कपास तथा परम्परागत सफेद कपास की फसलों के बीच 50 से 100 मीटर की दूरी रखनी होगी ताकि सम्मिश्रण ना होने पाए।
- रंगीन कपास का भण्डारण, संकलन, परिवहन एवं जिनिंग, प्रेसिंग सफेद कपास से पूर्ण पृथक हो।
- रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन के लिए आवश्यक कानूनी मापदण्ड निर्धारित किये जाएगें।

उपरोक्त सभी नियम राज्य सरकार द्वारा रंगीन कपास के व्यावसायिक उत्पादन प्रारंभ करने के लिए बनाए गये थे - परन्तु इन नियमों को ना तो लागु किया गया और ना ही किसी नई नीति का निर्माण रंगीन कपास के हक में किया गया।

रंगीन कपास के प्रमाणीकरण के संबंध में किए गए अध्ययन के अन्तर्गत Colour Cotton की तुलना में Organic Cotton से की गई तो पता चला कि रंगीन कपास को प्रमाणित करने के लिये कपास की आवश्यकताएँ बिल्कुल वैसी ही है जैसी आर्गेनिक कॉटन की अगर रंगीन कपास को आर्गेनिक कॉटन के रूप में उगाया जाता है तो संभवत: यह अधिक लाभदायक होगा क्योंकि वर्तमान समय में रंगीन कपास का अभाव हैं एवं इसकी मॉग अधिक है, और रंगीन कपास नवीन आस्तित्व का भी है। रंगीन कपास तथा आर्गेनिक कॉटन के प्रमाणीकरण के लिए पाई गयी समान आवश्यकताएँ निम्न है-

रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन का उत्पादन प्रमाणित एजेंसी द्वारा पंजीकृत होना चाहिये।

- रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन बोने वाले किसानों को अपने द्वारा लगाई गई फसल के क्षेत्र का पूर्णरूप से हिसाब रखना होगा।
- रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन के खेतों में किस प्रकार के खाद, उर्वरक एवं कीटनाशकों का उपयोग करने की अनुमति है तथा किसका उपयोग निषिद्ध है, यह प्रमाणित एजेंसी पर निर्भर होगा।
- फसल एवं उत्पादन का निरीक्षण समय समय पर प्रमाणित एजेंसी द्वारा किया जावेगा।
- रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन के बीजों के साथ किसी भी प्रकार का बीजोपचार नहीं किया जा सकेगा।
- अन्य कपास के साथ सम्मिश्रण को रोकने के लिए रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन और सामान्य सफेद कपास के मध्य पर्याप्त दूरी रखनी होगी।
- रंगीन कपास के खरीदार द्वारा उत्पादन को प्रमाणित करने वाली एजेंसी की विश्वसनीयता और वस्तुनिष्ठता की जाच की जा सकेगी।
- इस प्रकार प्रमाणित रंगीन कपास की विक्रय उपरान्त प्रक्रिया जैसे जिनिंग और प्रेसिंग कार्य भी प्रमाणित जिन तथा प्रमाणित प्रेसिंग फैक्ट्री में ही किया जा सकेगा।
- खेत की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए खेतों में खाद उर्वरक देकर खेत की मिट्टी को उपजाऊ रखना होगा और समय समय पर मिट्टी परीक्षण कराना होगा।
- जिस खेत में रंगीन कपास/आर्गेनिक कॉटन लगाया जाना है उस खेत के फसल चक्रण पर भी ध्यान देना होगा।

उपरोक्त सभी नियम Organic Cotton के प्रमाणीकरण के लिए आवश्यक है तथा यही नियम Color Cotton को प्रमाणित करने में भी सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

विदेशों में किये गये प्रयास-रंगीन कपास से संबंधित नीति निर्माण के अध्ययन के दौरान ज्ञात हुआ कि चाइना कि एक कम्पनी Henan Tangyin Textile co. Ltd. द्वारा रंगीन कपास के उत्पादन एवं विपणन हेतु एक परियोजना तैयार कर प्रारंभ की है, इस परियोजना प्रतिवेदन का प्रकाशन एक अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनी Invest in Henan द्वारा अपनी वेबसाइट www.fdihngov.com [a Opportunities – Investment Project data bas के रूप में Agriculture Projects के नाम से प्रकाशित किया गया हैं इस Project का Title है-

Natural color cotton seeds breeding Industrialization तथा इस परियोजना का प्रकार अर्थात् Project type- New Encouraged है। इस Project के अन्तर्गत रंगीन कपास के उत्पादन तकनीक तथा विपणन उपरांत प्रक्रिया आदि सभी बातों को ध्यान में रखकर कार्य किया जावेगा। प्रकाशित प्रोजेक्ट के अनुसार यह परियोजना सफल रहती है तो रंगीन कपास की मांग को देखते हुए संपूर्ण विश्व के पूर्ण कपास उत्पादन का 1 प्रतिशत उत्पादन 2000 टन तक हो सकता है।

Natural color cotton seeds breeding Industrialization Project के संबंध में अन्य विवरण (Description of the proposed project) अग्रअनुसार है-

Description of the proposed project

Project Title	Natural color cotton seeds breeding Industrialization.
Project type	New Encouraged
Industries	Agriculture Project
Intended made of cooperation	Joint venture
Intended Duration of cooperation	10 year
Total Investment (in 10,000rs Daller)	1600
Payback period	3 years
Project site	Tangyin county, Anyone city, Henan province

Co. Name	Henan Tangyin Textile co. Ltd. Guangming
Address	Road ,Tragyin post code 456150 county
General Manager	Shen Dongfeng
Project manager	Shen Dongfeng
Ownership	Private owned
Number of employees	1500
Annual Sales	120 Million
Profit after tax	6million

उत्पादन की शर्तो के रूप में प्रस्तुत परियोजना के अनुसार रंगीन कपास का उत्पादन कर मुख्य उत्पाद के रूप में fine comb yarn, Chemical fiber yarn & blending yarn का उत्पादन कर उसका विपणन किया जाएगा अर्थात् कपास का उत्पादन कर उसे कच्चे माल के रूप में प्रयोग लिया जायेगा एवं धागे बनाकर उसका विक्रय किया जायेगा।

अत: जिस प्रकार चीन में रंगीन कपास के उत्पादन एवं विपणन हेतु कार्य किया जा रहा है उसी प्रकार हम भारत के परिवेश में भी नई परियोजना प्रारंभ कर सकते है। अगर सरकार द्वारा इस संबंध में कोई ठोस कदम उठाया जाए तो मध्यप्रदेश का निमाड़ क्षेत्र इस प्रकार की परियोजना को अमल में ला सकता है और में रंगीन कपास के विपणन कि संभावनाओं को वास्तविकता में बदल सकता है।

रंगीन कपास संबंधी शासकीय नीति के संबंध में किये गये अध्ययन एवं उपरोक्त परियोजना का अवलोकन करने के पश्चात् कहा जा सकता है की रंगीन कपास के व्यवसायिक उत्पादन के लिये नीति का निर्धारण किया जाना है वह लगभग तैयार है अध्ययन पश्चात् पायी गयी समस्याओं के मद्देनजर कुछ सुझावों को इसमें सम्मिलित किया गया है अत: शासकीय नीति का संभावित स्वरूप निम्नानुसार हो सकता है:-

संभावित शासकीय नीति सुझाव के रूप में –रंगीन कपास के व्यवसायिक उत्पादन हेतु पूर्व निमाड़ का एक क्षेत्र निर्धारित कर दिया जाए, जहॉ पर मात्र रंगीन कपास का ही उत्पादन हो और सफेद कपास उस क्षेत्र में प्रतिबंधित कर दिया जाए।

- रंगीन कपास की खेती करने वाले कृषक का राज्य सरकार द्वारा पंजीकरण कराया जाए, एवं अपंजीकृत कृषक द्वारा रंगीन कपास का व्यवसायिक उत्पादन को कानुन अपराध माना जाए।
- रंगीन कपास के उत्पादकों द्वारा उत्पादित सम्पूर्ण उत्पादन एवं कृषि क्षेत्र का सम्पूर्ण ब्यौरा लिखित में रखना होगा।
- फसल एवं उत्पादन का निरीक्षण समय समय पर राज्य सरकार द्वारा प्रमाणित एजेंसी द्वारा किया जायेगा।
- रंगीन कपास के बीजों के साथ किसी भी प्रकार का बीजोपचार नहीं किया जाए तथा बीजों की पूर्ति प्रमाणित एजेंसी द्वारा किया जायेगी।
- खेत की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए रंगीन कपास के खेत में खाद उर्वरक देकर खेत की मिट्टी को उपजाऊ रखना होगा और समय समय पर मिट्टी परीक्षण कराना होगा।
- रंगीन कपास का भण्डारण ,संकलन, परिवहन एवं विपणन पूर्ण रूप से पृथक् होगा ताकि Contimation ना हो सकें।
- प्रमाणित रंगीन कपास का विक्रय पूर्ण रूप से राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित होगा तथा सम्पूर्ण उत्पादन का वितरण विश्वसनीयता और वस्तुनिष्ठता के आधार पर होगा।
- रंगीन कपास की विक्रय उपरान्त प्रक्रिया जैसे जिनिंग और प्रेसिंग का कार्य भी प्रमाणित जिन तथा प्रमाणित प्रेसिंग फैक्ट्री में ही किया जा सकेगा।
- Essential Commodities Act के अन्तर्गत Ginned किये बीज बिक्री या आगे खेती के लिए खुल्ले बाजार में विक्रय की अनुमति नहीं होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कॉटन इण्डस्ट्री एट ए ग्लांस - 2008 पेज नं - 02,14,17,24
2. इण्डिया टुडे 14 नवम्बर 2001 , पेज नं - 48
3. J.India Soc. Cotton, Improve –Sept. 1996- P.No. 188
4. के जे एजुकेशन सोसायटी भोपाल द्वारा प्रकाशित - कपास-पेज न
5. कृषि भास्कर, जनवरी 2008
6. विपणन प्रबंध, 7 कपास समाचार 2005

****

म.प्र. में कृषि आधारित उद्योगों का आर्थिक विकास में महत्व

डॉ. पी. सी. काशिव *

प्रस्तावना –संपूर्ण देश की भांति म.प्र. भी कृषि प्रधान प्रदेश है। यहॉ की 78 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्यो में संलग्न है। म.प्र. में कृषि कर्म के लिए अनुकूल वातावरण है। म.प्र. में उत्पन्न होने वाली फसलो में खाद्यान्न फसलें – इसमें खरीफ एवं रबी की फसलें आती है जिनमें प्रमुख है – गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, कोदो, कुटकी, चना, अरहर, मूंग एवं उड़द आदि। नकद फसलें– कपास, तिलहन, गन्ना आदि।

कृषि फसलो का उत्पादन प्रदेश में उपभोग व उद्योग दोनों क्षेत्रों में उपयोगी है। जहॉ खाद्यान्न फसले राज्य में उपभोग आवश्यकता की पूर्ति करती है वही नकदी फसलें दलहन, तिलहन आदि राज्य में औद्योगिक इकाइयो के लिए कच्चा माल और आधारभूत सामग्री की आवश्यकताऍ पूरी करती है। म.प्र. में कृषि पर आधारित उद्योगों की स्थापना, विकास, विस्तार के लिए पर्याप्त अनूकुल परिस्थितियॉ है। म.प्र. में कृषि आधारित उद्योगों से तात्पर्य वे उद्योग है जिनमें कृषि जन्य वस्तुऍ कच्चे माल के रूप में प्रयोग की जाती है और प्राथमिक कृषि उत्पादन औद्योगिक उत्पादन के लिए आधार प्रदान करता है।

उद्योगों एवं कृषि आधारित उद्योगों का अर्थ विज्ञान एवं तकनीकी की सहायता से नवीन उपयोगिताओं या मूल्य के निर्धारण से लगाया जाता है एवं कृषि आधारित उद्योग लघु, कुटीर एवं वृहत उद्योग होते है जिन्हें कच्चा माल कृषि द्वारा प्राप्त होता है। कृषि आधारित उद्योग, कृषि उत्पादन पर आधारित है। कृषि उत्पादनो में नवीनता की कमी या वृद्धि होती है तो निश्चित ही कृषि आधारित उद्योगों पर भी इसका प्रभाव होने लगता है। ये उद्योग प्रदेश की जलवायु पर निर्भर करते है। यही कारण है कि म.प्र. में सोयाबीन का उत्पादन अत्यधिक होने से सोयाबीन प्लांट भी अधिक है। अन्य उद्योगों के समान कृषि आधारित उद्योग भी उपभोगताओं की मॉग पर निर्भर करते है।

मानव श्रम सरल एवं सुलभ है यही कारण है इन उद्योगों में मानव श्रम का अधिक प्रयोग किया जाता है। कृषि आधारित उद्योगों में तकनीकी का अभाव पाया जाता है। इस क्षेत्र मे नये अविष्कार नहीं होने के कारण इकाइयों में परम्परागत तकनीक का ही उपयोग होता है। पूँजी में कमी के कारण कृषि आधारित उद्योगों का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है। इन उद्योगों में वर्ष के सभी महीनों में कार्य नहीं मिलता है। कुछ महीने जिनमें फसले पक कर आती है। उन महीनों में ही कार्य की अधिकता रहती है। शेष समय बेरोजगारी रहती है। जब चना, मूंग, उड़द, अरहर की फसल पक कर आती है तब दाल मीलो में रोजगार के अवसरो में वृद्धि होती है।

कृषि आधारित उद्योग पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर है जिस वर्ष प्रकृति अनूकुल रहती है उस वर्ष कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है तथा प्रतिकूल होने पर उस वर्ष कृषि उत्पादन में कमी होती हैं। अनुकूल तथा प्रतिकूल से कृषि उत्पादन प्रभावित होता है।

कृषि आधारित उद्योगों का क्षेत्र – म.प्र. में कृषि कला निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर है इसीलिए कृषि उत्पादनों में भी नवीनता आ रही है। नवीन फसलो के उत्पादन से नवीन उद्योगों की संभावनाऍ बढ़ जाती है और कृषि आधारित उद्योगों का क्षेत्र भी बढ़ जाता है। सभ्यता एवं संस्कृति के विकास से साथ–साथ मानव को कुछ नया करने की चाह के कारण उसकी अन्वेषणी बुद्धि विकास के नये द्वार खोलती है। कृषि पर आधारित उद्योगों का क्षेत्र स्वतंत्रता से लेकर आजतक द्रुत गति से बढ़ा है। बाजार का विस्तार जनसंख्या में वृद्धि तथा उन्नत जीवन स्तर से मॉग में वृद्धि होती है तब इसकी पूर्ति के लिए नये–नये उत्पादन किए जाते है। जिससे इन उत्पादनो को निर्मित करने वाली इकाइयों के प्रकार, क्षमता एवं संख्या में वृद्धि होती है। म.प्र. में भी कृषि आधारित उद्योगों का क्षेत्र विकसित होता जा रहा है।

उद्योगों को प्रमुख क्षेत्र में निम्न प्रकार से बॉटा जा सकता है।

क्र.	फसले	फसलो पर आधारित उद्योग
1.	गेहूँ	आटा मिल, मैदा मिल, बिस्कीट उद्योग, बेकरी उद्योग आदि।
2.	चावल	पोहा मिल, मुरमुरा उद्योग, पापड़ उद्योग
3.	दलहन	दाल मिले–मूंग, उड़द, मसूर, अरहर, चना दाल आदि।
4.	कपास	सूती वस्त्र उद्योग
5.	जूट	जूट एवं पटसन उद्योग।
6.	सोयाबीन	सोया प्लांट
7.	मूंगफली	तेल मिल, दाना खली उद्योग
8.	सरसो	मध्यम व बड़ी तेल मिले
9.	फल एवं सब्जी	जैम, जैली, अचार, मुरब्बे, चिप्स आदि।
10.	मसाला	हल्दी, धनिया, मिर्च, मसाला उद्योग।

उपरोक्त आधार पर कह सकते है कि फसलो की संख्या में वृद्धि सिंचाई साधनो का विस्तार तथा उन्नत किस्म के बीज प्रयोग होने से वृद्धि हो रही है आज कृषक एक ही भू–खंड पर दो एवं तीन फसले लेता है परिणाम स्वरूप कृषि उत्पादन में वृद्धि और कृषि आधारित उद्योगों को कच्चा माल अधिक मिल रहा है। इस कारण कृषि उद्योगो के क्षेत्र मे निरंतर प्रगति हो रही है।

कृषि आधारित उद्योगों का आर्थिक विकास में महत्व –कृषि उद्योग म.प्र. में अपना विशेष स्थान रखते है क्योकि म.प्र. का लगभग 70 से 80 प्रतिशत क्षेत्र ग्रामीण है और कृषि उद्योगों की प्रचुरता जैसे – सोयाबीन, दलहन, गन्ना, कपास, चावल आदि तो है ही साथ में कृषि कर्म से संबंधित उपकरण खाद–बीज, कीटनाशक औषधियों की पूर्ति के लिए उद्योगों की स्थापना के अनुरूप अवसर विद्यमान है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय लाल बहादुर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरोंज, जिला – विदिशा (म.प्र.) भारत

1. **राष्ट्रीय आय का स्त्रोत–** राष्ट्रीय आय के समस्त स्त्रोतो में सबसे अधिक आय कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों से प्राप्त हो सकती है। बशर्ते हम कृषि पर आधारित उद्योगो की अधिकाधिक स्थापना करें।
2. **बेरोजगारी की समस्या का हल –** अधिकांश समस्याओं की जड़ बेरोजगारी है 'खाली दिमाग शैतान का घर होता है' जब कार्य क्षमता का सही उपयोग नहीं होता है, सही उपयोग के अवसर नहीं मिलते तब कार्य क्षमता का दुरूपयोग होने लगता है। अत: बेरोजगारी की समस्या का हल कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना।
3. **आर्थिक समानता एवं सामाजिक न्याय –**कृषि पर आधारित औद्योगिक इकाइयॉ तीन प्रकार की होती है–लघु, कुटीर एवं बृहत । लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना से समाज के सभी वर्गो का कल्याण होता है। निम्न वर्ग की आय में वृद्धि होती है तथा सामाजिक न्याय को बढ़ावा मिलता है।
4. **औद्योगिक विकेन्द्रीकरण –**कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से उद्योगो के केन्द्रीकरण पर प्रतिबंध लग सकता है इससे संर्पूण प्रदेश का संतुलित विकास संभव है।
5. **विकास से अवसर –**अर्थव्यवस्था के विकास के अवसर नवीन उद्योगों की स्थापना से ही बढ़ते है। कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना के द्वारा अर्थव्यवस्था का विकास होता है। प्रति व्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने से जीवन स्तर ऊॅचा उठने लगता है परिणाम स्वरूप देश के औद्योगिक विकास में वृद्धि होती है।
6. **कच्चे माल की सुलभता –**बहुसंख्यक लोगों की आजीविका का साधन कृषि है कृषि उत्पादन एक तरह से कच्चा माल है। इस कच्चे माल का सही प्रयोग कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से ही संभव है कम लागत पर वस्तुओं का निर्माण होगा, कृषि उपज में निरंतर वृद्धि से कृषि आधारित उद्योगों को कच्चा माल निरंतर प्राप्त होगा।
7. **आर्थिक सुदृढ़ता –**कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से देश की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ होगी। जर्जर अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए कृषि उद्योगो की स्थापना की जाए।
8. **मुद्रा प्रसार पर नियंत्रण –**जब उपभोक्ता की मॉग में वृद्धि होती है और पूर्ति में वृद्धि न होने से मुद्रा का मूल्य घटता है एवं वस्तुओं का मूल्य घटता है। तब कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से मांग एवं पूर्ति में संतुलन स्थापित किया जा सकता है।
9. **निर्यात में वृद्धि –**वर्तमान में हमारा देश कृषि उत्पादनो के निर्यात से अधिकाधिक आय अर्जित कर रहा है। कृषि उद्योगों द्वारा निर्मित माल निर्यात किया जाने लगा है। कृषि उत्पादनो में दाले, शक्कर, सोया पदार्थ के उत्पादनो में और अधिक मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है।
10. **आन्तरिक व्यापार में महत्व –**कृषि पर आधारित उद्योगों द्वारा निर्मित माल का आन्तरिक व्यापार निरंतर तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है इससे बाजार का विस्तार होता है लोगों को आसानी से उपभोगता वस्तुएँ सस्ती दरो पर प्राप्त हो सकती है।
11. **मानव श्रम का सृजनात्मक उपयोग** –जनसंख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। मानव श्रम प्रचुर मात्रा में है इस श्रम का प्रयोग हम कृषि आधारित उद्योगों में कर सकते है। इससे एक ओर तो उत्पादन बढ़ेगा तथा दूसरी ओर मानव श्रम का सद्उपयोग भी होगा।

निष्कर्ष – म.प्र. में कृषि भूमि की पर्याप्तता और उपभोगता तथा व्यावसायिक महत्व की विभिन्न फसलो की उपलब्धता को देखते हुए। ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य में कृषि उपज पर आधारित परम्परागत उद्योगों के अलावा कुछ नये उद्योगो की स्थापना की जा सकती है। म.प्र. में कृषि आधारित उद्योगों के विकास की प्रचुर संभावना है जिनके आधार पर राज्य अपना आर्थिक विकास तीव्र गति से किया जा सकता है। बशर्ते कि इन उद्योगों के विकास के मार्ग में बाधक घटकों/तत्वों पर विचार हो। अत: सरकारी अथवा गैरसरकारी स्तर पर ऐसे प्रयास किए जाने चाहिए जो कृषि आधारित उद्योगों को स्थापित करने के इच्छुक युवक–युवतियों के लिए मार्गदर्शन, प्रशिक्षण और आवश्यकता अनुसार संसाधनो के जुटाव में सहायता कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. में कृषि पर आधारित प्रमुख उद्योगों की आर्थिक विवेचना।
2. उद्यमिता समाचार पत्र
3. योजना
4. उन्नत कृषि
5. कृषक जगत भोपाल

****

मध्यप्रदेश बजट 2015–16 का अध्ययन

प्रो. जयराम बघेल * डॉ. जयराम सोलंकी **

प्रस्तावना –वित्तीय वर्ष 2015–16 हेतु मध्यप्रदेश सरकार का बजट प्रदेश के वित मंत्री जयंत मलैया ने 25 फरवरी,2015 को विधान सभा में प्रस्तुत किया। प्रदेश सरकार का उनके द्वारा प्रस्तुत जहॉ यह दूसरा बजट था, उनकी सरकार का यह 12वॉ बजट था। कर दरों के युक्तियुक्तकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए गैस चूल्हे,ट्रेक्टर एसेसरीज,इलेक्ट्रानिक खिलौने,बैंकिंग पॉउडर, स्कूल बैग्स, ताले व चाबियों आदि अनेक उत्पादों पर वैट में भारी कटौती इस बजट में जहॉ की गई है,वही पान मसाले व गुटखे पर कर बढ़ाया गया है। प्रदेश के युवाओं के लिए रोजगार की सम्भावनाऍ,बढ़ाने तथा निर्माण क्षमता में वृद्धि करके "Make in Madhya Pradesh" को साकार करने के उद्देश्य से प्रेरित इस बजट में 2015–16 के दौरान राज्य सरकार का कुल व्यय 1,31,199.1 करोड़ रू अनुमानित की तुलना में 24 प्रतिशत अधिक हैं। राजस्व व्यय 1,08,834.9 करोड़ रू प्रस्तावित है। 1,31,199.1 करोड़ रू के कुल व्यय में योजनागत व्यय 60,348 करोड़ रू निर्धारित किया गया है जो कुल परिव्यय का 45.99 प्रतिशत है। आयोजनेतर व्यय का अनुमान 70,850 करोड़ रू का है।

बजट 2014–15 व 2015–16 एक दृष्टि में **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

समेकित निधि की प्राप्तियों 1,30,815.3 करोड़ रू पर कुल व्यय 1,31,199.1 करोड़ रू के आधिक्य को देखते हुए 2015–16 में घाटा 383.3 करोड़ रू बजट में दर्शाया गया है। लोक लेखे से प्राप्तियों व प्रारम्भिक शेष के समायोजन के पश्चात् अन्तिम शेष ऋणात्मक 513 करोड़ रू अनुमानित है। कुल राजस्व प्राप्तियों 1,14,442.9 करोड़ रू व राजस्व व्यय 1,08,834.9 करोड़ रू के परिप्रेक्ष्य में 2015–16 में राजस्व आधिक्य 5,558 करोड़ रू अनुमानित है,जबकि राजकोषीय घाटा 16,745 करोड़ रू रहने का अनुमान बजट में लगाया गया है। यह राज्य के सकल घरेलू उत्पाद का 2.99 प्रतिशत है,जो कि मध्यप्रदेश राजकोषीय उतरादायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम,2005 द्वारा निर्धारित सीमा में है। उल्लेखनीय है कि 2014–15 व 2015–16 में विभिन्न करों से प्राप्तियों के अनुमान लगाया गया है।

राज्य के मुख्य कर राजस्व **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

1. लोक निर्माण विभाग के सड़क एवं भवन कार्यो के लिए 2015–16 में 5,911 करोड़ रू का प्रावधान जो 2014–15 के बजट प्रशासन से 1,644 करोड़ रू अधिक है।
2. ऊर्जा विभाग हेतु वर्ष 2015–16 में 9,704.08 करोड़ रू का प्रावधान,जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 1,718.67 करोड़ रू अधिक है।
3. वर्ष 2015–16 के लिए बजट में सिंचाई कार्यो के लिए 7,463 करोड़ रू का प्रावधान,जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 1,748 करोड़ रू अधिक है।
4. प्राथमिक,माध्यमिक,एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा हेतु वर्ष 2015–16 में 15,749 करोड़ रू का प्रावधान,जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 896 करोड़ रू अधिक है।
5. उज्जैन में सम्पन्न होने जा रहे सिंहस्थ के आयोजन हेतु 300 करोड़ रू का प्रावधान प्रस्तावित है।
6. तकनीकी शिक्षा एवं कौषल विकास हेतु वर्ष 2015–16 में 800 करोड़ रू का प्रावधान,जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 110 करोड़ रू अधिक है।
7. चिकित्सा शिक्षा हेतु हेतु वर्ष 2015–16 में 649 करोड़ रू का प्रावधान,जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 67 करोड़ रू अधिक है।
8. लाडली लक्ष्मी योजना में अब तक लगभग 19 लाख बेटियों को लाभान्वित किया जा चुका हैं। इस योजना के लिए वर्ष 2015–16 में 1,398 करोड़ रू का प्रावधान है।
9. ग्रामीण महिलाओं के लिए उद्यमिता विकास एवं स्वरोजगार के बेहतर अवसर उपलब्ध कराने हेतु वर्ष 2015–16 से तेजस्विनी महिला सशक्तिकरण योजना का द्वितीय चरण प्रारम्भ किया जाना प्रस्तावित है। इस हेतु वर्ष 2015–16 में 65 करोड़ रू का प्रावधान है।
10. वर्ष 2015–16 में महिला एवं बाल विकास विभाग हेतु 4,483 करोड़ रू का प्रावधान, जो वर्ष 2014–15 के बजट प्रावधान से 427 करोड़ रू अधिक है।

इस प्रकार कहॉ जा सकता है कि बजट की अधिकांश कमियां संसाधनों के अभाव एवं प्रभावशाली क्रियान्वयन से सम्बधित है। यद्यपि सरकार ने विकास कि दिशा में प्रभावशाली प्रयास किया है और उनका प्रभाव भी अर्थव्यवस्था में स्पष्ट रूप से झलकता है,परंतु अभी समन्वित एवं ठोस उपायों कि अति आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. जय प्रकाश मिश्र एवं डॉ.के. एल.गुप्ता –सार्वजनिक वित एवं अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र ।
2. डॉ.अनुपम गोयल – सार्वजनिक वित एवं अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र ।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,बड़वानी (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान, शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,बड़वानी (म.प्र.) भारत

बजट 2014–15 व 2015–16 एक दृष्टि में

(करोड़ रू में)

मद	बजट अनुमान (2014–15)	बजट अनुमान (2015–16)	वृद्धि/प्रतिशत
कुल प्राप्तियॉ	1,16,582.5	1,30,815.3	12
राजस्व प्राप्तियॉ	1,03,493.3	1,14,422.9	11
पूंजीगत प्राप्तियॉ	13,089.3	16,392.4	25
कुल व्यय	1,17,041.0	1,31,199.1	12
राजस्व व्यय	99,013.8	1,08,834.9	10
पूंजीगत परिव्यय	18,027.2	22,354.1	24
विनियोग की राशि	1,29,001.0	1,42,094.3	10
राजस्व आधिक्य	4,479,.4	5,588.0	25

राज्य के मुख्य कर राजस्व

(करोड़ रू में)

मद	बजट अनुमान (2014–15)	बजट अनुमान (2015–16)	वृद्धि/प्रतिशत
बिक्री,व्यापार आदि पर	19,500	21,300	09
राज्य उत्पाद शुल्क	6,730	7,800	16
माल तथा यात्रियों पर कर	2,900	3,200	10
स्टाम्प तथा पंजीकरण	4,000	4,700	18
वाहन कर	2,000	2,300	15
आय तथा व्यय पर अन्य	280	500	79
भू–राजस्व	700	500	–29
विधुत कर तथा शुल्क	2,050	2,200	07
अन्य	830	948	14
कुल योग (अन्य सहित)	38,990	43,448	11

****

मेक इन इंडिया–भारत को विनिर्माण हब बनाने की सबसे बड़ी कवायद

डॉ. भावना बर्मन * प्रो. अंचल रामटेके **

शोध सारांश – विनिर्माण अर्थव्यवस्था के औद्योगिक क्षेत्र में प्रयुक्त बहुमुखी शब्दावली है,जो प्राथमिक क्षेत्र में निर्मित उत्पादों को विनिर्मित करने की एक प्रक्रिया है। यह उत्पाद प्रक्रिया की वह अवस्था है, जिसमें कोई उत्पाद पूर्णत: निर्मित होकर बाजार में विक्रय के लिये अंतिम रूप से तैयार होता है और इस प्रक्रिया को उन्नत, नवप्रवर्तन, प्रोत्साहित व सवंर्धित करके ही हम महाशक्ति बनने का स्वप्न साकार कर सकते हैं।

स्वदेशी संस्कृति और परम्परा ही रोजगार के सृजन और विनिर्माण में मदद कर सकती है। कला और शिल्प की विविधता पर आधारभूत जानकारियों का समय वृद्ध सुरक्षा, प्रोत्साहन तथा उन्हें बढावा देने एवं बेहतर विपणन रणनीतियों के साथ उन्हें सुलभ कराने की आवश्यकता है, ताकि वैश्विक तथा घरेलू स्तर पर उपभोक्ताओं के बीच पहुँच बनाई जा सकें। गुणवत्ता पर नियंत्रण रखकर और उत्पादों को बेचने की सुविधाजनक व्यवस्था देकर सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में घरो के आसपास आय के स्त्रोत पैदा कर सकती है।

प्रस्तावना – भारत में विनिर्माण क्षेत्र को मजबूती प्रदान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी नई दिल्ली के विज्ञान भवन में 25 सितम्बर 2014 को मेक इन इंडिया कार्यक्रम की शुरूआत की। इस अभियान का उद्देश्य निवेश को बढ़ावा देना तथा नवाचार को प्रोत्साहित करना है। इसमें स्किल डेवलपमेंट के साथ विनिर्माण को एक विशिष्ट ऊँचाई प्रदान की जानी है। इसके साथ वेबसाईट "www.makeinindia.com" लांच की गई।

लोगो (प्रतीक चिन्ह)–मेक इन इंडिया का logo शेर का चित्र है, जिसे कलपुर्जों के सहारे तैयार किया गया है। प्रधानमंत्रीजी ने इसे शेर का पहला कदम बताया है। इस 'लोगों' को विनिर्माण, शक्ति तथा राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक माना जा रहा है।

क्षेत्र जिनसे जोड़ा गया है मैक इन इंडिया को – मैक इन इंडिया अभियान के तहत 26 क्षेत्रों को चिन्हित किया गया है, जिसमें नवाचार के साथ निवेश के माध्यम से गतिशील विनिर्माण को बढ़ावा दिया जा सकें। इसमें शामिल क्षेत्रों में अंतरिक्ष, ताप, विद्युत, रेल्वे, सड़क–परिवहन, वस्त्र, नवीनकरणीय ऊर्जा, औषधि, ऑटोमाबाईल, विमानन इत्यादि प्रमुख है।

कैसे होगा संचालन– मैक इन इंडिया अभियान का संचालन सार्वजनिक–निजी भागीदारी (PPP) के तहत सम्पन्न होगा। इसके लिये डी.एम.आई. सी. डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन, औद्योगिक नीति एवं प्रोत्साहन विभाग, इन्वेस्ट इंडिया तथा फिक्की को एक मंच पर लाने का प्रयास किया गया है। आठ सदस्यों की एक विशेषज्ञ समिति गठित की गई है जिसका कार्य निवेश, नवाचार, वैदिक संपदा तथा विनिर्माण से संबंधित बुनियादी ढांचे को बेहतर बनाने का सुझाव देने का है।(MII) के तहत इन्वेस्टर्स फेसिलिटेशन सेल (निवेशक सुविधा प्रकोष्ट) बनाया गया है। जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में है।

नीतियाँ एवं प्रक्रियाएँ – मैक इन इंडिया के तहत की जाने वाली प्रक्रियाओं में नीतिगत प्रवत्तियों को शामिल किया गया है। लाइसेंस और असहज तथा बाधक उपबन्धों को समाप्त करते हुए पारदर्शिता और निर्णय की तीव्रता को महत्व दिया जाना है, इसके लिये एक ई–ब्रिज पोर्टल की स्थापना की गई है। जहाँ औद्योगिक उद्यमियों तथा निवेशकों को भारत में उद्योग निर्माण तथा निवेश के लिये 'आनलॉइन' सुविधाएँ प्रदान की जायेगी। सभी सरकारी विभागों को आपस में जोड़ा जायेगा।

वर्तमान में सरकार ने मैक इन इंडिया को प्रभावी बनाने के लिये आधारभूत संरचनाओं को बेहतर बनाने की योजना बनायी है। औद्योगिक गलियारों को बंदरगाहों, हवाई अड्डों तथा विपणन स्थलों से जोड़ने की प्रक्रिया आरंभ की गई है। औद्योगिक गलियारों के साथ स्मार्टसिटी के निर्माण पर ध्यान दिया गया है। दिल्ली–मुंबई औद्योगिक गलियारें में पांच स्मार्ट सिटी बनायी जा रही है। चेन्नई–बंगलुरू औद्योगिक गलियारे तथा अमृतसर–कोलकाता औद्योगिक गलियारे को भी विकसित किया जा रहा है।

भारत में विनिर्माण क्षेत्र में बाधाएँ– इसमें कोई राय नहीं है कि विनिर्माण क्षेत्र में भारत की स्थिति काफी खराब है। चीन विनिर्माण की बदौलत ही महाशक्ति बना है, परन्तु भारत में व्यवसायिक माहौल है ही नहीं। ऐसा केवल विदेशी निवेशकों का ही कहना नहीं है, वरन् भारतीय निवेशक भी भारत में निवेश करने से कतरा रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण विश्व बैंक की "easy of doing business report 2014" है, जिसमें 189 देशों की सूची में भारत की रैंकिंग 134 है जो काफी निराशाजनक माहौल को दर्शाता है। इसके अलावा और अनेक बाधाएँ हैं जैसे–

- भारत में कारोबारी माहौल की स्थिति अच्छी नहीं है।
- भारत में निर्माण अनुमति एवं ठेके की प्रक्रिया बहुत जटिल एवं अपारदर्शी है।
- भारत की व्यावसायिक संस्कृति अभी भी कुपोषित है।
- भारत में कारोबार संबंधी नीतियों एवं कर नियमों में जटिलता विद्यमान है।
- भारत में छोटे निवेशकों के हितों की सुरक्षा प्रत्याभूतित नहीं है।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (प्राणीशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत

- आर्थिक एवं औद्योगिक प्रगति हेतु आवश्यक विद्युत की आपूर्ति पर्याप्त नहीं है।
- वित्तीय सहायता हेतु ऋण की उपलब्धता आसान नहीं है।
- कम्पनी की रूग्णता एवं दिवालियेपन से उबरने हेतु कोई उपयुक्त व्यवस्था नहीं है।
- ऑटोमोबाईल आयातित सामग्री के कारण ऊँची निर्माण लागते।
- टैक्सटाइल आयातित मशीनरी पर कुछ ज्यादा ही निर्भरता।
- मोबाईल फोन और कम्प्युटर भारत में माइक्रोप्रोसेसर चिप्स जैसे उपकरणों के लिये कोई प्रोत्साहन नीति नहीं।

भारत को विनिर्माण को बढ़ाने के लिये प्रयास– देश को विनिर्माण हब बनाने का सपना महज घोषणा से हो नहीं सकता, इसके लिये क्रियान्वयन हेतु कई उपायो की घोषणा की गई है जिनमे प्रमुख निम्नलिखित हैं–

- रक्षा क्षेत्र के कई उत्पादों हेतु लाइसेंस की आवश्यकता समाप्त कर दी गई है।
- निवेश हेतु एक सरकारी पोर्टल सक्रिय किया गया है।
- एक निवेशक सुविधाकेन्द्र के रूप में इन्वेस्ट इण्डिया स्थापित किया गया है। जो निवेशकों के मार्गदर्शन हेतु पहला केन्द्र है।
- इस केन्द्र की सहयतार्थ समस्त सेवाएँ ई–ब्रिज एकल खिड़की के द्वारा ऑनलाइन पोर्टल के साथ समन्वित की जा रही है।
- देश में विनिर्माण हब हेतु 25 क्षेत्रों को चयनित किया गया है, जो विनिर्माण की दिशा में भारत को विश्व में अग्रणी स्थान दिलाने में सहायक हो सकता है।
- निवेश प्रस्तावों की सुरक्षा अनुमति 3 माह के अन्दर प्रदान करने हेतु गृह मंत्रालय को एवं स्वप्रमाणीकरण हेतु राज्यों को निर्देशित किया गया है।
- घरेलू कम्पनियों की पहचान कर उन्हें वैश्विक कम्पनी में परिवर्तित करने हेतु प्रयास किये जा रहे हैं।
- घरेलू कम्पनियों की पहचान कर उन्हें वैश्विक कम्पनी में परिवर्तित करने हेतु प्रयास किये जा रहे हैं।
- व्यावसायिक इकाइयों के संदेहों एवं सवालों के समाधान हेतु एक पोर्टल www.makeinindia.com सृजित किया गया है।

मैक इन इंडिया के लाभ– यदि यह सब कुछ संभव होता है तो इसके कई लाभ होते दिखेंगे जैसे कि–

- देश के भीतर ही रोजगार के अवसर सृजित होंगे।
- विनिर्माण उत्पादों के आयात की मात्रा में बड़े पैमाने पर कमी आयेगी।
- दीर्घकाल में भारत के निर्यात संघटकों की विविधता बढ़ेगी और उसमें विनिर्माण उत्पादों की बहुलता शामिल होगी।
- देश में विश्व की नवीनतम प्रौद्योगिकियाँ आयेंगी और कुछ देशों के साथ जिससे हमारा व्यापारिक टकराव है, उसे घरेलू विनिर्माण कंपनियाँ कम करने में मदद करेगी।
- मेक इन इंडिया को मोदी जी ने भारत के नागरिकों के लिये फर्स्ट डेवलप इंडिया के रूप में परिभाषित किया है। इस अवसर पर भारत के पास उपलब्ध थ्री–डी शक्ति (डेमोक्रेसी, डेमोग्राफी एवं डिमांड)का उल्लेख उन्होंने किया। इसके साथ ही देश की लुक ईस्ट नीति के साथ लुक वेस्ट का मंत्र भी उन्होंने दिया और कहा कि इन दोनों को जोड़कर ग्लोबल विजन के साथ आगे बढ़ना चाहते हैं।

किसी भी अर्थव्यवस्था के विकास के लिये विनिर्माण क्षेत्र महत्वपूर्ण होता है। भारत जैसे विकासशील देश अपने विकास और रोजगार कि लिये अधिकांशत: विनिर्माण पर ही आश्रित हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था जो पारंपरिक रूप से कृषि आधारित रही है। अब विनिर्माण की तरफ लंबी छलांग लगा रही है, जो अर्थव्यवस्था में 16 फीसदी का योगदान करता है लेकिन रोजगार और विकास में इसका योगदान इसकी वास्तविक क्षमता से कहीं कम है।

विनिर्माण क्षेत्र के योगदान की GDP(सकल घरेलू उत्पाद) में 25 फीसदी करना राष्ट्रीय विनिर्माण नीति का लक्ष्य है। यह लक्ष्य एक दशक में हासिल करने का उद्देश्य है। जिससे 10 करोड़ रोजगार के अवसर पैदा होंगे। सरकार द्वारा प्रस्तुत ताजा बजट ने घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय उद्योगों के लिये अनुकूल माहौल बनाने का प्रयास किया जा रहा है और प्रक्रियाओं के सरलीकरण, तार्किकीकरण और डिजिटलाईजेशन पर जोर दिया जा रहा है।

निष्कर्ष– मैक इन इंडिया स्किल इंडिया और मुद्रा जैसी सरकार की पहल देश की उद्यमशीलता को प्रोत्साहन देकर भारत को दुनिया का विनिर्माण केन्द्र बनाने की दिशा में एक गंभीर प्रयास है। इस बजट में एक शानदार बुनियादी ढाचे का प्रबंध, ऊर्जा आपूर्ति में बाधायें, तकनीक और नवाचार आदि पर भी उचित ध्यान दिया गया है। आखिर में यही कहा जा सकता है कि भारतीय विनिर्माण क्षेत्र में वह उपयुक्त क्षमता है कि वो भारत को दुनिया की सबसे तेज अर्थव्यवस्था का दर्जा हासिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। सरकार और उद्योग जगत की तरफ से उपयुक्त प्रतिबद्धता इस सपने को निश्चय ही साकार कर सकती है। तथा कुशल व अनुशासित मैन पावर का प्रभावी उपयोग किया जा सकता है आशा है नई सरकार की यह बड़ी कवायद कागजी बाद्य (लोगो) तक ही सीमित न रहे और कार्यक्रम में लोगों में दिख रहे कलपुर्जे जमीन पर विनिर्माण इकाई के रूप में भी तब्दील होते दिखे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अरिहंत समसमायिकी महासागर, वार्षिकी 2015
2. अरिहंत समसमायिकी महासागर मासिक पत्रिका, नवम्बर 2014
3. प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 2014
4. प्रतियोगिता दर्पण, मार्च 2015
5. प्रतियोगिता दर्पण, वार्षिकी 2015
6. प्रतियोगिता दर्पण, भारतीय अर्थव्यवस्था अतिरिक्तांक 2015
7. क्रॉनिकल,नवम्बर 2014
8. योजना पत्रिका, अप्रैल 2015
9. दैनिक भास्कर,26 सितम्बर 2014
10. घटनाचक्र, जून 2015

****

जलवायु परिवर्तन आर्थिक विकास में चुनौति

डॉ. रमेश कुमार रावत *

प्रस्तावना – किसी प्रक्रिया की सफलता उस समय घटित हो रही परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं अनुकूल परिस्थिति सफलता के प्रतिशत को बढ़ाती हैं। जलवायु का सीधा संबंध आर्थिक विकास से हैं पिछले कुछ वर्षो में जलवायु परिवर्तन में हुए भारी बदलाव से आर्थिक ढांचा भी प्रभावित हुआ हैं। कृषि सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाला क्षेत्र हैं बेमौसम बरसात, अतिवृष्टि, ओला वृष्टि और सूखे के कारण फसलों को भारी नुकसान हुआ हैं। जिससे किसानों की आर्थिक स्थिति पर सीधा प्रभाव पड़ा हैं। किसान कर्ज के तले दबता गया और आत्म हत्या जैसे मामलों से हमे जनहानि का भी नुकसान उठाना पड़ा। कृषि भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ हैं और जब नीव पर ही आघात हो तो अर्थव्यवस्था का कमजोर होना स्वाभाविक हैं।

लघु एवं कुटीर उद्योगो पर प्रभाव – चूँकि विकासशील अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगो की महती आवश्यकता होती हैं ये उद्योग धंधे कृषि से सीधे तौर से जुड़े होते हैं अत: इनके लिए कच्चे माल की पूर्ति न हो पाता। लघु एवं कुटीर उद्योगो को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। लघु उद्योगो के अभाव में विकसीत अर्थव्यवस्था की कल्पना करना संभव न होगा।

जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणाम – पिछले दो दशको से प्रकृति ने अपने बिगड़ते हालातो से हमें सचेत करना शुरू कर दिया हैं शीतोष्ण परिस्थितियों वाले पश्चिमी देशों में इसका असर सबसे पहले देखने में आया हैं ।इंग्लैण्ड और यूरोप के देशों में पंखे और एसी इसी के संकेत थे। ग्लेशियरो के पिघलने की जो रिपार्ट आई हैं वह भी हमे भयभीत करने वाली हैं हमारे देश में जून 2013 में उत्तराखण्ड में आने वाली बाढ़ से हुई त्रासदी तमिलनाडु की बाढ़ व वर्तमान में चैन्नई में भारी बारिश, जलवायु परिवर्तन के ही परिणामों की ओर इशारा करते हैं। युनिसेफ की रिपोर्ट हमे बताती हैं कि दुनिया में 69 करोड़ बच्चे जलवायु परिवर्तन से सीधे प्रभावित हैं और 53 करोड़ बच्चों को भीषण बाढ़ व तूफान से जूझना पड़ रहा हैं।

सन् 1850 से अब तक पृथ्वी का औसत तापमान में 02 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि दर्ज की गई वहीं औद्योगिक क्रांति आरंभ होने के बाद कार्बन उत्सर्जन में 30 प्रतिशत वृद्धि हुई हैं। स्पष्ट हैं कि दुनिया के विभिन्न देशों में तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाएँ और विकसित देश दोनो ही इसके लिए जिम्मेदार है, विकसित देशों ने पिछले दशकों में अंधाधुंध कार्बन उत्सर्जन किया हैं इसलिए वे पर्यावरण प्रदूषण में ज्यादा जिम्मदार माने जाते हैं।

जलवायु परिवर्तन को रोकने हेतु प्रयास व सुझाव – पिछले दो दशकों में पर्यावरण संरक्षण को लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लगभग 20 जलवायु सम्मेलन हुए हैं और अभी हाल ही में जलवायु परिवर्तन पर पेरिस में शिखर सम्मेलन संपन्न हुआ हैं जिसमें लगभग 150 देशों के नेता/प्रतिनिधि ने भाग लिया हैं और इन सभी का कहना हैं कि जलवायु परिवर्तन को रोकना अत्यंत आवश्यक हैं पिछली विएना संधि में विकसित देशों को कार्बन उत्सर्जन पर पाबंदी लगाने की सहमति बनी थी लेकिन अमेरिका ने यह कहकर इसका पालन करने से इन्कार कर दिया कि चीन और भारत जैसे विकासशील देशों को इस संधि से दूर रखकर जलवायु परिवर्तन रोकने की दिशा में कारगार कदम नहीं उठाए जा सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन पर विकसीत व विकासशील देशों को एक मत न हो पाना इस प्रयास में सबसे बड़ा रोड़ा हैं पेरिस शिखर सम्मेलन में नई नीति की आशा कि जा रही हैं। भारत ने शिखर सम्मेलन में हिस्सा लेने से पूर्ण जलवायु परिवर्तन पर जो लक्ष्य निर्धारित किए हैं उनमें ग्रीन हाऊस गैसो में कटौती, वन क्षेत्रो का विस्तार कर 2.5 से 3 टन तक कार्बनडाई–आक्साइट सोखना और 2030 तक देश की 40 प्रतिशत ऊर्जा की जरूरते सौर व पवन ऊर्जा से पूरी करना हैं अमेरिका सहित अन्य सभी देश भी सौर ऊर्जा को महत्ता दे रहे हैं परन्तु कलकारखानो और वाहनों का प्रदुषण नियंत्रित करना चुनौती हैं, कार्बन उत्सर्जन में एशिया महाद्वीप में चीन 6.1 मिलियन टन कार्बन उत्सर्जन कर प्रथम स्थान पर हैं तथा भारत 1.5 बिलियन टन के साथ दूसरे नंबर पर हैं यह आँकड़ा 2020 तक चार गुना बढ़ने की संभावना हैं ऐसी स्थिति में विकसित और विकासशील देशो को ऐसी नीति बनाने की आवश्यकता हैं जहां प्रगति बाधित न हो और जलवायु परिवर्तन को भी नियंत्रित किया जा सके। धरती का जलवायु संतुलन ठीक करने के लिए प्रदूषण कम करना होगा जिसमें बड़ा हिस्सा धुएं का होता हैं। धुएँ का मुख्य स्त्रोत ऊर्जा सयंत्र होते हैं। यदि धुएं को कम करना हैं तो इन ऊर्जा सयंत्रो को बंद कर ऐसे विकल्प खोजना होगे जिससे हमे ऊर्जा तो मिली लेकिन प्रदूषण फैलाने वाले धुएं से मुक्ति मिल सके। इसके लिए कुछ इनोवेशन किए गये हैं जिनमें मुख्य रूप से निम्न हैं –

फ्लोटिंग विड टर्बाइन – स्कॉटलैंड की सरकार द्वारा समुद्र में विश्व का सबसे बड़ा फ्लोटिंग विड फार्म स्थापित कर रही हैं। इस टर्बाइन से 6 मेगावॉट क्षमता वाले 5 विंड टर्बाइन केबल से इंटर कनेक्ट किए जाएंगे। उनसे 20 हजार घरो को पर्याप्त ऊर्जा मिलेगी इसकी विशेषता यह हैं कि यह कोल आधारित या परमाणु ऊर्जा सयंत्र की तुलना में स्थापित करने की लागत कम आती हैं तथा रखरखाव का खर्च भी कम आता हैं।

जपानी कटिंग वाली सोलर पैनल – ऊर्जा के लिए सोलर पैनल की वर्तमान प्रणाली महंगी हैं। साथ ही अधिकतम रोशनी हेतु संघर्ष भी करना पड़ता हैं। इस कमी को दूर करते हुए मिशिगन यूनिवर्सिटी के मैक्स स्टेन व जापान के गैटशिलियाँ ने शोलर पैनल की नई डिजाइन तैयार की हैं। ये आर्थिक रूप से सस्ती भी हैं और सूर्य के अनुसार एक दूसरे की दिशा बदल लेती हैं। यह पैनल इंस्टाल करना आसान व सस्ता हैं।

प्रिंटेबल सोलर पैनल – सिलिकॉन सेल्स से बनने वाले सोलर पैनल की बजाय ए–3 आकार वाले प्लास्टिक के रोल पर सोलर इंक पेंट की जा सकती हैं। इसे कई तरीको से अप्लाय किया जा सकता हैं, जिसमें स्प्रे कोटिंग और स्क्रीन प्रिंटिग भी शामिल हैं।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला – धार (म.प्र.) भारत

स्ट्रीट लाईट – मलेशिया के खोजकर्ता ने ऐसी स्ट्रीट लाईट बनाई हैं जो न केवल अक्षय ऊर्जा से जुड़ी हैं बल्कि मच्छरों को भी खत्म करती हैं इसकी मदद से मच्छर संबंधी बीमारियां काफी हद तक खत्म की जा सकती हैं मच्छर लेम्प पर इसलिए बैंठते हैं क्योंकि उसमें से कार्बन डाईआक्साइट निकलती हैं यही गैस उन्हे मनुष्य से मिलती। नई स्ट्रीट लाईट में ऐसा फैन लगा हैं जो मच्छरों को उड़ने नही देता हैं।

निष्कर्ष – पर्यावरण विशेषज्ञ लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि जलवायु परिवर्तन के कारण बारिश, बाढ़ या सूखे की असामान्य एवं चरम परिस्थितियों का हमे सामना करना होगा। सारी दुनिया यह तो मानती हैं कि जो कुछ भी बिगड़ रहा हैं वह सब आज की विकास शैली का ही परिणाम हैं लेकिन अपनी सुविधाओं पर अंकुश लगाने को कोई भी तैयार नही हैं वे चाहते हैं कि उनकी जीवन शैली में तो बदलाव न हो पर शेष दुनिया ज्यादा महत्वकांक्षी न हो ताकि पर्यावरण संरक्षण की जिम्मेदारी भी निभा सके। आज पूरे विश्व को एक जुट एक राय बनाकर जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करना होगा ताकि हम विकास के नाम विनाश की ओर न बढ़े।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर, नई दुनिया, स्वदेश समाचार पत्र।
2. योजना पत्रिका।
3. पर्यावरण अध्ययन।
4. रोजगार निर्माण।
5. भारतीय अर्थव्यवस्था।

****

पर्यटन विकास की असीम संभावनाओं वाला जिला - छिन्दवाड़ा

डॉ. डी. एस. आकरे *

प्रस्तावना - संपूर्ण ब्रह्माण्ड में सर्वत्र गति ही व्याप्त है। भारतीय ग्रंथों में कहा गया है, चरैवेति, चरैवेति' अर्थात् चलते रहो-चलते रहो। सदैव चलने को ही हमारे यहाँ जीवन माना गया है। यहाँ चलने का अर्थ भ्रमण या यात्रा से है। ऐसा भ्रमण या ऐसी यात्रा जो हमें किसी मंजिल की ओर ले जाती है। जब भ्रमण आत्मिक शांति, जिज्ञासा शांत करने, प्राकृतिक सौंदर्य निहारने, सैर सपाटा व मनोविनोद करने आदि से जुड़ जाता है, तो यही भ्रमण कालांतर में पर्यटन बन जाता है।

वर्तमान में वैश्विक स्तर पर पर्यटन को एक उद्योग का दर्जा प्रदान किया जा चुका है। पर्यटन उद्योग विश्व के सबसे बड़े निर्यात उद्योग के रूप में स्थापित हो चुका है। भारतीय योजना आयोग ने वर्ष 2020 तक रोजगार के जो चार क्षेत्र चिन्हित किये है, उनमें पर्यटन का स्थान सर्वोपरि है। पर्यटन के लिहाज से भारत पर्यटकों के लिए स्वर्ग है। पर्यटन उद्योग के लिए जितना कच्चा माल और जितने आकर्षण स्त्रोत भारत में विद्यमान हैं, उतने शायद दुनिया के किसी भी देश में उपलब्ध नहीं हैं। न्यूयार्क टाइम्स ने अप्रैल 2005 के अपने लेख में लिखा कि 'भारत अत्यंत प्राचीन, सुंदर और विविध रंगो से भरा देश है।'

भारत का हृदय प्रदेश, मध्यप्रदेश पर्यटन की दृष्टि से समृद्ध प्रदेश है। मध्यप्रदेश के संदर्भ में कहा जाता है कि, 'बाकी राज्यों में कुछ-कुछ मध्य प्रदेश में सभी कुछ।' देश की हृदय स्थली के रूप में ख्याति उपलब्ध इस प्रदेश में देशी-विदेशी सैलानियों की चाहत की तकरीबन हर चीज मौजूद है। प्रदेश में पर्यटन के विभिन्न रंग यहां वहां बिखरे पड़े हैं। मध्य प्रदेश की सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ एक ऐसा क्षेत्र है जहां अद्धितीय प्राकृतिक सौंदर्य बेमिसाल ऐतिहासिक व पुरातात्विक धरोहर, बेजोड़ धार्मिक व सांस्कृतिक विरासतें, मनमोहक वन एवं वन्य प्राणी सम्पदाऐं विद्यमान है। उचित संरक्षण एवं समुचित विकास न किये जाने के कारण इनका दिन-प्रतिदिन क्षय होता जा रहा है। ये अपना अस्तित्व खोती जा रही हैं और पर्यावरण भी विकृत हो रहा है। इनके पुनरूद्धार का एकमात्र विकल्प पर्यटन ही है।

जिले में पर्यटन विकास की संभावनाएँ- प्रदेश की जीवन रेखा नर्मदा के दोनों किनारों पर दो लंबी पर्वत श्रेणी पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती हुई अरब सागर तक जा पहुँची है। उत्तर की पर्वत श्रेणी विंध्याचल एवं दक्षिण की पर्वत श्रेणी सतपुड़ा के नाम से जानी जाती है। छिंदवाड़ा जिला सतपुड़ा पर्वत श्रेणी के प्राय: मध्य भाग में नर्मदा कछार के दक्षिण की ओर स्थित है। हर भोला हर-हर महादेव के जयकारे से गूंजती चौरागढ़ की पहाड़ियाँ, चंडीदेवी का आशीर्वाद लेकर एक-दूसरे पर पत्थर बरसाते लोगों का गोटमार मेला और भरपूर प्राकृतिक सम्पदाऐं, यह पहचान है, छिंदवाड़ा जिले की। यहाँ के संतरे और चिरोंजी की विदेशों में अपनी अलग पहचान है। पेंच राष्ट्रीय उद्यान, अमोनी-समोनी में गर्म पानी का कुंड, तामिया और पातालकोट की मुख्य सुरम्य वादिया छिंदवाड़ा जिले को विशेष पहचान दिलाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है।

सतपुड़ा पर्वत श्रृंखलाओं की सुरम्य वादियों में बसे छिंदवाड़ा जिले को प्रकृति ने अपने मुक्त हाथों से अनमोल मोती (दर्शनीय स्थल) उपहार स्वरूप प्रदान किये हैं। भरपूर नैसर्गिक सम्पदा, अनेक ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थलों की मौजूदगी के बावजूद भी छिंदवाड़ा जिला पर्यटन नक्शे पर अपना स्थान नहीं बना पाया। जिले में पर्यटन विकास की अपार सम्भावनाऐं है, जिले में कई स्थल ऐसे हैं, जो काफी खूबसूरत और दर्शनीय हैं। यदि प्रशासन इन स्थलों के विकास पर ध्यान दे और उचित साधन उपलब्ध करवायें तो साधारण दिखने वाले स्थल भी पर्यटन स्थल बनाए जा सकते हैं।

प्रकृति ने तामिया-पातालकोट जैसे अद्धितीय नैसर्गिक स्थल प्रदान किये हैं, पेंच-कन्हान जैसी सदानीरा नदियों की भेंट दी है, कुकड़ीखापा, घोघरा, लिलाही जैसे मनमोहक झरने तथा प्रपात उपहार में दिये हैं, अमोनी-समोनी जैसा गर्म जल कुंड, सतधारा, एवं पंचधारा जैसी जलधाराएं वरदान में दिये हैं, वहीं जिले में पहली पायरी जुन्नारदेव, चौरागढ़-महादेव, अर्द्ध ज्योतिर्लिंग, कोसमी हनुमान, जामसावली हनुमान, हिंगलाज देवी मंदिर, बड़कुही, दारा दरबार आँचलकुंड, राधादेवी गुफा-बिछुआ जैसे असीम धार्मिक आस्था एवं विश्वास के केन्द्र बिंदु मौजूद हैं। देवगढ़ किला, आदिवासी संग्रहालय, भतदिव जैसे अनेक स्थल विद्यमान हैं। छिंदवाड़ा जिला पेंच राष्ट्रीय उद्यान और सतपुड़ा टाइगर रिजर्व से घिरा हुआ है। इसके अलावा पचमढ़ी जैसा पर्यटन स्थल जिले की सीमा से लगा हुआ है। तामिया पातालकोट जैसे अद्भुत प्राकृतिक सौंदर्य स्थल मौजूद है, जिले का अधिकांश भू-भाग वनों से अच्छादित एवं पहाड़ियों से सुशोभित है। जिले में आदिवासी संस्कृति की अपूर्व छटा मन मोहती है। जिले में नैसर्गिक बाहुल्य से इको पर्यटन, धार्मिक स्थलों से धार्मिक पर्यटन, ऐतिहासिक स्थलों से ऐतिहासिक पर्यटन और जिले की अद्धितीय आदिवासी संस्कृति से सांस्कृतिक पर्यटन की प्रबल संभावनाऐं है।

उपसंहार - जिले में पर्यटन खूबियों एवं विशिष्टताओं वाले स्थानों को पहचान कर व उनका उचित चयन करके यदि इन्हें पर्यटन केंद्रो के रूप में विकसित किया जाता है, तो इससे न सिर्फ स्थानीय लोगों को रोजगार मिलेगा अपितु पर्यटन से जुड़े व्यवसाय बढ़ेंगे, लोगों की आय में वृद्धि होगी और जिले का पिछड़ापन भी दूर होगा। इतना ही नहीं यहाँ की प्राचीन धरोहरों और अमूल्य सम्पदाओं का पुनरूद्धार होगा, पर्यटन को संरक्षण प्राप्त होगा और अंतत: अंचल के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास को भी गति मिलेगी। विकास अभियान में पर्यटन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, क्योंकि पर्यटन उद्योग असीम संभावनाओं से जुड़ा हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओक्टे मारूति राव, छिन्दवाड़ा क्षितिज, हिंदी प्रचारिणी समिति, छिन्दवाड़ा, 1993।
2. तिवारी कतिलदेव, छिन्दवाड़ा दर्पण, अरूणोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009।
3. दीक्षित ध्रुव कुमार, पाताल कोट घाटी का भारिया जनजीवन, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2010।
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला छिन्दवाड़ा, 2010।
5. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, छिन्दवाड़ा (भोपाल) 1995।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत प्रवासी महिला श्रमिकों के जीवन स्तर एवं कार्यदशाओं का एक अध्ययन (बड़वानी जिले की सेंधवा तहसील के संदर्भ में)

डॉ. प्रकाशचंद रांका * हीरालाल खर्ते **

शोध सारांश – भारत की प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली स्त्रियों एवं पुरूषों को समान जीवन जीने व उन्नति के समान अवसरों की अपेक्षा करती हैं। भारतीय संविधान महिलाओं एवं पुरूषों को कार्य करने का समान अवसर प्रदान करता हैं। संविधान के अनुच्छेद 39 (द) के अनुसार महिलाओं एवं पुरूषों को समान कार्य एवं समान परिश्रम के लिये समान वेतन या मजदूरी दी जाना चाहिए। अत: यह स्पष्ट है कि संविधान भी महिलाओं के कार्य को मान्यता प्रदान करता हैं तथा देश की समृद्धि दोनों महिला एवं पुरूषों की समान आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति पर निर्भर करती हैं। कई बड़ी समस्यायें इन महिलाओं के जीवन को प्रभावित करती हैं। इनकी पहुंच सुरक्षात्मक श्रम अधिनियमों एवं श्रम संगठनों से काफी दूर हैं। उनके कार्य की प्रकृति असंगठित व अदृश्य होने के कारण महिला श्रमिकों के पास उनकी समस्याओं के लिये कोई उपाय नहीं होता हैं।

प्रस्तावना – महिला प्रवास को सामान्यत: महिला के सशक्तिकरण से जोड़कर अर्थात् श्रमशक्ति में बढ़ती भागीदारी, आर्थिक आत्मनिर्भरता व उच्च आत्मसम्मान के रूप में लिया जाता रहा है। परंतु यह हर दृष्टि से सत्य नहीं है। गाँव से शहर की ओर प्रवास के पश्चात महिलायें अधिकतर असंगठित क्षेत्र में ही कार्यरत है। इनके साथ अनवरत रूप से मजदूरी में लिंगभेद, श्रम बाजार में उनके लिये हमेशा से किये जाने वाले अकुशलतापूर्ण व एक ही प्रकार के कार्य आरक्षित है तथा न्यूनतम मजदूरी से भी कम मजदूरी पर अधिक घंटे कार्य, अस्वास्थ्यप्रद व खतरनाक कार्य दशाओं के मध्य मनोवैज्ञानिक व शारीरिक रूप से पीड़िता की तरह जीवन जीने हेतु मजबूर है। परंतु यह बहुत ही दयनीय स्थिति है कि वृहत् स्तरीय राष्ट्रीय सर्वेक्षण भी इस सच को कैद करने में असमर्थ रहे है। इसके परिणामस्वरूप महिलाओं को द्वितीयक उपार्जक के रूप में ही माना जाता है। सरकारी आकड़ों में भी अदृश्य रूप से आश्रित महिलाओं की आय का रिकार्ड उपलब्ध नहीं है।

भारतीय पारंपरिक समाज में महिलाओं का कार्य सामाजिक प्रस्थिति से संबंधित है। परिवार का आर्थिक पिछड़ापन महिलाओं को भी उनके पति के साथ उनके मूल निवास स्थान से काम की तलाश में प्रवास हेतु प्रेरित करता है। जहां एक ओर उनके साथ कमजोर आर्थिक स्थिति व निम्न पारिवारिक स्थिति होती है, वहीं दूसरी ओर कठिन कार्य व कई अन्य कठिनाईयां साथ होती है। आर्थिक अभावग्रस्तता महिला श्रमिकों के लिये एक मुख्य समस्या है। इनके पास आय के निजी साधन उपलब्ध नहीं होते। ये शहरों में मुख्य रूप से आकस्मिक श्रमिक के रूप में निर्माण कार्य में, घरेलू कार्य में, सब्जी बेचने व अन्य निम्न आय के व्यवसाय में कार्यरत है। श्रमिक महिलाएं पुरूषों के समान या उससे भी अधिक श्रम करते हुए भी निरन्तर उपेक्षा और व्यक्तिहीनता की शिकार बनी हुई है।

असंगठित श्रम का अर्थ – असंगठित श्रम को कामगारों के ऐसे रूप में परिभाषित किया गया है। जो रोजगार की अनियमित प्रकृति, अज्ञानता तथा निरक्षरता, लघु कठिनाइयों के कारण अपने साझा उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये स्वयं को संगठित करने में सक्षम नहीं है।

संबंधित साहित्य समीक्षा –

1. हेगड़े (1998) ने अपने अध्ययन 'इंटरनेशनल लेबर स्टैंडर्ड ऑफ इंडिया – द केश ऑफ वुमन लेबर' में लिखा है कि 1997 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा कार्य स्थल पर महिला श्रमिकों के लैंगिक शोषण के विषय में अधिवेशन का आयोजन किया गया। इसके अन्तर्गत लैंगिक शोषण को परिभाषित किया गया। असंगठित क्षेत्र कार्यरत महिला श्रमिक सामान्य रूप से लैंगिक शोषण का शिकार होती है।

2. रोजर्स (2001) ने अपने अध्ययन 'डिसेंटवर्क एज ए डेवलपमेंट ऑब्जेक्टिव' में उल्लेख किया है कि अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आकलन के अनुसार विश्व के मात्र 10 प्रतिशत महिला श्रमिकों को ही पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होती है।

असंगठित क्षेत्र की विशेषताएँ – वर्तमान में अधिकांश जनशक्ति द्वारा असंगठित क्षेत्र का अर्थ यह समझा जाता है कि वे कार्य जिनके लिये प्रशिक्षण या शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती हैं। असंगठित क्षेत्र में शामिल किये जाते है। असंगठित क्षेत्र की परिभाषा जानने से पहले उसकी कुछ विशेषताओं पर प्रकाश डालना आवश्यक है। श्रम मंत्रालय (1994) ने असंगठित क्षेत्र की निम्न विशेषताएँ बताई है–

1. नियमित रोजगार की अपर्याप्तता (नियमित एवं पर्याप्त रोजगार प्राप्त न होने से श्रमिक एक से अधिक नियोजकों के साथ रोजगार की उपलब्धता के आधार पर कार्य करते हैं।)
2. कार्य स्थलों की बिखरी प्रकृति, (श्रमिक एक ही प्रकार के कार्य हेतु विभिन्न स्थलों पर जाते हैं परन्तु यह आवश्यक नहीं कि वे उसी भौगोलिक क्षेत्र में निवास भी करते है।
3. उपरोक्त सभी कारणों से श्रमिकों की आपसी तालमेल की कमी से सामूहिक समझौते की शक्ति कमजोर होती है।
4. संघात्मकता का अभाव (श्रम संघो के निर्माण में अपर्याप्त रोजगार प्राप्त एवं बिखरे हुये श्रमिक तथा घरेलू कार्य में कार्यरत श्रमिकों को एकत्रित करना एक कठिन समस्या है।

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

अध्ययन के उद्देश्य–

1. महिला श्रमिकों की प्रवास क प्रकृति का अध्ययन करना।
2. प्रवासीय महिला श्रमिकों के पारिवारिक सामाजिक जीवन स्तर का अध्ययन करना।
3. महिला श्रमिकों की कार्यदशाओं एवं समस्याओं का अध्ययन करना।
4. महिला श्रमिकों की श्रम समस्या के समाधान हेतु उचित सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन विधि – किसी भी सामाजिक शोध को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग करना आवश्यक होता है। अत: अध्ययन को सुव्यवस्थित रूप से पुरा करने के लिए यह आवश्यक है कि अध्ययन के पूर्व क्रमबद्ध रूप रेखा तैयार कर लेना चाहिए। प्रस्तुत शोध पत्र के लिए प्राथमिक समंकों का उपयोग किया गया है, जिसमें प्रश्नावली के माध्यम से शोध क्षेत्र सेंधवा तहसील की 100 महिला श्रमिकों का चयन किया गया है। चयनित 100 महिला श्रमिकों का प्रत्येक्ष रूप से साक्षात्कार लेकर समंकों का संकलन किया गया है।

संकालित संमकों का सारणीकरण एवं विश्लेषण

साररणी क्रं.–1

प्रवास पश्चात् निवास स्थान के अनुसार वर्गीकरण

क्र.	प्रवास प्रश्चात् निवास स्थल	श्रमिकों की संख्या
1.	अभीनव कॉलोनी सेंधवा	18
2.	डावलबेड़ी सेंधवा	13
3.	वरला	15
4.	रामबाग सेंधवा	21
5.	बलवाड़ी	11
6.	धनोरा	7
7.	देवझिरी सेंधवा	15
	योग	100

स्त्रोत –सर्वेक्षित आंकडे।

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1 में प्रवास के निवास स्थान के अनुसार वर्गीकरण किया गया है। जिसमें सेंधवा तहसील को अलग–अलग क्षेत्र के अनुसार विभाजित किया गया है, जिसमें अभिनव कॉलोनी सेंधवा, डावलबेड़ी सेंधवा, रामबाग सेंधवा, वरला, बलवाड़ी, बड़ग़ाँव एवं देवझिरी में महिला प्रवास हुआ है। जिसमें सबसे अधिक श्रमिक 21 वरला एवं सबसे कम श्रमिक 7 बड़गाँव में है।

सारणी क्रं.–2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक–2 में प्रवास से संबंधित चरों के अनुसार वर्गीकरण किया गया है। जिसमें प्रवास पश्चात् महिला श्रमिकों की उत्पन्न समस्याओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 21 श्रमिकों ने बच्चों की पढ़ाई छूट जाना, 19 श्रमिकों ने शहरी वातावरण में न ढल पाना, 18 श्रमिकों ने सांस्कृतिक रीति–रिवाजो का हनन होना, 16 श्रमिकों ने आस पड़ोस के लोगों का असहयोगपूर्ण व्यवहार करना 15 श्रमिकों ने आवास की समस्या और 11 श्रमिकों ने परिवार का टूटना को मुख्य समस्याओं के रूप में बताया।

इसी प्रकार प्रवास से 34 श्रमिक खुश है और 66 श्रमिकों ने प्रवास से नाखुशी व्यक्त की हैं। इस प्रकार सारणी से स्पष्ट है कि प्रवास के दौरान एवं पश्चात् महिला श्रमिकों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सारणी क्रं.–3

प्रवास करने के कारणों के अनुसार वर्गीकरण

क्रं.	प्रवास का कारण	श्रमिकों की संख्या
1.	बेरोजगारी के कारण	34
2.	अधिक पैसा कमाने के लिये	14
3.	कर्ज के कारण	28
4.	पारिवारिक कल	11
5.	शहरी जीवन के प्रति आकर्षण	13
	योग	100

स्त्रोत– सर्वेक्षित आंकडे।

उपरोक्त तालिका क्र. 3 में प्रवास करने के कारणों के अनुसार संकलित समंको का विश्लेषण किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि 34 श्रमिक बेरोजगारी के कारण, 14 श्रमिक अधिक पैसा कमाने के लिये, 28 श्रमिक कर्ज के कारण, 11 श्रमिक पारिवारिक कलह के कारण एवं 13 श्रमिक शहरी जीवन के प्रति आकर्षण के कारण प्रवास करते है। सर्वाधिक मुख्य कारण बेरोजगारी ही पाया गया है।

सारणी क्रं.–4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 4 में वैवाहिक स्तर एवं प्रवास की इच्छा के अनुसार समंकों का विश्लेषण किया गया है। 93 विवाहित श्रमिकों में से 74 श्रमिक पति की इच्छा से व 19 श्रमिक स्वयं की इच्छा से प्रवासित हुई है। इसी प्रकार 2 श्रमिक अविवाहित हैं, जो स्वयं की इच्छा से एवं 5 विधवा श्रमिक है वह भी स्वयं की इच्छा से प्रवासित हुई है। स्पष्ट है कि अधिकतर महिला श्रमिक अपने पति की इच्छा से प्रवास करती है। अर्थात् महिला सशक्तिकरण का अभाव है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि महिला श्रमिकों की प्रवास करने की प्रवृत्ति के पीछे कई कारण उजागर होते है। जिसमें सबसे अधिक 93 महिला श्रमिक विवाहित है, जिसमें से 19 महिला श्रमिक स्वयं की इच्छा से एवं 74 महिला श्रमिक अपने पति की इच्छा से कार्य की तलाश में अलग–अलग क्षेत्र में प्रवासित होती है। उनके प्रवास करने के अनेक कारण स्पष्ट होते हैं। जिनमें बेरोजगारी, अधिक पैसा कमाने के लिए, किसी समस्या को सुलझाने हेतु लिये गये कर्जे को चुकाने के लिए पारिवारिक कलह एवं आधुनिक युग का बाहरी आकर्षण है। अविवाहित एवं विधवा महिलाऐं रोजगार के लिए प्रवास करती हैं। प्रवास के दौरान उन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिसमें सर्वाधिक मुख्य समस्या उचित आवास की है, उन्हें झोपड़ी बनाकर रहना पड़ता है। उनको प्रवास स्थल पर बुरी नजरों से देखा जाता है और कभी–कभी उनका लैंगिक शोषण भी किया जाता है। उनके बच्चों को न्यूनतम आवश्यक सुविधा भी नहीं मिल पाती है। प्रवास करने से उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक रीति–रिवाज भी छूट जाते है एवं उनका परिवार भी टूकड़ों में बट जाता है। इस प्रकार महिला श्रमिकों को प्रवास के दौरान अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो कि श्रमिकों के लिए उचित नहीं है।

सुझाव–

1. असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों को सरकार द्वारा बनाये गये अधिनियमों का पूरा लाभ दिलाये जाने की उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए। ताकि व्यवहारिक रूप से अधिनियमों का क्रियांवयन संभव हो सके।

2. असंगठित क्षेत्र में श्रम कानूनों के अन्तर्गत नियमित निरीक्षण की व्यवस्था को प्रभावी बनाया जाना चाहिए।
3. रोजगार में भर्ती करने के लिये लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।
4. कार्यस्थल पर सुरक्षा की पर्याप्त व्यवस्था होना चाहिए।
5. लैंगिक उत्पीड़न कानून का कठोरता से पालन होना आवश्यक है।
6. ठेकेदारों को अनिवार्य रूप से अधिनियमों के अन्तर्गत पंजीकरण करना चाहिए।
7. महिला श्रमिकों को समूह बनाने के लिये प्रेरित किया जा सकता है ताकि वे अपने संगठन के माध्यम से अपने खिलाफ होने वाले भेदभाव एवं शोषण का मुकाबला कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आहुजा, राम, 'सामाजिक अनुसंधान' रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2004
2. ब्रेमन जॉन, 'आन बांडेज ओल्ड एड न्यू' द इंडियन जनरल ऑफ लेबर इकानामिक्स, जनवरी–मार्च, 2008
3. हेगड़े उडेयर डी, 'इंटरनेशनल लेबर स्टैडर्ड ऑफ इंडिया द केश ऑफ वुमन लेबर' द इंडियन जनरल ऑफ लेबर इकानामिक्स, अक्टूकर–दिसंबर, 1998
4. मित्तल, मुक्ता,'वूमन इन इंडिया टूडे एंड टूमारों' अनमों पब्लिकेशन प्रा.लि., नई दिल्ली, 1995

सारणी क्रं.–2
प्रवास से संबंधित चरों का वर्गीकरण

क्र.	चर	विकल्प	श्रमिकों की संख्या
1.	प्रवास से उत्पन्न समस्याएँ	1. शहरी वातावरण में न ढल पाना।	19
		2. परिवार का टूटना।	11
		3. आवास की समस्या।	15
		4. बच्चों की पढ़ाई छूट जाना।	21
		5. सांस्कृतिक रीति–रिवाजों का हनन होना	18
		6. बाहर आस पड़ोस के लोगों का असहयोगपूर्ण व्यवहार।	16
		योग	100
2.	प्रवास से खुश	1. खुश	34
		2. नाखुश	66
		योग	100

स्त्रोत– सर्वेक्षित आंकडे।

सारणी क्रं.–4
वैवाहिक स्तर एवं प्रवास की इच्छा के अनुसार वर्गीकरण

क्रं.	वैवाहिक स्तर	प्रवास की इच्छा		श्रमिकों की संख्या
		स्वयं की इच्छा से	पति की इच्छा से	
1.	विवाहित	19	74	93
2.	अविवाहित	2	–	2
3.	विधवा	5	–	5
	योग	26	74	100

स्त्रोत– सर्वेक्षित आंकडे।

****

जनजातीय अर्थव्यवस्था पर जनसंख्या के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन (झाबुआ विकासखंड के विशेष संदर्भ में)

डॉ. गीता दुबे *

शोध सारांश – आदिवासी समुदाय युगों से अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक जीवन–शैली को अपनाते आ रहे हैं और आज भी अलगाव की स्थिति में है। आदिवासी जनसंख्या का अधिकांश भाग आज भी अशिक्षा, बेकारी, भूख और कुपोषण जैसी समस्याओं से पीड़ित है। जनसंख्या के दबाव से यह समाज अपनी स्वजनित्, समस्याओं के कारण लगातार जूझते जा रहे हैं। यहाँ आबादी के दबाव से एक और इस समाज में टकराव की स्थिति उत्पन्न हुई वहीं उसी कारण से भीलों को आदिवासी क्षेत्र से बाहर रोजगार के अवसर खोजने के लिए बाध्य होना पड़ा। अल्प संसाधनों वाला यह आदिवासी बाहुल्य जिला स्थानीय जन शक्ति और प्राकृतिक संसाधनों के असन्तुलन का महत्वपूर्ण उदाहरण बन गया है और यहाँ जनसंख्या का दबाव निरंतर बढ़ता गया है। परिणाम स्वरूप प्राकृतिक संसाधन लगातार विदोहित होकर लुप्त प्राय: हो गये है। आज स्थिति यह है कि जिले में जनसंख्या के दबाव के कारण जल, जंगल एवं जमीन लगभग चुक से गये हैं। इस अंचल में नितांत अनावृत पहाड़ियाँ समाप्त न होने वाली विशाल समुद्री लहरों के रूप में आभास देती है। जबकि कहीं–कहीं अवशेष यह बता रहे हैं कि यहाँ कभी घना रहा जंगल होगा। अंचल की भू–गर्भीय संरचना के कारण जल स्त्रोत की कमी, अल्प वर्षा एवं वनों के प्रति दोहन ने स्थानीय विकास के समीकरण उलट दिये हैं। अलगाव की स्थिति धीरे–धीरे खतरनाक पहचान बनने लगी है। जिले का माछलिया घाट बदनाम सफर का पर्याय बन चुका है। लूटमार, राहजनी एवं अब सामूहिक डकैती धीरे–धीरे आम होती जा रही है। इन सब के पीछे झाबुआ जिले के विकास से जुडे अन्य तथ्यों के साथ ही जननांकीय कारण भी कम उत्तरदायी नहीं है। आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं चिकित्सा के बेहतर प्रयासों के बावजूद झोपड़ी में रहने की मजबूरी, भूखे पेट, कुपोषित एवं गंभीर बीमारियों से त्रस्त अकाल मृत्यु को प्राप्त होते बच्चे, प्रसव के पारंपरिक तरीके का शिकार होती महिलाएँ, अशिक्षित, अर्द्धशोषित जनसंख्या से जिले में लगातार दबाव–सा बनता जा रहा है। जनजातिय वर्गो में अपेक्षाकृत जनसंख्या की बढ़ती प्रवृति जिसने राजनैतिक समीकरण को एक से दो और दो से पाँच किया हो, लेकिन आर्थिक समीकरण ने नकारात्मक परिणाम ही प्रदर्शित किये हैं। पारम्परिक जीवन शैली का निर्वाह करने की बाध्यता एवं जातिगत नियमों की कठोरता ने यहाँ बहुसंख्यक जनजातीय समुदाय को विकास की मुख्य धारा से जुड़ने नहीं दिया है।

शब्द कुंजी – जनजातीय समुदाय, जननांकिय, आदिवासी अर्थव्यवस्था।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम में स्थित झाबुआ जिला आदिवासी बहुल जिला है। यह जिला तीन बडे राज्यों की सीमाओं से लगा हुआ है। उत्तर में राजस्थान, दक्षिण में महाराष्ट्र एवं पश्चिम में गुजरात राज्य स्थित है। विकास की दृष्टि से यह जिला पिछड़ा एवं निम्न 'ग' श्रेणी में आता है। झाबुआ जिला आदिवासी बहुल जिला है। इसका क्षेत्रफल 3600 किलोमीटर है। इसके 1313 ग्राम बसाहट वाले हैं। जनगणना 2011 के अनुसार जिले की जनसंख्या 1025048 है। जिसमें से 515023 पुरूष एवं 510025 महिलाएँ हैं। यहाँ स्त्री–पुरूष अनुपात 1000 पर 990 महिलाएँ हैं। जिले की कुल ग्रामीण जनसंख्या 91.03 प्रतिशत एवं शहरी जनसंख्या 8.97 प्रतिशत हैं। कुल जनसंख्या में से 87 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जनजाति की है। 3.2 प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं शेष सामान्य एवं अन्य जाति के रूप में हैं। जिले की साक्षरता दर 53.30 के प्रतिशत है। जिसमें से महिलाओं की साक्षरता दर केवल 33.77 प्रतिशत है। झाबुआ जिले में कुल 6 विकासखंड–रामा, पेटलावाद, थांदला, मेघनगर, झाबुआ एवं रानापुर हैं।

कृषि मुख्य व्यवसाय है। लेकिन कृषि पारम्परिक अधिक एवं आधुनिक कृषि क्षेत्र अति न्यून है। अधिकांश जोत का आकार 1 हेक्टेयर से भी कम है। फलत: कृषि जीविका का साधन मात्र है। जिले की जलवायु समशीतोष्ण है एवं तापमान मई–जून में 32.8 से 42.3 डिग्री तक रहता है। औसत वर्षा 750.45 मि.मी. रहती है। जिले की मुख्य फसल में मक्का, उडद, तुवर, मुंगफली, कपास, गेहूँ, चना एवं बाजरा है। मक्का आदिवासियों का प्रमुख भोज्य पदार्थ है। झाबुआ के आदिवासियों का प्रमुख पर्व भगौरिया है। वैसे यहाँ भील, भीलाला एवं पटलिया तीन वर्गो में जनजाति बँटी हुई है।

तालिका क्रमांक – 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि झाबुआ जिले में जनसंख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। 1981 से 1991 के दशक में जिले की जनसंख्या वद्धि रिकार्ड 42.15 प्रतिशत रही जो निश्चित् ही विस्फोटक स्थिति को दर्शाती है। 2001 में झाबुआ जिले का विभाजन कर अलीराजपुर जिला पृथक कर दिया गया। फलस्वरूप विभाजित की जनसंख्या वर्ष 2001 में 784286 थी जो बढ़कर 2011 में 1025048 यानि 23.48 प्रतिशत दर से वृद्धि हुई है। निश्चित् ही जनसंख्या का बढ़ता दबाव एवं घटते संसाधन झाबुआ जिले की जनसंख्या के विकास से संबंन्धित हुई समस्याओं के लिए उत्तरदायी हैं।

शोध अध्ययन का चयन एवं प्रासंगिकता – आज जनजाति वर्ग में आये परिवर्तन एक विचित्र असामन्जस्य की स्थिति को जन्म दे रहे हैं। एक ओर शिक्षित समुदाय अपनी जातिगत पिछडेपन की मानसिकता से उभर नहीं पा रहा हैं और ना ही उसे आत्मसात कर पा रहे हैं। दोराहों पर खड़ीं आदिवासी जनसंख्या स्वजनित समस्याओं के साथ ही बाहय सम्पर्क से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं से जूझ रहे हैं।

प्रस्तुत शोध–पत्र के माध्यम से लघु निदर्शन द्वारा आदिवासी जनसंख्या की विशेषताओं एवं उनके प्रभावों को जानने का प्रयास किया गया है। औसतन परिवारों का आकार, बच्चों की संख्या, महिला एवं बच्चों के स्वास्थ्य

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

की स्थिति आर्थिक, सामाजिक हैसियत में परिवर्तन रोजगार एवं पलायन आदि तथ्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। जनसंख्या दबाव से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं के साथ ही जनसंख्या नियंत्रित करने के लिए कुछ सुझावों को भी प्रस्तुत किया गया है।

शोध प्रविधि – सामाजिक शोध एक वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं के कारणों, आंतरिक संबंधों एवं उनमें अन्तर्निहित प्रक्रियाओं का अध्ययन, विश्लेषण एवं निरूपण करना होता है। 'शोध प्रविधि में तथ्य संकलन के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा तथ्य संकलन करने के साथ ही द्वितीयक समंक के रूप में प्रकाशित आलेखों, रिपोर्ट, पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्र एवं इंटरनेट के माध्यम से सामग्री प्राप्त कर यथा स्थान संदर्भ रूप में प्रयुक्त किये गये हैं।'

शोध समग्र क्षेत्र – शोध अध्ययन क्षेत्र में झाबुआ विकास खंड को लिया गया है। चुंकि मैं बचपन से इस क्षेत्र में निवासरत् रही हूँ एवं इस क्षेत्र की आदिवासी जनसंख्या के रहन-सहन, भाषा, रीति-रिवाज एवं स्थानीय समस्याओं को अच्छी तरह से देखा है। अतएवं पिछले कुछ दशकों से जनसंख्या में आए उतार-चढावों एवं जनसंख्या में हो रही लगातार वृद्धि के कारण झाबुआ जिले के आर्थिक विकास के साथ ही। इस समुदाय के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर पर आए सकारात्मक एवं नकारात्मक परिवर्तनों को जानने का प्रयास इस शोध के माध्यम से किया गया है।

शोध निदर्शन – झाबुआ जिले के झाबुआ विकास खंड के दैव निदर्शन द्वारा चयनित 5 ग्रामों का चयन किया गया है एवं चयनित ग्रामों में से प्रत्येक ग्राम से 10 परिवारों को चयनित किया गया है। इस प्रकार समग्र में से कुल 50 परिवारों का उद्देश्यपूर्ण चयन कर शोध आलेख तैयार किया गया है। प्रत्येक परिवार इकाई के रूप में शामिल किया गया है।

निदर्शन के विश्लेषणात्मक तथ्य – सर्वेक्षण के आधार पर 50 परिवारों को लिया गया है जिससे पुरूष 64 महिलाऐं 69 तथा बच्चे 239 हैं। जिनमें कुल जनसंख्या में से पुरूष 17.20 प्रतिशत महिलाएँ 19.54 प्रतिशत तथा बच्चे 64.24 प्रतिशत हैं।

निदर्शन परिवारों का आकार के आधार पर विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य प्राप्त हुए।

जिले में सर्वाधिक 48 प्रतिशत परिवारों का आकार 5-10 के बीच है यानि परिवार में निश्चित ही बच्चों की संख्या अधिक हैं। इस समुदाय में सामान्यतया लड़की का जन्म शुभ माना जाता है। क्योंकि यहाँ वधूमूल्य प्रथा प्रचलित है यानि वर पक्ष द्वारा कन्या पक्ष को निर्धारित 'दापा' (वधूमूल्य) के देना होता है जो औसतन 50 हजार से 5 लाख तक हो सकता है। परिवार के आकार के बढ़ने का कारण ये भी हो सकता है।

सर्वेक्षित परिवारों में साक्षरता स्तर में निरक्षर 50 प्रतिशत प्राथमिक 43.28 प्रतिशत माध्यमिक 3.49 प्रतिशत उच्चतर माध्यमिक 2.69 तथा उच्च शिक्षा 0.54 प्रतिशत है।

सर्वेक्षित परिवारों की व्यावसायिक स्थिति में 100 प्रतिशत परिवार कृषि से जुड़े है तथा उद्योग में नहीं के बराबर है। मजदूरी में 32 प्रतिशत परिवार जुडे हैं। सब्जी विक्रय में 84 प्रतिशत जबकि वनोपज में 20 प्रतिशत परिवार जुडे हैं। मौसमी फल में 24 प्रतिशत परिवार पशुपालन एवं मुर्गीपालन में 44 प्रतिशत परिवार तथा अन्य में 4 प्रतिशत परिवार जुडे है।

निदर्शन परिवारों की आर्थिक स्थिति को जानने के लिए उनके कुल आय के स्त्रोतों का जानने का प्रयास किया गया। जिसका विवरण निम्नानुसार है।

तालिका क्रमांक - 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सर्वेक्षित परिवारों की कुल आय 292810 रू. है वार्षिक आय में कुल आय का 55.3 प्रतिशत भाग केवल कृषि व फल विक्रय से होता है। मजदूरी से प्राप्त 3.27 प्रतिशत भाग 5.05 प्रतिशत भाग सब्जी विक्रय से प्राप्त होता है। वनोपज विक्रय से 3.35 प्रतिशत भाग तथा मौसमी फल विक्रय से 2.16 प्रतिशत भाग अर्जित होता है। पशुपालन एवं मुर्गीपालन से 28.29 प्रतिशत भाग तथा अन्य से 2.52 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है।

निदर्शन परिवारों के आकार एवं आय के बीच संतुलन को जानने के लिए परिवारों में अनुमानित व्यय को विश्लेषित लिया गया है जो इस प्रकार हैं। सर्वेक्षित परिवारों में परिवार का आकार एवं प्रकार में 0-5 में 4 प्रतिशत 5-10 में 48 प्रतिशत 10-15 में 32 प्रतिशत, तथा 15-20 में 16 प्रतिशत व्यक्ति आते हैं। सर्वेक्षित परिवारों में बच्चों के साक्षरता स्तर में बच्चों की कुल संख्या 239 में से स्कूल न जाने वाले 21.75 प्रतिशत, प्राथमिक स्तर पर 50 प्रतिशत माध्यमिक स्तर पर 21.75 उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 4.18 तथा उच्च शिक्षा में 4.07 प्रतिशत बच्चे हैं।

तालिका क्रमांक - 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सर्वेक्षित परिवारों का अनुमानित कुल वार्षिक व्यय 596810 रू. है। कुल व्यय का 31.42 प्रतिशत भाग भोजन पर तथा 16.41 प्रतिशत भाग वस्त्र एवं गहने पर खर्च करते हैं। मद्यपान पर 21.36 प्रतिशत तथा आवास पर 1.22 भाग व्यय किया जाता है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर 6.20 प्रतिशत एवं कृषि उपकरण पर 7.64 प्रतिशत भाग व्यय करते हैं। सामाजिक रीति-रिवाज पर 14.63 प्रतिशत तथा धार्मिक व्यय 0.76 प्रतिशत ईधन एवं प्रकाश पर 0.61 प्रतिशत तथा अन्य पर 0.70 प्रतिशत भाग खर्च करते हैं। भोजन पर कम व्यय का कारण अधिकांश भोज्य सामग्री स्वयं द्वारा उत्पादित कर की जाती है। मांसाहारी भोजन की व्यवस्था भी स्वयं द्वारा कर ली जाती है।

सर्वेक्षित परिवारों में कुल बचत 26.320 रू. हुई है। अत: उस बचत का उपयोग कृषि में 70.40 प्रतिशत, पशुपालन में 4.34 प्रतिशत, सामाजिक रीति-रिवाज में 23.67 प्रतिशत सौंदर्य प्रसाधन में 1.36 प्रतिशत धार्मिक व्यय 0.75 प्रतिशत एवं अन्य उपयोग 0.45 प्रतिशत किया जाता है।

सर्वेक्षित परिवारों में ऐसा कोई परिवार नहीं है जिसने ऋण नहीं लिया हो, अर्थात सभी 50 परिवारों द्वारा ऋण लिया गया है। ऋण की कुल राशि सर्वेक्षित परिवारों में 305000 रू. है। जिसका उपयोग है, कृषिगत एवं भूमि सुधार में 71.96 प्रतिशत, सामाजिक रीति-रिवाज में 15.20 प्रतिशत पुराना ऋण भुगतान में 7.36 प्रतिशत तथा अन्य में 6.46 प्रतिशत सामान्यतया किया जाता है। सर्वेक्षित परिवारों में ऋण स्त्रोत मुख्यत: साहूकार से 50 प्रतिशत बैंक से 8 प्रतिशत बचत समूह से 20 प्रतिशत परिवार के सदस्यों से 16 प्रतिशत तथा अन्य से 6 प्रतिशत ऋण लिया जाता है।

सर्वेक्षित परिवारों में बच्चों के स्वास्थ्य दशा में कुल बच्चों की संख्या अर्थात 239 में 79.87 प्रतिशत का टीकाकरण हुआ है तथा 21.2 प्रतिशत का टीकाकरण नहीं हुआ है। इसी प्रकार पोलियों की दवा 79.07 प्रतिशत की दवा बच्चों को पिलाई गई थी तथा 21.2 प्रतिशत बच्चों की दवा नहीं पिलाई है। सर्वेक्षित परिवारों में में राजनैतिक जागरूकता में 96 प्रतिशत परिवार वोट डालने जाते है तथा 4 प्रतिशत परिवार वोट डालने नहीं जाते हैं।

सर्वेक्षित परिवारों में रोजगार एवं पलायन में 70 प्रतिशत परिवार रोजगार के लिए पलायन करते है तथा 30 प्रतिशत परिवार रोजगार के लिए पलायन नहीं करते हैं। पलायन का सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव महिलाओं एवं बच्चों पर होता है। अकाल मृत्यु के अनेक उदाहरण इस जिले में दर्ज हैं।

जनानांकिय प्रभाव – जनसंख्या का आकार संरचना किसी भी देश के क्षेत्र के विकास को सकारात्मक एवं नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। जिले में जनसंख्या वृद्धि सतत् रूप से बढ रही है। इसके परिणाम स्वरूप जिले कीविकास योजनाऐं न केवल बाधित हो रही है बल्कि यह समुदाय भी विकास की दौड में सतत् रूप से पिछड़ा बना हुआ है। जनसंख्या दबाव से निम्न प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं –

1. कृषि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है जिसके कारण अधिकांश कृषि जोत का आकार 1 हेक्टेयर से भी कम है।
2. उत्तराधिकार के नियमों की जातिगत कठोरता के कारण उपविभाजन एवं अपखंडन के परिणामस्वरूप कृषि की स्थिति निम्न है। फलत: बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप में है।
3. परिवार नियोजन की समस्त योजनाओं एवं दावों के बावजूद जिले में परिवर में औसत बच्चों की संख्या 4 से 6 तक हैं।
4. आर्थिक विपन्नता पलायनवादिता एवं बेरोजगारी के कारण महिलाओं की स्थिति के साथ ही बच्चों में भी कुपोषण की समस्या काफी गंभीर हैं।
5. शिक्षा, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के साथ ही तमाम विकास योजनाओं का प्रभाव सतत् रूप से सकारात्मकपरिलक्षित नहीं हो रहा है।
6. औद्योगिक विकास इस जिले में नगण्य है एवं निकट भविष्य की संभावनाऐं भी नहीं है। अतएवं बढ़ता जनसंख्या का दबाव कृषि को निम्नतर कर रहा है।
7. वधूमूल्य के कारण कन्या जन्म की अधिकता से भी परिवार का आकार बढ़ रहा है।
8. जनजातीय समुदाय की अर्थव्यवस्था प्राय: निर्वाह आधारित होती है अर्थात् हर सदस्य आय का स्त्रोत समझा जाता है यानि जितने हाथ उतनी कमाई। फलस्वरूप परिवार में बच्चों की बढ़ती संख्या को गंभीरता से नहीं लिया जाता है।
9. जिले में जल, जंगल एवं जमीन जनसंख्या के दबाव के कारण लगभग चुक गए हैं। जिससे स्थिति दयनीय हो रही है।
10. राजनैतिक रूप में चाहे बढ़ती जनसंख्या लाभदायी रहती हो लेकिन आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से यह जनसंख्या समस्या कारक ही हैं। संसाधनों की कमी के कारण जनसंख्या का दबाव नकारात्मक प्रभाव दे रहा है।

सुझाव – जिले के आर्थिक विकास एवं जनजातीय समुदाय के विकास के लिए जनसंख्या की वृद्धिदर को कम करना अति आवश्यक है। जनसंख्या नियंत्रण के लिए निम्न सुझावों को अपनाया जा सकता है।

1. परिवार नियोजन कार्यक्रम का आंकलन आंकडों की अपेक्षा वास्तविक धरातल से होना चाहिए।
2. शिक्षा का विस्तार विशेषकर गुणवत्ता युक्त एवं रोजगोन्मुखी शिक्षा की अत्यंत आवश्यकता है।
3. औद्योगिक परिसर विशेषकर श्रम प्रधान तकनीक उद्योगों की स्थापना एवं विस्तार किया जाना आवश्यक है।
4. पलायनवादिता को रोकने के लिए रोजगार अवसरों का सृजन करना आवश्यक है।
5. कृषि उत्पादकता बढाने हेतु आवश्यक कदम उठाना आवश्यक है।
6. महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु वधूमूल्य को रोकना आवश्यक है क्योंकि इसके कारण महिलाऐं अत्यधिक शोषित होती है।
7. जिले में विकास की गंभीर बाधा शराब वृत्ति है। इस पर रोक लगाना आवश्यक है। जिससे अपराध वृत्ति को नियंत्रित किया जा सकें।
8. विकास एवं हितग्राही योजनाओं का प्रभावी एवं ईमानदार क्रियान्वयन आश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 शिवकुमार तिवारी–म.प्र. के आदिवासी, 1980
2. के. मुरलीमनोहर सोशियों इकानोमिक्स ऑफ इंडियन वीमेन, सीमा पब्लिकेशन देहली, 1983
3. श्री बहमदेव शर्मा–आदिवासी विकास एक सैद्धांतिक विवेचन, 1982
4. म.प्र. के आदिवासी, संस्कृति एवं विकास सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय म.प्र. भोपाल, 2010
5. मध्यप्रदेश जनगणना वर्ष 2011
6. कृषि विकास कार्यालय झाबुआ।
7. जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष 2011
8. भारत की जनगणना – 2011 (वेबसाईट सर्च)

तालिका क्रमांक – 01

झाबुआ जिले में जनसंख्या एवं वृद्धि दर

क्र.	जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या	जनसंख्या वृद्धि (प्रतिशत में)	
1.	1951	382673	+ 11.49	**अविभाजित झाबुआ।**
2.	1961	514384	+ 34.40	**(झाबुआ+अलीराजपुर)**
3.	1971	644811	+ 29.82	
4.	1981	795168	+ 19.07	
5.	1991	1130405	+ 42.15	
6.	2001	784286	+ 30.62	**विभाजित झाबुआ।**
7.	2011	1025048	+ 23.48	

स्त्रोत – जनसंख्या–2011 जिलेवार जनसंख्या।

तालिका क्रमांक – 02

निदर्शन परिवारों की कुल आय का विश्लेषणक

क्रं.	आय स्त्रोत	परिवारों की संख्य	कुल वार्षिक आय रूपये में	कुल आय का प्रतिशत	औसत वार्षिक आय प्रति परिवार रूपये में	औसत प्रतिशत आय रूपये में
1.	कृषि एवं फसल विक्रय	50	162000	55.3	32.40	270
2.	उद्योग	–	–	–	–	–
3.	मजदूरी	16	9600	3.27	192	17
4.	सब्जी विक्रय	42	14230	5.5	285	23.75
5.	वनोपज विक्रय	10	9820	3.35	196	16.33
6.	मौसमी फसल विक्रय	12	6330	2.16	126	10.5
7.	पशुपालन एवं मुर्गीपालन	22	834.30	28.49	1668.6	139.5
8.	सर्विस	–	–	–	–	–
9.	अन्य	2	7400	2.52	148	12.33
	कुल योग –	**50**	**292810**	**100**	**2856.2**	**488.07**

स्त्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त अनुमानित आय

तालिका क्रमांक – 03

निदर्शन परिवारों का वार्षिक व्यय रूपये में

क्र.	मद	कुल वार्षिक व्यय	कुल वार्षिक व्यय का प्रतिशत	प्रति परिवार औसत व्यय	प्रतिमाह प्रति परिवार औसत व्यय
1.	भोजन (शाकाहारी एवं मांसाहारी)	187550	31.42	3751	312.58
2.	वस्त्र एवं गहनें	92000	16.41	1840	153.33
3.	मद्यपान	127500	21.36	2550	212.2
4.	आवास	7300	1.22	146	12.66
5.	शिक्षा एवं स्वास्थ्य	37030	6.20	7406	61.71
6.	कृषि उपकरण	45630	7.64	9126	76.05
7.	सामाजिक रीति–रिवाज	87360	14.63	1747.2	145.6
8.	धार्मिक व्यय	4570	0.76	91.4	7.61
9.	ईधन एवं प्रकाश	3670	0.61	73.4	6.11
10.	अन्य	4200	0.70	84.0	7.00
	कुल योग –50	**596810**	**100**	**11936.2**	**944.68**

स्त्रोत – सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त अनुमानित व्यय के

****

भारतीय गांवो का बदलता परिवेश

किरण अग्रवाल *

प्रस्तावना – भारतीय गांव का नाम जैसे ही सामने आता है मन मस्तिष्क में लहलहाते खेत, खलिहानों, जंगल बगीचों के चित्र बनने लगते है हर गांव में बसे लोगो के कृशक जीवन शैली पगडंडी कच्चे रास्ते बैलगाडी ट्रेक्टर हल, फावडा गोबर कंडा खलिहान, इस परिदृश्य से हम नकार नही सकते

इन सबके बावजूद आज हम इस दृश्य के साथ आधुनिकता से अछूते नहीं है आवागमन के साधनो मे परिवर्तन विचारो में मानसिकता में एक अभूतपूर्व बदलाव जिसका राजनैतिक समाजिक सांस्कृतिक ग्रामीण , परिवेश में संगठन में हम देख सकते है।

संरचना – ग्रामीण क्षेत्रो मे भूमि उत्पादन का मूल साधन है भूमि से ही ग्रामीण अपनी प्रविधि या तकनीक तथा श्रम शक्ति द्वारा नाना प्रकार के कृषि पदार्थ प्राप्त करते है तथा अन्य कपडा तम्बाखू काफी चाय जूट आदि ।

उत्पादन का प्रधान उद्देश्य – अंग्रेजों से पूर्व भारतीय जनता जो कि ग्रामीण इलाके में रहती थी उसके कारण पोषण कृषि पर ही निर्भर था लेकिन ब्रिटिश युग मे इसे बाजार अर्थव्यवस्था में परिवर्तित कर दिया ।

किसान केवल अपने लिये कृषि नहीं करता बल्कि सम्पूर्ण समुदाय की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिये कृषि कार्य करता है

उत्पादन की तकनीक– आवश्यकता अनुसार उत्पाद की तकनीक मे सुधार हुआ और हम आधुनिक तकनीक का सफर तय कर सके ।

1. खुरपी कुदाली संस्कृति,
2. हलीय संस्कृति,
3. ट्रेक्टर एंव उर्वरक का उच्चतर तकनीकी संस्कृति युग

कृषि की तकनीक में जिस दर से उन्नित हुई उसी दर से श्रम की उत्पादकता तथा कृषि पदार्थो के उत्पादन मे वृद्धि हुई

गांव में कृषि की स्थिति – कृषि के क्षेत्र में अमूल चूल परिवर्तन देखे जा रहे है। किसान सहकारी व व्यवसायिक निकाय कृषि उपकरण विक्रेता, खाद एंव रासायनिक उपकरणो कम्पनियों बीमा नियामक कृषि वैज्ञानिको परामर्शी निकाय एंव कृषि सलाहकारो के लिये प्लेट फार्म निर्माण की ओर अग्रसर है।

कम्पोस्ड खाद बनाने की विधि– कम्पोस्ड खाद बनाने की विधि ब्रिटिश से शुरू होकर आज सारे विश्व मे फैल गयी है भारत के इंदौर शहर में कम्पोस्ट बनाने की विधियों का प्रारम्भ हुआ इंदौर विधि के साथ साथ बंगलौर और पूना में भी कम्पोस्ड के अन्वेषण पर कार्य किया गया । जिसे मूर्त रूप दिया गया और आज हम गांव के विकास मे खास कर कृषि कार्य में उपज को बढ़ाने के लिये उपरोक्त विधि काम में लाते है।

इंदौर विधि– हावर्ड व वैड कृषि वैज्ञानिको ने 33 खडडे जिनकी लंबाई 30 फुट चौडाई 30 फुट एंव 20 गहराई बनाये गढढो की गहराई ढालू रूप में रखी गयी जिसके सडने के पश्चात् खाद निकालने मे कठिनाई न हो इस प्रकार जो खाद तैयार होती है उसमें नाईट्रोजन 1 प्रतिशत पोटास 3 प्रतिशत और फास्पोरस 5 प्रतिशत पाया जाता है।

बंगलौर विधि – इस विधि को आर्चाय विधि के नाम से जाना जाता है इस विधि में खाद की पलटाई नहीं की जाती इस विधि में खाइयाँ पदार्था की मात्रा के अनुसार बनायी जाती है। खाद के लिये घांस पत्ती की मोटी परत मोटी विष्टा की तह गोबर व पेशाब मिटटी कूडा करकट पानी व सडान्ध के लिये गढढे से निकाल का भूमि की सतह पर रखना आवश्यकता होता है कभी कभी उर्वरक भी मिलाया जाता है। अर्ध गोलाकार में यह क्रिया तीन माह पश्चात एंव गोला बनाने के एक या दो माह पश्चात खाद प्रयोग में लाने योग्य हो जाती है।

एडको विधि– इस विधि का प्रतिपादन एचिसन व रिचर्डस ने इंग्लैण्ड मे किया था। भारत में यह विधि प्रयोग में नही लायी जाती ।

ग्रामीण क्षेत्रो मे सिचाई का माध्यम – भारत में ऐसी बहुत सी भूमि भौगोलिक दृष्टि से सिचाई साधनो से वंचित है भारत सरकार ने सिचाई योजनाओ का विकास किया जिससे फसलो केा प्रचुर मात्रा मे पानी प्राप्त हो सके डॉ. वेदज्ञ आर्य के लेख वैदिक सरस्वति नदी के संबध मे लिख जिसमे पंजाब मे राजस्थान के खिलाफ इंदिरा गांधी नहर के द्धितीय चरण से पानी देने से मना कर दिया ।

भारत सरकार द्वारा कृषि योजना मे वर्षा जल के द्वारा सिंचित क्षेत्र के समग्र और स्थायी विकास हेतु समेकित पंनधारा विकास कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है। पनधारा विकास कार्यक्रम के अतंर्गत वर्षाजल संचयन संरक्षण तथा लगातार ढंग से मृदा एंव जल संसाधनो का उपयोग आदि को शामिल किया गया है।

आज गांवो में सरकारी योजनाये अपना असर दिखा रही है और गांवो में सिचाई के साधन नहाने, बाढ की नहाने बारहमासी नहरे कुए एंव नलकूप सतही कुए आदि , भारत मे बहुत से राज्यो मे नलकूप द्वारा खेती की जाती है डीजल इंजन एंव विद्युत शवित द्वारा पानी निकाल जाता है स्वतंत्रता से पूर्व भारत मे सम्पूर्ण दृष्टि से क्षेत्र का 17.6 प्रतिशत स्थल पर सिंचाई की समुचित व्यवस्था थी, आज भी कृषि के कुल क्षेत्र के 40 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की सुविधाऐं है 60 प्रतिशत भाग वर्षा जल पर निर्भर है।

गांव में पशुपालन – भारत में कृषि के अलवा पशुपालन को भी एक प्रमुख व्यवसाय के रूप में स्वीकार किया गया है पशु के क्षेत्र मे प्रधान राज्यो में पंजाब हरियाणा उत्तरप्रदेश मध्यप्रदेश गुजरात है चूकि वर्षा का जल स्तर कम होने के कारण कृषि कार्य के अपेक्षा पशुपालन प्रमुख है

पशु संख्या – आंकड़ों द्धारा पता चला है सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र के 2.44 प्रतिशत तथा कुल कृषि योग्य भूमि का 11.29 प्रतिशत क्षेत्र पर पशुपालन व्यवसाय किया जाता है भारत बकरी पालन में सबसे आगे है । आस्ट्रेलिया में भेडे चीन मे बतखे सुअर मुर्गीया सबसे अधिक पाली जाती है। भारत में गौ पशुओ की संख्या विश्व की 15 प्रतिशत है। भारत में गाय भैंस ज्यादा है लगभग 20.5 करोड है।

पशु पालन संबधी शोध केन्द्र – भारतीय विशिष्ट पशुपालन निन्मवत है।–

भारतीय पशु चिकित्सा शोध केन्द्र (आई वी आर आई) इज्जत नगर (बरेली) राष्ट्रीय डेरी शोध केन्द्र (एन डी आई आर) यह है करनाल

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(हरियाणा) केन्द्रीय पक्षी शोध केन्द्र (सी ऐ आर आई) कोचीन, केन्द्रीय भेड एंव ऊन शोध केन्द्र एंव केन्द्रीय भैस केन्द्र हिसार (हरियाणा)

आधुनिक तकनीक – आज गांव के लोगों की जागरूकता बढ़ चुकी है और ये सभी नई तकनीक को अपना रहे है इससे गांव का विकास तेजी से हो रहा है। अब पशुओं के गर्भाधान के लिये जो तकनीक अपनाई जा रही है इसमें कृत्रिम गर्भाधान प्रमुख है इनसे प्राप्त होने वाले दूध के लिये अब गाय व भैंस मात्र 30 माह की अवस्था प्राप्त करने पर दूध देना प्रारम्भ कर सकती है। भारत सरकार की डेरी विकास की नवीन योजना के अनुसार देश में कुल 325 केन्द्र (कम से कम प्रत्येक राज्य मे एक केन्द्र खुलेगा)

गौ प्रजातियाँ –

1. दूध देने वाली प्रजातियाँ
2. सामान्य उपयोग वाली प्रजातियाँ
3. बोझा ढोने वाली प्रजातियाँ
4. गिर
5. कंग्याम
6. खार पारकर
7. साहीवाल
8. सिंधी
9. कंकरेज
10. देवनी खेरागढी
11. मेवाती निमाडी इत्यादि

इसी प्रकार भैंस, भेड ,बकरी, मुर्गी, आदि पशु पालन के लिये विभिन्न प्रजातियाँ है इनके लिये सरकार कारगर कदम उठा रही है ताकि विलुप्त होती प्रजाती को बचाया जा सके ।

भारत के गांव अब शहरी करण की ओर कदम रख चुके है हमारी सरकार गांवो में स्वच्छता अभियान चला कर शौचालय बनवाकर उसके लिये ऋण उपलब्ध करा कर सोच को ही परिवर्तित नहीं की बल्कि सोच को एक नई दिशा प्रदान कर दी है हर एक बच्चे की स्वास्थ एवं शिक्षा की व्यवस्था हर बच्चा पढेगा स्कालरशिप छात्र वृत्ती, सायकल, गणवेश, मिड डे मिल , पुस्तके सब आवश्यक चीजो की पूर्ति पालको को सोसायटी एंव आधार कार्ड द्वारा भोजन व्यस्था फसल बीमा अटल पेंशन योजना क्या ये समग्र विकास का शंखनाद नही है ? है।

गांवों की रौनक पर ही हम शहर वासी प्रकाशित है नींव का पत्थर जिसे कहा जाता है राष्ट्र निर्माण मे वह गांव का ही वजूद है जिस पर इठलाते है। आज भारतीय गांवो की खूबसूरती निहारने विदेशी पर्यटक आते है सारी भारतीय कला संस्कृति का सेन्टर पाइन्ट हमारा गांव है यह कहना अतिशयोक्ति बिल्कुल भी नहीं है सभी जाति प्रजाति आदिवासी अनुसूचित जनजाति के रहन सहन मे एक आकर्षण उत्पन्न हुआ है।

गांव के नौजवानो ने सेवा क्षेत्र को विस्तार दिया है
सकल घरेलू उत्पाद में योगदान

वर्ष	कृषि	उद्योग	सेवा क्षेत्र
1950–51	54.4	12.8	31.8
1972–73	42.8	22.8	34.8
1990–91	30.9	25.4	43.7
1999–2000	25.5	22.1	52.4
2003–2004	22.1	26.9	51.0
2009–2010	17.5	20.0	62.5
2012–2013	13.7	21.5	64.8

भारत सरकार के सराहनीय प्रयास –

1. रूपान्तरित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना
2. किसानो के मदद के लिये ऋण

वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि
2010–2011	375000	4,68291
2011–2012	475000	511029
2012–2013	575000	607375
2013–2014	700000	73076561
2014–2015	800000	37082860
2015–2016	850000	–

(30 सितंबर 2014 के तक के आकड़े श्रोत बजट दस्तावेज)

3. फसल ऋण के लिये व्याज सहायता योजना
4. प्रधान मंत्री कृषि सिचाई योजना

मूल्यांकन – आज विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक आपदाओ आंतकवाद शराब विभिन्न बीमारियो से जूझते हुए हम बदलाव एंव विकास के ओर अग्रसर है **सब कुछ बदल डालो संभव नहीं संभावना हो सकती हैं** जो हम सबको दृष्टिगोचर हो रहा है **कल से बेहतर आज है** मगर सच यह भी है कि **गुजरे हुए पल का कोई सानी नहीं** हम चल रहे हम बढरहे है और हम पहुँच भी रहे है ।

2011 के जनगणना के अनुसार भारत में 640867 गांव थे। गरीबो को भूमि दान करने की बात जब आती है तो **आर्चाय बिनोवा भावे** के द्वारा किया गया कार्य बिना जोर जुल्म अथवा कानून बनाये धनी व्यक्तियो और जमीदांरो को अपनी कुछ भूमि गरीबो को देने के लिये राजी करना आज भी अपना महत्व रखता है

गांधी जी असली भारत गांव में बसता है भारतीय ग्राम्य जीवन सादगी और शोभा का भंडार है

पहले गांव में यातायात के साधनो बहुत कम थे अब यातायात के साधानो मे सुधार आया है सड़क और रेल मार्ग में विकसित हुआ है गांव अब शहरो से जुड़ चुके है गांव के विकास पर ही देश का विकास निर्भर है

इंटरनेट ने विश्व में जैसा क्रांतिकारी परिवर्तन किया वैसा किसी दूसरी तकनीक ने नहीं किया इंटरनेट दूर बैठे लोगों के मध्य संवाद या किसी भी सूचना को विश्व स्तर तक प्रकाशित करने का जरिया है। इ मिडिया इंटरनेट पर शिक्षा के साथ मनोरंजन जोड कर शिक्षा रंजन प्रदान किया जाता है विमान यातायात से लेकर बैकिग सुविधाओ तक आज सभी कुछ इंटरनेट के माध्यम से सम्पन्न हो रहा है। यह बात सत्य है कि भारत गांव से ही उन्नत और विकसित परिलक्षित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ0 अरूण कुमार यादव लेखक भारतीया गांव वंदना पब्लिकेशन नई दिल्ली 110002
2. नेट 3 से 31 अक्टूबर 2014 को सतत आर डी के लिये भूमि नीति पर प्रशिक्षण कार्यक्रम एस आई आर डी के राष्ट्रीय संवर्धन कार्यक्रम ।
3. भारत मे कृषि संबधी योजना और कार्यक्रम औकांर सिंह रावत एन. एस. एस. ।
4. मिश्र एंव पुरी 2000 भारतीय अर्थव्यवस्था हिमालय पब्लिसिंग हाउस नई दिल्ली ।
5. कुरूक्षेत्र ग्रामीण मंत्रालय अप्रैल – जून 2015

Panchayati In Rajasthan - An Historical Perspective

Sangeeta Rachiyata* Mahesh Kumar Rachiyata**

Introduction - The state of Rajasthan, as it exists today, was formed on 1st November 1956 after amalgamation of Ajmer-Merwara, Abu and Sunnel-Tappa of Madhya Pradesh in greater Rajasthan. The greater Rajasthan emerged on 30th March 1949 by uniting 19 princely (feudal) states and three principalities of erstwhile Rajputana in four stages. As of now, Rajasthan is the biggest state of Indian union in area, which comprises of 29 states and 7 union territories. The state occupies place position 8th in order of population and comprises of 33 Districts, 7 Division, 244 Tahsil, 249 Panchayat Simities, and 9188 Gram Panchayats.[1]

Historical Perspective - (a) Panchayati Raj is an unique institution and its istory is as old as human civilization. The organization of Panchayat (an assembly of five persons) is the earliest concept of democracy in the history of civilization.

While empires rose and fell, village panchayats continued to survive giving continuity to Indian traditions. The Vedas and Rigveda in particular reveals that the ancient Hindus used to lead a corporate life. Valmikis Ramayan and the Mahabharata have also described the existence of such institution. Actually the inspiration of Panchayati Raj is derived from the institution of Panch Parmeshwar where God speaks through the five and officials publications speak of village republic (Huge Gray).[2]

Panchayats in Ancient Times - The village in vedic era used to be administered by respectable official and was assisted by a council of elders. The Ramayan mentions a village leader of great grestige know as "Grammini". He was held in high esteem by villagers. Grammini enjoyed high status in the village as demonstrated by the fact that the King's entourage consisted of a Grammini, a Suta (Charioteer) and a Bhadugha (Collector of taxes) at the royal consecration. During Mauryan period (324 B.C. – 236 B.C.), the village administration was closely linked with agriculture 100 to 500 familes constituted a village. Natural features such as rivers, hills, forests, tanks etc. marked the village boundary. The village administration consists of (a) the headman (Adhyaksha) (b) The accountant (Sankhayaka), (c) Village officials of different grades (Stanikas) (d) the village couriers (Jamgha Karika) and (e) Veterinary Doctors (Anikashtha). The village was self-governed. A sketch of the Mauriyan era village is drawn as under.

"Every village had its own Sabha (Assembly) which debated all matters relating to the village, rules helpful to the entire community were framed and the offender's were punished through regular trials and judgements. The Sabha was the centre of the multifarious activities of the village. It discussed religious and social matters. It arranged numerous types of entertainment".

The Indian people lived independently in these self-governing village Republics.[3]

The post-Mauryan period (200BC to AD300) is known as Dark-perod. During this period also the headman assisted by the council of elders played a prominent role in the village life.

In Gupta period (300Ad to 500AD), village administration had retained many of the traits of Mauryan period. The revealing description of Gupta period is as under:-

"The village administration was under the charge of a headman designated a Grameyaka or as a Gramadhyaksha. He had a clerk to work, assisted in his work by a non-official council. The village councils were known as Janepadas in the Gupta administration."[4]

The village headman and the accountant both prominent officials in the Vedic and Mauryan period also played an important part in the village administration in this era as well.

Mughal rule (155AD-1749AD) also did not see a vastly drastically changed village organization. The headman the accountant and the watchman, found in earlier times, still ruled in this period. Samants view on judicial aspect of Panchayat is "we find that even under Muhammadan kings, when Muhammadan interest were involved, the decision of a Panchayat was enforced by the ruling monarch which is a sufficient proof to show that the power of state was always behind the village councils."[5]

Sir Charles Metcalfe the provisional govern general of India (1835-36), was very much appreciative of Indian village communities and called them, "the little republics". A proverb says. "All that glisters is not fold". The little republics were part of the caste-ridden feudal structure of the village society of those days. In such a society it is difficult to find decentralization and democratization which forms part of "the little republics."

Dr. B.R. Ambedkar did not think of very high of these communities. In fact his remarks in the Constituent Assembly on 4 November, 1948 that, "these village republics" have been the ruination of India and that they are a sink of

*Lecturer (Home Science) CH. B.R.G. Govt. Girls P. G. College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
**Lecturer (Political Science) Dr. B.R. Ambedker Govt. P. G. College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

localism, a item of ignorance, narrow-mindedness and communalists."[6]

British Colonial Period (1750-1947) - The Britishers did not have any interest in the self-contained village communities. Panchayats as such these institutions did not serve their interest. In the course of time, they were replaced by formally constituted institutions of village administration.

Britishers came to India as traders. They became rulers from traders. Therefore, they were first interested in establishing trading centres. As they were concentrated around trading centres, their interest was limited to the creation of local bodies of nominated members in major towns.

Mayo Resolution - In 1870, Lord Mayo got a resolution passed by his council for decentralization of power to bring about administrative efficiency in meeting the demands of the people and to add to the finances, of the, "existing imperial resources which was not suffice for the growing needs of the country."[7] In the waste of this resolution, the first significant step was taken with the passage of the Bengal Chowkidari Act. The act empowered the District Magistrate to set-up panchayats of nominated members in villages. Then panchayats could levy and collect taxes to pay to Chowkidar or watchmen. The famine commission of 1980 had pointed out to the absence of local bodies as a impediments in reaching famine relief supplies to the famine stricken people and had underlined the need to expand self-government to the villages also.[8]

Ripon Resolution - The famous resolution by liberal and public-spirited Lord Ripon was issued on 18th May, 1882 during his vice-royalty providing for local boards consisting of a large majority of elected non-official members and presided over by a non-of-ficial chairperson. This resolution is known as the Magna Carta of local democracy in India."

"Designed to make use of that intelligent class of public-spirited men, whom it is not bad policy, but sheer waste of powers to fail to utilize."[9] Though the attempts to implement this resolution had been tardy, the term "self-Government" had begun to gain currency.

Indian National Congress passed a resolution in 1906 aiming at "self-Government" as its political goal for the country.

Royal Commission - In 1907, the government constituted a Royal Commission on decentralization. The commission report, submitted in 1909 strengthened the principals enunciated in the Ripon Resolution. The commission recommended. "it is most desirable, alike in the interests of decentralization and in order to associate the people with the local tasks of administration, that an attempt should be made to constitute and develop village panchayats for the administration of local village affairs."[10] 24th Congress session at Lahore in 1909 also asked the Govt. to take early steps to make all local bodies from village panchayats upward as elected with elected non-official chairman and to support them with adequate finances. But these resolutions remained implemented.

Montague-Chelms- Ford Reforms (1919) - Reforms of 1919 proposed diarchy and made local self-Govt. a "transferred" subject. These reforms also remained un-implemented due to constraints such as organizational and fiscal.

Government of India Act. 1935 - The inauguration of provincial autonomy marked another step forward to achieving the cherished goal of self-Government. Because of out break of Second World War, Congress vacated offices but the position of local-self governments institution remained unchanged till August, 1947 when the country attained independence. Village Panchyats were an integral part of Indias strength for National Movement.

"Gandhiji had defined his vision of village Panchayats (village Swaraj) as a complete republic based on perfect democracy and individual freedom."[11]

Traditional Panchayats in Rajasthan - Rajasthan was formed by amalgamating 19 feudal states and three principalities on 30th March, 1949 in four stages. The final shape emerged on 1st Nov. 1956 by merging Abu, Ajmer-Merwara and Sunnel Tappa of M.P. with greater Rajasthan.

Before independence, Government was based on feudal system but at the village level, some sort of village Panchayats existed. The feudal society was also caste-ridden. The system was dictatorial meaning thereby that rulars ruled and subjects obeyed. Dissent was frowned upon. The political system was wedded to the concept of feudal aristocracy. Caste-panchayats existed which deliberated on social and ethnic matters and mostly delivered justice unanimously. James Tod who was political Agent to the Rajputana states in early part of 19th Century had observed.

"In cases regarding the distribution of justice or the internal economy of the Chiefs' estates, the Government officials seldom interferenced. But of their panchayats, I will only remark that their import amongst the vassals is very comprehensive; and when they talk of the 'punch', it means the 'collective wisdom'. In the reply to the remonstrance of the Deogurh vassals, the Chief promises never to undertake any measure without their deliberation and sanction."[12]

Elsewhere Tod has described the procedure according to which the Panchayats were usually constituted and functioned as follows:-

"The constitution of this court is simple. The plaintiff lays his case before the Hakim of the District or the Patel of the village where he resides. The plaintiff and defendant have the right of naming the villages (two each) from whence the members of the panchayat are to be drawn. It is affirmed that in the good times of Rajputana these simple tribunals answered every purpose."[13]

When one goes through these and other narratives of Tod, it becomes clear that both the elements of choice' of adjudicators and Governmental recognition were present in the Panchayat system of pre-British days.

Yogesh Atal carried out a study of a Mewar village in which he had tried to portray a traditional Panchayat and the prevailing system of adjudication. He ahd identificial three levels of organizations – in – tra-caste, intra-village and inter-

village which would be involved in a process of adjudication depending on the nature of disputes. The verdict of these courts was respected as they were presumably vested with widom, impartiality and judiciousness. The conclusion of this study has also been supported by the study undertaken by Iqbal Narain and Associates according to which, faith in wisdom and impartiality of certain people was held in held in high esteem by villagers.

Elaborating further on the concept of panchayats, we would like to state that panchayats in Rajputana served the local communities only by deciding pretty civil and criminal cases according to customary laws. These panchayats were neither properly constituted nor vested with legal sanctions, which, were, however, carried out their functions both civil and judicial because there was the strength of social sanctions behind them. This narration agrees more of less with the writings of James Tod.

References :-

1. Altekar, A.S., (1995). State and Govt. in Ancient Indian, Banaras: Motilal Banarasdas.
2. Encyclopedia of Rajasthan (2003), Jaipur: Pink City Publishers, Chaura Rasta.
3. Malviya, H.D., (1956), Village Panchayat in Ancient India, New Delhi: All India Congress Committee.
4. Samant, S.V. (1957), Village Panchayat R.G. Patel, Manager, Andheri: Local-Self Government Press.
5. Sharma, Mukesh (2002), Panchayati Raj System and Empowerment, Jaipur. Surabhi Publications.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Impact Of Coalition Politics On Indian Democracy

Ishfaq Ahmad Wani *

Abstract - The purpose of this paper is to examine the impact of coalition government on Indian democratic system to find out major positive and negative impacts that arised due the formation of coalition government in India. It also attempts to examine the level of coalition government in the context of Indian democratic political system.
Key words - Coalition , Government, Democracy, Politics, Parliament.

Introduction - Coalition is an occurrence of a multi-party government where a number of minority parties join hands for the purpose of operating the government which is otherwise not possible. After independence of India the first coalition was formed under the leadership of Morarji Desai .He was the oldest man to become prime minister of India. The multi party janta government remained in power for about two years i.e., 1977-1979.the power struggle in the government did not allow Desai to continue anymore. Once the no confidence motion against Desai was discussed in the lower house Mr.Desai tendered his resignation. The Janta government collapsed like a house of cards in July 1979 when floodgates of defections opened with the departure of various group leaders like George Fernandes, H.N.Bahuguna, Biju patnaik and Madhu Limaye[1]. Second coalition was created with Chaudhary Charan Singh as the prime minister in October 1979[2].He was the only prime minister who didn't face the parliament. Third coalition was created in the name of national front under the leadership of V.P.Singh in December 1989.V.P.Singh government was supported by BJP and others. Then was a small period of Chandra Shekhar. It was followed by the united front governments headed by H.D.Devagowda and Inder Kumar Gujral respectively. The NDA government led by Atal Bihari Vajpayee came to power after the 1998 and the 1999 parliamentary elections and after that Dr Man Mohan Singh led UPA government assumed office after the 2004 parliamentary elections, which has again been voted to power in the 2009 parliamentary elections. An overview of the working of these coalition governments shows that these have been both functional and dysfunctional for the Indian democracy. An attempt is being made in this paper to identify the positive and negative impacts of the phenomenon of coalition politics on Indian democracy.

Positive Impact - Coalition governments are operational in India since past two decades and they have characteristically and clearly preserved democratic asemblance in the policy making and governing processes. Respect for liberty of press, tolerance of dissent and promotion of consensus or common approach to important subjects have received due attention during the coalition governments. The historic legislations like 'Right to Information Act' and 'National Employment Guarantee Programme' made by UPA government on the subjects concerned with the common man could be possible due to coalition government at the centre. If we look at the past of the coalition politics from 1989 to 2009, we can identify definite political developments which have had a positive impact on the Indian democracy. Some of these are as.

1. First positive aspect of the coalition politics has been that it has promoted federalism in India. Decentralization of powers has been the feature of all the coalitions' governments which have ruled at the national stage since 1996. During the one party congress rule, the state governments were treated like the municipalities and their chief minister like the nominees or the appointees of the central government. But during the coalition governments, a new sense of significance and independent uniqueness has developed in state. These have at the present become capable of discussing various concerns with the central government with new confidence. At times they have even forced the center to throw out its dictatorial attitude and reach at cooperation with the state governments run by their allies as well as the opposition parties. In this way, the coalition politics has helped in the development of a truthfully federal, responsive and more exciting democracy in India. Coalitions have the benefit of promoting the politics of agreement on concerns of national significance. In contrast to this, the single party rules usually follow the ambiguous approach. Coalition method has brought some kind of decentralized approach to the governance at the national stage even under the BJP led national democratic alliance rule, in spite of the reality that some of the BJP leaders and the Sang Parivar tried to force their own ideology and will on the government. BJP under the NDA rule had to finish its own philosophy of Hindutva and the majoritarian approach for the sake of sharing power with its allies.[3]

*Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati University, Jabalpur (M.P) INDIA

2. The regional issues which were being either entirely unnoticed or were being given negligible consideration in parliament, started receiving due recognition and importance in the era of coalition politics. The issues like economic, social, and cultural deprivation of various regions of the country and the crisis of natural calamities in various regions of the country are now being often raised and discussed in parliament. The social and political aspirations of the people of different states are also being given due attention in the formulations of the plans and policies of the country. This has logically led to the development of a politics of compromise, conciliation and consensus in the Indian democracy**.** Under the coalition governments the Indian democracy emerges to have been made safe as use or misuse of Article 356. The general tendency to use it to pull down the state governments controlled by the political opponents has been checked. It is evident from the fact that when the BJP-led coalition tried to invoke Article 356 in Bihar in september1998 and march1999, it could not muster the requisite support in the Rajya Sabha.[4]
3. The turn down and breakdown of various national parties like the congress and the Janata Dal has added to rise of regional parties like Lok Jan Shakti Party, Biju Janata Dal, etc. their job in the process of government formation at the center has been increased. Chandra Babu Naidu from Andhra Pradesh, Jaya Lalita and Karunanidhi from Tamil Nadu, Lalu Prasad Yadav and Ram BilasPaswan from Bihar, Mamta Banerjee from West Bengal are various regional leaders who have begun to be reckoned a new power centers in the emerging configurations of the national politics. Though on a different plane jyotiBasu, Prakash Karat, Murayama Singh Yadav and Mayavati were also able to achieve the position of power centers because of the strength and value of their respective parties at the national levels. This phenomenon of the increase of new power centers definitely had a sobering effect on the national politics. It has led to the development of a multilateral and pluralistic system of decision making in Indian democracy.[5]
4. Some healthy conventions and traditions have also been developed after the emergence of some more conventions, like the Common Minimum Programme, the co-ordination committee; national advisory council, etc have been developed during the coalition era for running the administration successfully. These have changed the nature of parliamentary democracy. There has now emerged a new model after the 2004 parliamentary elections in which the Prime Minister looks after the administrative matters whereas the party president, Sonia Gandhi is looking after political affairs.[6]
5. One of the major beneficiaries of the emerging coalition system in India has been the Bharatiya Janata party, the leading party in the NDA. There was a time when it was being considered to be a political untouchable at the national level. But the BJP slowly gained some extent of acceptability. Several regional and national parties including the Muslim dominated national conference and the Sikh dominated Akali Dal became partners in NDA. Ultimately, the BJP has been able to come out from the stigma of Hindu fundamentalism. In the present scenario it has surprisingly made inroads even into the Congress (I) strong holds like Karnataka. This has been a contributory factor in strengthening the parliamentary democracy in India. Because of the transformation of the BJP into a party of an all India character, there has been an evolution of the two party coalition systems as against the two party systems prevalent in Britian and U.S.A[7].
6. The coalition promoted federalism and respect for the constitution as hasty and undesirable amendments to the constitution have been avoided under these regimes. Most of amendments to the constitution have taken place during the single party regimes upto late 1980s. It goes to the credit of the coalition government under the national Front in 1990s to have revived the institution of inter-state council to discuss the issues related to centre-state relations periodically. The meetings of inter-state council were held under successive coalition government led by NDA under the leadership of Atal Behari Vajpayee and UPA under the leadership of Manmohan Singh. Thus one of the fundamental pillars of the parliamentary democracy, i.e., the constitution is safe under the coalition governments.[8]

Negative Impact - Generally the coalition which come into existence and function on the basis of the common minimum programme, limits the policies of the government to short term goals, because such governments lack the consensus on the long term objectives of the country. Another negative effect of the coalition government in India in the past has been that smaller coalition partners sometimes do not hesitate to promote their parochial interests. They blackmail the leading party in a coalition or even the entire coalition itself. The defeat of BJP led coalition government in the no-confidence motion on the floor of the Lok sabha in April 1999 due to Jayalalitha's displeasure with the BJP was a classical example of the caprice of the smaller partner in the coalition.[9]

Coalition has also created a number of problems for politics and administration like the delay in decision making and implementation, the poor coordination at political matters, the erosion of ministerial responsibility, confrontation between constitutional authorities, instability, confusion in center-state relations, increase of corruption and criminalization in politics, the controversy between legislature and the judiciary, the weakening of prime minister's authority and the growth of extra-constitutional centers of power have also been witnessed during this era. This negative side-effect of coalition politics can be described as below:

1. There is a general complaint that under the coalition governments, the political system of the country is getting fragmented or anarchy is unwarranted and

necessary, as the system of coalition generally has an inbuilt check against any threat of authoritarianism and has a sobering effect on the impetuous nature of some of the partners. However, it is vulnerable to the excessive personalization of politics apart from relegating ideology and political ethics to the background. The emergence of the concept of outside support in the formation of minority government cannot be regarded as a healthy convention. The untimely death of the governments led by Devegowda, I.K.Gujral and Atal Bihari Vajpayee happened due to the sudden withdrawal of the outside support. This fact cannot be denied that the phenomenon of outside support does not have a good record in our parliamentary history, although it has emerged as a significant factor in the era of coalition politics. The government under Manmohan Singh (2004-2009) survived on the outside support of left parties and then of the Samajwadi party after the withdrawal of support by the leftist parties on the issue of Nuclear Deal. It had to face the problem of resistance on the issue of economic reforms and Nuclear Deal during its honeymoon with the leftist front. Later on it was pressurized to satisfy the demands of the Samajwadi party and the J.M.M. whose support had enabled it to survive and gain the vote of confidence in the Lok Sabha on July 22, 2008[10]

2. The growth of extra-constitutional centers of power during coalition era like R.S.S. during A.B.Vajpayee period and the chairperson of the National Advisory Council during Manmohan Singh period (2004 onwards) led to the weakening of position of Prime Minister. This process had started in 1996, when Devegowda had to appoint the nominees of the coalition parties as ministers without questioning and continued during the era of Gujral and Vajpayee. Even in the present coalition, the Prime Minister Manmohan Singh is being projected by his critics as a dignified proxy of Sonia Gandhi without enjoying the right to appoint or remove members of either the Prime Minister's office or the Council of Ministers. The superior position of Sonia Gandhi is being forward upon by her critics as de-facto Prime Ministership and super Prime Ministership. This emergence of extra-constitutional centers of power has added a new dimension to the Indian democracy[11]
3. Generally the coalitions come into existence and function on the bases of Common Minimum Programme. This puts a constraint on the policies of the government. It has been happening because there is lack of consensus on the long term objectives of the country. The cases of controversy over Nuclear Agreement between India and U.S.A. among the political parties may be cited by way of illustration. in other words, the polity under the coalition system suffers from the lack of a long –term vision. Thus the state becomes a 'demand polity' as the Rudolf's call it. Therefore the coalition government are prone to adopt the controversial policies or programmes for the sake of survival of the government[12]

Conclusion - The above study of coalition governments clearly reflects that the hung parliaments became the norm of the India because of division in political parties have demonstrated a shocking lack of ability to make permanent coalitions. Indian democratic politics so far has been lacking in the talent and culture of coalition making and coalition maintaining however, NDA and UPA experience in coalition governance with two major national parties BJP and congress leading it alternatively has gradually helped in building up a coalition culture. However coalitions have still a long way to go in as far as India is concerned. Since there is a coalition pattern at all India level and state level increasing role of regional parties and social groups gave birth to coalition governments in India.

References :-

1. Saraswati Haider, "coalition governments or instability", September 1997 page 24.
2. R.Venkataraman, my presidential years (New Delhi,1994),.page 437
3. Sandeep Sastr, Making coalition Governments More Effective, Mainstream 15 February 1997.
4. G.Gopal Kumar, Future of Parliamentary Democracy in India. Icon Publication pvt. Ltd, New Delhi, India, 2007, p.293.
5. Zoya Hasan, The New Power Centers, Frontline, p.4-9.
6. Rampal singh and Tejvirsingh Dynamics of Party System and Coalition Government in India Alfa Publications New Delhi India, 2012, p.101-02.
7. Ibid. 103.
8. Nikhil Chakaravarthy, Future of Coalition Politics, Mainstream 19 April 1997.
9. Hoshiar Singh ET, al, Coalition Government and Good Governance Aalehk Publisher Jaipur, 2007 .p.6 4.
10. Rampal singh, Opcit, p.104.
11. Ibid. 104.
12. Rudolf L.L and Rudolf S.H, Inkaviraj S.,(ed),Politics in India, Oxford University Press, New Delhi,1997,p. 197.

****

Coalition Scenario In India-At National Level

Hilal Ahmad Mir * Dr. Ranjana Mishra **

Abstract - Coalition Governments have become a regular feature in India both at the centre as also in some states. It is clear that no party has been able to secure a clear majority, resulting in the formation of coalition and minority governments from 1977-2014 at union level. It is because of the natural result of the continental sized multi-regional, multi-religious, multi-caste, multi-cultural, multi-lingual and multi-ethenic character of the polity of India. These changes in the party system have led to an end of the era of single party governments. Instead we have entered the phase of coalition governments. The 1977 parliamentary elections did led to the emergence of political coalitions at the national level. Although coalition governments have a number of merits and demerits found in Indian party.

Introduction - Party system becomes a necessary part in a representative form of govt. and party system has to be a multi party system in pluralistic society like India with sharp divisions of beliefs, language, customs creeds castes and interests with the existence of multiparty system, a single party may or may not be able to form a government in such a situation, there are two possible alternations for the formation of government; either of a coalition government or a majority party government supported by other groups. So coalition is an alliance formed between separated political parties. It is formed when two or more political parties unite to form a majority government in parliament or state legislature. The coalitions are product of politics in a parliamentary democracy. The term as it is generally used in political science is a direct descendant of the exigencies of a multiparty system in a democratic set up. It is a phenomena of multiparty government where a number of minority parties join hands for the purpose of running the government, which is otherwise not possible in a democracy based on one party system a coalition is formed when many splinter groups in a house condensed to come together on a common plate form sinking their broad differences and there by form a majority in the house.

The word 'coalition' is a noun from the verb 'to coalesce' originating from a Latin word 'coalescre' meaning in English 'to grow together' or 'to combine in to lumps or some body or organisation'.[1] Thus, according to the dictionary meaning, coalition signifies an act of coalescing or uniting in to one body: a union of persons or their organisations.[2] In a strict political sense, the word 'coalition' "is used for an alliance or temporary union for joint action of various powers or states and also of the union into a single government of distinct parties".[3]

The coalition experiment is not new to India. The era of coalition governance in India first began in 1946, when an interim government was formed under the leadership of Pandit Jawaharlal Lal Nehru consisting of the Indian National Congress, the Muslim League, and the Hindu Mahasabha. Since the new constitution of India came into force on 26th January 1950, the coalition history at the national level began first when the Congress party under Smt. Indira Gandhi during 1969-70 became a minority government and kept running with the support extended by the Communist party and the Dravida Munnetta Kazhakam(DMK) of Tamil Nadu. Coalition era of India since independence is divided into following categories:

1. First phase of coalition government from 1977-1990

A. First coalition govt. at the Centre (24-03-1977 – 28-07-1979) Janta Government under the Prime Ministership of Shri Morarji Desai.

In the elections to the Lok Sabha held in March 1977, the Congress faced its worst rout. For the first time the Congress lost its power at the Centre giving room to the Janata government. The Janata party government formed by Shri. Morarji Desai was supported by the C PI (M) from outside. The Janata government, committed to common progressive election manifesto "Bread with freedom" caught the attention of the people and roused their hopes and aspirations. But temperamental incompatibility of some of leaders and fierce inner controversy over the dual loyalty of the jana sang activists to the Janta party as well as to the RSS wrecked the Janata party and its government which in reality was a coalition government.[5]

B. Second Coalition Government at the Centre by Chaudhary Charan Singh (july 28-1979 – Jan, 14 1980):

*** Research Scholar (Political Science) Rani Durgavati Univerity, Jabalpur (M.P.) INDIA**
**** Professor (Political Science) Govt Mahakaushal Arts and Commerce (Autonomous) College, Jabalpur (M.P.) INDIA**

The splitter group of the Janata Party headed by Shri Chaudhary Charan Singh formed an alternate coalition govt. at the National level on July 28, 1979 with the unconditional support of the Congress(1). The coalition included leaders and groups from one end of the spectrum to the other –from the CPI (M) and the CPI on the one hand to those who were close to big business. There was the pro-west George Fernandez group and the pro Soviet Union Bahuguna faction in its fold.[6] Shri Charan Singh's Ministry did not last long. Before facing the Lok Sabha Charan Singh tendered his resignation to the president because one of his coalition partners, the Congress (1), withdrew its support to his Government on the very day Shri Charan Singh had to seek confidence for his coalition government.[7]

C. Third Coalition government at the Centre by Vishwanath Prathap Singh of the National Front(Dec 2,1989 – Nov 10, 1990) -

In 1989 Lok Sabha elections, the country witnessed the first minority-cum-coalition government at the centre. Though it was supported by a majority of M.P.'s from outside. Almost all the Non-Congress groups big small, Rightists and Leftists joined hand to back the National Front Government led by V.P. Singh.[8] V.P. Singh Government could not complete even a year in office due to internal squabbles in the Janta Dal such as the threat of the Diputy Prime Minister Devi Lal to resign from the ministry.[9] The BJP withdrew its support to the National Front Government on Oct.23, 1990.[10] The withdrawal of the BJP's support deprived the National Front Government of a majority in the Lok Sabha. Thus he tendered his resignation to the president on Nov. 10, 1990. [11]

2. Second phase of coalition government from 1990-1996.

A. Fourth Coalition Government at the Centre-By Chandra Shekhar (November 11, 1990-July 21, 1991):

Chandra Shekhar formed a government with the help of the Congress (1), the AIADMK, BSP, Muslim League, J&K National Confrence, Kerala Congress (M), Shiromani Akali Dal (Panthic) and a few independent members. It was a small party government supported by a large group from outside. It was also an unstable and short-lived coalition which lasted only a few months. Chandra Shekhar presented his resignation letter on March 6, 1991 and advised the President to dissolve the Lokh Sabha.[12]

B. Fifth Coalition Government at the Centre-By Narasimha Rao of the Congress(1) (June 21, 1991-May 16, 1996):

The tenth Lokh Sabha elections were held in 1991 with the country still mourning the death of Rajeev Gandhi. In the elections the Congress (1) Party got 227 seats. Mr. P.V. Narasimha Rao of the Congress (1) became Prime Minister with the outside support of All India Anna DMK, Indian Union Muslim League, Kerala Congress (M), Janata Dal (Gujarat), and with the support of Sikkim Sangram Prishad. Shri Rao lost his credibility because he obtained support from the Telungu Desam Party and the Jarkhand Mukti Morcha through bribing its M.P.'s. yet he managed to survive for a full five year term.[13]

C. Sixth Coalition Government at the Centre by A.B. Vajpayee of the BJP (May 16, 1996-May 28, 1996):

In the 11th General Elections, held in 1996, no party got absolute majority in the Lok Sabha. It produced a fractured mandate and a "hung" Parliament.[14] So the President Dr. Shankar Dayal Sharma, invited Atal Bihari Vajpayee, the leader of the BJP parliamentry party to form the ministry. Vajpayee Ministry took charge on May 16, 1996. However, they did not succeed and finally Prime Minister Vajpayee had to go to the President and submit his resignation on May 27, 1996.[15] The BJP Government did not last more than 13 days.

3. Third Phase of Coalition Government from 1996-1998

A. Seventh Coalition Government at the Centre by H.D. Deve Gowda of the United Front (June 1, 1996- April 20, 1997) -

After the fall of the 13 day BJP Government, Shri Deve Gowda of the janata dal formed the United Front Government at the Centre with an amalgam of national and regional parties. The Congress extended its support to the United front government headed by Shri Deve Gowda ,who was unanimously choosen as the leader of the UF in parliament by its constituents.[16]

B. Eighth Coalition Government at the Centre by Inder Kumar Gujral of the United Front (April 21, 1997-March 19, 1998) - To avert the dissolution of the Lok Sabha, the Congress -

(1) leadership once again decided to continue the earlier support pattern under a new Prime Minister Inder Kumar Gujral. Following the bitterness over the depature of Deve Gowda in april.1997 both the Congress (1) and the United Front found themselves setting scores with each other. The Congress president Sitaram Kesari had built a good rapport with the affable United Front Prime Minister Inder Kumar Gujral. [17]

C. Nineth Coalition Government at Centre by AB Vajpayee (1998-2004) - In 1998 BJP formed national democratic alliance with several political parties and became the first Non-Congress government to complete a full five years term. NDA is a centre right coalition of political parties in India. At the time of its formation in 1998, it was led by the Bharatiya janata party and had thirteen constituent partiesThe coalition was in power from 1998 to 2004. The NDA governed under AB Vajpayee for a full five years, and hence and was widely expected to win the 2004 elections.[18]

D. Tenth Coalition Government (2004-2009) -

In 2004 Indian National Congress won the largest number of Lok Sabha seats and formed a government with a coalition called the United Progressive Alliances, the Congress led coalition, was inspired by the structure of the NDA, with one major national party at the helm and several regional parties participating.

E. 11th Coalition government by Manmohan singh (2009-2014) - United Progressive Alliances 2nd won the general elections

0f 2009 with the Congress winning 206 seats, 61 seats more than the 2004 election tally.Manmohan Singh continued to be the prime minister and in doing so became only the second PM of India after Jawahar Lal Nehru to return to power after a full five year term in office. RJD, SP, BSP, JD(S) and other smaller parties and independents provide external support to the govt. On november24, 2012, the second UPA govt. reached the mid point in its five year term that will end in May 2014

Conclusion - The coalition experiment is not new to India. The era of coalition governance in India first began in 1946, when an interim government was formed under the leadership of Pt. Nehru consisting of the Indian National Congress, The Muslim league and the Hindu Mahasabha. After independence, at centre level government the first coalition government that came to power was the Janta Party during (1977-79). The second coalition government at the Centre by Chaudhary Charan Singh (1979-1980) headed by Shri Chaudary Charan Sing formed an alternate coalition government at the national level on July 28, 1979.

The third Coalition government at the Centre was formed by Vishwanat Pratap Singh of the National Front (1989-1990). The fourth coalition govt. at the Centre by Chandra Shekhar (Nov.1990-1991). The fifth coalition government at the Centre by Narasimha Roa of the Congress(1) (1991-1996). The 6th coalition government at the Centre was headed by A B Vajpayee of the B J P from may 16, 1996-may 28, 1996. The seventh coalition government is headed by H.D. Gowda of the United Front from June 1, 1996 to April 20, 1997. The 8th coalition government at the Centre is headed by Inder Kumar Gujral of the United Front (from April 21, 1997 to march 19, 1998). In 1998 B J P led coalition government National Democratic Alliances (NDA) with several other parties and became the first Non-Congress government to complete a full five years term. In 2004 and 2009 Indian National Congress formed coalition governments such as UPA-I and UPA-II respectively.

References :-

1. The Oxford English Dictionary, Vol. IIc, Re-printed 1961, p.551.
2. W.A. Gamson, 'Coalition Formation' in International Encyclopaedia of the Social Sciences, Vol. 2, p.530.
3. N.C. Sahni, Coalition Politics in India (Julundur: New Academic Publishing Company, 1971), p.18
4. Dr. Sundar Ram, Preface to Coalition Politics in India-A Search for Stability, ed. Dr. Sundar Ram(New Dehli:National Publishing House, 2001), p. ix.
5. Madhu Dandavate, "Coalition Politics in India" in Politics India,(New Delhi,Feb. 1997), p.48.
6. Venkitaraman R., "My Presidential Years"(New Delhi:1994), p. 427
7. Mahendra Prasad Singh, "Minority Governments in India: An Analysis" Coalition Politics in India-Search for Political Stability, ed. Dr. Sundar Ram(New Delhi: National Publishing House 2001), p. 112.
8. Ibid, p.113.
9. Roa G.R. "The General Elections to Lokh Sabha-Context, Verdict and Message" Politics India", Vol. no. 1(july 1996), p. 35-38.
10. Dr. Sundar Ram, "Coalition Politics in India-Search for Political Stability" ed. Dr. Sundar Ram(New Delhi: National Publishing House 2001), p. 273.
11. Jangam P.T. and Patagundi. S.S., "The United Front Coalition: A perception and Reflection" Coalition Politics in India- Search for Political Stability, ed. Dr. Sundar Ram (New Delhi Publishing House, 2001), p. 46.
12. Ibid,46
13. Madhu Dandavade, "Coalition Politics in India-Search for Political Stability" ed. Dr. Sundar Ram(New Delhi:National Publishing House 2001), p.46.
14. Ibid, p.46
15. Agarala Esware Reddi, "Coalition Government" Politics India (April, 1997), p.27.
16. Fadia B.L., "Indian Government and Politics" (Agra Sahitya Bhavan Publications,2001), p.731.
17. Harish Khare and Mura Likhar Reddy, "Coalition and Controversies," The Hindu(30 Nov., 1990), p.10.
18. www.Ikadvani. In /eng/content/view/677/281.

****

India And Globalization - A New Outlook

Dr. Prevesh Pandey * Tariq Mohiuddin **

Abstract - Globalization as we understand is the emergence of a complex web of inter-connectedness, which increasingly influences our lives as they are shaped by events that occur and decisions that are made at a great distance from us. Globalization is declining of geographical distance and territorial boundaries between nation states are becoming less important. India welcomed globalization in 1990's by its strategy of chaotic and opportunity despite different political systems India is aggressively pursuing economic liberalization for growth and the result is India will be the economic power house of 21st century china is marching ahead with 16 percent gross domestic product (GDP) growth rates over the last two decades.

Introduction - The sovereign democratic republic of India occupies a small portion of India's long history century since 1950, within this short span however its economic regime has experiences two radical transformations. First with the establishment of the planning commission in March 1950, India launched upon a unique experiment in stated growth with social justice within the constitutional framework of parliamentary democracy. However this policy matrix came under significant pressure in the 1980s, culminating in the unprecedented balance of payment crises in 1900-91. The India government responded with on equally forth right policy regime grounded reform trinity popularly referred to globalization. The said economic concept have necessitated a series of (on going) policy reforms by the union and state government.[1]

India's Economic reforms programme since 1990-91 has emphasizes graduation and evolutionary transition, rather rapid restructuring or shock therapy. Gradualism has been the inevitable approach in India's democratic and high pluralistic polity, given that reforms can only be implemented if they are supported by a popular consensus.[2]

1. The dismantling of the industrial licensing regime.
2. Throwing open industries research for the public sector to private participation.
3. Abolition of the monopolies and restrictive trade policies (MRTP) acts.
4. The switch from a fixed exchange rate regime operating of quantitative restriction on imports.
5. The reduction of peak customs tariff from over 300% period to reform to the 30% rate applies now.
6. Excise duty structure is liberally rationalized to the extent that there is now only one 'CENVET' rate of 16 percent for majority of products.
7. India has abolished all types of quantitative restrictions on all the commodities of International trade under the obligation of W.T.O. India has also acquired for product patent regime as required by W.T.O. provisions.[3]

In the post-globalization era, there has been an increase is both gross domestic savings as also gross capital formation both in absolute terms as also as a percentage of the GDP. India continue to robust net capital inflows which helps in financing the rising current account deficits but also resulted in further accretion to the foreign exchange reserve. India's foreign exchange resources which were a meager US 2.2 billion in 1990-91 increased to US$17.0 billion in 1995-96, US$39.5 billion in 2000-01 to US$247.76 billion in 2005-06.[4]

These have been increased foreign direct investment and foreign institutional investment. Due to the powering of foreign money is the post – 1991 era, more so in the recent past, the considerably increased. India today is in fourth portion in the world in terms of market capitalization after the U.S.A. Japan and China.[5]

With strengths like well-developed and highly competitive computer software industry, the availability of technical and skilled work force and its potential as a very large middle class market. India capitalise benefits of globalization.[6] Since 1991 India changed the orientation or rules for foreign investment, disinvestment of public sector companies, India's export have gone up especially in the service sector, investments have come into the country and foreign exchange reserve are extremely comfortable. During globalization India has emerged as one of the fastest growing economics in the world.[7]

India approach towards globalization is a conscious and deliberated effort to permit the factors of production. The produce and the socio-economic forces to permeate across the national boundaries and remove any obstacles to such

*Asst. Professor, Shri Guru Nanak Mahavidyalya, Jabalpur (M.P.) INDIA
**Research Scholar, Rani Durgavati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

permenace.[8] India's experience with globalization and liberlisation through durable and not reversible has been during the last decade of reform. Some what different that most of the other G-20 members.

The authorities in India have revealed a preference for an India-Specific brand of globalization in which content, sequence and timing of policy measures are modulated to contain potential adverse shocks, while maximizing the benefits of cross border integration. This cautions approach has been guided by the perceived risk-return trade off.

In the context of the "Tyrany of the missing alternative" India perceive globalization to be an invertible reality. The official the form the former prime minister, Atal Bihari Vajpayee's economic advisory council is unequivocal, arguing globalization is an unavoidable process while is taking place independent of us. It forces us to cope with it. There is no room in a globalizes world for an economy delinked form world trade and foreign investment.[10] The advisory council candidly says, "The truth is that if they do not reform rapidly and position ourselves to compete, we will be marginalized.[11] In order to offset the negative effects of globalization and harness the benefits among all sections of the humanity. India is engaged in working with other countries at the United Nations. WTO regional organizations and also in the non-aligned movement. These are some encouraging developments such as the decision by the group of countries to cancel the debts of some of the most indebted and poor countries.

Since the break down of state socialism in the late 1980's certain economic political and social process have accelerated together led to a tremendous loss of importance of territorial location, distances and borders for economic, political and social issues and activities. All these charges are generated and facilitated by the process called globalization and globalization.[12] Globalization draws affection to a set of complex and multi-faceted change that started to take place in the second half of twentieth century. In the first place global interdependence was one of the results of the super power rivalry that characterized the cold war period. The capabilities and resources of the post 1945 super powers (The USA and USSR) were so overwhelming that they were able to extend their influence practically into every region of the world. Secondly the spread of international trade and the transnational character of modern business organization brought a global economy into existence. Collapse of communism gave impetus to the emergence of a global capitalist system. Thirdly technological innovations have increased globalization. It has affected almost every past of existence, ranging from the development of nuclear weapons and the emergence of global pollution problems like acid rain and ozone depletion to the introduction of international telephone links, satellite television and the internet fourthly globalization has an important politico ideological dimension. One aspect of this is the spread of western liberal political values, sometimes portrayed as the world wide triumph of liberal democracy, but it is also linked to the growth of Islam as a transnational political creed and to the rising interest in green ideas and philosophies.

In the economic sphere globalization manifest itself in the coming into being of a global market of goods and a global competition between its supplies. Supplier on a macro economic level, the existence of the global market translated into a hegemonic position of neoliberalism with its main characteristic of free trade relation and a reduced state expenditure especially in the field of social services.[14] In the south the dominance of new-liberal polices of multilateral donars the so called Washington consensus was turned into reality through structural development aid to the implementation of strict fiscal policies by the respective government.[15]

Despite different political systems India is aggressively pursuing economic liberalization for growth. India used science and technology and exports as a basis for their growth yet India's approach towards globalization and their path for economic development are remarkably different of its chaotic and opportunistic strategy.

The relevancy of India and globalization the in the fact that India will impact a third of humankind by 2050, influence world-wide job migration and more importantly India is fastest growing economy of the world. The 21st century of the Asian Century and India hold very conspicuous position in giving shape to new world order in general order in general and new International economic order in particular.[17]

The CIA largely based home of American spooks, reckons that china and India will be the economic powerhouse of 21st century china is marching ahead with 10 percent gross domestic product (GDP) growth rates over the last two decades.

In contrast India is attempting leap frog from predominantly agricultural economy to a knowledge based service economy. This approach is highlighted as the shining beacon of a 21st century economic development model.[18]

References:-

1. Fancois, xavier and Joel Ruet, Globalization in china, India and Russia, Academic Foundation, New Delhi, 2007, P-364.
2. Sondhi Sunil, International Relations, Sanjay Prakshan, New Delhi, 2004, P-245.
3. Paul, W. James, Globalization and Economy, Sage Publication, New Delhi, 2007, P-33.
4. Gilpin Robert, Globalization Political Economy, Princeton university press, New Delhi, 2001, P-46.
5. Ben Thirkell – white, The IMF and the politics of financial globalization, Macmillan Publication, P.P. – 41-45.
6. Phillif Nicola, Globalizing Political Economy Macmillan Publishers, 2004, P-50.
7. Sailendra Nath Ghosh, "Facing up to the Challenges of Globalization," Mainstream Jan, 24, 2004, P-17.
8. Bauman, Z. Globalization: The Human consequence, Cambridge Press, 1990, P-242.
9. Wade Robert, Globalization and its limits Cornell University Press, 1996, P-122.

10. Daly Herman, Globalization verses internationalization some Implications. 1999.
11. Shri-Prakash, Globalization and the third power : Perspective and challenges in seminar on 9th November 2006 in Academy of Third World Studies, P-18.
12. Anit, Jain, "Globalization: The India Experience", Main Stream, February 8-14, 2008, P.P. 15-16.
13. Palkivala, N.A., "India as an Emerging Economy Power": Forum of Free Enterprise, Mumbai, 1995.
14. Jonathan Fenby, China's Rumble with Globalization Part II, Yale Global, 24 July 2008, P-4.
15. Ibdi, P-22
16. Prabhudev Konana, John N.Doggett, "Advantage China", Frontime, March 25, 2005, P-4.
17. David A Kelly, Ramkrishem S. Rajan, "Managing Globalization" Lesson from China and India." Asian Economic Bulletin, P-12.
18. Meridith, Robyn, The Elephant and the Dragon, The rise of India and China and what it means for all of us, New York W.W. norton and Company, 2007, P-132.

****

भारत में महिलाओं की राजनैतिक जागरूकता एवं सशक्तिकरण

डॉ. ज्योति मार्टिन *

प्रस्तावना – समग्र रूप से सशक्तिकरण का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति को अपनी कतिपय कार्यों को पूरा करने की क्षमता प्राप्त करने तथा कतिपय विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने की क्षमता अर्जित करने में है। ऐसा वातावरण जिसमें प्रत्येक अपनी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग करते हुए किसी भी कार्य को करने के संबंध में स्वयं निर्णय ले सकें। महिला सशक्तिकरण भी एक निरंतर चलने वाली अनवरत और गतिशील प्रक्रिया है जिसका मूल उद्देश्य है कि आधी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व मुख्य धारा से जोड़ा जाए ताकि उन्हें सत्ता संरचना में भागीदारी बनाया जा सके, महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनैतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में निर्णय लेने की स्वंतत्रता हो। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के संबंध में स्वीकार किया गया कि महिलाऐं स्वयं को सशक्त बनाए अर्थात वह शिक्षा के माध्यम से स्वयं की सोच समझ, बौद्धिक चातुर्य से अपने अधिकार एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक रहकर नीति निर्धारित राजनीति के क्षेत्र में सशक्त हो। समग्र संवेदनशील एवं सकारात्मक सोच के साथ वह अन्तर्बाहय रूप से समर्थ व सशक्त महिला हो तभी राजनीतिक विकास में समुचित भागीदारी का निर्वाह कर सकती है। भारत में महिला सशक्तिकरण से आशय प्राथमिक रूप से महिलाओं की सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक सुधार लाना है। भारतीय संविधान में महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण का शुभारंभ मौलिक अधिकारों के अंतर्गत प्रदत्त सभी स्वतंत्रता या अधिकार है जो स्त्री और पुरूष को समान रूप से प्राप्त है। इससे स्पष्ट है कि महिलाओं की क्षमताओं को विशेषकर राजनीतिक क्षमताओं को इस योग्य बनाना है कि इस क्षेत्र में महिलाएं पहल कर सकें। उन्हें सुदृढ़ता, स्थायित्व और निरंतरता प्राप्त हो सके। अत: सैद्धांतिक रूप से महिलाओं के राजनीतिक अधिकार हैं –

1. **सार्वभौमिक मताधिकार** – प्रत्येक स्तर के स्थानीय राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में बिना किसी भेदभाव के पुरूषों के समान मतदान करने का अधिकार।
2. **चुनाव लड़ने का अधिकार**– प्रत्येक स्तर के निकाय व संस्था जैसे – संसद, विधानसभा, पंचायती राज, अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के चुनावों में स्वतंत्र रूप से चुनाव में लड़ने का अधिकार।
3. **सत्ता, प्रशासन एवं न्यायिक प्रणाली में भागीदारी का अधिकार**– प्रत्येक स्तर के सत्ता के पायदानों पर विभिन्न पदों पर निर्वाचित होने, चयनित होने तथा नियुक्त होने का अधिकार।

भारतीय संविधान स्थानीय संस्थाओं से लेकर राष्ट्रीय स्तर की संस्थाओं में महिलाओं की सहभागिता के प्रचुर अवसर प्रदान करता है, परंतु व्यवहारिक पहलुओं के आधार पर महिलाओं को बाहुबल, बुद्धिबल तथा धनबल के आधार पर निर्णायक प्रक्रिया में भागीदारी से वंचित रखा जाता है। राजनीतिक निर्णय कारिता में महिलाओं की भागीदारी स्वंतत्रता के इतने वर्षों पश्चात् भी उल्लेखनीय रूप से नहीं हो पाई है क्योंकि स्थानीय समुदाय, राज्य, राष्ट्र एवं वैश्विक स्तर पर शताब्दियों से महिलाओं को द्वितीय श्रेणी का नागरिक समझा जाता रहा है। कई राष्ट्रों में महिलाओं को लंबे समय तक मताधिकार एवं चुनाव से प्रतिभागी बनने से वंचित रखा गया या मतदान करते समय महिला के निर्णय अपने पिता/पति/भाई के निर्देश से प्रभावित होती है। यही कारण है कि राजनीतिक सत्ता के शिखर तक पहुंचने वाली महिलाओं की संख्या आज भी अंगुलियों पर गिनने लायक ही है। महिला सशक्तिकरण की पहल 1985 में महिला अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में नैरोबी में की गई थी। संयुक्त राष्ट्र संघ चतुर्थ विश्व महिला संघ ने 1995 में बीजिंग प्लेटफार्म कार्य योजना सत्ता एवं निर्णयन में महिलाओं के लिए राजनीतिक लक्ष्य निर्धारित किये गये कि सत्ता के ढांचे तथा निर्णयन प्रक्रिया में महिलाओं की पहुंच तथा सहभागिता निश्चित करने हेतु उपाय अपनाये जायें एवं नेतृत्व में भागीदारी एवं निर्णयन प्रक्रिया में महिलाओं की क्षमताओं में वृद्धि किये जाऐं।

सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, बेटिकन सिटी ऐसा देश है जहाँ महिलाओं को मताधिकार प्राप्त नहीं है। भूटान में एक परिवार से केवल एक ही महिला मतदान कर सकती है। लेबनान में केवल प्रारंभिक स्तर तक शिक्षित महिलाएं ही मतदान कर सकती हैं। भारत में मद्रास प्रान्त में 1921 में धनाढ्य एवं शिक्षित महिलाओं को मताधिकार प्राप्त हुआ। भारतीय शासन अधिनियम 1935 के तहत् भारतीय महिलाओं को मताधिकार एवं चुनाव लड़ने का अधिकार प्राप्त हुआ तथा स्वतंत्रता के पश्चात् लागू संविधान के द्वारा समान रूप से महिलाओं को सार्वभौमिक मताधिकार मिला। भारतीय महिलायें अपने मताधिकार का प्रयोग सन् 1952 से करती आ रही हैं।

यदि हम भारतीय इतिहास पर दृष्टिपात करे तो ऐसे कई प्रमाण मिलते हैं कि उस समय भी महिलाऐं राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेती थी। ऋग्वैदिक काल में महिलाओं को पुरूषों के बराबर दर्जा हासिल था। 19 वीं सदी के सुधारवादी आंदोलन और सामाजिक पुनर्जागरण के कारण महिलाओं की स्थिति में सुधार आया। रामाबाई रानाडे, आनंदी बाई जोशी, सोराब जी आदि महिलाओं ने भारतीय महिलाओं की स्थिति बेहतर बनाने के लिये प्रयास किये।

वैसे भारत में राजनीतिक सशक्तिकरण की जड़े सल्तनतकाल में रजिया सुल्तान, होल्कर साम्राज्य की शासक अहिल्याबाई होल्कर, कलकत्ता की रानी रश्मि देवी, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई जो देश में महिलाओं के कल्याण के लिये और भारत की आजादी के नेक काम के लिये आखिरी सांस तक लड़ीं। चित्तूर की रानी चेन्नमा, गौंडवाना की रानी दुर्गावती, रायगढ़ की रानी अवनी बाई के साहस एवं वीरता समाई हुई है। वहीं स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन में शामिल होकर महान महिलाओं ने बेगम हजरत महल, श्रीमती एनी बिसेन्ट, सरोजनी नायडू, भीकाजी कामा, कस्तूरबा गांधी, कमला नेहरू आदि ने

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, ढाना, जिला सागर (म.प्र.) भारत

भारत की महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता लाने का कार्य किया। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में इन महिलाओं की भूमिका अहम रही है। स्वतंत्र भारत में विजयलक्ष्मी पंडित 1953 में संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा की पहली अध्यक्ष बनी। 1980 में श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री बनी उसे देखकर बाहरी दुनिया चौंक पड़ी। उन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में शासन एवं प्रशासन में कीर्तिमान स्थापित की जो चिरस्मरणीय है। भारत के अनेक राज्यों में महिलाओं का मुख्यमंत्री बनना संसार के लिये आश्चर्य की बात थी। महिलाओं की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी प्रत्येक स्तर पर देखी जा सकती है। नंदिनी सत्पथी, जयललिता, शशिकला काकोडकर, सुचिता कृपलानी, सैयद अनवरा, तैभूर, उमाभारती, मायावती, शीला दीक्षित, बसुंधरा राजे, राबड़ी देवी तथा ममता बैनर्जी ने अपनी क्षमताओं से महिला सशक्तिकरण को एक नई दिशा दी। श्रीमती प्रतिभा सिंह पाटिल ने राष्ट्रपति पद की गरिमा को बढ़ाया है। मीरा कुमार ने अपनी क्षमताओं से लोकसभा के स्पीकर पद की गरिमा को नई ऊँचाईयाँ प्रदान की हैं।

वर्तमान में 16 वीं लोकसभा निर्वाचन में कैबिनेट मंत्री के रूप में स्मृति ईरानी, मेनका गांधी, उमा भारती, नजमा हेपतुल्ला, हरसिमरत कौर एवं निर्मला सीतारमण ने अपना राजनीतिक लक्ष्य हासिल कर केन्द्र सरकार के संचालन में प्रमुख भूमिका निभा रही है।

सुषमा स्वराज विदेश मंत्री के रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की विदेश नीति का सुदृढ़ संचालन कर सशक्त महिला क्षमता का परिचय दे रही है। सुमित्रा महाजन लोकसभा के स्पीकर के पद की गरिमा को सुशोभित कर रही है। संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मामले में विश्व में भारत 105 वे स्थान पर है। राज्य स्तर पर भी मुख्यमंत्री ममता बैनर्जी पश्चिम बंगाल एवं वसुंधरा राजे राजस्थान ने स्वयं के संघर्ष से सत्ता के शिखर तक पहुंची है। मुख्यमंत्री आनंदीबेन पटेल कुशलता पूर्वक गुजरात के राजनीतिक नेतृत्व की कमान संभाले हुई है।

महिलाओं को राजनीतिक क्षेत्र में उचित भागीदारी देने के लिये भारतीय संविधान के 73वें एवं 74 वें संविधान संशोधन द्वारा देश भर की पंचायतों व जिला परिषदों में महिलाओं के लिये 30 प्रतिशत सीटें आरक्षित करने का प्रावधान किया जो भारतीय स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी की ओर एक सराहनीय कदम है। मध्यप्रदेश सहित कुछ राज्यों में 50 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी कर दिया गया है।

भारतीय राजनीति में महिला जनप्रतिनिधित्व का एक विशिष्ट मुद्दा है। लोकसभा चुनाव 1952–2014 तक में महिला प्रत्याशियों का प्रतिनिधित्व जैसा तालिका प्रदर्शित कर रही हैं।

वर्ष	कुल सदस्य संख्या	महिला सदस्य संख्या	सदस्यों का प्रतिशत
1952	449	22	4.41
1957	500	27	5.40
1962	503	34	6.76
1967	523	31	5.93
1971	521	22	4.22
1977	544	19	3.49
1980	544	28	5.15
1984	544	44	8.09
1989	517	27	5.22
1991	544	39	7.17
1996	543	39	7.18
1998	543	43	7.92
1999	545	49	9.0
2004	539	44	8.2
2009	545	59	10.8
2014	543	62	11.42

उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि स्वतंत्र भारत में प्रथम लोकसभा की 499 सीटों के लिये 51 महिला प्रत्याशियों ने चुनाव लड़ा तथा 22 महिलायें लोकसभा सदस्यता ग्रहण करने में सफल रहीं जिनका प्रतिशत 4.41 रहा। वहीं 15 वीं लोकसभा में महिलाओं की सहभागिता का प्रतिशत 10.08 और 16 वीं लोकसभा में सर्वाधिक 11.42 प्रतिशत महिलाएं निर्वाचित हुई। स्वतंत्रता के पश्चात् गठित तमाम लोकतांत्रिक विश्लेषण के आधार पर कहा सकता है कि महिलाओं की राजनीति में सहभागिता का प्रतिशत बहुत ज्यादा नहीं है। परंतु कहा जा सकता है कि महिला सहभागिता का प्रतिशत उत्तरोत्तर बढ़ रहा है।

महिला जनप्रतिनिधियों ने अपने कुशल नेतृत्व तथा प्रशासनिक क्षमता का लोहा भी मनवाया है। ये निर्वाचित महिलाएं अपनी नई भूमिका के प्रति अधिक सचेत एवं दक्ष हैं। निश्चय ही निर्णयन प्रक्रिया तथा नेतृत्व में भागीदारी हेतु महिलाओं की क्षमताओं में वृद्धि हो रही है। राजनीतिक क्षितिज पर उभरने वाली महिलाओं ने न केवल अपने देश की राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन किया अपितु किसी न किसी रूप में विश्व राजनीति को भी प्रभावित कर रही हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. महिला विकास कार्यक्रम – डॉ. आशु रानी
2. भारतीय राजनीति और महिलाएं – स्वप्निल सारस्वत
3. प्रतियोगिता दर्पण – मई 2014
4. CSDC Data Unit. http://www.India stat.com/2005
5. http://eci.nic.in/eci_main1/h/statistical_ reportge 2014.aspx

****

महात्मा गांधी के सिद्धांत तथा नई पीढ़ी का दृष्टिकोण – एक अध्ययन

डॉ. प्रदीप कुमार चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – महात्मा गांधी को इस बात का श्रेय दिया जाता हैं कि उन्होंने सत्य के लिए अहिंसापूर्ण आग्रह की अपनी अनोखी प्रतिरोध पद्धति का अत्यन्त प्रभावी उपयोग करके भारत को ब्रिटेन की दासता से मुक्त कराने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। उनका यह अद्‌भुत प्रयोग सारी दुनिया के लिए मिसाल बन गया। आज इस बात की विशेष आवश्यकता हैं कि यदि गांधीजी के सिद्धान्तों को युवा पीढ़ी के मानस को ध्यान में रखते हुए, उन्हें ग्राह्य हो सके, ऐसी भाषा में प्रतिपादित किया जाए तो एक नवीन अहिंसक सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति की भूमिका तैयार हो सकती है। इसलिए महात्मा गांधी के सिद्धान्तों का नई पीढ़ी के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए अध्ययन किया जाना बहुत महत्वपूर्ण और आवश्यक हो गया है।

नई पीढ़ी की नवीन आवश्यकताएँ – आज एक ओर तो नई पीढ़ी दिग्भ्रमित हो रही है। डिस्को संस्कृति का ज्वर नई पीढ़ी के मन–मस्तिष्क पर चढ़कर बोल रहा है। नशीली दवाओं का उपयोग करने जैसी प्रवृत्तियाँ अमर्यादित रूप में बढ़ती चली जा रही हैं, तो दूसरी ओर नई पीढ़ी में ऐसे लोग भी बड़ी संख्या में है जिनमें अध्ययन के प्रति अत्यधिक लगन है। वे कुछ ऐसा करना चाहते है जो नया और महत्वपूर्ण हो। किन्तु उनके सम्मुख यह प्रश्न है कि ऐसी कौन सी विचारधारा है जिसपर चलकर एक प्राचीन गौरवशाली राष्ट्र विश्व में पुन: अपना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकता है? इस दिशा में महात्मा गांधी के सिद्धान्त महत्वपूर्ण मार्गदर्शन कर सकते हैं।

गांधीजी के सिद्धान्त तथा नई पीढ़ी का दृष्टिकोण – गांधीजी के सिद्धान्तों को स्वीकार करना नई पीढ़ी के लिए अत्यन्त कठिन माना जाता है। लेकिन इसके साथ ही अनेक विद्धान यह भी कहते हैं कि गांधीजी जैसे अनुभवी और प्रयोगशील महापुरूष के अनेक सिद्धान्त ऐसे भी हैं जिन्हें नई पीढ़ी न केवल अपना सकती है बल्कि उसके द्धारा अपने समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी योगदान भी दे सकती है –

सत्य के प्रयोग करने की भावना – गांधीजी ने अपनी आत्मकथा का नाम 'सत्य के मेरे प्रयोग रखा। उनका विश्वास था कि जिस कार्य को एक व्यक्ति कर सकता है, उसे सब लोग कर सकते हैं। अपने प्रयोगों का वर्णन उन्होंने पूर्ण पारदर्शिता के साथ किया है। नई पीढ़ी प्राचीन सिद्धान्तवादिता से अपने को कितना भी दूर समझती हो किन्तु किसी भी युग में नई पीढ़ी का जीवन सत्य पर ही प्रतिष्ठित हो सकता है। सत्य की व्याख्या और उसे देखने का ढंग सबका अलग–अलग हो सकता है। ऐसी स्थिति में नई पीढ़ी, सत्य के प्रयोग करने की भावना को आत्मसात करके स्वयं के सुन्दर और सुव्यवस्थित जीवन जीने के अधिकार को प्राप्त कर सकती है।

अहिंसक क्रान्तिकारी दृष्टिकोण– गांधीजी का अपने जीवन को जीने का जो ढंग था वह बहुत क्रान्तिकारी था। आवश्यकता पड़ने पर वे ब्रिटिश साम्राज्य से असहयोग कर सकते थे, वे अपने परिजनों और स्वयं अपने आप से भी असहयोग कर सकते थे। जहाँ कही अन्याय, शोषण, और आतंक दिखाई देता था, वहाँ उनकी चेतना शक्ति पूरी ताकत से उसके विरोध में सक्रिय हो जाती थी। अपनी क्रान्तिकारी अन्तर्दृष्टि के द्धारा ही उन्होंने अपने समस्त कार्य कलापों में भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम तत्वों का समावेश कर लिया था। इसी के आधार पर उन्होंने कताई जैसे साधारण कार्य में भी महान क्रान्तिकारी संदेश भर दिया था। देश के लिए जेल जाने को उन्होंने धार्मिक यात्रा जैसा कार्य बना दिया था। अपनी भूलों को स्वीकार करने की गांधीजी में आश्चर्यजनक क्षमता थी। वे इन्हें सुधारने का भी भरसक जतन करते थे। उनका ऐसा जीवन दर्शन नई पीढ़ी के लिए सदैव ही चुनौतीपूर्ण और अनुकरणीय रहेगा।

लोक संग्रह – गांधीजी स्वयं के प्रति अत्यधिक कठोर थे, लेकिन वे दूसरों के प्रति उतने ही उदार थे। उनके संपर्क में आने वाले लोग अलग–अलग प्रकृति के थे और उनकी विशेषताएँ भी अलग–अलग थी। गांधीजी उनकी विशेषताओं का सम्मान करते थे और उनसे उनकी प्रकृति के अनुसार कार्य भी करवा लेते थे। उन्होंने अनेक लोगों की जीवनधारा ही बदल दी थी। वे अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों का बहुत ध्यान रखते थे। उनके हृदय में प्रत्येक व्यक्ति, यहाँ तक कि जीवों के प्रति भी गहरा प्रेम था और वे उनके दुखों और प्रसन्नता को तुरंत भांप लेते थे। वैसे तो उनके पास समय की बहुत कमी थी लेकिन उनसे मिलने की इच्छा रखने वाले या उनसे मार्गदर्शन चाहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए उनके पास समय होता था। वे खुले हृदय से लोगों की अच्छाईयों को स्वीकार करते थे और राष्ट्रहित में उनका उपयोग करने के लिए उन्हें प्रेरित करते थे। यही कारण था कि उन्होंने बहुत बढ़ी संख्या में युवाजनों को आकर्षित किया और उनसे अपने निर्देशों के अनुसार राष्ट्र का काम करवाया। लोगो से जुड़े रहना तथा राष्ट्रहित के विषय मे चर्चा करना या एक–दूसरे को प्रेरित करना, ये बातें आज भी नई पीढ़ी के लिए अनुकरणीय हैं।

निष्कर्ष – इस प्रकार महात्मा गांधी के सिद्धान्त नई पीढ़ी के लिए आज भी विचारणीय और अनुकरणीय हैं। महात्मा गांधी के कुछ सिद्धान्तों की प्रासंगिकता दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही है। आज उनके नए आयामों की खोज की जा रही है। गांधीजी शोषणमुक्त समाज की रचना करना चाहते थे। यह भावना किसी भी युग के लिए अप्रासंगिक नहीं हो सकती है। आज के समय में साधारण मनुष्य के सामने जो समस्याएँ हैं, उनके हल की तलाश हमे अनायास ही गांधीजी के सिद्धान्तों पर विचार करने के लिए प्रेरित करती है। संसार को अपनी समस्याओं के वास्तविक तथा आधारभूत हल खोजने के लिए आने वाली अनेक शताब्दियों तक महात्मा गांधी के सिद्धान्तों से प्रेरणा प्राप्त होती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्द स्वराज – महात्मा गांधी।
2. मेरे सपनो का भारत – महात्मा गांधी।
3. लोक नीति – विनोबा।
4. मेरी विचार यात्रा – जयप्रकाश नारायण।
5. गांधीजी के सिद्धान्त : नई पीढ़ी की दृष्टि – गुणवन्त शाह।
6. फ्रीडम एट मिडनाइट : कालिन्स तथा लापियर।
7. स्माल इज ब्यूटीफुल : ई.एफ. शूमेखर।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला – देवास (म.प्र.) भारत

विन्ध्य क्षेत्रीय इतिहास पर भूगोल का प्रभाव

डॉ. आर. के. शर्मा *

प्रस्तावना – पीटर टेनिन का कथन था कि भूगोल के बिना इतिहास शव के समान है। जिसमें न जीवन होता है और न क्रियाशीलता ही। इनमें संदेह नहीं कि भूगोल इतिहास के प्रवाह को प्रभावित करता है और भूगोल में अध्ययन के बिना इतिहास को समझना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। किसी भी प्रदेश की सभ्यता और संस्कृति को समझने के लिये उस प्रदेश की सभ्यता और संस्कृति को समझने के लिये उस प्रदेश की भौगोलिक पृष्ठभूमि जानना वांछनीय है वास्तव में मनुष्य चाहे किसी भी क्षेत्र में कुछ भी करता रहे वह अपने वातावरण के प्रभाव से संयुक्त नहीं रह सकता। इसलिये मानव को अपने वातावरण की उपज कहा गया है।

लेकिन और आगे कुछ वर्णन करने के पूर्व हमें सर्व प्रथम यह जान लेना अति आवश्यक हो गया है कि इस क्षेत्र का नाम विन्ध्य क्षेत्र कैसे पड़ा। इस क्षेत्र का नाम विंध्य क्षेत्र पड़ने का कारण भारतीय साहित्य में विंध्याचॅल के विविध रोचक वर्णन मिलते है। पुराणों में इसकी गणना देश के मुख्य पर्वतों में की गई है। जिन्हें कुल पर्वत कहा जाता है पौराणिक तथा अन्य प्राचीन साहित्य में विंध्य पर्वत की अतिशय ऊॅचाई के लेख मिलते है। यह अनुश्रुति प्रसिद्ध है कि अगस्त आर्य संस्कृति के प्रचार के लिये जब दक्षिण को जाने लगे तब उन्हें ऊॅचे विन्ध्य पर्वत के कारण बाधा पड़ी। पहाड़ की ऊॅचाई के अलावा इस क्षेत्र में बिधने वाली कटीले झाड़ियों की अधिकता है संभवत: विंध्य नाम के पीछे यह भी एक कारण था।

विंध्य क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति में यहॉ के इतिहास को अत्यधिक प्रभावित किया है। भूगोल ने ही यहॉ की प्राकृतिक सीमाएॅ और सामाजिक आवागमन निश्चित किया है तथा विभिन्न जातियों का विस्तार सीमित किया है।[1] यहॉ के पहाड़ो नदियों और अटवी प्रधान क्षेत्रों ने इसे देश के अन्य भागों से अलग रखा है।

इस क्षेत्र के दक्षिण पश्चिम और उत्तर पूर्व में पन्ना शैलमाला एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई है। विंध्य पर्वत ने दक्षिण की ओर से इसे प्राय: दुर्गम बना दिया है। इस दुर्गमता के कारण दक्षिण पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने में अनेक बार उत्तर भारत को असफलता मिली। इसका ज्वलंत उदाहरण उत्तरायथनाथ हर्षवर्द्धन का है, जिसे दक्षिण विजय अभियान में चालुक्य सम्राट पुलकेशी द्वितीय से मुॅह की खानी पड़ी।[2]

विंध्य क्षेत्र अनेक शैलमालाओं से विभक्त है। विंध्य की कैमूर, पन्ना, विजावर और भाण्डेर मालाओं के कारण बाह्य आक्रमणों के लिये यह प्रदेश दुर्भेद्य रहा है। इसीलिये बहुत समय तक वह विदेशी आक्रांताओं से बचा रहा। उत्तर की ओर यह क्षेत्र अर्न्तेदी के उपजाऊ मैदान के अत्यंत निकट है। अन्तर्वेदी पर बहुसंख्यक आक्रामकों की दृष्टि रही है अत: हमारे देश के उत्तरी भाग उनसे अछूता नहीं रहा। कुरूवंशी राजा वसु ने चेदि प्रदेश पर आक्रमण किया और यहॉ के यादव नरेश को परास्त कर स्वयं यहॉ का अधिपति बन गया। महाभारत में उसे देवराज इन्द्र का कृपापात्र बताया गया है। केन घाटी के शक्तिमतीपुर में अपना शक्ति केन्द्र स्थापित कर उसने चेदि राज्य का विस्तार किया। वसु ने चेदि, करूष, कौशाम्बी, मगध और मत्स्यप्रदेश तक विस्तृत अपने विशाल साम्राज्य को पॉच पुत्रों में बॉट दिया। चेदि और मगध ने महाभारत युद्ध के समय अपनी शक्ति में अभूतपूर्व वृद्धि की। कुरूओं के इस शक्ति विस्तार के लिये मूलरूप से गंगा घाटी उत्तरदायी है। इतिहास साक्षी है कि इस घाटी पर नियंत्रण करने वालो ने प्राय: सम्पूर्ण उत्तरभारत में अप्रतिहत सत्ता का उपभोग किया है। कौशाम्बी में आर्यावर्त नरेशों को पराजित कर ही समुद्रगुप्त गुप्त साम्राज्य को सुदृढ़ आधार प्रदान कर सका। हर्षवर्द्धन ने अपने वंश की परम्परागत राजधानी थानेश्वर को छोड़कर कन्नौज को अपना राजनीतिक केन्द्र बनाया। इसका मुख्य कारण गंगा घाटी का उपजाऊपन है। कान्यकुब्ज प्रदेश में अपनी सैन्य शक्ति संगठित कर हर्ष ने अपना आधिपत्य शेष उत्तर भारत पर स्थापित किया। किन्तु दक्षिण अभियान में उसे सफलता नहीं मिली। मध्यकाल में गंगा यमुना दोआब का महत्व अलाउद्दीन खिलजी ने समझा। दिल्ली सुल्तान बनने की प्रारम्भिक तैयारियॉ उसने बड़ा मानिकपुर (जिला इलाहाबाद) के सूबेदार की हैसियत से ही की थी उसने एक बार कहा था कि दोआब पर अधिकार किये बिना भारत में स्थायी मुस्लिम शक्ति की नींव नहीं रखी जा सकती। मैकाइण्डर, विश्व राजनीति की धुरी मध्य एशिया को जानते है। उसी प्रकार गंगा यमुना दोआब या अन्तर्वेदी क्षेत्र को भारतीय राजनीतिक इतिहास की धुरी माना जा सकता है।

राजा वसु के समय से विंध्य क्षेत्र का आर्यीकरण प्रारम्भ हुआ। तत्पश्चात कई शताब्दियों तक जब पश्चिमोत्तर भारत पर ईरानियों, यूनानियों, शक पहलवों तथा कुषाणों के आक्रमण हो रहे थे तब इस प्रदेश पर बाह्य आक्रमण नहीं हुये। पश्चिमी क्षेत्र के शक क्षत्रपों को कुछ समय के लिये ही सागर जिले के एरन क्षेत्र पर अधिकार स्थापित करने में सफलता मिली। एरन (प्राचीन ऐरिकण) में शको, गुप्तो और हूणों के अभिलेख प्राप्त हुये है।

उत्तरी बुन्देलखण्ड का राजनीतिक केन्द्र कालान्तर में शुक्तिमतीपुर से स्थानान्तरित होकर कालिंजर पहुॅच गया। यहॉ पर महाराज उदयन का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है। बघेलखण्ड (प्राचीन करूक्ष) में मध राजाओं की राजधानी बॉधवगढ़ में रही। गुप्त युग में गंज (पन्ना) और उचेहरा (सतना) में क्रमश: व्याघ्रराज, उच्चकल्प और परिवब्राजक राजाओं के शक्ति केन्द्र स्थापित हुये। यह कहना असंगत न होगा कि गुप्त सम्राटों के अधीन होने के कारण इनकी राजनीतिक शक्ति सीमित थी। विंध्य क्षेत्र पर आधिपत्य स्थापित करने के लिये किसी भी बाह्य शक्ति को एरन तथा कालिंजर पर अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करना अनिवार्य था। शकों तथा हूणों ने ऐसा ही किया दोनों केन्द्रों के इस राजनीतिक महत्व का एक कारण इनका उर्वर क्षेत्र में स्थित होना है। कालिंजर क्षेत्र यमुना घाटी से लगा होने के कारण उपजाऊ है। एरन का क्षेत्र पूर्वी मालवा में है जहॉ की भूमि अत्यंत उर्वर है। बघेलखण्ड क्षेत्र और बुन्देलखण्ड में पन्ना से दतिया तक का प्रदेश कृषि की दृष्टि से अच्छा

* प्राचार्य, इन्द्रा स्मृति महाविद्यालय, न्यूरामनगर, जिला – सतना (म.प्र.) भारत

नहीं है। प्राचीन भारतीय आर्थिक व्यवस्था कृषि प्रधान थी। शक्ति विस्तार में इस तथ्य की उपेक्षा संभव न थी। पूर्व मध्यकाल में बुन्देलखण्ड में चंदेलो और बघेलखण्ड में कलचुरियों का शासन हुआ। चंदेल शक्ति का प्रमुख शक्ति केन्द्र कालिंजर में और कलचुरियों का त्रिपुरी (जबलपुर) में स्थापित हुआ। चंदेलो ने लगातार आक्रमणों द्वारा उपजाऊ क्षेत्रों में अधिकार करने के प्रयास किये। उन्होंने अपने वैभवकाल में गंगा यमुना घाटी तक अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार किया। उत्तर भारत की इस सर्वाधिक उपजाऊ घाटी पर उनका नियंत्रण हुआ। उनके निजी विंध्य क्षेत्र की दुर्गमता के कारण बाह्य शक्तियों का वहॉ प्रवेश न था। इन दोनों कारणों ने चंदेलों को उत्तर भारत की प्रमुख शक्ति बनने में सहायता दी। अपनी इस प्रभुता को वे कई शताब्दियों तक बनाये रखने में सफल रहे। उन्होंने अनके बार प्रतिहारों और शाही शासकों जयपाल और आनन्दपाल को सैनिक सहायता दी। चंदेल शक्ति से लोहा लेने के लिये महमूद गजनबी ने उन पर दो असफल सैनिक अभियान किये। डॉ0 रमेशचंद्र मजुमदार का यह कथन युक्तिसंगत है कि चंदेल क्षेत्र में और अधिक अन्दर घुसने में भयभीत मुस्लिम सुल्तान को हर बार बिना किसी उपलब्धि के लौटना पड़ा। विन्ध्य क्षेत्र की असहनीय गर्मी और जलाभाव के कारण गजनबी सुल्तान को चप्पे चप्पे भूमि पर लोहे के चने चबाने पड़े होंगे।

भौगोलिक स्थिति के कारण चंदेल साम्राज्य को बाह्य आक्रमणों से सुरक्षा मिली। इसके साथ साम्राज्य के अन्दर निवास करने वाली वन्य जातियों से लगातार संकट उत्पन्न होता रहा। भोजवर्मा के अजयगढ़ प्रस्तर अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसके शासनकाल में शबर, पुलिंद और भीलों ने सिर उठाया। उनकी शक्ति को कुचल दिया गया। इसी प्रकार कीर्तिवर्मा के देवगढ़ प्रस्तर अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसके मुख्यमंत्री वत्सराज ने देवगढ़ और उसके सम सीमावर्ती जिलों में शत्रुओं का नाश किया। अभिलेख में शत्रुओं का स्पष्ट उल्लेख न होने से अनुमान होता है कि वे कोई वनवासी तत्व थे। चंदेलों की सुरक्षा के मुख्य साधन उनके दुर्ग थे। एक बार सीमावर्ती दुर्गो पर अधिकार होने का तात्पर्य था शत्रुओं के लिये साम्राज्य का प्रवेश द्वार खुल जाना कलचुरि शासक गांगेयदेव और लक्ष्मीकर्ण तथा महमूद गजनबी, पृथ्वीराज चौहान और कुतुबुद्दीन ऐबक के आक्रमणों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है। विंध्य क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के कारण कोई भी बाह्य शक्ति चाहे वह शकों या हूणों की रही हो या चौहानों अथवा मुसलमानों की अधिक समय तक विवेच्य क्षेत्र पर अपना अधिकार नहीं रख सकी।

यद्यपि नदियों ने विंध्य क्षेत्र की राजनीति को विशेष प्रभावित नहीं किया तथापि लोकजीवन पर उनका प्रभाव असंदिग्ध है। जल ही जीवन है की यथार्थता अनुभव करने वाले मानव ने प्राचीनतम समय से ही अपनी सभ्यता का विकास नदियों के किनारे किया। नदियों ने सिंचाई के लिये जल उपलब्ध कराकर भूमि को उर्वरा और शस्य श्यामला बनाया।[3] उन्होंने मानव को नवजीवन दिया आवागमन के जलमार्ग प्रदान किये और शत्रुओं से रक्षा हेतु अवरोध का कार्य किया।

नदियों की दृष्टि से हमारा क्षेत्र सौभाग्यशाली रहा है। साहित्य और अभिलेखों में उल्लिखित इस क्षेत्र की अनेक नदियों का वर्णन हम चौथे अध्याय में कर चुके है। यहॉ यह कहना उपयुक्त होगा कि इस प्रदेश की अधिकांश नदियॉ सदानीरा नहीं है। इनमें से अनके ग्रीष्मकाल में बिल्कुल सूख जाती है। इस जल संकट के कारण ही बुन्देलखण्ड में चंदेलों और बघेलखण्ड में कलचुरियों द्वारा अनेक सरोवरों का निर्माण कराया गया। यहॉ पर यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि चंदेलो के तीन प्रसिद्ध नगर कालिंजर, अजयगढ़ और खर्जराओं किसी नदी तट पर स्थित नहीं है। वे जलपूर्ति के लिये स्वयं पर निर्भर थे। कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा कालिंजर दुर्ग की जलपूर्ति व्यवस्था में बाधा उत्पन्न कर देने के कारण ही परमर्दि को आक्रान्ता के सामने घुटने टेक देना पड़ा।[4]

विवेच्य क्षेत्र के स्थान नामों का अध्ययन करते समय हमने इस प्रदेश के उन सभी स्थानों को सम्मिलित करने का प्रयास किया है, जिनका उल्लेख साहित्य और अभिलेखों में मिलता है। यहॉ के कुछ नगरों ने विवेच्यकाल में बड़ी ख्याति अर्जित की थी। इस ख्याति का समुचित अभिज्ञान करने के लिये स्थान नामों को यहॉ चार भागों राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक में विभाजित किया गया है। इनके आधार पर स्थान नामों का विवेचन इस प्रकार है–

राजनीतिक प्रभाव – प्रदेश के कुछ नगर प्राचीन युगों से राजनीति के विख्यात केन्द्र रहे हैं। इन केन्द्रो में से ऐरन और कालिंजर उल्लेखनीय है। ये नगर राजनीतिक गतिविधियों के अतिरिक्त सांस्कृतिक आयोजनो के भी महान केन्द्रो के रूप में पर्याप्त समय तक विख्यात रहे। अन्य केन्द्रों में गुप्तकालीन उचेहरा तथा पूर्व मध्यकालीन देवगढ़, सैन्य शिविर परेई, सिंहडौणी, बिलासपुर, टेहरी, रेवापत्तला आदि उल्लेखनीय है। इन स्थानों पर समय समय पर दौरा करते हुये शासक और राजपुरूष रूकते थे। वे यहॉ स्थानीय प्रजा की कठिनाइयों का अध्ययन और निराकरण करते होंगे। ऐसा हमें इसलिये भी संभव प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र के प्राय: सभी दानपत्र राजधानी से जारी नहीं किये गये। वे शासन की प्रमुख इकाइयों यथा विषय, पत्तला आदि से भी उद्घोषित नहीं हुये। उनकी घोषणा हुई है उन शिविरों से जहॉ शासक कुछ समय के लिये रूकते थे और नागरिकों तथा राजपुरूषों को उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिये पुरस्कृत करते थे। इन शिविरों में से कुछ का उल्लेख सैन्य शिविरों के रूप में किया गया है। ऐसा ही एक शिविर सिंहडौणी था, जिसका उल्लेख त्रैलोक्यवर्मा के टेहरी ताम्रपत्र और हरिराज के भारतकला भवन ताम्रपत्र में हुआ है। अनुमान होता है कि रक्षा के लिये केवल राजधानी या दुर्गों में ही सेना न रखकर इस प्रकार के शिविरों में भी उसे रखा जाता था। चंदेल साम्राज्य पर मुस्लिम और वाहमान आक्रमणों का उत्तर की ओर से सतत् भय था, अत: ललितपुर जिला (उ.प्र.) के अंतर्गत स्थित इस चौकी का महत्व अपने आप स्पष्ट हो जाता है। विवेच्य क्षेत्र दक्षिण–पूर्वी भाग बघेलखण्ड से प्राप्त किसी भी अभिलेख से इस प्रकार के शिविरों का ज्ञान नही होता। यह भी संभव है कि त्रैलोक्यवर्मा के शासनकाल में बघेलखण्ड के अधिकांश कलचुरि क्षेत्र पर चंदेलों का अधिकार हो गया था। अत: इस ओर से उन्हें किसी प्रकार के राजनीतिक संकट उत्पन्न होने की न तो आशंक ही थी और न इस प्रकार संकट उत्पन्न हो जाने पर उसे रोकने की सामर्थ्य।

सांस्कृतिक प्रभाव – विंध्य क्षेत्र की संस्कृति देश की सांस्कृतिक परम्परा से पृथक नहीं है। भारत की महान सांस्कृतिक परम्परा के सागर में एक सरिता की तरह वह निरन्तर प्रवहमान होते हुये भी उसी में विलीन हो जाती है। अपनी भौगोलिक, ऐतिहासिक और सामाजिक इकाई के कारण सांस्कृतिक इकाई का पृथकत्व किया जा सकता है। इस दृष्टि से अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि विन्ध्यक्षेत्र की संस्कृति के दो रूप हमें प्राप्त होते है–

1. **सामंतवादी सांस्कृतिक परम्परा**
2. **जनवादी सांस्कृतिक परम्परा**

विन्ध्यक्षेत्र की अधिकांश सामंतवादी सांस्कृतिक परम्परा अवसरवादी रही है। धर्म तथा साहित्य के क्षेत्र में अपार अभिरूचि होते हुये भी सत्ता के साथ मिलजुलकर चलने के कारण इसे स्वतंत्र व्यक्तित्व नही मिल सका है। जनवादी सांस्कृतिक परम्परा में पृथक व्यक्तित्व आरोपित किया जा सकता है। सामाजिक दृष्टि से पिछड़े इस अॅचल में तमाम रूढ़िवादी परम्परायें अजगर

की तरह आसन मारे बैठी हुई है, इससे सामाजिक सांस्कृतिक जीवन का उद्देश्य केवल उत्तराधिकार को आगे बढ़ाना और तीर्थ यात्रा करके पुण्य कमाना ही अधिक रहा है। वैवाहिक जीवन का उद्देश्य संतानोत्पत्ति ही समझा गया। संतान न होने पर सूर्य पूजा का विधान है। सूर्य और देवी पूजा ही यहॉ की संस्कृति के मूल तत्व में है। जादू, टोने टोटके और तंत्र मंत्र का प्रभाव भी यहॉ बहुत है। बीमार को झाड़-फूँककर अच्छा करने का प्रयत्न करके लोग प्रयत्न करके लोग प्रसन्न होते है। कहना चाहिये कि यहॉ की जनवादी संस्कृति में आदिम संस्कृति के तत्व पर्याप्त मात्रा में मिलते है। लोक कला और लोक संगीत में शास्त्रीय तत्व अधिक है। यहॉ के लोगों में क्लासिकल है और कला भी है।

सब मिलाकर विन्ध्यक्षेत्र अपने आप में पूर्ण इकाई है, उसका अपना साहित्य है और अपनी कला और संस्कृति है पर प्रकाशन, प्रचार और प्रसार की कमी के कारण देश के साहित्य और संस्कृति के इतिहास में उसका स्थान नगण्य है।

धार्मिक प्रभाव – सभ्यता के प्राचीनकाल से विवेच्यक्षेत्र में धार्मिकता का प्रसार रहा है। रामायण में राम-वनवास के भूगोल का वर्णन करते समय बुन्देलखण्ड के अनेक स्थानों का उल्लेख मिला है। महाभारत मे वर्णित चेदि नरेश वसु का चरित्र भी कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। वह इन्द्र का मित्र था। वह पहला व्यक्ति था जिसने इन्द्रध्वज की स्थापना कर इन्द्र की पूजा प्रचलित की। उक्त ग्रंथ के नारायणिकाखण्ड में वैष्णव धर्म से संबंधित उठे विवाद में उसे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुये चित्रित किया गया है। वैदिक पौराणिक धर्मो के अतिरिक्त बौद्ध और जैन धर्मों का भी यहॉ प्रसार हुआ।

क्षेत्र के धार्मिक स्थानों में कालिंजर, चित्रकूट, विराधकुण्ड, सरभंग आश्रम, सुतीक्ष्ण आश्रम, अत्रि आश्रम, कालप्रिय (कालपी), देवगढ़, गोलकीमठ, चंद्रेह, खर्जुरवाहक (खजुराहो) आदि प्रमुख है। उपर्युक्त स्थानों में से कालिंजर और चित्रकूट की धार्मिक परम्परा अक्षुण्य रही है।[5]

आर्थिक प्रभाव – विन्ध्यक्षेत्र के स्थान-नामों से यहॉ की आर्थिक गतिविधियों पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ा है। इन स्थान-नामों से विदित होता है कि जिस प्रकार आज के भारत के अनेक नगर अपने उत्पादन के लिये विख्यात है, उसी प्रकार प्राचीन भारत में भी हमारे प्रदेश के कुछ नगरों ने विश्वव्यापी कीर्ति अर्जित की थी। ऐसा ही एक केन्द्र वैश्यनगर था। जैसा कि इसके नाम से प्रतीत होता है कि इसकी अधिकांश आबादी वैश्यों की थी, जो प्राचीन भारत का प्रमुख व्यवसायी वर्ग था। वैश्यनगर का समानवाची कल्चुरि अभिलेखों का वर्णियापाटक है। ये नगर विवेच्यक्षेत्र में स्थित न थे तथापि इनसे व्यापारिक स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। वैश्यनगर निस्संदेह बौद्धयुगीन भारत का एक प्रमुख व्यवसायिक नगर था। इसी प्रकार चेदि जनपद बालकलोपकारगाम और बघेलखण्ड का लवणनगर उल्लेखनीय है। बालकलोपकारगाम नमक बनाने के लिये विख्यात था। लवणनगर में या तो नमक बनाया जाता रहा होगा या फिर यहॉ नमक की बड़ी मण्डी रही होगी। इसी प्रकार बौद्ध साहित्य और बाराह ताम्रपत्र का उदुम्बरपुर या विषय और चंदेल अभिलेखों का खर्जुरवाहक भी उल्लेखनीय है। उदुम्बर गूलर वृक्ष है। खर्जुरवाहक में खजूर वृक्षों का आधिक्य रहा होगा। एक कल्चुरि अभिलेख में हस्तिग्राम का नाम आया है। यहॉ हाथी पालने और बेचने वालों का निवास होने के कारण उसका नाम हस्तिग्राम पड़ा होगा। आमीरपल्ली शब्द से अहीरों की बस्ती का बोध होता है।

निष्कर्ष – जिस क्षेत्र में जितने अधिक आवागमन के मार्ग होंगे वह उतना ही उन्नत होगा। यातायात के मार्गो से प्रदेश का एक भाग दूसरे से सम्बद्ध होता है। प्रशासनिक दृष्टि से यातायात के मार्गों की बड़ी उपयोगिता है। ये यात्रा मार्ग किसी भी क्षेत्र की धार्मिक एकता के साथ साथ राजनीतिक एकता बनाने में योगदान देते रहे है। प्राचीन समय से ही कालिंजर, चित्रकूट तथा पूर्व मध्ययुग में देवगढ़, खजुराहो, अहार, पपोरा, गोलकीमठ, चंद्रेह आदि पौराणिक तथा इतर धर्मों के केन्द्र रहे हैं। ऐसा केवल आवागमन के मार्गों की सुविधा के कारण ही संभव हो सका।

उपरोक्त शोध पत्र के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भूगोल ही मुख्य रूप से इतिहास का निर्माण करता है उसकी स्थिति, विस्तार एवं धार्मिक, आर्थिक सभ दृष्टिकोणों यदि भौगोलिक स्थिति अच्छी होगी तो वहॉ का सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, धार्मिक वातावरण उपयुक्त होगा और उस राज्य एवं वहॉ निवास करने वाले व्यक्तियों का चहुमुँखी विकास होगा इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि इतिहास और भूगोल एक दूसरे के पूरक है एवं विकास के पर्याय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. जनरल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी पृष्ठ 241,242
2. डॉ0 लाहा – ज्योग्राफी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म पृष्ठ 45 एवं 85 में इस वन का नाम मक्करष्ठ वन दिया है। जिसे वर्तनी की अशुद्धि ही मानना चाहिये। हिस्टारिक ज्योग्राफी ऑफ एन्शियन्ट इण्डिया पृष्ठ 320 में उन्होने ठीक कर दिया।
3. Dr. Ramakant Sharma - Impact of forming on rural economy in rewa plateau
4. HORE, Land W.H. 1920 "India at the death of Akabar" P. 22 Landoy.
5. रीवा दर्पण : श्री गुरू रामप्यारे अग्निहोत्री।

****

अवध का नवाब सआदत खां बुर्हानुल्मुल्क व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. आकाश ताहिर *

प्रस्तावना – किसी समकालीन इतिहासकार या अपरकालीन ने मीर मुहम्मद अमीन की निश्चित जन्म–तिथि या उसके प्रारम्भिक जीवन की किसी घटना को दिनांकगत लेखबद्ध करने की चिन्ता न की। परन्तु हम जानते हैं कि अपनी मृत्यु के समय, जो 9 जिल्हिज 1151 हि. तदनुसार 19 मार्च 1749 ई. को हुई, वह लगभग 60 चान्द्र वर्ष की आयु का था। वृद्धतर सामन्त खां दौरा 69 चान्द्र वर्ष का था। सआदत खां, जो उन दोनों से छोटा था और खां दौरा के देहान्त पर जिसकी मनोकामना मीर बख्शी के पद को प्राप्त करने की थी, 60 वर्ष से बहुत अधिक आयु का नहीं हो सकता है–यदि इतना हुआ भी। अत: अज्ञात समकालीन का कथन केवल इस बात पर बल नहीं देता है कि सआदत खां का मृत्यु–पर्यन्त असाधारण रूप से अच्छा स्वास्थ्य रहा, परन्तु उसकी मृत्यु के समय उसकी अनुमानित आयु का पता भी देता है जो अक्षरश: शुद्ध नहीं हो सकता है।[1]

यदि सआदत खां के चित्रों में, जो लखनऊ में सुरक्षित हैं, अपने जीवित मूल के प्रति कुछ भी सत्यता है, तो वह अवश्य लम्बा, और वर्ण, चौड़े मस्तिष्क, चमकीली आंखों और लम्बी, उठी हुई नाक का सुन्दर मनुष्य रहा होगा। शास्त्रविहिन मुस्लिम प्रथा के अनुसार बीच से कटी हुई लम्बी मुछें और छोटी ईरानी दाढ़ी वह रखता था। वृद्धावस्था में उसके लम्बी तरल, सफेद दाढ़ी थी जिससे उसका शरीर और भी प्रभावशाली दीखता था। उसके अंग सुडौल थे, शरीर रचना पुष्ट, और मृत्युपर्यन्त उसका स्वास्थ्य असाधारण रूप से अच्छा रहा।

सआदत खाँ अपने स्वभाव और वेश भूषा में सरल और आडम्बर रहित था, समासनों से स्पष्ट और स्वतन्त्र, अपने मित्रों और आश्रितों के प्रति विचारशील और कृपालु। परन्तु अपने से बड़े व्यक्तियों से उसकी नहीं बनती थी और जब वह शक्तिसम्पन्न हो गया वह उच्च सामन्तों और बादशाहों की संगत की अपेक्षा दीन, एकान्तवासियों का साथ अधिक पसन्द करता था। उसका चरित्र धृष्ट था और जैसा कि सर बुलन्द खां न ठीक ही कहा था वह सदैव हफ्तहजारी के गर्व और शान से चलता था।[2] तब भी व्यवहार में सआदत खां कर्कश और असभ्य नहीं था। वह सुन्दर आचरण, संस्कृत प्रकृति और उत्कृष्ट रूचियों का व्यक्ति था। इन गुणों को कासिल लाहौरी एक उपयुक्त फारसी वाक्य खण्ड–हुस्ने अखलाक(सुशीलता) द्वारा व्यक्त करता है। वह विनीत, समाज–प्रिय, उदार और प्रसन्नचित्ता था। विलियम होये के 'दिल्ली के संस्मर्ण' में एक अज्ञात समकालीन कहता है–वह इतना प्रसन्नचित्त और हँसमुख था, इतना स्वतन्त्र और सरल कि 60 वर्ष की आयु पर भी, जब उसकी दाड़ी प्राय: सफेद हो गई थी, उसके मस्तिष्क पर एक भी झुरी न थी। प्राय: सब ही ईरानियों की तरह उसके हृदय में भी कवित्व का संचार था और वह कभी–कभी 'अमीन' के उपनाम से कविता लिखता था। अलीकुली खां दागस्तानी द्वारा संकलित 'रियाजु स्शोवरा' में उसकी कुछ कवितायें संग्रहीत हैं। सुन्दर उपवनों का उसे प्रेम था, परन्तु सुन्दर स्थापत्य के प्रति उसमें कोई उत्सुकता न थी। उसके सारे भवन साधारण आवश्यक थे जो समय और ऋतु के विनाश का सामना न कर सके और शीघ्र ही शीर्ण हो गये। फैजाबाद में उसके अनभिमानी महलों का यही भाग्य हुआ।[3]

सआदत खाँ मुख्यतया वीरोचित गुण सम्पन्न योद्धा था, बड़े सैनिक के लगभग सब ही गुण उसमें थे–असाधारण शारीरिक क्षमता, अदम्य साहस, नि:शंक उत्साही प्रकृति, सतर्कता, अथक्य सामर्थ्य और परिश्रम सहनशीलता। परन्तु उसके प्रमुख गुण, जिनके कारण वह अपने शत्रुओं के विरूद्ध सफलता प्राप्त कर सका, उसकी व्यक्तिगत शौर्यता और उसका लोह संकल्प थे। अपनी टाँग में घाव से तीन मास तक पीड़ित होने पर भी, जो बिगड़ कर नासूर हो गया था, सआदत खाँ फैजाबाद से 450 मील दूर करनाल पहुँचने के लिये एक मास तक सतत् कूच करता रहा और बिना एक दिन विश्राम किये ईरानियों से अपने आगमन के दूसरे ही दिन उसने युद्ध किया।[4] सब युद्धों में जो वह लड़ा उसने विशेष भाग लिया। वह प्रथम पंक्ति में अपने को नि:शंक झोंक देता था। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि महान युद्ध संचालक के कुछ गुण उसमें न थे। उसके किसी युद्ध में भी हमको कोई नियमित योजना या चतुर संयोग नहीं मिलता है। भिन्न–भिन्न स्थितियों के अनुकूल वह अपनी सैनिक चालों को बदल नहीं सकता था–अत: आगरा के जाटों के विरूद्ध उसको हेय असफलता उठानी पड़ी। शत्रु से रण होने के पूर्व अधीरता और अविचार की प्रवृत्ति उसके सारे अस्तित्व में व्याप्त हो जाती थी। परन्तु स्वयं रण में वह शान्त और गम्भीर रहता था।[5]

जब वह अवध का राज्यपाल था, सआदत खाँ 50 हजार की नियमानुसार सेना रखता था जो आवश्यकता पड़ने पर बढ़कर बहुत बड़ी संख्या को पहुँच जाती थी। तोपखाना भी उसके पास बहुत था। उन दिनों निस्सन्देह सैनिक परेड और अनुशासन न थे। परन्तु स्वयं सआदत खाँ के नेतृत्व में रणस्थल में सतत् सेवा और कठिन श्रम में व्यस्त रखता था कि यह कार्य उसकी सेना के लिये सुसाध्य हो गया कि एक दिन में 40 कोस के वेग से कूच कर लें।[6]

सआदत खाँ की सेना में प्रत्येक सैनिक को 30) प्रति मासिक से वेतन मिलता था। परन्तु वह अपने सैनिकों का मित्र था और वह उनकी नियमानुसार मासिक वेतन देने के अतिरिक्त ऋण और उदार पुरस्कारों से भी सहायता देता था। उसकी मृत्यु पर यह पता चला कि उसकी सेना दो करोड़ और कई लाख रूपयों का ऋण उसको चाहती थी।[7]

दक्षिण में आसफजाह निजामुल्मुल्क की तरह सआदत खाँ ने इसको अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य बना लिया था कि वह अवध में अपने को

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

वास्तविक रूप से स्वतन्त्र कर ले और उसको अपने वंश के परम्परागत अधिकार में कर ले। इस उद्देश्य को बिना बहुत कठिनता व परिश्रम के उसने सिद्ध कर लिया। बिना तकल्लुफ उसने राजाज्ञाओं का अवलंघन किया जो उसने अवध छीनने के विचार से उसको दिये जाते थे। मुहम्मदशाह के राजत्व काल के 9वें वर्ष में उसका आगरा को स्थानान्तर हुआ।[8] जब यह नयी आज्ञा उसको प्राप्त हुई, अपने कार्यभार पर जाने का बहाना करके वह दिल्ली से चल दिया। परन्तु जैसे ही वह आगरा पहुँचा वह बाई ओर मुड़ गया, यमुना को पार किया और जल्दी ही अवध पहुँच गया।[9]

जब उसने अपने को अवध का एक अधिपति मान लिया, सआदत खाँ ने उसके साथ अपना ऐक्य स्थापित कर लिया, और अपना प्राय: सारा समय उसकी सीमाओं के अन्दर ही बिताता था। उसने अपव्यवस्था का दमन किया और प्रान्त में स्थायी सरकार स्थापित की। वह सब बड़े जमीनदारों को निस्सन्देह निर्मूल न कर सका, परन्तु उनको अपने वश में रखने में वह पूर्णतया सफल हुआ और अपनी विवेकपूर्ण और सहनशील नीति से उसने अपने शासन के प्रति उनका विरोध दूर कर दिया।[10] छोटे जमीनदारों और कृषकों ने उसके शासन का स्वागत किया क्योंकि शक्तिशाली सरदारों के भ्रष्टाचार से और लूटमार और अराजकता से उनकी रक्षा हुई जो राज्यपाल के जल्द जल्द परिवर्तन पर होते थे और सआदत खाँ ने प्रजा को उसका बदला भी अच्छा दिया।[11]

सआदत खाँ केवल सफल सैनिक से बड़ा ही था। उसको नागरिक शासन का कुछ ध्यान था। समकालीन इतिहासकार इस बात की साक्षी देते हैं कि 17वीं शती के अन्तिम चरण से किसी राज्यपाल के शासन की अपेक्षा उसका अवध का शासन बहुत अच्छा था और प्रजा सन्तुष्ट और समृद्ध थी।[12] कृषकों से अधिक से अधिक लगान लिये बिना उसने राजस्व को बहुत बढ़ा दिया और अपने अर्थ विभाग को संभाल लिया।[13] यदि गुलामअली का विश्वास किया जाये सआदत खाँ 9 करोड़ नकद रूपये छोड़ कर मरा। यदि दो करोड़ रूपये जो उसके उत्ताराधिकारी अबुल्मन्सूर खां ने नादिरशाह को दिये, जो अवध की सूबेदारी पर मुक्तिदण्ड के रूप में लगाये गये थे, और दो करोड़ और कई लाख रूपये जिसका ऋण उसके सैनिक उससे लिये हुए पाये गये।[14] गुलामअली के अनुमान में जोड़ जाए तो कोई कारण नहीं कि यह संख्या अविश्वास्य मालूम हो। अपनी विषाल स्थायी सेना पर उसके व्यय पर और अपने नातेदारों, आश्रितों, ईरानी पुरूषार्थियों और राजदूतों के प्रति उसकी उदारता पर विचार करते हुए यह भारी धन संचय सआदत खाँ के अर्थ चातुर्य को गौरव देता है।[15]

सामान्य स्थिति में अपने आश्रयदाताओं और नियोजकों के प्रति सआदत खाँ स्वामिभक्त और कृतज्ञ था। कई अवसरों पर अपने भूतपूर्व स्वामी सर बुलन्दखाँ के प्रति उसके कृतज्ञ आचरण की साक्षी मुर्तजा हुसैन खां देता है। वह उन थोड़े से सामन्तों में था जो साम्राज्य के गौरव के प्रति सतर्क और सचेष्ट थे। 19 वीं शती के चतुर्थ दशक में उत्तर भारत में मराठों के प्रवेश के प्रति मुगल प्रतिकार की वह आत्मा था और अपने स्वामी के पक्ष से ईरानी आक्रान्ता का सामना करने में वह सर्वप्रथम था। परन्तु यह सब उसी समय तक जब तक ये उसकी अपनी उन्नति और उत्कर्ष की उपसित योजनाओं में बाधक न बन जायें, जिनको अग्रसर करने में वह एक समान कृतज्ञता, स्वामिभक्ति और देश भक्ति के प्रति कोई ध्यान न देता था।[16]

अपने महान आश्रयदाता सैयद हुसैन अली खां की हत्या में उसने सक्रिय भाग लिया क्योंकि वह जानता था कि राज्यपरिवर्तन की आकुलता से उसको अधिक लाभ पहुँचेगा। अपने सम्राट और स्वामी मुहम्मद शाह का उसने विश्वासघात किया क्योंकि वह समझा कि उसकी नादिरशाह से अच्छी बनेगी। सआदत खाँ के केवल एक पुत्र था जिसका देहान्त युवा अवस्था को प्राप्त करने के पूर्व अपने पिता के जीवनकाल ही में हो चुका था। उसने पाँच पुत्रियों छोड़ी जिनमें से सबसे बड़ी अबुल्मन्सूर खां को ब्याही थी जो अवध के राज्यपाल के स्थान पर अपने ससूर का उत्तराधिकारी हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इमादुस्सआदत 5 और 30 ; सवानेहात 1 बा.
2. इमादुस्सआदत 30
3. कासिम 213; हादिक 395
4. मैल्कम का फारस का इतिहास–जिल्द 1, पृष्ठ 400
5. लेटर मुगल्स 1, 130, 130–136
6. सियारूल्मुताखरीन 2, 468
7. दिल्ली समाचार का परिशिष्ठ पृ. 1
8. दिल्ली समाचार का परिशिष्ठ पृ. 2
9. इस्मादुस्सआदत 30
10. फैजाबाद के संस्मरण पृ. 3
11. सियारूल्मुताखरीन 2, 475
12. हादिक 384; पेश्वा दफ्तर संग्रह, जिल्द 15, पृ. 20
13. हादिक 385; इलियट 8 पृ. 343 पर सआदते–जावेद।
14. इलियट 8 पृ. 46 पर रूस्तम अली।
15. दिल्ली संस्मरण का परिशिष्ट, पृ. 1
16. सरकार, लेटर मुगल्स 2 पृ. 313

****

आतंकवाद के कारण और उसके विशिष्ट क्षेत्र

नीलेश शर्मा *

प्रस्तावना – आज दुनिया भर में आतंकवाद एक प्रमुख समस्या बन गई है। आतंकवाद के विभिन्न क्षेत्र है लेकिन कारण सिर्फ और सिर्फ एक है, विभिन्न देशों की खुफिया ऐजेन्सियों द्वारा खड़े किये गये संगठन। अपने हितों की पूर्ति के लिए चाहे वो अमरीका की सी.आई.ए. द्वारा सोवियत रूस के खिलाफ अफगान मुजाहिद्दीनों का संगठन हो, या आई.एस.आई. द्वारा लश्करे–ए–तोएबा और हिजबुल मुजाहिद्दीन तथा बब्बर खालसा या भारतीय रॉ द्वारा एल.टी.टी.ई. और मुक्तिवाहिनी तथा बलुचिस्तान लिबरेशन आर्मी।

जब एक देश में आतंकवादी घटना होती है तो तुरंत उसके दुश्मन देश के लिए वो स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई हो जाती है। कश्मीर का आतंकवाद पाकिस्तान के हिसाब से स्वतंत्रता संग्राम है। पाकिस्तान की बलुचिस्तान लिबरेशन आर्मी द्वारा आतंकवादी घटना हमारे हिसाब से वहां का स्वतंत्रता संग्राम है इसी तरह मुक्तिवाहिनी ने बांग्लादेश को स्वतंत्रता दिलाई लेकिन पाकिस्तान की नजरों में वो एक आतंकवादी संगठन था। हमास फिलिस्तीनियों के लिए स्वतंत्रता संग्राम के लिए लड़ने वाला संगठन है लेकिन इजराइल के लिए वो एक आतंकवादी समूह है।

अगर हम आतंकवाद की जड़ में देखें तो हमे विभिन्न देशों की खुफिया ऐजेंसिया दिखेगी। पंजाब के आतंवाद में पाकिस्तान की आई.एस.आई. का हाथ। आज हम सोचते है कि पंजाब पुलिस कमिश्नर ने खालिस्तान मूवमेंट खत्म करवाया। लेकिन इस विषय पर गहन शोध करने पर हमें यह परिरणाम मिलता है कि पंजाब का आतंकवाद रॉ द्वारा समाप्त हुआ।

खालिस्तानी आतंकवादी को पूरा समर्थन, पैसा, और हथियार पाकिस्तान की आई.एस.आई. मुहैया करा रही थी। भारतीय रॉ के पूर्व केबिनेट सेकेटरी बी.रमन ने अपनी पुस्तक द काउबॉयस ऑफ रॉ (the Cowboys of Raw)में बताया है कि आई.एस.आई. ने पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में खालिस्तानी आतंकवादियों के ट्रेनिंग कैंप लगाकर उन्हें भारत में आतंकवाद फैलाने के लिए प्रशिक्षित किया था। इसकी जानकारी भारत को उस वक्त अफगान खुफिया ऐजेन्सी खाद द्वारा मिली थी अत: 1980 के मध्य रॉ ने अपने संगठन के अंदर दो टास्क फोर्स बनाई टीम एक्स – (सी.टी.आई. –एक्स) और टीम – जे – (सी.टी.आई. –जे) यह टास्क फोर्स आई.एस.आई. के आतंकवाद के प्रतिक्रिया स्वरूप बनाई गई थी। टीम –एक्स का कार्य साधारण रूप से पाकिस्तान को निशाना बनाना था एवं टीम जे का कार्य सीधे–सीधे पाकिस्तान में चल रहे खालिस्तानी ट्रेनिंग कैम्प को निशाना बनाना था। पाकिस्तानी मिलेट्री एक्सपर्ट आयसा सिद्दकी के अनुसार इन टाक्सफोर्सों ने पाकिस्तान में कई आतंकवादी घटनाऐं की।

भारतीय पत्रकार और फ्रंटलाइन मेंगजीन के सम्पादक श्री प्रवीण स्वामी ने लिखा है कि पाकिस्तान के कई मुख्य शहरों विशेषकर करांची और लाहौर में सिलसिलेवार बम धमाके हुए जिसने आई.एस.आई. प्रमुख को भारतीय रॉ से समझौता करने पर मजबूर कर दिया। यह समझौता तत्कालीन जॉर्डन के राजकुमार श्री हसन बिन जलाल जिनकी पत्नी पाकिस्तान मूल की थी द्वारा कराया गया। इसके अनुसार आई.एस.आई. प्रमुख ने ये कबूल किया कि वे भारत में किसी भी प्रकार की खालिस्तानी आतंकी घटना को तब तक रोक देंगे, जब तक रॉ पाकिस्तान में किसी भी प्रकार की आतंकी घटना को नहीं करता। लेकिन 1997 में श्री आई.के. गुजराल के प्रधानमंत्री बनने पर उन्होने रॉ के ये दोनो प्रतिक्रियात्मक कार्यवाही वाले समूह समाप्त करवा दिये।[1] 1965 के युद्ध में श्रीलंका ने पाक लड़ाकू विमानों को ईधन में मदद प्रदान की थी। अत: श्रीलंका की हरकतों पर काबू करने रॉ ने एल.टी.टी.ई. जो श्रीलंका के तमिलों का अलगाववादी समूह था को खड़ा करना शुरू कर दिया, रॉ ने एल.टी.टी.ई. को हथियार प्रशिक्षण देना शुरू कर दिया। लेकिन 1980 तक जब एल.टी.टी.ई. की आतंकी घटनाऐं बढ़ गयी और उसने भारत के तमिलनाडु के तमिलों को अलगाव के लिए उकसाना शुरू कर दिया तो रॉ ने एल.टी.टी.ई से अपने हाथ पीछे खींच लिए और 1987 में भारत श्रीलंका सरकार के साथ एक पेक्ट बनाया और भारतीय शांति सेना से एल.टी.टी.ई ने भारत सरकार की इस कार्यवाही का बदला 1997 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की हत्या कर लिया।[2]

श्री प्रवीण स्वामी के लेख अनुसार प्रतिक्रियात्मक कार्यवाही के रूप में अमरीकी एजेन्सी सी.आइ.ए ने 1962 के भारत –चीन युद्ध के बाद भारत के तिब्बतीय शरणार्थीयों को प्रशिक्षित कर 'स्टेबलिसमेंट 22' नामक संगठन बनाया जिसका कार्यचीन में आतंकी घटनाओं को अंजाम देना था।[3]

अफगान में रूसी शासन को खत्म करने अमरीका सी.आइ.ए ने लादेन को खड़ा किया जो बाद में उन्हीं के लिए सरदर्द बना। वही लादेन जो पहले अमरीका के लिए स्वतंत्रता सेनानी था। अब एक आतंकी था।[4]

जिस तरह पाकिस्तान कश्मीर में हिजबुल मुजाहिद्दीन को समर्थन दे रहा है उसी तरह भारत ने 1970 में मुक्तिवाहिनी को प्रशिक्षण और समर्थन दिया था।[5]

आज पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रांत में आजादी की लड़ाई चल रही है। 2011 में बी.बी.सी. को दिए इन्टरव्यू में परवेश मुसर्रफ ने कहा कि रॉ बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी को अफगानिस्तान के रास्ते हथियार पहुँचा रहा है बलुचिस्तान लिबरेशन आर्मी का नाम पाकिस्तान में एक आतंकवादी संगठन के रूप में शुमार है। जिसमें मुम्बई हमले की तर्ज पर अप्रैल 2012 में लायारी करांची में आतंकी हमला किया। जिसमें कई पुलिस वाले मारे गये बलुचिस्तान की कई गैस पाइपलाइन व पाक आर्मी के कानवे उड़ाने की जिम्मेदारी इस संगठन ने ली है ।The express tribune April 29 (2012).(6,ao 7).

आज आतंकवाद का स्वरूप बहुत हद तक बदल गया है। आज के इस हाईटेक दौर में आतंकवाद भी हाईटेक हो गया है। असम में हुई घटना इसी का एक परिणाम थी। आई.बी. के अनुसार पाकिस्तान ने एक साजिश के

*शोधार्थी (इतिहास) रा.दु.वि.वि., जबलपुर (म.प्र.) भारत

तहत्, असम में गैर कानूनी बंगलादेशी प्रवास के कारण स्थानीय बोडो लोगों और प्रवासी बंगलादेशियों में उत्पन्न समस्या को फेस बुक के जरिये चिंगारी दी गयी फेस बुक में सुनामी में मरे लोगों की तस्वीर लगाकर पाकिस्तानी मेसेज पर यह कहा गया कि असम की घटना है जहां मुस्लिमों पर जुल्म हो रहा है यह तस्वीर भारत के सारे राज्यों मे फेस बुक के जरिये फैलाने की कोशिश की गयी। मुम्बई के आजाद मैदान में जो उपद्रव असम की घटना को लेकर हुआ। आई.बी. के द्वारा पाक से उस दिन आने वाले फोन कॉल्स की रिकार्डिंग के अनुसार ये एक सुनियोजित पाकिस्तानी चाल थी ताकि भारत में धार्मिक दंगे हों। इसी प्रकार बैंगलोर और हैदराबाद में रह रहे, असमी छात्रों को पाक से अफवाह फैलाने वालों के द्वारा एस.एम.एस. भेजे गये। जिनके अनुसार उन पर कभी भी एक विशेष धर्म के लोगों द्वारा हमला होने की चेतावनी थी, जिसमें कई असमी छात्र आसाम लौटने को मजबूर हुए फिर भारत सरकार द्वारा जाँच के बाद जब घटना की वहज समझ आई तब भारत सरकार ने दो दिनों में 222 पाकिस्तानी साईट्स और पेजेस को भारत में बंद करवा दिया।[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बी. रमन, द काउबॉय ऑफ (The cowboys of RAW) पृ.सं. –83 एवं 138 लेंसरप्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
2. वही, पृ.सं. – 235
3. www.ctr.org./india/RAWप
4. बी. रमन, पूर्वोक्त, पृ.सं. – 81 एवं 82.
5. वही, पृ.सं. – 260 एवं 53.
6. बी.बी.सी. साक्षात्कार – 2011
7. द एक्सप्रेस (The Express Tribune) प्रकाशन 29 अप्रैल 2012
8. सौजन्य – आज तक।

****

Role Of Communication In Development Of Rural Society

Vasudha Jahagirdar *

Abstract - The present age has been rightly termed as an 'information age'. Information plays an immense value in our society. Information has become an integral part of our daily life. Now people want adequate and authentic information as early as possible. The mass media namely newspaper, radio and television are catering to this important need of people. For the rapid and overall development of a country it is must that the citizen of that country are well versed with the happenings around them. Communication is the core activity of human association in general and progress, as well as development in particular. A man can survive only in society and the survival in society is possible with communication. Communication is a vital part of personal life in the society. It is equally important in business, education, civilization, administration and other situations where people encounter with each other to satisfy their needs and wishes. Various forms of communication like print media (Newspapers, Magazines, Journals etc), electronic media (TV, Radio, Cinema, Computer, Mobile/Telephones, Internet etc) and folk and traditional media (Folk theatre, Dances, Puppet shows, Poetry etc.) maintains and animates the life. It leads people from instinct to inspiration through process and system of enquiry, command and control. It creates common pool of ideas, strengthens the feeling of togetherness through the exchange of messages and translates into action.

Introduction - India is a classical land of villages. Villages constitute the backbone of the country. Villages continue to contribute 40%of our national income. Villages, therefore, play a vital role in the life of the nation. If villages develop, the country shall automatically develop.

Development is primarily the activation of human and material resources in order to increase the production of goods and services, thereby leading to general progress and welfare of its people. Rural development has traditionally centred on the exploitation of land-intensive natural resources such as agriculture and forestry. However, changes in global production networks and increased urbanization have changed the character of rural areas.

The present age has been rightly termed as an 'information age'. Information plays an immense value in our society. Information has become an integral part of our daily life. Now people want adequate and authentic information as early as possible. The mass media namely newspaper, radio and television are catering to this important need of people. For the rapid and overall development of a country it is must that the citizens of that country are well versed with the happenings around them.

Various forms of communication like print media (Newspapers, Magazines, Journals etc), electronic media (TV, Radio, Cinema, Computer, Mobile/Telephones, Internet etc) and folk and traditional media (Folk theatre, Dances, Puppet shows, Poetry etc.) maintains and animates the life. It leads people from instinct to inspiration through process and system of enquiry, command and control. It creates common pool of ideas, strengthens the feeling of togetherness through the exchange of messages and translates into action. Electronisation and mechanisation in communication systems have provided opportunity to access the information rapidly, accurately and repeatedly. Role of communication in socio-economic and cultural development of rural areas has been recognised over the past two decades. The role of communication technologies in development of rural society can be understood from the following points.

Role of communication in Rural Development -

1) Mass Rural Education - Mass rural education means essentially informing, educating &communicating to the rural people using various communication technologies. Mass rural education is widely recognised as a support activity for various development programmes. With the help of the TV, radio, newspapers, films, mobile, internet etc, rural people are being informed about various development activities &events that are taking place in other corners of the world & they are motivated to do the work on same lines for the development of their village. Information and communication technologies such as video conferencing, email connecting system, audio and video conferencing, radio, television and other methods can provide a lot of information from different regions of the world. These communication technologies also improve the quality of education in rural areas

2) Healthcare and Nutrition - Lack of knowledge of nutrition leads to high maternal mortality and infant mortality rates. It is found that rural people have a low level of nutritional education. Low nutrition education explains the poor intake of vitamin-rich food, especially green vegetables, even though they are available in plenty in the village. Now, women, men

* Research Scholar, School of Social Sciences, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

and youth in rural areas are getting detail information about nutrition, various health problems and their prevention, vaccines and medicines available, importance of breast feeding during lactation period, importance of small family etc through TV, radio, internet and mobiles.

3) Natural Resource Conservation - Communication of the importance of natural resources and their conservation can be done by the way of interpersonal communication. But now a days, the means of communication like TV, radio, mobile, internet etc are also playing a vital role in sustainable use and conservation of natural resources. Community radio also can play a very important role in this task.

4) Empowerment of Rural Women - Women play a pivotal role in the development of any country. Women's status is the best indicator of progress of any society. Status and development of women influence the development of country. Right information given at the right time empowers the rural women and protects them from various problems. Various means of communication like TV, radio, mobile phone and internet are being used now, for empowering the rural women via awareness, education and information. Through these means of mass media women are given information regarding various govt. Schemes available for them (Ex. Maternity benefit schemes) importance of cleanliness and nutritious food, nearby health care centres, family planning programmes, information regarding rearing of children etc and are also helped in starting new small scale business at home or starting SHG's (self help groups) to make them self dependent.

5) Agriculture - Agriculture is the main stream of the Indian economy. It directly regulates the growth of economy. The main occupation of rural people is agriculture. As the scope for bringing more area under cultivation is limited, the only possible way to increase the yield is the adoption of new and improved agricultural practices and techniques, so as to meet out the long term food grain requirement of the country. Communication in agriculture is not only to inform and create awareness among the farmers but also to implement new ideas that change the mode of farming. For this purpose the massive programmes of cyber extension, digital interactive distance learning, online networks, computer- aided multimedia; internet and free online telephones etc. have been launched for the farmers. Some of the major extension technology systems and approaches are being used presently like Kisan call centre (1551), Cyber Extension, computer-internet connectivity etc. Modern communication technologies are helping farmers in agricultural innovations, market prices, pest infestations, weather alerts, bargain for fair prices, subsidised prices of fertilisers, new variety of seeds etc.

6) Planning and Programme Formulation - The effective planning must make a deliberate effort to determine what people want to do, can do and can continue to do in a sustainable way. Meaningful discussion, generated by people trained in interpersonal communication skills, and audiovisual tools, such as video or radio, can help the community to identify its true problems and priorities and where its capabilities and needs lie. This self-analysis can help a community to generate realistic proposals for new development initiatives and stimulates tremendous interest to have these initiatives succeed.

7) People's Participation & Community Mobilisation - The dynamic strategy behind people's participation and community mobilisation is to release the energy of rural people by building their confidence to make decisions and carry them out as a community in a self-reliant way and to see that they benefit from such efforts. Dialogue can be initiated and guided by field staff who have good interpersonal communication skills. Discussion tools such as flipcharts, audio-cassettes, slides and even video, can be used to help people visualize and reflect upon their own reality. Rural radio too can be a popular forum where local people do most of the talking about technical and cultural topics. These activities can lead to a serious diagnosis of problems and a search for solutions. Communication skills and media help people to visualize and cross that bridge more swiftly.

8) Changing Life-styles - Rural populations, find it increasingly difficult to cope with rapidly changing social conditions, which often lead to the development of unsettling life-styles. For instance, rural youth, often from fatherless homes, increasingly rebels against parental poverty. Pressed by peers, teenagers often drop out of school, fall for drugs, or end up in the gangs of city slums. Communication can focus on the long and sensitive process of changing behaviour and life-styles. Communication approaches can respond in a combination of ways. Mass media like TV, newspaper, radio can raise awareness and public understanding of the social implications of problems such as adolescent fertility, AIDS or drug abuse. Other communication activities can bring about informed processes of change among the audiences they intend to reach. Traditional communication activities based, for example, on street and village theatre, and using truly participatory methodologies, can pioneer attitudinal changes at the community level and stimulate nonthreatening environments in which teenagers wish to learn about life.

9) Protecting Rural Traditions, Culture and Arts - Development does not mean, leaving our own culture and accepting the western culture. Rural development and protection of rural traditions, culture and arts goes hand in hand with the help of modern communication technologies like TV, radio, cinema, internet etc. A new concept which is becoming popular in our country, which has a high potential for being used for furthering the cause of development is Community radio. This is a system of radio broadcasting which is for the people, by the people and of the people'. This is a very ideal tool for communication. Because they enjoy the scope of broadcasting programmes in their local languages, comprehensive and easily-understandable programme contents for the local masses, and concerning itself with only those aspects which have a direct and indirect relevance for the community etc. This medium has been

proving to be the most potential and emerging media tool for protecting rural culture and arts.

Conclusion - Various means of communication technologies are grouping day by day in developing countries and most of the countries are getting benefit from these technologies in different sectors of development like education, healthcare, mass mobilisation, planning process, preservation of traditional culture and arts, agriculture, women empowerment etc. But still there is lack of infrastructure and facilities in rural areas. Communication technologies can spread in rural areas by establishing computers centres and computer lab where the trained teachers can transfer their knowledge and skills for the development of rural population. Simply providing facilities and infrastructure is of no use. Rural men, women and youth should also take initiative to learn and use these technologies.

References :-

1. Communication techniques for mass rural education technology- Information forecasting and assessment council, Department of science and technology, Govt of India.
2. Grims, S. (1992). Exploiting information and communication technologies for rural development, Journal of Rural Studies.
3. Hawkridge,D and Jawoski.J and Mc Mohan, H. (1990) , Computers in the third word schools: example, exercise and issue.
4. Khodamoradi, S. and Abedi, M. (2011). The role of information and communication technologies (ICT) in rural development. Life science journal
5. Razaue Abdul, (2013). ICT(information and communication technology) Journal of agriculture and rural development of American science.
6. Sharma A, Role of information communication technology empowering rural women, Department of agricultural communication of G.B Pant University, Pant Nagar.

****

बिखरते रिश्ते समाजशास्त्रीय अध्ययन विशेष सन्दर्भ – रीवा शहर

डॉ. गौहर हुजैफा खान *

प्रस्तावना – पिछले कुछ दशकों में भारत के शहरी एवं महानगरों में व्यक्तियों के अतंवैक्तिक संबंधों में आमूल – चूल परिवर्तन आया है। भौतिकवादी प्रवृत्ति व्यक्तिवादी विचारधारा प्रतिस्पर्द्धा के युग में व्यक्तियों के पास माता – पिता पत्नी बच्चों के लिए वक्त नहीं रह गया है आपसी समझ और संवेदनशीलता धीरे – धीरे स्वभाव से गायब हो रही है। जीवन मूल्यों के संक्रमण काल में जो संबंध सबसे अधिक प्रभावित हुआ है वह है पति – पत्नी के रिश्ते।

भारत में परिवार पर कई अनुसंधान हुए है। के.एम. कपाड़िया 'मैरिज एण्ड फैमिली इन इण्डिया' में नवसारी जिले (गुजरात) के कुछ परिवारों का सर्वेक्षण भी किया। देसाई ने 'सम आस्पेकट्स आयु फैमिली इन महुवा', एम.एस. गोरे 'अर्बनाइजेशन एण्ड फेमिली चेन्ज' भारतीय परिवारों का महत्वपूर्ण अनुसंधान कार्य है। एक अन्य अध्ययन एम. इंदिरा देवी 1985 ने 'कामकाजी और गैर कामकाजी पत्नियों के शिक्षित दम्पत्तियों पर एक शोध अध्ययन किया। आराम और सुविधा में संबंधित निर्णयों में कार्यकारी और गैर कार्यकारी पत्नियों में उच्च विरोधाभास पाया गया महिलाओं की शिक्षा व रोजगार के कारण पतियों के प्रभुत्व को उदासीन करने में सहायता मिली। वर्मा एवं सिन्हा 1991 ने शोध अध्ययन में ज्ञात किया कि कृषक परिवारों में गृहप्रबंध से संबंधित निर्णयों से 52 प्रतिशत निर्णय पत्नी द्वारा, संतान संबंधी निर्णय 57 प्रतिशत संयुक्त रूप से लिए जाते है धन संबंधी निर्णय 60 प्रतिशत पति द्वारा लिये जाते है। सामाजिक धार्मिक परम्पराओं से संबंधित निर्णय 78 प्रतिशत पति द्वारा लिये जाते है।

सामाजिक सांस्कृतिक तकनीकी, आर्थिक एंव राजनैतिक परिवर्तनों ने परिवार की व्यवस्था को बहुत अधिक प्रभावित किया रिश्तों में भी बहुत अधिक प्रभावित किया रिश्तों में भी विखराव आया है।

परिवार जीवन की प्रथम पाठशाला है व्यक्ति का पारिवारिक जीवन बहुत ही शांत होना चाहिए यदि व्यक्ति का पारिवारिक जीवन अंशात व कलह युक्त है वो परिवार का मुखिया और अन्य सभी सदस्य तनावग्रस्त रहेगे। पारिवारिक परिवेश में महिलाओं की भूमिका के सन्दर्भ में परिवर्तन आने का कारण महिलाओं की शिक्षा, कार्य संलग्न, और समानता के आधार पर महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। परिवार में पति – पत्नी दोनों की भूमिका महत्वपूर्ण है यदि कोई भी एक पक्ष अपनी भूमिका का निर्वाह सही ढंग से नहीं करता तो परिवार को विघटित होने से नही रोका जा सकता। भारतीय समाज में जहा महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान की गई वही महिलाओं में वैयक्तिक एवं सामाजिक चेतना जाग्रत किया। बुजुर्ग पीढ़ी आज भी इन्हें हर शिक्षा योग्यता और बाह्य कार्यो के कौशल रखने के बावजूद भी घर की मालकिन बहू और गृहपत्नी के रूप में भी ज्यादा देखने की कोशिश में रहती है।

पश्चिमी विद्धानों में प्रो. आर. के मर्टन लिण्टन, ह्यजूजे ने भूमिका – पुंज की विवेचन प्रस्तुत करते हुए भूमिका दंड की संज्ञा दी है।

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बिखरते रिश्तों का कारण एवं प्रभाव रीवा शहर के सन्दर्भ में अध्ययन करना है तथा इस अध्ययन के गौण उद्देश्य निम्नलिखित है।

1. न्यादर्शो की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि को ज्ञात करना।
2. परिवार परामर्श केन्द्र की भूमिका को ज्ञात करना।
3. आर्थिक स्वंतत्रता का परिवार पर सकारात्मक प्रभाव।
4. धूमपान, मदिरापान का परिवार पर नकारात्मक प्रभाव
5. अध्ययन हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पनाएँ–प्रस्तुत शोध पक्ष में परीक्षाणार्थ निम्नलिखित परिकल्पानाऐं निर्मित की गई है।

1. दोहरे मापदण्ड बिखरते रिश्तों के लिए उत्तरदायी है।
2. विवाह की संस्कारित प्रकृति का ह्रास हुआ है।
3. नातेदारी संबंधो में शिथिलता आई है।
4. पति – पत्नी की मनोवृत्ति में बदलाव आया है।
5. पारिवारिक नियन्त्रण में कमी आई है
6. विवाह विच्छेद की प्रवृत्ति बढ़ी है।
7. व्यक्तिगत स्वार्थ एवं अहम् का महत्वपूर्ण होना।
8. आपसी प्रतिद्वन्द्विता टकराव–तनाव – बिखराव के लिए उत्तरदायी है।

विधितन्त्र– प्रस्तुत अध्ययन को सम्पादित करने के लिए म.प्र. के रीवा शहर की 50 महिला , 50 पुरूष सूचनादाताओं को चयन सौ उद्देश्य निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया है ताकि तार्किक निष्कर्षो की स्थापना की जा सके। प्राथमिक आँकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची पद्धति का प्रयोग करते हुए प्रत्येक अवलोकन प्रविधि को अपनाया गया है तथा वर्णनात्मक शोध सरचना को प्रयोग किया गया है।

तथ्य संकलन एंव विश्लेषण

तालिका नं. 1

वर्ष	कुल मामले	समझौता	अलगाव/अन्य
2013	314	138	176
2014	193	68	125

उपरोक्त तालिका न.1 के प्राथमिक आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है वर्ष 2013 में 43 प्रतिशत मामलों में समझौता हुआ अलगाव 57 हुआ वर्ष 2014 में 35 प्रतिशत जोड़ो में समझौता एवं 65 प्रतिशत मामलों में अलगाव हुआ।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

तालिका न.2 (देखे)

तालिका नं. 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका नं. 3 के प्राथमिक आंकड़ो के विश्लेषण से स्पष्ट है कि धूमपान मदिरापान का पारिवारिक सदस्यों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है ।

परिवार के सदस्यों का यह दायित्व है कि वे धूम्रपान मदिरापान और नशीली दवाओं का सेवन न करे धूम्रपान पारिवारिक कलह को जन्म देता है साथ ही स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है।

तालिका नं. 4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका नं. में प्राथमिक आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि पारिवारिक विखराव के लिए घर का प्रबन्ध ठीक न होना कम आय, बीमारी , तलाक, बेरोजगारी, आकस्मिक दुर्घटना अन्य कारण परिवार के लिए समस्या बनते है और रिश्तों में विखराव आता है।

परिकल्पना नं.1– दोहरे मापदण्ड विखरते रिश्तों के लिए उत्तरदायी है। सत्य एवं सार्थक सिद्ध हुई है। (दृष्टव्य तालिका न. 1)

परिकल्पना नं.2– विवाह की संस्कारित प्रवृत्ति का तरह हुआ है सत्य एवं सार्थक सिद्ध हुई है। (दृष्टव्य तालिका न. 2)

परिकल्पना नं.3– नातेदारी संबंधों में शिथिलता आई है सत्य एवं सार्थक सिद्ध हुई है। (दृष्टव्य तालिका न. 3)

परिकल्पना नं.5–पारिवारिक नियन्त्रण में कमी आई है सत्य एवं सार्थक सिद्ध हुई हैं।

परिकल्पना नं.6– विवाह विच्छेद की प्रवृत्ति वढ़ी है। सत्य एवं सार्थक सिद्ध हुई है। (दृष्टव्य तालिका न. 6)

निष्कर्ष एवं सुझाव – महिलाओं को पारिवारिक व्यवस्था की धुरी माना जाता है क्योंकि इनके बिना परिवार सम्बन्धी अवधारणा एक कल्पना मात्र है। वर्तमान समय मे आपसी सांमजस्य के अभाव में अधिकांश महिलाएँ आवेदन लेकर पुलिस या परिवार परामर्श केन्द्र पहुँचती है। परिवार परामर्श केन्द्र में कांउसलिंग के लिए आए आवेदन पत्र में मुख्य कारण शक था। विवाह के कुछ समय पश्चात् ही पति – पत्नी एक दूसरे पर शक करने लगे , आर्थिक तंगी, मोबाइल वाट्सअप फेसबुक का अत्यधिक प्रयोग किया जाना शराब , घरेलू हिंसा उत्तारदायी है। परिवार में व्यक्ति का अपना अलग व्यक्तित्व नही होता उसका परिवार में विलय हो जाता है और वह परिवार के कर्ता के आज्ञाओं का अनुसरण करता था किन्तु सयुंक्त परिवार टूटने , व्यक्तिवादिता के कारण समस्या उत्पन्न हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन , शोभिता, 'भारत के परिवार, विवाह और नातेदारी', रावत पब्लिकेशन जयपुर 1996
2. Kapadia K.M., " Marriage and family in India. Oxford " University press Bombay.
3. जोशी, गोपी 'भारत में स्त्री असमानता' हिन्दी माध्यम कार्य निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय।
4. आप्टे प्रभा 'भारतीय समाज में नारी', क्लासिक पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1994.
5. Desai Neera , "Women and Society in India ", Sponsored by UNESCO, Regional office, Bangkok 1986.
6. स्टार समाचार पत्र 12 दिसम्बर 2014 पृ0 2

तालिका न.2
आर्थिक स्वतंत्रता का प्रभाव

क्र.	प्रभाव	न्यादर्शो के अभिमत				योग
		हाँ	नहीं	उदासीन	अनुत्तरित	
1.	पति- पत्नी दोनों का कामकाजी होना तनाव उत्पन्न करता है।	38 (38.00)	50 (50.00)	10 (10.00)	02 (02.00)	100 (100.00)
2.	मनोवृत्ति में सकारात्मक बदलाव	80 (80.00)	15 (15.00)	01 (01.00)	04 (04.00)	100 (100.00)
3.	आपसी विमर्श पश्चात् निर्णय	81 (81.00)	12 (12.00)	03 (03.00)	04 (04.00)	100 (100.00)
4.	प्रस्थिति एवं भूमिका में बदलाव	71 (71.00)	20 (20.00)	04 (04.00)	05 (05.00)	100 (100.00)
5.	परिवारिक स्थिति में सुधार	92 (92.00)	05 (05.00)	02 (02.00)	01 (01.00)	100 (100.00)

तालिका नं. 3
धूम्रपान/मदिरापान का संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव

क्र.	प्रभाव	न्यादर्शो के अभिमत				योग
		हाँ	नहीं	उदासीन	अनुत्तरित	
1	तनावग्रस्त संबंध	94 (94.00)	03 (03.00)	02 (02.00)	01 (01.00)	100 (100.00)
2	अवसाद की स्थिति	65 (65.00)	15 (15.00)	15 (15.00)	05 (05.00)	100 (100.00)
3	आपसी विमर्श पश्चात् निर्णय	48 (48.00)	51 (51.00)	00 (00.00)	04 (04.00)	100 (100.00)

तालिका न. 4
पारिवारिक विखराव – निर्देशित उत्तरदाताओं के अनुसार अभिमत

क्रं	पड़ने वाला प्रभाव	न्यादर्शो के अभिमत				योग
		हाँ	नहीं	उदासीन	अनुत्तरित	
1.	विवाह की सांस्कारिक प्रवृत्ति में ह्रास	80 (80.00)	10 (10.00)	03 (03.00)	07 (07.00)	100 (100.00)
2.	पारिवारिक नियन्त्रण में कमी	70 (70.00)	28 (28.00)	02 (02.00)	00 (00.00)	100 (100.00)
3.	नातेदारी सम्बन्धों में शिथिलता	60 (60.00)	25 (25.00)	10 (10.00)	05 (05.00)	100 (100.00)
4.	चारित्रिक पतन	30 (30.00)	58 (58.00)	12 (12.00)	–	100 (100.00)
5.	परस्पर प्रतिद्वंद्विता की भावना का प्रकार	60 (60.00)	38 (38.00)	02 (02.00)	–	100 (100.00)
6.	घरेलू हिंसा	59 (59.00)	27 (27.00)	10 (10.00)	04 (04.00)	100 (100.00)
7.	आर्थिक तंगी	62 (62.00)	25 (25.00)	10 (10.00))	03 (03.00)	100 (100.00)

****

डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय एवं जातिविहीन समतामूलक समाज

डॉ. मनोज वानखेड़े *

शोध सारांश – डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर 20वीं शताब्दी के एक श्रेष्ठ चिंतक , दूरदर्शी, यजस्वी वक्ता ओजस्वी लेखक तथा भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माता थे। उन्होंने अस्पृश्यता के विरूद्ध एक पराक्रमी योद्धा की भांति संग्राम कर दीन–हीनों दलितों की सामाजिक व्यवस्था सुधारने में अपना जीवन समर्पित कर दिया। आप भारत के उच्चतम विद्धानों में से एक थे। 'मानव मानव में असमानता और सामाजिक आर्थिक विषमताओं ने आपके मन में कड़वाहट भर दी थी।' आप चाहते थे कि जो वर्ग सदियों से पीसता चला आ रहा है वह ऊपर उठे और इसके लिए उन्हें पर्याप्त अवसर प्राप्त हो। दलित वर्ग को आप देश के अन्य नागरिको के समक्ष लाना चाहते थे और यह भी चाहते थे कि जो लोग इस वर्ग के पिछड़ेपन के लिए जिम्मेदार है उनमें सद्बुद्धि आए। डॉ. अम्बेडकर ने दलितोत्थान के लिये अपना जीवन समर्पित किया था। इसलिए आपको '**दलितों का मसीहा', भारत का लिकंन और मार्टिन लूथर, बीसवीं सदी का बोधिसत्व** कहा जाता है।

शब्द कुंजी – समाज में दीन–हीनों तथा दलितों के सामाजिक व्यवस्था सुधारने एवं शिक्षा के द्धार परिवर्तन लाना।

प्रस्तावना – डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जीवन परिचय (सन् 1891–1956)बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर का जन्म इंदौर के पास महू छावनी में एक महार परिवार में 14 अप्रैल, 1891 को हुआ था। सन् 1900 में आप सतारा (महाराष्ट्र) के सरकारी हाईस्कुल में प्रथम कक्षा में भर्ती हुए।

भीमराव जी का जन्म एक ऐसे समाज में हुआ था जहॉ अस्पृश्यता का रोग गहरी जड़े जमाये हुए था, जिसके भुक्तभोगी वे स्वयं थे और पूरा हरिजन समाज था।सन् 1904 में भीमराव जी ने बंबई के एलिफिस्टन हाईस्कुल में प्रवेश लिया। 1907 में हाईस्कुल की परीक्षा उत्तीर्ण की जो अपने आप में एक अद्भुत घटना थी। सन् 1912 में अपने अंग्रेजी और फारसी विषय से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की।

बी.ए. के पश्चात आपने बड़ौदा सरकार में नौकरी कर ली, पर हरिजन होने के कारण अपमान ने इनका पीछा यहाँ भी नहीं छोड़ा। भीमराव जी पहले छात्र थे जो किसी विदेशी विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने गये थे। जून 1915 में आपको प्राचीन भारतीय व्यापार थीसिस पर एम.ए. की डिग्री प्राप्त हुई। सन् 1916में आपने पी–एच.डी. के लिये थीसिस प्रस्तुत की जिसका शीर्षक था '**नेशनल डिविडेण्ड फार इंडिया' – ए हिस्टोरिक फाइनेन्स इन ब्रिटिश इण्डिया'**। जुलाई 1917 में बड़ौदा महाराज द्धारा छात्रवृति देना बंद करने से आप भारत लौट आये।1918 में आपकी नियुक्ति बंबई के सीडेनहम कालेज में राजनैतिक अर्थव्यवस्था के प्राध्यापक के पद पर हुई। 11 नवबंर 1918 से 11 मार्च 1920 तक कॉलेज में काम करने के बाद आप पुन:कानून और अर्थशास्त्र के अध्ययन हेतु लंदन चले गये। सन् 1923 में आपने डी.एस–सी. अर्थशास्त्र के लिये– 'द प्रोब्लम ऑफ द रूपी, इटस ओरिजन एण्ड इटस सोल्यूशन' थीसिस प्रस्तुत की।

सन् 1923 में आपने वकालात आरम्भ की और साथ ही दलितोंद्धार का कार्य भी प्रारंभ किया। स्वंतत्र भारत में आपको संविधान प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया। 3 अगस्त 1949 को भारत सरकार के विधि मंत्री बने और हिन्दू कोड बिल बनाया। 14 अक्टूबंर 1956 को आपने 5 लाख दलितों के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण कर धर्म परिवर्तन किया और 6 दिसंबर 1956 को आपका निधन हो गया।

आपकी महत्वपूर्ण रचनाए –

1. The Untouchable - Who are they.
2. Who are shudra.
3. What Congress and Gandhi have done for the untouchables.
4. Antifilation of caste.
5. State and Minorities.
6. Emancipation of the untouchables.
7. Thoughts of Linguistic State.
8. Pakistan or partition of india.
9. Gospel of Buddha.

दलित समस्या एवं उसके निराकरण के संबध में डॉ. आम्बेडकर का निम्न चार स्थापनाएँ थी।

1. एक सामाजिक यथार्थ के रूप में दलित समस्या के अस्तित्व की स्वीकारोक्ति बाबा साहेब आम्बेडकर की पहली स्थापना थी।
2. आम्बेडकर की दूसरी स्थापना थी कि दलितों की निर्योग्यता एवं उनकी हीन स्थिति कोई आकस्मिक या ईश्वरीय घटना नहीं है।यह सामाजिक ऐतिहासिक कारणों की देन है। यह ब्राहाणों की सोची–समझी साजिश का परिणाम है। (आम्बेडकर, 1948)
3. आम्बेडकर की तीसरी स्थापना थी कि अस्पृशयता सहित दलितों की विभिन्न निर्योग्यताओं का उन्मूलन संभव है।

हालांकि जातिभेद और छुआछूत को समाप्त करने का प्रयास प्राय: सभी युगों में हुआ किन्तु सफलता नहीं मिली। आम्बेडकर ने इसके दो मुख्य कारण बताये: एक तो लोगों का शास्त्रों में विश्वास और दूसरा समाज का श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धांत पर गठन। हिन्दू समाज में श्रेणीबद्ध असमानता के नियम के तहत सबसे निम्न जाति को छोड़कर प्रत्येक जाति किसी न किसी जाति से अपने को उच्च मानती है। इसके चलते प्रत्येक जाति अपने से ऊपर की जातियों के साथ समानता की बात तो करती है किन्तु जब अपने से नीचे की जातियों को समानता देने की बात आती है तो मुकर जाती

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

है। इसीलिये जब तक हिन्दू समाज में जाति भेद बना हुआ है। छुआछूत का उन्मूलन अथवा दलित समस्या का निराकरण संभव नहीं है।

4. चौथी समस्या के रूप में आम्बेडकर ने दलित समस्या के उन्मूलन के उपाय बताये।

दलित समस्या के निराकरण के लिये डॉ. आम्बेडकर द्वारा दलितों को जो उपाय सुझाये गये उनमें मुख्य निम्न है।

1. शहरी क्षेत्रों में बसना।
2. लौकिक व्यवसाय अपनाना
3. एक राजनैतिक इकाई के रूप में एकजुट होना।
4. राजनैतिक शक्ति प्राप्त करना।
5. सवैंधानिक ढाँचे के अंतर्गत राजनैतिक पहल करना।
6. स्वावलंबी बनना एवं अपनी उन्नति के लिये स्वयं प्रयास करना।
7. संघर्ष, समझौता एवं सौदेबाजी की रणनीति अपनाना।
8. दीक्षा लेना।

राजनीति में भागीदारी – डॉ. आम्बेडकर का दृढ विश्वास था कि सामाजिक और आर्थिक अधिकार तब तक प्रभावकारी नहीं हो सकते जब तक कि दलितों को शासन में भागीदारी प्राप्त नही होती। दलितों एवं श्रमिकों को राजनैतिक शक्ति के रूप में संगठित करने के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुये आम्बेडकर ने य इण्डिपेण्डेन्ट लेबर पार्टी (1936) का गठन किया आगे चलकर उनके निर्देशो पर दलितो विशेष रूप से आम्बेडकरवादियों ने य भारतीय रिपब्लिकन पार्टी के झण्डे तले अपना राजनैतिक मोर्चा संभाला। डॉ. आम्बेडकर की मृत्यु के पश्चात नेतृत्व की लड़ाई तथा आपसी फूट के कारण यह दल कुछ ही वर्षो में बिखर गया। (सिहं1986:83)

राष्ट्रीय आंदोलन में दलितों की बढ़ती हुई शक्ति – शनै: शनै डॉ. आम्बेडकर की हिन्दुओं से सामाजिक एवं राजनैतिक दूरी बढ़ती गई। अखिल भारतीय दलित वर्ग के नागपुर अधिवेशन को संबोधित करते हुये डॉ. आम्बेडकर ने कहा कि एक समय था जबकि हिन्दू समाज के अभिन्न अंग के रूप में समानता की प्राप्ति के लिये हमने प्रयास किया, किन्तु अब हमारे आंदोलन का लक्ष्य मूलत: बदल गया है। अब हम राष्ट्रीय जीवन में पृथक तत्व के रूप में हिन्दुओं के समक्ष बराबर के स्तर पर खडे है। (आम्बेडकर , 1979 स: 138)

संविधान की प्रारूप समिति एवं कानून मंत्री के रूप में कार्य – आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन की बढ़ती हुई शक्ति तथा अंग्रेजों द्वारा सत्ता के हस्तांतरण की संभावनाओं को देखते हुये डॉ. आम्बेडकर ने दलितो के लिये पृथक निर्वाचन संबधी अपनी मॉग पर आगे संघर्ष करने के बजाय दलितों के लिये आरक्षण एवं कतिपय विशेष रियायतें प्रदान किये जाने संबधी गाँधी की पेशकश को स्वीकार करते हुये संयुक्त निर्वाचन व्यवस्था को मान लिया। गाँधी और आम्बेडकर के बीच हुये इस ऐतिहासिक समझौते को पूना पैक्ट (1932) के नाम से जाना जाता है। इतना ही नहीं गॉधी, नेहरू, पटेल, एवं कांग्रेसी नेताओं से लम्बे समय तक विरोध के बावजूद स्वाधीनतोपरांत डॉ. आम्बेडकर ने संविधान सभा, संविधान की प्रारूप समिति तथा कानून मंत्री के रूप में उनके साथ कार्य करना स्वीकार किया।

डॉ. आम्बेडकर को अंग्रेजों से अतंत: बहुत निराशा हुई। उन्होंने कहा कि अंग्रेजों ने हिन्दू , मुस्लिम और सिक्ख इन्हीं तीन जातियों को राजनैतिक सत्ता सौंपने का निश्चय किया। दलितों को अधबीच में छोड़ दिया। उन्हें कहीं का नहीं रखा। अंग्रेजों से मिली निराशा के बावजूद डॉ. आम्बेडकर ने साहस नहीं छोड़ा। उन्होंने राजनैतिक परिवेश एवं सत्ता समीकरण में परिवर्तन को ध्यान में रखते हुये अपनी रणनीति को बदलना उचित समझा। उनका कहना था कि हमारे लोगों में एकता नहीं है। अत: सत्ता एवं राजनीति में परिवर्तन के साथ दलितों को अपनी रणनीति में भी परिवर्तन करना चाहिये।।

डॉ. आम्बेडकर (1980:81) का कहना था कि –'यह समय कांग्रेस के साथ सघंर्ष करने का नहीं है' हम जितना चाहते थे उतना भले न मिला हो किन्तु कांग्रेस के साथ सहयोग करने से हमें काफी कुछ प्राप्त हो गया है। मुझे जब यह प्रतीत होगा कि सरकार में रहने से कोई लाभ नहीं है तो मैं निकल आउँगा। कांग्रेस को सदस्य न मै कभी बना और न बनना चाहता हूँ । मै कांग्रेस टिकट पर चुना नही गया। कांग्रेस से निमंत्रण मिलने पर में बिना शर्त मंत्रिमंडल में सम्मिलित हुआ।

डॉ. आम्बेडकर (संद. कीर, 1981) ने दलितों को सलाह दी कि वे कांग्रेस के निकट नहीं आये। अपना पृथक अस्तित्व एवं संगठन रखे अन्यथा कीचड़ की भॉति उन्हे कांग्रेस रूपी सागर समा लेगा। जहॉ तक उनका स्वयं का प्रश्न है उनका कहना था कि – 'मैं एक पत्थर हूँ। मुझे पचाना कांग्रेस के लिए संभव नहीं है ।' डॉ. आम्बेडकर ने दलितों को सावधान किया कि बालिग मताधिकार ने सत्ता जनता के हाथों में सौप दी है। यदि दलित और पिछडे वर्ग के लोग एक हो जाये तो राजनैतिक शक्ति पर कब्जा कर सकते है।(आम्बेडकर 1980:82)

आम्बेडकर अच्छी तरह जानते थे कि उल्लेखनीय संख्या में होने के बावजूद भी दलितों की संघर्ष शक्ति कमजोर है। एक तो बिखरे हुये है। दूसरे, अशिक्षित अंधविश्वास एवं गरीब है, किन्तु लोकतांत्रिक प्रणाली के अंतर्गत दलित यदि सही रणनीति अपनाते है तो अपनी संख्यात्मक शक्ति के सहारे वे अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिये अधिक नहीं तो कम से कम दबाव समूह के रूप में प्रभावकारी संघर्ष अवश्य कर सकते है। इसीलिये उन्होंने दलितों के लक्ष्यों की पूर्ति के लिये लोकतांत्रिक प्रणाली और संवैधानिक मार्ग का चुनाव किया तथा संघर्ष एवं समझौता की रणनीति अपनाई।

अस्पृश्यता का अंत कर दिया गया। व्यक्ति को, न कि जाति, वंश या धर्म को राज्य की ईकाई माना गया। दलितों का सामाजिक निर्योग्यताओं को ध्यान में रखते हुये उन्हें संविधान के अंतर्गत विशेष संरक्षण व सुविधाये प्रदान किये जाने का प्रावधान किया गया। संसदीय लोकतांत्रिक प्रणाली को मजबूत संवैधानिक आधार प्रदान करके संविधान ने दलितों को सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने के बावजूद राजनैतिक आधार पर अपने हितों को सुरक्षित रखने में पूर्णत: सक्षम बना दिया।(सिहं 1986 : 85–86)

समान नागरिक अधिकारों की स्थापना, संवैधानिक सरंक्षण तथा आरक्षण एवं विशेष सुविधाओं की पर्याप्त व्यवस्था हो चुकने के उपरान्त डॉ. आम्बेडकर के सम्मुख सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य जो शेष रह गया था वह था दलितों को मानसिक एवं आध्यात्मिक मुक्ति प्रदान किये जाने का। उनका सोचना था कि जब तक मानसिक दासता से दलितों को मुक्ति नहीं मिलती तब तक भौतिक स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है। भौतिक लक्ष्य साधन है। यद्यपि वे जीवन में निरापद भी है तथापि मानसिक एवं आध्यात्मिक दासता से मुक्ति के अभाव में भौतिक प्रगति कभी स्थायी नहीं हो सकती।

धर्म परिवर्तन – हिन्दू धर्म छोड़ने का निर्णय डॉ. आम्बेडकर ने बहुत पहले कर लिया था। 13 अक्टूम्बर 1935 को येवला में दलितों की एक सभा को संबोधित करते हुये उन्होंने कहा था कि 'दुर्भाग्य से में हिन्दू पैदा हुआ यह मेरे बस की बात नहीं थी, किन्तु हिन्दू धर्म की अपमानजनक एवं शर्मनाक स्थिति में रहने से इंकार करना मेरी शक्ति सीमा में है। मै आपको विश्वास

दिलाता हूँ कि मैं हिन्दू के रूप में नहीं मरूँगा। (आम्बेडकर, 1981:8)

धर्म परिवर्तन संबधी येवला की महार कांग्रेस की सिफारिश पर आम दलित समाज में कटु प्रतिक्रिया हुई। इस युग के अधिकांश दलित नेता गाँधी के साथ थे। उन्हें गाँधी के समाज सुधार और हरिजनोद्धार कार्यक्रम पर पूरा भरोसा था। उनका मानना था कि थोड़े ही समय में दलितों को आज इतनी स्वतंत्रता हासिल हो गई है कि वे स्वेच्छा से सवर्ण हिन्दुओं के रीति-रिवाज, संस्कार, पूजा-पाठ, रहन-सहन तथा नाम-उपनाम अपना सकते है। जहॉ उन्हें सवर्ण मंदिरों में प्रवेश मिलने लगा है वहीं उन्होंने अपने मंदिर भी निर्मित किये है जिनमें वे स्वतंत्रता पूर्वक पूजा-पाठ करते है।

धर्म परिवर्तन संबधी डॉ. आम्बेडकर के उपर्युक्त व्याख्यान पर तत्कालीन दलित नेताओं ने तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। उनका कहना था कि येवला की एक सभा में एक जिले के थोड़े से महारों की उपस्थिति में दलितों के प्रवक्ता के रूप में डॉ. आम्बेडकर को दलितों के लिये धर्म परिवर्तन की सिफारिश करने का कोई अधिकार नहीं है। जब डॉ. आम्बेडकर ने हिन्दु समाज में सुधार लाने के लिये स्वयं कोई उल्लेखनीय प्रयत्य नहीं किया तो उन्हें यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि हिन्दू समाज सुधार से परे है। वास्तव में किसी की आलोचना करना और आंदोलन करना एक बात है और सामाजिक सुधार के लिये रचनात्मक प्रयास करना दूसरी बात है। पहला आसान है। दूसरा कठिन है। (सिहं, 1986-102)

गाँधी ने डॉ. आम्बेडकर के धर्म परिवर्तन संबधी निर्णय को दुर्भाग्यपूर्ण निरूपित किया विशेष रूप से तब जबकि अस्पृश्यता मृत प्राय: है। गॉधी (संद कीर, 1981:254) का कहना था कि धर्म का संबध व्यक्ति की आत्मा से न कि शरीर से। धर्म कोई मकान या घड़ी नहीं है। जिसे मनचाहे बदला जा सकता है।

डॉ. आम्बेडकर का धर्म परिवर्तन संबधी निर्णय कोई जल्दबाजी में उठाया गया राजनैतिक कदम या सौदेबाजी पर आधारित कोई राजनैतिक कथन नही था। यह एक सोचा-समझा सामाजिक निश्चय था। डॉ. आम्बेडकर अपनी धुन और निश्चय के पक्के थे। विगत दो दशकों में उन्होंने दलितो की आध्यात्मिक मुक्ति का मार्ग ढूँढं लिया था। मृत्यु के थोड़े दिन पूर्व 14 अक्टूम्बर 1956 को डॉ. आम्बेडकर ने नागपुर में बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। उनका दृढ़ विश्वास था कि विश्व में बौद्ध धर्म ही एकमात्र ऐसा धर्म है जो मानव को सामाजिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक दासता से मुक्ति प्रदान करता है

निष्कर्ष – डॉ. अम्बेडकर कठिन परिश्रम और कठोर संघर्ष के बल पर धीरे-धीरे प्रगति की ओर अग्रसर हुए थे परन्तु वे इस कटु सत्य से अवगत थे कि जब तक वे अछूत समझे जाते रहेंगे, समाज में उन्हें उचित स्थान नहीं मिलेगा। उन्होंने देश के सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास का गहन अध्ययन किया किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि हिन्दु धर्म के चतुवर्ण से उपजी अस्पृश्यता ही तथाकथित दलित वर्ग के पिछड़ेपन का मूल कारण है। देश से जब तक इस अस्पृश्यता को मिटाया नहीं जाता है, सामाजिक समानता का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। समाज में व्यक्ति-व्यक्ति के मध्य भेदभाव से सामाजिक न्याय की अवधारणा अधूरी रहती है। डॉ. अम्बेडकर ने अपने सम्पूर्ण जीवन में दलित वर्ग को सशक्त बनाने का प्रयास किया। इसके लिये आपने असपृश्यता का विरोध करने के साथ ही साथ दलित वर्ग के लोगों में अपने अधिकरों के प्रति जागृति लाने का प्रयास भी किया। गॉधी जी ने उनके बारे में कहा था- 'भविष्य में डॉ. अम्बेडकर के नाम के साथ चाहे किसी भी विशेषण का प्रयोग हो, ने एक ऐसे व्यक्ति है जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता।'

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. चंचरीक कन्हैयालाल : भारत में दलित आंदोलन एक मूल्याकंन : सृष्टि बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली 2006 पृष्ठ क्र.115
2. चंचरीक के.एल. एवं : भारतीय दलित जाति कोष : यूनिवर्सिटी पब्किेशन्स नई दिल्ली,पृष्ठ क्र.154प्रसाद सरोज
3. दीक्षित ध्रुव समाजशास्त्र शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, इन्दौर, पृष्ठ क्र.189,190
4. दत्त, डॉ. महेश्वर : गॉधी अम्बेडकर और दलित : राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली 2005

****

बालश्रम – एक सामाजिक समस्या (मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)

सुमन सिंह *

प्रस्तावना – देश के प्रत्येक बच्चे की आँखों में आने वाले भारत के उज्जवल भविष्य का सपना देखता हूँ।

पं. जवाहरलाल नेहरू

कृति – डिस्कवरी ऑफ इंडिया

बच्चे किसी भी देश का भावी संसाधन व उसका भविष्य होते हैं। 'यूनीसेफ' भी अपनी रिपोर्टों में बच्चों को महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में स्वीकार कर इस बात पर बल देता रहा है, कि मानवीय संसाधनों में निवेश या मानव संसाधन निर्माण की प्रत्येक दीर्घकालीन योजना बच्चों से ही प्रारंभ की जानी चाहिए। क्योंकि आज के बच्चे ही कल का भविष्य है। भारत के 01 से 14 वर्ष के बच्चे देश की कुल जनसंख्या का एक तिहाई हिस्सा है। प्रत्येक बच्चे को अपने विकास के लिए जो अनुकूल वातावरण मिलना चाहिए वह अधिकांश भारतीय बच्चों के पास मौजूद नहीं है। मुख्यत: अधिकांश बच्चों को परिवार के सदस्यों का पेट पालने के लिए कच्ची उम्र में ही जोखिमपूर्ण व कमरतोड़ कामों में झोंक दिया जाता है। जहाँ पर इन बच्चों का जमकर शारीरिक व मानसिक शोषण किया जाता है।

प्रो. वेनहेगन ने लिखा है, कि वह कार्य जो पैसे कमाने के उद्देश्य से बच्चों द्वारा किया जाता है, बाल श्रम कहलाता है। मजदूरी मुद्रा के रूप में वह भुगतान है जो समझौते के अनुसार एक स्वामी अपने सेवक को उसकी सेवाओं के बदले देता है परन्तु यही मजदूरी किसी बच्चे या बालक अथवा बालिका को मुद्रा के रूप में भुगतान की जाती है जो उसके द्वारा किये गये कार्य के अनुसार होता है। साधारण बोलचाल की भाषा में श्रम का अभिप्राय चेष्टा से होता है जो कि किसी कार्य को करने हेतु की जाती है। यह चेष्टा चाहे पैसा कमाने की हो या स्वास्थ्य वर्धन या स्नेह के कारण इसे श्रम ही कहेंगे। यह श्रम का व्यापक अर्थ है। बाल श्रम (बाल मजदूरी) निषेध अधिनियम–1986 के अनुसार बच्चे की परिभाषा – वह जो 14 साल से कम उम्र का हो, किसी उद्योग, कारखाने या खान आदि में मानसिक या शारीरिक श्रम करता हो। यह 14 वर्ष से कम आयु के श्रमिक, बाल श्रमिकों की श्रेणी में आते हैं। संक्षिप्त में यही कहा जा सकता है कि वह बालक/बालिका जो अपने या परिवार के भरण पोषण में लगा हो को बालश्रमिक कहलाता है।

बालश्रम समस्या का स्वरूप – श्री वी.वी. गिरी ने ठीक लिखा है कि बाल श्रमिक शब्द की व्याख्या सामान्यत: दो प्रकार से की जा सकती है।

1. आर्थिक व्यवसाय के रूप में, 2. सामाजिक अभिशाप के रूप में।

प्रथम संदर्भ में बाल श्रमिक आर्थिक क्षेत्र में रोजगार को दर्शाता है। इससे परिवार की आय बढ़ती है। दूसरे संदर्भ में बाल श्रमिक उन बुराइयों तथा शोषणों की अभिव्यक्ति है जो बालकों को रोजगार में लगाने के कारण पनपते हैं। आधुनिक समय में बाल श्रम शब्द सामाजिक बुराइयों को ही बताता है। बाल श्रम का उपयोग सामान्यत: बुरा नहीं है। परन्तु जिन परिस्थितियों एवं नि:शर्तों पर उन्हें काम पर लगाया जाता है वह बुरा है। इस आशय की एक कहावत है कि 'बचपन' में काम करना बुराई व राष्ट्रीय अपव्यय भी है। सामाजिक अच्छाई अथवा बुराई से हमारा आशय यह है कि जब तक किसी वस्तु का न्यायोचित उपयोग होता है तब तक वह सामाजिक अच्छाई कहलाती है किन्तु जब उसका दुरूपयोग होने लगता है तब वह सामाजिक बुराई का कारण बनती है। किन्तु जब व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से बेचारे नन्हे मुन्ने बच्चों का शोषण होने लगता है तो कोई भी उसे स्वीकार नहीं कर सकता। बच्चों का श्रम उनके स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष संबंध रखता है जिससे उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास रूक जाता है।

बाल श्रमिक कौन – बाल श्रमिकों के मानक पर विश्व में मतैव्य नहीं है। भारत के संविधान के अनुच्छेद–24 के अनुसार, 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी फैक्ट्री, खनन कार्य या किसी जोखिम वाले काम में नहीं लगाया जा सकता है। बाल मजदूरी निषेध अधिनियम–1986 के अनुसार वह बालक या बालिका जो 14 वर्ष से कम का हो बच्चा कहलाएगा, जबकि भारतीय जनगणना आयोग के अनुसार काम का तात्पर्य है – किसी आर्थिक उत्पादन क्रिया में भागीदारी। अत: किसी उद्योग, कारखाने, होटल, ढाबा आदि में कार्यरत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे बाल श्रमिक कहलाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार, 15 वर्ष तक के श्रमिक को बाल मजदूर माना जाता है। अमरीकी संविधान के अनुसार, 12 वर्ष तथा ब्रिटेन में 13 वर्ष तक के श्रमिकों को बाल श्रमिक माना जाता है।

भारत में बाल श्रमिकों की स्थिति – बालश्रम का व्यापक विस्तार, भारत के अनियमित क्षेत्रों की पहचान बन चुका है। भारत में काम करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार यहाँ कम से कम 9 करोड़ बाल श्रमिक हैं। हॉलाकि कुछ गैर सरकारी संगठन बाल श्रमिकों की संख्या इससे अधिक बता रहे हैं। भारत की वर्तमान जनसंख्या लगभग 1.22 बिलियन है। देश में 5–14 वर्ष की आयु वर्ग के श्रमिकों का भाग कुल जनसंख्या का 5% है। इस आयु वर्ग में मात्र 14.07% बच्चों को ही स्कूल जाने का मौका मिल पाता है। 5–14 वर्ष के श्रमिकों की अधिकतम संख्या 'मिजोरम' में है जो कुल जनसंख्या का 12.34% है तथा न्यूनतम संख्या 'लक्ष्यद्धीप' में है जो कि कुल आबादी का 0.19% है चौकाने वाली बात यह है कि भारत में कुल कार्यबल का 11% हिस्सा बच्चे हैं।

बालश्रम के प्रमुख कारण – बालश्रम का मुख्य कारण गरीबी, बेरोजगारी व अशिक्षा है। व्यापारियों को 'बाल श्रमिकों' से सहज और सस्ता साधन कहीं नहीं मिलता। उन्हें मजदूरी भी कम देनी पड़ती है व काम एक वयस्क मजदूर जितना मिल जाता है। बालश्रम का सबसे घिनौना रूप बाल वेश्यावृत्ति है। एक अध्ययन के अनुसार 15% वेशयाएँ 15 वर्ष से कम उम्र में ही वेश्यावृत्ति के पेशे में आ जाती हैं। बालश्रम एक सामाजिक, आर्थिक समस्या भी है। गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा के साथ–साथ जागरूकता का अभाव, जनसंख्या विस्फोट आदि बालश्रम के मुख्य कारण हैं। अशिक्षित अभिभावक

*शोधार्थी (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शिक्षा के महत्व को न समझकर उन्हें कम उम्र में ही काम पर लगा देते हैं।

बालश्रम के उन्मूलन के लिए कानूनों का प्रभावी रूप से लागू न हो पाना भी इस समस्या के लगातार विस्तार का एक प्रभावी कारण है। सरकारी व गैर सरकारी तौर पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि माचिस, पटाखा, फैक्ट्री, हानिकारक रासायनिक कारखाने, बीड़ी कारखाने, कालीन उद्योग, चूड़ी शीशा उद्योग आदि के फैक्ट्रियों में विस्फोट सामाग्री कानून तथा श्रम कानूनों का उल्लंघन किया जाता है। कुछ सर्वे यह दर्शाते हैं कि प्रबन्धकों के पास 8 से 10 वर्ष तक के बालकों के आयु संबंधी फर्जी प्रमाण-पत्र उपलब्ध रहते हैं। जिनमें उन्हें 15 वर्ष से अधिक आयु का दिखाया गया होता है। इतना ही नहीं कानूनी नियमों से बचने के लिए विभिन्न प्रकार के हथकण्डे अपनाए जाते हैं जिसमें घूस देना जैसे भ्रष्ट तरीके भी शामिल है। बाल श्रमिकों का होना ही अधिनियम व प्रावधानों में बरती जाने वाली लापरवाही स्वयं सिद्ध करता है। बालश्रम के लिए हमारा सामाजिक ढ़ाँचा भी जिम्मेदार है जिसमें निम्नवर्ग, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति को मजदूरी विरासत में मिलती है। इसके अलावा पारिवारिक सदस्यों को नशाखोरी की आदत, रूढ़िवाली रीति-रिवाज, बुरी संगत व पारिवारिक तनाव भी बाल मजदूरी के प्रमुख कारण हैं।

विषय का चुनाव – विषय का चुनाव समस्या के साथ अध्ययनकर्ता का वह प्रथम स्पर्श है जिसके द्वारा समस्या अध्ययनकर्ता के सामने खुलकर आ जाती है। वैसे तो विभिन्न समाजशास्त्रियों ने विभिन्न शोधार्थियों ने भिन्न-भिन्न सामाजिक समस्याओं का भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से अध्ययन किया है लेकिन प्रस्तुत शोध कार्य इक्कीसवी सदी के द्वितीय दशक (2011-2020) के वर्तमान समय वर्ष 2016 में बहुत अधिक समसामायिक प्रासंगिक, चिंतनीय विषय पर आधारित है। वर्ष 2014 में मध्यप्रदेश के विदिशा जिले के सामाजिक कार्यकर्ता श्री कैलाश सत्यार्थी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नोबल शांति पुरस्कार बालश्रम उन्मूलन की दिशा में किये जा रहे उनके अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों के लिए मिला है।

प्रस्तुत शोध विषय में बाल श्रमिकों/लड़कों, लड़कियों के पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन पर पड़ रहे प्रभावों का तथा इस विषय से जुड़े अन्य व्यक्तियों, संस्थाओं तथा विभिन्न स्तरों पर हो रहे प्रयासों का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयत्न किया है। बालश्रम को रोकने हेतु स्वयं जागरूक होने तथा समाजशास्त्र विषय की विधार्थी होने के नाते भी इस विषय का चुनाव अपने शोध विषय के रूप में किया है।

बालश्रम के विषय में समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, पुस्तकों, टी.वी. चैनलों एवं अन्य जनसंचार माध्यमों से वर्तमान में इतना प्रचार प्रसार किया जा रहा है कि अब लोग बालश्रम रोकने हेतु अपनी जागरूकता दिखाने लगे हैं। धीरे-धीरे बालश्रम के नकारात्मक परिणाम सामने आने से यह सामाजिक समस्या सर्वविदित होती जा रही है। वर्ष 1986 में अधिनियम बनाकर इसे रोकने हेतु प्रयास भी किये जा रहे है और कुछ हद तक शासकीय, अशासकीय, निजी संस्थानों के विभिन्न प्रयासों में कुछ में सफलता भी मिली है लेकिन वह नगण्य है। इस सामाजिक समस्या के उन्मूलन संबंधित विषय में अभी तक पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी है। आम लोग यदि बालश्रम के प्रति अपनी समझ, मानसिकता, संवेदनशीलता एवं जन जागरूकता का हिस्सा बढ़ा सकें तो शायद इस रोग से हमेशा के लिए छुटकारा या निजात पाई जा सकती है।

संदर्भित साहित्य का पुनरावलोकन – संदर्भित साहित्य से तात्पर्य अनुसंधान की समस्या से संबंधित पुन सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञान कोषों, पत्र-पत्रिकाओं, प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध प्रबंधों एवं अभिलेखों आदि से है जिनके अध्ययन से अनुसंधानकर्ता को अपनी समस्या के चयन परिकल्पनाओं के निर्माण तथा अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने एवं शोध कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है।

समाजशास्त्री गुडबाय – स्कैट्स के अनुसार – एक कुशल चिकित्सक के लिये यह परम आवश्यक है कि वह अपने कार्य क्षेत्र में हो रही औषधि विज्ञान संबंधी आधुनिकता खोजों से लगातार परिचित होता रहे। ठीक उसी प्रकार शिक्षा के विज्ञान छात्र अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य करने वाले तथा अनुसंधानकर्ता के लिए भी उसी शोध सेवा से संबंधित पूर्व में हुए शोध संबंधित आवश्यक जानकारियाँ, शोध आँकड़े तथा वर्तमान समय वर्ष 2016 में प्राप्त हो रही नई सूचनाओं एवं तथ्यों से परिचित होना परम आवश्यक है।

समाजशास्त्रीय विद्धानों ने साहित्य सर्वेक्षण के उद्देश्यों की चर्चा करते हुए लिखा है कि संदर्भित साहित्य का पुनरावलोकन शोध समस्या के समुचित समाधान एवं ठोस निष्कर्ष निकालने में सहायक होते हैं। इससे समस्या के हल एवं अनुसंधान संबंधित सही विधि एवं सुझाव भी प्राप्त होते हैं। इससे अनुसंधानात्मक के ज्ञान कोष में वृद्धि होती है तथा शोध कार्य पुनरावृत्ति पर रोक भी लगती है।

संदर्भित प्रमुख साहित्य –

1. श्री मृदुल कुमार वर्मा (2011) ने अपने शोध के अन्तर्गत यह उल्लेख किया है, कि आर्थिक पिछड़ापन, गरीबी, बेरोजगारी एवं अशिक्षा के कारण बालश्रम समस्या जन्म लेती है।
2. विवेक भदौरिया तथा विकास गोरे, इलाहाबाद विश्वविद्यालय (2012) ने अपने शोध कार्य में बताया है, कि बाल श्रम का अभिप्राय बच्चों से कुटीर उद्योग या लघु उद्योग या ठेके पर कार्य कराकर उनसे काम के बदले उन्हें कुछ आर्थिक लाभ देकर उनका शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य संबंधी तथा आर्थिक शोषण करना है।
3. राम आहूजा, सामाजिक समस्या (2013) में लिखा है कि पूरे विश्व में बाल श्रमिकों की संख्या लगभग 25 करोड़ से अधिक है। भारत में बाल श्रमिकों की संख्या लगभग 6 करोड़ से अधिक है। यह कृषि कार्य, काँच उद्योग, चूड़ी उद्योग, पैकिंग कार्य, मोटर गैरेज, ढ़ाबे, होटली, घरेलू नौकरों के रूप में लगे हैं।
4. श्री अतुल कर्णिक (एसोसिएशन) ऑफ वालेन्ट्री एजेन्सी फॉर प्लानिंग एण्ड डेवलपमेंट (अवाई) (2014) के अनुसार बाल श्रमिकों की समस्या पर इन्दौर शहर में सर्वेक्षण करने पर कई चौकानें वाले तथ्य सामने लाये हैं। इन बाल श्रमिकों की आयु 6-10 वर्ष तक है। अधिकतर निरक्षर हैं। स्कूल जाना बंद कर दिया है। कार्य अवधि भी 6-10 घंटे प्रतिदिन होती है। आय 500 रू. से 2000 रू. प्रतिमाह तक होती है। म.प्र. के अकेले इन्दौर शहर में कम से कम दस हजार बाल मजदूर कार्यरत हैं।
5. एस.के. चौधरी (2008) ने अपने शोध कार्य में बाल श्रमिकों की सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के उपरांत निष्कर्ष के तौर पर बताया कि बाल श्रम रूपी सामाजिक समस्या का उन्मूलन मुख्य रूप से श्रम विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग, स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से इस समस्या पर पूर्ण नियंत्रण पाया जा सकता है।
6. श्रीमती इन्दिरा वर्मन तथा नीलू पंवार ने अपने शोध 'बालश्रम भारतीय समाज में अभिशाप' रिसर्च जर्नल ऑफ आर्टस, सोशल साईंस में बताया है कि बाल श्रमिक की व्याख्या दो प्रकार से की जा सकती है - A) आर्थिक व्यवसाय के रूप में, B) सामाजिक अभिशाप के रूप में।
7. जे.सी. कुलश्रेष्ठ (1980) चाईल्ड लेबर इन मुरादाबाद मेटलवेयरर इण्डस्ट्रीज, नई दिल्ली ने अपने अध्ययन में लिखा है कि वैधानिक

संरक्षण प्राप्त होने के बाद भी इस प्रकार के शोषण को समाज स्वीकारता है। यह सर्वाधिक चिंतनीय तथ्य है।

8. प्रतिभा कल्याणी (फरवरी 2015) ने अपने सामाजिक लेख – 'बालश्रम–मानवता के नाम पर कलंक' प्रतियागिता दर्पण मासिक पत्रिका में अपने अध्ययन निष्कर्ष के आधार पर लिखा है कि, 'बालश्रम का सबसे घिनौना रूप बाल वेश्यावृत्ति' है। देश में 17.15% वेश्याएँ 15 वर्ष से कम उम्र में ही वेश्यावृत्ति के पेशे में आ गई हैं। बालश्रम बालिकाओं के लिए एक सामाजिक आर्थिक समस्या है।
9. देवेन्द्र पटले – औद्योगिक विकास के साथ बाल श्रम की समस्या, कुरुक्षेत्र मासिक पत्रिका, नवंबर 2000, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अनुसार बालश्रम का बढ़ता प्रतिशत – परिवार, समाज, प्रांत, राष्ट्र के भविष्य के लिए गंभीर संकट बन रहा है।
10. डॉ. मुकेश कुमार वर्मा (2009) शोध – प्रबंध बाल मजदूरों का बदहाल बचपन, कुरुक्षेत्र पत्रिका के अनुसार जिन बच्चों पर देश के भविष्य की नींव टिकी है, उनकी नींव ही खुद कमजोर हो तो वे राष्ट्र की जटिल विकास प्रक्रिया का बोझ कैसे उठा पायेंगे ?
11. प्रोफेसर–समाजशास्त्र ए.के. जैन तथा निशा जैन (2010), 'बालश्रम एक गंभीर समस्या' रिसर्च जर्नल के अध्ययन अनुसार, पढ़ने, लिखने एवं खाने, खेलने, कूदने की उम्र में फूलों के समान सुकोमल प्यारे अवयस्क बच्चों को अर्थ उपार्जन हेतु माता–पिता द्वारा काम पर भेजने तथा सेवायोजकों द्वारा बालश्रम के सस्तेपन एवं सरल नियमों का लाभ और विभिन्न प्रकार की सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों से छूट के कारण बच्चों (बालकों, बालिकाओं) को विभिन्न शारीरिक कार्यों में जोड़ना, लगाना, कार्य करवाना ही बालश्रम कहलाता है।
12. ब्रह्म एवं गुप्ता (2009), 'औद्योगिकीकरण' के बढ़ते तीव्र वेग ने बालश्रमिकों की समस्या' को जन्म दिया है।

प्रस्तुत शोध विषय के उद्देश्य – बाल श्रम किसी क्षेत्र विशेष, जाति विशेष या स्थान विशेष की समस्या नहीं है। यह सार्वभौमिक समस्या है। इसका स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रांतीय, जिला, तहसील, ग्राम तक विस्तृत है। प्रभाव संबंधित प्रस्तुत शोध अध्ययन विषय 'बाल श्रमिकों की वर्तमान प्रस्थिति एवं परिवर्तन प्रतिमान' के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. बाल श्रमिकों की पारिवारिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. बाल श्रमिकों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
3. बालश्रम से उत्पन्न होने वाले विभिन्न दुष्परिणामों का अध्ययन करना।

शोध विषय की उपकल्पनाएँ – उपकल्पना दो शब्दों उप + कल्पना के योग से बना है जिसका तात्पर्य है पूर्व चिंतन। उपकल्पना इस बात का वर्णन करती है कि हम क्या देखना चाहते हैं? उपकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य है जिसकी वैधता की परीक्षा भी की जा सकती है। उपकल्पना शोध समस्या संबंधित ऐसा विचार है जो अत्यंत महत्वपूर्ण होता है और जिस विचार को केन्द्र बिन्दु मानकर अध्ययनकर्ता बार–बार उसी की ओर मुड़कर शोध तथ्य संकलन हेतु प्रेरणा प्राप्त करता है। प्रस्तुत शोध कार्य को पूर्णता प्रदान करने हेतु यह उपकल्पना बनाई कि–

1. बालश्रम का परिवार रूपी प्राथमिक संस्था पर बहुत अधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।
2. बाल श्रम का मानव समाज पर बहुत अधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।
3. बाल श्रमिक विभिन्न प्रकार के शोषणों का शिकार हो रहे हैं।

पद्धति शास्त्र (Methodology) – नई–नई जानकारियों एवं आँकड़ों को प्राप्त करने का एक व्यवस्थित तरीका है शोध। शोध कार्य को संपादित करने हेतु एक निश्चित पद्धति शास्त्र (मेथेडोलॉजी) का उपयोग किया जाता है। प्रस्तुत शोध कार्य में दैव निदर्शन (Random Sampling) विधि का उपयोग किया गया है। इसमें लाटरी पद्धति से चयन इकाईयों को चुना गया है। अध्ययन क्षेत्र – संपूर्ण जिला इन्दौर, इन्दौर जिले में निवासरत सभी बाल श्रमिक अध्ययन का समग्र है।

साक्षात्कार अनुसूची – शोध इकाईयो का चयन करने के उपरांत साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से आमने–सामने की स्थिति में बैठकर प्रत्यक्ष साक्षात्कार अनुसूची भरवाकर शोध कार्य पूर्ण किया गया है।

समंक (डॉटा) संकलन के स्त्रोत – प्रस्तुत शोध कार्य के लिए समंकों का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों से किया गया है। **प्राथमिक तथ्य संकलन–** साक्षात्कार अनुसूची। **द्वितीयक तथ्य संकलन–** शोध संबंधित पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित विभिन्न सरकारी रिपोर्ट, गैर सरकारी संगठनो (NGO's) की अध्ययन व शोध सामग्री, शोध विषय सर्वेक्षणों की रिपोर्ट, पूर्व सम्पन्न अध्ययनों तथा कम्प्यूटर, इंटरनेट पर उपलब्ध विभिन्न वेबसाइटों का अध्ययन कर जानकारियाँ, प्रभाव तथा महत्वपूर्ण आँकड़े संग्रहित किये गये हैं। जिससे बालश्रम का परिवार एव समाज पर पड़ रहे प्रभावों से संबंधित विस्तृत विश्लेषणात्मक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन शोध कार्य पूर्ण किया गया है।

प्राप्त निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध कार्य को सम्पन्न करके प्राप्त निष्कर्ष निम्नानुसार है

1. अधिकतम बाल श्रमिक 6 से 14 वर्ष की आयु समूह के पाये गये हैं।
2. 80 प्रतिशत से अधिक बाल श्रमिक अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के पाये गये हैं।
3. लगभग 94.5 प्रतिशत बाल श्रमिक गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले हैं।
4. बाल श्रमिकों का शैक्षणिक स्तर – लगभग 35 प्रतिशत निरक्षर, 50 प्रतिशत पाँचवी पास पाये गये।
5. बाल श्रमिकों में कई बच्चे भिक्षावृत्ति कर पेट भरते हुए पाये गये इससे बाल श्रम निषेध कानून के साथ ही भिक्षावृत्ति निषेध कानून का उल्लंघन पाया गया।
6. माता – पिता का शैक्षणिक स्तर बहुत कम पाया गया।
7. बच्चों में शिक्षा के प्रति आकर्षण कम। जो इन बच्चों के सर्वांगीण विकास में बाधक सिद्ध हो रहा है।
8. पारिवारिक आय 2000 से 4000 के मध्य है। बाल श्रमिकों के अधिकतर परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं।
9. बाल श्रमिकों के व्यवसाय के बारे में जानकारी प्राप्त हुई कि अधिकतर बाल श्रमिक होटलों, गैरेजों, घरों, फुटकर सामान बेचने का काम करते हैं।
10. लगभग 62 प्रतिशत बाल श्रमिकों के बड़े/छोटे भाई–बहन भी बाल श्रमिक काम कर रहे हैं।
11. प्रतिदिन 8 घंटे से अधिक कार्य करते हैं, मजदूरी बहुत कम मिलती है।
12. अधिकतर बाल श्रमिक एक ही प्रकार के कार्य में पिछले 2–4 वर्षों से लगे हैं, इनका मालिक इन्हें आसानी से नहीं छोड़ता है।
13. अधिकतर बाल श्रमिकों को पाउच खाने, गुटका खाने, वाईटनर सूंघने, शराब पीने की आदत है, जो इनकी सेहत पर खराब असर डालती है।
14. इन बाल श्रमिकों में से 86 प्रतिशत को पारिवारिक विघटन की समस्या का सामना करना पड़ रहा है।
15. 92 प्रतिशत बाल श्रमिकों की सामाजिक स्थिति निम्न स्तरीय पाई गई है।
16. बाल श्रमिकों का सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक शोषण लगातार

हो रहा है।

प्रमुख सुझाव –

1. बाल श्रम निषेध अधिनियम–1986 का दृढ़ता से पालन सुनिश्चित किया जाना सर्वाधिक प्रासंगिक होगा।
2. बाल श्रमिकों के लिये विशेष पाठशालाओं की व्यवस्था की जानी चाहिये।
3. शासन की विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों जो विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के बच्चों के लिये निर्मित की गई है उसका अधिकतम इन बाल श्रमिकों को मिलना चाहिये।
4. इन श्रमिकों के परिवारों के लिये गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम चलाया जाना चाहिये।
5. बाल श्रमिकों में भिक्षावृत्ति रोकने के लिये कड़े कदम उठाये जाना चाहिये।
6. बाल श्रमिकों के माता–पिता से सतत् सम्पर्क करके उन्हें बाल श्रम के हानिकारक, दुष्परिणामों से अवगत कराना चाहिये।
7. बाल श्रमिकों जिसमें विशेषतौर पर बालिकाओं को व्यवसायिक, शैक्षणिक, लघु कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प प्रशिक्षण दिया जाना प्रासंगिक होगा।
8. बाल श्रमिकों को उचित वातावरण नहीं मिल पा रहा है, अत: इनमें आपराधिक प्रवृत्ति भी पनप रही है। इसे रोकने हेतु इन्हें पर्याप्त मार्गदर्शन, उचित परामर्श प्रदान किया जाना उल्लेखनीय होगा।
9. संतुलित व सही भोजन न मिलने पर इन बाल श्रमिकों में कई बार कुपोषण की स्थिति भी निर्मित होती है जिससे इनका विकास अवरूद्ध होता है, अत: इस दिशा में भी सही कदम उठाना जरूरी है।
10. धुम्रपान एवं नशाखोरी रोकने के लिये इन्हें सही मार्गदर्शन दिया जाना चाहिये।
11. प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य रूप से शिक्षा दी जानी चाहिये।
12. गरीब परिवारों से संबंध रखने वाले इन बाल श्रमिकों को रोजगार प्राप्ति हेतु घरेलू स्तर पर, लघु कुटीर उद्योगों, व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान करके रोजगार प्राप्ति की दिशा में सहायता प्रदान करना सर्वाधिक प्रासंगिक होगा।

प्रस्तुत शोध अध्ययन का महत्व – इस शोध विषय की सामाजिक प्रासंगिकता वर्तमान समय वर्ष–2016 में बहुत अधिक है। बाल श्रम वर्तमान समय की एक गंभीर सामाजिक समस्या बनता जा रहा है। यह समसामायिकी से भी जुड़ा एक महत्वपूर्ण विषय है। इस शोध कार्य में बाल श्रमिकों की पारिवारिक तथा सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। वर्तमान में जब हमारी सामाजिक सांस्कृतिक संरचना संक्रमण के एक नये दौर से गुजर रही है। बढ़ती हुई जनसंख्या वृद्धि, उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण, महंगाई, पिता का शराबी होना, नशा करना, शिक्षा से दूरी, बच्चों का स्कूल न जा पाना आदि का सम्मिलित परिणाम है– बालश्रम की समस्या का उत्पन्न होना। बालश्रम शोध विषय की सामाजिक, सांस्कृतिक प्रासंगिकता वर्तमान समय वर्ष 2016 में बहुत अधिक है। मध्यप्रदेश के विदिशा जिले के श्री कैलाश सत्यार्थी जी को नोबल शांति पुरस्कार वर्ष–2014 में बालश्रम उन्मूलन, बचपन बचाओ अभियान पर किये गये उल्लेखनीय एवं श्रेष्ठ कार्यों हेतु प्रदान किया गया है।

प्रस्तुत शोध विषय में अध्ययन का महत्व लगातार बढ़ता जा रहा है। संदर्भित सभी साहित्य का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि इस विषय से संबंधित अधिकांश शोध कार्य केवल होटलों में, गैरेजों में कार्य करने वाले बाल श्रमिकों पर ही हुऐ हैं।

उपरोक्त इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर इन्दौर जिले में रहने वाले बाल श्रमिकों को केन्द्र बिन्दु मानकर वर्तमान शोध कार्य सम्पन्न किया गया है। साथ ही इस शोध कार्य में यह भी जानने का प्रयास किया गया कि यह बालश्रमिक अब क्या सोचते हैं ? यह लोग वर्तमान प्रयासों से कुछ ज्ञान अर्जित कर रहे हैं या नहीं। संबंधित तथ्यों के साथ शोधकर्ता स्वयं एक समाजशास्त्र विषय का विधार्थी है अत: उसके मन में भी शोध संबंधी जिज्ञासा है। इन्हीं विशेष तथ्यों को ध्यान में रखकर शोधकर्ता द्वारा वर्तमान शोधकार्य सम्पन्न किया गया है जिससे बाल श्रमिक बनने के प्रमुख कारणों, इसके पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तृत अध्ययन करके उसके निराकरण हेतु क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं? क्या प्रयत्न किये जा सकते हैं ? आदि ज्ञात किये गये हैं। इन्हीं महत्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए यह विश्लेषणात्मक समाजशास्त्रीय समग्र अध्ययन शोधकार्य सम्पन्न किया जा गया है। आज आवश्यकता है मिलजुलकर समन्वित प्रयास करने की जिससे इस बालश्रम रूपी सामाजिक समस्या का पूर्ण उन्मूलन करके मानवता व अमूल्य बाल माननीय जीवन को बचाया जा सके। यह शोध कार्य भी इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ – सामाजिक शोध व सांख्यिकीय, विवेक प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 2009, पृ.क्र.–27
2. गुप्ता, प्रो. एम.एल., शर्मा, डॉ. डी.डी. – सामाजिक समस्याएँ, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, संस्करण, 2010, पृ.क्र.–729
3. पाण्डेय, एस.एस. – समाजशास्त्र, अनुसंधान पद्धतियाँ एवं विश्लेषण, टाटा मैक्ग्रहिल बुक्स कम्पनी, न्यूयार्क, 1952, पृ.क्र.–209
4. अग्रवाल, जी.के., पाण्डेय, एस.एस. – सामाजिक शोध एवं सांख्यिकीय, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, संस्करण, 2012, पृ.क्र.–12, 13
5. रस्तोगी, विनोद कुमार, लेख – भारत में बालश्रम नियति और नीति, बाल श्रम – पत्रिका–योजना विशेष अंक।
6. मिश्र, डॉ. लक्ष्मीधर – भारत में बाल मजदूर, नाजुक बचपन मुश्किल जिम्मेदारी, नईदुनिया समाचार पत्र।
7. आहूजा, राम – सामाजिक समस्याएँ, संस्करण 1997।
8. देवेन्द्र, के. पटले : औद्योगिक विकास के साथ बाल श्रम की समस्या, कुरूक्षेत्र, वर्ष–2000, माह नवम्बर, प्रकाशन विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका।
9. शर्मा, डॉ. मुकेश कुमार, 2005 – बाल मजदूरों का बदहाल बचपन, कुरूक्षेत्र पत्रिका, पृ.क्र.–4
10. कल्याणी, प्रतिभा – बालश्रम – मानवता के नाम पर कलंक, सामाजिक लेख – प्रतियोगिता दर्पण, फरवरी, 2015, पृ.क्र.–100, 101
11. कुलश्रेष्ठ, जे.सी. (1999) – चाइल्ड लेबर इन मुरादाबाद मेटल इंडस्ट्री, द इकोनोमिक टाइम्स, नई दिल्ली।
12. नईदुनिया, पत्रिका, रोजगार समाचार, द हिन्दू, जनसत्ता, समाचार पत्रों से प्राप्त शोध विषय संबंधित अति महत्वपूर्ण अध्ययन सामग्री।

****

सोशल मीड़िया का समाज पर प्रभाव (महाविद्यालयीन छात्राओं के अध्ययन पर आधारित)

डॉ. राजश्री शाह *

प्रस्तावना – भूमण्डलीकरण के इस युग में सोशल मीड़िया ने मानव जाति को अपने व्यापक प्रभाव में समेट लिया हैं। आज का एक क्षण भी सोशल मीड़िया और इन्टरनेट के बिना व्यतीत नहीं होता हैं। सोशल नेटवर्किंग दुनिया भर में इन्टरनेट पर होने वाली प्रमुख गतिविधी बनती जा रहीं हैं। यह संचार माध्यम का एक तरीका हैं। इसके माध्यम से समाज को परम्परागत प्रतीकों का अर्थ बदला हैं हमारी नई पीढ़ी इन प्रतीकों को वास्तविक रूप से ग्रहण कर रही हैं।

सोशल नेटवर्किंग साइट्स संचार व सूचना का सशक्त माध्यम हैं। इसके माध्यम से ज्ञान विज्ञान, साहित्य, संगीत, कला, ज्योतिषी, शिक्षा आदि से संबंधित अनेक जानकारियों का आदान प्रदान भी किया जा सकता हैं उनके विचार देश और दुनिया के हर कोने तक पहुँचते हैं। किसी भी 'चेट ग्रुप्स' के माध्यम से अपने विचारों पर वाद-विवाद करते हैं। खुलकर राय प्रकट करते हैं। वस्तुत: सोशल मीड़िया परस्पर संवाद का वेब आधारित एक ऐसा गतिशील मंच हैं। आज दुनिया भर में अपनी सुविधा अपनी परिस्थितियों के माध्यम से सोशल साइट्स का इस्तेमाल किया जा रहा हैं इस परिवर्तनशील युग में फेसबुक, टविट्र, हाइक, यू-ट्यूब, विकिपीड़िया, फोरम, रेडिट आदि सभी सूचनाओं की प्राप्ति के सशक्त माध्यम हैं। ब्लॉग पर की गई पोस्ट ट्विटर की ट्विट तथा फेसबुक पर पोस्ट अथवा स्टेटस के फोलोर्वस बढ़ते जा रहें हैं, निकट भविष्य में तो और इसके व्यापक विस्तार की संभावनाएँ हैं।

विभिन्न पक्षों के बीच संवाद स्थापित करने हेतु 1994 में पहला सोशल मीड़िया जी ओ साइट के रूप में सामने आया। इसका मात्र उद्देश्य अपने विचारों का आदान-प्रदान करना था। आज फेसबुक, ट्विटर, लंकइन, पिंटरेस्ट, माय स्पेस, ओरकुट जैसी अनेक सोशल साइट्स ने समाज को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया हैं। विभीन्न धर्म और समुदाय के लोगों द्वारा अपने विचारों के आदान प्रदान हेतु सोशल साइट्स का निर्माण किया जा रहा हैं। सोशल मीड़िया से समाज में वैश्विक समाज में परिवर्तित हुआ हैं। यह वह मंच हैं जब हर व्यक्ति अपनी बात को अपने विचार को दुसरों के सामने रख सकता हैं और दुसरो से बाते भी कर सकता हैं।

1. **अध्ययन का उद्देश्य** –

(अ) सोशल मीड़िया की प्रगति एवं उसके महत्व को समझना।

(ब) सोशल मीड़िया का समाज पर प्रभाव पर जानना।

2. **अध्ययन क्षेत्र** – शासकीय कन्या महाविद्यालय रतलाम की अध्ययनरत् 50 छात्राओं का चयन प्रतिदर्श हेतु किया गया।

3. **अध्ययन विधि –** प्रस्तुत विषय पर अध्ययन के लिए छात्राओं से साक्षात्कार द्वारा प्राथमिक आंकड़ो का संकलन किया छात्राओं से संचार माध्यम फेसबुक, गुगल, याहू, यू-ट्यूब ट्विटर आदि के उपयोग व विस्तार की जानकारी चाही गई।

द्वितीय संमक स्त्रोत पत्र-पत्रिकाओं, किताबे, इंटरनेट से जुड़ी वेबसाइट्स का अध्ययन किया गया।

महाविद्यालय में आज अधिंकाश छात्राएँ वाट्सएप, फेसबुक, इन्सटाग्राम, केन्डी केमरे से सेल्फी लेते हुए अपने दूरभाष यंत्र का उपयोग अपने खाली समय में करते हुए दिखाई देती हैं। इससे विदित होता हैं कि आज प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हैं।

बच्चे पढ़ाई करते वक्त अपने अध्ययन से संबंधित साइट्स का प्रयोग करते है इससे सोशल साइट्स का प्रभाव को जानने की इच्छा जागृत हुई।

4. **उपकल्पना –**

(अ) महाविद्यालय छात्राओं के द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स का प्रयोग करना।

(ब) सोशल मीड़िया के बुरे प्रभाव से छात्राएँ प्रभावित हैं।

छात्राओं से साक्षात्कार के दौरान विदित हुआ हैं कि महाविद्यालय द्वारा छात्राएँ सोशल मीड़िया का उपयोग अपने तरीके से करती हैं तथा सोशल मीड़िया में फेसबुक, व्हाट्स एप, इंस्टाग्राम का प्रयोग ज्यादा से ज्यादा करती हैं। अधिकाशं छात्राएँ फेसबुक का उपयोग अपनी सूचनाओं का आदान प्रदान हेतु करती हैं। ट्विटर पर छात्राएँ अपने विचार कम रखती हैं।

ट्विटर, फेसबुक का प्रयोग उत्तरदाताओं द्वारा साहित्यिक और अकादमिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करना होता हैं। पारिवारिक संबंधो एवं मित्रता में निरन्तरता बनी रहे इस हेतु भी सोशल साइट्स का उपयोग किया जाता हैं।

योग, नारी विमर्श, बाल विमर्श आदि सबकुछ सोशल मीड़िया में हैं। छात्राओं को इससे लाभ भी प्राप्त करती हैं। महाविद्यालय में आयोजित विभिन्न प्रतिर्स्पधाएँ जैसे वाद-विवाद, निबंध प्रतियोगिता किसी महापुरूष की जयन्ति से संबंधित साहित्य नेट से प्राप्त कर लेते हैं।

निष्कर्ष – इस प्रकार से स्पष्ट हैं कि व्यक्ति अपने-अपने तरीकों से सोशल नेटवर्किंग का प्रयोग करते हैं। और विभिन्न घटनाओं पर डिबेट रखते हैं। वीड़ियो कान्फ्रेन्सींग की सहायता से छात्राओं को शिक्षा अकादमिक गतिविधि, साहित्य आदि की जानकारी प्राप्त होने के साथ पुराने मित्रों, रिश्तेदारों से संबंध बनाते हैं। आज इस भौतिकवादी युग में अपने मित्रों, परिजनों से मिलने के लिए किसी के पास समय नहीं हैं अत: ऐसी स्थिति में सोशल नेटवर्किंग ही रिश्तों की सदृढ़ता बनाये रखने में एक सशक्त माध्यम हैं। सोशलमीड़िया से जहाँ एक तरफ सहभागिता बढ़ी हैं, घर बैठे व्यक्तियों को विश्व की सुलभ जानकारी प्राप्त हुई हैं वही दूसरी ओर युवा वर्ग में आज इसके दुष्प्रभाव भी दिखाई दे रहा हैं। बच्चे घरों में, छात्राएँ आज कक्ष में उपस्थित न होकर मोबाईल का प्रयोग करते हुए देखी जाती हैं। कभी-कभी

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

गलत फ्रेंडशिप, गलत जानकारी, ब्लैकमेल एवं डिप्रेशन की समस्याएँ युवा वर्ग में देखी जाती हैं।

सुझाव – सोशल नेटवर्किंग साइट्स आज एक स्टेट्स बन चुका हैं। यह हम पर निर्भर करता है कि हम मीड़िया से क्या अपेक्षा रखे। माता–पिता बच्चों के प्रति कितने जवाबदेही हैं बच्चा इसका प्रयोग किस हद तक कर रहा हैं कई गलत रास्ते तो उनके मार्ग में नहीं हैं। आदि सभी जानकारी हो और सोशल नेटवर्क का प्रयोग अपनी सीमा में हो तो यह बच्चों को सोशल भी बना सकती है और एकांकी भी।

तालिका क्रंमाक – 1

सोशल मीड़िया का प्रयोग

प्रयोग के कारण	संख्या	प्रतिशत
विषय अध्ययन एवं प्रतियोगी	40	80
मनोरंजन हेतु	8	16
अन्य कारक हेतु	02	04
	50	100

उपयुर्क्त तालिका से स्पष्ट हैं कि 80 प्रतिशत उत्तरदाता विषय अध्ययन प्रोजेक्ट कार्य एवं प्रतियोगिता परीक्षाओं की तैयारी हेतु सोशल नेट का प्रयोग करते हैं। मात्र 16 प्रतिशत उत्तरदाता मनोरजंन हेतु एवं 4 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य कारक जैसे स्वास्थय, योग, घरेलू कार्य, कुकिं रेसेपी के लिये कार्य करती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में उत्तरदाता से मिडिया से मिड़िया के दुष्प्रभाव को जानने का भी प्रयास किया गया हैं जो निम्न तालिका से स्पष्ट होता हैं।

तालिका क्रंमाक – 2

सोशल मीड़िया के दुष्प्रभाव से परिचित

स्थिति	संख्या	प्रतिशत
हाँ	50	100
नहीं	00	00

शत प्रतिशत उत्तरदाता सोशल मीड़िया के दुष्प्रभाव से परिचित हैं। इसलिए उत्तरदाता नियन्त्रण में रहकर ही नेट का प्रयोग करती है। उत्तरदाताओं के अनुसार नेट वाट्सएप एक आदतन प्रक्रिया बन सकती हैं यह एक प्रकार का नशा हैं यदि एक बार इसका प्रयोग किया तो घंटो इसी पर बैठे रहना अच्छा लगता हैं। इसलिए बहुत ही सोच समझकर इनका प्रयोग सीमा में किया जाता हैं।

इसी संदर्भ में उत्तरदाताओं के साक्षात्कार के दौरान विदित हुआ हैं कि मीड़िया व्यक्ति विकास के लिए उचित हैं इसका नियन्त्रण में उपयोग किया जाए तो।

तालिका क्रंमाक – 3

उत्तरदाताओं द्वारा सोशल मीड़िया का प्रयोग

मीड़िया का प्रयोग	संख्या	प्रतिशत
हाँ	30	60
नहीं	20	40
	50	100

उपयुर्क्त तालिका से स्पष्ट हैं कि 60 प्रतिशत छात्राएँ आजकल सोशल मीड़िया से जुड़ी हैं और 40 प्रतिशत इनका उपयोग नहीं करती हैं।

निष्कर्ष – इस प्रकार अध्ययन से स्पष्ट हैं कि आज के समय में बच्चे–बुढे सभी सोशल मीड़िया से जुडे हैं। इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों परिणाम सामने दिखाई देते हैं। कई बार प्रेरणात्मक सन्देश प्राप्त होते है इसमें कई मेसेज कहानी या फोटो के रूप में होते हैं। इसमें धर्म विशेष या किसी महापुरूषों की अच्छी बाते समाहित होती हैं सोशल नेटवर्क से सामान्य ज्ञान में वृद्धि होती हैं किसी भी विषय के बारे में जानकारी प्राप्त हो जाती हैं। सोशल मीड़िया का सबसे बड़ा फायदा गुमशुदा लोगों को खोजने में हुआ हैं।

नकारात्मक दृष्टिकोण से देखे तो इससे व्यक्तिगत एवं सामाजिक नुकसान होता हैं जैसे अश्लील सामग्री का पोस्ट होना बेतुके कमेंट, साम्प्रदायिक मेसेज, अनेक बार बच्चे बिना सोचे समझे कुछ भी लिख दिया जाता हैं। अश्लील मजाके की जाती हैं। जिनसे बच्चे डिप्रेशन का शिकार हो जाते हैं।

सुझाव–

1. सोशल मीड़िया का उपयोग बहुत ज्यादा नहीं करना (देर रात तक तो बिल्कुल उपयोग नहीं करना)।
2. रिक्वेस्ट भेजने वाले से सवाल पूछना कि वह आपका दोस्त क्यों बनना चाहता हैं।
3. प्रोफाइल पर जाकर म्यूचल फ्रेंडस या फोलोवर्स ट्विटर पर देखना अगर कामन फ्रेंडस है तो उसकी जानकारी होना।
4. प्रोफाइल फोटो को गुगल पर इमेज सर्च कर जानना चाहिये कि वह वास्तविक फोटो हैं।
5. रिक्वेस्ट भेजने वाले की फ्रेंड सूची चेक करना।
6. वॉल चेककर कई अश्लील सामग्री पोस्ट नहीं हुई हों।
7. यदि किसी भी प्रकार से अनहोनी होती हैं तो छिपाये नहीं अपने घर, परिवार, मित्रों रिश्तेदारों को बताये। धैर्य रखें। इसका समाधान उनके माध्यम से हो सकता हैं।
8. फेक अंकाउट से बचना चाहियें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. छात्राओं से प्राप्त सर्वेक्षण पर आधारित।
2. पत्र पत्रिकाओं के आधार पर।

****

'एच.आई.वी./एड्स और जागरूकता' (खरगोन जिले के सनावद तहसील के संदर्भ में)

आशीष नीलकंठ *

शोध सारांश – एच.आई.वी./एड्स दुनिया के कोने-कोने में फैल चुका है तथा इससे हर आयु वर्ग के व्यक्ति के जीवन को गंभीर ख़तरा पैदा हो गया है। एच.आई.वी./एड्स केवल स्वस्थ्यगत समस्या ही नहीं है एक सामाजिक आर्थिक समस्या भी है। यह अर्थ व्यवस्था और अन्य सामाजिक संस्थाओं के लिए भी समस्या उत्पन्न कर रहा है। प्रस्तुत शोध-पत्र में एच.आई.वी./एड्स से व्यक्ति और समाज पर पड़ने वाले प्रभावों इसके रोकथाम व नियत्रंण में कार्यरत विभिन्न संस्थाऐं एवं उनका समन्वय तथा समाज में एच.आई.वी./एड्स के प्रति जागरूकता के स्तर को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी – पानडेमिक –सार्वभौमिक व्यापक क्षेत्रों में हुई महामारी, एस.टी.डी. – यौन संचरित रोग।

प्रस्तावना – एड्स जो कि मानव जाति के सबसे भयंकर रोगों में से एक है यह विश्व के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में एक महामारी (पानडेनिक) के रूप में फैल चुका है और प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक खतरा बन चुका है। यह अब एक गंभीर सामाजिक, आर्थिक और जन स्वास्थ्य समस्या के रूप में उभरा है। एड्स अपना शिकार बनाने में आयु , लिंग, व्यवसाय और धर्म, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक, शैक्षिणक और पारिवारिक स्थिति के बीच कोई भेदभाव नहीं बरतता। आज विश्व में लगभग 4 करोड़ लोग एच.आई.वी/एड्स से ग्रस्त है और अकेले भारत में लगभग 24 लाख लोगों को एच.आई.वी/एड्स है। एच.आई.वी/एड्स से सक्रंमित लोगों के अलावा बहुत से लोग जैसे एच.आई.वी/एड्स सक्रंमित लोगों के परिवार ऐसे है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस महामारी से प्रभावित है। इस संदर्भ में यह बात उल्लेखनीय है कि एच.आई.वी/एड्स 20-45 वर्ष समूह के आर्थिक रूप से उत्पादक उन लोगो के बीच सबसे अधिक व्याप्त है जिन लोगो पर अपनी जीविका और गुजर-बसर के लिए कई परिवार निर्भर है समय की मांग है कि सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाऐं और समुदाय मिलकर इस रोग के प्रति जागरूकता लाकर नियमित करने का प्रयास तीव्रता से करें।

उद्देश्य –

1. एच.आई.वी./एड्स को जानना।
2. एच.आई.वी./एड्स के नियंत्रण में कार्यरत विभिन्न संस्थाओं को ज्ञात करना।
3. एच.आई.वी./एड्स रोग के विषय में समाज में जागरूकता के स्तर को ज्ञात करना।
4. एच.आई.वी./एड्स के नियंत्रण में अंत: क्षेत्रीय समन्वय का अध्ययन करना।

एड्स क्या है ? – एड्स के पहले रोगी की पहचान 1981 में की गई थी। केलिफोर्निया और न्यूयार्क के कुछ चिकित्सकों ने समलिंगीकामी पुरूषों में असामान्य अवसरवादी संक्रमण के लक्षण दिखाई दिये, इन संक्रमणों पर इलाज का कोई असर नहीं दिखाई दिया। इस प्रकार यह रोगी अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकें और अन्तत: उनकी मृत्यु हो गई। इन रोगियों में रोग के सामान्य लक्षण दिखाई नहीं दिये, जिससे उस समय के वैज्ञानिक परिचित थे। इस प्रकार उनको यह आभास हुआ की उनको अब नये रोग का इलाज करना है इस रोग को 'अक्वायर्ड' इम्यूनो डेफिसेंसी सिंड्रोम (AIDS)का नाम दिया गया।

सेन फ्रांसिस्कों एडबस फाउन्डेशन ने एकोनिम एड्स की व्याख्या इस प्रकार की है –

ए	– एक्वायर्ड यानि अर्जित	–	जन्म के साथ नही।
आई	– इम्यून यानि प्रतिरक्षी	–	शरीर की रक्षा प्रणाली।
डी	– डेफिसेंसी यानि कमी	–	ठीक प्रकार से काम न करना।
एस	– सिड्रोंम यानि लक्षण	–	चिन्हों और लक्षणों का समूह।

एक्वायर्ड यानि आर्जित शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया क्योंकि यह रोग न तो अनुवांशिक था और न ही अन्य परिस्थितियों का परिणाम था। दूसरे शब्दों में इसे सामान्य जीवन काल में अर्जित किया गया था। एड्स को फैलाने वाले विषाणु तथा एड्स की प्रथम रिपोर्ट का पता लगाने में कई वर्ष लगे। अब तक सभी मामलों में मानव शरीर में एड्स फैलाने वाले एच.आई.वी. का विकास विनाशकारी रहा है। दूसरे शब्दों में एड्स से पीड़ित व्यक्ति की मृत्यु अवश्यम्भावी है। यह एक ऐसा रोग है जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को नष्ट करता है मानव प्रतिरक्षा में कमी करने वाले विषाणु एच.आई.वी. द्वारा शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली नष्ट की जाती है।

एच.आई.वी. क्या है ? – एच.आई.वी. अंग्रेजी शब्दों 'हयूमन इम्यूनोडिफिशिएंसी' वायरस का संक्षिप्त नाम है। हयूमन अथवा मानव संबंधी इसलिए क्योंकि यह रोग केवल मानव में होता है, इम्यूनोंडिफिशिएंसी यानि प्रतिरक्षा संबंधी कमी, इसलिए क्योंकि इसमें व्यक्ति को रोगो से बचाने वाली रोग प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है वायरस यानि विषाणु, इसलिए क्योंकि यह अति सुक्ष्म जीव है, यह प्राणियों के शरीर को अपनी संख्या बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करता है।

एच.आई.वी. की चर्चा सर्वप्रथम सन् 1983 में पेरिस में की गई थी एच.आई.वी. को अब अतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकार्य कर लिया गया है। यह विषाणु प्रतिरक्षा प्रणाली की सहायक टी-कोशिकाओं में प्रवेश करता है कोशिकाओं में यह अनुवांशिक सामग्रियों को नष्ट करता है, इसके द्वारा पहुँचाई गई क्षति स्थायी होती है। शरीर के सभी तरल पदार्थो में सहायक टी-कोशिकाऐं होती है। रक्त वीर्य और योनि स्त्राव में इसकी सान्द्रता अधिक होती है।

* शोधार्थी (समाजकार्य) म. गा.चि. ग्रा. विश्वविद्यालय, चित्रकुट, सतना (म.प्र.) भारत

एड्स शब्द का प्रयोग तब किया जाता है जब रोग काफी बढ़ जाता है और व्यक्ति में एक या अधिक गंभीर सक्रमंण अथवा स्थितियॉ दिखाई देती है।

एच.आई.वी/एड्स के फैलने के मुख्य कारण –

1. एच.आई.वी. संक्रमित व्यक्ति के साथ असुरक्षित यौन सम्पर्क से।
2. एच.आई.वी. संक्रमित रक्त एवं रक्त उत्पाद चढ़ाने से।
3. एच.आई.वी. संक्रमित सूईयों या सिरिंजो के इस्तेमाल से।
4. एच.आई.वी. सक्रंमित गर्भवती माता से उसके होने वाले शिशु को।

एच.आई.वी / एड्स के नियंत्रण में अन्त: क्षेत्रीय समन्वय – एच.आई.वी./ एड्स के नियंत्रण में विभिन्न क्षेत्रों के बीच समन्वय का होना महत्वपूर्ण है। इसके लिए विभिन्न केन्द्रीय और राज्य सरकार के विभागों, शिक्षा संस्थाओं, स्थानीय निकायों, गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) विश्वास पर आधारित संगठनों और कारपोरेट् निकायों के बीच एच.आई.वी./ एड्स को रोकने तथा नियंत्रण करने के लिए प्रभावी साझेदारी और समन्वय का होना आवश्यक है।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (NACO) ने प्रकटीकरण और एच.आई.वी./एड्स से संमंधित मुद्दो को संवेदनशील बनाने के लिए विभिन्न संगठनों के साथ समय-समय पर बैठक करने के लिए कदम उठाए है। गैर-सरकारी संगठनों और अन्य निजी संगठनों (Faith based organizations, FBOs) से कार्यक्रत के प्रबंधन में भाग लेने के लिए अनुरोध किया गया है। NACO ने समस्या के समाधान के लिए उद्योग जगत से सहायता की भागीदारी को सुनिश्चित किया है। भारतीय उद्योग संघ (Confederation of Indian Industries, CII) फेडरेशन ऑफ चेम्बर कॉमर्स ऑफ इंडिया (FICCI), एसो चेम (ASSOCCHAM) और बंगाल चेम्बर ऑफ कामर्स जैसे, उच्च स्तर के निकायों ने NACO के साथ मिलकर एच.आई.वी/एड्स/एस.टी.डी. निवारण एवं नियंत्रण कार्यो के एकीकरण के लिए सहयोग किया है इसके लिए उन्होंने अपने स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा एवं अन्य विकास कार्यक्रम शुरू किये । टाटा आयरन एवं स्टील कम्पनी, जमशेदपुर ने अपने परिवार कल्याण कार्यक्रम में एच.आई.वी/एड्स जागरूकता कार्यक्रम के एकीकरण के लिए अग्रणी भूमिका ले रही है।

एच.आई.वी/एड्स केवल स्वास्थ्यगत समस्या ही नहीं है, यह एक सामाजिक आर्थिक समस्या भी है। इस समस्या को नियंत्रित करने के लिए अन्त: क्षेत्रीय समन्वय भी बहुत जरूरी है। NACO ने अन्य सरकारी विभागों, गैर-सरकारी संगठनों और व्यापार जगत से इस समस्या के निदान एवं नियंत्रण के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों में भाग लेने के प्रयास कर रहे है। लेकिन अभी भी हमें भारत में एच.आई.वी/एड्स की रोकथाम करने और नियन्त्रित करने के लिए विभिन्न एजेंसियों की भागीदारी को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

एच.आई.वी/एड्स की रोकथाम और नियंत्रण में संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयास – संयुक्त राष्ट्र संघ की विभिन्न एजेंसियाँ भारत में एच.आई.वी/एड्स की रोकथाम और नियंत्रण के विभिन्न पहलुओं पर भारत सरकार को सक्रिय रूप से सहयोग दे रही है। एच.आई.वी/एड्स की रोकथाम व नियंत्रण के लिए संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न निकायो के काम साथ तालमेल के लिए उत्तरदायी, एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण एजेंसी यू.एन. एड्स है यू.एन एड्स को निम्न प्रकार समझा जा सकता है।

यू.एन. एड्स – एच.आई.वी. की महामारी से सामने आने वाली चुनौतियों पर विचार करने और उन पर कार्य करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने छ: संगठनों को एकत्रित करके एक कदम उठाया और संयुक्त सह प्रायोजित कार्यक्रम प्रारंभ किये।

यू.एन. एड्स सह प्रयोजक – यू.एन. एड्स के सातों सह-प्रयोजक संगठन अकेले संयुक्त रूप से यू.एन. एड्स सचिवालय के साथ मिलकर काम करते हुए इस महामारी से लड़ने के लिए व्यापक अनुभव प्रयास और संगत संसाधन प्रदान करते है। ये सात सह-प्रयोजक संगठन है –

- यूनिसेफ (संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय बाल आपात कोष)
- यू.एन.डी.पी. (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम)
- यू.एन.एफ.पी.ए (संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष)
- यू.एन.डी.सी.पी. (संयुक्त राष्ट्र औषधी (ड्रग) नियंत्रण कार्यक्रम)
- यूनेस्को (संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन)
- डब्ल्यू एच ओ (विश्व स्वास्थ्य संगठन) और विश्व बैंक

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध-पत्र में शोध अध्ययन पद्धति निम्नानुसार निर्धारित की गई है।

1. **निदर्शन पद्धति –** नियमित अंकन प्रणाली शोध-पत्र की अध्ययन पद्धति है।
2. **अध्ययन का समग्र –** खरगोन जिले की सनावद तहसील के शासकीय स्नातक महाविद्यालय में अध्ययनरत् समस्त छात्र/छात्राऐं अध्ययन का समग्र है।
3. **निदर्शन का आकार –** नियमित अंकन पद्धति के द्वारा सनावद तहसील के शासकीय स्नातक महाविद्यलय में अध्ययनरत् 95 छात्र/छात्राओं का चयन किया गया है।
4. **निदर्शन की इकाई –** नियमित अंकन प्रणाली के द्वारा चयनित छात्र/छात्राऐं निदर्शन की इकाई है।
5. **तथ्यों का संकलन –** प्राथमिक व द्वितीयक पद्धतियों के माध्यम से किया गया है।
6. **प्राथमिक स्त्रोत –** साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया है।
7. **द्वितीयक स्त्रोत –** किताबें, पत्रिकाऐं, समाचार-पत्र व इंटरनेट के माध्यम से द्वितीयक तथ्यों को एकत्रित किया गया है।

निष्कर्ष –

1. एड्स का पूरा नाम जानने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला की 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार एक्वायर्ड इम्यूनोडेफिसेंसी सिंड्रोम, 07 प्रतिशत – एक्सट्रा इम्यूनोडेफिसेंसी सिंड्रोम, 23 प्रतिशत एक्वायर्ड इम्यूनों डिफेंस सिंड्रोम, 10 प्रतिशत एक्सट्रा इम्यूनों डिफेंस सिस्टम है।
2. एच.आई.वी. का पूरा नाम जानने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला की 55 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार हयुमन इम्यूनोडेफिशिएंसी वायरस, 15 प्रतिशत हयुमन इम्यूनो डेफिशिऐंसी वेसल्स, 17 प्रतिशत- हयुमन इन्जेक्ट वायरस, 13 प्रतिशत-हयुमन इन्जेक्ट वेसल्स है।
3. एच.आई.वी. क्या है? का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला कि 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार विषाणु है, 15 प्रतिशत- जीवाणु है, 7 प्रतिशत- कवक है, 3 प्रतिशत उत्तक है।
4. एच.आई.वी./एड्स होने के मुख्य कारण का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला की 87 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार असुरक्षित यौन संबंध, 2 प्रतिशत- नशीली दवाईयों का सेवन, 3 प्रतिशत- रक्त दान करने से, 8 प्रतिशत रक्त ग्रहण करने से।

5. रक्तदान या ग्रहण करते समय किस प्रकार एच.आई.वी./एड्स होने की संभावना होती है का अध्ययन करने पर 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि संक्रमित रक्त होने पर, 28 प्रतिशत- संक्रमित सूई का प्रयोग, 47 प्रतिशत- उपरोक्त दोनों से है।
6. गर्भवती महिला के एच.आई.वी./एड्स संक्रमित होने पर शिशु में होने की संभावना का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला की 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार हॉ, 20 प्रतिशत- नहीं होता है।
7. कौन सी वस्तु एच.आई.वी./एड्स फैलने से रोकती है का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला कि 1 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि ताजा भोजन, 0 प्रतिशत- साफ-सुथरे कपड़े, 98 प्रतिशत- कण्डोम, 1 प्रतिशत साफ बर्तन।
8. एच.आई.वी./एड्स संक्रमित व्यक्ति से हाथ या गले मिलने पर एच.आई.वी./एड्स का संक्रमण होने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला कि 11 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि होता है, 89 प्रतिशत- नहीं होता ।
9. शौचालय की सीट और स्नान घर के संयुक्त प्रयोग से एच.आई.वी./एड्स संक्रमित होने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला कि 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि होता है 60 प्रतिशत- नहीं होता ।
10. संक्रमित व्यक्ति के पसीने में एच.आई.वी. के मौजूद होने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला है कि 38 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि हॉ, 62 प्रतिशत -नहीं।
11. मच्छर के काटने से एच.आई.वी./एड्स होने का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला है कि 100 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि नहीं होता है।
12. एच.आई.वी./एड्स संक्रमित बालक के साथ खेलने से एच.आई.वी./एड्स के संक्रमण का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकला की 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार होता है, 78 प्रतिशत- नहीं होता ।
13. वर्तमान समय में एच.आई.वी./एड्स का इलाज का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकला है कि 100 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि एच.आई.वी./एड्स का इलाज नहीं है।
14. अन्तर्राष्ट्रीय एड्स जागरूकता दिवस की जानकारी का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकला कि 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार 01 नवम्बर, 19 प्रतिशत 01, अक्टूबर, 8 प्रतिशत- 8 मार्च, और 47 प्रतिशत का मानना है कि 01 दिसम्बर को होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सिंह बीर : एचआईवी स्वास्थ्य और आपका समुदाय: वालंटरी हेल्थ एसोएिशन ऑफ इंडिया: नई दिल्ली।
2. मुखोपाध्याय आलोक: एसटीआईज यौन संचरित संक्रमण: वालंटरी हेल्थ एसोसिएशन ऑफ इंडिया: नई दिल्ली।
3. राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन: एचआईवी/एड्स तथा यौन संक्रमित रोगो से बचाव एवं नियंत्रण पर परिचारिकाओं हेतु: वालंटरी हेल्थ एसोसिएशन ऑफ इंडिया नई दिल्ली।
4. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय: एचआईवी/एड्स के मूल तत्व: नई दिल्ली: 2007
5. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय: एचआईवी/एड्स की रोकथाम: सामाजिक नैतिक मुद्दे: नई दिल्ली: 2007

पत्र-पत्रिकाएँ -

1. दैनिक भास्कर, 1 दिसम्बर 2015
2. नई दुनिया, 1 दिसम्बर 2015
3. इंटरनेट ।

****

वनाधिकार कानून और जनजातीय महिलाओं की स्थिति (अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

प्रो. आई. एस. सस्त्या *

शोध सारांश – देश को आजादी मिलने के साठ साल बाद अर्थात् वर्ष 2006 में वनाश्रित समुदाय के अधिकारों को मान्यता देने के लिए एक कानून पारित किया गया, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परंपरागत निवासी (वनाधिकारों को मान्यता) कानून, यह कानून बेहद है। यह केवल वनाश्रित समुदाय के अधिकारों को ही मान्यता देने का नहीं, बल्कि देश के जंगलों एवं पर्यावरण को बचाने के लिए वनाश्रित समुदाय के योगदान को भी मान्यता देने का कानून है। इसमें वनभूमि एवं वनों पर महिलाओं के समान अधिकार को मान्यता देने की बात कही गई है, हालांकि कानून के अंदर अभी भी काफी कमियां है, लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं कि इस कानून ने समुदाय के वनों के अंदर सामुदायिक अधिकार, जैसे लघु वनोपज एवं अन्य अधिकारों को मान्यता दी है।

महिलाओं के भूमि एवं वन संबंधी अधिकारों को पहली बार स्वीकार करने वाले वनाधिकार कानून ने वनाश्रित समुदायों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय के मद्देनजर उनके कई अधिकारों को मान्यता दी है। इन अधिकारों में महिलाओं की बराबर हिस्सेदारी सुनिश्चित की गई है। महिलाओं को अपने हक के लिए जागरूक होना होगा। वनाधिकार कानून को समझना होगा और आम नागरिक समाज को भी उनके समर्थन में आगे आना होगा। आधुनिकता के इस दौर में हम चाहे जितना महिला–पुरूष में गैर बराबरी खत्म हो जाने की बात करते रहे, लेकिन आम समाज की तरह इस रोग के जीवाणु देश में जल, जंगल और जमीन पर लोगों के अधिकारों के संदर्भ में बने कानूनों में भी मौजूद हैं। वनाधिकार कानून आने से पहले जो कानून प्रचलित थे। जब उनमें संबंधित समुदायों को ही उपेक्षित रखा गया तो ऐसे में महिलाओं को अधिकार देने की बात ही बेमानी है। संविधान के अनुच्छेद 14 में महिला और पुरूष के बराबरी के अधिकार को एक बुनियादी अधिकार के रूप में स्थापित किया गया है तथा लिंग के आधार पर किसी भी भेदभाव को गैर संवैधानिक माना गया है, लेकिन जब महिलाओं को जल,जंगल और जमीन का अधिकार देने की बात आती है तो देखने में आता है कि ऐसे तमाम कानूनों में महिलाओं की उपेक्षा ही की गई है। हाल में पारित हुए वनाधिकार कानून को छोड़कर किसी भी कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। महिलाओं के भूमि संबंधी अधिकारों को हमेशा उनकी संपत्ति के सवाल के साथ जोड़कर देखा जाता है, उन्हें सिर्फ पारिवारिक विरासत को लेकर बने कानूनों के आधार पर सीमित अधिकार दिए जाने की बात की जाती है लेकिन सच्चाई यह है कि ऐसे मामलों में भी ज्यादातर उन्हें स्वतंत्र रूप से अधिकार नहीं दिया जाता। कुल मिलाकर जिनसे महिलाओं का सामाजिक–राजनीतिक सशक्तिकरण हो सकता था और उनकी सुरक्षा सुनिश्चित हो सकती थी, उन अधिकारों को मान्यता देने में हमारी संसद और सरकारें नाकाम रही है।

शब्द कुंजी – वन रक्षा समिति, वनाधिकार कानून, भूमंडलीकरण, स्व–सहायता समूह।

प्रस्तावना – वनाधिकार कानून और जनजातीय महिलाओं की स्थिति– प्रस्तुत शोध तीन भागों में विभाजित है। प्रथम भाग में प्राकृतिक संसाधन एवं वनोपज तथा जनजातीय महिलाओं की स्थिति को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया गया है। दूसरे भाग में अध्ययन के ग्रामों का विश्लेषण किया गया है। इस भाग में आदिवासियों की सामाजिक,आर्थिक पृष्ठभूमि को विश्लेषित किया गया है। अंतिम भाग में अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कुछ तृणमूल स्तर के सुझावों का प्रतिपादन किया गया है।

वनाधिकार कानून में पहली बार वनों पर महिलाओं के मालिकाना हक की बात कही गई है और व्यक्तिगत एवं सामुदायिक अधिकारों पर भी महिलाओं के मालिकाना हक को दर्ज करने के कानूनी प्रावधान किए गए हैं,लेकिन वन एवं वन भूमि पर गरीब आदिवासियों का नियंत्रण स्थापित हो जाने के डर के चलते वन विभाग, प्रशासन,राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार ने इन समुदायों को मालिकाना हक देने के लिए अभी तक कोई इच्छा नहीं दिखाई है।

उत्तर प्रदेश के सहारनपुर के शिवालिक जंगलों में घाड़ क्षेत्र की रहने वाली खेतिहर मजदूर महिला सोना खिन्न होकर कहती हैं कि सरकार तो हमें चाहती ही नहीं। यह बयान पिछड़े इलाके में रहने वाली शिक्षा से वंचित एक आम औरत का है, लेकिन यह बयान एक बहुत बड़ी राजनीतिक सच्चाई की मुखर अभिव्यक्ति है।

सरकार इन्हें इसलिए नहीं चाहती, क्योंकि वनाधिकार कानून की मंशा के अनुसार जब जंगल महिलाओं और वंचित समुदायों के मालिकाना हक में आ जाएंगे तो वह बड़ी–बड़ी राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों को बड़े पैमाने पर न तो कौड़ियों के दाम वन भूमि उपलब्ध करा पाएगी, न प्राकृतिक संसाधनों को कोई सौदा होगा और न वन विभाग, पुलिस, प्रशासनिक अधिकारियों एवं माफियाओं–दलालों आदि को जंगल से किसी तरह की अवैध कमाई हो सकेगी। खास तौर पर वन विभाग के अधिकारी–कर्मचारी बड़े पैमाने पर होने वाली इस अवैध कमाई से सूदखोरी का काम नहीं कर पाएंगे।

आजादी से लेकर अब तक वन विभाग ने महिलाओं एवं समुदाय विशेष का वनों से अलगाव पैदा करने के लिए कोई कोर कसर बाकी नहीं छोड़ी, इसलिए ऐसा कोई भी कानून, जो वनों एवं प्राकृतिक संसाधनों पर महिलाओं और समुदाय विशेष के नियंत्रण की बात करता हो, उसे वन विभाग किसी भी कीमत पर लागू नहीं होने देना चाहता। मालूम हो कि वनाधिकार कानून वनों में रहने वाले आदिवासी समुदायों द्वारा पिछले 250 वर्ष से तिलका मांझी,सिदहू कान्हू एवं बिरसा मुंडा आदि के नेतृत्व में लगातार किए जा रहे

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय मनावर (म.प्र.) भारत

संघर्षों का ही नतीजा है, अंतत: संसद को वनाश्रित समुदाय के लिए यह कानून पारित करना पड़ा।

वनाधिकार कानून में महिलाओं के जिन अधिकारों को मान्यता दी गई है,उनका अपना एक महत्व है। अब वनों से संबंधित किसी भी मामले पर केवल पुरूषों का ही एकाधिकार नहीं होगा बल्कि ये अधिकार किसी पुरूष को तभी मिलेंगे जब उसके साथ परिवार की महिला का अधिकार भी दर्ज होगा। अगर कहीं पर एकल महिला है या परिवार की मुखिया महिला है तो भी यह अधिकार उसी के नाम से दर्ज होगा। घटना के संदर्भ में खीरी(उत्तरप्रदेश) में पति के मना करने के बावजूद एक परिवार की महिला मुखिया ने दावा भरा जिसे ग्राम वनाधिकार समिति ने स्वीकार किया। इसी तरह त्रिपुरा में भी कई परिवारों की महिला मुखिया को भूमि पर मालिकाना हक की पासबुक मिली है लेकिन ऐसा तभी होगा जब महिलाएं जागरूक होगी। इससे पहले इस तरह का अधिकार आज तक हमारे देश की महिलाओं को वन भूमि पर कभी नहीं मिला और न जंगल पर अधिकारों की बात तो दूर, महिलाओं द्वारा कृषि कार्यों में 90 प्रतिशत से अधिक योगदान करने के बावजूद आज तक उन्हें किसान होने की मान्यता तक नहीं दी गई। ब्रिटिश शासन से आज तक जितने भी कानून बने हैं वे पुरूष प्रधान ही बनते आये हैं इसलिए वनाधिकार कानून महिलाओं को दृष्टिगत अर्थात् महिलाओं के आंदोलन को देखते हुए बनाया गया है।

मध्य भारत की जनजातियों में टिकाऊपन विकास का इतिहास पुराना है। आदिवासी समुदाय काफी पहले से नदी, पहाड़ों एवं जंगलों में तथा उसके आस-पास रहते थे। ये नैसर्गिक संसाधनों से आत्मीयता एवं मित्रवत् संबंध रखते थे। जनजातियों की आवश्यकताएं अत्यंत सीमित थी और यह स्थिति लगभग अंग्रेजी शासन काल समाप्त होने तक कुछ भिन्नताओं एवं परिवर्तन के साथ बनी रही। इन सीमित आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय स्तर पर उपलब्ध नैसर्गिक संसाधनों से हुआ करती थी।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध कार्य में जनजातीय महिलाओं पर आर्थिक स्थिति में वनाधिकार कानून के प्रभाव का अध्ययन करने हेतु परिवार की वार्षिक आय, व्यवसाय जंगलों से वनोपज एवं दुधारू पशुओं की उपलब्धता का भी अध्ययन किया गया।

अध्ययन के उद्देश्य – जीवन के विभिन्न पहलुओं तथा अंत:संबंधों के मध्य यह कहना कठिन होगा कि आदिवासियों का आर्थिक जीवन उनके गैर-आर्थिक क्षेत्र से अलग है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि किस तरह से उनका भौतिक जीवन जिसमें प्रकृति, अर्थव्यवस्था के संसाधन तथा उसके प्रकार, जो कि प्राथमिक स्वरूप के हैं, कैसे उनका तेजी से ह्रास हो रहा है ? यह ह्रास उनके आर्थिक जीवन में बदलाव जैसे लघु वनोंपज का संग्रहण एवं विपणन से कृषि या मजदूरी अथवा दोनों पर उनकी निर्भरता बढ़ने से उनके गैर-आर्थिक जीवन को प्रभावित कर रहा है ? जनजातियों की आर्थिक स्थिति कैसी है ? जीवनयापन के कौन-कौन स्त्रोत इनके द्वारा अपनाये जाते हैं ? साक्षरता एवं शिक्षा की क्या स्थिति है ? स्वास्थ्य प्रबंधन एवं बीमारी के इलाज तथा रोकथाम के लिए वे कौन-सी चिकित्सा पद्धति अपनाते हैं ? इनके परिवार में उपलब्ध घरेलू एवं कृषि संसाधनों की स्थिति क्या है ? आधुनिक तकनीक से इनका कितना और किस हद तक साक्षात्कार हुआ है ? राजनैतिक क्रियाकलाप की क्या स्थिति है ? संवैधानिक रूप से क्या व्यवस्थाएं है ? एवं इनका जनजातियों के विकास में इसकी क्या भूमिका है ? आदि कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें प्रस्तुत आलेख में विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

प्राकृतिक संसाधन एवं वनोपज की स्थिति – मध्य प्रदेश के विभिन्न भागों में गैर-आदिवासी शासकों, खासकर मराठा शासकों के आने और कालांतर में ब्रिटिश सरकार के आने तथा उनकी लोभ से ओत-प्रोत संस्कृति का जनजाति बाहुल्य क्षेत्रों में फैलाव के कारण पशु-पक्षियों का व्यापक षिकार किया गया एवं विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पेड़ों की कटाई प्रारंभ हुई जिसके परिणामवरूप वनों की स्थिति लगातार बिगड़ती गई। आदिवासी प्रयासों एवं आंदोलनों के बावजूद भी इस बिगड़ती स्थिति को नहीं रोका जा सका और अंततोगत्वा जनजातियों की जो वन पर निर्भरता थी, उसमें कमी आ गई। वनों की स्थिति लगातार बिगड़ती गई। शासन द्वारा वन प्रबंधन हेतु समय-समय पर ऐसी नीतियाँ बनी, ऐसे अधिनियम बने, जिसने जहाँ एक ओर आदिवासियों को वन से दूर किया वहीं दूसरी ओर वन की स्थिति बिगाड़ने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी। यह प्रयास अंग्रेजी शासन के अंत तक रहा। इस परिवर्तन के कई परिणाम हुए परंतु जनजातियों की दृष्टि से अगर देखें वे त्रिशंकु की स्थिति में आ गए। उनकी स्थिति लगातार बिगड़ती चली गई। यह नकारात्मक स्थिति न केवल उनके आर्थिक जीवन में बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में भी बनी।

शासन ने आदिवासियों के आर्थिक विकास के लिये कई नवीन परियोजनायें प्रारंभ की हैं, परंतु क्रियान्वयन स्तर पर नाना प्रकार की समस्याएँ सामने आती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी नकारात्मक बल एक साथ आ गए हैं जो आदिवासी विकास की प्रक्रिया तथा उससे मिलने वाले लाभ को कम कर रहे हैं। पंचायत स्तर के अनुभव यह बताते हैं कि मध्यप्रदेश में पंचायत के तीनों स्तरों पर सैकड़ों आदिवासी प्रतिनिधि चुने जाने के बाद भी उनके द्वारा ईमानदारीपूर्वक आदिवासियों की समस्याओं का निराकरण नहीं किया जा रहा है। ऐसा क्यों है कि आदिवासी समुदाय के कई विधायक तथा सांसद विधानसभा तथा लोकसभा में होने के बावजूद भी सबसे अधिक गरीब एवं उपेक्षित लोगों की संख्या इसी संवर्ग में है ? ऐसा क्यों है कि सबसे अधिक अशिक्षित तथा शाला त्यागी बच्चे इसी समुदाय के हैं ? आदिवासी समुदायों की इन सभी मुख्य समस्याओं को संबोधित करने के लिये आदिवासी मामलों के मंत्रालयों द्वारा एक राष्ट्रीय आदिवासी नीति बनाई गई जिसे अभी अंतिम रूप नहीं दिया गया है। इस प्रारूप में निम्नांकित विषयों को समाहित किया गया है-(1) आदिवासी भूमि का अलगाव (2) आदिवासियों तथा वनों के मध्य संबंध (3) विस्थापन और पुनर्वास (4) मानव विकास संकेतकों में वृद्धि (5) अधोसंरचना का निर्माण (6) हिंसक अभिव्यक्ति (7) आदिम जनजातियों का विकास (8) आदिवासी उपयोजना की रणनीति का अनुपालन (9) सशक्तिकरण (10) लिंग समानता(11) गैर-सरकारी संगठनों के सहयोग को बढाना (12) आदिवासी क्षेत्रों का प्रशासन (13) संरक्षणात्मक तथा नियामकता का पालन (14) आदिवासी संस्कृति तथा परम्परागत ज्ञान का संरक्षण एवं विकास,और (15) आदिवासियों का सूचीकरण व विसूचीकरण। किसी भी समुदाय की यदि कोई नीति के विकास की सीढ़ी नहीं चढ़ी जा सकती।

अत:वनाधिकार कानून की सर्वप्रथम नीतियों का निर्धारण किया जाए तथा वर्तमान में आदिवासियों के स्वास्थ्य, शिक्षा तथा जीविकोपार्जन के तहत वनाधिकार की क्या स्थिति है उसको ज्ञात कर उनके लिए सर्वाधिक उपयुक्त नीति का निर्धारण किया जाए। इस नीति का निर्धारण नीचे से ऊपर की ओर होना चाहिए न कि ऊपर से नीचे की ओर। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत आलेख में आदिवासियों की शिक्षा,स्वास्थ्य तथा जीविकोपार्जन की वर्तमान स्थिति को रेखांकित किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन अलीराजपुर जिले के आदिवासी एवं अधिक वनों बहुल विकासखण्ड कट्ठीवाड़ा के चार अम्बाडबेरी,फल्यामउ, झड़ोली और मोरियागाँव में किया गया है। चयनित ग्रामों में भील एवं भिलाला जनजाति के लोग निवास करते हैं परंतु भील जनजाति के सदस्यों की संख्या काफी कम है। अध्ययन में सभी परिवारों को शामिल किया गया है तथा जनगणना पद्धति का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण हेतु प्राथमिक के साथ-साथ द्वितीयक स्त्रोतों का भी उपयोग किया गया है।

जनजातीय महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि –अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाले 90 प्रतिशत लोग फिर चाहे वह भील हो या भिलाला सभी की आर्थिक स्थिति, अपवादों को छोड़कर,लगभग निम्न है। साक्षरता एवं शिक्षा की स्थिति तो कुल ग्रामीणों में से 88 प्रतिशत ग्रामीण निरक्षर है। वहीं वार्षिक आय की स्थिति के अंतर्गत 35 प्रतिशत ग्रामीणों की कोई आय नहीं है। सरकारी संगठनों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं से मात्र 3.52 प्रतिशत ग्रामीण ही जुड़ें हैं। बचत की स्थिति एवं गैर-प्राथमिक पेशे यथा नौकरी एवं व्यापार, से जुड़ने की स्थिति निम्न है। 86 प्रतिशत ग्रामीण जीविकोपार्जन के लिए वनोपज का संग्रहण, कृषि एवं मजदूरी पर आश्रित हैं। उनकी पोशाक, यातायात के साधन तथा मनोरंजन के साधन आधुनिक एवं परंपरागत दोनों स्वरूप का है।

अध्यापित गाँवों के परिवार में पिछले वर्षों में मोबाइल फोन 11155 मोटर साईकल 375 टेलीविजन 54 इत्यादि की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। इसके लिए आधुनिक जीवनशैली के प्रति ललक एवं प्रधानमंत्री सड़क योजना के अंतर्गत गाँव-गाँव में पक्की सड़क का निर्माण, सूचना प्रौद्योगिकी के तहत गाँव-गाँव में मोबाइल टॉवर का निर्माण काफी लोगों की आय में तृणमूल स्तर पर कार्यरत विकास योजनाओं के कारण गैर-टिकाऊ इत्यादि कारकों को जिम्मेदार माना जा सकता है। सामान्यतया यह कहा जाता है कि पुरूषों की तुलना में इनके बीच महिलाओं की संख्या अधिक होती है। अध्यापित गाँवों के लिये यह सौ फीसदी सही है। यहाँ पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की संख्या अधिक है। इसका कारण यह है कि विवाह में वधुमूल्य लिया जाता है जिससे लड़कियां अधिक पैदा की जाती है। एक-एक परिवार में 5 से 6 कन्याओं को पैदा करना सौभाग्य समझते हैं।

जहाँ तक अन्य संसाधनों की उपलब्धता का प्रश्न है, चाहे संसाधन प्राकृतिक हो अथवा कृषि से संबंधित, सभी का स्वरूप एवं प्रकार परंपरागत है और अध्यापित गांवों में बहुतायत मात्रा में उपलब्ध है, परंतु लगभग सभी उपलब्ध संसाधन रहवासियों की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं लेकिन धीरे-धीरे बाहरी दुनिया से संपर्क होने के कारण अपेक्षाकृत धनाढ्य परिवार एवं शासन के आला अफसरों द्वारा यहाँ के प्राकृतिक संसाधन में जैसे-खनिज के अंतर्गत डोलोमाइड पत्थर, रेत इमारती लकड़ी में सागौन, बहेड़ा,शाल,आंजन की लकड़ी तथा महुआ, डोली, गोंद, चिरौंजी, आंवला, सीताफल इत्यादि का बहुतायत रूप से निर्यात हो रहा है। अध्ययन के ग्रामों में पाया गया कि ग्रामीण भौतिकवाद तथा उपभोग की संस्कृति के प्रति तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। यह स्थिति परिवार तथा ग्राम दोनों स्तरों पर देखी गई। अत: हम कह सकते हैं कि आदिवासी बहुल ग्राम भूमंडलीकरण की प्रक्रिया से जुड़-सा गया है। अगर इनके पास पैसे आ जाते हैं तो ये उपभोक्तावादी संसाधन जुटाने में संकोच नहीं करते हैं। उत्तरदाताओं ने पैसे आने के संदर्भ में संसाधनों को खरीदने के लिए ऐसे संसाधनों की बात कहीं जो आधुनिक प्रकृति के हैं तथा उपभोक्तावादी संस्कृति को फैलाने वाले हैं।

जनजातीय महिलाओं का आर्थिक जीवन – जहाँ तक जीवनयापन के स्त्रोतों का प्रश्न है, अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इनकी निर्भरता मुख्य रूप से प्राकृतिक संसाधन, कृषि तथा कृषि-मजदूरी पर आश्रित है। 89 प्रतिशत परिवारों के पास जोत की जमीन है परंतु 11 प्रतिशत परिवार भूमिहीन है। भूमिहीन परिवार मुख्य तौर पर गाँव के भीतर एवं बाहर मजदूरी का काम करते हैं। परंतु उनमें से 2 प्रतिशत परिवार को छोड़कर अन्य सभी, जिन्हें हम सीमांत किसान कहते हैं, स्वयं की खेती करने के साथ-साथ कृषि अथवा गैर-कृषि मजदूरी का काम भी करते हैं। ग्रामीण कृषि कार्य में रासायनिक खाद एवं आधुनिक बीज का प्रयोग लगभग सभी करते हैं। सामान्यत: परंपरागत फसलें उगाई जाती है, लेकिन कुछ वर्षों से आस-पास के गैर-आदिवासी किसानों द्वारा सोयाबीन व कपास का उत्पादन करने से वर्तमान में अध्ययन क्षेत्र के ग्रामीण भी अपने खेतों में सोयाबीन व कपास का उत्पादन करने लगे हैं। इनके द्वारा सोयाबीन व कपास का उत्पादन सामान्यता बेचने के लिए किया जाता है। ज्ञात हो कि एक समय कोदो-कुटकी व धान का उत्पादन काफी मात्रा में किया जाता था लेकिन इसका उत्पादन वर्तमान में अल्प मात्रा में वर्षा होने के कारण लगभग नहीं किया जाता है। ग्रामों में बंटाईदारी व्यवस्था लगभग नहीं है। इसी प्रकार जमीन का क्रय-विक्रय भी नहीं होता है। बालश्रम की प्रथा नगण्य है। ये गाँव पहाड़ी क्षेत्रों में होने से बड़े एवं छोटे तालाब भी नहीं है। वर्तमान में फसल की सिंचाई का मुख्य साधन कुँआ है लेकिन अधिकांश किसानों के पास मोटर -पंप नहीं है। 85 प्रतिशत ग्रामीण कृषि कार्य को मान-सम्मान एवं प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते हैं, परंतु अब नवयुवक एवं नवयुवतियों में कृषि कार्य के प्रति लगाव कम होता जा रहा है। वे मजदूरी एवं गैर-कृषि कार्य से संबंधित पेशों में जाना चाहते हैं, परंतु इसके लिए जो अनिवार्य अर्हताएं होती हैं, उसका उनमें पूर्णत: अभाव है। फिर भी समीपस्थ गुजरात राज्य में मजदूरी एवं गैर-कृषि मजदूरी के लिए पलायन कर जाते हैं।

अध्ययन के ग्रामों से स्थानीय वन जिसका कुल क्षेत्रफल 3472 हेक्टेयर है, काफी नजदीक है। इस वन में नाना प्रकार के पेड़-पौधे जिसमें सुगंधित एवं फलों वाले हैं। वनों में ही कई पूजा स्थल भी है जहाँ पर आदिवासी समुदाय के लोग पूजा करने जाते हैं। वन में औषधीय पौधों की भी भरमार है। काफी संख्या में आदिवासी महिलायें नित्य प्रति इस वन से जलाऊ लकड़ी लाकर स्थानीय बाजार में बेचती हैं, जिससे उनकी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। वनाधिकार कानून के तहत विभिन्न वन रक्षा समितियों का गठन तो हो गया है जिसके माध्यम से गाँव की महिलाएं इन समितियों में 80 प्रतिशत प्रतिनिधित्व करती है। गाँव की ये महिलाएं टेमरू पत्ता, फलदार पेड़-पौधे लगाना और इससे प्राप्त महुआ,डोली,गोंद,चिरोंजी का विक्रय भी इन्हीं महिलाओं द्वारा किया जाता है।

शिक्षा, स्वास्थ्य एवं उसके प्रबंधन की स्थिति – जहाँ तक ग्रामीणों में साक्षरता एवं शिक्षा की स्थिति का प्रश्न है, इससे संबंधित तस्वीर निम्न स्वरूप की है। बच्चों की तुलना में युवाओं में तथा युवाओं की तुलना में वरिष्ठ नागरिकों की दर कम है और इसी प्रकार बच्चों में साक्षरता की दर अत्यंत कम है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के स्तर में पिछले कई वर्षों से प्राथमिक शिक्षा एवं साक्षरता के फैलाव के लिए ग्रामीण स्तर पर सर्व शिक्षा अभियान के तहत प्रयास किया गया है किन्तु सम्मानजनक सफलता प्राप्त नहीं हुई। प्राथमिक शाला के उपरांत जैसे-जैसे हम उच्चतर कक्षाओं की ओर बढ़ते हैं वैसे-वैसे शाला में अप्रवेश एवं शाला त्याग की घटना भी बढ़ती जा रही है। इसी तरह, प्राथमिक शालाओं द्वारा दी जा रही शिक्षा गुणवत्ता की दृष्टि से संतोषप्रद नहीं है। ज्ञान की दृष्टि से बच्चे अत्यधिक पिछड़े हैं। मध्यान्ह भोजन,शिक्षक-

पालक संघ,विद्यालयों में बढ़ती अधो-संरचनात्मक सुविधायें इत्यादि ने नामांकन की दर को तो बढ़ाया परंतु पढ़ाई की गुणवत्ता में इन हस्तक्षेपों का कोई सरोकार नहीं है।

अत: यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस तरह की शिक्षा से इन बच्चों का कितना भला होगा ? आधुनिक विकास सुविधाओं का लाभ वे कितना ले सकेंगे ? ग्रामों में उच्च शिक्षा की स्थिति तो अत्यंत दयनीय है। किसी ग्रामीण ने स्नातक या स्नातकोत्तर स्तर की उपाधि प्राप्त की हो। यदि आदिवासी समुदाय को भूमण्डलीकरण के अंतर्गत शिक्षा आधारित रोजगार तथा अन्य लाभ लेना है तो उन्हें अपनी औपचारिक शिक्षा प्रणाली छोड़कर अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली के क्षेत्र में आना होगा (मिश्रा :2013) यह बात अध्ययन के ग्रामों में दिखाई पड़ रही है। वर्तमान में यह प्राथमिक स्तर पर दिखाई पड़ रही है परंतु कालांतर में यह उच्च शिक्षा स्तर पर भी दिखाई पडेगी।

ग्रामीण बीमारी से मुक्ति के लिए परंपरागत चिकित्सा सुविधा पर आश्रित रह रहे हैं। अध्ययन के ग्रामों में कई झाड़-फूंक करने वाले वैद्य भूमिका में है। इनके द्वारा काफी पहले से विभिन्न बीमारियों का इलाज किया जाता रहा है। इलाज के लिए जड़ी-बूटी की प्राप्ति स्थानीय वन से होती थी, परंतु आज स्थिति बदल गई है। आज ऐसा नहीं हो पा रहा है। सभी ग्रामों में सन् 1995 से आंगनवाड़ी केन्द्र कार्य कर रहा है। इन केन्द्रों द्वारा शिशुओं एवं गर्भवती माताओं इत्यादि के साथ-साथ अन्य का इलाज आधुनिक चिकित्सा पद्धति से किया जाता है। स्थानीय स्तर पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र भी कार्यरत् है। जनवरी 2011 से दिसम्बर 2011 तक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र द्वारा विभिन्न आयु समूह के कुल 998 ग्रामीणों का इलाज किया गया अर्थात् प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र द्वारा एक माह में औसतन 83 व्यक्तियों का इलाज किया गया। पहले की तुलना में इन केन्द्रों पर इलाज के लिए पहुँचने वाले रोगियों की संख्या भी तेजी से बढ़ी है। स्पष्ट तौर पर कहा जा सकता है कि ग्रामीणों को आधुनिक चिकित्सा पद्धति पर भरोसा हुआ है किन्तु आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होने से महंगे इलाज कराना संभव नहीं हो सका है अर्थात् ये आज भी जड़ी-बूटी और बड़वा(गुणिया) पर आश्रित हैं।

निष्कर्ष- यद्यपि अध्ययन क्षेत्र के चारों ग्रामों में 90 प्रतिशत लोगों के पास कृषि जोत भूमि है लेकिन इस कृषि भूमि से आय न्यूनतम होती है जिससे इनके परिवारों को पालने में भी कई परेशानियों का सामना करना पड़ता है। नतीजन इनके परिवारों की महिलाएं स्थानीय वनों पर आश्रित होकर अपनी जीविका चलाती है। अर्थात् भारत सरकार द्वारा लागू वनाधिकार कानून भी इनका सहयोग नहीं कर सका है चूँकि इन ग्रामों के आदिवासी 90 प्रतिशत अशिक्षित होने से वनाधिकार कानून का लाभ उन्हें नहीं मिल रहा है।

सूझाव -

1. अध्ययन के सभी चार ग्रामों में काफी संख्या में पालतू मवेशी पाए गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मवेशियों के पालन में ग्रामीण पारंगत है। अधिकांश मवेशी परंपरागत स्वरूप के हैं। अत: यह आवश्यक होगा कि उन परिवारों को भी ऐसे मवेशी यथा गाय, भैंस, बकरी आदि दी जानी चाहिए, जो परिवार आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत सक्षम नहीं है उन्हें प्रशिक्षण के पश्चात् एवं स्थानीय भौगोलिक तथा जलवायु की स्थिति को देखते हुए उत्तम किस्म के मवेशी भी पालने के लिए शासन द्वारा दिया जाना चाहिए। इन मवेशियों को चराने के लिए वनविभाग के चारागाह में चराने की सुविधा होना चाहिए।

2. ग्रामों में लगभग 11 प्रतिशत परिवार भूमिहीन है, परंतु आंकड़ों से स्पष्ट है कि अध्ययन के ग्रामों में एवं उसके अगल-बगल में काफी मात्रा में वनोच्छादित शासकीय भूमि उपलब्ध है, जो लगभग पड़त की स्थिति में है। अत: यह सूझाव है कि इन जमीनों में से प्रत्येक भूमिहीन आदिवासी परिवार को कम से कम एक-एक एकड़ भूमि आवंटित कर दिया जाए। अध्ययन के ग्रामों में कई स्व-सहायता समूह एवं वन रक्षा समिति है , जो लगभग कागजों पर ही हैं। अत: यह सुझाव है कि आवश्यक प्रशिक्षण के पश्चात् कम से कम 5-5 एकड़ जमीन प्रत्येक स्वसहायता समूहों को आवंटित कर दिया जाए जिस पर वे अपनी इच्छानुसार खेती करें एवं उसका लाभ उठायें। ज्ञात हो कि इस तरह का प्रयोग आंध्रप्रदेश के जनजातीय इलाकों में किया जा रहा है और उसके सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं।

3. अध्ययन के ग्रामों में वर्तमान में आदिवासियों की जीविका का प्रमुख साधन कृषि कार्य है। ग्रामीणों का कृषि कार्य के प्रति सकारात्मक सोच है। आवश्यकता इस बात की है कि कृषि कार्य को और अधिक लाभकारी बनाया जाए जिससे कि आदिवासी नवयुवक भी इसके प्रति आकर्षित हों। ऐसा सुझाव इस आधार पर दिया जा रहा है कि वर्तमान में आदिवासी युवकों का झुकाव कृषि कार्य के प्रति तेजी से घटता जा रहा है। इसके लिए आवश्यक है कि नाना प्रकार की सब्सिडी आदिवासियों को दी जाए। उन्हें सस्ती कीमत पर बिजली उपलब्ध कराई जाए। आधुनिक बीज की सुविधा, उर्वरक की सुविधा, सिंचाई की सुविधा, भण्डारण की सुविधा एवं उत्पादित सामग्री के विपणन की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए। वर्तमान में विभिन्न प्रकार के कृषि उत्पाद एवं वनोपज आदिवासी गाँवों में घूम रहे साहूकारों के हाथ अपेक्षाकृत कम कीमत पर ही बेच देते हैं। ऐसे साहूकारों अथवा उनके प्रतिनिधियों से इनका पुराना परिचय होता है क्योंकि साहूकार स्थानीय चांदपुर अथवा छोटा उदयपुर बाजार का होता है, जो इन्हें समय-समय पर खाद्य सामग्री अधिक कीमत पर उधारी में देता है। ऐसे क्रेताओं से अपनी फसल की उचित कीमत के लिए ग्रामीण तर्क-वितर्क नहीं कर पाते हैं। यह भी देखने में आया है कि ग्रामीणों को इसकी भी सही जानकारी नहीं होती कि किस फसल सामग्री की कीमत स्थानीय एवं बाहरी बाजार में कितनी है। कई बार तो ग्रामीण वनों से चिरोंजी चावल अथवा मक्का के बदले इसी कीमत पर बेच देते है जबकि इसका वास्तविक मूल्य 200से 300 प्रतिकिलो के मध्य होता है और यह मात्र 20 से 30 रूपये प्रतिकिलो में ही बेच देते है अर्थात इनका साहूकारों द्वारा अधिक शोषण होता है। अत: इन समस्याओं को दूर करने के लिए शासन द्वारा प्रयास किया जाना आवश्यक है। यो तो अध्ययन के ग्रामों में ऋणग्रस्तता की समस्या नहीं है, फिर भी कुछ ग्रामीण ऋणग्रस्त हैं और वे अनौपचारिक स्त्रोतों से ही ऊँची ब्याज दर पर ऋण लेते हैं। अत: यह आवश्यक है कि बैंक या सहकारी समिति के चेहरे को आदिवासियों के अनुरूप बनाया जाए और कागजी कार्यवाही को काफी कम किया जाए, जिससे कि आम आदिवासी ऋण के लिए बैंक, सहकारी समिति इत्यादि पर ही निर्भर हो सके जहां उन्हें अपेक्षाकृत कम ब्याज देना पडे।

4. अध्ययन के ग्रामों में कई स्व-सहायता समूह एवं वन रक्षा समिति कार्यरत हैं। अधिकांश समूह एवं वन रक्षा समिति मृतप्राय है। परंतु यह सुखद है कि कम से कम ग्रामीण स्तर पर एक संगठन तैयार है। आवश्यकता इस बात है कि इस संगठन को जीवित एवं सशक्तिकृत किया जाए और इसका उपयोग गरीबों के दुख-दर्द को दूर करने, उनकी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति इत्यादि में लगाया जाए जिससे ग्रामीणों के जीवन की गुणवत्ता में सुधारात्मक परिवर्तन हो सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि इन्हें समय-समय पर प्रशिक्षण दिया जाए एवं उन कारकों पर प्रहार किया जाए जो इसे निष्क्रिय बनाने के लिए जिम्मेदार हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया है ऐसे

संगठनों को सामुदायिक कृषि,मध्यान्ह भोजन का प्रबंधन, जन वितरण प्रणाली की दुकान संचालित करने, इत्यादि के काम में लगाया जा सकता है। इस बात की भी जिम्मेदारी इन्हें प्रशिक्षण के उपरांत दी जा सकती है कि वे स्वास्थ्य एवं शिक्षा से संबंधित विभिन्न बिंदुओं पर ग्रामीणों को जागरूक करें।

5. चूँकि आदिवासी अर्थव्यवस्था उनकी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के आस-पास ही घूमती है, अत: यह आवश्यक है कि वे स्वस्थ्य रहें और उनकी दैनिक आय होती रहे, जिससे कि वे दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। अगर वे कुछ दिनों के लिए भी बीमार पड़ जाते हैं तो उनकी आय अवरूद्ध-सी हो जाती है जिसका उनके भोजन सामग्री इत्यादि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके साथ-साथ अपनी बचत से अथवा कर्ज लेकर उन्हें चिकित्सा सुविधा प्राप्त करनी होती है। पहले की तुलना में अब आधुनिक चिकित्सा पर उनका व्यय अधिक होने लगा है क्योंकि यह चिकित्सा सुविधा अपेक्षाकृत महंगी है। अत: इस समस्या से निपटने के लिए यह आवश्यक है कि उनके स्वास्थ्य की स्थिति को सुदृढ़ करने तथा उसे बनाए रखने के लिए जितने भी कार्यक्रम हैं उनका संचालन सफलतापूर्वक हो। अत: आवश्यक है कि उन्हें स्वच्छ एवं पर्याप्त मात्रा में पीने का पानी उपलब्ध करवाया जाए, जनवितरण प्रणाली ठीक से काम करें एवं पर्यावरण सुधार के लिए संचालित की जा रही वानिकी योजना भी ठीक से काम करेंगे तो निष्चित तौर पर ग्रामीण बीमार ही नहीं होंगे बल्कि उनके स्वास्थ्य की स्थिति में भी लगातार सुधार होगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि व्यापक पैमाने पर जन-जागरण अभियान चलाया जाए और यह काम स्थानीय गैर-सरकारी संगठनों, विद्यालयों एवं स्व-सहायता समूहों को दिया जा सकता है।

6. शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए यह अति आवश्यक है कि आवश्यक आयु समूह के सभी बच्चों एवं बच्चियों को नामांकित किया जाए। वर्तमान में प्राथमिक शाला में नामांकन की जिम्मेदारी आंगनवाड़ी केन्द्र पर है। इस काम से ग्राम पंचायत को भी जोड़ा जाना चाहिए। वर्तमान में बालक या बालिका ज्यों ही 5 वर्ष की पूर्ण हो जाती है उसका नामांकन आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ता द्वारा गाँव के प्राथमिक शाला में करवा दिया जाता है। नामांकन की जानकारी संबंधित पालकों को भी नहीं दी जाती है। परिणामत: बच्चों की पढ़ाई सही तरीके से हो इसमें पालकों की भूमिका नहीं हो पाती है। अत:यह आवश्यक है कि नामांकन के पश्चात् पालकों को भी नामांकन की जानकारी अनिवार्य रूप से दी जाए। इसके साथ-साथ चूँकि पालक सामान्यतया निरक्षर हैं और औपचारिक शिक्षा व्यवस्था के गुणों को गहराई तक नहीं समझते हैं इसलिए नामांकन के समय एवं कालांतर में समय-समय पर आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ता एवं विद्यालय के शिक्षकों द्वारा उन्हें शिक्षा के महत्व के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए जिसके कारण वे अपने बच्चों को शिक्षा के प्रति सचेत एवं आगाह कर सकते हैं।

7. शिक्षक प्राथमिक शिक्षा के मेरूदंड हैं। ऐसा इसलिए कि इस समय स्वचिंतन एवं स्वाध्याय की प्रवृत्ति बच्चों में विकसित नहीं हो पाती है। घरों में भी चूँकि अधिकांश माता-पिता निरक्षर या मात्र साक्षर हैं अत: वे भी बच्चों में स्वतंत्र चिंतन की प्रवृत्ति नहीं बढ़ा पाते हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक संवेदनशील, भावुक, मित्रवत् तथा ज्ञानवान हो। शिक्षकों की पर्याप्त संख्या विद्यालय में होनी चाहिए। उन्हें किसी भी हालत में गैर-शैक्षणिक काम में नहीं लगाया जाना चाहिए। क्षमता वृद्धि के लिए उनका प्रशिक्षण समय-समय पर होते रहना चाहिए।

संक्षेप में, यह कह सकते हैं कि अध्ययन के सभी चार आदिवासी बहुल ग्राम विकास के रास्ते पर हैं। वनाधिकार कानून से ग्रामीणों की भौतिक एवं सामाजिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है। परंतु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार कारक अधिकांशत: बाहरी हैं। अत: यह शंका उठती है कि विकास की चल रही प्रक्रिया कितनी स्थायी होगी, कितनी लाभकारी होगी और गरीब आदिवासी महिलाओं को इससे अपने को किस हद तक जोड़ पायेंगे ? हम भूमंडलीकरण के दौर से गुजर रहे हैं। इस कालखण्ड में अन्य ऐतिहासिक बाधाओं की उपस्थिति के साथ-साथ इसकी भी संभावना है कि राज्य द्वारा चलायी जा रही कल्याणकारी योजनायें भी धीरे-धीरे कमजोर या समाप्त होगी। ऐसी परिस्थिति में जनजातियों के जीवन में संकट आ सकता है और चल रही विकास की प्रक्रिया धूमिल हो सकती है। यहाँ यह भी देखना आवश्यक है कि बाहरी दुनिया से बढ़ते अंत:करण के कारण इनकी सदियों पुरानी सामाजिक एवं सांस्कृतिक अस्मिता विखंडित हो गई है और इसके साथ ही समस्याओं के प्रबंधन में संस्कृति की भूमिका भी छिन्न-भिन्न होती जा रही है। अत: हम कह सकते हैं कि अधिकांश जनजातियों के संदर्भ में विकास तो हो रहा है परंतु इसे टिकाऊ विकास न कह कर परनिर्भरतावादी विकास कहा जा सकता है। अगर हम जनजातियों के विकास को स्थायी, लाभकारी, स्वनिर्भरतावादी एवं समावेशी बनाना चाहते है तब निश्चित तौर पर हमें उपर्युक्त सुझावों को अमलीजामा पहनाना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौधरी, एस.एन(2012) : इन सर्च आफ सस्टेनेबल डेव्लपमेंट : सिनेरिओ इन ए ट्राइबल विलेज आफ मध्यप्रदेश, नई दिल्ली : सिरियल्स पब्लिकेशन्स।
2. चौधरी, एस.एन, मिश्रा मनीष एवं शर्मा मनोज (2013) : आदिवासी ग्रामों में टिकाऊ विकास का यथार्थ, दिल्ली : कन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी।
3. मिश्रा, मनीष (2013): वैश्वीकरण एवं आदिवासियों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति : बैतूल जिले की एक आदिवासी बहुल पंचायत के विशेष संदर्भ में।
4. वैश्वीकरण एवं शिक्षा संपादक, सिंह रामगोपाल, भोपाल: मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी पृ. 125-140।
5. दैनिक समाचार पत्र अमर उजाला नई दिल्ली प्रकाशन।

****

महिला अधिकार (कानून) एवं सशक्तिकरण

फरहत मंसूरी * डॉ. अर्चना गौर **

प्रस्तावना – वर्तमान समय में महिला अधिकार अंतर्राष्ट्रीय चर्चा का विषय बना हुआ है। स्त्री की पराधीनता एवं पिछड़ी सामाजिक दशा हमारे वर्तमान समय की प्रमुख समस्याओं में से एक ज्वलंत समस्या है। विभिन्न संस्कृतियों के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रखने वाली नारी की स्थिति में सदैव परिवर्तन होते रहते हैं। वर्तमान सामाजिक क्षेत्र में नारी को अनेक यातनायें खुलेआम या घर के दरवाजे के पीछे सहन करनी पड़ रही है। दिन प्रतिदिन सामाजिक अत्याचार हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में नारी अधिकारों पर विचार–विमर्श करना अतिआवश्यक है। नारी अधिकारों के हनन का मुख्य कारण धार्मिक परम्परायें हो सकती हैं क्योंकि किसी देश की सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक चेतना को उसकी सामाजिक परम्परायें प्रभावित करती हैं, इस संदर्भ में कुछ विद्धानों की मान्यता है कि भारतीय परम्परा जो मूलत: धर्म शास्त्रों पर आधारित है। इसमें ही नारी को दोयम दर्जा दिया गया है, और यह परम्परा ही नारी की वर्तमान दयनीय स्थिति के लिए उत्तरदायी है। दूसरी ओर कुछ विद्धानों का मानना है कि धर्म शास्त्र परम्परा में नारी का उच्च स्थान है। मुस्लिम समाज में महिलाओं की स्थिति इस्लाम की मान्यताओं के दायरे में परिभाषित की जाती है।

कुरान की आदर्श व्याख्या के अनुसार महिला और पुरूष दोनों ईश्वर की संतान हैं तथा दोनों का दर्जा समान है, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलायें पुरूषों के समान है। पैगम्बर का कहना है – 'महिलाओं के अधिकार बहुत पवित्र हैं, देखना उन्हें उनके अधिकर प्राप्त हो।' पुरूष के अभाव में नारी को व नारी के अभाव में पुरूष को अपूर्ण माना गया है।

सदैव से यातना और शोषण की शिकार रही महिला के उन्नयण हेतु विश्व स्तर पर पहली बार संगठित प्रयास 1903 में अमेरिका में वूमेन ट्रेड यूनियन के गठन के साथ शुरू हुआ। 1910 में अमेरिका में महिला दिवस मनाये जाने का मुद्दा उठाया गया। शुरू में विभिन्न देशों में अलग–अलग तिथियों को महिला दिवस मनाया जाता था। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा बाद में इसके लिए 8 मार्च की तिथि घोषित की गई। पांचवें दशक में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की घोषणा के साथ ही महिलाओं के लिए विश्व स्तर पर समानता की बात उठी। महिलाओं के अधिकारों को बढ़ावा देने तथा लिंग भेदभाव समाप्त करने में संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकार संबंधी घोषणा ने प्रेरक का काम किया।

1960 में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की 50वीं वर्षगाँठ पर महिलाओं को राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों में वृद्धि करने की घोषणा को स्वीकृति प्रदान की गई।

उद्देश्य –

1. महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य।
2. राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन।
3. भारतीय संविधान और महिला सशक्तिकरण।

- 1985 में नैरोबी में सम्पन्न अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में महिला सशक्तिकरण को परिभाषित किया गया, महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य – 'महिलाओं की पुरूषों के बराबर राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, वैधानिक, शारीरिक, मानसिक क्षेत्रों में उनके परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की संस्कृति पृष्ठभूमि में निर्णय लेने का स्वयत्ता है।' भारत में महिला सशक्तिकरण से आशय है प्राथमिक रूप से महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक दशा में सुधार लाना है। अत: जब कभी एक महिला का विकास होता है, तो पूरे परिवार का होता है। जब एक महिला सशक्त होती है तो पूरा समाज सशक्त होता है, क्योंकि वही तो मानव को एक अच्छा सामाजिक प्राणी व नागरिक बनाती है। शायद तभी तो नेपोलियन ने कहा था – 'तुम मुझे कुछ अच्छी माँ दे दो। मैं तुम्हें एक अच्छा राष्ट्र दे सकता हूँ।'
- केंद्र सरकार द्वारा 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन हुआ। यह अधिनियम संख्या 20 के तहत पार्लियामेन्ट द्वारा 1990 में पारित की गयी थी। महिला आयोग का काम महिलाओं के संवैधानिक हित और उनके लिए कानूनी सुरक्षा उपायों को लागू करना होता है। भारत में वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया था। इसी वर्ष देश में पहली बार राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति की घोषणा की गई। इस नीति को देश में पूरी तरह लागू करने के लिए 10 वर्ष का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।
- भारत में महिला सशक्तिकरण का बीजारोपण भारतीय संविधान का निर्माण करते समय ही हो गया जब महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष मानते हुए उन्हें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा विधिक समानता प्रदान की गई। महिलाओं के सशक्तिकरण की प्रक्रिया में चौथी पंचवर्षीय योजना के बाद उसे उल्लेखनीय रूप से परिवर्तन आया 'महिलाओं का विकास' मुद्दे के स्थान महिलाओं का सशक्तिकरण ने ले लिया। संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं तथा स्थानीय नगर निकायों के एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित कर दिया जाना इस दिशा में सर्वाधिक ध्यान दिया जा रहा है। वर्ष 2001 में भारत सरकार ने महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया तथा राष्ट्रीय महिला शक्ति सम्पन्नता नीति 2001 घोषित की जिसके लक्ष्य निम्नलिखित हैं–

(क) महिलाओं की पूर्ण क्षमता की प्राप्ति के लिए महिलाओं के पूर्ण विकास हेतु सकारात्मक आर्थिक तथा सामाजिक नीतियों के माध्यम से वातावरण का सृजन करना।

(ख) राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा सिविल सभी क्षेत्रों

*शोधार्थी (समाजशास्त्र) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
**सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

में पुरूषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का सैद्धान्तिक तथा वस्तुत: उपयोग करना।

(ग) राष्ट्र के सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी तथा निर्णय स्तर तक समान पहुँच।

(घ) सभी स्तरों पर स्वास्थ्य की देखभाल, स्तरीय शिक्षा, जीविका तथा व्यवसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान पारिश्रमिक, व्यवसायिक, स्वास्थ्य सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा तथा सार्वजतिक पदों इत्यादि में महिलाओं की समान पहुँच।

(ड़) महिलाओं के साथ होने वाले सभी प्रकार के भेद भावों के उन्मूलन के उद्देश्य से कानूनी प्रणालियों में सुदृढ़ीकरण।

(च) पुरूषों तथा महिलाओं दोनों की सक्रिय भागीदारी द्वारा सामाजिक रवैये और प्रथाओं में परिर्वतन।

(छ) विकास प्रक्रिया में महिला परिप्रेक्षयों को शामिल करना।

(ज) महिलाओं तथा बालिकाओं के साथ होने वाली हिंसा के सभी रूपों तथा भेदभावों को उन्मूलन।

(झ) सिविल समान विशेषकर महिला संगढनों के साथ भागीदारी बनाना तथा उनका सुदृढ़ीकरण आदि।

भारत में वैदिक भावना के अनुरूप महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु किये गये निम्नलिखित प्रावधानों को अंगीकर किया है –

- महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव का समापन कन्वेशन 1993 को स्वीकार करना।
- कार्यवाही हेतु मैक्सिको योजना 1975
- नैरोबी रणनीतियाँ 1985
- बीजिंग घोषणा पत्र एवं कार्यवाही हेतु प्लेटफार्म पर आगे की पहल को नई दिशा देना।

संविधान की प्रस्तावना में 'प्रतिष्ठा और अवसर की समता' तथा 'व्यक्ति की गरिमा इत्यादि वाक्याशों का प्रयोग कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि भारत में अब किसी भी प्रकार के भेद भाव को कोई स्थान नहीं मिलेगा। महिला अधिकारों को संरक्षित करने तथा महिलाओं के विकास के समान अवसर उपलब्ध कराने वाली संवैधानिक प्रावधानों का विवरण इस प्रकार है। (देखे)

महिला सशक्तिकरण की अवधारणा का प्रत्यक्ष संबंध मानव अधिकारों से जुड़ा हुआ है। महिला पारिवारिक व सामाजिक व्यवस्था का आधार स्वयं है। सृष्टि सृजन में उनका समान योगदान है। जब कभी एक महिला का विकास होता हैं तो पूरे परिवार का होता है जब एक महिला सशक्त होती है तो पूरा समाज सशक्त होता है क्योंकि वही तो मानव को एक अच्छा सामाजिक प्राणी व नागरिक बनाती है। मानवाधिकारों की वही असली हकदार है क्योंकि जब वह मानवाधिकारों का वरण करेगी तो समाज में अपने आप ही मानव अधिकारो का प्रसार होगा। अधिकारो के प्रति सम्मान के भाव बढ़ेगे। समूची मानव जाति विभेद–रहित जीवन यापन करते हुए आनंद का अनुभव करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. खान आफरीन, 2008, 'पसर्नल लॉ एवं मुस्लिम महिलाएँ मध्य प्रदेश सामाजिक अनुसंधान जर्नल, वर्ष 6, अंक 2, पृ. 17–27
2. चन्द्रशेखर ममता, 2011, मानवाधिकार और महिलाएँ, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. जैन सुरेश चन्द, जैन निमित, महिला अधिकार (कानून), तुलसी साहित्य पब्लिकेशन, मेरठ।
4. झारिया एन.आर., बोरकर मनोज कुमार, 26 एवं 27 फरवरी 2009, 'कामकाजी महिलायें एवं कार्य संतुष्टी', राष्ट्रीय शोध सगोष्ठी।
5. नरायण नाराणी प्रकाश, 2005, मानवाधिकार एवं महिलाएँ, सब लाइम पब्लिकेशन, जयपुर।

भारतीय संविधान में महिलाओं बावत् प्रावधान

क्र	भारतीय संविधान के अनुच्छेद	विवरण
1	14	कानून के समक्ष समानता व कानून का समान संरक्षण।
2	15(3)	जाति, धर्म, लिंग व जन्म स्थान आदि के आधार पर विभेद नहीं।
3	16(1)	लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता।
4	19	स्त्री पुरूष दोनों को समान रूप से स्वतंत्रता।
5	21	प्राण व दैहिक स्वाधीनता में समान प्रावधान।
6	23–24	शोषण के विरूद्ध अधिकार।
7	25–28	धार्मिक स्वतंत्रता दोनों को समान रूप से प्राप्त है।
8	29–30	शिक्षा व संस्कृति का अधिकार।
9	32	सांवैधानिक उपचारो का अधिकार स्त्री–पूरूष दोनों को समान रूप से प्राप्त है।
10	39 (घ)	समान कार्य के लिए समान वेतन का उपबंध।
11	40	पंचायत व नगर राज्य संस्थाओं में 73 वे एवं 74 वे संविधान संशोधन के द्वारा आरक्षण।
12	42	महिलाओं हेतु प्रसूति सहायता प्राप्ति की व्यवस्था।
13	47	पोषाहार, जीवन स्तर व लोक स्वास्थ में सुधार का दायित्व राज्य को सौपा गया।
14	51 (क) (ड़)	भारत के सभी लोग ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।

****

भिक्षावृत्ति एक सामाजिक समस्या भोपाल शहर के विशेष सन्दर्भ में एक अध्ययन

डॉ. रंजना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – भिक्षावृत्ति एक विश्व व्यापी समस्या हैं, यह हमारे देश में एक रोग की भांति फैली हुयी हैं। विगत वर्षो में भिक्षावृत्ति की समस्या के प्रति समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, राजनीतिज्ञो तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि का ध्यान आकर्षित हुआ हैं। भारत में लगभग 14 लाख व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी उदरपूर्ति का एक मात्र साधन भिक्षावृत्ति है। इसमें लूले, गूंगे, बहरे, अंधे, मानसिक रूप से विकृत तथा कोढ़ आदि भयानक बीमारियों से ग्रस्त लोग शामिल हैं।

भारत वर्ष में इसका इतिहास काफी पुराना हैं। आश्रय व्यवस्था के जन्म के साथ ही भिक्षादान के ऐतिहासिक इतिहास का श्री गणेश हुआ। प्राचीन काल में हमारे देश में ब्रम्हचारी, वानप्रस्थ और सन्यासी तीन प्रकार के व्यक्तियों को ग्रहस्थो के द्वारा अतिथ्य प्रदान किया जाता था। भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति आज से भिन्न थी। विद्यार्थी गुरू के पास आश्रय में रहा करते थे, उनके जीवन यापन का साधन भिक्षावृत्ति ही थी, वे केवल उतनी ही भिक्षा मांगते थे जितनी की आवश्यकता उन्हें एक दिन के लिये होती थी। इस प्रकार भिक्षा के पीछे एक विशेष प्रकार का उद्देश्य था।

वर्तमान समय में इस समस्या को सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाय तो यह प्रतीत होता हैं कि यह व्यक्तिगतक विघटन के अन्तर्गत ही अधिक पूर्णत: के साथ ही मिलती हैं। बिना किसी परिश्रम के प्रार्थना एवं विनती के आधार पर अन्य व्यक्ति के दान, धर्म, दया के संवेगों को उत्तेजित करके जो दान दिया जाता हैं उसके भिक्षावृत्ति कहते हैं और इस प्रकार की वृत्ति के आधार पर जीवन यापन करने वाले को भिक्षुक कहा जाता हैं।

कुछ अपराधिक लोग बालको का अपहरण करके उनसे भिक्षावृत्ति का कार्य करवाते हैं। बाल भिक्षावृत्ति निराक्षमता व निर्धनता का ही परिणाम हैं। ये लोग भी समाज पर आश्रित होते हैं और समाज के लागों से रूपये पैसे और खाद्य सामग्री की प्राप्ति की इच्छा रखते हैं। बाल भिक्षुक 18 वर्ष कम आयु के वे बालक हैं जो सड़क पर, फुटपाथ, मंदिर, रेलवे स्टेशन पर भीख मांग कर अपना जीवन यापन करते हैं। ये नाचकर, गाकर, ढपली बजाकर भी भिक्षा मांगते हैं, कभी-कभी किसी गिरोह द्वारा भी इनको भिक्षा मांगने के लिये मजबूर किया जाता हैं।

पूरे देश में 17 करोड़ बच्चें ऐसे हैं जो गरीबी रेखा के नीचे गुजर करने के कारण कभी स्कूल का मुहं नहीं देख पाते। अपने पेट के कारण भिक्षावृत्ति के लिये बाध्य होना पड़ता हैं। शिक्षा के प्रकाश से वंचित, समाज द्वारा तिरस्कृत, उपेक्षा और अभावों की दुनियां में पले, बुराईयों की ओर निरन्तर आगे बढ़तें हुये ये नन्हें बालको की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रहीं हैं। आर्थिक असमानता, शोषण, पक्षपात, सामाजिक पर्यावरण आदि भिक्षावृत्ति को सतत् प्रोत्साहन देने वाले तत्व होते हैं।

उद्देश्य –

1. बालकों से भिक्षा मंगवाने में परिवार की भूमिका।
2. बाल भिक्षुक से भिक्षा मांगने के कारण का पता लगाना।
3. मादक द्रव्य व्यसन आदि बुरी आदतों का शिकार होने के कारण भिक्षा मांगना।
4. बिना श्रम किये भिक्षा मिलना।
5. पारिवारिक परम्परा।
6. शासन के द्वारा किये गये प्रयास।

अध्ययन क्षेत्र – भोपाल जिले में दैव निदर्शन विधि द्वारा भिक्षावृत्ति करने वाले 50 बाल भिक्षुकों का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया हैं। उनके द्वारा भिक्षावृत्ति करने के लिये आवश्यक परिस्थितियों, उनकी पारिवारिक, समाजिक, आर्थिक और स्कूल सम्बन्धी स्थिति आदि की जानकारी प्राप्त की गई तथा आवास की दशाओं का भी अध्ययन किया गया क्योकि बच्चों की मनोवृत्तियां बहुत कुछ आवास की दशाओं पर निर्भर करती हैं, प्रस्तुत अध्ययन में बाल भिक्षुओं की आवास की दशाओं का अध्ययन करने के लिये उन्हें दो वर्गो में बांटा गया हैं। भोपाल शहर में रहने वाले भिक्षुक

तालिका क्रमांक – 1

निवास के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	निवास	संख्या	प्रतिशत
1	स्थायी निवास	42	84
2	बाहरी	8	16
	योग	50	100

तालिका से ज्ञात होता हैं कि अधिकांश भिक्षुक भोपाल में ही निवास करते हैं। कुछ भिक्षुक आस पास के गांव या शहर से भी भोपाल आते हैं। ट्रेन में भीख मांगते हुये वे आस पास के शहर में जाते हैं। उनका प्रतिशत न्यून हैं।

मानव की भिक्षा नाम की कोई अन्तर्निहित प्रवृत्ति नहीं होती। मनुष्य मूलत: सामाजिक और विवेकशील प्राणी होते हुये भी उनका आकर्षण समाज की अव्यवस्थित विक्षरवंलित और विघटित प्रवृत्तियों की ओर होता हैं। भिक्षावृत्ति के कारणों के लिये शारीरिक अयोग्यता धार्मिक भावना एवं परिस्थितियों को उत्तरदायी ठहराया जा सकता हैं। भिक्षावृत्ति का स्वरूप दिन प्रतिदिन उग्र होता जा रहा हैं। क्योंकि यह धनोपार्जन का साधन बनता जा रहा हैं। क्योंकि भिक्षावृत्ति को एक व्यवसाय के रूप में लोग अपनाने लगें हैं, और अपने व्यवसाय को सफल बनाने के तरीके अपने आस पास के वातावरण से सीखते हैं और नये 2 तरीके अपनाते हैं, और आलसी प्रवृत्ति के हो जाते हैं। कुछ बाल भिक्षुक अनाथ होने के कारण भी भिक्षावृत्ति को अपनाते हैं। अपाहिज अपंगता भी भिक्षावृत्ति का कारण हैं। प्रस्तुत अध्ययन

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र एवं समाजकार्य) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

में जिन बालक बालिकाओं का अध्ययन किया गया हैं वे विभिन्न कारणों से भिक्षावृत्ति को अपनाये हुये हैं।

तालिका क्रमांक–2

भिक्षावृत्ति करने के कारण

क्र.	निवास	संख्या	प्रतिशत
1	पारिवारिक परम्परा	12	24
2	अनाथ	8	16
3	अपंगता	6	12
4	कमाने वाले की मृत्यु हो जाना	2	4
5	माता पिता का दबाव	6	12
6	शिक्षा में रूचि न होना	8	16
7	नशा करना	8	16
	योग	50	100

तालिका से ज्ञात होता हैं कि सबसे ज्यादा बच्चें पारिवारिक परम्परा के कारण भीख मांगते हैं क्योंकि ऐसा उनके माता पिता करते हैं तो वे भी यह काम करते हैं, कुछ बच्चों का पढ़ाई में मन नहीं लगता वे भौतिक जीवन जीने के आदी हो जाते हैं, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये इस धंधे को अपना लेते है, उनका 20 प्रतिशत हैं, कुछ बच्चों में नशा करने की तथा गुटका खाने की बुरी आदत होती हैं अत: वे भीख मांगकर अपनी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

सर्वेक्षण करने से यह भी ज्ञात हुआ कि अधिकांश भिक्षुक की मासिक आय 500 रू0 से लेकर 900 रू0 थी, जिसमें वे सुबह से घर से निकलकर शाम को घर वापस आते थे, वे करीबन पाँच से आठ घंटे तक भिक्षा मांगने का कार्य करते थे।

भिक्षावृत्ति उन्मूलन के प्रयास – भिक्षावृत्ति की समस्या की गंभीरता को देखते हुये समय–समय पर सरकार के द्वारा इसके उन्मूलन के प्रयास किये गये हैं। स्वतंत्रता के उपरान्त 1959 में भिक्षावृत्ति के लिये बच्चों का अपहरण करने या उनका अंग भंग करने वाले गिरोहों पर नियंत्रण लगाने के लिये भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम पारित किया गया, चूकिं मूलत: यह कार्य राज्य सरकारो से सम्बन्धित हैं। अत: विभिन्न राज्यों द्वारा भी इस दिशा में प्रयास किये गये।

1. हैदराबाद भिक्षावृत्ति निरोधक अधिनियम 1941
2. बंगाल आवारागर्दी निरोधक अधिनियम 1943
3. मैसूर भिक्षावृत्ति निरोधक अधिनियम 1944
4. मद्रास भिक्षावृत्ति निरोधक अधिनियम 1943
5. बम्बई भिक्षुक अधिनियम 1947
6. भोपाल भिक्षावृत्ति निवारण अधिनियम 1947
7. बिहार भिक्षावृत्ति निवारण अधिनियम 1952
8. गुजरात भिक्षावृत्ति निवारण अधिनियम 1959
9. दिल्ली भिक्षावृत्ति अधिनियम 1960

कुछ प्रदेशो के नगरपालिका एक्ट के अनुसार भिक्षावृत्ति वर्जित हैं। इन प्रदेशो में उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, तथा पंजाब हैं। बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, तथा मद्रास के पुलिस एक्ट में भिक्षावृत्ति निषेध कर दिया गया हैं। कानून बनाकर ही भिक्षावृत्ति का उन्मूलन नहीं किया जा सकता, भिक्षुक की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही हैं। भिक्षावृत्ति उन्मूलन करने के लिये दो बातो पर विशेष बल देना होगा।

1. भीख मांगने वालों की मनोवृत्तियों में परिवर्तन
2. भीख मांगने वाले आर्थिक रूप से सुरक्षित तो, इस सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिये गये हैं।

सुझाव –

1. मनोवैज्ञानिक विधि का प्रसार करके जनता की भावनाओं और मनोवृत्तियों में परिवर्तन करना, तथा धर्म भीरू जनता को यह समझाना कि भिखारियों को भीख देना स्वर्ग का रास्ता नहीं हैं, बल्कि भिखारियों को अनैतिक बनाने का रास्ता हैं।
2. ऐसे भिखारियों को जो छूत की बीमारियों से पीड़ित हैं उन्हें सैनिटोरियम आदि में रखना चाहिये। तथा चिकित्साा की पर्याप्त सुविधा होनी चाहिये।
3. भिक्षुको में एक बड़ी समस्या शारीरिक रूप से स्वस्थ्य तथा संयम बच्चों एवं व्यक्तियों की हैं जो रोजगार, आय के साधनों के आभाव में भिक्षावृत्ति को अपनाये हुये हैं, ऐसे व्यक्तियों को उत्पादक कार्यो में लगाकर जीवन यापन की व्यवस्था की जानी चाहिये।
4. यदि उद्योग धंधों का चुनाव बाल भिक्षुक की इच्छानुसार कर उनके लिये समुचित वित्तीय सहायता की व्यवस्था की जाय तो अधिक कारगार सिद्ध होगी।
5. भिक्षुको के पुनर्वास के लिये जीवन यापन के विभिन्न साधनो का प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाया जाना चाहिये।
6. भिक्षावृत्ति को रोकने के लिये आवश्यक हैं कि धार्मिक और तीर्थ स्थानों पर दान देना एवं भिक्षा देना बंद कर देना चाहिये।

लोगों को बताने की जरूरत हैं कि भीख मांगना बुरा कार्य हैं लेकिन भिक्षा देना उससे भी अधिक बुरा है। वास्तविकता यह हैं कि केवल अधिनियम पारित कर देने से तथा सरकारी प्रयासो से इस समस्या का समाधान संभव नहीं हैं जब तक भिक्षावृत्ति के कारणों को खोजकर उन्हें समाप्त नहीं कर दिया जाता। साथ ही भिक्षावृत्ति के विरूद्ध जनता में प्रचार किये जाय इसके दोषो से जनता को अवगत कराया जाय तभी इस समस्या का समाधान संभव हैं। सरकार को भी इस समस्या का प्राथमिकता के आधार पर उन्मूलन करने के लिये गुणात्मक प्रयास करना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुकर्जी रविन्द्र नाथ – समाजशास्त्र एवं समाजिक समस्याये।
2. डा. दुबे सरला – सामाजिक विघटन।
3. डॉ बघेल डी.एस. – अपराधशास्त्र।
4. तोमर राय बिहारी सिंह – परिवार और समाज।
5. आहूजा राय – सामाजिक समस्यायें।
6. तेजश्वर पाण्डेय एवं ओजस्वर पाण्डेय – समाजकार्य।

****

प्रगतिशील समाज और बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार

डॉ. रेणुका उपाध्याय *

प्रस्तावना – आज चारो ओर भ्रष्टाचार का बोलबाला है। सार्वजनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें भ्रष्टाचार देखने को मिलता है। यह एक व्यक्तिगत विघटन का ही एक स्वरूप है, क्योंकि इस स्थिति में व्यक्ति जानबूझकर उन सामाजिक नियमों की अवेहलना करता है, जो कि समाज की प्रगति एवं कल्याण के लिये बनाये जाते हैं।

भ्रष्टाचार का शब्दिक अर्थ है भ्रष्ट आचरण अर्थात बुरा व्यवहार बुरे तौर तरीके। कहने का अभिप्राय यह है कि दैनिक जीवन के कार्यकलापों में ऐसे व्यवहार का प्रयोग करना जो कि भ्रष्ट है, अर्थात बुरे है निन्दनीय है, आज के प्रगतिशील समाज में व्यक्ति जल्द से जल्द सबकुछ पाना चाहता है, इसके लिये उसे गलत रास्ता ही क्यों न अपनाना पड़े, प्राचीन समाज में यह राजनीति पदों पर एवं उच्च जातियों तक सीमित था। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में सार्वजनिक जीवन में सर्वत्र ही भ्रष्टाचार का बोलबाला विशेष रूप से हुआ है।

इलियट तथा मैरिल के अनुसार 'किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त करने के लिये जानबूझकर कर्तव्य का पालन न करना भ्रष्टाचार है।'

प्रस्तुत शोध पत्र में यह जानने की कोशिश की गई कि जिसके कारण व्यक्ति भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाता है, और जो लोग जाने अनजाने में अपने काम को पूर्ण कराने के लिये इसका सहारा लेते हैं।

अध्ययन में यह देखा गया कि करीब 70 प्रतिशत लोगों ने यह स्वीकार किया है कि स्वयं काम करवाने के लिये कहीं न कहीं पैसा दिया है, जैसे फाईलें आगे बढ़ाने के लिये, मंदिर में दर्शन करने के लिये, रेल में यात्रा करते समय, क्योंकि हमारे यहाँ इन व्यवस्थाओं में व्यक्ति कार्यालय एवं जगह के चक्कर लगाने से बचने के कारण वह यह रास्ता अपनाता है। जबकि भारतीय दण्डधारा 161 के अनुसार 'कोई भी सार्वजनिक कर्मचारी वैध पारिश्रमिक के अतिरिक्त अपने या किसी दूसरे व्यक्ति के लिये जब कोई आर्थिक लाभ इसलिये लेता है कि सरकारी निर्णय पक्षपात रूप में किया जाये तो यह भ्रष्टाचार है तथा इससे संबंधित व्यक्ति भ्रष्टाचारी है।'

भ्रष्टाचार में किसी न किसी तरह व्यक्ति अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है, वे निम्नानुसार है –

1. भ्रष्टाचार में स्वार्थपूर्ति के लघु मार्ग को अपनाया जाता है।
2. इसमें नगद या वस्तु के रूप में घूस दी जाती है।
3. यह आदान प्रदान के सिद्धांत पर आधारित है।
4. इसमें योग्य के प्रति अन्याय होता है, जिससे समाज को हानि उठानी पड़ती है।
5. भ्रष्टाचार में पैसा उद्देश्य भी है और साधन भी है।
6. भ्रष्टाचार में कानून नियमों की अवेहलना की जाती है। कभी कभी कानून के विपरीत न होने पर भी न्याय एवं नैतिकता के विरूद्ध आचरण भ्रष्टाचार कहलाता है।
7. व्यक्ति अपने कर्तव्यों का उल्लंघन करता है।
8. भ्रष्टाचार में कर्तव्यों का उल्लंघन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई अनुचित लाभ उठाने के लिये किया जाता है।

भ्रष्टाचार के कारण –

1. **धन का विशेष महत्व –** आधुनिक समाज में धन का विशेष महत्व हो गया है, क्योंकि उसी से व्यक्ति की प्रतिष्ठा सम्मान आदि का मूल्यांकन किया जाता है, जिसके लिये व्यक्ति कोई तरीका अपना लेता है।
2. **राजनैतिक संरचना –** वर्तमान की राजनैतिक संरचना में दलबन्दी को विशेष महत्व दिया जा रहा है जो व्यक्ति जिस राजनैतिक दल से चुनकर आता है, वह अपने दल के लोगों को अनुचित तरीके से लाभ पहुँचाने का प्रयास करता है जैसे लाइसेंस, परमिट, नौकरियाँ आदि।
3. **निम्न आय समूह वाले कर्मचारी –** कम वेतन पाने वाले कर्मचारी भी अपनी आय की कमी को पूरा करने के लिये भ्रष्ट तरीके को अपनाते हैं जैसे तहसील, नगर निगम एवं अन्य कार्यालय के कर्मचारी बिना पैसे के कोई काम नहीं करते हैं।
4. **अत्यधिक प्रतिस्पर्धा –** गलाकाट प्रतिस्पर्धा भी भ्रष्ट तरीकों को अपनाने के लिये प्रोत्साहित करती है। प्रतिस्पर्धा की दौड़ में जब लोग कानून व उचित तरीके से सफलता प्राप्त नहीं कर पाते, तो यह लोग भ्रष्ट मार्ग को अपना लेते हैं।
5. **अशिक्षा एवं कानून की अपर्याप्त जानकारी –** हमारे देश की अधिकांश जनता अशिक्षित है, अत: इन्हें कानून की वास्तविकता के संबंध में कोई जानकारी नहीं होती है। वकील, पुलिस, कोर्ट के कर्मचारी कानूनी दाँव पेंच दिखा कर पैसे एठ लेते हैं।
6. **कठोर दण्ड का अभाव –** कठोर दण्ड व्यवस्था नहीं होने के कारण भी भ्रष्ट भ्रष्टाचारियों को प्रोत्साहन मिलता है।
7. **कानून में कमियाँ –** कभी कभी कानून में कुछ कमियाँ रह जाती है, अत: कानून विशेषज्ञ इन कमियों का लाभ उठाकर लोगों से मनमाना पैसा वसूल करते हैं।
8. **भ्रमित विज्ञापन –** अनेक व्यक्ति झूठे व तड़क भड़क वाले विज्ञापन देकर जनता को बेवकूफ बनाकर धन हड़प कर लेते हैं। फर्जी कम्पनियों में पैसा लगवाकर दुगने मुनाफे की बात करना।
9. **न्यायालय की लंबी प्रक्रिया –** अनेक व्यक्ति न्यायालय की कार्यवाही से बचने के लिये पुलिस अधिकारी, आयकर अधिकारी, विक्रयकर अधिकारी, चुँगी अधिकारी आदि को रिश्वत देकर उन प्रक्रिया से बच जाते हैं।
10. **प्रजातन्त्र का दोष –** प्रजातन्त्र प्रणाली में व्यक्ति की सफलता चुनाव के मतों के आधार पर निर्भर करती है, अत: व्यक्ति सफलता प्राप्त करने के लिये अनुचित तरीकों का उपयोग करता है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

11. उच्च अधिकारियों का सहयोग – कभी कभी व्यक्ति राजनैतिक सहयोग एवं उच्च अधिकारियों के सहयोग से अपने कार्यो को करवाने के लिये भ्रष्ट तरीकों का उपयोग करते हैं।

आज यदि भ्रष्टाचार हर समाज में इतना घुलमिल गया है, जैसे वह हमारे जीवन का अभिन्न अंग हो गया है। आर्थिक क्षेत्र में व्यापार, उद्योग में टेंडर पास करना हो या प्रोजेक्ट लेना हो, सब में रिश्वत लिये बिना कुछ नहीं होता है। धार्मिक क्षेत्र में भी व्यक्ति का अंधत्व विश्वास उसे गलत कार्य करने को उकसाता है। लोग धार्मिक भावना से प्रेरित होकर मंदिर, अनाथालय, धर्मशालाओं, आश्रमों इनकी देखभाल की आड़ में गलत कार्य के चलते और महात्मा संतों के पास अकूत सम्पत्ति हो जाती है। ये यहाँ अनैतिक कार्य करने से भी पीछे नहीं हटते हैं। धर्म के साथ साथ शिक्षा के मंदिर में भयंकर भ्रष्टाचार देखने को मिलता है। माता–पिता अपने बच्चों के सपने को पूर्ण करने के लिये इसका अनुचित प्रयोग करते हैं। आज शिक्षा के क्षेत्र में स्वच्छता होनी चाहिये, जिससे बच्चों का भविष्य जुड़ा है, वह भी भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गया है।

समाज सेवा के नाम पर भी लोग भ्रष्टाचार करने से नहीं हिचकिचाते हैं। N.G.O. भी सरकार से सामाजिक सेवाओं के नाम पर लाखों करोड़ों रूपया ले लेते हैं, लेकिन जिनके लिये लिया जाता है, उन तक तो यह पैसा पहुँचता है न ही उनकी सेवाएँ इसके अलावा इंजीनियर, डॉक्टर, प्रशासक एवं राजनीतिकों का कई जगह कालाधान है, जिसके की आंकड़े देखे तो पता चलता है –

1953–54	600 करोड़ रूपये
1965–66	000 करोड़ रूपये
1969–70	1400 करोड़ रूपये

योजना आयोग के अनुसार देश में 70000 करोड़ रूपये से अधिक रूपया कालेधन के रूप में है, यह धन प्रतिवर्ष 50,000 करोड़ रूपया कालेधन के रूप में बढ़ता है। देश में धन का 26 प्रतिशत कालाधान, जबकि अमेरिका यह 8 प्रतिशत है। वर्तमान में कालेधन संबंधित कई मामले उजागर हुए हैं।

भ्रष्टाचार निवारण के उपाय एवं सुझाव –

1. निर्धनता को दूर किया जाय।
2. बेरोजगारी दूर करके ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोजगार दिया जाय।
3. कानून का सरलीकरण करना।
4. उच्च नैतिक शिक्षा का प्रसार।
5. आय में वृद्धि करना।
6. उद्योग एवं व्यापारिक क्षेत्र में सुधार
7. राजनैतिक क्षेत्र में नैतिकता के स्तर को ऊँचा उठाना।
8. समाज कल्याण संस्थाओं की स्थापना करना।
9. आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
10. कठोर दण्ड व्यवस्था।

सरकार द्वारा भ्रष्टाचार निवारण के लिये समय समय पर कई प्रयास किये गये हैं। 1947 में भ्रष्टाचार निवारण कानून पास किया गया। 1949 में टेकचन्द समिति की स्थापना की गयी। 1953 में आचार्य कृपलानी की अध्यक्षता में रेलवे भ्रष्टाचार जाँच समिति बनायी गयी, 1955 में प्रशासन सतर्कता विभाग की स्थापना, जून 1962 में सन्यनम कमेटी की स्थापना की गई। अन्ना हजारे ने लोकपाल बिल लाने के लिये देश में एक नयी लहर शुरू की गयी।

भ्रष्टाचार निवारण समिति ने अपनी रिपोर्ट में भ्रष्टाचार निवारण के लिये कई सुझाव दिये।

1. सतर्कता विभाग की स्थापना की जाये।
2. मंत्रियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार की शिकायतों की सुनवाई राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक सदस्यीय समिति के द्वारा हो यह समिति आवश्यकता होने पर केन्द्रीय जाँच ब्यूरों की भी सहायता ली जा सकती है।
3. विधान सभा एवं लोकसभा के सदस्यों के लिये आचार संहिता तैयार की जाय।
4. न्यायपालिका के क्षेत्र में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिये सर्वोच्च न्यायालय के पथ प्रदर्शन में सभी उच्च न्यायालयों में सतर्कता आयोग का गठन किया जाए।

भ्रष्टाचार निवारण के लिये सदाचार समितियों का गठन किया जाय। इनके सदस्य रिश्वत न लेगे एवं न देने की प्रतिज्ञा करें तथा इस प्रकार के कार्यो में लगे लोगों की क्रियाओं को उजागर करे। विधायकों, लोकसभा के सदस्यों, मंत्रियों, राजनीतिक दल के सदस्यों एवं उच्च पद पर आसीन अधिकारियों से पूर्ण ईमानदारी एवं कर्तव्यनिष्ठ की अपेक्षा की जाती है। यह सब कुछ होने पर समाज में फैला यह रोग खत्म हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अपराधशास्त्र – डॉ. डी.एस.बघेल ।
2. अपराधशास्त्र एवं – डॉ. एस.एस.श्रीवास्तव दण्ड प्रशासन ।
3. सामाजिक समस्याएँ – राम आहूजा ।
4. भारतीय सामाजिक– मंजुलता दिल्लर समस्याएँ ।

****

भारत में चिकित्सकीय लापरवाही और कानून

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना – हमेशा से डॉक्टर–मरीज का रिश्ता आपसी विश्वास आस्था और अच्छी नीयत पर आधारित होता है पिछले दशकों में समाज में दूसरे संबंधों की तरह इस रिश्ते में तनाव आया है। वजहें कई है डॉ. के.के.कालरा जो कि अस्पतालों में गुणवत्ता नियंत्रण के लिए देश की नियामक संस्था नेशनल एकेडिटेशन बोर्ड फार हॉस्पिटल्स (एन.ए.वी.) के प्रमुख है कहते है, हाल के दौरे में मरीजों और उनके रिश्तेदारों के चिकित्सकीय कदाचार के खिलाफ मुकदमों में वृद्धि हुई है। डॉ. पर संदेह की उंगलियां उठ रही हैं देश भर की अदालतों में असंतुष्ट मरीजों की और से मुकदमें दर्ज हो रहे हैं मुकदमों से घबराए और बदनामी से डरे डॉक्टरों की एक बचाव की कार्यशैली बनती जा रही है। भविष्य के मुकदमों के डर की वजह से गैर–जरूरी टेस्ट कराए जा रहे हैं, दवाईयां दी जा रही है और जटिल बीमारियों के मामलों में इलाज से इंकार किया जा रहा है। ऐसे बेमानी टेस्ट से मरीज और समाज पर खर्च का बोझ बढ़ता है, जिसे और बेहद जरूरी जगहों पर खर्च किया जा सकता है। एन.ए.बी.एच की अप्रकाशित रिपोर्ट के मुताबिक देश में हर साल इलाज के दौरान शारीरिक क्षति (मेडीकल सर्जरी) से 98,000 मौत हो रही है। पिछले 10 साल में सुप्रीम कोर्ट में चिकित्सा पेशे से जुड़े मुकदमों में 400 फीसदी की वृद्धि हुई है। मरीज लापरवाह चिकित्सा व्यवस्था से घबराए हुए हैं। ये किस की गलतियां हैं ? फोरेंसिक विशेषज्ञ ही तय करते है कि मामले में चिकित्सकीय लापरवाही हुई है या नहीं। वर्ष 2014 में राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद समाधान आयोग के साथ मिलकर मैसूर मेडिकल कालेज और मुंम्बई के ग्रांट मेडिकल कालेज के डाक्टरों ने मिल कर चिकित्सकी लापरवाही की एक फेहरिस्त बनाई है। पिछले सर्वाधिक 80 फीसदी मामले सर्जरी के हैं और इनमें स्त्री रोग, संबंधी सर्जरी 29 फीसदी तथा हड्डियों के मामले 22 फीसदी सबसे ज्यादा है। 34 प्रतिशत मामलों में डॉक्टरों के साथ अस्पतालों की लापरवाही थी सम्मिलित रूप से मृत्यु की विभिन्न वजहों में डॉक्टरों की लापरवाही सबसे ज्यादा 49 फीसदी बताई जाती है।

कानून– 'भारत में लंबे समय तक चिकित्सकीय लापरवाही के लिए मुआवजे की बात नहीं सोची गई। उसका दायरा सीमित है।' फिलहाल मुआवजा लेने के दो ही तरीके हैं एक लॉ ऑफ टार्ट (शारीकि पूर्ति) और दूसरा 1995 का उपभोक्ता रक्षा कानून सीपीए में वस्तूओं और सेवाओं के सभी उपभोक्ताओं की बात है। उसमें छोटे स्तर से लेकर चिकित्सकीय लापरवाही से मरने वाले मरीजों को एक ही पलड़े में तौला जाता है। उसमें भी भुगतान वाली सेवा से संबंधित है जो चिकित्सकीय लापरवाही की बातें नहीं करती।

'लिहाजा जजों को काफी काम करना पड़ता है हालांकि उनके पास चिकित्सा संबंधी मामलों की बारीकियों में जाने का समय नहीं होता है न विशेषज्ञता की भी ज्यादा संभावना नहीं होती ऐसे में जज सिर्फ हलफनामों और रिपोर्ट को ही आधार बनाते है।'

सामान्य दीवानी अदालत में मरीज डॉक्टर मामलों को टॉर्ट लॉ के नजरिए से देखा जाता है।

कानून की सबसे बड़ी समस्या यह है कि उचित मुआवजे के बारे में कुछ नहीं कहा गया है।

टार्ट के आधुनिक संदर्भो के अनुसार 'ये पारिवारिक रिश्ते से वंचित होने की क्षतिपूर्ति से लेकर मिसाल के रूप में जुर्माना जैसा हो सकता है। आखिर नुकसान झेलने वालों को कोई हल तो मिलना चाहिए।

लापरवाही और गलत इलाज के आंकड़े वर्तमान में अखबार के पन्नों,कम्प्यूटर टी.वी. के परदों पर छाने लगे हैं। हावर्ड स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ के डॉ.आशीष झा के 2013 के अध्ययन (असुरक्षित स्वास्थ्य सेवा का वैश्विक परिदृश्य) के मुताबिक भारत में ऐसे मामले सालाना करीब 52 लाख है। इनमें गलत दवाई लिखना, दवा की गलत मात्रा मर्ज कुछ और मान लेना, कुछ और गलत सर्जरी गलत समय पर गलत दवा देना जैसे अनेक मामले हैं। लोगों में जागरूकता बढ़ने के साथ साथ मुआवजे का दावा और मुकदमे की संख्या में वृद्धि हो रही है। मेडिकल कन्ट्रेक्शन के रिपोर्ट के अनुसार डॉक्टरों के खिलाफ मामले में वृद्धि हो रही है।

सुप्रीम कोर्ट में अक्टूबर 2013 अपने ऐतिहासिक अदालती आदेश के मामले में 1998 में कलकता के डॉक्टरों द्वारा अमेरीकी डॉक्टर अनुराधा शाह का गलत इलाज करने दूसरों को दोषी ठहराते हुए 11.5 करोड़ रूपये का मुआवजा देने का आदेश दिया। इस प्रकार से अदालतों के भारी मुआवजे के भुगतान से डॉक्टरों में जवाबदेही की भावना पैदा होगी। और मरीजों की डॉक्टरों में आस्था बनेगी।

निष्कर्ष – नि:संदेह डॉक्रों के खिलाफ लापरवाही के मामले बनने से सभी के समय ऊर्जा और पैसे की बरबादी हो रही है। दोषी डॉक्टरों को दण्डित किया जाना चाहिए, लेकिन चिकित्सीय गलतियां अक्सर व्यवस्थागत खामियां भी होती हैं। सिर्फ एक डॉक्टर की लापरवाही नहीं,। बेहतरीन इलाज का वैज्ञानिक आधार बीमारी का इतिहास लक्षण, और टेस्ट के नतीजों को अच्छे से विश्लेषण कर सटीक अंदाज लगाकर उपचार करने में निहित है, गलतियों को कम करने और गैर जरूरी टेस्ट और इलाज इसे बचने के अलावा चिकित्सीय लापरवाहियों को बनाये गये दिशा निर्देशों का पालन करके काफी सीमा तक दूर किया जा सकता है। अगर डॉक्टर मरीज का अपने परिजनों की तरह इलाज करें और मरीज भी डॉक्टर का पहले की तरह भगवान जैसा समझने में विश्वास करे तो अनेक समस्याएं दूर हो जायेगी। मरीज और डॉक्टर के बीच रिष्ते पहले की तरह पवित्र हो जायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इंडिया टुडे 2014
2. दैनिक भास्कर अप्रैल 2014

*प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सिंचाई परियोजनाओं का पर्यावरण पर प्रभाव-मण्डला जिले के संदर्भ में

डॉ. रामसिंह धुर्वे *

शोध सारांश – सांस्कृतिक उद्विकास के साथ-साथ मनुष्य ने प्राकृतिक स्रोतों का अधिकाधिक उपयोग करना प्रारंभ किया जिससे पर्यावरणीय समस्यायें और खतरे उत्पन्न हुए। प्रारंभ में आदि मानव अपने पोषण और अन्य आवश्यकताओं के लिये लगभग पूरी तरह पारिस्थितिक तंत्रों पर निर्भर था और अन्य प्राणियों की तरह उनका एक घटक था लेकिन धीरे-धीरे मनुष्य अपने ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकीय विकास के कारण पृथ्वी पर सर्वाधिक प्रभावशाली प्राणी बन गया है। आज इसी मनुष्य से पर्यावरणीय क्षय और विनाश का खतरा बढ़ रहा है। नदियों पर बाँध निर्माण करना विकास का सूचक माना जाता है। यह कदाचित इसलिए माना जाता है कि बाँध बनाकर हम नदी के जल को रोककर जलाशय में एकत्र कर लेते हैं, जिससे नहरें निकालकर सिंचाई हेतु खेतों को पानी उपलब्ध कराया जाता है। इन दो लाभों की बिना हम सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण को विकास का मानक समझ बैठते हैं, जबकि वास्तविकता इसके विपरीत होती है, क्योंकि हमारी संकुचित बुद्धि केवल लाभ को ही देख पाती है और उक्त लाभ को पाने हेतु दी गयी कीमत की तरफ हमारी नजर नहीं जाती है।

शब्द कुंजी – पर्यावरण अवनयन, पुनर्वास, सतत् विकास, आपदा प्रबंधन, पारिस्थितिकी, भू-क्षरण, जल संचयन, पर्यावरणीय संकट।

प्रस्तावना – सिंचाई परियोजनाओं का अतीत और इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि कृषि कार्य का। मानवीय सभ्यता के विकास और विस्तार के साथ-साथ, सिंचाई के तौर तरीके और साधन बदलते चले गये। वर्तमान में सिंचाई परियोजनाओं यथा-बाँधों एवं जलाशयों का महत्वपूर्ण स्थान है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के समुचित विकास हेतु महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए बहुउद्देशीय नदी-घाटी योजनाओं एवं बाँधों के निर्माण को अनिवार्य माना जाने लगा। बाँध, नहर अथवा नदी पर जल प्रवाह को रोकने का एक अवरोध है तथा इसको कई प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जा सकता है। बाँध लघु, मध्यम तथा वृहद हो सकते हैं। बाँधों का उपयोग सिंचाई, पीने का पानी, बिजली बनाने तथा पुन: सृजन के लिए जल के भण्डारण में होता है। बाँधों से बाढ़ नियंत्रण में सहायता मिलती है। संचयन किए जल को विद्युत निर्माण अथवा घरों तथा उद्योगों में जल आपूर्ति, सिंचाई अथवा नौवहन में उपयोग किया जा सकता है।

अध्ययन क्षेत्र – भारत के मध्य भाग में स्थित मध्यप्रदेश राज्य के लगभग दक्षिण-पूर्व में अनेक प्राकृतिक लक्षणों को समेटे हुए मैकल के पठार में मण्डला जिला स्थित है। इस जिले का ढ़ाल दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम की ओर है। यह जिला $22^0 12'$ उत्तरी अक्षांश से $23^0 12'$ उत्तरी अक्षांश तथा $80^0 18'$ पूर्वी देशान्तर से $81^0 51'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। यहाँ की भू-वैज्ञानिक संरचना प्री-कैम्ब्रियन युग की रवेदार ग्रेनाइट नीस, गोंडवाना शैल समूह तथा दक्कन ट्रेप से बनी है। यहाँ का धरातल अत्याधिक कटा-फटा और वनों से आच्छादित है। कोपेन के अनुसार मण्डला जिला AW अर्थात् उष्ण सवाना तुल्य जलवायु प्रदेश के अंतर्गत आता है। जिले का अधिकांश भाग दक्कन के पठार के अंतर्गत आता है, इस पठार की रचना लावा निर्मित चट्टानों से हुई है। चट्टानों के अपघटन-अपघर्षण तथा रासायनिक क्रिया के परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र में काली-दोमट मिट्टी की बहुलता है।

मानचित्र क्रमाँक- 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अध्ययन के उद्देश्य – बड़े बाँधों एवं जलाशयों के निर्माण का मुख्य उद्देश्य सिंचाई, जलविद्युत की प्राप्ति, मत्स्य पालन, पर्यटन को बढ़ावा देना एवं जल आपूर्ति हैं। मानव कल्याण के लिए बनाये गये इन बहुउद्देशीय परियोजनाओं के निर्माण के पश्चात् मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति तो होती है किन्तु दूसरी ओर पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं पर इसके दुष्परिणाम भी देखने को मिल रहे हैं। जिसका खामियाजा मानव को ही पर्यावरणीय संकट के रूप में भुगतना पड़ता है। मण्डला जिले में भी छोटे-बड़े कुल 32 से भी अधिक बाँध एवं जलाशय हैं, तथा हालोन नदी पर हालोन परियोजना निर्माणाधीन है। अत: अध्ययन के उद्देश्य निम्नानुसार हैं-

1. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से वन विनाश एवं जन्तुओं में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना।
2. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से कृषि भूमि के ह्रास तथा बसाहट पर प्रभाव का अध्ययन करना।
3. विस्थापित किये गये लोगों की समस्याओं का अध्ययन करना।
4. पर्यावरण अवनयन का अध्ययन एवं मूल्याँकन करना।

संकल्पनाएँ – मण्डला जिले में सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण में भारी-भरकम व्यय किया जा रहा है। आधुनिक यंत्रों का प्रयोग करते हुए बहुत सारे जमीन में गड्ढ़ा खोदा जा रहा है। आवश्यकतानुसार वनों की कटाई करके साफ किया जा रहा है। कृषि भूमि का अधिग्रहण किया जा रहा है। बहुत से गाँव विस्थापित किये जा रहे हैं। विकास की अंधी दौड़ में मानव अपनी आवश्यकतानुसार ये सब कुछ कर रहा है ये सोचे-समझे बिना कि इससे उस क्षेत्र के पर्यावरण पर कितना बुरा असर पड़ रहा है। अत: प्रस्तुत अध्ययन निम्नांकित संकल्पनाओं पर आधारित है-

1. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से कृषि भूमि का बहुत बड़ा हिस्सा कम हो जाता है तथा भूकम्प आने का एक कारण बाँधों के निर्माण भी है।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत

2. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से वन विनाश होती है और पर्यावरण अवनयन होता है।
3. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण हो जाने से आसपास के गाँवों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं।

शोध प्रविधि –

1. मण्डला जिले में सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से विस्थापित लोगों से व्यक्तिगत साक्षात्कार से और प्रश्नावली बनाकर जानकारी एकत्रित कर निष्कर्ष निकाले गये हैं।
2. इस अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों को समाहित किया गया है।
3. इसमें मानचित्र, तालिका एवं रेखाचित्रों का समावेश किया गया है।
4. बाँधों एवं जलाशयों के आसपास निवास करने वाले प्रत्येक गाँव के 10–10 प्रतिशत परिवार के लोगों से साक्षात्कार लेकर पर्यावरणीय समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है।

मण्डला जिले के सिंचाई परियोजनाएँ – इस जिले में कुल 01 वृहद, 04 मध्यम एवं अन्य सभी लघु बाँध एवं जलाशय सिंचाई परियोजनाएँ हैं। इनसे नहरें निकालकर सिंचाई की जाती है। यहाँ के बाँधों से विद्युत उत्पादन नहीं किया जाता है। जिले के बाँध एवं जलाशयों का विवरण निम्नानुसार हैं–

तालिका क्रमाँक –01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

उक्त सिंचाई परियोजनाओं के अलावा 13 से अधिक अन्य बाँध एवं जलाशय हैं। मण्डला जिले के बिछिया विकासखण्ड में रायपुर जबलपुर राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमाँक 12 में सिझौरा से 6 किलोमीटर दूरी पर हालोन बाँध निर्माणाधीन है। इसमें 10 बालाघाट जिले और 05 मण्डला जिले के गाँवों को विस्थापित किया जायेगा। मण्डला जिले के कंरजिया, राजो, बोदा, कालीखापा, पांडुतला और परसामऊ आदि गाँव प्रभावित होंगे। इस बाँध के निर्माण के लिए 1413.2 हेक्टेयर निजी भूमि, 157.29 हेक्टेयर राजस्व भूमि एवं 109.80 हेक्टेयर वन भूमि को अधिग्रहण किया जायेगा।

जबलपुर जिले में नर्मदा नदी पर निर्माण किया गया बरगी बाँध से मण्डला जिले के कुल 95 गाँवों को विस्थापित किया गया है। इन सभी गाँवों के लोगों को देश के विकास को आतुर सरकार और जनता अपनी सुख–सुविधाओं के लिए लाखों लोगों का विस्थापन कर उन्हें दर–दर भटकने के लिए छोड़ दिया है।

मानचित्र क्रमाँक– 02 (देखे अगले पृष्ठ पर)

जिले के विभिन्न सिंचाई परियोजनाएँ (देखे अगले पृष्ठ पर)

सिंचाई परियोजनाओं का पर्यावरण पर प्रभाव – सिंचाई परियोजनाओं के द्वारा आजकल पर्यावरण का जिस बेरहमी से अपकर्ष किया जा रहा है, उसको देखते हुए यदि सिंचाई परियोजनाओं को मानवजन्य आपदा कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। सबसे बड़ी विडम्बना तो यह है कि इनके निर्माण के समय मात्र इनके तात्कालिक लाभों को ही देखा जाता है, इससे होने वाले दूरगामी दुष्परिणामों को नजरअंदाज कर दिया जाता है। सिंचाई परियोजनाओं के द्वारा होने वाले दुष्परिणामों का आकलन निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है–

1. **बसाहट पर प्रभाव–** सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण के चलते हजारों लोग विस्थापित हो जाते हैं। जिन्हें दूसरी जगह शरण लेनी पड़ती है। बनने वाले प्रमुख बाँधों के कारण हो रहा विस्थापन सबसे बड़ी समस्या रही है, जिसमें लाखों गरीबों की आवाज को इस आधार पर दबाने की कोशिश की जा रही है कि विकास के लिए बाँध जरूरी है। विस्थापित होने से विस्थापित लोगों की सम्पूर्ण गृहस्थी ही अस्त–व्यस्त हो जाती है और उन्हें अनेक कष्ट झेलने पड़ते हैं। सम्भवत: विस्थापित लोगों के कष्ट को अनुभव करते हुए ही न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने कहा था कि यह कैसा विकास है जिसकी नींव ही विनाश की आधारशिला पर स्थापित की जाए। विस्थापन के बाद पुनर्वास भी संतोषजनक नहीं होता। विस्थापन की प्रक्रिया का व्यापक सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है। परियोजना के लिए लिए लोगों को विस्थापित किया जाना अमानवीय है।

2. **बीमारी में वृद्धि–** सिंचाई परियोजनाओं के कारण अनेक तरह की बीमारियाँ जन्म ले रही हैं। बाँध के चलते जमीन के नीचे का पानी की सतह ऊँची हो जाती है। जिससे धरती में चूने एवं धातु की मात्रा बढ़ जाती है, जो फ्लोरोसिस रोग का कारण बनता है। जहाँ नई सिंचाई परियोजनाएँ बन रहीं है, नहरों के आसपास वायुमण्डल की नमी नये–नये कीट–पतंगों को आकर्षित करती है, जिससे मलेरिया, इन्सेफेलाइटिस सहित अन्य नई बीमारियाँ जन्म ले रही हैं।

3. **पर्यावरण में अवनति–** बडे बाँधों ने पर्यावरण को विशेष रूप से प्रभावित किया है जो निम्नलिखित रूप से परिलक्षित हो रहा है–

अ. वन–विनाश– बाँधों के निर्माण के समय एवं जलाशयों के बन जाने के पश्चात् डूब क्षेत्र में आने से वनों का विशेष रूप से विनाश हुआ है। इस वन–विनाश के चलते हजारों प्रकार की वनौषधियाँ विनष्ट हो जाती हैं, जिनका विकास हजारों वर्षों में हो पाता है। वन–विनाश के चलते पौधों की अनेक प्रजातियाँ हमेशा के लिए नष्ट हो जाती हैं। यही नहीं वनों में रहने वाले जीव–जन्तुओं का भी विनाश हो जाता है।

ब. नदियों का उथला होना एवं प्रदूषित होना– बाँध बनने के कारण कई नदियाँ मर सी गई हैं। बाँध में पानी रूकता है, तो नदी की धारा धीमी पड़ जाती है। इसलिए अपने प्रदूषण से निपटने की उनकी ताकत समाप्त हो जाती है और उनका जल दूषित होने लगता है।

स. जल जमाव की समस्या– नहरों द्वारा सिंचाई से जल जमाव एवं भूमिगत हानिकारक रासायनिक लवण के मिट्टी के ऊपरी परत में आकर जमा हो जाने से मिट्टी बंजर होती जा रही है। भूमिगत जलस्तर के ऊपर आ जाने से जलग्रस्तता की समस्या भी उत्पन्न होती जा रही है। अनियोजित सिंचाई के चलते भूमि दलदली होती जा रही है एवं जलप्लावन में भी वृद्धि हो रही है।

द. प्राणियों पर संकट– बाँधों के निर्माण के बाद पानी में रहने वाले प्राणियों पर बड़ा संकट आ जाता है। पानी के बहाव, गुण एवं तापमान में अंतर तथा गंदलेपन के कारण मछलियाँ अपने क्षेत्र में सहजता से विचरण नहीं कर पाती हैं।

4. **कृषि भूमि का ह्रास–** बाँधों के निर्माण से बहुत बड़ा भू–भाग जलमग्न हो जाता है। जिससे उस क्षेत्र के वन अथवा कृषि योग्य भूमि हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं।

5. **भूकम्प में वृद्धि–** बाँधों के वैज्ञानिक परीक्षण से यह भी सिद्ध हुआ है कि ये भूकम्प का कारण भी बन सकते हैं। बाँधों में भारी मात्रा में जल का जमाव होने से भूकम्प की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं। 22 मार्च 1997 पर 6.3 तीव्रता पर जबलपुर एवं इसके आसपास के क्षेत्रों पर भूकम्प आया। जिससे 40 लोगों की मौत हुई एवं 100 से अधिक लोग घायल हुये। इसका कारण बरगी बाँध का होना बताया गया था।

सुझाव– मनुष्य के कार्यकलापों के प्राकृतिक पर्यावरण पर बढ़ते प्रभावों के कारण स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तर पर पर्यावरण अवनयन हो रहा है। पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास ने मनुष्य–पर्यावरण के बीच सम्बन्धों तथा

विश्वस्तरीय पर्यावरण संकट के विषय में लोगों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सचेत कर दिया है। संभवत: पर्यावरण सुरक्षा सबसे मुश्किल लक्ष्य है क्योंकि यह मुद्दा इतना सरल नहीं है, जितना दिखता है। टिकाऊ पर्यावरण के बारे में जिस अवधारणा के साथ लक्ष्य सुनिश्चित किया गया है, सिर्फ उस अवधारणा के अनुकूल परिस्थितियाँ ही तय सीमा में तैयार हो जाए तो उपलब्धि ही मानी जायेगी।

1. जन-साधारण को पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए शिक्षित करना चाहिए।
2. पर्यावरणीय समस्याओं से संबंधित सम्मेलनों, गोष्ठियों एवं कार्यशालाओं का आयोजन करने से काफी जागरूकता फैल सकती है।
3. पर्यावरण अनुसंधान के लिए विशेष कार्यक्रम शुरू किये जायें और अनुसंधान संस्थाओं को आर्थिक सहायता दी जाये।

उपसंहार –नदियों को जबसे हमने जल और ऊर्जा का स्रोत समझना शुरू किया है सारी समस्या वहीं से शुरू हुई है। नदियों का भौतिक दोहन करना शुरू कर दिया और कभी इस बात का ध्यान नहीं दिया गया कि इसका कितना बड़ा दुष्परिणाम हमें भोगना पड़ेगा। इस प्रकार स्पष्ट है कि एक तरफ जहाँ ये सिंचाई परियोजनाएँ हमारे लिए वरदान सिद्ध हुए हैं वहीं दूसरी ओर इनके नियंत्रण में कमी से दूरगामी दुष्प्रभाव भी देखने को मिल रहे हैं। जो लाभ की तुलना में किसी भी तरह ठीक नहीं कहा जा सकता क्योंकि इससे हमारा सम्पूर्ण पारिस्थितिकी क्षेत्र ही अव्यवस्थित होता जा रहा है। अत: आज समुचित जल प्रबंधन की नितान्त आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, सविन्द्र (1995), पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, 20-ए, यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद, पृ.क्र. 512
2. पटैरिया, शिव अनुराग (2012), मध्यप्रदेश संदर्भ, जनसंपर्क भवन, बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश, पृ.क्र. 215
3. टेंभरे, भुनेश्वर (2014), जल संसाधन की उपलब्धता एवं नियोजन का स्तर, निवास पठार जिला मण्डला के संदर्भ में, शोध पत्र, रिसर्च डायमेंशन्स, लक्ष्मी बुक पब्लिकेशन्स, शोलापुर महाराष्ट्र, ईसू 8, वॉल्यूम 2, पृ.क्र. 1-3
4. प्रतियोगिता दर्पण-मासिक पत्रिका, अप्रैल 1999
5. दैनिक भास्कर, जबलपुर, दिनाँक 15.01.2016, पृ.क्र. 07
6. hhttp://www.mpwrd.gov.in/documents/18/ac63db4a-a5bf-4520-96cd-1cac448593c1
7. hhttp://www.mppcb.nic.in/pdf/Revised_ PH_ Halon_ Eng.pdf
8. http://nvda.mpforest.org/NVDA-website/pdf/projects-pdf/irrigation-proposed/hip.pdf
9. http://www.who.int/water_sanitation_health/publications/STImalaria.pdf\
10. http://www.gwp.org/

मानचित्र क्रमाँक- 01

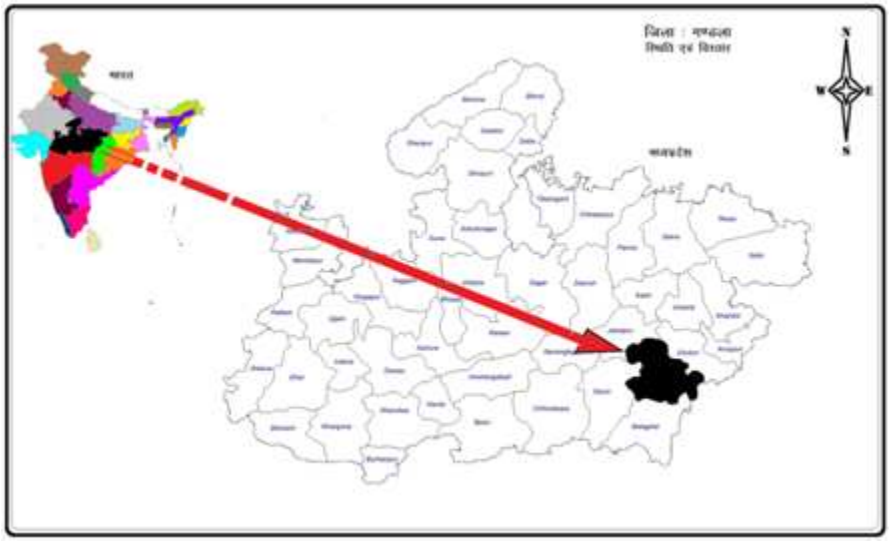

तालिका क्रमाँक -01
मण्डला जिले के सिंचाई परियोजनाएँ

क्र.	बाँध/जलाशयों के नाम	जलग्रहण क्षेत्र (वर्ग किमी में)	क्षमता (हजार घनमीटर में)	ऊँचाई (मीटर में)	लंबाई (मीटर में)	नदी का नाम
1	थॉवर	417	139200	27.1	2130	थॉवर
2	मटियारी	159	56800	33.66	1131	मटियारी
3	बिछिया	19.42	8510	26.53	1579	स्थानीय
4	मझगाँव	22.53	8200	19.81	670	नागर नदी
5	धुआँधार	13.2	54.60	27.19	2040	स्थानीय
6	बरबसपुर	2.38	700	12	510	स्थानीय
7	झालपानी	4.88	782	14.94	780	स्थानीय
8	चिखलाटोला	4.42	1350	10	1020	स्थानीय
9	मोहगाँव-माली	2.49	546	10.13	720	स्थानीय
10	जन्तीपुर	5.09	1570	18.45	876	स्थानीय
11	झण्डाटोला	6.73	1110	11.95	467.85	स्थानीय
12	मेहरासिवनी	1.83	650	13.7	822	स्थानीय
13	कोहानी देवरी	4.35	980	15.33	667	स्थानीय
14	दलका बंडा	4.1	1320	17.75	268	स्थानीय
15	माँद	8.41	1241	13.63	975	स्थानीय
16	जमुनिया टोला	4.27	920	15.79	162	स्थानीय
17	धनगाँव	2.23	920	15.2	335	स्थानीय
18	कापा	8	807	12.97	645	स्थानीय
19	चरगाँव	3.6	917	13.77	720	स्थानीय
20	मानेगाँव	2.38	1006	13.36	552	स्थानीय
21	हालोन (निर्माणाधीन)	16.80	146.08	31	993	हालोन

Source : http://www.mpwrd.gov.in

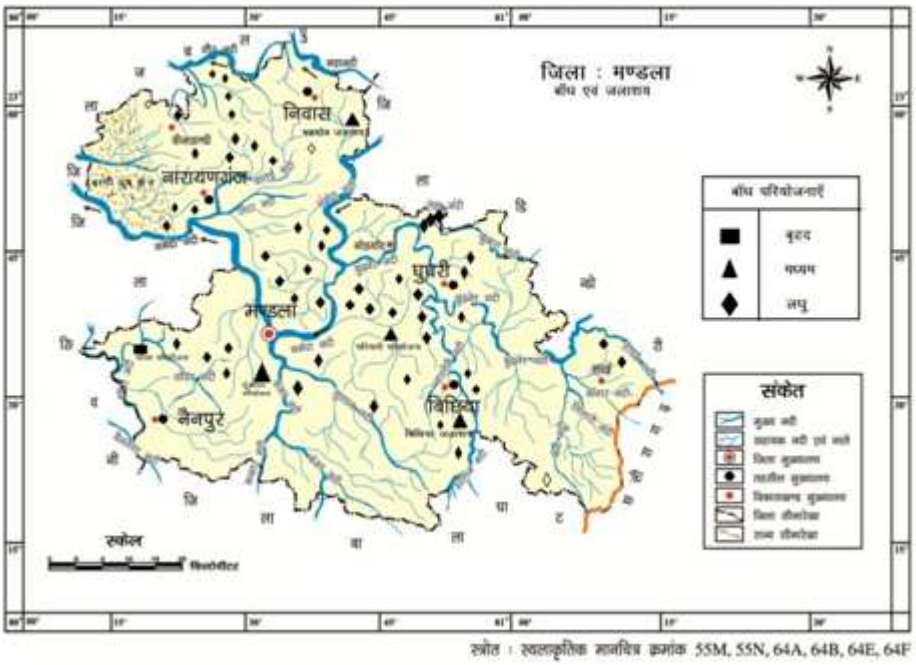

स्रोत : स्थलाकृतिक मानचित्र क्रमांक 55M, 55N, 64A, 64B, 64E, 64F

****

जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास

मोहिनी जादौन *

प्रस्तावना –

'जागो सब मित्रो, देश की प्रगति में हाथ बँटाऐं,
वृक्ष लगाकर, धरा सजाकर, देश को बढ़ती गर्मी से बचाऐं।
आओ एक–एक–पेड़ लगाकर, इस धरती को स्वर्ग बनाऐं,
गैसों के प्रदूषण को छोड़कर, पर्यावरण संरक्षण को अपनाऐं।।'

पर्यावरण (परि + आवरण) दो शब्दों के योग से बना है जिसका अर्थ है हमारे आस पास के चारों और का वातावरण। पर्यावरण एक प्रकृति प्रदत्त संतुलित संरचना है जिसमें ताप, दाब, वायु, सूर्य का प्रकाश विभिन्न पर्यावरणीय गैसें, खनिज, लवण जल, मृदा सब कुछ निश्चित अनुपात में होता है। वर्तमान समय में मनुष्य की बढ़ती हुई महत्वकांक्षा, भौतिक सुख सुविधाओं की चाह के वशीभूत होकर उसने अपने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष क्रियाकलापों के द्वारा पर्यावरण की इसी संतुलित सँरचना में हस्तक्षेप किया है फलत: पर्यावरण असंतुलन एवं पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हुई है। इसी के कारण ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत का नष्ट होना, ग्रीन हाउस गैसों के बढ़ने के कारण भूमि पर ताप का बढ़ना, अम्ल वर्षा का होना, समुद्री चक्रवाती तुफानों, जैसे– सुनामी, हेड़ा, लैला, नरगिस फयान, रीटा, आदि का आना, बेमौसम बारिश का होना, अत्यधिक गर्मी, अधिक ठंड का पड़ना आदि दुष्परिणाम देखने को मिल रहे हैं। इसी बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए जो विशेष संरक्षाणात्मक उपाय, प्रयास, नीतियाँ योजना तथा कार्यक्रम निर्मित किये जा रहे हैं, उन्हें ही सामूहिक रूप से 'पर्यावरण–संरक्षण' कहा जाता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यारण के संरक्षण हेतु 20–22 अक्टूबर 2010 को डेनमार्क की राजधानी कोपनहैगन में कॉप–15 पर्यावरण संरक्षण–सम्मेलन का आयोजन किया गया था। देश के तत्कालीन वन एवं पर्यावरण मंत्री श्री जयराम रमेश के अनुसार देश में पर्यावरण देश में पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय स्तर पर एक 'राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण' की स्थापना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण विशिष्ट प्रयास सिद्ध होगा। पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास की एक नई मुहिम के रूप में वर्ष 2010 को 'अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता संरक्षण वर्ष' के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मनाया गया है।

उद्देश्य –

1. जैव विविधता को स्पष्ट करना।
2. पर्यावरण संरक्षण के विभिन्न बिन्दुओं का विस्तृत अध्ययन करना।
3. सतत विकास को सरल एवं स्पष्ट तरीके से समझाने का प्रयास करना।

शोध विधि – जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत् विकास विषय पर प्रस्तुत इस शोध पत्र में तथ्य संकल्प के द्वितीयक स्त्रोत जैसे– संदर्भ पुस्तकें, समाचार–पत्र–पत्रिकाऐं, शासकीय, अशासकीय संगठन का रिपोर्ट, कम्प्यूटर, इंटरनेट तकनीकों का अधिक उपयोग किया गया है।

पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने में जीव–जंतु, पेड़–पौधों आदि सभी का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। जैसे–जैसे मानव औद्योगिक प्रगति के शिखर पर पहुँचता जा रहा है वैसे–वैसे हमारे पर्यावरण की सुरक्षा खतरे में पड़ती जा रही है और इसी के द्वारा प्रकृति की पूँजी के नष्ट होने या दूषित होने की संभावनाऐं भी बढ़ती जा रही हैं। पर्यावरण को जो एक शब्द सर्वाधिक नुकसान पहुँचा रहा है वह है विकास। जिसकी गलत व्याख्या ने पर्यावरण को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है। इस प्रकार पर्यावरण में लगातार मनमाने ढंग से मानव द्वारा हस्तक्षेप करने से ही दिन–प्रतिदिन बड़ी–बड़ी दुर्घटनाऐं घटित हो रही है। मानव अपने आर्थिक लाभ के लिए पेड़ों की कटाई करता जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप आज मानव के समक्ष बाढ़, अल्पवृष्टि, अनावृष्टि जैसे विनाशकारी परिणाम सामने आ रहे हैं।

पर्यावरण दूषित होने के अनेकानेक कारण हैं – दिनों–दिन वाहनों के धुँऐं एवं कल कारखानों के विषैले धुँऐं से हमारे पर्यावरण की ओजोन गैस की परत नष्ट होती जा रही है। अंधाधुंध पेड़ों की कटाई से जमीन सूखती जा रही है। भूमि का कटाव हो रहा है। मानव आज अपनी वैज्ञानिक शक्ति द्वारा स्वयं एवं जीव जंतुओं को समाप्त करने में लगा हुआ है। खाड़ी युद्ध की विनाशकारी प्रक्रिया ने भी प्रकृति के इसी संतुलन को अपूर्णनीय क्षति पहुँचाई है। मानव परमाणु परीक्षण करके इस भूमि को हमेशा–हमेशा के लिए दूषित कर रहा है। प्रदूषण के प्रमुख प्रकार – 1) वायु प्रदूषण, 2) जल प्रदूषण, 3) ध्वनि प्रदूषण, 4) मृदा प्रदूषण, 5) उष्णीय प्रदूषण, 6) आणविक प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण के निम्नालिखित कारण हैं –

1) जनसंख्या विस्फोट, 2) ग्रीन हाउस प्रभाव,
3) औद्योगिक उत्सर्जन, 4) ओजान परत का नष्ट होना,
5) अम्ल वर्षा, 6) दूषित गैस एवं धुआँ,
7) ध्वनि प्रदूषण, 8) प्रदूषित होता जल,
9) अपषिष्ट पदार्थों से प्रदूषण तथा
10) मिट्टी एवं घटते वनों के कारण बढ़ रहा प्रदूषण आदि।

विश्लेषण – इस प्रकार वायु, जल, ध्वनि प्रदूषण म.प्र. में भी लगातार फैलता जा रहा है जो मध्यप्रदेश के तापमान, जलवायु को प्रभावित कर रहा है। वैज्ञानिक स्वेल कार्सनस ने संभवत: प्रथम बार वातावरण के प्रदूषण पर चिंता व्यक्त की थी। तत्पश्चात् ही इसके प्रति विश्व में आंदोलन प्रारंभ हुए। पर्यावरण संरक्षण संबंधित नीतियाँ बनाने व उनको प्रोत्साहित करने हेतु भारत सरकार ने वातावरण आयोजन व समन्वय पर राष्ट्रीय समिति गठित की है। पर्यावरण संरक्षण के लिए केन्द्र व राज्य सरकारों ने 30 से भी अधिक कानून बनाऐं हैं।

केन्द्र सरकार ने जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण हेतु 1974 में जल प्रदूषण एवं नियंत्रण अधिनियम 1974 बनाया। वायु प्रदूषण रोकने हेतु 1981 में वायु प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम–1981 बनाया, जिसे 1988 में संशोधित किया गया। सन् 1986 में केन्द्र सरकार ने एक विस्तृत पर्यावरण संरक्षण अधिनियम–1986 लागू किया। भारत सरकार

* शोधार्थी (भूगोल) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र) भारत

पर्यावरण संरक्षण हेतु सरकारी अभिकरणों का खास योगदान है इसमें प्रमुख हैं – पर्यावरण और वन मंत्रालय, पर्यावरण विभाग, केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, परिस्थितिकीय विकास बोर्ड तथा भारतीय राष्ट्रीय मानव जीवमंडल समिति और पर्यावरण अनुसंधान समिति आदि।

मध्यप्रदेश में पर्यावरण संरक्षण के लिए जा रहे प्रयास – मध्यप्रदेश शासन द्वारा भी पर्यावरण के संरक्षण हेतु केन्द्र सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं को अमल में लाया जा रहा है। इस हेतु प्रदेश शासन द्वारा वृक्षारोपण, बंजर भूमि विकास, वन्य जीव संरक्षण, इको विकास परियोजना, पर्यावरण वाहिनी, वनों की कटाई पर प्रतिबंध, आदि कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। राज्य शासन द्वारा पर्यावरण के संरक्षण एवं प्रदूषण की रोकथाम के लिए सतत प्रयास जारी है। वनों की कटाई को रोकने हेतु वन संरक्षण अधिनियम वर्ष 1980 में लागू किया गया। वर्तमान में राज्य के सभी 51 जिलों में वनों की कटाई पूर्णत: प्रतिबंधित है।

1. पर्यावरण नियोजन एवं समन्वय संगठन (एप्को) – गठन–1973
2. आपदा प्रबंध संस्थान – स्थापना (10 नवंबर, 1987, भोपाल में)
3. मध्यप्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड – गठन–1974 में मुख्यालय–भोपाल (म.प्र.)

पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव – आज विश्व में आर्थिक विकास के लिए पर्यावरण संरक्षण से संबंधित उपायों को अपना कर पर्यावरण के साथ–साथ मानव के अस्तित्व को भी खतरे से बचाया जा सकता है। पर्यावरण दिवस मनाना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके संरक्षण के लिए हर रोज, हर पल हमें प्रयास करने होंगे और पर्यावरण संरक्षण को अपनी जीवन शैली का प्रमुख अंग बनाकर ही हम पर्यावरण के प्रति उत्तरदायित्व निभा सकते हैं। जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास संबंधित प्रमुख सुझाव निम्न हैं –

1. वन संरक्षण कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए।
2. जल का सदुपयोग कर जल का संरक्षण किया जाए।
3. सामाजिक वानिकी कार्यक्रम को बढ़ावा दिया जाए।
4. प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन किया जाए।
5. ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्त्रोतों, जैसे – बायोमास, सौर ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा आदि का विकास किया जाए।
6. पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से पर्यावरण के प्रति जन चेतना जागृत की जाए।
7. जनसंख्या वृद्धिदर में स्थिरता लाने का प्रयास किया जाना चाहिये।
8. सौर ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों को अपनाया जाए।
9. प्राकृतिक संसाधनों का वर्तमान में सीमित, विवेकपूर्ण एवं व्यावहारिक उपयोग किया जाना चाहिए।
10. पर्यावरण संरक्षण के लिए व्यक्ति, समाज, सरकार, विधि, न्यायालय और जन सामान्य सभी स्तरों पर जागरूकता आवश्यक है। इस दिशा में ठोस, एवं व्यावहारिक कार्यक्रम निर्मित किये जायें।
11. पर्यावरण संरक्षण हेतु स्वयं सहायता समूहों का गठन भी किया जा सकता है।
12. नीम सिटी, ग्रीन सिटी, जैसे विचारों को बढ़ावा।
13. इन्दौर की पितृ पर्वत वृक्षारोपण योजना का राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार प्रसार।
14. अनुसूचित जनजाति एवं परम्परागत वनवासी, वन अधिकार, मान्यता अधिनियम 2006 का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना।
15. पर्यावरण कानूनों का प्रभावी एवं सख्ती से पालन सुनिश्चित किया जाना वर्तमान समय, फरवरी–2016 में सर्वाधिक प्रासंगिक एवं समायोजित मानवीय हित में होगा।

निष्कर्षत – पर्यावरण संरक्षण वर्तमान 21वीं शताब्दी के इस द्वितीय दशक 2011–2020 की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गई है। सफल मानवीय जीवन यापन एवं सतत् विकास के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण को अपनाना ही होगा। जल, जंगल, जमीन, जन एवं जानवर के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए

'क्या है इन जंगलों के उपकार,
मिट्टी पानी और बयार।
मिट्टी पानी और बयार,
यही है जिंदा रहने के आधार।'

पर्यावरण संरक्षण के महत्व को स्वीकार करते हुए अपने व्यक्तित्व, पारिवारिक एवं सामाजिक स्तर पर भी हमें सोचना होगा कि हम सब कब, कहाँ क्यों और कैसे पर्यावरण संरक्षण हेतु कार्य कर सकते हैं? चिपको आंदोलन के प्रणेता श्री सुंदरलाल बहुगुणा, नर्मदा घाटी विस्थापन से जुड़ी मेघा पाटकर, अरूंधती राय, बाबा आम्टे सामाजिक कार्यकर्ता दीप जोशी (रेमन मैग्सैसे पुरस्कार विजेता), जल संरक्षण हेतु राजेन्द्र सिंह (राजस्थान), सेन्टर फार साइंस एंड एन्वायरानमेंट की प्रमुख सुनीता नारायण, नोबल पुरस्कार विजेता तथा इंटरनेशनल गवर्मेंट पेनल आन क्लाईमेंट चेंज (आई.पी.सी.सी.) के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र कुमार पचौरी, राजनीतिज्ञ मेनका गांधी सहित अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन अंतर्राष्ट्रीय राष्ट्रीय, प्रांतीय, जिला एवं ग्रामीण स्तरों पर पर्यावरण संरक्षण के विभिन्न कार्यों में संलग्न है।

पर्यावरण संरक्षण के अभाव में गंगा, यमुना के ग्लैशियर सिकुड़ते जा रहे हैं, वन कम हो रहे हैं। इन्हीं सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 36 से 51 में वर्णित राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में भी पर्यावरण एवं वन्य जीवन संरक्षण, संवर्धन की बात कही गई है। अनुच्छेद 51(क) में उल्लेखित मूल कर्तव्यों में भी पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण, वन, झील, नदी, अन्य जीव की रक्षा, संरक्षण – संवर्धन करें तथा प्राणीमात्र के प्रति दया का भाव रखें। यह बात जोर देकर कही गई है। प्रथम विश्व पर्यावरण संरक्षण सम्मेलन, 1972 स्वीडन में तथा 2002 में दक्षिण अफ्रीका के जोहान्संबर्ग में पर्यावरण संरक्षण पर अंतराष्ट्रीय सम्मेलनों का आयोजन किया गया है। भारत में भी (1) वन्य जीव संरक्षण अधिनियम– 1972 (2) जल प्रदूषण निवारण, नियंत्रण अधिनियम–1974 (3) वन संरक्षण अधिनियम–1980, (4) वायु प्रदूषण निवारण नियंत्रण अधिनियम–1981 (5) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम–1986 (6) राष्ट्रीय जल नीति – 2002 (7) 21 मार्च, विश्व वानिकी दिवस, (8) 5 जून पर्यावरण संरक्षण दिवस आदि का मनाया जाना पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास है। पर्यावरण संरक्षण मानव जीवन को स्थायित्व देने वाली प्रणाली है। जिसमें जड़ एवं चेतन दोनों तरह के बल एक दूसरे को निर्धारित, नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं।

यह भी सही है कि पर्यावरण संरक्षण की दिशा में अभी हमें मीलों चलना है। एक लंबा सफर तय करना है। पर्यावरण को पुन: सुधारने की दिशा में। अंधेरे में बैठने से ज्यादा अच्छा है कि एक दीप जलाकर उस अंधेरें को चीरने का प्रयास किया जाये। पर्यावरण संरक्षण संबंधी बातों को अब और अधिक उलझाना नहीं, सुलझाना होगा, पर्यावरणविदों को दुत्कारना नहीं, स्वीकारना होगा। पर्यावरण संरक्षण एवं विकास की व्यूह रचना करते समय हमें नई

अवधारणाओं, नई चुनौतियाँ, नए अवसर, नई संभावनाओं को तलाशना होगा। पर्यावरण प्रदूषण कारकों को दूर करते हुए पर्यावरण संरक्षण की नई-नई तकनीकों को अपनाना होगा। युद्ध स्तर पर कार्य करते हुये वर्तमान प्रौद्योगिकी एवं विकास में सुधार लाना होगा। पारिस्थितिकी विकास की अवधारणा को पूरा करना होगा एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु तार्किकता प्रस्तुत करनी होगी। हमारे मंत्रोद्दष्टा ऋषियों, मुनियों ने अथर्ववेद में कहा है कि - माता भूमि पुत्रोव्यं पृथिव्या अर्थात पृथ्वी हमारी माता और हम उसके पुत्र हैं प्रत्येक पुत्र का यह कर्तव्य है कि वह अपनी माता की सेवा करें एवं उसे किसी भी तरह का कष्ट नहीं पहुँचने दे। इसी प्रसंग को ध्यान में रखते हुए हमें भी पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास की व्यूह रचना को साकार रूप प्रदान करना होगा तथा गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर की पर्यावरण संरक्षण संबधी निम्न पंक्तियों को हमेशा ध्यान में रखना होगा -

'देश की माटी देश का जल, हवा देश की देश के फल, सरस बने प्रभु सरस बने।
देश के वन देश के घाट, देश के तन देश के मन, विमल बने प्रभु विमल बनें'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का भूगोल - अभिषेक शर्मा, किरण झा, स्प्रेक्ट्रम, बुक्स प्रायवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
2. प्रतियोगिता दर्पण - सामान्य अध्ययन अतिरिक्तांक, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा।
3. भारत 2010, सूचना एवं प्रसाराण मंत्रालय, भारत सरकार।
4. म.प्र. का भौगोलिक अध्ययन- डॉ. प्रमिला कुमार, सागर विश्वविद्यालय।
5. रोजगार एवं निर्माण-मध्यप्रदेश शासन, भोपाल म. प्र.।
6. सामान्य अध्ययन - आनंद कुमार पाण्डेय, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
7. भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी - कल्पना राजाराम।
8. योजना, कुरूक्षेत्र, इंडिया टुडे, फ्रन्ट लाईन पत्रिकाओं से प्राप्त अध्ययन सामग्री।
9. नईदुनिया, दैनिक भास्कर, जनसत्ता, हिन्दुस्तान, पत्रिका समाचार पत्रों के संपादकीय आलेख।
10. कम्प्यूटर इंटरनेट पर उपलब्ध विषय, संबंधित अध्ययन सामग्री।
11. विभिन्न समाचार पत्रों के पर्यावरणीय लेख।
12. स्प्रेक्ट्रम प्रकाश - विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, वर्तमान संदर्भ में।
13. मानव विकास रिपोर्ट - 2009-10 (संयुक्त राष्ट्र संघ)।
14. पर्यावरण चेतना - म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल (म.प्र.)।
15. प्रो. एस.आर. साहू, प्रो. जे.पी. नेमा, युगबोध पर्यावरण विशेषांक।
16. डॉ. बसंतीलाल बावेल, पर्यावरण संरक्षण एवं कानून, सुविधा लॉ हाउस, भोपाल (म.प्र.)।
17. डॉ. सविन्द्र सिंह, पर्यावरण, भूगोल।
18. पर्यावरण अध्ययन - वर्तमान संदर्भ में - अंतुल प्रकाशन, इलाहाबाद।
19. राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र, रोजगार-समाचार (नई दिल्ली से प्रकाशित) में छपे पर्यावरणीय मुद्दे - शोध अध्ययन सामग्री।

****

धार जिले में पर्यटन की संभावनाएँ

किरण मण्डलोई *

शोध सारांश – मध्यप्रदेश को भारत का हृदय प्रदेश कहा जाता है। यहां के दर्शनीय स्थल अपनी विविधता के लिए प्रसिद्ध है। यहां के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक परिवेश ने प्रदेश को पर्यटन स्थल के रूप में अपनी विशिष्ट पहचान दिलवाई है। पुरातत्व एवं पर्यटन की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध इस प्रदेश में ऐसा कोई जिला नहीं होगा जहाँ दर्शनीय या पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान न हो परन्तु कई जिले ऐसे है, यहाँ के पर्यटन स्थलों से पर्यटक आज भी अनजान है। यहाँ पर्यटन के विकास की अपार संभावनाएँ है।

पर्यटन धर्म, इतिहास, सभ्यता और संस्कृति है। राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय उद्योग है। पर्यटन मानव जाति की एकता और मात्र भाव की आधारशिला है। पर्यटन धार्मिक तीर्थ, मेले व त्यौहार, ऐतिहासिक स्मारक, प्राकृतिक स्थल, वन्य प्राणियों के संरक्षित क्षेत्र, बड़े-बड़े बांध, विशाल औद्योगिक संयत्र एवं आधुनिक नगर आदि भी पर्यटन के प्रमुख आकर्षक केन्द्र है।

धार जिला आदिवासी बाहुल क्षेत्र होने के कारण आदिवासी संस्कृति भी मध्यप्रदेश की धरोहर है। इन पिछड़े क्षेत्रों में आवागमन कि सुविधा, एवं टूरिस्ट कॉटेज व अच्छे होटलों की सुविधा न होने के कारक पर्यटन का विकास नहीं हो पाया है।

शब्द कुंजी – विविधता, विशिष्ट, विकास, आदिवासी, सुविधा।

प्रस्तावना – पर्यटन हमारी प्राचीन संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। सामाजिक-सांस्कृतिक, धार्मिक-आर्थिक आदि दृष्टि से इसका बहुत ही महत्व है। वर्तमान में पर्यटन से रोजगार के अवसर पैदा करने राष्ट्रीय एकता और अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना को बढ़ावा मिलता है। पर्यटकों के चलते स्थानीय दस्तकारी तथा सांस्कृतिक गतिविधियों को भी प्रोत्साहन मिलता है। पिछले तीन दशकों से भारत में पर्यटन में अधिक वृद्धि हुई है।

भारत की इस विशाल भूमि में मौसम, जलवायु, प्राकृतिक सौन्दर्यता, भौगोलिक स्वरूप, वन्य प्राणी एवं जीव आदि की बहुत ही विभिन्नता है। यहां पर्यटकों तथा अनुसंधानकर्ताओं के साहसिक, उत्साहवर्द्धक खोज के लिए असीमित संभावनायें विद्यमान है। प्रत्येक व्यक्ति अनभिज्ञता की जानकारी/खोज, वर्जित स्थानों का ज्ञान एवं छिपे रहस्य की तरह आकर्शित होना, धार्मिक स्थानों के दर्शन से आंतरिक शांति प्रसन्नता का आभास होता है।

अध्ययन का क्षेत्र – म.प्र. का धार जिला जनतांति बहुल्य क्षेत्र है। धार जिला 20^0 से 23^0 10' उत्तरी अक्षांश एवं 74^0 28' से 75^0 42^0 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 8206.5 वर्ग कि.मी. और कुल जनसंख्या वर्ष 2011 के अनुसार 21,84,672 व्यक्ति।

उद्देश्य –पर्यटन देश में सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक एवं धार्मिकता को बढ़ावा देने और राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के उद्देश्यों की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रोजगार सृजन में इसका बड़ा योगदान है।

प्रमुख पर्यटन स्थल – म.प्र. में इन्दौर से 60 कि.मी. दूर स्थित धार एक ऐसा जिला है जो इतिहास काल से लेकर वर्तमान तक चर्चा में रहा है। भारतीय इतिहास के विद्वान राजा भोज की नगरी के नाम से धार को पहचाना जाता है। यहां पर एक छोटी पहाड़ी पर किला है, जिसका निर्माण 1344 ई. में सुल्तान मोहम्मद तुगलक ने करवाया था। किले के ऊपर खरबुजा महल एवं सरस्वती की मूर्ति व मस्जिद बनी हुई है जिसमें बसंत पंचमी के दिन हिन्दू-मुस्लिम अपनी एकता का प्रतीक देते है। धार के समीप एक फड़के स्टूडियों है, जिसमें हमारे देश के 'महानुभाव महापुरूषों जैसे सुभाशचन्द्र बोस,नेहरूजी, गांधीजी, तिलक एवं देवी देवताओं की सुन्दर कलाकृत मूर्तियाँ जीवंत सी प्रतीत होती है।

धार से 36 कि.मी. दूर माण्डू में अस्मधा जीवाश्म संग्रहालय है, जहां पर करोड़ो वर्ष पुराने लकड़ी के जीवाश्म एवं डायनासोर के जीवाश्म सुरक्षित रखे गए है। यदि सरकार द्वारा इस ओर ध्यान देकर इन जीवाश्मों को संग्रहित कर प्रचार-प्रसार किया जाए तो यहां पर पर्यटन की संभावना बढ़ जाएगी।

माण्डू धार से 40 कि.मी. दूर विध्यांचल पहाड़ियों में स्थित है यह शताब्दियों से अनेक हिन्दू और मुस्लिम शासकों के अधीन रहा है। यहां पर 12 दरवाजे, रानी रूपमती महल, जहाजमहल, हिन्डोला महल, जामा मस्जिद, चम्पा बावड़ी, बाज बहादुर महल, काड़का खाई, आदि एतिहासिक एवं प्राकृतिक सौदर्य पर्यटकों को लुभाते है।

बाग गुफाएँ धार से 97 कि.मी. दूर विन्ध्यन पर्वत के दक्षिण में स्थित है। कुछ इतिहासकार इन्हें चौंथी और पांचवी सदी में निर्मित मानते है लेकिन अधिकतर सातवी सदी में। प्रारम्भ में इन गुफाओं की संख्या 9 थी। जिसमें से

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.) भारत

अब पांच ही शेष है। इन गुफाओं का संबंध बौद्ध मत से है। यह गुफाएँ अजंता और एलोरा की गुफाओं के समान ही कलापूर्ण भित्ति चित्रों से युक्त है। इन गुफाओं की खोज 1818 में की गई थी। माना जाता है कि दसवीं शताब्दी में बौद्ध धर्म के पतन के बाद इन गुफाओं को मनुष्य भूल गया था और यहां बाघ निवास करते थे। इसीलिए इन्हें बाघ गुफाओं के नाम से जाना जाता है। गुफाओं में मौजूद पांडवों का सभाग्रह होने के कारण इन्हें पांच पाण्डव भी कहा जाता है। यहां का बाग प्रिंट भी देश-विदेश में राष्ट्र की अपनी पहचान रखता है। बाग के पास 2 कि.मी. की दूरी पर एक जीवाश्म पार्क स्थापित किया जा रहा है। जहाँ पर डायनासोर के अण्ड़े तथा उनके अवशेषों को संरक्षित किया जायेगा । यहां पर आस-पास के क्षेत्रों में आदिवासी जनजातिया बसती है तथा उनकी संस्कृति अनूठी हैं।

निष्कर्ष – इन छुपे हुए क्षेत्रों में पर्यटन स्थलों की जानकारी को उभारकर पर्यटकों तक पहुँचाने से इन स्थानों का महत्व और अधिक बढ़ जायेगा। इन पर्यटन स्थलों के माध्यम से लोगों को अधिक रोजगार प्राप्त होगा। पर्यटन स्थलोंको जीवित रखने के लिए इनका संरक्षण एवं विकास करना बहुत आवश्यक है।

सुझाव – पर्यटन के विकास के लिए महत्वपूर्ण सुझाव

1. आवागमन के साधनों को सुगम बनाया जाय।
2. पर्यटको के लिए न्यूनतम शुल्क पर टूरिस्ट कॉटेज बनाये जाय।
3. धार्मिक स्थलों पर पुख्ता सुरक्षा इंतजाम हो।
4. पर्यटन स्थलों पर सांस्कृतिक एवं धार्मिक आयोजन किये जाय ।
5. पर्यटन स्थलों पर स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा जाय ।
6. पर्यटनों को शासन द्वारा प्रचार-प्रसार किया जाय ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. हरिमोहन- संस्कृति पर्यावरण और पर्यटन- तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली
2. डॉ. जगमोहन नेगी- राष्ट्रीय संस्कृति संपदा- सांस्कृतिक पर्यटन एवं पर्यावरण- तक्षशिला प्रकाशन, नईदिल्ली
3. India.gov.In Dhar District
4. "http://hi.wikipedia.org

****

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभाव-एक आकलन

डॉ. प्रतीक चौबे * जियालाल राठौर **

शोध सारांश – वैश्विक जलवायु परिवर्तन के कारण समुद्री तूफानों की बारंबारता में वृद्धि होगी जिसके परिणामस्वरूप तटीय क्षेत्रों में जान-माल की क्षति होगी। इसके अतिरिक्त अल नीनों की बारंबारता में भी बढ़ोत्तरी होगी जिससे एशिया, अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया महाद्वीपों में सूखे की स्थिति उत्पन्न होगी जबकि वहीं दूसरी ओर उत्तरी अमरीका में बाढ़ जैसी आपदा का प्रकोप होगा। दोनों ही स्थितियों में कृषि उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

प्रस्तावना – जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण वैश्विक तपन है जो हरितगृह प्रभाव का परिणाम है। हरितगृह प्रभाव वह प्रक्रिया है जिसमें पृथ्वी की सतह से टकराकर लौटने वाली सूरज की किरणों को वातावरण में उपस्थित कुछ गैसें अवशोषित कर लेती हैं परिणामस्वरूप पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होती है। कार्बन डाईऑक्साइड, मिथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स, नाइट्रस ऑक्साइड तथा क्षोभमण्डलीय (troposher) ओजोन वे मुख्य गैसें हैं जो हरित गृह प्रभाव के लिए उत्तरदायी हैं। वातावरण में इन गैसों की निरंतर बढ़ती मात्रा से वैश्विक जलवायु परिवर्तन का खतरा दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

हरितगृह प्रभाव के चलते अनेक क्षेत्रों में औसत तापमान में बढ़ोतरी दर्ज की गई है। वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी के अनुसार वर्ष 2020 तक पूरी दुनिया का तापमान पिछले 1000 वर्षों की तुलना में सर्वाधिक होगा। अंतर-शासकीय जलवायु परिवर्तन पैनल Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) ने वर्ष 1995 में भविष्यवाणी की थी कि अगर मौजूदा प्रवृत्ति जारी रही तो 21वीं सदी में तापमान 0.6 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा है। इस शताब्दी का पहला दशक (2000-2009) अब तक का सबसे ऊष्ण दशक रहा है जो यह साबित करता है कि हरितगृह प्रभाव के परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन का दौर आरंभ हो चुका है। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के अनेक प्रभाव होंगे जिनमें से ज्यादातर हानिकारक होंगे।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभाव – वैश्विक जलवायु परिवर्तन का प्रभाव स्वास्थ पर पड़ेगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार जलवायु में तपन के कारण श्वास एवं हृदय सम्बंधी बीमारियों में वृद्धि होगी। दुनिया के विकासशील देशों में दस्त, पेचिश, हैजा, क्षयरोग, पीत ज्वर तथा मियादी बुखार जैसी संक्रामक बीमारियों की बारंबारता में वृद्धि होगी। चूँकि बीमारी फैलाने वाले रोग वाहकों के गुणन एवं विस्तार में तापमान एवं वर्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: दक्षिण अमरीका, अफ्रीका तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में मच्छरों से फैलने वाली बीमारियों जैसे- मलेरिया, डेंगू, पीला बुखार तथा जापानी बुखार के प्रकोप में बढ़ोतरी के कारण इन बीमारियों से होने वाली मृत्युदर में इज़ाफ़ा होगा। मानव स्वास्थ्य पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के चलते एक बड़ी आबादी विस्थापित होगी जो 'पर्यावरणीय शरणार्थी' कहलाएगी।

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप रोगाणुओं में बढ़ोतरी के साथ-साथ इनकी नयी प्रजातियाँ विकसित होगी जिसके परिणामस्वरूप फसलों की उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। फ़सलों की नाशीजीवों तथा रोगाणुओं से सुरक्षा हेतु नाशीजीवनाशकों के उपयोग की दर में बढ़ोत्तरी होगी जिससे वातावरण प्रदूषित होगा साथ ही मानव स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप दुनिया के मानसूनी क्षेत्रों में वर्षा में वृद्धि होगी जिससे बाढ़, भू-स्खलन तथा भूमि अपरदन जैसी समस्याएँ पैदा होंगी। जल की गुणवत्ता में गिरावट आएगी।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन जल स्रोतों के वितरण को भी प्रभावित करेगा। उच्च अक्षांश वाले देशों तथा दक्षिण-पूर्ण एशिया के जल स्रोतों में जल की अधिकता होगी जबकि मध्य एशिया में जल की कमी होगी। निम्न अक्षांश वाले देशों में जल की कमी होगी।

जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप ध्रुवीय बर्फ के पिघलने के कारण विश्व का औसत समुद्री जल स्तर इक्कीसवीं शताब्दी के अंत तक 9 से 88 सेमी तक बढ़ने की संभावना है जिससे दुनिया की आधी से अधिक आबादी, जो समुद्र से 60 किमी की दूरी तक रहती है, पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। बांग्लादेश का गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा, मिस्र का नील डेल्टा तथा मार्शल द्वीपों और मालदीव सहित अनेक छोटे द्वीपों का अस्तित्व वर्ष 2100 तक समाप्त हो जाएगा। इसी ख़तरे की ओर सम्पूर्ण विश्व का ध्यान आकर्षित करने के लिए अक्टूबर 2009 में मालदीव सरकार की कैबिनेट ने समुद्र के भीतर बैठकर एक अनूठा प्रयोग किया था। इस बैठक में दिसम्बर 2009 के कोपेनहेगन सम्मेलन के लिए एक घोषणा पत्र भी तैयार किया गया था। प्रशांत महासागर का सोलोमन द्वीप जलस्तर में वृद्धि के कारण डूबने के कगार पर हैं।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन का प्रभाव समुद्र में पाए जाने वाली जैव-विविधता सम्पन्न प्रवाल भित्तियों पर पड़ेगा जिन्हें महासागरों का उष्णकटिबंधीय वर्षा वन कहा जाता है। समुद्री जल में उष्णता के परिणामस्वरूप शैवालों (Algee) पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा जो कि प्रवाल भित्तियों को भोजन तथा वर्ण प्रदान करते हैं। उष्ण महासागर विरंजन प्रक्रिया के कारण होंगे जो इन उच्च उत्पादकता वाले परितंत्रों को नष्ट कर देंगे। प्रशांत महासागर में वर्ष 1997 में अजनीनो के कारण बढ़ने वाली ताप की

* अतिथि विद्वान (भूगोल) शासकीय पं.शंभूनाथ शुक्ल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय पं. शंभूनाथ शुक्ल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

तीव्रता प्रवालों की मृत्यु का सबसे गंभीर कारण बनी है। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी की लगभग 10 प्रतिशत प्रवाल भित्तियों की मृत्यु हो चुकी है, 30 प्रतिशत गंभीर रूप से प्रभावित हुई हैं तथा 30 प्रतिशत का क्षरण हुआ है। ग्लोबल कोरल रीफ मॉनीटरिंग नेटवर्क, ऑस्ट्रेलिया का अनुमान है कि वर्ष 2050 तक सभी प्रवाल भित्तियों की मृत्यु हो जाएगी।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कृषि पैदावार पर पड़ेगा। संयुक्त राज्य अमरीका में फसलों की उत्पादकता में कमी आएगी जबकि दूसरी तरफ उत्तरी तथा पूर्वी अफ्रीका, मध्य पूर्व देशों, भारत, पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया तथा मैक्सिको में गर्मी तथा नमी के कारण फसलों की उत्पादकता में बढ़ोत्तरी होगी। वर्षा जल की उपलब्धता के आधार पर धान के क्षेत्रफल में इजाफा होगा।

वातावरण में ज्यादा ऊर्जा के जुड़ाव से वैश्विक वायु पद्धति में भी परिवर्तन होगा। वायु पद्धति में परिवर्तन के परिणामस्वरूप वर्षा का वितरण असमान होगा। भविष्य में मरुस्थलों में ज्यादा वर्षा होगी जबकि इसके विपरीत पारंपरिक कृषि वाले क्षेत्रों में कम वर्षा होगी। इस तरह के परिवर्तनों से वृहद पैमाने पर मानव प्रवजन को बढ़ावा मिलेगा जो कि मानव समाज के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक ताने-बाने को प्रभावित करेगा।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप बाढ़, सूखा तथा आंधी-तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं की बारंबारता में वृद्धि के कारण अन्न उत्पादन में गिरावट आयेगी। स्थानीय खद्यान्न उत्पादन में कमी, भुखमरी और कुपोषण का कारण बनेगी जिससे स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ेंगे। खाद्यान्न और जल की कमी से प्रभावित क्षेत्रों में टकराव पैदा होंगे।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जैव-विविधता पर भी पड़ेगा। किसी भी प्रजाति को अनुकूलन हेतु समय की आवश्यकता होती है। वातावरण में आकस्मिक परिवर्तन से अनुकूलन के अभाव में उसकी मृत्यु हो जाएगी। जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभाव समुद्र के तटीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली दलदली क्षेत्र की वनस्पतियों पर पड़ेगा जो तट को स्थिरता प्रदान करने के साथ-साथ समुद्री जीवों के प्रजनन के लिए आदर्श स्थल भी होती है। दलदली वन जिन्हें ज्वारीय वन भी कहा जाता है, तटीय क्षेत्रों को समुद्री तूफानों से रक्षा करने का भी कार्य करते हैं। जैव-विविधता क्षरण के कारण पारिस्थितिक असंतुलन का खतरा बढ़ेगा।

जलवायु में तपन के कारण ऊष्णकटिबंधीय वनों में आग लगने की घटनाओं में वृद्धि होगी परिणामस्वरूप वनों का विनाश होगा जिसके कारण जैव-विविधता का ह्रास होगा।

नाशीजीवों तथा रोगाणुओं की जनसंख्या में वृद्धि तथा इनकी नयी प्रजातियों की उत्पत्ति का प्रभाव दुधारू पशुओं पर भी पड़ेगा जिससे दुग्ध उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

तापमान में वृद्धि के कारण वाष्पीकरण तथा वाष्पोत्सर्जन की दर में अभूतपूर्व वृद्धि होगी परिणामस्वरूप मृदा जल के साथ ही जलाशयों में जल की कमी होगी जिससे फ़सलों को पर्याप्त जल उपलब्ध न होने के कारण उनकी पैदावार प्रभावित होगी।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जलीय जंतुओं पर भी पड़ेगा। मीठे जल की मछलियों का प्रवजन ध्रुवीय क्षेत्रों में जान-माल की क्षति होगी। इसके अतिरिक्त अजनीनों की बारंबारता में भी बढ़ोत्तरी होगी जिससे एशिया, अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया महाद्वीपों में सूखे की स्थिति उत्पन्न होगी जबकि वहीं दूसरी ओर उत्तरी अमरीका में बाढ़ जैसी आपदा का प्रकोप होगा। दोनों ही परिस्थितियों में कृषि उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव हिमनदों पर भी पड़ेगा। ऊष्णता के कारण हिमनद पिघल कर खत्म हो जाएँगे। एक शोध के अनुसार भारत के हिमालय क्षेत्र में वर्ष 1962 से 2000 के बीच हिमनद 16 प्रतिशत तक घटे हैं। पश्चिमी हिमालय में हिमनदों के पिघलने की प्रक्रिया में तेजी आई है। बहुत से छोटे हिमनद पहले ही विलुप्त हो चुके हैं। कश्मीर में कोल्हाई हिमनद 20 मीटर तक पिघल चुका है। गंगोत्री हिमनद 23 मीटर प्रतिवर्ष की दर से पिघल रहा है। अगर पिघलने की वर्तमान दर कायम रही तो शीघ्र ही हिमालय से सभी हिमनद समाप्त हो जाएँगे जिससे गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, सतजल, रावी, झेलम, चिनाब, व्यास आदि नदियों का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। इन नदियों पर स्थित जलविद्युत ऊर्जा इकाइयाँ बंद हो जाएँगी परिणामस्वरूप विद्युत उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। इसके अतिरिक्त सिंचाई हेतु जल की कमी के कारण कृषि उत्पादकता पर भी प्रभाव पड़ेगा। उपर्युक्त नदियों का अस्तित्व समाप्त हो जाने से भारत के पड़ोसी देश पाकिस्तान, अफगानिस्तान तथा बंग्लादेश भी प्रभावित होंगे।

वैश्विक जलवायु तपन के कारण जीवांश पदार्थ तेजी से विघटित होंगे परिणामस्वरूप पोषक चक्र की दर में बढ़ोतरी होगी जिसके कारण मृदा की उपजाऊ क्षमता अव्यवस्थित हो जाएगी जो कृषि पैदावार को प्रभावित करेगी।

वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड की वृद्धि के कारण पौधों में कार्बन स्थिरीकरण में बढ़ोतरी होगी परिणामस्वरूप मृदा से पोषक तत्वों के अवशोषण की दर कई गुना बढ़ जाएगी जिसके कारण मृदा की उर्वरा शक्ति पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों के उपयोग की दर में वृद्धि होगी।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव वनस्पतियो तथा जंतुओं पर भी पड़ेगा। स्थानीय महासागर ऊष्णता 3 डिग्री सेल्सियस बढ़ने के कारण प्रशांत महासागर में सैलमान मछली की जनसंख्या में अभूतपूर्व गिरावट दर्ज की गई है। बढ़ती उष्णता के कारण बसंत ऋतु में जल्दी बर्फ पिघलने के कारण हडसन की खाड़ी में ध्रुवीय भालुओं की जनसंख्या में गिरावट आई है।

जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक दुष्प्रभाव सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों पर पड़ेगा। आर्थिक क्षेत्र का भौतिक मूल ढ़ांचा जलवायु परिवर्तन द्वारा सर्वाधिक प्रभावित होगा। बाढ़, सूखा, भूस्खलन तथा समुद्री जलस्तर में कृषि के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर मानव प्रवजन होगा जिससे सुरक्षित स्थानों पर भीड़भाड़ की स्थिति पैदा होगी। उष्णता से प्रभावित क्षेत्रों में प्रशीतन हेतु ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता होगी।

निष्कर्ष – अंततः इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि जलवायु परिवर्तन एक गंभीर खतरा है जिससे संपूर्ण दुनिया प्रभावित होगी। अतः आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि जलवायु परितर्वन के लिए उत्तरदायी हरित गृह गैसों के वातावरण में उत्सर्जन पर प्रभावी रोक लगायी जाये ताकि जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभावों से बचा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. डी.एस.लाल, शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. डॉ. आर.बी.दीक्षित, कल्याणी पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. डॉ. सविन्द सिंह, प्रयाग प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. दैनिक भास्कर, मई 2010

****

एकात्म मानव वाद - कुछ मुख्य बिंदु

डॉ. आशा चौधरी *

प्रस्तावना - मथुरा के चंद्रभान नामक गांव में दिनांक 25-9-16 को एक प्रख्यात ज्योतिषाचार्य के घर जन्मे दीनदयाल जब मात्र तीन ही बरस के थे तब उनके सिर से पिता का साया उठ गया। और जब वे केवल आठ बरस के ही रहे होंगे कि उनकी माता का भी देहावसान हो गया। अब उनका पालन-पोषण करने की जिम्मेदारी उनके मामा-मामी ने ली, जिन्होंने बड़े ही धैर्य पूर्वक उन्हें अपने साथ रखा। उनके यह मामा तात्कालीन रेल्वे में स्टेशन मास्टर बताए जाते हैं। प्रखर प्रतिभा के धनी दीनदयाल ने आरंभिक शिक्षा-दीक्षा के समय से ही सिद्ध कर दिया था कि पूत के पांव पालने में ही दिख जाते हैं। बहुत कम लोगों को पता होगा कि **भारत माता की जय** का नारा उन्हीं का दिया हुआ है।

एम ए की शिक्षा प्राप्त करने तक वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की विचारधारा से जुड़ चूके थे। उन्होंने लखनऊ में निवास के दौरान **राष्ट्रधर्म** नामक एक मासिक पत्रिका, **पांचजन्य** नामक एक साप्ताहिक अखबार तथा **स्वदेश** नामक एक दैनिक अखबार निकाल कर यथाशक्ति अपनी बात जन जन तब पहुंचाने की कोई कोशिश अधूरी न रहने दी।

राजनैतिक स्वतंत्रता - वे राष्ट्र तथा मानव दोनों के लिये ही स्वतंत्रता को एक मौलिक आवश्यकता मानते थे। गुलामी में कभी भी शांति व खुशहाली नहीं आ सकती। उनका मत था कि मानव व समाज दोनों को ही अपने विकास के लिये राजनैतिक स्वतंत्रता की प्राकृतिक तौर पर आवश्यकता होती है। मानव व समाज के हितों में राज्य द्वारा कोई हस्तक्षेप न किया जाना ही वे राजनैतिक स्वतंत्रता मानते थे। इस संदर्भ में वे राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ ही साथ आर्थिक व सामाजिक स्वतंत्रता के भी पक्षधर थे। अपने सघन चिंतन से उन्होंने ये महसूस किया कि बिना राजनैतिक स्वतंत्रता के हमारा विकास अधूरा ही रहता है। उनका मत था कि स्वतंत्रता प्रत्येक राष्ट्र का धर्म है। उसकी रक्षा करना तथा खोने पर उसे प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है।

चिति, संस्कृति व धर्म- वे पूछते हैं कि जब पांडवों ने कौरवों पर जीत हासिल की तो इसे हम धर्म की जीत क्यों कहते हैं ? इसे हमने केवल एक राज्य हांसिल करने का युद्ध क्यों नहीं माना ? युधिष्ठिर की प्रशंसा की तो दुर्योधन को भर्त्सना का पात्र माना, कृष्ण द्वारा अपने समय के राजा रहे अपने मामा कंस का वध किया जाना भी जनमानस में हर्षोल्लास जगा गया था। क्यों ? इस प्रकार घटनाओं को हम एक विद्रोह मात्र न मान कर कृष्ण को ईश्वर के एक अवतार के तौर पर देखते हैं, युधिष्ठिर को धर्म व नीति के तो कौरवों को असुरों के तौर पर। अत: उक्त युद्ध को एक राजनैतिक युद्ध नहीं बल्कि एक धर्मयुद्ध के तौर पर देखते हैं।

राम जब लंका जीतते हैं तो इसमें लंकाधिपति के विरूद्ध उसीके भाई विभीषण का सहयोग अमूल्य था। विभीषण का उपरोक्त व्यवहार हमें आहत नहीं करता बल्कि हम उसे सराहते हैं। आगे, हमारे इतिहास में इसी प्रकार के कार्य के लिये हम जयचंद के लिये बेहद लज्जाजनक, अपमानजनक भाव रखते हैं जबकि विभीषण के लिये नहीं। क्यों ? क्योंकि इस सबके पीछे केवल राजनैतिक भावभरा स्वार्थ नहीं है। इसके पीछे है धर्मभाव। एक **चित्ति** । यह चित्ति ही एक राष्ट्र की, एक देश की आत्मा है। इसी के मजबूत होने पर एक राष्ट्र का उदय होता है। कोई एक व्यक्ति भी इसे अपने आप में अभिव्यक्त कर सकता है। आखिरकार एक राष्ट्र के महापुरूषों के महान कार्यों में यही चित्ति झलकती है। एक राष्ट्र के निवासी अपने आप में विभिन्न मत व पृथक पृथक आग्रह रखते हुए भी एकता, तालमेल तथा सद्भावना रखते पाए जाते हैं। अपने अपने नियम तथा अलग अलग समूह रखते हुए भी आपसी सामंजस्यपूर्ण तालमेल के आधार पर एक साथ रहते हुए आंतरिक शांति तथा खुशियां प्राप्त करते हैं।

उन्होंने भारत की **संस्कृति** की इस विशेषता को अपनाया कि जिसमें संपूर्ण जीवन का, संपूर्ण सृष्टि का विचार समाहित है। इसका विचार एकात्मक है। टुकड़ों टुकड़ों में विचार करना इसमें औचित्य नहीं रखता। इसी एकात्मक विचार से संपूर्ण सृष्टि या समाज व समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई व्यक्ति के भी विकास का दर्शन उपलब्ध होता है। इसे ही हम एकात्म मानववाद के नाम से जानते हैं। उनका मानना है कि-

धर्म ही समाज को सरंक्षित रखता है-चिति की जब वे बात करते हैं तो बताते हैं कि एक देश की चिति ही उस राष्ट्र का धर्म है। यह धर्म सर्वोच्च है। अगर धर्म नष्ट हुआ तो राष्ट्र भी नहीं बचेगा। यह धर्म कोई मंदिर-मस्जिद वाला धर्म नहीं है। पूजा-इबादत वाला धर्म नहीं है। यह संभव है कि एक व्यक्ति प्रतिदिन मंदिर-मस्जिद जाता हो, पूजा-इबादत करता हो फिर भी धर्म का मर्म न जानता हो। वे इसे अंग्रेजी के रिलीजन से अलग मानते हैं। ये दोनों ही वे शब्द हैं जिनके कारण असंख्य युद्ध हुए जिनमें अनगिनत मानव मारे जाते रहे हैं। रिलीजन का अर्थ जाति, वर्ण अथवा समूह से जुड़ा है तो वहीं, धर्म का अर्थ अत्यंत विशाल है। मजहब या रिलिजन अनेक हो सकते हैं जबकि धर्म व्यापक है।

धर्म के मौलिक सिद्धांत शाश्वत तथा सर्वसामान्य है। वे किसी समूह, जाति या वर्ण मात्र से संबद्ध नहीं है। वरन संपूर्ण मानवता से, प्राणीमात्र से संबंद्ध है। वे धर्मराष्ट्र की कल्पना करते थे जिसमें धर्म हर प्रकार से सर्वोच्च होगा। लोकतंत्र का आधार यही धर्म है जो मानव धर्म है।

इस संदर्भ में राष्ट्रीयता एक वह शक्ति है जो राष्ट्र को आगे ले जाती है। उनका मत है कि हमें अपने अतीत तथा प्राचीन संस्कृति के आधार पर ही अपने भविष्य का निमार्ण करना होगा। हमारी संस्कृति का मूल है धर्म जिसे निकाल देने पर हाथ कुछ नहीं आता।

एकात्म मानववाद: कुछ मुख्य बिंदु- अपने राजनीतिक विचारों में, हालांकि विकास का यूरोपीय मॉडल उन्होंने परले सिरे से खारिज कर दिया था कि

* विभागाध्यक्ष (दर्शनशास्त्र) शासकीय जे. यो. छ. ग. महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

देशीयता को बनाए रख कर ही हम अपने देश को अन्य देशों के सामने एक नवीन आदर्श के रूप में प्रस्तुत कर सकने में सक्षम हैं। किंतु अपने एकात्म मानववाद में वे भारतीयता के साथ साथ पाश्चात्य मूल्यों का भी समावेश करते हैं। क्योंकि उनका मत है कि विकास के लिये दोनों ही मूल्य आवश्यक हैं। भारतीय आध्यात्म तथा पाश्चात्य भौतिकवादी मनोभावों का सम्मिश्रण रखते हुए वे केवल विकास की, संपूर्ण विकास की अहम बात करते हैं। मानव, समाज तथा राष्ट्र के विकास के लिये वे आध्यात्मिक व भौतिक दोनों ही बिंदुओं पर समान रूप से विचार करते हैं।

उनका यह मत इस शास्त्रीय अवधारणा पर आधारित है कि व्यक्ति मन, बुद्धि, शरीर तथा आत्मा का एक समुच्चय है। हमें पाश्चात्य अवधारणा की अनुपयोगिता इसी बात से समझ में आती है कि इसमें मानव के पृथक - पृथक हिस्सों का टुकड़ों टुकड़ों में अध्ययन करने की प्रवृत्ति मिलती है। जब बात प्रजातंत्र की आई तो उसने व्यक्ति को एक राजनैतिक जीव मान लिया, इस संदर्भ में, राजनैतिक तृप्ति हेतु उसे राजनैतिक स्वतंत्रता का अधिकारी मान लिया। फिर, पाश्चात्य विचारकों को मानव क्षुधा की तृप्ति के निमित्त मार्क्स की थ्योरी की शरण में जाना पड़ा क्योंकि मात्र राजनैतिक स्वतंत्रता दे देने से मानव का पेट नहीं भर सकता था। मार्क्स ने मानव को अपने हक के लिये संघर्ष की राह दिखाई। लेकिन इस अपूर्णता के साथ कि संघर्ष में समाप्त होने वालों की उपलब्धि क्या होगी ? लेकिन, हमें पता है कि श्रीकृष्ण गीता में धर्मयुद्ध में जीतने पर सारा राज्य और मृत्यु हुई तो स्वर्ग को प्राप्त करने का विश्वास दिलाते हैं। इस प्रकार भारतीय दर्शन में वैचारिक परिपूर्णता है जबकि पाश्चात्य मत अभी तक मानव के उन्नयन को मन, बुद्धि आत्मा व शरीर के उन्नयन से एकाकार नहीं कर पाए हैं।

अपने एकात्म मानववाद में वे एक उस समाज की कल्पना करते हैं जो बेरोजगारी विहीन हो, जिसमें वर्गभेद का नामो-निशान न हो, जो स्वतंत्र हो अर्थात अपने ही तंत्र से बंधा हुआ हो, स्वदेशी तथा एक सर्वथा विकेंद्रीकृत आर्थिक व्यवस्था पर आधारित समाज हो। एक उस समाज की कल्पना कर रहे थे वे जिसमें हर हाथ को काम, हर खेत को पानी उपलब्ध हो। विकास के लिये वे मशीन के महत्व को नजरअंदाज नहीं करते किंतु मानते हैं कि मशीन व मानव में मानव ही महत्वपूर्ण है। शिक्षा को उन्होंने एक सामाजिक जिम्मेदारी माना है। वे मानो आने वाले विश्व में प्रकृति के अनवरत तथा गैरजिम्मेदारी भरे दोहन का अंदाज लगा चुके थे अत: विकास के इको फ्रेंडली तौर-तरीके अपनाने की पैरवी करते थे। प्रत्येक व्यक्ति व राष्ट्र को सम्मानजनक रूप से जीने लायक स्तर उपलब्ध हो, व्यक्ति तथा राष्ट्र द्वारा विकास के अगले स्तरों को हासिल किया जाने पर विश्व के विकास के मार्ग भी अनिवार्यत: सुगम होंगे। इस समस्त विकास हेतु वे प्राकृतिक संसाधनों के उचित दोहन तथा स्वदेशी तकनीक को विकसित करने, अपनाने के पक्षधर थे। विकास ऐसा हो जिसमें मानव, संस्कृति तथा मानव जीवन से जुड़े अन्य महत्वपूर्ण मूल्यों पर कोई आंच न आए।

मैं यहां उनके इस एकात्म मानववाद के कुछ उन बिंदुओं पर स्थिर करना चाहूंगी जो उन्होंने भारत में टेक्नोलॉजी के सूत्रधार व कर्णधार रहे श्री विश्वेसरैया के सेवन एम्स के मत से जस के तस उठाए हैं। इन्हें उनकी एकात्म मानववाद शीर्षक से 1964 में प्रकाशित पुस्तक में सेवन एम्स3 के नाम से ही प्रस्तुत किया गया है। स्पष्ट है कि इस धरा पर उनके लिये मानव का अपना महत्व है। बावजूद इसके, इन बिंदुओं को वे मानव, समाज तथा राष्ट्र के विकास के मद्देनजर ही अपनाते हैं। इन्हें उन्होंने बंबई में अपने चार व्याख्यानों में से अंतिम व्याख्यान में प्रस्तुत किया था। इनके बिना उनके एकात्म मानववाद की व्याख्या अधूरी ही है। इन्हें उन्होंने अत्यंत महत्व दिया है। इनमें से किसी भी एक के अभाव में विकास की गाड़ी लड़खड़ा जाऐगी। ये सेवन एम्स निम्नानुसार हैं-

man, material, money, management, motive power, market & machine.

इनकी उन्होंने समुचित व स्वस्थ दृष्टिकोण से जो व्याख्या की है वह किसी अगले शोधपत्र का विशय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Integral Humanism,Upadhyay Deendayal, chepter-1, 2
2. गीता से याकूब मसीह द्वारा निरीश्वरवाद, भारतीय व पाश्चात्य में उद्दत, पृ-3
3. Integral Humanism,Upadhyay Deendayal, cheptre—3
4. www.sabhlokcity.com,
5. www.niticentral.com से साभार।

****

Metaphor Of Painting In The Waste Land By T. S. Eliot

Sehbha Jafri *

Abstract - In order to study art and poetry side by side for a few past complicated years, my area of interest suddenly starts to peep into the vision of comparison and contrast between the art and the poetry. The present paper is the spontaneous outcome of what is called the adoption of metaphor of painting. It works on the concept of how the poetry and the paintings works as they seem two sides of same coin and how these two categories are defined and conceptualized. The visual and literary arts are envisioned, many a time, as two separate parts of man's creativity but, particularly in the art of modern era this boundary line begins to blur. As told by a great Latin scholar Horece, "poema pictura loquens pictura poema silens", it is proved by the studies that musicians, painters and poets worked together, operated by same instinct and provoked by same atmospheric catalysts. Their creations germinated into same soil, they made a symbiotic atmosphere for their growth and they gave their hands to each other's development. By receiving the inspirations from each other, both arts crossed their genre boundaries and what they gave the literature was the newness of ideas and uniqueness of theories.

This paper is a small effort to use this approach in the famous Epic poem The Waste Land to analyse that how textual beauty becomes a part of artistic pleasure and how art receives the influence from textual aesthetics to create something novel and timeless classic.

Keywords - Metaphor, painting, cubism, collage, structure and rhythm.

Introduction - The Waste Land is the great modern epic poem. The poem is composed first in 1922. It was Eliot's own literary magazine The Criterion who introduced The Waste Land. Later, after a month, it was reappeared in The Dial where it welcomed a vast range of criticism. It was all because it was a precious Amalgam of Eliot's tremendous knowledge. Even today, it is an occasion of a saluted knowledge whom age can never wither nor custom stale. The basic symbols used in the poem are adopted from Jessie Weston's From Ritual to Romance. The style which Eliot has selected is derived from the seminal works of modern literary technique and the little-known references which Eliot has incorporated here, are taken from history, mythology, religion and many other disciplines. Every above thing is a common fact for the poets of previous time but Eliot's adoption of the Structure of the poem which is borrowed from the painters is the new and unique thing which has paved the way of the poets to welcome the ideas from other genre. The present paper is the positive effort to find out the metaphor of painting in The Waste Land which has not only made the poem unique in style but also gave it a superior place among all the modern epics.

Well knitted into four different parts the poem looks like a collage. " Burial of the dead ", "Game of Chess", "Death by Water" "What the thunder said" and " the fire sermon " all the five parts contain different views and pictures. Sometimes clear, sometimes hidden it looks like a beautiful collage of different views. Starts with a beautiful description of April images the poem moves around so many vague images of desolate land like, hyacinth girl, bunch of lilacs, sledging with the cousin in childhood, rain shower in Starnbergersee, café house of Hofgarten and etc. It looks like Eliot breaks the vision by dissecting the simple two dimensional perspectives and gives a hidden sense to the poem by sharpening the vision of the readers. This pictures like multitude of small facets make this jolting a cubic painting. Although they seem differ but evoke the same figure, that is, The Waste Land. The second part "A game of Chess" begins with a beautiful painting of a woman sitting on a beautiful "burnished throne" - where we see the inspiration of the painting of Cleopatra. The splendid drawing room, the coffered ceilings and lavish decorations, vials of ivory and coloured glass with the antique mantel of the drawing room, all look like a beautiful renaissance painting. Both the woman and the room are magnificently attractive. One can visualize the sense of colours, fumes and temperature as he directly looks at the painted picture by any noble painter.

In third part "The Fire Sermon," is the wonderful output of Eliot's experiments with the paintings incorporated in the poetic style. The structure of "The Fire Sermon" is the best described as a series of **vignettes**, or short scenes, depicting the moral abyss into which modern people have fallen. In the first, the poem's speaker stands along the banks of the River Thames in London. The imagery invoked is that of death and decay: 'The river's tent is broken: the last fingers of leaf / Clutch and sink into the wet bank. The wind / Crosses the brown land unheard.' The 'Sweet Thames,' which had provided inspiration for centuries of great poets and artists,

* Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

is here reduced to a bleak sewer. The tell-tale signs of modern living are strewn along its banks: '… empty bottles, sandwich papers, / Silk handkerchiefs, cardboard boxes, cigarette ends.' It looks like Eliot gives he vision of is a modern metropolis, whose inhabitants have lost connection with the things that matter most.

This 'Unreal City' features people living under a 'brown fog' and concerned with nothing but purchasing silly trinkets and worthless goods.

"The Death by Water" is the fourth section of The Waste Land. It is the shortest section of the poem which describes a man, Phlebas the Phoenician, who has died, apparently by drowning. In death he has forgotten his worldly cares as the creatures of the sea have picked his body apart. The narrator asks his reader to consider Phlebas and recall his or her own mortality.

What the Thunder Said," the final section of the poem., picks up the same thread, referring in the first stanza to the passion of Christ, another famous deceased. The "torchlight red on sweaty faces" perhaps indicates the guards who come to take Christ away; the "garden" is Gethsemane; "the agony in stony places" refers to the torture and the execution itself; and "of thunder of spring over distant mountains" describes the earthquake following the crucifixion. From Christ's death springs life; similarly, the Phoenician is killed by water, that life-giving force, that symbol of fertility and rebirth. As in "The Burial of the Dead," life and death are inextricably linked, their borders blurred at times: "He who was living is now dead / We who were living are now dying / With a little patience."

Suggestions and findings - An scholarly attempt to examine the The Waste Land line by line, leads us towards several beautiful paintings from where the allusion and references are taken. These references are beautiful which seem helpful to examine the overall meaning of each line and fragment of every section of the poem which is made up by five beautiful sections. One can highlight some of the very noble and specific references since the title of the poem, The Waste Land. The title refers to a myth from From Ritual to Romance, in which Weston describes a kingdom where the genitals of the king, known as the Fisher King, have been wounded in some way. The basic idea of King is actually present in a grail paintings from where the Grail Tales take the birth. The Seedling of Grail poems from Grail painting is also a popular fact. The injury of the fisher king which affects the king's fertility is clearly painted by grail painters which is used by Eliot as a mythical-moral injury which affects the kingdom itself. With its vital, regenerative power gone, the kingdom has dried up and turned into a waste land. In order for the land to be restored, a hero must complete several tasks, or trials. Eliot uses this ancient myth by the help of the blind king. The concept of the quest of different things in the story of the poem is also proved by the paintings of many cultures, including the Christian quest present in the paintings of the Holy Grail. Eliot says he captured each and evey painterly vision of this myth this myth for his poem, and critics have noted that many of the poem's references are really arrived from the Grail Paintings.

The Second reference of Philomela is taken from the painting of Metamorphoses which is based on the idea of Ovid. In the painting, Tereus's the cruel King, Racked with lust, is shown to steal away the virginity of Philomela and rape her in the woods. here, Eliot seems highly inspired by another painting pinted by Games Soory named "sylvan scene" in which the picture is based on the scene that the king ties the Philomela up and cuts off her tongue so that she may not tell others of what has happened.

One more painting says that the king returns to his wife, but Philomela is able to weave on a loom what has befallen her; she gives the loom to her sister, who, upon discovering the truth, retrieves Philomela, slays Tereus's son, and feeds his carcass to the king. When he finds out that he has been served his son for dinner, Tereus flies into a rage, chasing both Philomela and his wife out of the palace, and all three of them transform into birds. The speechless Philomela becomes a nightingale.

The paintings of all the three vision are necessary to discuss here because Eliot has taken the refinances from every painting and used the voices of the nightingale to increase the pathos in the poem. "A Game of Chess" is this way considerably marked by the scholarly paintings and prints. The name itself comes from Thomas Middleton's seventeenth-century play A Game of Chess, which posited the said game as an allegory to describe historical machinations.

The fire sermon, the third part of the poem is a wonderful valley of metaphors from paintings. Although the central theme of this section is, to put it simply sex, yet the way in which Eliot deals with the theme is colourful and unique. If death permeates "The Burial of the Dead" and the tragically wronged woman -– be it Philomela or Ophelia -– casts a pall over "A Game of Chess," "The Fire Sermon" is in essence a sermon about the dangers of lust. It is important to recognize that Eliot culminates this passage with an invocation of both Eastern and Western philosophy; he even says so himself in his notes. "To Carthage then I came" refers to Augustine; "Burning burning burning burning" recalls Buddha's Fire Sermon, in which "All things, O priests, are on fire." Both Augustine and Buddha warn against purely physical urges, as they must inevitably serve as obstacles or barriers to true faith and spiritual peace. The metaphor of fire, familiar from countless representations of Hell in Christian art, is here specifically linked to the animal drives that push men and women to commit sinful acts. This section is a wonderful attempt to mingle East and West from the point of view of art and philosophy. Eliot's rejection of traditional 19th-century norms and an attempt to re-envision the society in flux is perfectly like Orphistic painters but the progress of Eliot's vision from objectivist optimism to cynical relativism expressed through fragmented free verse makes him more than this. Although the title The Fire Sermon itself is an orphistic title started from one point but it does not deal with

contrast themes like an orphistic painting. The title which is a metaphor which is collected from The Âdittapariyâya Sutta (in Pali Language), popularly known as fire sermon, first got in the caves of Mount Abu in the form of Bhittichitra. Later it was collected by museum and the saints and followers of Buddha composed it as a part of The Buddha Purana for the coming age.

The Canto "Death by Water" is highly inspired by the image of Phlebas which explains about the grail story of a drowned sailor who was warned about his but as, death was certain he became unconscious about it. Other than that, the canto reveals many images. The first is that of Gethsemane when Jesus Christ was captured in the night. This shifts into a barren landscape filled with rocks, but no water. Merging into it, is a scene , similar to the search for the Holy Grail, with vile, haunting images of towers and broken cities as we can see, for example, in the classical work by Andrea Mantegna based on all four Gospels, released immediately after the Last Supper, following different literary trends and changes in the tradition of European religio-aesthetic attitude.

The last canto of The Waste Land is the wonderful verbal representation of visual presentation. The artistic tradition of linguistic analysis offers a number of varied and productive tools when we interpret the texts of this poem. Although the reflection , on an average, visual field encounters many more difficulties to capture the Icono- logical images which traditionally focus the attention on different thematic aspects but an expert mind can easily get the rhetorical relation present between words and images of the poem. This canto reveals many images. The first is that of Gethsemane when Jesus Christ was captured in the night. This shifts into a barren landscape filled with rocks, but no water. Merging into it, is a scene , similar to the search for the Holy Grail, with vile, haunting images of towers and broken cities as we can see, for example, in the classical work by Andrea Mantegna based on all four Gospels, released immediately after the Last Supper, following different literary trends and changes in the tradition of European religio-aesthetic attitude.

The fragments of Philosophy of Freud, Planck, Bergson and Einstein integrated with the names of musicians, pieces of newspaper headlines or sections of paragraphs, or visiting cards makes it 'a collage from the canvas of cubists' . If we observe its technique we come to the conclusion that it is a technique often preferred by the painters to offer a witty comment on the rest of their picture.

The strong visual senses like romantic paintings, the double image feeling of surrealist painting; the visual puns enable a single form to assume two or more identities like an impressionist painting; the cubic illusion where figures sometimes merge into each other and turn out to be give a detail account in the structure of a larger, unrelated figure all clearly reveal that Eliot is a "painter's poet". The Waste Land is not a thing of study for the one among the crowd of Londoners standing over the London Bridge but the taste of time for those people who salutes the lost souls like Dante, Homer and Virgil; it is a thing to be liked by those scholarly people who can sees a green meadow of joy inside the gate of the Inferno and can peep a beauty of heaven inside the casement of Picasso and Dali's art. It is really a thing of beauty and joy forever.

Conclusion - The poem is deliberately obscure and fragmentary, incorporating variant voices, multiple points of view, and abrupt shifts in dramatic context. The motif of moral degeneration, however, is prevalent throughout the poem, the premise being that contemporary Europe, obsessed with novelty, trends, materialism, and instant gratification, lacks the faith and substance to reaffirm its cultural heritage, to re establish the sense of order and stability that historical continuity once provided. In an attempt to counter the poems of the present with the rich pictorial heritage of the past, Eliot combines images from pagan rituals and religious texts with ancient fertility rituals and allusions to legends of the Grail. These images of ceremony and tradition are set against bleak images of modern life, where spiritual death breeds cultural death, and the ashen landscape reflects a barren world void of transcendental value.

References :-

1. Atkins, Robert. The Art Speaks. New York : New York Press, 1987. Print
2. Bilsky, Manuel. I. A. Richards' Theory of Metaphor. USA: University of Chicago Press, 1948. Print.
3. Bywater,I.Aristotle:On the Art of Poetry.Oxford:Oxford Publishers, 1909. Print.
4. Brun, Le Charles. The Art Speaks. Cambridge : Cambridge University Press, 1976. Print.
5. Dayand-Brain, Dochetry. English Poetry and its changing Tradition. London: Macmllan,1995. Print.
6. Entwistle, A. Robert. The Study of poetry. New York: T. Nelson and Sons, 1939. Print.
7. Heffernan, James. Museum of Words: The Poetics of Ekphrasis from Homer to Ashbery. Chicago: University of Chicago Press, 1993.Print.
8. Jonas, Natalya. Impact of English Poems on Mikhail Lermontov's poems.Chicago: University Press, 1812. Print.
9. Lewis, Swanson. Metamorphoses. Moscow: woodland publishers, 1918.Print.
10. Lakoff, George. Study of Metaphor. London: Greenwood Press, 1923. Print.
11. Martin, Benny. The Extended Metaphor: Making and Mechanism. London: Hamish Hamilton, 1963.Print.
12. Plath, Silvia. Modern Poetry Harmondsworth: Penguin Books, 1983. Print. Jacobson, Roman. Language and Literature. U.K: Belknap Press, 1990. Print.
13. Rymond, Harry. Colombia Encyclopaedia. USA: Colombia University Press 1893. Print.
14. Timofev and Turaev, ZaretskayaMetaphor: Abasic Mechanism. Russia: State of Art Pub., 2012. Print.
15. Vate,Vijay. The Indian Art. Cambridge: Penguin Classics, 1923. Print.

A Critical Study Of Vedanta Philosophy In The Novels Of Raja Rao

Dr. Rajkumari Sudhir *

Introduction - It would be befitting to have a lengthy discussion on Raja Rao's novels and the impact of Indian philosophy on him. His preference for Indian philosophy has given a philosophical tinge to all his creative activity. It must be kept in mind that he hails from a family known for the knowledge of Advaita Vedanta of Sankara.

In its long history, Indian thought with its several systems of philosophy and two major religions (Brahminism and Buddhism) has evolved on its own. In spite of its theoretical variety, there is the core, a cherished cluster of values that has shaped an attitude we call Indian, and this has been implicit in the Indian writer's world-view.

Indian philosophic thought does not lend itself to be characterised in a way that would comprehend all its diversity represented by its orthodox and heterodox schools. Even the principles of these two broad divisions no longer obtain in their original form, for each has over the centuries dominated the other, modifying one another subtly and at times radically. However, there are certain common features identifiable and also helpful to focus on the attitude that defines the categories of approach to reality and experience.

Hiriyana comments, "A seeking for the central meaning of existence" (Hiriyana 17) and a ceaseless aspiration for an ideal are shared both by religion and philosophy. In their pursuit they seem to converge so fully that they cannot be treated separately. In this sense along religion merits to be called "applied metaphysics". Philosophical knowledge in India was considered a means of liberation (*moksha*). It was not an intellectual classification. The enquiry was into the presence of evil both physical and moral in life followed by an intense struggle to remove it. The reflection on metaphysical questions was part of philosophic enquiry which was principally directed to find a remedy for the ills of life. Knowledge for its own sake in a spirit of endless curiosity was not favoured. Manu enjoins that one should never cultivate idle curiosity that is of no avail. The moksha ideal was to be realised in this life. It was the highest ideal, and man's life within its limitations was constantly directed towards it. This brings us to the belief that attainment of complete freedom is possible while still here in this life [jivan mukti]. All the Upanishads endorse what the Katha concludes: As Sri Aurobindo underlines, "when every desire that finds lodging in the heart of man has been loosened from its moorings, then this mortal puts on immortality : even here he tastes God, in this human body" (Aurobindo 240). This is the highest state of enlightenment.

There is a way of life to realise this. A procedure of discipline is laid down in every school. One should realise the ideal through the ashrama discipline progressively. It was not to turn away from social obligations but to disengage oneself through self-culture which has no room for revulsion or neglect. This is at the root of the principle of detachment culminating in disinterested action. The spirit of renunciation implict in this principle defines Indian attitude to morality. The ultimacy of renunciation is complete cessation of personal interest realised through performance of social obligations with no thought of one's rights, going beyond the conflict of rights and duties that relate to the individual and his social environment. When one transcends common morality, one reaches the stage that resolves all conflicts as the Upanishad says: Shri Aurobindo explains, Verily to him cometh not remorse and her torment saying, "Why have I left undone the good and why have I done that which was evil?"(274).

The Serpent and the Rope is a sensitive revelation of Sruti, Smriti and Achara in its numerous references to the Upanishadic Yagnyavalkya and Maitreyi, the variety of rituals, practices and the popular culture of legends and tales. All these interpenetrate one another with extremes meeting from the folk tale of budama kaye to the most difficult philosophic poem Dakshinamurthy Stotra ascribed to the great philosopher Sankara. All these exist in a state of simultaneity in Indian mind shaping its tradition. This makes the novelist marvel "Oh, to be born in a country where tradition is so alive". The fact is evident to Raja Rao:

Civilization is nothing but the familiarity with which we go into this inner property, cultivated and manured from age to age. The rivers have washed alluvial soil to it and the rains eave poured and gone down into the sea, and brought back as it were, the perfume of the same land; so that when our mangoes fall and we eat, we know it is the product of a thousand years.

Its essence in Indian psyche is unmistakable. His longing for "the integrity of selfness" cannot be belied.

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P. G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

Whatever the superficial crust that covers it, "you can remove it with a babul-thorn."

Ramaswamy in the novel realises that life is a pilgrimage. He wants to know the sacred place that the pilgrimage might lead to. As long as he is uncertain about it, he is an orphan. "Some deep absence which neither love nor learning could fulfil" invades him. He is urged to intone to himself the lines of Sankara's Mohamudgara Stotra :

Who am I? And who are you? What is the place from which 1 come? Who is my mother? Who my sire? pondering thus, perceive them all as fancies only, without substance. Give up the world as an idle dream.

He is brought to face the fact that has given "importance to unimportant things." He is required to become dhira of the upanishads and seek "the meaning of the ultimate." This is possible when one can distinguish the real from the unreal, rooted steadfast in knowledge that the awful serpent is but the innocent rope, negating what the Vedanta calls the illusion of the world while affirming the underlying reality of Brahman. This exemplifies what Sankara said in Direct Realisation, G.A. Natesan says:

Just as, by delusion, one ignores the rope and perceives the serpent, so does he of deluded intellect perceive the universe without realising the truth. When the form of the rope is understood, the appearance of serpent disappears. So too when the ultimate reality is realised, the universe vanishes (Natesan 57).

Ramaswamy confronts the fact of human condition when he concludes -

Existence is a passage between life and death, and birth and death again, and what an accumulation of pain man has to bear? Is it then a wonder the Buddha, with palaces and queens, with a kingdom and an heir, left his home to find that from which there is no returning? You could only live in life, and to find what that means to know the whole of wisdom (Rao, *The Serpent* 135).

As a Brahmin he strives to go beyond history to shuttle in time and to take the accumulated wisdom by horns as it were. He cannot ignore this imperative with "a sage to begin the geneological tree." He should seek a guru to end the cycle of birth and death. Rama may do it sooner or later.
Vedanta is called Adhyatma Sastra. It is not confined to a geographical entity. It is a principle India is credited with. Therefore, "jnanam is India" which is perhaps the only nation that "has questioned the existence of the world - of the object". Once, the principle is espoused, wherever the Sadhaka is or goes to, he discovers India and finds that the "Ganges flowed everywhere." He is India. Raja Rao quotes a verse from The Kasipanchaka -

This body is the holy place of Benares; (and here flows) the all-pervasive Ganges of wisdom, the mother of the three worlds; this devotion and this faith are Gaya; the contemplation of the feet of my own preceptor is Prayaga; this Innerself, the Brahman, the witness of the mind of all people, is the God, the Lord of the universe; if everything (thus) abides in myself, is there any other shrine (besides it)?

The ideal of India is sainthood reached by "the extinction of. the ego." Raja Rao has commented in his novel on the concepts of Karma, Jnana and Vairagya. The Vedanta makes use of them in the context of Jivan-Mukti. This is the impact of Indian philosophy which is brought to the fore in "isolate existences of India, in which India is remembered, experienced and commemorated; beyond history, as tradition, as the truth". Professor Narasimhaiah has in recognition of this unique character spoken of *The Serpent and the Rope* - "as an evocation of this truth, the tradition of India and its vitality, especially in its encounter with the West - India seen as an idea, not as an area on the map"(10).

The Cat and Shakespeare reflects on the concept of grace in the light of Shri Ramanuja's philosophy of qualified monism. A great deal of commentary has explicated the symbolic richness with which the cat, the wall and the house of three storeys function in the novel. The metaphysical background has direct reference to the latter Vaishnava schools that derive from the cult of devotion [bhakti] which in course of time developed into the extreme doctrine of self-surrender. The followers of the Northern learning who formed the Vadagalai sect of Sri Ramanuja's philosophy while recognising the necessity of self-surrender insist that it should be preceded by self-effort. When this self-effort fails, the consequent feeling of helplessness will bring about firm faith in God's grace. At this stage alone one should resort to self-surrender [saranagati or prapatti]. The followers of Southern learning on the other hand do not need such self-effort, as God's love is spontaneous [nirhetuka] and, therefore, can-bring salvation to mankind. V. Rangacharya comments:

One party asserts that the soul must exert itself to get saved, as the young monkey actively seizes its mother when she jumps from tree to tree; this is the well-known markatanyaya (analogy of the monkey). The other party asserts that God's grace is like the care of the mother cat for its young, which is independent of all efforts on the part of the latter. This is known as marjaranyaya (Rangacharya 60).

Raja Rao has made explicit remarks on the principle of self-surrender. Govindan Nair in *The Cat and Shakespeare* knows that only the fortunate few realise the significance of Prapatti. God's readiness to save man is suggested through the fable of the hunter and the bilva tree. When man's surrender to God's grace is total, it becomes the source of delight as he can watch the world-play secure and detached: Ah, the kitten when its neck is held by its mother, does it know anything else but the joy of being held by its mother? You see the elongated thin hairy thing dangling, and you think poor kid, it must suffer to be so held. But I say the kitten is the safest thing in the world, the kitten in the mouth of the mother cat. .. I often think how noble it is to see the world, the legs dangling straight, the. eyes steady, and the mouth of the mother at the neck, Beautiful (Rao, *The Cat* 101).

Nair has watched the world as a play. Every event, no matter how trivial, brings him a revelation which he accepts as a matter of fact. The Cat saves Nair. Pai is saved through Nair. He is, therefore, able to comment at the end that "Life

is so precious. I ask you why does not one play?" and again, "oh, how beautiful the earth is."

There may be other aspects of these novels in detail. But in the presence of this overwhelming truth of Vedanta "why give importance to unimportant things?"

In India, the universe and its subsystems including human society were seen as organic wholes in which each jati [on the cosmic plane a form of life, on the social plane a class or community] has a specific task [dharma] to perform. Only in the faithful, dispassionate performance [nishkam kanna] of this duty can an individual acquire merit and a higher station in the next life.

S.C. Dube in his pioneering anthropological work on the actual practice of the faith points out:

Hinduism ... as it is practised is not the Hinduism of the classical philosophical systems of India, for it possesses neither the metaphysical heights nor the abstract content of the latter.

However, it is the popular practice of Hinduism rather than the standard version of its core which gets reflected in the responses of particular persons in specific situations in different phases of Indian history. The two often differ very substantially and for that reason Milton Singer thought it fit to organize the diversity found in Hinduism along a continuum ranging from 'Sanskritic Hinduism' to 'Popular Hinduism.'

References :-

1. Aurobindo. The Upanisheds, Part I. Pondicherry: Sri Aurobindo Ashram, 1981.
2. Print.
3. Hiriyana, M. Outlines of Indian Philosophy. Delhi: Blekie and Son, 1983. Print.
4. Lal, P. "Myth and Indian Writer in English: A Note". Aspects of Indian Writings in
5. English. Ed. M.K. Naik, New Delhi: Macmillan, 1979. 5. Print.
6. Mukherjee, Meenkshi. The Twice-Born Fiction. New Delhi: Arnold Heinemann, 1974.
7. Print.
8. Rao, Raja. Kanthapura. London: Oxford University Press, 1963. Print.
9. The Cat and Shakespeare. Delhi: Orient Paperbacks, 1971. Print.
10. The Serpent and The Rope. Delhi: Orient Paperbacks, 1968. Print.

****

A Study of Social Realism in Charles Dickens's Novels (With Special Reference to Oliver Twist and David Copperfield)

Yogshikha Kanhere *

Introduction - Charles Dickens (1812-1870) is one of the most popular novelist of the nineteenth century England. He had the great quality to reign on the hearts of his readers.

Man is a social being. It is almost impossible for a writer to exclude him completely from society. If he is to survive in society, he is bound to follow the norms and conventions laid down by the society. Dickens is a writer who had to suffer many problems in his childhood. So he knew the society well and he can feel the problems of society so deeply which he showed in his novels.Dickens is one of the Victorian writers who come against the evils of society and by way of exposing them realistically, through his writings to the peoples. He is not merely a great intutive observer, a mindless sensorium. He is a penetrating commentator on life and contemporary society. The unifying thread of Dickens's entire career is the critical analysis of modern society and its problems hardly surpassed in grasp or scope either by his contemporaries or by any more recent novelists.

Dickens was not only a great novelist but also a great entertainer. In his novels he attacked the injustice of the poor law, the cruelties of schoolmasters, imprisonment for debt etc.Victorian age is a term used to designate broadly the literature written during the reign of Queen Victoria (1837-1901). It was the best as well as the worst period, the spring as well as the winter season of England. It was an age of social unrest and produced a galaxy of great personage in all fields of life.

However, such a state of affairs could not continue for long. The industrial revolution gradually destroyed old agricultural England. It shook the supremacy of the aristocratic class and landed gentry, and brought into being a new merchant class. Customs, faiths, beliefs and traditions were losing their hold on the minds of the people and the new order of things had not yet been established. Men felt "Orphaned and defrauded".Victorian Age, was an age of rapid social changes and reforms. Class distinctions were increasing at an alarming rate. Victorians laid great emphasis on order, decorum and decency of manners. A call far rationally in all things constitutes a key nate of Victorianism Literature get linked with the neo-classical principals against which Romanticism had revolted.

Art became an insaparable part of social life and the order an discipline become the by-ward of the age. The French revolution had shaken rules of conduct and religious beliefs. English Literature of the later half of nineteenth century has striking similarity with the literature of the romantic revival. The criticism of Dickens is so emotional that it reminds us of Shelley and Byron.As a matter of fact, Victorian literature is many-sided and complex, and reflects both romantically and realistically the great changes that were going on in life and thought. It was the philosophy of a commercial people, whose chief aim & achievement was material progress. Everywhere in the poetry of Tennyson and Arnold, in the novels of Dickens and Thackery in the art of criticism of Ruskin and the literary criticism of Carlyle we get the same note of social criticism the same-dissatisfaction with contemporary ideal.

Literature came to the aid of religion in upholding high ideals against the rising materialism of the age. It had also to aid religion in its more special work of upholding an idealistic view of the universe.

He made out of a Victorian England a
Complete world, with a life and vigour and
Idiom of its own, quite unlike any other
World there had every been.

The world of Dickens's novels was the world of everyday. He found his own inmates as funny as Mr. Micawber. His adventures and misadventures were as hilarious or painful as those of Mr. Pickwick or David or Pip. His novels render his response to his experience, and show his hard-headed insight as a social theorist. Chesterton identifies Dickens as "deeply and radically English; the most English of our great writers."

"I am an affectionate father," he says "to every child to my fancy." He was not only an affectionate father but an "overindulgent father".In Oliver Twist and David Copperfield, Dickens gives a good account of some evils in Victorian Society, like Pick pocketing and child labour.

OLIVER TWIST was the first book published under his own name. Through this novel he has showed the poor condition of the poor boy Oliver. Oliver Twist is a complex novel touching various aspects of Victorian life. It could be read as "the Parish boy's progress from the workhouse through the criminal underworld, to the comfortable and

* Research Scholar, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

sedate world of the well-to-do.

Oliver Twist roughly falls into three parts. The first part consists of the first twenty seven chapters. The central section is comparatively short. It cover nine chapters, beginning with chapter 28. The third section, the conclusion begins with chapter 37.

"I wished to show", Dickens wrote in
Preface to the third edition of Oliver
Twist," in little Oliver, the principle of
Good, Surviving through every adverse,
Circumstance and triumphing at last."

Oliver Twist can be considered as a plunge from the sunny landscape of "Pickwick" to a confind world of darkness. Almost all it scenes are black and gloomy.

The most obvious difference between Oliver Twist and a social history is, of course, that it deals with actual characters whose personality we envisage, whose career we follow and whose feelings we share but this difference is not, I think, quite so important as we might assume.

At the beginning of the novel Dickens's satire is directed against the inhumanity of the conduct of the workhouse in its calculate hostility to the fact of Oliver's existence. The scene in which Oliver asks for more derives, one feels, from the way it expresses dynamically Oliver's revolt against the hostile social and material world.

The plot of Oliver Twist is very complicated and very unsatisfactory. It is a conventional plot about a wronged woman, an illegitimate baby, a destroyed will, a death bed secret, a locket thrown into the river, a wicked elder brother and the restoration to the hero of named property.

Oliver Twist in an angry warning to any society that does not take care of unfortunate children must face the dismal problems of its Fagin and Sikes. The contrast of the two worlds is at the very heart of the book. The society is full of too much troubles and injustices. No doubt Oliver Twist showed both Dickens and his public that there is no compassion in the society.

DAVID COPPERFIELD is rich in metaphors and similies drawn from common experience. It can be considered as one more link to the novels which deal with the social problems. While writing David Copperfield Dickens seems to be reviewing his own bad experience as a labouring child in the workhouse or as a student in the school. In this novel Dickens makes clear the personal basis of his struggle against social injustice by contemplating in fictional form, the painful rejection and isolation which he experienced, as a child. David Copperfield is Dickens's most personal book.

David Copperfield remained Dickens's favourite child, and George Overall reports that when he first read it, at the age of nine or so, he felt that the first hundred pages must have been written by a child. Many readers have assumed since Forster first revealed the close parallel in his life that the book is a thinly-disguised autobiography and that David is the young Charles Dickens.The fictional alternation of the autobiographic facts enable Dickens to transform the jealousy which a boy feels by the entrance of a step-father in his mother's love. Ivar Brown has written in his book "Dickens in His Time" that] Dickens himself was driven at the age to twelve into a warehouse in London. Imprisonment far debt is one of the securing themes in Dickens's novels'. The offenders in his times were carried to the prison houses as a punishment for their debts.

In David Copperfield we had found Dickens's hatred for the tyrannous parent or schoolmaster. One more aspect is distinguishable in David Copperfield, and that is the image of young, innocent, prematurely womanhood. Thus, Dickens continues, in this novel also to reveal nakedly the shortcomings of the Victorian age. Dickens is really successful in his attempt to satirise some of the institutions of the age.

Conclusion - Dickens's place in the history of the English novel is unique in this sense that he is the first novelist who critically examines the evils prevalent in the Victorian society. He attacks some of them and reforms, which he showed through his novels.

He escaped neither in his language nor his ideas. When he describes the grosser kind of social evil, there is a sort of contest between a frank acceptance. Charles Dickens has described the social problems in all of his novels.

Charles Dickens was such type of a novelist who from first to last was a novelist with a purpose. In his novels he deals with the victims of society usually a child. Dickens was the voice of his times. He is still one of the great English novelist who are read at all widely among simple people. His aim was to show the real and worst condition of the society. In his novels Dickens has attacked the education system and the child labour system of the Victorian Age David's working in the workhouse symbolizes the pauperism that was prevalent in the age.

In Oliver Twist, Dickens wished to show, in little Oliver, the principle of good surviving through every adverse circumstance and triumphing at last. Children became the important characters in his novels. Little Nell, Florence Domby, David Copperfield stand out in divine innocence and goodness. Dickens's place in the history of the English novel is unique.

References :-

1. J. Hillis Miller, Charles Dickens : The world of his novel, Cambridge; [Harward University Press : 1998]
2. G.K. Chesterton, Charles Dickens [London Methuen and Co. Ltd., 1940].
3. Humphry House : The Dickens world [London, Oxford University Press, rev. ed., 1950].
4. Charles Dickens, Treasury of World Masterpieces [London Octopus Book Ltd., 1981].
5. Arnold Kettle : An Introduction to the English Novel, [Hutchinson University, 1951].
6. Allen Grant : A Preface to Dicken [New York : The United Status of America, 1984].
7. David Copperfield [Great Britain, Collins, Clean Type Press, 1996]
8. Watt, Ian, The Victorian Novel, New York, Oxford University, Press, 1976.

The Concept Of Humanity In Kalidas And Wordsworth

Dr. Seema Sharma *

Introduction - Literature is the mirror of society. There lies a duty of a writer towards the society not only his own country but the whole world looks at the literary person with a hope that there would be save message behind his work. If we look at the Sanskrit literature, the concept of humanity and human welfare is seen clearly in many great works. The first poetry of the world i.e. the Vedas describe the relation between "nature and human being". "Man and nature" cannot be separated from each other and so is the concept of "human welfare".

Lok kalian or Human welfare means not only the well being of the man but the whole universe and all the creatures living in it.

सर्वेभवन्तुसुखिनः This is the main philosophy behind Indian literature Mahakavi Kalidas, Bhartrihari, Bhavbhuti, Adikavi Valmiki all wrote for the humanity".

Kalidas is said to be the "National poet"! He has described the Indian culture and civilization. His "Abhigyan Shakuntalam" is depicted as the essence of wisdom" on the earth. It is said that among the three main dramas written by Kalidas a "(Abhigyan Shakuntalam)" Shakuntalam is the most popular. It was translated by William Jones in 1789 and thus the world came to know the power of Indian Literature.

The love of Natives daughter is described in Shakuntalam. Shakuntala the "Child of the nature" is brought play the Rishi Kanva. Here we Nature" in Kalidas as well as Wordsworth".

Wordsworth the great romantic poet of English literature also described the humanity on the basis of nature. Nature is the mother who is caring us and so we have same duties towards the nature. His famous poems. The Tin tern Abrey". "The world is too much with us." The Daffodils are full of the message given by the poet to the "humanity".

Wordsworth describes "Lucy" the nature's daughter which reminds us of "Shankuntala".

"Three years she grew in sun and shower, Then nature said, "A lovelier flower on earth was never sown.

This child I to myself will take,

She shall be mine, and I will make

A lady of my own".

When we go through Kalidas as Shakuntala we find the same lovely girl child the nature's daughter Shakuntala :-

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्पास्वपीतेषु या

नादत्ते प्रियमण्डनाडपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।।

आद्ये वः कुसु मप्रसूतिसमये यस्याः भवत्युत्सवः

सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वेरनुज्ञायताम्।।

शाकुन्तल 4/9

"Nature" as a part of humanity is common both in Kalidas as well as in Wordsworth.

"Come forth into the light of things/Let nature be your teacher" No reader of Wordsworth's poetry would stop himself by commenting on the poet's love for nature. "Nature and its connection to humanity makes an appearance to in the vast majority of Wordsworth's poetry for Wordsworth nature is a kind of religion in which he has the utmost faith. Nature fills two major rules in Wordsworth's poetry.

Even though it is intensely beautiful and peaceful, nature often causes Wordsworth to feel melancholy of sad. This is usually because, even as he relishes, in his connection with nature, he worries about the rest of humanity.

For humanity Wordsworth is worried about the growing materialism in the world today. He thinks that people are busy only in "getting and spending". This the fact that we are now very far from the nature own mother. Nature the most important source of our living is ignored and we are wasting our lives here and there and not looking at the nature. We do not have time to look at our mother i.e. Nature.

"The world is too much with us, late and soon,

Getting and spending, we lay waste our powers.

Little we see in Nature that is ours,

We have given our hearts away, a sordid born"!

In what a beautiful way Wordsworth describes the importance of nature. He looks at the world, that the people have been outwardly rich but in worldly they are poor because they have lost their soul. The soul lies in the nature. This philosophy of internal development of life on earth" makes Wordsworth international poet. He is not thinking about only his own countrymen but about whole world. This "universality" brings him closer to Kalidas in thoughts. Kalidas the great poet thinks the same about humanity.

Kalidas also thinks that the whole world should be happy and none would be sad. The real happiness lies in the nature.

In AbhigyanShakuntal he says in the beginning.

या सृष्टिः सुष्टुराद्यावहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री,

ये द्धे कालं विधत्तः श्रुतिविणयगुणा या स्थिताष्याप्यविश्वम्।।

* Professor (English) Govt. Sanskrit College, Ujjain (M.P.) INDIA

यायाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिम्ः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिखतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।
अभिशाकुत्तल 1 / 1

अर्थात् परमेश्वर भी कही अन्यत्र नहीं है। संसार में प्रकृति में दिखाई पड़ने वाली महिमामयी अष्टविभूतियाँ ही भगवान की आठ प्रत्यक्ष मूर्तियाँ है।

The same feeling for nature can be seen in Wordsworth's "Tin teen Abeey"

"In nature and the language of sense, The anchor of my purest thoughts the nurse the guide, the guardian of my heart and soul of all my moral being".

This is the relationship between nature and human being. Nature is our god, our guide and our nurse but we have forgotten it. The need of the time is to go back to nature for the welfare of the humanity.

All things bright and beautiful are made by the god. This philosophy is common between Wordsworth and Kalidas.

Kalidas Wordsworth tied to focus the attention of the common people towards the nature. In an indirect way they both tried to poet towards the problems like pollution and earthquake and unseen diseases which the people on the earth are going to face because we are going away and away for the nature. We are disrespecting nature by not respecting the small creatures living on the earth. We are becoming unsuccessful in conserving our forests and the water resources. This is going to pushes to the third world war. The third world war will be as it is depicted is going to be on the water crises in the world.

In the poem, "Tables turned" William Wordsworth says.

"One impulse from a vernal wood,
May teach you make of a man,
Of moral evil and of good, than all the sages can.
Enough of Science and of art,
Closeup these barren leaves,
Came forth, and bring with you a heart that watches and receives.

The language of the Wordsworth is simple get a great effect on the readers. He brings his soul in the poems a great affinity with nature. He also illustrated the heading power of nature on the spirit of man.

"My heart leaps rp whined behold
A rainbow in the sky,
So was it when my life began,
So is it now I am a man
So be it when I small grow old,
Or let me die.
The child is the father of man,
And I could wish my days to be
Bound each to each by natural poetry.
Nature is the god the guardian.

We stood together, and that I so long. A worshipper of nature, helter came.

In nature and the language of the sense, then anchor of my purest thoughts, the nurse.

The guide the guardian of my heart and of all my moral being soul".

The message is given by Kalidas as Kalidas also a "worshipper of nature".

When Dushyanta enters Rishikava's Ashram for hunting Vaikhanas (Kanva's discipline) says,

राजन् ! आश्रमभृगोदयं न हन्तव्यो नहन्तव्यः।
आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रस्तुमनामासि।।

This means that in the Ashram of a saint, the king should take the permission before doing any action and the creatures of the forest are the responsibilities of the king. The king should take care of the animals because all the animals depend on the king. This philosophy of protecting the jungles and the animals living in it shows the love of the poet towards nature.

In Raghuvansha Maharaj Raghu asks Kotsa rishi about the green trees which are brought up by the rishi's like sons and which give shed to the travelers.

आधारबन्धप्रमुखैः प्रयत्नैः संवर्धितानां सतुनिर्विशेषम्।

In the last Bharatvakya of Shakuntalam the poet says marich says to the king

भवतु तव बिडौजाः प्राज्यवृष्टिः प्रजासु।

The king says प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः सरस्वती श्रुतिमहती पहीयताम्।

So the poet prays from every one to be happy and the king to be busy in the welfare of the people.

This message of the welfare of the society is the basic quality which brings great poet Kalidas and William Wordsworth on the same level where the welfare of the humanity is their priority in life.

References :-

1. The Sanskrit Drama in its origin, development theory and practice by A berried able kerth D.C.T. D.LITT, oxford university press 1954. Three years she grew in sun and shower (William Wordsworth) English language and aspects of development (M.P. of Hindi granta Academy 2010. Sri Sraddha offset printers Bhopal.
2. AbhigyanShakuntal (Kalidas granthawali p.no.50
3. Wordsworth's poetical works. Themes by William Wordsworth http//www.gradesawer. com study guide.
4. English language and aspects of development MP Hindi growth academy p.no.41 (Edition 2010)
5. Kalidas granthawali
6. Nature poem by William Wordsworth http//pausalso blogs w.es/
7. Ibid
8. Ibid
9. Kalidas granthawali pandi Shri Raniteg Shashtri Choukhamba Surbharti Prakashan Varanasi Edition 2012 AbhigyanShakuntal Drathamoankah p. 349
10. Ibid p.no.39 रघुवंश पंचमसर्ग।
11. Ibid अभिरफशाडंतक पेज नं. 470 (सप्तम अंक)

Nostalgia In Modern Literature

Dr. Uma Pandya *

Abstract - This paper traces the term derived from the Greek word Nostos, its medical implications covering the pathological process. Further the trends of modernist literature encompassing the city consciousness man turning away from teleological thinking, a reaction against the dominance of rational, logical, patriarchal discourse. America hunter as VS Naipaul in particular along with general modern writers of Ireland, amerce, India, have been dealt with their special contribution to Nostalgia and Experimental Nostalgia have been focused upon to understand the roots in the writings. How much and how far the post modern world has to do with this term is the question of the hour. The very urge to look back today is for authenticity and affective possibilities for new moral epistemologies.
Key words – Homeric, Teleological, Wanvess, Nostos, Indo Nostalgia, Epistemologies.

Introduction - Nostalgia – 'Nostalgia' is a term derived from the ancient Greek word nostos, meaning return or homecoming. Nostalgia is a sentimentality for the past, typically for a period or place with happy personal associations. It means home coming in Greek and pain and ache in a Homeric word algos. The resulting emotion can vary from happiness to sorrow. It is believed that is was claimed by a 17th century Johannes Hofer medical student to describe the anxieties displayed by Swiss mercenaries fighting far away from home. Swiss nostalgia was linked to the singing of Kuhreichen, which were forbidden to Swiss mercenaries because the led to nostalgia to the point of desertion, illness or death. It is described as a medical condition – a form of melancholy.

It can refer to a general interest in the past, especially the good old days from one's earlier life. The scientific seat of nostalgia is amygdale, (the emotional seat of the brain). The recollections of one's past are usually important events, people one cares about, places where one has spent memorable moments. Physically the music, smell, weather, touch are strong triggers of nostalgia. Nostalgia is replete with a belief that the past was better than the present.

English homesickness is a loan translation of nostalgia. Sir Joseph Banks used the word in his journal during the first voyage of captain cook.

In 1782 Robert Hamilton (1749-1830) described a case of soldier suffering from nostalgia. In North of England in the barracks he received lately joined recruits symptoms in the sick list as melancholy hung over his countenance, warrness prayed on his cheeks, He complained of weakness but no fixed pain, giddiness in his head. He became indolent and meager.

By 1850, nostalgia was losing its status as a particular disease and was considered as a symptoms or stage of pathological process. It was considered as a form of melancholia, however nostalgia was diagnosed among soldiers as late as American civil war. By 1870s nostalgia as a medical category vanished. In the 1st and 2nd world war it was recognized still as a nostalgia especially by the American.

Literary modernism or modernist literature has its origin in the late 19th and early 20th centuries. The main characteristics of modernism is self-consciousness. They looked at life in a new form a new way. Highly individualistic and experimental was the form of writing. The sense of changing world was stimulated by radical new developments as

(a) New insights into psychology and sociology
(b) Growing critique of British imperialism and the ideology of British empire.

Most importantly the escalation of warfare to a global level. The emergence of city consciousness, new information technology, advent of man democracy and man communication were some features of the new sense of reality with a shadow of nostalgic feeling. A focus on the unconscious as an important way of motivation.

Man turned way from teleological way of thinking about time to a sense of time as discontinuous, overlapping, non chronological way of experience, shift of linear time to moment time. A reaction against the dominance of rational, logical, patriarchal discourse gave way to nostalgia in the creative writing.

Novelists from Africa, the Cassibean, Great Britain and the united states anociated with the late modernity have evoked vide spread. Nostalgia within the communities in which they write. John J. Su tries to characterize memory as positive and nostalgia as negative. He argues that nostalgic fantasies are crucial to the ethical visions presented in the

*Asst. Professor (English) R.S.Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) INDIA

novels of novelists ranging from V. S. Naipaul to Toni Morrison. John J. Su identifies nostalgia as a central concern in the twentieth century novel and less concern in poetry non fiction, Drama and films of today.

The psychic life of power of Judith Butler provided scope to TM butler to give an account of accumulated experiences of love and loss that are key to the formation of character Authors like Virangana Woolf, Eva Hoffman, Clarice Lispector wield the experimental nostalgia rather than reverting the politicized nostalgia cultural inheritances are move obvious than the psychic economics characters suffering from nostalgia struggle to represent the psychic maneuvers associated with loss of something beloved.

It is found that these dynamics are in adequaltity represent able in language. The inheritable experiences of loss by initiating and sustaining a melancholic agency have to be handled with great care and concern. One has to recodify language unsettle the reader to experience the radical alterity of another's psyche. One has to develop affective possibilities for new moral epistemologies spoken through the fragmented languages employed in nostalgia.

Particularly when we consider V. S. Napaul's writings, we find this works are a sensitive response to the world wide crises of homeliness – taking into account the causes and cousequences of the situation colonia education to some extent alternated men from their our culture and traditions. They talked about nostalgic sensibilities and feelings articulating a pain for the loss of secure Howe for behind. And of course; that home where one belongs and simply where one lives. Its ones identity national cultural, spiritual Home is a place we remain intimate with throughout our lives even in moments of alienation. In the fast rapidly changing world the bleak knowledge of yearning for permanence could be nothing more than the ache for being far away home.

VS Naipaul's major themes are related to problems of colonized people : their sense of alienation, their identity crisis, their displacement, their homelessness all lead to a nostalgic existence of the individual. His novels especially A Bend in the River exhibit the crisis of unbelongingness. VS Naipaul himself was a victim of double Diaspora as his Grandfather came to Trinidad from India. He studied in England and Settled there and hence the blood which is moving in his veins belong to India, while he lived in another country and settled in the third country. Nouds half a life its sequel and the magic seeds are best examples of Notalgic sensibilities. The fragmented culture, the fragmented belongingness, the fragmented self are to some extent the seedlings of nostalgic feelings in his characters.

Coming to the nostalgic tint in the Indian English writing; which to us is somewhat the indo nostalgic writing a thing of realization, of perception, a direct access to Indian midnd. It is an alien sensibility and moreover a fictional technique to project the image of India and the awareness of this Indian identity.

Myth is considered to be a special characterstic technique of Indo-nostalgia. Myth today has become the cliché of the literary critics as they are ethical philosophical, religions and cultured and are a part and parcel of Indian literature. The culture and its rich heritage is obvious in the indo nostalgic portrayal the portrayal of real India. Many novelists like Geeta Mehta, Vikram Seth, Shashi Tharoor. Amitav Ghosh share the common experience as the reader because the cultural units in India are aliened on the thematic levels. Indian English writers are nourished by the nostalgia seasoned in Indian geography, Indian style of life, culture, habits, language, clothes, hobbies, and above all Indian consciousness.

If we consider the post modern world I suppose and believe that the literature has got less to do with nostalgia and more to do with irony. It does not mean that the writers are un nostalgic totally. It could depend today on the irrecoverable nature of the past for its emotional impact and appeal. It should be considered as the pastness of the past. There are many ways to look backward. You look back assess, reject and move forward and liger longingly. Susan Stewart's provocative study, 'On Longing' calls nostalgia a social disease, defining it as "the repetition that mourns the in authenticity of all repetition." Nostalgia today in our century is considered as the positive response to the homelessness and exile.

The politics of nostalgia are not only national or gender politics. Today our contemporary culture is certainly nostalgic. Nostalgia itself should be both exploited and ironized. The very urge to look back for authenticity and move forward to a fruitful future. As it is very well said by the ascetics, yogis of India that one should live in the present breathe present discarding the past and not worrying for the future. Literature is a tool to carry forward this attitude for the betterment of the life of mankind, irrespective of the caste, greed, religion, geographical locations.

References :-

1. www.cabridge.org
2. www.shmoop.com
3. www.quistia.com
4. V.S.Naipaul A house for M.Bisevas
5. www.ukessays.com
6. www.researchscholor.co.in

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Partition - Impact On Human Values

Dr. Vikas Jaoolkar * Tanuja Sharma **

Abstract - People lost faith in one another giving place to hatred and malevolence. They had to take refuge on the other side where their co-religionist live. It appeared as if goodness had been eclipsed altogether and there was rule of evil and wickednes.

Though human values were hit hard on the anvil of communal fury yet there is no denying the fact that goodness still survived giving place to hope and optimism. Even after so much bloodshed, arson, rapes, abductions and lootings good emerged like the mythical bird phoenix from its ashes and showed a ray of hope. Even after large scale bloodshed and a sense of insecurity the Muslims and the under the guidance of Hindus gave a show of amity and brotherhood -
Key Words - Partition, Nation, Faith, Hope, Religion.

Introduction - The partition of India, was really a turbulent and traumatic period in the history of the sub-continent when the worst passions were aroused in the name of religion. Freedom, the long cherished dream of Indian masses, turned into a bloody nightmare. It rudely shocked the conscience of the civilized people all the world over and dismay at shudder with anguish and dismay at man's wolfish cruelty to man in the name of religion. It rudely shocked the conscience of the civilized people all the world over and made them shudder with anguish and dismay at man's wolfish cruelty to man in the name of religion. It was a period when all young and old, children & women, the Hindus and the Muslims fell prey to communal insanity. The crimes against mankind were so ghastly people lost faith in one another giving place to hatred and malevolence.

A split in the amicable relationship appeared. People were forced to flee from their houses. They had to take refuge on the other side where their co-religionist lived. It appeared as if goodness had been eclipsed altogether and there was rule of evil and wickedness. The unbearable existential trauma is emotionally reflected through various short stories.

Communal Fury & Humanity - Human values were hit hard on the anvil of communal fury yet there is no denying the fact that goodness still survived giving place to hope and optimism. Even after so much bloodshed, arson, rapes, abductions & lootings good emerged like the mythical bird phoenix from its ashes and showed a ray of hope. We can't hope for an ideal world of Shakes pearean comedies and we cannot escape from the worldly realities. We have to face them with courage. The earth, despite many evils and sorrows, seems a good and suitable place to live.

Depiction of Sorrow - Even after large scale bloodshed & a sense of insecurity the Muslims & the Hindus gave show of amity & brotherhood. The people who agitated for the partition with violence and who did not feel hesitate to massacre their fellow human beings are today the most troubled. The leader of 'Mohajirs' says that partition was the biggest mistake in history. Even the man who worked to achieve Pakistan, Mohammad Ali Jinnah, saw in his last moments that the partition of India was a tragedy. The short stories vividly reveal one of the darkest eras in the history of the sub-continent there are also many which reveal the best in man. Despite the terrible consequences of the partition they confirm that human values can never die. The history of the partition are full of trauma and pain suffered by the victims of the partition yet their final impression is not one of nihilism or pessimism. The stories do not lead to despair. Rather they affirm our faith in life. Individuals may die but life, endures it continues.

Agony of Survivor's - There are many whose dear ones died but life, for them, continued. Despire sorrows and the worst kind of traumas the victims craved for life. They wanted to forget every sorrow & pain. They had a longing for winning the war against heavy odds.

The life force in human beings causes them to carry on. Life carves out its course among the graves also. On the one hand there were piles of dead bodies everywhere, on the other mothers were giving birth to babies. The process of life and death was going on side by side. In this worst of human tragedies there were also instances of extreme human goodness, of Individuals who cared for humanity, for human values, irrespective of the fact whether those they helped were Hindus or Muslims.

Saviors Emerge Phoenix – Like - The partition period witnessed the worst kind of loss of human values. As soon as the partition was deader people belonging to both the religions started killing one another. But this was also the period that displayed the courage of humanity. There were many who "risked their own lives to save others". People were busy dragging out their 'enemies' from their houses,

*Professor & Head (English) Govt. Hamidia P.G.. College, Bhopal (M.P.) INDIA
**Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

on the other there were also those who despite the protests and threats from their own men saved 'others' from the danger.

Mixed Expressions - The Muslims protected the Hindu and the Sikh refugees and vice-versa often risking their own lives, Not only this, also opened the doors of their hearts and homes to those who were uprooted from their homes. They not only gave shelter to the threatened individuals but also protected them from the out side danger. One of the most famous affirmations of the heroic in human nature is Khushwant Singh's portrayal of Jugga's self sacrificing thwarting of attack on the refugee train in the classic novel, Train to Pakistan. He sacrifices his own life to save the life of those refugees who were heading towardsPakistan in a Train. It is jugga who foils the nefarious plan of some miscreants to kill those Muslim refugees.

Clearing Of the Fog- Communal frenzy poisoned peoples mind so much that they started looking at each other with hatred ill will. Evil possessed the people of both the religions and the faith in one another that had cemented their bonds of love for centuries was shaken.Even those kind souls who could never think of doing harm to their neighbours were misguided and swayed by the virulent slogans and speeches against each other.Once the masses were blinded in the name of religion they forgot to differentiate between good and evil.The partition is declared a chasm appears between two families dividing them physically as well as emotionally.The new situation pollutes both the families.Their visit to each others houses virtually come to an end.

Conclusion - The Partition violence and hatred created a gulf between those who had lived together happily sharing one another's joys as well as sorrows. Despite their religious difference they lived amicably celebrating one another's festivals. But partition created a huge gap between them. The new situation pollutes whole atmosphere.Muslim Sikh and Hindu community fell prey to both inter – community and intra- community violence during the partition.the riot victim women are hit twice by patriarchy : firstly by the male members of the 'other' community which invokes compulsions of ritual purity to exclude them from the ritually pure domains of hearth and marriage , and drinking water, not to talk of the violence inflicted by lustful callous men of their own communities.

References :-

1. K.K. Sharma, "The 1947 Upheaval & India English Novel" in Exploration in modern Indo-English' Fiction, ed. R.K. Dhawan (New Delhi : Bahri Publication, 1982), P. 30.
2. Mushirul Hasan, "Memories of a Fragmented Nation" in the Partition in Retrospect ed. Amrik Singh (New Delhi : Anamika Publisher, 2000), P. 346.
3. Philips Talbot, "Thus independence came to India", Hindu, 4th and 24th August 1997.
4. K.F. Rustamji, "Two Nation Theory Fails : The Triumh of Secularion". The Tribune, Dec. 2, 2000. P. 12
5. Khushwant Singh, Train to Pakistan (New Delhi : Time Book International, 1981), P. 181

****

Need for Value Based Politics in India

V.M. Audichya *

Introduction - An ideal politician should possess qualities like patriotism, honesty, integrity of character, self-sacrifice, sincerity etc. As a public servant he must be champion of the poor and downtrodden. Unfortunately most of the politicians today are devoid of these characteristics. Their purpose is not to serve the country and its people. They have turned into hard core professionals who loot the hard earned public money to fill their own coffers. Like snarling stray dogs on the streets, they could be seen fighting for a piece of bone. Their sole aim is to obtain power by adopting foul means and dirty tricks. For this political power, they do not hesitate to establish unholy nexus with like-minded fellow politicians,always hungry bureaucrats, mafias, selfish businessmen and TRP hungry media houses.

Entering politics has become a very lucrative job which is sufficient to feed many generations and gives one special status and respectful position in the society. Use of muscle power and a lot of money has become a common practice. To secure power these politicians even restore to defection and horse-trading. Within no time loyalties and parties are changed to serve their vested interests. There are numberless cases related to scams, misappropriation of funds, frauds, serious crimes including murders, rape, kidnapping in which many a politicians are shamelessly involved. Shredding every fabric of morality and ethics, the definition of corruption has been modified by them. Unfortunately unless the court verdict is announced against such tainted politicians, they are considered innocent even after being jailed for some period and continue to enjoy power and privileges associated with their posts.

When we talk about the ethics in terms of our politicians, it will be sheer foolishness on our part to expect high standards from them in now-a-days dirty politics. There was time when our late Prime Minister Lal Bhadur Shastri, AK Antony, Nitesh Kumar,current CM of Bihar and many other leaders used to resign from their posts owing whole responsibility of different issues for which they were not directly responsible. Now even if a criminal case is registered, no pressure works. A politician turns deaf ears to the strong demands of resignation. He only resigns when court intervenes in the matter.

Shunning all values they indulge in booth capturing and rigging during elections, to grab power. Hard core criminals and their unruly supporters help them in winning the election by threatening voters either to vote for them or to suffer the drastic consequences. A leader in power is supposed to frame developmental policies and implement them for the betterment of the masses who voted him to power but in place of doing so he becomes corrupt and is often found involved in illegal,immoral and corrupt practices. This is the main reason why our country is not making rapid progress as it should have been.

Governments at the centre and opposition parties are busy in accusing each other. Every one claims to be the champion of common man, down trodden, minorities but no one actually cares for them.These people who hail from different sections of society are merely vote bank for the blood sucker leaders. The irresponsible behavior of elected representatives of people in the both houses of parliament adversely affects the daily proceedings. Unruly scenes are often created to disrupt the working of parliament.A huge amount of public money is wasted without any work done. Important bills are deliberately not allowed to be passed in order to settle political scores. For example GST bill which is so important for boosting the economy of the country, has been stalled and land acquisition bill is not passed by opposition in Rajya Sabha only because the credit may not go to the present centre government. Opposition parties are bent upon disrupting the proceedings of the parliament to prove the centre government's utter failure in every respect. Even in the matters of national security,these irresponsible opposition leaders do not spare the government. On our prime minister Narender Modi's recent sudden, unannounced, brief visit to Pakistan to break the ice in cold relations, terrorists' attack on Pathankot airbase, Gurudaspur's terrorist attack, opposition parties raised a lot of hue and cry to put the government in great embarrassment. Recently two former cabinet ministers of previous centre government made derogatory remarks against PM of India and speaking on a Pakistani TV Channel during live interview made controversial statements seeking help from enemy country to topple the present government at centre in India claiming that only then relationship between the two countries will be normalized.

Recently anti-India slogans raised at Jawaharlal University, Delhi by a section of misguided students, then

* Asst. Prof. (English) Govt. College, Dhana, Distt. Sagar (M.P.) INDIA

similar protest rally by some separatist students at Jadhavpur University at Kolkata has raised alarm throughout the country. Unfortunately instead of supporting the strict steps taken by the police, many prominent leaders reached university premises to support those students who were actively involved in anti-national activities. In beef controversy at Mujaffarnagar in which a Muslim misguided youth was murdered by unruly mob and suicide committed by Rohit Bemula, a dalit student in Hyderabad University many opposition leaders went there to extend their support.

Hardik Patel's violent agitation seeking reservation for prosperous Patel community of Gujarat, similarly Jaat agitation for reservation in Rajasthan and other various sensitive incidents throughout the country receive backing from leaders of different political parties to nurture their dirty motives and evil designs. These violent agitations also result in great loss to national property and economy. The progress of the country is also badly hampered.

All the above mentioned examples clearly reveal how leaders leave no opportunity to pull the legs of the ruling party to polish their politics, without caring for the seriousness and sensitivity of the situation. They only tarnish country's image and become laughable stock at international level. People's faith in the political leaders has been lost completely. Voters have become indifferent in casting their votes during elections. They have to make a choice between two black sheep. Latest provision of 'NOTA' in electronic ballet unit by Election Commission is not going to serve any purpose. The situation has become so grave that everyone seems frustrated, unhappy and finds no one who can improve things. This may lead to whole democratic setup in being paralyzed.

This whole political theatre is only one side of the coin; in fact people too are responsible to great extent for making politicians corrupts and immoral. They force them to get their work done at any cost. People have double standards. On one hand they curse corrupt politicians, on the other, they seek help from the same corrupt leaders to get their selfish motives fulfilled. It has become a fashion to abuse all political leaders now a days. All leaders are not corrupt. There are still a few political leaders who are honest, dedicated. Our hope lies with these noble leaders who serve people selflessly and are ready to sacrifice their life for the welfare of the country.

It is high time laws related to the strict code of conduct must be implemented. Transparency in the working of the people's representatives must also be ensured. Responsible opposition and the media can play a very significant role in exposing the corrupt politicians, bureaucrats, criminals. Public awareness can prove to be an eye opener for spoilt politicians. Minimum education qualification of graduation must be made compulsory for candidates contesting parliamentary and legislative elections. Leaders with tainted background must be strictly prohibited from taking part in active politics to clean the holy temples of Democracy. Effective election reforms must be enforced by Election Commission of India. Judiciary has always been playing very important role in keeping our democracy intact. It will have to continue to do so in the wide interest of public and the country, only then democratic system of the Government will be safe and people will have ideal leaders to serve this great nation in future.

References :-

1. Times of India,newspaper
2. Dainik Bhaskar.com
3. www.google.com
4. Self research.

****

भारत रत्न अटल बिहारी वाजपेयी का रचनात्मक संसार

डॉ. अनसूया अग्रवाल *

प्रस्तावना –

आओ फिर से दिया जलाएँ
भरी दूपहरी में अंधियारा
सूरज परछाई से हारा
अंतरम का नेह निचोडे
बुझी हुई बाती सुलगाएँ
आओ फिर से दिया जलाएँ।
हम पड़ाव को समझे मंजिल
लक्ष्य हुआ ऑखों से ओझल
वर्तमान के मोहताज में
आने वाला कल न भुलाएँ
आओ फिर से दिया जलाएँ।
आहूति बाकी यज्ञ अधूरा
अपनो के विघ्नों ने घेरा
अंतिम जय का वज्र बनाने
नव दधिचि हड्डियॉ गलाएँ
आओ फिर से दिया जलाएँ।

भयंकर अंधकार को जगभगाती रोशनी में तब्दील करने का हौसला रखने वाले माननीय श्री अटल बिहारी बाजपेयी को हम कैसे भूल सकते हैं! अटल यानि दृढ़संकल्पित,जो अपने पथ से विचलित न हो।

ऐसे महान आदर्श का नाम ही उनकी संस्कृति को परिभाषित कर रहा है। श्री बाजपेयी का जन्म 25 दिसम्बर 1924 को ग्वालियर में हुआ। आपके पिता पं0 कृष्णबिहारी बाजपेयी एक स्कूल शिक्षक होने के साथ–साथ एक कवि भी थे। आपके दादा पं0 श्यामलाल बाजपेयी संस्कृत के जाने माने विद्वान थे। यही गुण श्री बाजपेयी को उनके परिवार द्वारा विरासत में मिली। उनकी कविता 'जीवन बीत चला' के कुछ अंश –

कल कल करते आज
हाथ से निकले सारे
भूत भविष्य की चिन्ता
वर्तमान की बाजी हारे।
पहरा कोई काम न आया
रसघट रीत चला
जीवन बीत चला।
हानि लाभ के पलड़ों में
तुलता जीवन व्यापार हो गया
मोल लगा बिकने वाले का
बिना बिका बेकार हो गया।
मुझे हाट में छोड़ अकेला
एक एक कर मीत चला
जीवन बीत चला।

'अटल जी' के नाम से प्रसिद्ध जी बाजपेयी की प्रारंभिक शिक्षा सरस्वती शिशु मंदिर गोरखी ग्वालियर में हुई। उसके बाद उन्होंने विक्टोरिया कॉलेज ग्वालियर से अपनी स्नातक की परीक्षा पूर्ण की। वर्तमान में इस कॉलेज का नाम बदलकर लक्ष्मीबाई विक्टोरिया कॉलेज हो गया है। उसके बाद राजनीति शास्त्र में स्नात्तकोत्तर की शिक्षा प्राप्त करनें के लिए श्री वाजपेयी कानपुर चले गए जहॉ पर उन्होंने दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज से एम0 ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

श्री बाजपेयी अपने प्रारंभिक जीवन में ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़ गए थे। 1942 में उन्होंने कांग्रेस का दामन थाम लिया। इसी साल '**भारत छोड़ो आंदोलन** 'के तहत उन्हें जेल की भी यात्रा तय करनी पड़ी। उनकी राष्ट्रवादी पंक्तियॉ थी –

'आजादी का दिन मना, नई गुलामी बीच
सूखी धरती, सूना अंबर, मन–आंगन में कीच।।'

उनकी प्रतिभा को देखते हुए राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ ने उन्हें लखनऊ से प्रकाशित राष्ट्रधर्म पत्रिका का संपादक बना दिया। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ ने अपना मुखपत्र पांचजन्य शुरू किया जिसका पहला संपादक श्री बाजपेयी जी को बनाया गया और फिर सिलसिला शुरू हुआ।

संपादन के क्षेत्र में उनकी प्रतिभा का। बाद में वे वाराणसी से प्रकाशित 'चेतना' लखनऊ से प्रकाशित 'दैनिक स्वदेश' और दिल्ली से प्रकाशित 'वीर अर्जुन' के संपादक भी रहे।

ये निर्विवाद सत्य है कि अटल नैतिकता का पर्याय है। उनकी इंसानियत कवि मन की कायल है। नैतिकता को सर्वोपरि मानने वाले अटलजी कहते हैं कि –

'छोटे मन से कोई बड़ा नहीं होता
टूटे मन से कोई खड़ा नहीं होता
मन हार कर मैदान नहीं जीते जाते
न मैदान जीतने से मन ही जीता जाता है।'

अपनी क्षमता, बौद्धिक कुशलता व सफल वक्ता की छवि के कारण श्री बाजपेयी जी श्यामाप्रसाद जी के निजी सचिव बन गए।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से परिपूर्ण सत्यम्–शिवम् सुन्दरम् के पक्षधर अटलजी का सक्रिय राजनीति में पदापर्ण 1955 में हुआ था जब उन्होंने पहली बार लोकसभा चुनाव लड़ा। उस समय वे विजयलक्ष्मी पंडित द्वारा खाली की गई लखनऊ लोकसभा सीट से उपचुनाव हार गए।

आज भी श्री बाजपेयी का चुनाव क्षेत्र लखनऊ ही है। 1957 में बलरामपुर सीट से चुनाव जीतकर श्री बाजपेयी लोकसभा में गये लेकिन 1962 में वे कांग्रेस की सुभद्रा जोशी से चुनाव हार गए। 1967 में उन्होंने फिर इस सीट पर कब्जा कर लिया।

1971 में ग्वालियर, 1977 और 1980 में नईदिल्ली, 1991, 1996 तथा 1998 में लखनऊ सीट से विजय प्राप्त की। आप दो बार राज्य सभा के

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाप्रभु वल्लभाचार्य स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय, महासमुन्द (छ. ग.) भारत

सदस्य भी रहें। 1968 से 1973 तक आप जनसंघ के अध्यक्ष रहे। 1977 में जनता पार्टी के विभाजन के बाद भारतीय जनता पार्टी की स्थापना हुई, जिसके आप संस्थापक सदस्यों में से एक हैं।

श्री बाजपेयी राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार के पहले प्रधानमंत्री थे जिन्होंने गैर कांग्रेसी पद के 5 साल बिना किसी समस्या के पूरे किए।

उन्होंने 24 दलों के गठबंधन से सरकार बनाई थी जिसमें 81 मंत्री थे। कभी किसी दल ने आनाकानी नहीं की। इससे उनकी नेतृत्व क्षमता का पता चलता है। वर्तमान युग में भगवद्गीता की पंक्तियों का अनुसरण करके चल रहे हैं–'कर्मण्यवाधिकारस्ते मॉ फलेषु कदाचन:।'

उनके राजनीतिक काल में कई उतार–चढ़ाव आए जिसके कारण उन्होंने दो अनुभूतियॉ महसूस की जिसे उन्होंने शब्दों की माला में कविता के रूप में पिरोया है। उनकी पहली अनुभूति थी– 'गीत नहीं गाता हूॅ।' पंक्तियॉ कुछ इस तरह थी –

बेनकाब चेहरे हैं
दाग बड़े गहरे हैं
टूटता तिलिस्म आज सच से भय खाता हूॅ
गीत नहीं गाता हूॅ।
पीठ में छुरी सा चॉद
राहु गया रेखा फांद
मुक्ति के क्षणों में बार बार बंध जाता हूॅ
गीत नहीं गाता हूॅ।

उनकी दूसरी अनुभूति का नाम था– 'गीत नया गाता हूॅ।' उसके कुछ अंश इस प्रकार है–

टूटे हुए तारों में फूटे बांसती स्वर
पत्थर की छाती पर उग आया अंकुर
झरे सब पीले पात
कोयल की कुहुक रात
प्राची में अरूणिम की रेख देख पाता हूॅ
गीत नया गााता हूॅ।
रार नहीं ठानूंगा
काल के कपाल पर लिखता मिटाता हूॅ
गीत नया गाता हूॅ।

सादा जीवन उच्च विचार वाले अटल जी अपनी सत्यनिष्ठा एवं नैतिकता की वजह से अपने विरोधियों में भी अत्यंत लोकप्रिय रहे हैं।

1992 में आपको 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया। इसी साल उन्हें 'हिन्दी गौरव'के सम्मान से भी सम्मानित किया गया। 1994 में आप 'श्रेष्ठ सांसद' के रूप में 'गोविन्द वल्लभ पंत' और 'लोकमान्य तिलक' पुरस्कारों से सम्मानित किये गए। 1998 में आपको 'सबसे ईमानदार व्यक्ति' का खिताब मिला।

आपातकाल के बाद मोरारजी देसाई जब प्रधानमन्त्री बने तो उन्होंने आपको अपने मंत्रिमंडल में विदेशमंत्री बनाया। विदेशमंत्री पद पर रहते हुए आपने पड़ोसी देशों खासकर पाकिस्तान के साथ मधुर संबंध बनाने की पहल कर सबको चौंका दिया।

संयुक्त राष्ट्र महासभा में आपने अपनी मातृभाषा 'हिन्दी' में भाषण देकर एक नया इतिहास रचा। अपनी कविता के माध्यम से वे कहते है –

गूंजी हिन्दी विश्व में
स्वप्न हुआ साकार
राष्ट्रसंघ के मंच से
हिन्दी का जयकार।
हिन्दी का जयकार
हिन्द हिन्दी में बोला।
देख स्वभाषा प्रेम,
विश्व अचरज से डोला।

परमाणु शक्ति संपन्न देशों की संभावित नाराजगी से विचलित हुए बिना उन्होंने 'अग्नि दो' और परमाणु परीक्षण कर देश की सुरक्षा के लिए साहसी कदम भी उठाये। सन् 1998 में राजस्थान के पोखरण में भारत का द्वितीय परमाणु परीक्षण किया गया जिसे अमेरिका की सी0आई0ए0 को भनक तक नहीं लगने दी।

उन्होंने अपना जीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के रूप में आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प लेकर प्रारंभ किया और उस संकल्प को पूरी निष्ठा से आज तक निभाया।

श्री बाजपेयी एक प्रखर नेता होने के साथ साथ एक कुशल कवि एवं लेखक भी हैं।

आपने अनेक पुस्तकें लिखीं हैं जिनमें उनके लोकसभा के भाषणों का संग्रह– 'अमर बलिदान' 'कैदी कविराय की कुण्डलियॉ', 'न्यू डाइमेन्शन ऑफ इण्डियन फॉरेन पॉलिसी', 'फोर डिकेट्स इन पार्लियामेन्ट' आदि प्रमुख है। आपका काव्य संग्रह 'मेरी इंक्यावन कविताऍ' जग प्रसिद्ध हैं।

विनम्र, कुशाग्र बुद्धि एवं अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न श्री बाजपेयी 19 मार्च 1998 को संसदीय लोकतन्त्र के सर्वोच्च पद पर प्रधानमन्त्री के रूप में दुबारा आसीन हुए थे। लगभग 22 माह पहले भी वे इस पद को सुशोभित कर चुके थे लेकिन अल्प बहुमत होने के कारण उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा था।

सन् 2004 में आम लोकसभा चुनाव में भाजपा–राजग गठबंधन पराजित हुए जिसके अटल बिहारी नेता थे। इसके तुरंत बाद श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने अपने प्रधानमन्त्री पद से त्याग दे दिया और अब वह भूतपूर्व प्रधानमंत्रियों की श्रेणी में आ गये हैं। श्री बाजपेयी के अच्छे कार्यों के कारण पाकिस्तान तक में उनको लोग याद करते हैं यहॉ तक कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति तक ने उनके पुन: सत्तासीन न होने पर दु:ख व्यक्त किया।

हम बहुत गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं कि आजादी के बाद की भारतीय राजनीति के अनमोल रत्न श्री अटल बिहारी बाजपेयी को राष्ट्रपति प्रणवमुखर्जी ने देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान **'भारत रत्न'** से अलंकृत किया। 91 वर्षीय अटलजी गंभीर रूप से बीमार हैं इसलिए राष्ट्रपति ने प्रोटोकॉल तोड़कर दिल्ली के कृष्ण मेनन मार्ग स्थित उनके निवास पर जाकर उन्हें यह सम्मान सौंपा।

अटलजी देश के 44 वी हस्ती हैं जिन्हें **'भारत रत्न'** दिया गया है उनसे पहले पूर्व प्रधानमंत्री स्व0 पं0 जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी व राजीव गांधी को भी इस सम्मान से नवाजा जा चुका है।

अटलजी नेहरू युगीर संसदीय गरिमा के स्तंभ हैं। आज अटलजी करोड़ों लोगों के लिए विश्वसनीयता तथा सहिष्णुता के प्रतीक हैं। जननायक अटलजी का उदार मन आज की 'गला काट संस्कृति' से परे सदैव यही कामना करता है कि–

मेरे प्रभु
मुझे कभी इतनी ऊॅचाई मत देना
गैरों को गले ना लगा सकूॅ

इतनी रूखाई कभी मत देना।

अपने प्रेरणादायी शब्दों से जनता को हौसला देनेवाले, आत्मीयता की भावना से ओत–प्रोत, विज्ञान की भी जय–जयकार करनेवाले, लोकतन्त्र के सहज प्रहरी, राजनीति के मसीहा अटलजी को ईश्वर स्वस्थ दीर्घायु प्रदान करें; यही हम परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

अंत में उनके भाव विभोर और जोश से भरपूर संदेश को अपने जीवन में आत्मसात करने का हम संकल्प करते हैं।

बाधाएँ आती है आएँ
घिरे प्रलय की घोर घटाएँ
पॉवों के नीचे अंगारे
सिर पर बरसें यदि ज्वालाएँ
निज हाथों में हॅसते –हॅसते
आग लगाकर जलना होगा
कदम मिलाकर चलना होगा

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

चुटकुला विधा और ध्रुवस्वामिनी नाटक में निहित हास्य'व्यंग्य

डॉ. इला द्विवेदी *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य में हास्य–व्यंग्य की परम्परा बहुत पुरानी है। साहित्य के प्राय: सभी रूपों में यह विद्यमान है। आधुनिक काल में गद्य की समस्त विधाओं में यह प्रवृत्ति प्रचुरता से देखने को मिलती है। उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, संस्मरण, यात्रावृत्त, यहाँ तक कि ललित निबन्ध में तो विशेष रूप से इसका रंग काफी गहरा है। चुटकुला विधा जैसा हास्य और व्यंग्य इन विधाओं में पूरे वैविध्य के साथ अवतरित हुआ है।

इन विधाओं में निहित हास्य–व्यंग्य के अंशों को हम चुटकुला तो नहीं कह सकते, पर चुटकुलों सरीखा का प्रभाव उनमें अवश्य मौजूद है। उद्देश्य की दृष्टि से भी दोनों में समानता है। सम्भवत: ऐसे ही प्रसंगों द्वारा धीरे–धीरे चुटकुलों ने एक स्वतंत्र विधा का रूप धारण किया होगा। चुटकुला अपने आप में एक छोटी सी, किन्तु एक स्वतंत्र विधा है। अन्य गद्य विधाओं में निहित हास्य–व्यंग्य उसकी एक झलक मात्र हैं, परन्तु उद्देश्य की दृष्टि से दोनों बिल्कुल समान है।

सामान्यत: चुटकुला विशुद्ध हास्य से प्रेरित होकर मनोरंजन की दृष्टि से रचा गया छोटा सा गद्यविधान है, पर इसमें भी वर्तमान समय की विद्रूपताओं पर हँसी मजाक के माध्यम से तीव्र प्रहार किया जाता है। वस्तुत: शुद्ध मनोरंजन के लिए की जाने वाली इसकी सर्जना के पीछे समाज के कल्याण की भावना ही कार्य करती है। कई बार उद्देश्य यह न होने पर भी स्वत: ही यह महत् उद्देश्य पूरा हो जाता है।

जयशंकर प्रसाद के 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में चुटकुलों जैसे हास्य–व्यंग्य की बौछार नाटक के बीच–बीच में एक ओर मनोरंजन के उद्देश्य को पूरा करती है वहीं तत्कालीन परिस्थितियों पर तीखा प्रहार भी करती है। वास्तव में ऐसे प्रसंग न केवल कथा को आगे बढ़ाते हैं वरन् जनमानस का समुचित मार्गदर्शन भी करते हैं। इनके हास्य के पीछे छिपे हुए व्यंग्य पर यदि गौर किया जाये तो यह मात्र हास्य ही नहीं अपितु लोक कल्याण की निर्मल धारा भी अपने अन्दर समेटे होते हैं। इन पर गहन चिन्तन करने पर बहुत गहरे अर्थ निकलकर आते हैं और यदि उन्हें समझकर, उनमें निहित विचारों का अनुसरण किया जाये तो समाज में एक स्वस्थ वातावरण बनना आश्चर्य की बात नहीं होगी। इसके अतिरिक्त नाटक में इनकी उपस्थिति उसमें चल रही गहन–गम्भीरता को कुछ समय के लिए समाप्त कर हँसने–हँसाने के अवसर प्रदान करती है। सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से ऐसे विशुद्ध हास्य की उपयोगिता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इस दृष्टि से भी चुटकुलों का सा आनन्द में कुछ प्रतीकात्मक पात्रों के माध्यम से 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में हमें देखने को मिलता है। इस सम्बन्ध में उक्त नाटक के कुछ प्रसंग दर्शनीय है–

नाटक का प्रारम्भ युद्ध शिविर के वर्णन से होता है। ध्रुवस्वामिनी के पास प्रतिहारी रामगुप्त को एक आवश्यक संवाद देने के लिए आती है। वहाँ रामगुप्त को न पाकर वह ध्रुवस्वामिनी से रामगुप्त के बारे में पूछती है कि वे कहा हैं? इस पर ध्रुवस्वामिनी व्यंग्य के साथ हास्यमिश्रित उत्तर देती है–

'प्रतिहारी– (प्रवेश करके घबराहट से) भट्टारक इधर आये हैं क्या?

ध्रुवस्वामिनी– (व्यंग्य से मुस्कराते हुए) मेरे आँचल में तो छिपे नहीं हैं, देखो किसी कुंज में ढूँढो।

प्रतिहारी– (सम्भ्रम से) अरे महादेवी क्षमा कीजिए। युद्ध सम्बन्धी एक आवश्यक संवाद देने के लिए महाराज को खोजती हुई में इधर आ गई हूँ।'(1)

इसके पश्चात् जब प्रतिहारी को भट्टारक मिल जाते हैं और वह उन्हें युद्ध सम्बन्धी समाचार देती है तो रामगुप्त का उत्तर किसी चुटकुले से कम नहीं होता। उससे हास्य तो निर्मित होता ही है, कायरता से परिपूर्ण उसकी चारित्रिक विशेषता भी उजागर हो जाती है। अवलोकनीय है वह अंश–

'प्रतिहारी–जय हो देव! एक चिन्ताजनक समाचार निवेदन करने के लिए अमात्य ने मुझे भेजा है।

रामगुप्त– (झुँझलाकर) चिन्ता करते–करते देखता हूँ कि मुझे मर ही जाना पड़ेगा। ठहरो (खडगधारिणी से) हाँ, जी, तुमने अपना काम तो अच्छा किया किन्तु मैं समझ न सका कि चन्द्र गुप्त को वह अब भी प्यार करती है या नहीं?

रामगुप्त– (प्रतिहारी की ओर क्रोध से देखता हुआ) तुमसे मैंने कह दिया न कि अभी मुझे अवकाश नहीं, ठहर कर आना।

प्रतिहारी– राजाधिराज! शकों ने किसी पहाड़ी राह से उतरकर नीचे का गिरिपथ रोक लिया है। हम लोगों के शिविर का सम्बन्ध राजपथ से छूट गया है। शकों ने दोनों ओर से हमें घेर लिया है।

रामगुप्त– दोनों ओर से घिरा रहने में शिविर और भी सुरक्षित है। मूर्ख। चुप रह। (खडगधारिणी से) तो ध्रुवदेवी क्या मन ही मन चन्द्रगुप्त को– है न मेरा सन्देह ठीक?'(2)

इसके पश्चात् जब शकराज रामगुप्त के पास एक सन्धि प्रस्ताव भेजता है, जिसमें वह युद्ध के बदले ध्रुवस्वामिनी की माँग करता है। तब इस शर्त को मान लेने के लिए रामगुप्त शिखरस्वामी से मंत्रणा करता है कि ऐसी चाल चली जाये जिससे सारे शत्रु एक ही साथ परास्त हो जायें। वह कायर है। षड़यन्त्र करता है। युद्ध का प्रस्ताव स्वीकार करके पत्नी ध्रुवस्वामिनी की रक्षा के लिए तो उद्यत होता नहीं वरन् उसे शकशिविर में अपने शत्रु के पास भेजने का निश्चय कर लेता है। इस पर नाटक के प्रतीकात्मक पात्रों कुबड़ा, बौना, हिजड़ा इत्यादि द्वारा प्रसाद जी ने हास्य–व्यंग्य की सृष्टि की है और एक कायर और विलासी राजा तथा उसके कुशासन की पोल खोली है। इस समय का चित्रण दृष्टव्य है–

कुबड़ा– युद्ध! भयानक युद्ध।

बौना– हो रहा है कि कहीं होगा मित्र!

हिजड़ा– बहनों! यहीं युद्ध करके दिखाओ न, महादेवी भी देखें।

बौना– (कुबड़े से! सुनता है रे! सुनता है रे! तू अपना हिमाचल इधर कर दे–मैं दिग्विजय करने के लिए कुबेर पर चढ़ाई करूँगा।

हिजड़ा– अरे! यह तो मैं हूँ नलकूबर की वधू! दिग्विजयी वीर! क्या तुम

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

स्त्री से युद्ध करोगे? लौट जाओ, कल आना। मेरे श्वसुर और आर्यपुत्र दोनों ही उर्वशी और रम्भा के अभिसार से अभी नहीं आये- कुछ आज ही तो युद्ध करने का शुभ मुहूर्त नहीं है।

हिजड़ा- (उसी तरह भटकते हुए) अरे मैं स्त्री हूँ- बहनों, कोई मुझसे ब्याह भले कर सकता है- लड़ाई- मैं क्या जानूँ?'(3)

इसके पश्चात् ध्रुवस्वामिनी को शकशिविर में भेजा जा रहा है- यह निर्णय सुनाने के लिए जब शिखरस्वामी ध्रुवस्वामिनी के पास आता है, उस समय भी यह प्रतीकात्मक पात्र रामगुप्त के सामने ही बनाबटी नाटक का प्रदर्शन करते हैं, पर कायर और षड़यंत्रकारी रामगुप्त पर उसका कोई असर नहीं होता। इससे सम्बन्धित नाटक का अंश दृष्टव्य है-

रामगुप्त- (हँसते हुए। वाह रे वामनवीर! यहाँ दिग्विजय का नाटक खेला जा रहा है क्या?

बौना- (अकड़कर) वामन के बलि-विजय की गाथा और तीन पगों की महिमा सभी लोग जानते हैं। मैं भी तीन लात में इसका कूबर सीधा कर सकता है।

कुबड़ा- लगा दे भाई बौने! फिर यह अचल हेमकूट बनना तो छूट जाये।

हिजड़ा- देखो जी! मैं नलकूबर की वधू इस पर बैठी हूँ।

बौना- झूठ! युद्ध के डर से पुरूष होकर भी स्त्री बन गया है।

हिजड़ा- मैं तो पहले ही कह चुकी कि मैं युद्ध नहीं जानती।

बौना- तुम नलकूबर की स्त्री हो न, तो अपनी विजय का उपहार समझकर मैं तुम्हारा हरण कर लूँगा। ठीक होगा न? कदाचित यह धर्म के विरूद्ध न होगा! (रामगुप्त ठठाकर हँसता है।)(4)

इसके पश्चात् जैसे ही ध्रुवस्वामिनी को शकशिविर में जाने सम्बन्धी आदेश दिया जाता है। उसके दुख का पारावार नहीं रहता। वह आत्महत्या करने को तत्पर हो उठती है। तभी चन्द्रगुप्त आकर उसे रोकता है और वे लोग राष्ट्र की रक्षा कैसे की जाये- इस पर विचार करते हैं। उनकी राष्ट्र-रक्षा-यज्ञ की बात को सुनकर रामगुप्त घबरा जाता है। उसे अपने प्राण संकट में दिखाई देने लगते हैं। वह राष्ट्र रक्षा के लिए किसी प्रकार भी अपने प्राण नहीं गँवा सकता। इसीलिए शकराज से युद्ध नहीं करना चाहता। तब उस समय चन्द्रगुप्त उससे कहता है कि तब आओ! हम लोग स्त्री बन जायें और बैठकर रोयें। यह प्रसंग अवलोकनीय है-

'रामगुप्त- (अपने हाथों को मसलते हुए) दुरभिसन्धि, छल, मेरे प्राण लेने का कौशल।

चन्द्रगुप्त- तब आओ हम लोग स्त्री बन जायें और बैठकर रोयें।

हिजड़ा- (प्रवेश करते हुए) कुमार, स्त्री बनना सहज नहीं है। कुछ दिनों तक मुझसे सीखना होगा। (सबका मुँह देखता है और शिखरस्वामी के मुँह पर हाथ फेरता है।) उहूँ, तुम नहीं बन सकते। तुम्हारे ऊपर बड़ा कठोर आवरण है। (कुमार के समीप जाकर) कुमार मैं शपथ खाकर कह सकती हूँ कि यदि मैं अपने हाथों से सजा दूँ तो आपको देखकर महादेवी का भ्रम हो जाये। (चन्द्रगुप्त उसका कान पकड़कर बाहर कर देता है।)

ध्रुवस्वामिनी- उसे छोड़ दो कुमार! यहाँ पर एक वही नपुंसक तो है नहीं। बहुतों में से किसको-किसको निकालोगे?(5)

इस प्रकार 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में निहित हास्य-व्यंग्य के अंशों में चुटकुलों का सा मनोरंजन भी है, पर साथ ही वस्तुस्थिति को समझने के लिए तीखा व्यंग्य भी है। यदि इन अंशों को नाटक से पृथक करके देखा जाये तो ये चुटकुलों का ही आभास देते हैं। वास्तव में चुटकुले प्रत्येक काल के लिए बहुत प्रासंगिक हैं। ऐसा साहित्य समाज का बहुविध कल्याण करने में पूर्णतया समर्थ होता है।

चुटकुला विधा में निहित हास्य, नाटकों के एक प्रकार कामदी (Comedy) से मिलता-जुलता है जो किसी को बिना कोई क्षति, पहुँचाये हास्य उत्पन्न करता है। इस सन्दर्भ में कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं- 'आधुनिक काल में वर्गसा ने कामदी के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये हैं। उसके अनुसार कामदी का हास्य मानव से सम्बन्धित है-

"The comic does not exist outside the place of what is strictly human"(6)

'मानव व्यवहार, मुद्रायें, चालढाल, जितने मशीनवत् होंगे, उतने ही हास्योत्पादक होंगे। इस प्रकार बर्गसा की दृष्टि में हास्य का कारण है मानव का मशीनवत् आचरण। उदाहरणार्थ जब विदूषक मशीनवत् चलता है, बोलता या हँसता है, तो हम हँसते हैं। कामदी के हास्य का ध्येय मनुष्य के दर्प का दमन करना है, उसका संशोधन कर उसका सुधार करना है, पर वह ऐसा करने के लिए किसी को क्षति नहीं पहुँचाती, केवल छींटे कसती है जिससे सहज आनन्द की प्राप्ति होती है।'(7)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, पृ0सं0 18
2. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, पृ0सं0 18
3. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, पृ0सं0 22
4. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, पृ0सं0 23
5. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी, पृ0सं0 30
6. Henri bergson, Laughter, P.No. 30
7. शान्तिस्वरूप गुप्त- सत्यदेव चौधरी, भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र का संक्षिप्त विवेचन, पृ0सं0 403

****

मानस में नारी चरित्र - सृष्टि

डॉ. अंजली सिंह *

प्रस्तावना – रसखान की पंक्ति से अपनी बात प्रारंभ करना चाहूँगी 'हिन्दुवान को वेद सम यवनहि प्रगट कुरान' मानस के संबंध में रसखान का कथन नि:संदेह बिल्कुल सही है। यूँ भी रामकथा नदी रुप है, जिसमे अक्षरों का समुदाय जल है, सुंदर अलंकार एवं छंद मत्स्य समूह, दीर्घ समास वक प्रवाह, संस्कृत तथा प्राकृत अलंकार पुलिन है, देशी भाषा दोनों उज्जवल तट है, कवियों के दुष्कर एवं सघन शब्द शिला तल है, 'अर्थ' बहुलता तरंगे हैं, सर्ग तीर्थ है। यह राम-कथा सरिता इस प्रकार शोभायमान है'। ग्रियर्सन ने इसे 'दी बाईबिल ऑफ हिन्दुज कहा तो विन्सेट स्मिथ ने मानस की प्रशंसा करते हुये इसे मध्यकाल के आश्चर्य काण्योयान का सबसे ऊँचा वृक्ष कहा है।

मानस एक कालजयी कृति है। जैसे-जैसे युगीन मान-मूल्य बदलते जा रहें है। वैसे-वैसे इसमें कवि के कथ्य की नयी-नयी अर्थ छवियॉ प्रकट होती जा रही है। बीसवीं शती में मानव मूल्यों में बदलाव आया है उसके आलोक में मानस-मंथन करते हुए मानस की पात्र-सृष्टि के कुछ नये निष्कर्ष प्रकट हो जाते है। मानस सचमुच एक चरित्र कोश है। इसमें चित्रित दो सौ से अधिक पात्रों में से यदि कुछ पात्र मुख्यधारा में हैं, तो कुछ संदर्भित। इन सबका परिचय प्राप्त कर लेने से जहॉ भारतीय निगमागम, धर्मशास्त्र, इतिहास आदि का निचोड़ प्राप्त होता है वहीं कुछ पात्रों के प्रति वर्तमान बुद्धिजीवी वर्ग असहमत भी हो गये है।

राम कवियों में तुलसी की नारी भावना विवाद एवं मतभेद का विषय रही है। कतिपय विद्धानों के अनुसार तुलसी ने नारी जाति को आदर और श्रद्धा की पात्री माना है। उनके काव्य में सत् चरित्रों का अंकन सुंदर हुआ है। डा0 रामकुमार वर्मा ने हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (पृष्ठ 494) में लिखा है 'तुलसी ने नारीजाति के लिए बहुत आदर भाव प्रकट किया है। पार्वती, अनुसूया, कौशल्या, सीता, ग्रामवधू आदि की चरित्र रेखा पवित्र और धर्म पूर्ण विचारों से निर्मित हुई है। कुछ आलोचकों का कहना है कि तुलसी ने नारी जाति की निंदा की और उन्हें ढोर गॅवार की कोटि में रखा परन्तु यदि मानस पर निष्पक्ष दृष्टि डाली जाये तो विदित होगा कि नारी के प्रति भर्त्सना के ऐसे प्रमाण उसी समय उपस्थित किये गये जबकि नारी ने धर्म विरोधी आचरण किये। डा0 शुक्ल ने तुलसी के नारी निंदा के प्रसंगों को अर्थवाद के अंतर्गत लाकर नारी निदां के दोष का परिहार करने का प्रयास किया। शुक्ल जी का मत है कि युग व्यापक विराग और तप की भावना के कारण तुलसी ने नारी के उस रुप का विरोध किया जो तप और निवृत्ति में बाधक है। किंतु माता प्रसाद गुप्त इसे स्वीकार नहीं करते वे लिखते हैं 'नारी चित्रण में तुलसी बेहद अनुदार हैं। यद्यपि उनकी इस अनुदारता का कारण अब तक रहस्य के गर्भ में छिपा हुआ है, पर नारी विषयक उनकी अनुदारता एक ऐसा तथ्य है जिसको अस्वीकृत नहीं किया जा सकता'। मिश्रबंधुओं ने भी तुलसी को नारी निदंक माना है उनके अनुसार तुलसी ने कौशल्या सीता के चरित्रों को इसलिए सुंदर और पवित्र बताया है। वे राम से संबंधित हैं। शेष नारियों को सहज, जड़, अपावन तथा स्वतंत्र होने के अयोग्य माना है।

नारी निंदा के संबंध में कतिपय विद्धानों का यह मानना भी है कि नारी निंदा का एक कारण उनका नारी संपर्क का अभाव है। मॉ की ममता व वात्सल्य से वंचित एवं पत्नी की फटकार से वैरागी हुए। अत: नारी के प्रति जो विराग भावना उनके अंतर में थी, समकालीन नारी की दयनीय दशा एवं साहित्य की परंपरा से प्रेरणा पाकर पनय उठी इस कथन में अर्धसत्य तो है, इसको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यथार्थ नारी की विषम अवस्था ने नारी के प्रति तुलसी के दृष्टिकोण में विमुखता तथा हीनता प्रस्तुत की होगी।

वास्तव में तुलसी की नारी भावना के सम्यक विश्लेषण के लिये उसका वर्गीकरण आवश्यक है। पहला इष्ट से संबंधित नारी का है। दूसरा नारी का आदर्श रुप है, इसके अंतर्गत कर्त्तव्य परायण चरित्रों के सत्रुप के विकास के अतिरिक्त नारी आदर्श की व्याख्या भी है। तीसरा रुप समाज में उपलब्ध नारी रुप का चित्रण है और चौथा संत मत के अनुसार नारी निंदा का है।

इष्ट से संबंधित नारी राम की माता कौशल्या तुलसी के आदर एवं पूज्य भाव की पात्री हैं बंदों कोसल्या दिसि प्राची। कीरति जासु सकल जग मॉची।। प्रगटेउ जहॅ रघुपति ससिचारु। बिस्व सुखद खल कमल तुसारु।। करुणा निधांन की अत्यंत प्रेम पात्री सीता की अनुकम्पा कवि की बुद्धि को अमलता प्रदान करती है।

जनकसुता जगजननि जानकी। अतिसय प्रिय करुणा निधान की ।। जाके जुग पद कमल मनावौ। जासु कृपा निर्मल मति पावौ।। कौशल्या सीता आदि का चरित्र अंकन पवित्र एवं सुदंर हुआ है, क्योंकि वे उनकी आराध्य की पत्नी और माता है। वस्तुत: गोस्वामी जी की आदर्श एवं सत्-नारी की कसौरी राम का संबंध और भक्ति है। सीता, कोशल्या की चरित्र रेखा आदर्शमयी है, पर ये सब इष्ट को प्रिय है तथा इष्ट से प्रेम और भक्ति करती है कोसत्यादि नारीप्रिय सब आचरन पुनीत। पति अनुकूल प्रेम दृढ हरिपद कमल विनीत।।

किन्तु वही कवि वन-गमन के समय कैकेयी को मन भरकर धिक्कारता है। नगरवासियों द्वारा भी कैकेयी को कुबुद्धि, कुटिल,कठोर, अभागी एवं रघुवंश बेनु बन आगी कहलाते है। लक्ष्मण जननी सुमित्रा के लक्ष्मण को विदा देते समय का कथन भी तुलसी के भक्त हृदय का ही प्रमाण देता है। पुत्रवती जुवती जग सोई। रघुपति भगतु जासु सुत होई।। नतुरु बॉझ भलि बादि बिआनी। रामविमुख सुत तें हितहानी।। यहॉ मॉ का हृदय भक्त के आगे नतमस्तक दिखाई देता है।

वन में पतिप्राणा पत्नी के रुप में सीता पति के साथ विपिन वास में भी स्वर्गिक सुख का अनुभव करती है। उनके गरिमामय नारीत्व के चरमविकास की महिमा तुलसी उन पर रामप्रिया और जगजननी की अलौकिकता का आरोप कर न्यून कर देते है। दशरथ के मरण काल में सुत वियोग के महान

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

दु:ख से पीड़ित कौशल्या सहिष्णुता एवं धीरज की प्रतीक बन कर : स्थिर बुद्धि विवेक व सहनशीलता का परिचय देती है। दूसरे स्थल पर वात्सल्यमयी कौशल्या भरत को भी राम के समान स्नेह पात्र मानती हैं परन्तु दोनों ही स्थितियों में तुलसी उनके चरित्र की महत्ता का वर्णन न करके उनके सत्कल्याण विधायक रुप का कारण राम की माता होना ही मानते है।

देखि सुभाउ कहत सब कोई। राममातु अस काहे ना होई।

हरिभक्तमय नर नारी राम को अत्यंत प्रिय है। अत: शबरी को भी सद्गति मिलती है। तुलसी रामभक्ति में संलग्न नरनारी को परमगति का अधिकारी मानते है।

नारी का सत् रुप एवं नारी आदर्श – तुलसी को पारिवारिक जीवन में नारी के कल्याण विधायक, ममतामय रुप का विकास करना अभीप्सित था। सीता, कौशल्या, पार्वती, सुमित्रा,अनसूया, मंदोदरी आदि के चरित्रों में आदर्श रुप प्रतिफलित हुआ है। जीवन की विश्रंखलताओं के बीच उन्होंने ऐसी नारी का अंकन किया जो गृह जीवन में त्याग ,ममता का संबल लेकर अग्रसर होती है अपने हृदय-रक्त से साधना और कर्त्तव्य का अभिषेक करती है। सीता आदर्श पत्नी हैं और साथ ही मर्यादाशीला कुलवधू भी है। सीता के रुप में तुलसी ने नारी के शास्त्रीय आदर्श का चित्रण किया है। इस संबंध में डॉ0 योगेश दुबे के विचार महत्वपूर्ण है। 'वाल्मिकी सत्य के पक्ष में नारी स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक हैं तो तुलसी को मर्यादा भंग की चिंता सताती रहती है। वन गमन के प्रश्न पर वाल्मिकी की सीता अपने समस्त आत्मबल के साथ अपना पक्ष रखती है किन्तु तुलसी की सीता आदर्श और मर्यादा के बंधन में बंधी दिख पड़ती है। वाल्मिकी नारी को दृढता पूर्वक अपनी पूरी बौद्धिक क्षमता के साथ अपनी बात कहने का अवसर दिये जाने के पक्ष में है, जबकि तुलसी मर्यादा भंग के भय से 'मौन की अभिव्यंजना' को ही श्रेष्ठ मानते है।
पत्नी धर्म की व्याख्या करते हुए तुलसी लिखते है।

एकै धर्म एक व्रत नेमा। काय वचन मन पति पद प्रेमा। इससे भी आगे बढ कर वे कहते है।

वृद्ध रोग बस जड़ धन हीना । अंध बधिर क्रोधी अति दीना ।
ऐसे हु पति कर किये अपमाना। नारि पाव जमपुर दु:ख माना।।

अपनी आदर्श समाज व्यवस्था में तुलसी परंपरागत स्त्री धर्म के समर्थक रहें है जिमि स्वतंत्र होई बिगरहिं नारी । स्त्री धर्म संबंधी उनकी वही मान्यता जो अनसूया ने सीता से उपदेश के रुप में कहा था (अरण्य दोहा 5) इसके साथ ही पुरुष की अपेक्षा निर्बल चरित्र मानकर बार-बार उपदेश भी देते है। सूर्पनखा प्रसंग में नारी की कमजोरियों की तरफ संकेत करते हुए उन्होंने लिखा है।

भ्राता पिता पुत्र उरगारी । पुरुष मनोहर निरखत नारी।

होइ बिकल सकि मनहि न रोकी। जिमि रवि मनि द्रव खहिं बिलोकी' यहां कवि ने स्त्री चरित्र की निर्बलता का अतिरंजित और कुछ अंश तक अमर्यादित चित्रण किया है। इस संबंध में डॉ0 उदयभानु सिंह ने लिखा है 'इसमें संदेह नहीं कि तुलसी ने पुरुष की सच्चरित्रता की अपेक्षा नारी की सच्चरित्रता पर अधिक बल दिया है। इसके दो कारण तब भी थे अब भी है। एक पुरुष का चरित्र-दोष उतना संक्रामक नहीं हैं जितना कि नारी का । दूसरा यह कि जिस गलती के कारण पुरुष का कुछ नहीं बिगड़ता उसी के कारण नारी पर कलंक का अमिट टीका लगा दिया जाता है। बिना अपराध के अग्नि परीक्षा के बाद भी सीता को धर्म धुरन्धर राम के हाथों निर्वासित होना पड़ा था' (तुलसी काव्य-भीमांसा पृ.341-42)

रावण का कथन 'नारि सुभाउ सत्य कवि कहहीं। अवगुन आठसदा उर रहही। जिन आठ अवगुणों की चर्चा तुलसी करतें हैं वे हैं- 'साहस, अन्तत चपलता, माया। भय, अविवेक, असौच ,अदाया'।
इसके अतिरिक्त तुलसी ने अनेक स्थलों पर अतिरंजित वर्णन किया है।

1. सती कीन्ह चह तहां दुराउ।देखउ नारि सुभाउ प्रभाउ।
2. अधम ने अधम जाति अति नारी। तिन महँ मैं मतिमंद गॅवारी।
3. विधिहुँ न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अध अवगुन खानी।
4. उत्तर देइ नहिं लेइ उसांसू। नारि चरित्र कर ढारइ ऑसू।

परंपरा और लोकरीति के अनुसार तुलसी ने भी नारी को कामिनी के रुप में देखा। तप और विराग में बाधक माया ही नारी है।

नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा।

काम, क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि। तिहं महँ अतिदारुन दु:खद मायारुपी नारि।

मानव के सद्गुण,बुद्धि,बल,शील,सत्य सब दुर्बल विवश मछली है, बंशी रुपी नारी में फॅस कर सब नष्ट हो जाते है। तुलसी निगमागम सम्मत धर्म को मान्यता देते हैं अत: नारी के प्रति शास्त्रकारों , स्मृतिकारों , साधको एवं नीतिकारों की कटुता और वैराग्य की भावना उनके काव्य में स्पष्ट हो उठी है। भक्ति की दृष्टि से तुलसी ने नारी को सर्वथा निंदनीय और व्याज्य माना है स्वयं उनके मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी नारी की निंदा करते नहीं थकते।

अवगुन मूल सूल प्रद प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जिय जानि।।

तुलसी की नारी भावना की यह विशेषता है कि स्वंय नारी भी अपनी जाति को तुच्छ,हीन, बताती हुई कहती है कि काने, खोरे, कूबरे वैसे ही कुटिल होते है उसमें यदि स्त्री हुई तो कुबुद्धि का योग अधिक होता है।

इस विवेचन के आधार पर नि:संदेह रुप से कहा जा सकता है कि तुलसी नारी के प्रति अपेक्षित उदारता का प्रदर्शन नहीं कर सकें है। अतएव बदलते हुए जीवन मूल्यो के परिप्रेक्ष्य में सही पात्रत्व की स्थापना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानस एक दृष्टि अनेक - डॉ0 रमेशचंद्र त्रिवेदी आशीष प्रकाशन कानपुर 2011
2. तुलसी सं.- उदयभानु सिंह, राधाकृष्ण मूल्यांकन माला सांतवॉ संस्करण 1998
3. तुलसी की साहित्य साधना - डॉ0 लल्लन राय, वाणी प्रकाशन 2012
4 रामचरित मानस में चरित्र-सृष्टि - डॉ0 योगेश दुबे ज्ञान प्रकाशन कानपुर 2008

****

प्रवासी साहित्यकार सुनीता जैन के उपन्यासों में नारी- एक अनुशीलन

डॉ. चन्दा तलेरा जैन * संध्या प्रजापति **

प्रस्तावना – प्र+वास में 'प्र' शब्द दूर के लिए, 'वास' रहना से है, प्रवास अपने निज स्थान से दूरस्थ स्थान में रहना से है। पी.एच.रोसी का मानना है- 'यदि कोई व्यक्ति किसी नए स्थान में जाने की इच्छा रखता है तो प्रवासी कहा जाता है'।[1]

वेद कथा के अनुसार-**'मनु'** सृष्टि के आदि पुरूष ही नहीं वरन् प्रवासी श्रंखला के प्रथम पुरूष है। इन्होंने पहले पहल मिश्र देश में निवास किया था।[2] उन्होंने वेदों के ज्ञान और अपने अनुभव से धर्म व संस्कृति की नींव रखी और साथ में समाज के निर्माण में, सभ्यता के विकास में भी अपना अभूतपूर्व योगदान दिया। इतिहास की दृष्टि से देखे तो लम्बे समय तक धर्म प्रचार एवं व्यापार हेतु प्रवास होता आया है। आधुनिक युग में संचार माध्यमों ने दूरी को सीमित कर सारे विश्व को एक दायरे में समेट लिया है। आज व्यक्ति बहुत सारे उद्देश्य की पूर्ति हेतु विदेशों में गमन कर रहे हैं। जब हम अपनी भूमि से दूर होते हैं, नई संस्कृति व विचारों का अनुभव होता है तो हमें हर्ष या पीड़ा होती है। हर्ष इस कारण से जो अनुभव कर रहे वो सब नया है, भिन्न है, पीड़ा इस कारण से हम अपने देश से दूर, अपनों से दूर हैं। मन की इस छटपटाहट से साहित्य का सर्जन होता है। इसी कारण जब कालिदास अपने मिट्टी से दूर हुए तो देश की मिट्टी की महक ने शकुन्तला, मेघदूत जैसे रचना लिखने को प्रेरित किया था। अनेक साहित्यकारों ने प्रवास के अनुभव को केन्द्र में रहकर साहित्य की सर्जना की है। उनमें से बहुमुखी प्रतिभा की धनी सुनीता जैन जी भी हैं। **नारी** शान्तिपर्व में पितामह युधिष्ठिर से कहते हैं कि 'संसार में स्त्री के समान कोई बन्धु नही है और स्त्री के समान धर्म संग्रह में सहायक भी दूसरा कोई नही है'।[3] वैदिक संस्कृति में ईश्वर का देवी स्वरूप नारी को माना गया, ऐसे विचार इस युग में थे। वैदिक युग में समाज व्यवस्था एवं विकास के लिए कुछ नियम और परम्पराएँ थी, जो सभी को मान्य थे। ये परंपराएँ धीरे-धीरे कुंठित होकर पैरों की बेड़ियाँ बन गई। नारी जहाँ पूज्य थी, आज वह 'वस्तु' बन कर रह गई है। कबीर ने नारी को सर्पिणी की संज्ञा दी, तो रीतिकाल में सौन्दर्य और उपभोग की वस्तु बन कर रही। आधुनिक काल में भी उनकी स्थिति में परिवर्तन न के बराबर हुआ है। अनेक महिला लेखिकाओं ने नारी पात्रों के माध्यम से समाज में इन परम्पराओं के विरूद्ध परिवर्तन लाने का प्रयास किया। नारी शिक्षित हो, उसे समाज में समानता औरअधिकार प्राप्त हो।इसके लिए इन लेखिकाओं ने अपने दायित्व बखूबी निभाया हैं।

सुनीता जी भी नारी पात्रों के द्धारा इन परम्पराओं और नियमों के विषय में अपने विचारों को सामने रखा है। इनका पहला उपन्यास 1964 में**बोज्यू** प्रकाशित हुआ था। बोज्यू दो विचारों का उपन्यास है। एक विचार मुक्ता का और दूसरा विचार बोज्यू का। पहाड़ी भाषा में बोज्यू 'भाभी' को कहा जाता है। बोज्यू भारतीय संस्कृति व मान्यताओं को मानती है। बोज्यू कहती है-'जो हमारी सभ्यता के प्रतिकूल है उसे दूसरी सभ्यता से उधार मांगकर चलना अकल्याणकारी नहीं तो और क्या है'।[4] मुक्ता स्वतंत्र विचारों की मिलनसार, खुशमिज़ाज लड़की है। वह पढ़ाई के साथ कविता में भी रूचि रखती है। वह रीति-रिवाजपरम्पराओं को बंधन मानती है, उसमें बदलाव होना जरूरी है।वह कहती है-'दद्दा इंजीनियर है और लड़की डॉक्टर। फिर भी जन्म कुण्ड़ली मिलानी आवश्यक है क्या?'[5] मुक्ता के जीवन में परिवर्तन चन्द्रमोहन के आगमन से होता है, चन्द्रमोहन बोज्यू का भाई है। 'गोल्डमेडलिस्ट' बहुत होनहार था। कहते हैं कि प्रेम जाति, धर्म, रीति-रिवाज कोई बंधन नहीं मानता, केवल प्रेम समर्पण चाहता है। दोनों विवाह के बंधन मे बंधना चाहते थे। बोज्यू का परिवार कट्टरपंथी ब्राह्मण और मुक्ता कायस्थ थी। बोज्यू इस रिश्ते को अस्वीकार करती है। मुक्ता चन्द्रमोहन से कहती है- 'जिन रीति-रिवाजों पर उनका विश्वास है, उनमें मेरा जीवन बँध नही सकता। उनको दु:ख पहुँचाना मेरा उद्देश्य कदापि नहीं'।[6] बोज्यू की नाराजगी से मुक्ता का मन बहुत आहत होता है, वह अपने विचारों को महत्व न देकर रीति-रिवाज को मानती है। परिवार व समाज के हित में रजत से विवाह करती है। एक सुबह अखबार में चन्द्रमोहन की तस्वीर को देखकर सोचती है कि मेरा फैसला सही था या गलत? नारी कितनी ही आधुनिक, शिक्षित क्यों न हो जाए, परन्तु स्वतंत्र निर्णय नहीं ले सकती है। रीति-रिवाज एवं समाज के हित में उसके विचार कही खो जाते हैं।

सुनीता जी का दूसरा उपन्यास **सफर के साथी** है। विक्टोरिया जहाज में सफर, सफर का प्राकृतिक सौन्दर्य, विभिन्न संस्कृति के लोग एवं उनका आत्मीय संबंध। हर दृश्यों को मानो उन्होंने फ्रेम में जड़ा हो, ऐसा सजीव वर्णन है। उपन्यास की नारी पात्र नीरजा, ज्योतिषी की भविष्यवाणी कि वह विदेश भ्रमण करेगी, तब सच हुआ जब उसका विवाह अमेरिका प्रवासी सुकान्त के साथ हुआ। दोनों में आपसी वैवाहिक प्रेम बहुत था। लेकिन जन्म के तुरन्त बाद बेटे की मौत ने नीरजा को दु:ख में डुबो दिया। इस दु:ख से उभरने के लिए अमेरिका से दिल्ली अपने मायके के लिए **विक्टोरिया जहाज** में सफर करती है। सफर का प्राकृतिक सौन्दर्य उसे सुकान्त के साथ बिताए दिनों की याद दिलाता रहता है। सफर के यात्रियों में से एक यात्री धीरज के मन में नीरजा का सौन्दर्य प्रेम जगाने लगा। दु:खों में डूबी, अकेलापन झेलने वाली नीरजा भी धीरे-धीरे धीरज की ओर आकर्षित होने लगी थी।

भारतीय संस्कृति में विवाह को पवित्र बन्धन माना गया है। रीति-रिवाज हमें एक मजबूत रिश्तों में बांधे रखते हैं। इस मर्यादा ने नीरजा को धीरज के प्रेम में समर्पण होने से रोक लिया। वह सोचती है-'सुकान्त तो सागर जैसे जीवन का सीमान्त था। सुकान्त के दोनों कगारों में वह बंधी थी।'[7] इस उपन्यास में नीरजा के लिए सुकान्त का वैवाहिक प्रेम सागर के समान है, तो धीरज का प्रेम वह शक्ति, साहस है जो सागर के थपेड़ों से सदैव बचाए रखता है। नीरजा कहती है- 'एक सफर में हम साथ थे, वह सफर आज समाप्त होता है, हमारा साथ भी, तुम्हारे कारण मेरे जीवन में वांछित मोड़ आ गया है, अन्यथा मैं भटके मुसाफिर सी हो गई थी।'[8]ये वाक्य सफर के अन्तिम समय में

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भाषा अध्ययन शाला) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

धीरज के लिए था।

सुनीता जैन का तीसरा उपन्यास **अनुगूंज** । यह प्रेम और विवाह के विचारों को लेकर है। प्रेम को तो सात्विक, पवित्र मानते हैं और विवाह को बन्धन। अनमेल विवाह सिर्फ समझौता होकर जीवन में त्रासदी लाता है। इस उपन्यास की नायिका छवि का जीवन ऐसा ही है। छवि का विचार है कि– 'जिससे प्रेम हो उससे विवाह मत करो नहीं तो प्रेम का सागर छिन्न–भिन्न हो जाता है।'[9] मणि की नजर में छवि अल्हड़, उल्लास से भरी हुई मथुरा की सबसे पापुलर लड़की थी। इसका सौन्दर्य सभी को आकर्षित करता था। मणि भी उसके सौन्दर्य में मोहित होकर प्रेम करने लगा था। छवि मणि का सात्विक प्रेम मन में संजोए हुए मदन के साथ परिणय सूत्र में बंधती है। मदन का यह अनमेल विवाह था, जिसके कारण छवि में उसकी कोई विशेष रूचि नहीं थी। हमेशा घर से बाहर क्लबों में शराब में डूबे रहना, यही उसकी दिनचर्या थी। छवि भौतिक सुख–सुविधा से सम्पन्न थी परन्तु मन की खुशी जीवन से कोसों दूर थी। छवि कहती है– 'फिर बंगला, किताब यह चुप्पी और मैं....।'[10]छवि का मन पुरूष के प्रेम के लिए तड़पता था, ऐसे में भारत का अपने प्रति प्रेम देखकर छवि किसी की परवाह न करते हुए उसके प्रति पूरी तरह से समर्पित हो जाती है। कुछ समय अन्तराल छवि को गर्भ कैंसर हो जाता है। पति की बेरूखी, मातृवहीनता, अकेलापन छवि के जीवन को बंजर बना देता है।यहि अनमेल विवाह का परिणाम होता है। हम जीवन के विषय में एक धारणा बना लेते हैं और उस पर ही अमल करते हैं। अनुगूंज अपने विचारों की आवाज है। विवाह जीवन का समझौता नहीं, नए जीवन का आरम्भ है। इसमें विनाश या निर्माण का मार्ग तय होता है। मदन को पश्चाताप की अनुभूति होती है और वह इलाज के लिए इंग्लैण्ड गई छवि के आने का इंतजार करता है.....।

सुनीता जी का उपन्यास **मरणातीत**। जिसमें विधवा विवाह को महत्व दिया गया है। मरण+अतीत, जो इस संसार से विरक्त हो गए वे अब अतीत बन चुके हैं, उसे भूल जाना ही उपयुक्त है। भारतीय संस्कृति में नारी कि लिए पति परमेश्वर होता है। उसका सम्मान पति से जुड़ा रहता है, पति के इस दुनिया में नहीं रहने पर विधवा के रूप में नारकीय जीवन व्यतीत करती है। पुन: विवाह के बारे में सोचना उसके लिए पाप है, अपराधबोध है। उपन्यास की नायिका गोमा आज विधवा का जीवनयापन कर रही है। उसका पति राज बहुत ही खुशमिजाज व महत्वाकांक्षी था। वह आज 'बस गोमा की स्मृति में है।'[11] यादों के सहारे जीवन व्यतीत हो नहीं सकता है इसलिए अपने और पुत्र के जीवनयापन हेतु नौकरी की, इसके अलावा यादों को समेटने के लिए साहित्य रचना में रूचि रखने लगी थी। गोमा के जीवन में परिवर्तन उस समय आता है जब अपने अप्रकाशित उपन्यास के समालोचन के लिए जगदीश के घर रीता से प्रथम मुलाकात होती है। 'रीता वर्मा की पत्नी नहीं है, पर पत्नी जैसी लगती है, पुरी तरह।'[12] रीता को रीति–रिवाज व समाज का कोई भय नहीं है। पति और बच्चों के होते हुए वह अपने पूर्व प्रेमी से वैवाहिक संबंध रखे हुए है। इतना खुला दृष्टिकोण, इतना स्वतंत्र विचार? और मैं पति की याद में अपने जीवन को होम कर रही हूँ। जगदीश का यह कहना 'तुम विवेकशील हो, समर्थ हो, सुन्दर हो। आखिर अपने आप को झुठलाती कैसे हो? संस्कार का बहाना बनाकर? रीति–रिवाज की दुहाई देकर।'[13] जगदीश का निश्छल प्रेम, आस्था, परवाह देखकर गोमा संकीर्ण मानसिकता से बाहर निकलकर जगदीश के साथ वैवाहिक बंधन में बंधती है और यथार्थ से अपना स्वयं परिचय करवाती है। विधवाओं को भी जीवन में खुश होने का अधिकार है, जीवन को होम करने में नहीं।

सुनीता जी का उपन्यास **बिन्दु**। समाज में परिवर्तन कितना भी हो जाए लेकिन नारी के प्रति दृष्टिकोण वैसा ही रहता है। वह स्वतंत्र नहीं है, आज भी उनके जीवन का निर्णय कोई और करता है, जो जीवन में दु:ख ही लाता है। उपन्यास की नायिका जीवन पर्यन्त उपेक्षा ही सहन करती है। जन्म के समय बड़े भाई की मौत से बिन्दु का बचपन माता–पिता के स्नेह से वंचित रहा।जबकि पिताजी शहर के डिस्ट्रिक्ट मैनेजर थे। समय बीतता रहा, ग्यारह वर्ष की उम्र में बिन्दु सोचती है 'जैसे लड़की होना कुछ शर्म आनी चाहिए जैसी भर्त्सना है।'[14] इसके बाबजूद जीवन के प्रति उल्लास व सकारात्मक दृष्टिकोण रखती थी। वह पढ़कर अपने जीवन का उद्देश्य तय करना चाहती थी, इसलिए पड़ोसी का बेटा कुमार का प्रेम उसे आँखों की किरकिरी लगता था। कविता उसकी प्रेरणा शक्ति थी। साहित्यकार शगुन से मुलाकात उसके जीवन में प्रेम लाया और प्रेम को पाने की ललक भी बढ़ने लगी। परन्तु माँ कहती है 'भांड है भांड। जलसों में गाता फिरता है उससे ब्याह करेगी तू? कोई सुनेगा तो क्या कहेगा।'[15] माँ बिन्दु का विवाह उसकी इच्छा के विरूद्ध आर्थिक रूप से सम्पन्न कृष्णकान्त से करती है। कृष्णकान्त के मन का संदेह बिन्दु के जीवन में जहर घोलने लगता है। प्रेम की आस यहाँ भी अधूरी.....। उसका बेटा अजय उसके जीने का एकमात्र सहारा था, लेकिन एक दिन कृष्णकांत बिन्दु की बीमारी का फायदा उठाकर अजय को हमेशा के लिए इंग्लैण्ड ले जाता है। नारी शक्ति, साहस, सहनशील का परिचायक होती है, परिस्थितियों का बहुत सहजता से सामना करती है। बिन्दु अमेरिका बुआ के यहाँ जाकर नए सिरे से जीवन आरम्भ करती है। आगे पढ़ाई कर कॉलेज की प्रोफेसर बनती है। इस तरह से अपने जीवन का उद्देश्य पूर्ण करती है। कृष्णकांत के गम्भीर रूप से बीमार होने पर ही भारत लौटती है। यही बिन्दु का जीवन चक्र है।

निष्कर्ष – सुनीता जी के उपन्यासों में विभिन्नता है। सरल और सहज भाषा में उन्होंने अपने मन की भावनाओं को व्यक्त किया है। इनके उपन्यासों की नायिकाएँ शांत और सरल चरित्र की हैं। **मरणातीत** की गोमा समाज में परिर्वतन के विषय में सोचती है और स्वयं अपने जीवन का निर्णय लेती है। अन्य नायिकाएँ समाज के निर्णय का विरोध नहीं करती हैं, वे परिस्थितियों का बहुत धैर्य व साहस से सामना करती हैं। वे पाठकों के सामने अंत में प्रश्न छोड़ती हैं। भारतीय संस्कृति में समाज के निर्माण व व्यक्ति के विकास के लिए कुछ नियम व परम्पराएँ हैं। इसको हम नष्ट नहीं कर सकते हैं, इसके अभाव में हम भटक सकते हैं, हमारा जीवन नीरस व एकाकी हो सकता है। परन्तु समाज के इन नियमों व परम्पराओं को समय के अनुरूप परिवर्तन करके अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर सकते हैं। यही सुनीता जी का दृष्टिकोण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समाज विज्ञान विश्वकोष पृ. क्रं. 388
2. प्रवासी भारतीयो की हिन्दी सेवा पृ. क्रं. 28
3. महाभारत में धर्म पृ. क्रं. 392
4. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 51
5. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 80
6. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 90
7. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 156
8. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 158
9. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 174
10. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 169
11. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 210
12. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 217
13. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 243
14. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 265
15. सुनीता जैन समग्र पृ. क्रं. 282

****

इक्कीसवीं सदी में राष्ट्रभाषा का योगदान

मंशाराम बघेल *

शोध सारांश – प्राप्त आंकडों के अनुसार दुनिया के पचास देशों में 160 विश्वविद्यालयों में हिन्दी की विधिवत् शिक्षा दी जाती हैं। कुल 110 हिन्दी के अध्ययन केन्द्रों में से 20 तो केवल अमेरिका में है। लेनिनग्राड के 50 विश्वविद्यालयों में 400 से अधिक छात्र-छात्राऍं हिन्दी का अध्ययन करते है। जर्मनी के 17 विश्वविद्यालयों में आज हिन्दी के स्वतंत्र विभाग है। एक करोड़ बीस लाख भारतीय मूल के लोग विश्व के 132 देशों में बिखरे हुए है,जिनमें से आधे से अधिक हिन्दी से मात्र परिचित ही नहीं, उसे प्रयोग में भी लाते है। ये भारतीय मूल के प्रवासी फिजी, मारीशस,सूरीनाम,त्रिनिनाद,गुयाना तथा दक्षिण अफ्रीका में बसे हुए हैं। ये भारतीय आपस में हिन्दी का ही प्रयोग करते है तथा हिन्दी को अपनी अस्मिता से जुडा हुआ मानते है।

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी में सम्पूर्ण विश्व एक छोटे से शहर में परिवर्तित हो जाएगा, ऐसा माना जा रहा है और ऐसा प्रतीत भी होता। यह एक प्रकार से सुखद भी है और प्रकारान्तर से दुखद भी। अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण से विकास का श्रेष्ठ मार्ग यही है किंतु भावनात्मकता,संप्रभुता एवं स्वतंत्र अस्मिता की दृष्टि से यह उतना शुभ नहीं है जितना विकासवादियों के द्वारा प्रचारित किया जा रहा है। विश्व की सभी संस्कृतियों का तालमेल होना सैद्धांतिक रूप से तो बहुत आकर्षक प्रतीत होता है किन्तु व्यवहारिकता से परे दिखाई देता है। कारण स्पष्ट है कि किसी भी स्वतंत्र और संम्प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र की अस्मिता व निजी पहचान के लिए उसके जीवन-मूल्य,भाषायी संस्कार एवं सांस्कृतिक विरासत उपजीव्य होती है। इन तत्वों की रक्षा हर हल में होनी ही चाहिए। भारत की सांस्कृतिक विरासत को सहेजे रखने में संस्कृत भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। संस्कृत की ही सुगम और विकसित शैली हिन्दी है। हिन्दी भारत के अस्तित्व का प्रतीक है। हरेक भाषा का एक सर्वोपरि, सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य होता हैं। उसका एक-एक शब्द अपने आप में संपूर्ण संग्रहालय है। जिसमें उस धरती की सहस्त्राब्दियों पुरानी स्मृतियों,अनुभव और व्यंजना समाहित रहती है। जब कोई अपनी भाषा छोड़ता है तो उसकी इन बहुमूल्य थातियों को भी अनिवार्य रूप से अलविदा देता है। हमें यह मानना पड़ेगा कि किसी भाषा के संस्कार और सांस्कृतिक मूल्य उसके साथ-साथ चलते है। बीते वर्षो में उदारीकरण और बाजारवाद ने हिन्दी पर जैसे हमले किए है उससे लगता है कि आने वाले कुछ वर्षो में हिन्दी अपने मूल स्वरूप को खो देगी और एक ऐसी विज्ञापनी भाषा हिन्दी का स्थान लेगी जो भारतीय लिबास में यूरोप की आत्मा होगी। इसका मूल कारण है कि भारत जैसे विश्व के शक्तिशाली लोकतंत्र में अभी तक राष्ट्रभाषा को संवैधानिक तौर पर नहीं अपनाया गया है। इसके विपरीत अंग्रेजी को महिमामण्डित करने की औपनिवेशिक मानसिकता दिनोंदिन विस्तार पाती जा रही हैं। अंग्रेजी को ज्ञान का पर्याय मानने वाले भारतीयों की अल्पज्ञता और गुलाम मानसिकता जग जाहिर है। अंग्रेजी का ज्ञान अभीष्ट हो सकता है,और प्रवर्तमान वैश्विक परिस्थितियों को देखते हुए अभीष्ट होना भी चाहिये। परंतु अंग्रेजी का ज्ञान किसी भी स्थिति में अनिवार्य नहीं हो सकता या अंग्रेजी कभी ज्ञान की पर्याय नहीं हो सकती। अभी कुछ वर्ष पूर्व संविधान की पुर्नसमीक्षा भी हुई किंतु यह राष्ट्रीय महत्व का प्रश्न फिर अनुतरित छोड दिया गया। वर्तमान परिस्थितियों में वर्षो से यक्ष प्रश्न की तरह खड़ा राष्ट्रभाषा का प्रश्न समाधान की अपेक्षा रखता है। स्वाधीनता के छ: दशको में भाषा को लेकर आज तक अनेक अटकल बाजियॉं,तरह-तरह के राजनैतिक दाव पेंच और झगडे फसाद देश भर में होते रहे। सच तो यह है कि भाषा जहॉं अखण्डता और एकता का माध्यम होना चाहिए थी, वही हमारी मानसिक संकीर्णताओं के चलते वह विखण्डन हेतु कई बार बनी। सरकारिया आयोग ने भी इस तथ्य को स्वीकारते हुए लिखा है-'भाषा का प्रश्न एक ऐसा महत्वपूर्ण मुद्दा है जिसने संघ और कुछ राज्यों के बीच काफी विवाद और कटुता पैदा की हैं।' केन्द्र सरकार और राज्य सरकारें अपनी-अपनी लोकप्रियता के लिए अनेक भाषा विरोधी कदम उठाती रही। फलत: समाज व राष्ट्र में कई बार अलगाव और विद्वेश का वातावरण निर्मित हुआ जिससे क्षेत्रीय भाषाओं का अन्तर्विरोध हिन्दी के साथ बढता गया और अंग्रेजी को इसका लाभ मिलता चला गया,तदानुसार अंग्रेजी के प्रवृति समर्थ नेतृत्व में बढी।

संविधान में भी भाषा संबंधी उपबंधों एवं अनुच्छेदों का प्रावधान किया गया है। समय-समय पर उनमें संशोधन-परिवर्तन भी किये गए किन्तु दुर्भाग्य से भारतीय स्वातंत्र्य के छ: दशकों में राष्ट्रभाषा व सम्पर्क भाषा का मामला बजाए सुलझने के उत्तरोत्तर उलझता ही गया। संविधान निर्माण के समय संघ की राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिए अधिकांश नेतृत्व पक्ष में था किंतु कुछ व्यक्तियों द्वारा विरोध किए जाने के कारण हिन्दी को अनुच्छेद 343 में शामिल किए गए एक मध्यमार्गीय सूत्र के अधीन देवनागरी लिपि वाली हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया और कहा गया कि अंको का रूप भारतीय अंको का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा। यह अनुमति दी गई कि 15 वर्ष की अवधि तक अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता रहेगा और उसके बाद भी, संसद विधि द्वारा अंग्रेजी भाषा के या अंको के देवनागरी रूप के प्रयोग का उपबंध किन्ही विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए कर सकेगी।

डॉ.शिवमंगलसिह सुमन के शब्दों में किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की पहचान के लिए तीन अवयवों की आवश्यकता होती है। उसका कोई झण्डा हो, कोई राष्ट्रगान हो और कोई राष्ट्रभाषा हो। हमने राष्ट्रीय झण्डा भी ग्रहण कर लिया और राष्ट्रगान भी ग्रहण कर लिया किंतु राष्ट्रभाषा का प्रश्न अभी तक अनुतरित बना हुआ है।जबकि होना यह चाहिए था कि स्वतंत्र गणतंत्र के

* शोधार्थी, शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

अस्तित्व के ये तीनों आयाम बिना किसी हिचक के एक साथ तय हो जाते। राष्ट्र की पहचान के लिए राष्ट्रभाषा का होना नितांत आवश्यक है। जिस प्रकार राष्ट्रध्वज के अभाव में राष्ट्रीय पहचान अधूरी रहती है ठीक उसी प्रकार राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा ही बना रहता है। राष्ट्रगान की भाषा भी हिन्दी ही है। जिस राष्ट्रगान को जन-जन द्वारा अनिवार्यत: गाया जाता है फिर उस भाषा(हिन्दी) का विरोध क्यों किया जाता हैं। यह सोचनीय विषय है।'भाषा किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की विशिष्ट पहचान होती है,राष्ट्र का इतिहास उसकी भावना,सभ्यता और संस्कृति उसकी राष्ट्रभाषा में ही ध्वनित होती है।' देश के लिए भले ही न हो किन्तु एक संप्रभुता संपन्न स्वतंत्र राष्ट्र को एक सूत्र में बॉध रखना ही राष्ट्रभाषा का विशिष्ट महत्व है। आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी के शब्दों में राष्ट्रभाषा के अभाव में सांस्कृतिक चेतना के अभाव में राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती।'

निष्कर्षत: उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि संविधान समीक्षा के संदर्भ में राष्ट्रभाषा के प्रश्न और भाषा संबंधी विवादों के समाधान के लिए संविधान में स्पष्ट प्रावधान कर हमेशा के लिए भाषा के नाम पर होने वाले प्रपंचों को विराम दे दिया जाए। वास्तव में यदि देखा जाए तो संविधान निर्माण से पूर्व ही स्वाधीनता आन्दोलन के लगभग सभी कर्णधारों द्वारा संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का ही प्रयोग किया गया। दक्षिणी राज्यों के नेताओं के द्वारा भी सर्वथा हिन्दी,को ही अपनाया गया था। तब एक मात्र लक्ष्य उन सभी के सम्मुख था स्वतंत्रता प्राप्त करना। वहॉ भाषा जैसे संवेदनशील और क्षेत्र-सापेक्ष विषयों पर सोचना भी पाप था। गॉधीजी ने विदेशी संस्कृति में अध्ययन किया और अंग्रेजी माध्यम से वकालत की किंतु उन्होंने कभी अंग्रेजी को अपने लिए शुभ नहीं माना। गॉधी जी सदैव हिन्दी के प्रयोग पर जोर देते रहे है। उनमें से कुछ निर्देशन देखे जा सकते है-हिन्दी ही हिन्दुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है यह बात निर्विवाद सिद्ध है,जिस स्थान को आजकल अंग्रेजी भाषा लेने का प्रयत्न कर रही है और जिसे लेना उसके लिए असभंव है वही स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए क्योंकि उस पर हिन्दी का पूर्ण अधिकार है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. शंकर शरण-अंग्रेजी के दबदबे से कराहता भारत(आलेख)-दैनिक भास्कर(ग्वालियर संस्करण)-10सितंबर 2014
2. केंद्र राज्य संबंध आयोग(सरकारिया आयोग) की रिपोर्ट-पृष्ठ 499
3. सुभाष कश्यप-हमारा संविधान-पृष्ठ 244
4. सुभाष कश्यप-हमारा संविधान-पृष्ठ 225
5. डॉ.कमलेश सिह -गगनाचंल(पत्रिका)-वर्ष 22,अंक 3,पृष्ठ 201
6. 'वीणा'(मासिक पत्रिका)-वर्ष 72,अंक 9,पृष्ठ 53
7. राजभाषा भारती -अंक 87,वर्ष 22,पृष्ठ 61

****

नील नीलधर श्याम

डॉ. नीलमणि दुबे *

शोध सारांश – मनुष्य की प्रकृति स्वमेव सौन्दर्य का विधान करती आ रही है। भावुक हृदय सौन्दर्य का अन्वेषक और उद्घाटक है। गौर एवं नीलवर्ण के सौन्दर्य के वर्णन में उपमा, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास के कोष के कोष उलट डाले गये। महाकवि गोस्वामी तुलसीदास का आराध्य के चरणों में न्यौछावर हृदय नीलकांति के सौंदर्य से कैसे अछूता रहता? 'काम कोटि छवि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा ।।' – के सौंदर्य पर वे कोटि–कोटिष: काम के सौंदर्य को लुटा सकते हैं। देवों में नीलाभ कामदेव सर्वाधिक सुंदर हैं। करोड़ों कामदेव की छवि श्रीराम की नीलकमल की सुकुमार–स्याम छवि के समक्ष लज्जित हो जाती है। श्रीराम 'नीलाम्बुजश्यामल कोमलाङ्गम्' हैं। ब्रह्म कौशिल्या की गोद में प्रेम और भक्तिवश साकार रूप धारण कर आये तो उनके स्वरूप में 'नील सरोरुह नीलमनि नील नीरधर स्याम' – इन तीन प्रकार की नीलिमाओं का अद्भुत सम्मिश्रण आल्हादकारी बन पड़ा। 'मरकत मृदुल कलेवर स्यामा' तो कभी 'काम कोटि छवि स्याम सरीरा' कहकर आराध्य की रूप–माधुरी पर तुलसी लुट जाते हैं। गीतावली में – 'स्याम बरन पदपीठ अरुन तल लसत बिसद नख श्रेनी' की अद्भुत उपमा 'जनु रविसुता सारदा सुरसरि मिलि चलि ललित त्रिवेनी' से देकर त्रिवेणी को प्रभु के चरणों में साकार प्रकट कर देते हैं। भागवतकार ने श्रीकृष्ण को नीलमणि कहा है।

प्रस्तावना – सौंदर्य अपरिमेय – अनुपमेय है, जो 'क्षण–क्षण यन्नवतामुपैति' के गुण–धर्म से युक्त है। एक चित्रकार चित्र बना रहा था; किन्तु जब तक वह आधार रूप सौन्दर्य का चित्र बनाता, सौन्दर्य कई गुना बढ़ जाता और चित्र फीका लगने लगता। वह हार गया। कई चित्रकार आए और चित्र बनाने बैठे; पर बना न सके। अन्तत: एक चतुर चित्रकार आया उसने रूप के समक्ष आदमकद दर्पण रखा और कहा कि इस रूप का यही सर्वोत्तम चित्र हो सकता है। बिहारी ने लिखा –

'लिखन बैठ जाकी सबी गहि–गहि गरब गरूर।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर।।'[1]

दुष्यन्त शकुन्तला का चित्र बनाकर अपने मित्र विदूषक को दिखा रहा था; किन्तु उसे बार–बार लग रहा था कि चित्र में वास्तविक रूप से कुछ कमी रह गयी है। अन्त में उसका ध्यान गया– 'कृतं न कर्णार्पित बन्धनं सखे।'[2] अरे मित्र! शकुन्तला के कानों में पहने गए कर्णाभूषण रूप शिरीष के उन पुष्पों का चित्रण तो मैंने किया ही नहीं जिनके केशर शकुन्तला के कपोल तक झुके हुए हैं। सौन्दर्यप्रेमी दुष्यंत को अपनी भूल का अहसास हो गया।

सौंदर्य–चित्रण में गोस्वामी जी अद्वितीय हैं। सीता के रूप के वर्णन में वे अनेक उपमायें लाते हैं और उन्हें खारिज कर देते हैं–

'सब उपमा कवि रहे जुठारी/केहि पर तरिय विदेह कुमारी।।'[3]

गौर और नील वर्ण का वर्ण साम्य का यह चमत्कार सूरदास जी ने भी वर्णित किया है– 'नील बसन फरिया कटि पहिरे, बेनी पीठ हिलत झकझोरी/ सूर श्याम देखत ही रीझे, नैन–नैन मिलि परी ठगोरी।।'[4]

जिस वर्ण–मैत्री पर परमेश्वर रीझ गया है, तो साधारण जन की बात ही क्या है? कवि–हृदय सहज सौंदर्य–प्रेमी और भावुक होता है। नीले वस्त्र के घूँघट में छिपी नायिका की मुख–छवि पर बिहारी बलिहारी हो गए–

'छिप्यो छबीलो मुख लसै, नीले अंचल चीर।
मनहुँ कलानिधि झलमलै, कालिन्दी के नीर।।'[5]

नीले वस्त्र के रेशमी घूँघट से झाँकता श्यामा का मुख ऐसा प्रतीत हो रहा था; जैसे यमुना के श्याम जल में कलानिधि चन्द्रमा झिलमिला रहा हो। सुजान–सौन्दर्य पर रीझे अतिशय भावुक घनानन्द ने तो नील–गौर वर्ण–मैत्री पर उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं के कोश लुटा दिए–

'नील घटा लिपटी थिर बीजु, कि सोहै अमावस अंक उज्यारी,
धूम–समूह में ज्वाल के माल–सी, पै दृग शीतलता सुखकारी।
कै छवि छायो सिंगार निहारि, सुजान तिया तन दीपति प्यारी,
कैसी फबी घन आनंद, चौंपनि सों पहिरी चुनि साँवरी सारी।'[6]

गौरवर्णीय सुजान ने जब चुनकर 'साँवरी सारी' पहनी तो इतनी फबी कि लगा आज नील–घटाओं में लिपट कर विद्युत स्थिर हो गयी है, अथवा अमावस्या के अंधकार के मध्य पूर्णिमा की चाँदनी सुशोभित हो रही है। धुऐं के समूह के मध्य ज्वाल–मालायें प्रकट हो गयीं हों, किन्तु दाहकता को छोड़ उन्होंने दृग को शीतलता देने का गुण ग्रहण कर लिया हो अथवा साक्षात् शृंगार ही अपनी छवि के साथ प्रकट होकर साकार हो गया है। सौन्दर्य–वर्णन की सादृश्य एवं विरोधाभासी पद्धतियों में विरोधाभासी पद्धति का सौंदर्य विलक्षणता से सहृदय को अभिभूत कर देता है। विरोधाभास द्वारा 'श्री जयशंकर प्रसाद' ने अद्भुत चमत्कार दिखलाया है–

'चंचला स्नान कर आवे, चन्द्रिकापर्व में जैसी
उस पावन तल की शोभा, आलोक मधुर थी ऐसी।।'[7]

नायिका के पावन तन की आलोकित, स्निग्ध मधुरिमा से युक्त हृदयहारी शीतल छवि ऐसी थी, जैसे चंचला अर्थात् बिजली पूर्णिमा की चाँदनी में स्नान कर आ गयी हो। क्या चाँदनी में बिजली का अस्तित्व संभव है? यही सौन्दर्य का चमत्कार और वर्ण–चारुता है। श्रद्धा का रूप अद्भुत है–

'नील परिधान बीच सुकुमार,
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघबन–बीच गुलाबी रंग।।'[8]

ये प्रयोग गहरायी तक अनेक अर्थों की अभिव्यक्ति के साथ प्रतिक्रियात्मक अनुभूति और उसके प्रभाव की अभिव्यंजना करते हैं।

गोस्वामी जी ने श्री राम के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिए अप्रस्तुत विधान की माला ही पिरो दी– श्रीराम नीलकमल एवं नीर धारण करने वाले मेघ की भाँति नील वर्ण हैं; जिनके सौदर्य के समक्ष शतकोटि कामदेव लज्जित

*प्राध्यापक (हिन्दी) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

हो जाते हैं। नीलवर्ण श्रीराम की उपमा गोस्वामी जी ने नीलकमल, नीलमणि और नीरयुक्त नील मेघ से दी है। कमल कोमल और सुगंधित है, मणि स्निग्धप्रभामय एवं दृढ़ है। मेघ सजल और शीतल हैं। ब्रह्म और सगुण साकार राम में ये सभी गुण हैं। कमल जल में, मणि थल में और मेघ आकाश में विद्यमान हैं। साकार ब्रह्म श्रीराम की सत्ता त्रिभुवन व्यापी है। कमल पाताल से, मणि मर्त्यलोक से और मेघ महाशून्य आकाश से संबंधित हैं। ब्रह्म की सर्वत्र उपस्थिति इन तीनों उपमानों से सिद्ध होती है।

कमल सतोगुणी विष्णु, मणि रजोगुणी ब्रह्मा और मेघ तमोगुणी शिव रूप हैं। ब्रह्म की शक्तियाँ ही विष्णु, ब्रह्मा और शिव की विभूति के रूप में प्रकट हैं। ब्रह्म की सर्वव्यापकता इन तीनों उपमानों से सहज ग्राह्य है। कमल से गहराई, मणि से दुर्लभता और मेघ से ऊँचाई का संज्ञान होता है। हर किसी व्यक्ति के वश की बात नहीं; कि वह गहराई में जा सके। निर्धन महार्घ मणि नहीं प्राप्त कर सकता। मेघ तक पहुँचना सबके वश की बात नहीं; किन्तु, यह ब्रह्म की सर्वसुलभता है; कि जो तैरना जानता हो ऐसे ज्ञानी, जिसके पास नाम रूपी धन हो, ऐसा भक्त ब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। यदि यह संभव न हो तो वह करुणाकर स्वयं अपनी अहैतुकी कृपा की वर्षा कर मेघ रूप में आँगन-आँगन में बरस जाता है। सर्व-सुलभ हो जाता है। कमल और मणि पदार्थ हैं, मेघ द्रव हैं। मेघ वर्षा करते समय गरीब-अमीर का विभेद नहीं करता। भगवान् में कमल की सुकुमारता और सौन्दर्य, मणि की कठोरता और दृढ़ता तथा मेघ का कारुण्य और सार्द्रता है। अत: गोस्वामी जी ने लिखा-

'नील सरोरुह नीलमनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि-कोटि शत काम।।'[9]

नीलकमल के मध्य नीलमणि को रखा जाए और उस पर नीलमेघ की छाया पड़े, इस नीलवर्ण पर करोड़ों कामदेव की छवियाँ प्रतिबिम्बित होने पर जो नीलाभा प्रकट हो; उस आभा से कहीं अधिक नील छविमयता श्रीराम के रूप में है, जिसे देख शतकोटि कामदेवों का सौन्दर्य फीका पड़ जाता है। इस सौन्दर्य की झलक पाने का अधिकारी वह है जिसने गुरु के चरण कमल के नख रूपी मणिगणों के स्मरण से दिव्य-दृष्टि प्राप्त कर ली हो-

'श्री गुरु पद नख मनिगन ज्योती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हित होती।।
सूझहिं रामचरित मनि मानिक के। गुपुत प्रकट जो जहँ जेहि खानिक।।'[10]

यह नील वर्ण सौन्दर्य अद्भुत है। जिसके साक्षात्कार के लिए दिव्य-दृष्टि आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिहारी सतसई, महाकवि बिहारी।
2. अभिज्ञान शाकुन्तलम्, कालिदास एवं शिरीष के फूल, कल्पलता, श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी।
3. श्री रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास।
4. सूरसागर - श्री सूरदास।
5. बिहारी सतसई, बिहारी।
6. घनानंद चयनिका, घनानंद।
7. आँसू, श्री जयशंकर प्रसाद।
8. कामायनी, श्री जयशंकर प्रसाद।
9. रामचरित मानस, गोस्वामी तुलसीदास।
10. रामचरित मानस, गोस्वामी तुलसीदास।

****

ग्रामीण समाज एवं संचार योजना

डॉ. वंदना अग्निहोत्री *

शोध सारांश – विकासशील देश भारत में गाँवों के विकास में आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी की उपयोगिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भौगोलक जटिलताओं, संसाधनों के अभाव और सम्पर्क साधनों की कमी से जूझते भारत के गाँव आधुनिक सुविधाओं तथा ज्ञान–विज्ञान में पिछड़े होने के कारण दुनियाँ के विकसित देशो से सुविधा और जानकारी के मामलो में काफी पीछे हैं।

प्रस्तावना – संचार प्रौद्योगिकी के युग में आज ऐसी संभावनाएँ सुलभ हो गई हैं, जिनके सहयोग से हम भारतीय गाँवों को आधुनिकतम जानकारी, ज्ञान – विज्ञान की सूचनाओं को आसानी से उपलब्ध कराकर एक क्रान्तिकारी आयाम प्रदान कर सकते है। ग्रामीणों के विकास के हेतू सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित कुछ योजनाएँ बनाई गई हैं।

मोबाइल डाकिया योजना – यह योजना हमारे पूर्व प्रधानमन्त्री अटलबिहारी बाजपेयी के जन्मदिवस 24 दिसम्बर 2002 को शुरू की गई थी। प्रारम्भ में करीब 10000 गाँवों में ही इसे शुरू किया गया। इन गाँवों तक पहुँचने का जिम्मा 2000 डाकघरों के जरिये ग्रामीण डाकियों को सौपा गया है। इसके लिये शुरू में पाँच करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है। इसके अर्न्तगत 'ग्रामीण डाक सेवको को वायरलेस इन लोकल लूप प्रौद्योगिकी से संचालित होने वाले मोबाइल टेलीफोन उपकरण दिये जा रहे है, जिनसे वह आवंटित गाँवों में डाक पहुँचाने के साथ ही साथ बारी–बारी हरेक घर पर पहुँचकर, उन्हे परदेश गए अपने सगे सम्बन्धियों से बात कराने की सुविधा प्रदान करेंगे।'[1] इन सभी फोन उपकरणों पर एस. टी. डी. और आई. एस. डी. सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है।

ग्रामीण टेलीफोन सेवा – सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में दूरसंचार की सुविधाओं का प्रसार एवं विस्तार किया जा रहा है। नई दूरसंचार नीति के अनुसार 'देश के प्रत्येक गाँव को एक सार्वजनिक टेलीफोन उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है। इसको पूरा करने का दायित्व बी.एस.एन.एल. के साथ–साथ लाइसेन्स प्राप्त प्राइवेट आपरेटिग कम्पनियों का भी है। (ग्रामीण दूरसंचार घनत्व जो मार्च 2002 में 1.2 प्रतिशत से अधिक था वह बढ़कर दिसम्बर 2009 में 21.2 प्रतिशत हो गया।'[2]

ग्रामीण संचार सेवक योजना – यह योजना 24 दिसम्बर 2002 से प्रारंभ हुई। ग्रामीण संचार सेवक गाँवों में लोगों को घर–घर जाकर टेलीफोन सुविधा उपलब्ध कराते हैं। इसके लिए संचार सेवकों को अपने बैग में चलता–फिरता टेलीफोन रखना होता है।

कपार्ट – (कौंसिल फार एडवोसमेण्ट ऑफ पीपुल्स, एक्शन एण्ड रूरल टेक्नोलाजी) सितम्बर 1986 में इसकी स्थापना हुई। जिसका उद्देश्य ग्रामीण समृद्धि के लिए परियोजनाओं के कार्यान्वयन में स्वैच्छिक कार्यो को प्रोत्साहन देना और उसमें सहायता करना है। कपार्ट की गतिविधियों में सम्मिलित हैं। ग्रामीण तकनीकी, पब्लिक सहकारी स्कीम, सूखा बहुल क्षेत्र कार्यक्रम, सूक्ष्मवित्त, वाटरशेड़, डेवलपमेंट प्रोग्राम, आदि।[3]

ई–गवर्नेस परियोजना – दिसम्बर 2002 में तत्कालीन सूचना टेक्नालाजी और संचार मन्त्री प्रमोद महाजन ने देश के सभी राज्यों के एक–एक जिले में ई–गवर्नेस परियोजना लागू करने के लिए 309 करोड़ रूपये लागत की महत्वाकांक्षी योजना का उद्घाटन किया। लोकतंत्र में सरकार के कामकाज के हर स्तर पर जनता और प्रशासन के बीच जो बाधाएँ आ जाती हैं उन बाधाओं को दूर करने का प्रयास है। 'ई–गवर्नेस प्रशासन को जनता के अनुकूल, पारदर्शी और जवाबदेह बनाने की दिशा में एक जोरदार प्रयास है।'[4]

फ्रेन्ड्स परियोजना केरल में नागरिकों के करों में भुगतान में होनेवाली परेशानियों को दूर करने के लिए सूचना टेक्नोलॉजी पर आधारित यह परियोजना प्रारम्भ की गई है। इस योजना से रिश्वतखोरी, बिचौलिये ,देरी और लम्बी –लम्बी लाइनों को समाप्त करने में मदद मिली है। यह योजना कई करोड़ लोगों की पहुँच में आ गई है। फ्रेन्ड्स परियोजना का यही उद्देश्य है कि नागरिकों को मूल्यवान ग्राहक माना जाये और उनकी समस्याएँ दूर हों।

'सौकार्यम' ई –सेवा परियोजना आन्ध्र प्रदेश के लोगों में तत्काल ही लोकप्रिय हो गई है। यह विशाखापत्तानम के बंदरगाह शहर में लागू है। इसके माध्यम से सम्पत्ति कर का ' ऑन लाईन' भुगतान किया जा सकता है। तथा सरकार एवं स्थानीय निकायों की कई परियोजनाओं का ब्यौरा देखा जा सकता है।

कम्प्युटरीकृत ग्रामीण सेवा – सन् 1985 में ग्रामीण विकास विभाग ने कम्प्युटरीकृत ग्रामीण सूचना प्रणाली' की शुरूआत ग्रामीण विकास और निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों की प्रगति का निरीक्षण करने के लिए शुरू की थी। इसका काम डी. आर डी. ए. में एक मिनी कम्प्युटर खेल की स्थापना करना है। इसका उद्देश्य ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं उनकी मानिटरींग प्रणाली को सशक्त करना है।[5]

इंटरनेट सेवा योजना – देश के सभी गाँवों में तो नहीं किन्तु अनेक जगहों पर इंटरनेट का इंटरनेट प्रयोग शुरू भी हो गया है, जिसके अपेक्षित परिणाम भी सामने आ रहे है। तमिलनाडु के अरागुंडा गाँव में इंटरनेट के जरिये ही आम ग्रामीण अब आला चिकित्सा सुविधाएँ हासिल कर रहे हैं। भटिंडा (पंजाब) तथा वायनाड (केरल) के कई गाँव भी अब इंटरनेट से जानकारियाँ प्राप्त कर रहे हैं और उसके आधार पर अपना नक्शा बदल रहे है। झाँसी (उत्तर प्रदेश) के पुनावली कला गाँव में भी लोग इंटरनेट के जरिये ही अब अपने दुग्ध उत्पादों को उचित मूल्य पर बेच रहे हैं। इसके द्वारा वे अब बिचौलियो के शिकंजो से भी मुक्त हो रहे है। 'ग्रामीण विकास में अत्यधिक सहायक होने के

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कारण इंटरनेट से ग्रामीण जन न केवल प्रभावित है बल्कि बहुत आशान्वित भी हैं।'[6]

'किसान चैनल तथा किसान काल सेन्टर'–ये काल सेन्टर देशभर में सप्ताह में सातों दिन और 24 घंटे किसानों को खेती और मौसम सम्बन्धी उनके सवालो का उनकी स्थानीय भाषा में जवाब देने के लिए शुरू किए गए हैं। इसका नम्बर टोल फ्री है। यानि काल करने पर किसान का कोई खर्च नहीं होगा। दिन के समय तो ऑनलाईन सेवा सेवा है और रात के समय आनेवाली काले दर्ज करके उनका डाक द्वारा समाधान करने की व्यवस्था की गई हैं। ये कालसेंटर शुरू हुए अभी ज्यादा समय नहीं हुआ हैं, फिर भी देश के किसान कॉल–सेंटरों में कई हजार टेलीफोन रोज आ रहे है 'दिल्ली का यह केन्द्र तीन राज्यों राजस्थान हरियाणा और दिल्ली के किसानों को सेवा देता है।'[7] इसी प्रकार 'किसान–चैनल ' कृषकों को कृषि से सम्बन्धित उपयोगी जानकारी उपलब्ध कराता है।'

ई–चौपाल गाँव में चौपाल ऐसा सार्वजनिक स्थान होता है जहाँ व्यक्तिगत बातों से लेकर सार्वजनिक खबरों की जानकारी भी आसानी से मिल जाती है। यहाँ सामुदायिक महत्व के निर्णय भी लिये जाते है। अपने खाली समय में ग्रमीणजन एकत्रित होकर एक–दूसरे की कहते–सुनते हैं।

ई–चौपाल ग्रामीण संप्रेषण की एक महत्वपूर्ण इकाई है। समय के साथ–साथ चौपालों की संप्रेषण की व्यवस्था को भी आधुनिक संचार प्रौद्यौगिकी से जोड़ दिया गया है, जिससे रेडियों व टी.वी. जैसे इलेक्ट्रानिक माध्यमों से उपयोगी सूचनाओं का प्रचार व प्रसार ग्रामीणों के बीच हो सके। इस योजना के अर्न्तगत गाँवों की चौपालों में सामुदायिक रेडियो तथा टी.वी. सेट उपलब्ध कराये गए है।

आधुनिक संचार सुविधाओं से लेस 'ई–चौपाल य एक सहकारी समिति है जिसका उद्देश्य मूलत: किसानों को आधुनिक कृषि तकनीके अपनाने, फसल की उत्पादकता बढ़ाने, कृषि–विविधिकरण आदि से सम्बन्धित जानकारी देने से लेकर उन्हें उनकी फसलों की उचित कीमत दिलाना है। कृषि और बाजार की सुविधाओं के अतिरिक्त 'ई–चौपाल य ग्रामीण विकास के लिए भी समर्पित है। इसके माध्यम से अनेक स्वंयसेवी संस्थाएँ पशु नस्ल सुधारीकरण, जलसंग्रहण तकनीकों, स्वंय सहायता समूहों जैसे मुद्दों पर काम कर रही है।' अब तक उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, कर्नाटक महाराष्ट्र व आन्ध्रप्रदेश राज्यों में 5000 ई–चौपालों की स्थापना हो चुकी है जिनके तहत कुल 29000 गाँवों के कृषक जुड़े हुए हैं।

औद्योगिकरण, यातायात एवं संचार के नवीन साधनों पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति तथा पश्चिम के नये विचारों एवं दर्शन आदि से ग्राम भी प्रभावित हुए एवं उनमें परिवर्तन की नयी लहर आई।

संचार के माध्यमों से ग्रामीण समाज में निरन्तर परिवर्तन दिखाई दे रहे है। गाँवों में भी कृषि के नये यन्त्रों खाद एवं सुधरे बीजों का प्रयोग दिनोदिन बढ़ रहा है। गाँवों में सामाजिक एवं राजनैतिक जागृति आई है। ग्रामवासी अपनी समस्याओं के प्रति सजग हुए हैं। अपने अधिकारों और दायित्वों को जानने लगे हैं तथा उनमें नवीन आकांक्षाएँ पैदा हुई है।

निष्कर्ष – संचार के नवीन साधनों जैसे डाक, तार, टेलीविजन आदि के अविष्कार ने ग्रामीणों को नवीन ज्ञान एवं पत्र–पत्रिकाओं के द्वारा वे विश्व में घटित होने वाली दैनिक घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने में लगे हैं। इस प्रकार संचार के आधुनिक साधनों ने ग्रामीणों की कूपमण्डूकता को समाप्त कर उनका बाहरी जगत से सम्पर्क बढ़ाया है। संचार के साधनों से उनके व्यवहारों , मूल्यों ,अभिवृत्तियों ,विचारों एवं आदतों मे परिवर्तन हुआ, उनके दृष्टिकोण मे उदारता आई और ग्रामीण परम्परागत जीवन परिवर्तित होने लगा।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1, 2,3,5,7 भारत में ग्रामीण समाज – डॉ. अमित अग्रवाल पृ. 289, 514, 515, 513,

4, 6 भारतीय ग्रामीण समाज शास्त्र – प्रो. एम. एल गुप्ता एवं डॉ. डी.डी. शर्मा कृतिका – जनवरी दिसम्बर 2014 सम्पादक – डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव।

****

प्रवासी भारतीय लेखक सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' के साहित्यिक और राजनैतिक यात्रा के विभिन्न पड़ाव

दीपक कुमार काकेश्वर * डॉ. उमेश काकेश्वर **

प्रस्तावना – डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल का जन्म 10 फरवरी 1954 को नवाबी शहर लखनऊ में हुआ था। उनके पिताजी डॉ. (श्रीमान्) बृजमोहन शुक्ल और माता श्रीमती किशोरी देवी शुक्ल, बहुत कर्त्तव्य परायण, धार्मिक और परिश्रमी महिला थी। उनके पिता उन्नाव जिले के मवैया माफी गाँव, अचल गंज के थे। उनकी माताश्री किशोरी देवी कानपुर जिले के गाँव कठारा रोड़ की थी, जिससे उनकी माँ पर भारी दु:खों का बोझ आ पड़ा था। चौदह वर्ष की आयु से ही उनकी माँ का विवाह हुआ था, तब तक वे अनपढ़ थी । माँ के विवाह के बाद उनके पिताजी ने घर पर ही उनकी शिक्षा पूरी की, जिसमें वे रामायण, भजन आदि स्वयं पढ़ने लगी थी। पारिवारिक व्यस्तता के कारण उन्हें पर्याप्त समय नहीं मिलता था, फिर भी वे उनके सारे घरेलू कार्य पूरे करने के बाद रामायण पाठ और भजन आदि करती थी। श्री सुरेशचन्द्र शुक्ल पर अपनी माँ और दादाजी का बहुत प्रभाव पड़ा था।

स्कूल के अपने शिक्षकों का भी उनके व्यक्तित्व पर भारी प्रभाव था। सुरेशचन्द्रजी शुक्ल के सबसे बड़े भाई राजेन्द्र प्रसाद शुक्ल नार्वे की राजधानी ओस्लो से बाहर स्तेन्सबी चिकित्सालय में सर्जन है, जो सुरेशचन्द्रजी के प्रमुख प्रेरणा होते थे, जिन्होंने कोलकाता से 15 अगस्त 1970 में साइकिल से नार्वे की यात्रा की थी और सन् 1972 में नार्वे पहुँचे थे।

शुक्लजी ने सन् 1972 में लखनऊ से ही हाईस्कूल की परीक्षा पास की थी। सुरेशचन्द्रजी की प्राथमिक शिक्षा सन् 1966 से लेकर 1972 तक की शिक्षा गोपीनाथ लक्ष्मणदास रस्तोगी महाविद्यालय लखनऊ में हुई थी। विद्यालय मेंआये दिन साहित्यिक कार्यक्रम होते थे। उन्होने ही डॉ. दुर्गाशंकरजी ने शुक्लजी के दूसरे काव्य संग्रह 'रजनी' (1984) की भूमिका भी लिखी थी।

जहाँ सुरेशचन्द्रजी रहते थे, उस श्रमिक बस्ती में विनोद भल्ला, शंभू पांजा, कंचन चटर्जी जैसे मित्र थे। उनके पड़ोस में रहने वाले परिवार भी उन्हें परिवार की तरह ही मानते थे। विजयसिंह नायक जैसे मित्र, जिसके साथ खेलकर शुक्लजी बड़े हुए, उनकी सन् 1979 में हत्या हो गई थी, जिनका गहरा दु:ख उनके मन में बना रहा।

सन् 1969 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की जन्म शताब्दी मनाई गई, जिसमें आयोजित व्याख्यान माला में शुक्लजी को हिस्सा लेने का अवसर मिला था। सन् 1970 से 1972 तक शुक्लजी ने हाईस्कूल में अध्ययन कर 1972 में हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1972 में शुक्लजी के पिताजी सेवानिवृत्त हुए, तब सिविल लाइन सुल्तानपुर से आरा मशीन लगाई और आजीवन कार्य करते रहे। सुरेशचन्द्रजी को प्रारंभिक दौर की लीक से हटकर काम करने की प्रवृत्ति थी।

रेलवे मेंनौकरी करते हुए सुरेशचन्द्र शुक्ल ने लखनऊ के कान्यकुब्ज वोकेशनल कॉलेज से बी.ए. पास किया। सन् 1978 में रेलवे में सुरेशचन्द्रजी को कानपुर भेजकर वर्क्स-टीचर ट्रेनिंग करवाई हालाँकि रेलवे में वे तरक्की कर रहे थे, खलासी से शुरू करके छ: साल में फिटर हो गये थे, लेकिन इस नौकरी में उनका मन नहीं लग रहा था। शुक्लजी को कोल्हू के बैल की तरह जिंदगी कभी भी पसंद नहीं थी। परिणामत: शुक्लजी ने नौकरी पर जाना अचानक बंद कर दिया और 26 जनवरी 1980 के दिन हवाई जहाज से ओस्लो के लिए रवाना हो गये और तब से अब तक यही रह रहे है।

15 अगस्त 1970 को बड़े भाई साइकिल से विश्व यात्रा करने निकल पड़े थे। उन दिनों अपने भाई की याद उनको बहुत खलने लगी थी। उसी समय सुरेशचन्द्रजी ने 10 वीं पास करने के बाद पिता की आर्थिक मदद के लिए नौकरी की। शुक्लजी ने तब श्रमिक जीवन की परेशानियों और दिक्कतों का भली-भाँति अनुभव हुआ। कारखाने की दशा और उनमें काम करने वाले मजदूरों की स्थितियों से उनका अच्छा परिचय हुआ।

शुक्लजी ने ओस्लो मेंसबसे पहले नार्वे की भाषा सीखने के लिए अपना नाम दर्ज करवाया। दो साल के अन्दर उन्होंने यहाँ की भाषा सीख ली। भाषा के संदर्भ में इससे संबंधित व्याकरण, टाइपोग्राफी, फोनेटिक्स सीखा। इसके बाद नार्वेजीयन साहित्य की पढ़ाई के लिए ओस्लो विश्वविद्यालय नाम लिख लिया।

26 जनवरी 1980 मेरे जीवन का न भूलने वाला दिन था। उस समय का वर्णन अपने शब्दों में लेखक सुरेशचन्द्र शुक्ल इस प्रकार करते है- एक अदृश्य स्वप्न लिये 24 जनवरी 1980 को दिल्ली के पालन एयरपोर्ट से उड़े और अगले दिन की गणतंत्र दिवस पर 26 जनवरी 1980 को ओस्लो में स्थित फोरनेवु एयरपोर्ट पर चारों तरफ बर्फ थी। तापमान-22 डिग्री सेन्टीग्रेट बर्फ पहली बार नजदीक से मास्को की ओर बर्फ के दीवारनुमा ढेर थे, एयरपोर्ट में मुझे लेने मेरे भाई देवव्रत आये।

सन् 1945 के बाद नार्वेजीयन साहित्य की उत्कृष्टतम रचनाओं के विशेषज्ञ श्री सुरेशचन्द्रजी शुक्ल का नार्वे में इसी रूप मेंसम्मान किया जाता रहा। ओस्लो से प्रकाशित होने वाली हिन्दी पत्रिका 'परिचय' में कार्य करने के कारण उन्हें कुछ साथियों के साथ जिंदगी शुरू हो चुकी थी। नार्वे की राजधानी में गोमती के किनारे से ओलमा नदी के शहर ओस्लो में पहुँचा यह नौजवान जिंदगी की परेशानियों को मुँह चिढ़ा रहा था। बाद मेंलेखक ने अपनी पत्रिका शुरू की। सन् 1988 में शुरू की गई उनकी हिन्दी और नार्वेजीयन भाषाओं में छपने वाली पत्रिका स्पाइल (दर्पण) में आज नये लेखकों को महत्व दिया जाता है।

* शोधार्थी, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़ (म.प्र.) भारत
** शासकीय महाविद्यालय, अंजड़ (म.प्र.) भारत

सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' का साहित्यिक योगदान।

काव्य संग्रह –

(1) वेदना (1976)
(2) रजनी (1984)
(3) नंगे पाँवों का सुख (1986)
(4) दीप जो बुझते नहीं (1988)
(5) संभावनाओं की तलाश (1993)
(6) नीड़ में फँसे पंख (1998)
(7) फ्रेम्मेदे फ्यूगलेर (नार्वेजीयन) (1995)
(8) मेल्लुम लिनयेने (नार्वेजीयन) (2005)
(9) गंगा से ग्लोमा तक (2010)

कहानी संग्रह –

(1) अर्धरात्रि का सूरज (हिन्दी 1996)
(2) तारुफी ख़त (उर्दू 1995)
(3) प्रतिनिधि प्रवासी कहानियाँ (संकलन 2004)
(4) नार्वे की उर्दू कहानियाँ (संकलन 2004)
(5) सम सामयिक प्रवासी कहानियाँ (संकलन 2010)
(6) नार्वे में हिन्दी काव्य और कथा साहित्य (संकलन)

अनुवाद –

(1) नार्वे की लोककथाएँ (2004)
(2) हान्स क्रिस्तियान अन्दर्सन डेनमार्क की कथाएँ (2004)
(3) हेनरिक इबसेन कृत नाटक–गुड़ियां का घर (2008)
(4) हेनरिक इबसेन कृत नाटक– मुर्गाबी (2009)
(5) क्नुत हामसुन कृत उपन्यास 'भूख'
(6) नार्वेजीयन कविताएँ

आडियो केसेट –

(1) मन के गीत (आठ हिन्दी गीतों का संकलन)
(2) संगीत बाल किशन (2001)
(3) जीवन यापन के विभिन्न स्रोत

नार्वेजीयन भाषा के पत्रकार और साहित्यकार होने के अलावा सुरेशचन्द्र नार्वे की राजनीति में भी दखल रखने लगे। ओस्लो नगर की पार्लियामेन्ट में सोशलिस्ट लेफ्टपार्टी (एस.बी.) की ओर से सदस्य रह चुके। सन् 2007 में ओस्लोटेक्स समिति के सदस्य थे। सन् 2005 के पार्लियामेन्ट के चुनाव में सोशलिस्ट लेफ्ट पार्टी के उम्मीदवार के रूप मेंराष्ट्रीय चुनाव में शामिल हुए। नार्वेजीयन जर्नलिस्ट यूनियन और इंटरनेशनल फेडरेशन और जर्नलिस्ट यूनियन और इंटरनेशनल बहुत सारे भारतीय और नार्वे के संगठनों के भी सदस्य रहे। अपनी कहानियों पर आधारित टेलीफिल्म 'तलाश', नार्वे ओर कनाड़ा की संयुक्त फिल्म 'कनाड़ा की सैर', आतंकवाद पर आधारित हिन्दी लघु फिल्म 'गुमराह' का निर्माण किया। एक शिक्षाविद् के रूप में भी उनकी पहचान है। ओस्लो विश्वविद्यालय, अमेरिका कोलांबिया विश्वविद्यालय और महात्मा गाँधी संस्थान, मारिशस में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में आमंत्रित किये गये। नार्वे की कई साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं में महत्वपूर्ण पदों पर रहे है।

लेकिन सुरेशचन्द्रजी ने भारतीय संस्कारों के प्रभावस्वरूप लोगों के प्रति किसी वैमनस्य का भाव प्रकट नहीं किया। इस अवसर पर शुक्लजी कहते है– 'मैं मातृभूमि का ऋण अदा नहीं कर सकता परन्तु जो मेरा है, उसे तो सेवा मेंअर्पित कर सकता हूँ। 'परिचय' पत्रिका दीर्घजीवी नहीं हो पायी पर इसने नार्वे में पत्रिकारिता की नींव रख दी थी।'

भारत का राजनैतिक प्रतिनिधि मण्डल ब्रिटेन, कनाड़ा और अमेरिका दौरा समाप्त कर नार्वे, स्वीट्जरलैण्ड के दौरों पर आया, जिसमेंउत्तरप्रदेश के विधानसभा अध्यक्ष केसरीनाथ त्रिपाठी पिछले वर्ष भारत–नार्वे सूचना और सांस्कृतिक फोरम के आमंत्रण पर नार्वे आया था। चेअरमेन मानवेन्द्रसिंह, विपक्ष के नेता आज़म खान और अन्य प्रतिनिधि मण्डल में शामिल हुए थे। उस समय डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' ने आमंत्रित सदस्यों से स्पाइल–दर्पण के अंक का भी अवलोकन किया। इण्डियन वेलफेयर सोसायटी द्वारा फूरुसेत वेल ओस्लो में और विश्व हिन्दू परिषद नार्वे के अध्यक्ष ओमवीय उपाध्याय के निवास पर स्वागत किया।

सन् 17 सितम्बर 2002 में नार्वे में उत्तरप्रदेश के विधानसभा अध्यक्ष केशरीनाथ त्रिपाठी ने उत्तरप्रदेश के विकास की चर्चा करते हुए अपने प्रदेश–देश को नार्वे की तरफ से साफ सुथरी व्यवस्था और सभी को नि:शुल्क चिकित्सा और शिक्षा प्रदान करने की बात कही।

31 जुलाई 1990 वाइतबेत यूट क्लब ओस्लों में भारतीय और नार्वेजीयन सूचना और सांस्कृतिक मंच के तत्वावधान में उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की जयंती पर एक गोष्ठी सम्पन्न हुई, जिसमें प्रेमचंद के जीवन पर प्रकाश डाला गया। 15 अगस्त को ओस्लो में भारतीय दूतावास में 15 अगस्त का स्वतंत्रता दिवस मनाया गया। वहाँ के प्रथम सचिव पन्त और गोगना से भेंट हुई।

महात्मा गाँधी पर अनेक पुस्तकें लिखने वाले दर्शन शास्त्री आर्गेनेस ने सुरेशचन्द्र से मिले। डेनमार्क मूल के ओस्लो विश्वविद्यालय मेंअध्यापक फिन थीसेन से भी मुलाकात हुई, जिसमें सुरेशचन्द्रजी का परिचय 21 वर्ष पुराना है। इस अवसर पर अनेक भारतीयों और नार्वेजीयन नेताओं से मिलना हुआ।

15 सितम्बर 2003 की नार्वे में चुनाव की सरगर्मी पैदा हुई जिसमें पूरे वर्षों में स्थानीय कम्यून चुनाव हो रहे है। नार्वे मेंएक लाख से अधिक प्रवासी निवास कर रहे है। मुख्यत: नार्वे में प्रवासियों का आना जाना पिछले 30 वर्षों से जारी है। अनेक भारतीय यहाँ की राजनीति में सक्रिय है, जिनमेंअमलेन्दु गुहा और सुरेशचन्द्र शुक्ल मुख्य है। सन् 1988 से स्पाइल–दर्पण का प्रकाशन शुरू हुआ था और अभी भी नियमित रूप से छप रही है।

हिन्दी सिखाने के लिए प्रवासी भारतीयों ने अपने बच्चों को हिन्दी सिखाने की हमारी बात मानी और अपने बच्चों को हिन्दी सीखने के लिए भेजने लगे। हिन्दी जिनकी मातृभाषा है और साथ ही जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है, उन्होंने भी अपने बच्चों को मातृभाषा घर में और हिन्दी निजी स्कूलों में बच्चों को पढ़ने के लिए भेजना शुरू किया, जिसका अच्छा असर था।

सुरेशचन्द्र शुक्लजी को ओस्लो पार्लियामेन्ट और राष्ट्रीय पार्लियामेन्ट में नार्वे की पार्टी ने चुनाव लड़ाया और जीत कर 2003 से 2007 तक नगर पार्लियामेन्ट के प्रतिनिधि रहे। आज भी वे राजनैतिक पार्टी और सांस्कृतिक संस्थाओं के प्रतिनिधि है।

डेनमार्क और कनाड़ा कई साहित्यिक संगठनों से जुड़े हुए है। अपनी ही कहानियों पर आधारित टेलीफिल्म 'तलाश' नार्वे और कनाड़ा की संयुक्त फिल्म 'कनाड़ा सैर' आतंकवाद पर आधारित हिन्दी लघु फिल्म 'गुमराह' बना चुके है।

एक शिक्षाविद् के रूप में भी उनकी अपनी पहचान है। ओस्लो विश्वविद्यालय, कोपहेगन विश्वविद्यालय, अमेरिका का कोलम्बिया विश्वविद्यालय और महात्मा गांधी संस्थान, मारिशस में विजिटिंग प्रोफेसर

के रूप में आमंत्रित किये जा चुके है। नार्वे की कई साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं में महत्वपूर्ण पदों पर रहे है।

नार्वे के साहित्य खासकर इब्सेन के लेखन का सुरेशचन्द्र शुक्ल ने अनुवाद भी खूब किया है, उन्हें बहुत सारे पुरस्कार भी मिल चुके है। वाइनवेत के उनके घर में हिन्दी और उर्दू के बहुत से साहित्यकार आ चुके है।

सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन सूरीनाम की धरती पर हुआ। इस सम्मेलन में अमेरिका में विश्व हिन्दी न्यास के रामदास चौधरी, दक्षिण अफ्रीका के.वी. रामविलास, पोलेन्द्र की दानिता स्वासीक, माशिसन के मित्र रामदेव धुरधरं, ब्रिटेन की अचला शर्मा, चेक गणराज्य के डॉक्टर स्वतीस्लाव कोस्तिक, म्याँमार के ऊपार्गो और चीन के येंग हांगयूनद को भी सम्मानित किया गया है।

18 अक्टूबर 2008 को स्तिक इङ्गोम पाइतवेत सेन्टर, ओस्लो में भारत के पधारे विश्व प्रसिद्ध संस्था 'ग्लोबल मार्च अगेन्स्ट चाइल्ड लेबर के सुमेधा एवं नोबेल शांति पुरस्कार के कैलाश सत्यार्थी तथा भारत में चैरिटी स्वास्थ्य सेवा करने वाले है।नयी दिल्ली कार्यालय में विश्व हिन्दी दिवस 10 जनवरी 2012 को किया गया।

22-23 फरवरी 2011 शिवाजी विद्यालय में अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी दिनांक 22-23 फरवरी 2011 को सम्पन्न हुआ, जिसमें भाग लेने के लिए नार्वे से महाराष्ट्र के सतारा में लेखक सुरेशचन्द्र शुक्ल गये थे। लेखक ने हेनसिक इब्सेन के साहित्य और इतिहास पर प्रकाश डाला। भारत के विभिन्न प्रान्तों के हिन्दी विद्धान आमंत्रित किये गये थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता उपकुलपति डॉ. ना. ज. पंवार ने की थी। इस अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन शिवाजी विश्वविद्यालय, दक्षिण भारतीय हिन्दी परिषद और केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के संयुक्त तत्वाधान में किया गया। इस कार्यक्रम में छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, साहूजी, रानी लक्ष्मीबाई जैसे अनेक ऐतिहासिक नायकों की साहित्य में उपस्थित और भूमिका पर विचार किया गया। अनेक विद्धानों ने अपने आलेख पढ़े।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रिश्ते का एहसास-डॉ. सत्येन्द्र कुमार सेठी, पत्रकार वेस्ट इंडिया विकली कैलिफोरनिया यूएसए।
2. पत्रकार और युगद्दष्टा साहित्यकार- रमावल्लभ पंडित, सचिन, भारतीय दूतावास, ओसलो, नार्वे।
3. स्केन्डेनेवियन देशों में हिन्दी की पहचान- शाहेदा बेगम, ओसलो, नार्वे।
4. यादों के झरोंके से शरद आलोक- डॉ. किरण नंदा- हिन्दी विभाग, किरोडीमल कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
5. सुरेशचन्द्र शुक्ल शरद आलोक- डॉ. संध्या द्विवेदी, लखनऊ।

****

अरूण कमल के काव्य संग्रह – एक अध्ययन

डॉ. दद्दु सिंह कनेल *

प्रस्तावना – साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत अरूण कमल जी समकालीन कविता के प्रमुख आधार स्तम्भ कवि हैं। उनका जन्म 15 फरवरी सन् 1954 ई. को बिहार राज्य के रोहतास जिले के नासरीगंज नामक स्थान पर हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा रोहतास में ही हुई। उन्होंने हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की है। वर्तमान में वे पटना विश्वविद्यालय में अंग्रेजी विभाग में प्राध्यापक के रूप में कार्य कर रहे हैं। साथ ही हिन्दी–साहित्स की प्रसिद्ध त्रैमासिक पत्रिका 'आलोचना' के सम्पादक के रूप में कार्य कर हिन्दी भाषा की सतत् सेवा में लगे हुए हैं।

अरूण कमल ने हिन्दी भाषा के विकास एवं प्रचार–प्रसार के लिए देश–विदेश की अनेक यात्राएँ की हैं। उन्होंने सोवियतरूस, ब्राजविले (अफ्रीका), इंग्लैण्ड इत्यादि देशों की यात्रा की है। अपनी देश–विदेश की यात्राओं के दौरान उन्होंने हिन्दी भाषा के महत्व को जन–जन तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

पुरस्कार – अपने उत्कृष्ट काव्य–सृजन के लिए अरूण कमल भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार (1980), सोवियत भूमि पुरस्कार (1989), श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार (1990), रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार (1996), श्मशेर सम्मान (1997) एवं काव्य संग्रह 'नये इलाके में' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार (1998) सहित अनेक पुरस्कारों और सम्मानों से सम्मानित कवि है।

काव्य–संग्रह – अरूण कमल का रचना संसार मात्रा की दृष्टि से नहीं, बल्कि अर्थवत्त की दृष्टि से व्यापक एवं गहरा है। अनेक देशी–विदेशी भाषाओं में उनकी कविताएँ अनूदित होकर सराही गई है। हिन्दी–साहित्य की काव्य विधा ने उनकी पारस प्रतिभा का स्पर्श किया तो वह अपनी स्वर्ण कांति से दीप्तिमान हो उठी है। अब तक अरूण कमल के पाँच काव्य–संग्रह : अपनी केवल धार (1980 ई.), सबूत (1989 ई.), नये इलाके में (1996 ई.), पुतली में संसार (2004 ई.) एवं मैं वो शंख महाशंख (2012 ई.) में प्रकाशित हो चुके हैं।

अपनी केवल धार – अरूण कमल के इस काव्य संग्रह में इक्यावन कविताएँ संग्रहित हैं। इस संग्रह की कविताएँ जीवन के प्रति गहरी लालसा की कविताएँ हैं। कवि ने अपने आसपास की दुनिया को बहुत प्रेम, विश्वास और बारीकी से निरख–परख कर अपनी कविताओं में उतारा है। अपनी सहजता, ऐन्द्रिकता और आकुलता के लिए सराही गई इन कविताओं को अरूण कमल के ही शब्दों में 'खिच्चा' कविताएँ कह सकते हैं।

जीवन के उधारपन को कदम–कदम पर किस–किस से पता नहीं कब–कब लिए उधार को स्मरण किए कवि स्वयं को स्वतंत्र न अनुभव कर अपनी निराशा को इन शब्दों में व्यक्त करता है–

'अपना क्या है इस जीवन में
सब तो लिया उधार
सारा लोहा उन लोगों का
अपनी केवल धार।'

अरूण कमल की संवेदनशीलता का जवाब नहीं। वह अपने आसपास के परिदृश्य को सहज सुक्षमता से देखते, वर्णित करते, अचानक एक मार्मिक लकीर–सी खींच देते है, जिसे पढकर पाठक हतप्रभ रह जाता है। परम्पराओं की विसंगति–वैचित्र्य पर कवि की प्रश्नवाचक दृष्टि खीझ में बदलते–बदलते मानों रह जाती है–

'जिन्हें कभी जीवन में मिला नहीं
सुख से भोजन दो जून
वे औरतें गाती हैं,
छप्पन व्यंजनों के गीत।'

किसी मनुष्य की मृत्यु अब चौंकाती कहाँ है? मुआवजे का रूप लेकर चुप हो जाती संवेदनाएँ, सरकार और आमजन दोनों के लिए महज कुछ समय का शोक गीत है–

'सरकारी रिपोर्ट थी
गोली चलने से सिर्फ एक मौत
वो भी हॉस्पिटल में
पाँच हजार मुआवजा
भूल–चुक लेनी–देनी माफ।'

अपनी कविताओं की ताजगी, मार्मिकता और सुक्ष्म अन्तर्दृष्टि के कारण इस संग्रह की कविताओं ने सामान्य पाठकों के मन में कविता के प्रति नया राग उत्पन्न किया और यह भी सिद्ध किया कि कविता छोटी–छोटी चीजों से बनती है। हमारे आसपास के क्षुद्र जीवन से, यानि जीवन का प्रत्येक तृण कविता के लिए पवित्र है।

सबूत – अरूण कमल के इस दूसरे काव्य संग्रह में पहले काव्य संग्रह 'अपनी केवल धार' के बाद की बावन कविताएँ संग्रहित हैं। इस संग्रह की कविताएँ निश्चित रूप से उनकी पूर्व की कविताओं से सम्बद्ध है, जैसा कि हर व्यक्तिवान कवि के साथ होता है, साथ ही साथ ये वैचारिक एवं भावात्मक दोनों ही स्तरों पर कवि के रूप में उनके विकास को भी अंकित करती है। कवि के जीवन का निजत्व तो सर्वत्व में मिलकर ही संवेदना को अभिव्यक्त करता है। वह सभी की खुशी में खुश और किसी एक के भी दुखी रहने पर दुखी हो जाता है।

आज की दुनिया में जो एक–दूसरे को सताने के लिए अनेक ढंग निकल रहे है, उनसे चिंतित होकर कवि के उद्गार यों प्रकट होते हैं–

'समय के साथ–साथ बदलता है
यातना देने का तरीका
बदलता है आदमी को नष्ट कर देने का रस्मों रिवाज।'

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला – इन्दौर (म.प्र.) भारत

अरूण कमल की अभिव्यक्ति क्षमता अद्भूत हैं। वे बड़ी साधारण–सी बात को भी अपनी कल्पना शक्ति एवं अभिव्यक्ति कौशल से प्रभावी बना देते है। मजदूर–किसान के महती बलिदान को जो, कहीं दर्ज नहीं होता, सराहा नहीं जाता। कवि की दृष्टि उसे पूरा अवलोकित कर, रेखांकित कर सहसा महत्वपूर्ण बना देती है–

'उन मजदूरों का कहीं कोई जिक्र नहीं आज
जो दुनिया के सबसे बडे पुल को
बनाते हुए
गंगा का ग्रास बने
पृथ्वी के एक खण्ड को दूसरे खण्ड से जोड़ते
विलीन हुए।'

सामंती परिवेश, पूँजीवादी कुचक्र, नारी उत्पीड़न और तानाशाही क्रूरता देखकर अरूण कमल आदमी की चुप्पी को तोड़ना चाहते है, क्योंकि ये यातनाएँ युग की कड़वाहट का 'सबूत' है। हमारी अमानवीयता और संवेदनहीनता पर उन्होंने अनेक स्थानों पर प्रश्न–चिन्ह लगायें हैं–

'ऐसा क्यों हो रहा है
हजारों लोग लेबनान में काटे जा रहे हैं
और सारी दुनिया अपने–अपने हथियारों में
तेल डाल रही है चुपचाप
पेड़ को पत्थर बनने में लगा है हजार वर्ष
आदमी देखते–देखते पत्थर बन रहा है
ऐसा क्यों, आखिर क्यों हो रहा है
ऐसा क्यों हो रहा हैं?'

नि:संकोच अरूण कमल के इस संग्रह की कविताएँ हिन्दी कविता को एक नया स्वर देती हैं। ये कविताएँ वर्तमान व्यवस्था के विरूद्ध संघर्षशील मानव के पक्ष में जीवन और आशावादियों के पक्ष में 'सबूत' है।

नये इलाके में – इस काव्य–संग्रह में अरूण कमल की पचपन कविताएँ संग्रहित हैं। जिस तरह सारी दुनिया ही नहीं, वरन् अपना अड़ौस–पड़ौस भी ऐसा बनता जा रहा है, जैसे नया इलाका हो। ऐसे में मनुष्य के सम्मुख अपनी पहचान और अपनेपन का संकट गहराता जा रहा है। वह एकांकी भी है और भौंचक्का भी। सारी स्थितियाँ कुछ इसलिए बदलती जा रही है कि अपने आसपास से लेकर दूर–दूर तक जो कुछ भी देखा सुना है वह अपनी स्मृतियों में संजोया हुआ पुराना पड़ जाता है। ऐसी ही समस्याओं से ग्रस्त अरूण कमल की कविताओं के माध्यम से एक निर्मम जाँच पडताल शुरू होती है, जो सम्पूर्ण सभ्यता के प्रवाह पर टिप्पणी करती है। जीवन को जानने–पहचानने की कोशिशों से भरी यें कविताऐं अरूण कमल की सूक्ष्म पर्यवेक्षण क्षमता को उजागर करती जाती है। अरूण कमल अपने आसपास के परिवेश के नित नये परिवर्तन से हैरान होकर सोचते हैं कि–

'इन नये बसते इलाकों में
जहाँ रोज बन रहें हैं नये–नये मकान
मैं अकसर रास्ता भूल जाता हूँ।'

कवि के मन में दर्द है। वह शोषित, पीड़ित, निर्दोष परन्तु दोषी ठहराये गये या शिकार समझकर, शिकार किये गये लोगों की तरफ से शोषकों को संदेश देते है–

'बिल्कुल निहत्था, पर हाथ बिना ऊपर उठाए
मैं हत्यारों से मिलने जाता हूँ
.....केवल शब्दों का फाहा लिये
जाना चाहता हूँ उसकी तरफ से
जो सबसे कमजोर है।'

जीवन हर रोएँ–रेशे में कितनी तरह से साँस ले रहा है, करवटें बदल रहा है। हमारी उपेक्षा या अक्षमता से अनदेखा रहा जाता है, यथा–

'मैं बहुत सारी आवाजें नहीं सुन पा रहा हूँ
चीटियों के शक्कर तोड़ने की आवाज
पंखुड़ी के एक–एक कर खुलने की आवाज
गर्भ में जीवन बूँद गिरने की आवाज
अपनी ही शरीर में कोशिकाएँ टूटने की आवाज।'

अरूण कमल के इस संग्रह की कविताएँ पूर्व के संग्रहों की कविताओं से सम्बद्ध होकर भी उनसे इस अर्थ में अलग है कि यहाँ एक नयी कोशिश मिलती है, जीवन को देखने और समझने की। अपने उठाव और प्रवाह में नये अर्थ प्रक्षेपित करती ये कविताएँ जीवन के बाहर की नहीं, अंदर की कविताएँ है, जो नये बिम्ब, बोलचाल की भाषा, अनेक लय, छंद हमारे सामने लाकर हमें 'नये इलाके में' अपरिचय से बचाती है और कवि का अनुभव हमारा अनुभव हो जाता है।

पुतली में संसार – इस काव्य संग्रह में अरूण कमल की अट्ठावन कविताएँ संग्रहित है। कवि के इस काव्यसंग्रह में आभ्यंतर एवं बाह्य के संबंधों को समझने की एक नयी कोशिश है। यहाँ कुछ भी न तो नितांत निजी है, न निपट सार्वजनिक। पुतली से लेकर संसार तक एक ही प्रसार है जीवन का, जहाँ सब कुछ एक–दूसरे से सम्बद्ध एक–दूसरे पर घात–प्रतिघात कर रहा है। इसीलिए 'महाभारत' के एक ख्यात प्रसंग से शुरू होकर यह संग्रह 'पुतली में संसार' को भरने का प्रयत्न करते हुए मृत्यु के बिन्दु पर जाकर समाप्त होता है जहाँ 'उतर जायेगी आखरी फिल्म पुतली पर' से। यहाँ राजनीति भी जीवन का वैसे ही एक अनिवार्य तत्व है जैसे शारीरिक प्रेम। राजनीतिक सत्ता द्वारा किये जा रहे मानव–जीवन के निरन्तर क्षरण एवं दरिद्रीकरण तथा आभ्यंतर के अतिक्रमण से प्रस्तुत करते हुए ये कविताएँ उन स्वरों, उन प्रसंगों की खोज भी करती हैं जो सत्ता का निषेध या प्रतिरोध है और इसीलिए जीवन के श्रेष्ठतम मूल्यों का समर्थन करती है–

'और मैं देखता हूँ तो मुझे केवल पुतली नहीं
पूरी आँख दिख रही है गुरूदेव
और मछली और वह खम्भा
और आकाश और आप और ये सब जन धनुर्धर
इतनी भीड़ इतनी ध्वनियाँ
और मैं तो केवल नीचे ताक रहा हूँ, तेल के कुण्ड में
फिर भी पूरा आकाश घूमता लग रहा है।'

वर्तमान में समाज की स्थिति बहुत ही गिर चुकी है। यहाँ पर व्यक्ति किसी भी प्रकार से सुरक्षित नहीं है। यहाँ कवि ने घर को सबसे असुरक्षित और कब्रगाह को सबसे सुरक्षित स्थान बताया है–

'जब इस युग की कथा कही जाएगी
तब कहा जाएगा
घर तब सबसे असुरक्षित थे
और कब्रगाह सबसे सुरक्षित।'

अरूण कमल ने अपनी चीन और इंग्लैण्ड के यात्रा–प्रसंगों पर आधारित कुछ कविताएँ भी इस संग्रह में शामिल की है। जिनमें वहाँ की संस्कृति, आचार–विचार, बौद्ध मंदिर, चीन की दीवार, जलवायु एवं रहन–सहन पर भी दृष्टिपात किया गया है। इन कविताओं की प्रमुख विशेषता यह है कि

इनमें बड़ी ही सरलता से गंभीर बातें कही गयी है–

'क्या वह झूठ बोली? उसका नाम क्या था?
जो भी हो, जीवन में पहली बार मैंने किसी को इतनी भीख दी
एक पौण्ड यानि सत्तर रूपये
खैर! जो भी हो वह सुंदर थी।'

वस्तुत: इस काव्य–संग्रह की कविताओं में वह सब कुछ है जो एक अच्छे काव्य–संग्रह की कविताओं में होना चाहिए। यहाँ यथार्थ का बखूबी चित्रण देखने को मिलता है। यहाँ कवि ने बडी ही सरलता से बड़ी से बड़ी बातें हमारे समक्ष रख दी है। यहाँ समाज की समस्याओं एवं विकृतियों से हमको आगाह करने का सफल प्रयास किया है।

मैं वो शंख महाशंख – अपने चार काव्य संग्रहों के समृद्ध साहित्य के पष्चात् 'मैं वो शंख महाशंख' नाम से उनका पाँचवा काव्य–संग्रह राजकमल प्रकाशन, दिल्ली से सन् 2012 ई. में प्रकाशित हुआ है। इस काव्य–संग्रह में उनकी सन् 2005 से सन् 2010 तक लिखी कविताएँ संग्रहित है। अरूण कमल इस काव्य–संग्रह में हाशिए पर धकेले गये लोगों के अन्तर्मन की निशब्द पीड़ा को उजागर करते हुए अपने काव्य संसार का विस्तार करते हुए प्रकट होते है। 'दूसरा आंगन' नामक कविता में कवि पड़ोसी देश में जा कर अपने देश को एक नयी नजर से दखता, परखता और महसूस करते हुए अपने देश के अहसास को नये ढं से जीता है –

'उस पड़ोसी देश में
जहाँ सब कुछ अपने ही देश जैसा है,
वही खेत खलियान, वही गली दूकान,
सत्ता के वही गलियारें,
जेल में सड़ते हुए
अपनी उम्र को गलाते हुए बेकसूर
कैदी।'

निष्कर्ष – इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अरूण कमल की कविताओं में सर्वहारा, शोषक वर्ग के प्रति विद्रोह की भावना एवं शोषित, निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति का स्वर परिलक्षित होता है। उनकी कविताओं में अनुभूति, कल्पना, विचार, शिल्प, प्रकृति, बिम्ब, प्रतीक, छंद एवं अलंकारिक सौन्दर्य का वर्णन इतना सहज बोधगम्य तथा प्रभावकारी है कि उनकी कई पंक्तियाँ स्वाभाविक ही गुनगुनाने का जी होता है। अरूण कमल जी ने शब्दों, बिम्बों, प्रतीकों और ध्वनियों को अत्यन्त जीवंत रूप में नए सन्दर्भो में ऊर्जास्वित किया है। जीवन के विराट व्यापार, संघर्ष, सुख–दुख, ट्रेजडी ये सब उनकी कविताओं के विषय रहें है। उनकी कविताओं में जीवन की अनेक समस्याओं के अभिव्यक्तिकरण के साथ–साथ उन समस्याओं के सहज उपायों का चित्रण भी देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अपनी केवल धार – अरूण कमल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. सबूत – अरूण कमल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. नये इलाके में – अरूण कमल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. पुतली में संसार – अरूण कमल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. मैं वो शंख महाशंख – अरूण कमल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. शोध ग्रंथ – अरूण कमल के काव्य में सौन्दर्य चेतना।

****

अनुभूत सत्यों को उद्घाटित करता महादेवी वर्मा का गद्य साहित्य

डॉ. कल्पना श्रीवास्तव *

शोध सारांश – 'महादेवी वर्मा को वेदना एवं करुणा की कवयित्री के रूप में जाना जाता है किन्तु यदि हम उनके गद्य पर दृष्टि डाले तो हम देखते हैं कि जितनी वेदना व करुणा आपकी कविताओं में अभिव्यक्ति हुई है उनके गद्य में वह और भी अधिक मुखर रूप से प्रकट हुई है। रेखाचित्र, संस्मरण एवं निबंध– गद्य की इन तीन विधाओं द्वारा आपने अपनी अद्भुत लेखन क्षमता का परिचय दिया है। आपका गद्य साहित्य हिन्दी साहित्य की अनमोल धरोहर है। अपने रेखाचित्रों द्वारा महादेवी जी ने भारतीय समाज के निम्न, उपेक्षित, शोषित वर्ग की करुणा, वेदना, दुखदर्द को चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। आपके निबंध विचार प्रधान हैं और साहित्य तथा संस्कृति के मूल प्रश्नों से जूझते हैं। अपने गद्य के माध्यम से महादेवी जी ने स्त्री मुक्ति के विभिन्न आयामों को अत्यंत गहराई एवं बारीकी से प्रस्तुत किया है।''

प्रस्तावना – महादेवी वर्मा मूलत: छायावादी एवं रहस्यवादी कवयित्री के रूप में प्रसिद्ध है। कविताओं में अभिव्यक्त वेदना एवं करुणा के कारण उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' के रूप मे जाना जाता हैं किन्तु यदि हम उनके गद्य साहित्य पर दृष्टि डालें तो हम देखते हैं कि जितनी वेदना एवं करुणा आपकी कविताओं में अभिव्यक्त हुई है, उनके गद्य में वह और भी अधिक मुखर रूप से प्रकट हुई है। महादेवी वर्मा ने 'श्रंखला की कड़ियों ' में अपनी बात में स्वयं लिखा है 'विचार के क्षणों में मुझे गद्य लिखना ही अच्छा लगता रहा है, क्योंकि उसमें अपनी अनुभूति ही नहीं, बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी पर्याप्त अवकाश रहता है। मेरा सबसे पहला सामाजिक निबंध तब लिखा गया था जब मैं सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थी अत: जीवन की वास्तविकता से मेरा परिचय कुछ नवीन नहीं है।'

महादेवी जी ने अपने गद्य लेखन के द्वारा भारतीय समाज के निम्न, उपेक्षित, शोषित वर्ग की करुणा, वेदना, दुख–दर्द को इतने सजीव एवं चित्रात्मक रूप से प्रस्तुत किया है कि ये सारे चरित्र हमें जाने पहचाने लगते हैं। महादेवी जी जानती थी कि गद्य के माध्यम से ही जीवन संघर्ष अभिव्यक्त किया जा सकता है।

महादेवी जी ने अपने गद्य लेखन में संस्मरण, रेखाचित्र एवं निबंध ये तीन विधाएँ मुख्य रूप से अपनाई हैं। इसके अतिरिक्त रेडियो वार्ता, अनुवाद, भाषण, पुस्तकों के लिए लिखी गई भूमिकाएँ आदि भी आपके गद्य लेखन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। आम पाठक के बीच उनकी पहचान मुख्य रूप से उनके संस्मरणों एवं रेखाचित्रों को लेकर ही बनी है लेकिन उनके गद्य का एक बहुत बड़ा अंश ज्ञानगंभीर, दार्शनिक एवं गहन विवेचनपरक निबंधों से बना है।

गद्य लेखन की दृष्टि से आपका प्रथम संग्रह 'अतीत के चलचित्र' 1941 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद 'स्मृति की रेखाएँ' 'पथ के साथी' 'श्रृंखला की कड़ियाँ' 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध' 'संकल्पिता' 'चिंतन के क्षण' आदि अनेक बहुविध गद्य संकलन प्रकाशित हुए जिनसे हिन्दी का संस्मरण, रेखाचित्र, आलोचनात्मक सामाजिक और विचारात्मक गद्य साहित्य समृद्ध हुआ। 'अतीत के चलचित्र' को समर्पित करते हुए वे लिखती हैं कि यह संग्रह समर्पित है उन लोगों को जिनके आसुओं ने उनका जीवन पथ स्वच्छ किया है, जिनकी बिखरी कथाओं ने उनके जीवन की श्रृंखला जोड़ी है। जिनकी ममता सुंदर, सरलता शिव और मनुष्यता सत्य है।'

महादेवी जी के गद्य का चित्रात्मक रूपांकन दार्शनिक चिंतन, करुणा, संवेदना आज विश्व साहित्य की किसी भी नारी लेखनी में खोज सकना दुर्लभ होगा। महादेवी जी के रेखाचित्रों में चरित्र चित्रण का तत्व प्रमुख रहा है। 'अतीत के चलचित्र' में घीसा की नि:स्वार्थ गुरुभक्ति, सेवक 'रामा' की वात्सल्य पूर्ण सेवा, भंगिन 'सबिया' की पतिपरायणता, 'लक्षमा' की सहनशीलता, सागभाजी बेचने वाले अंधे 'अलोपी' का सरल व्यक्तित्व आदि पात्र महादेवी जी के चरित्र चित्रण की अद्भुत क्षमता को उजागर करते हैं। आपके रेखाचित्रों की एक बहुत बड़ी विशेषता उनमें अभिव्यक्त करुणा एवं वेदना है। इन रेखाचित्रों के पात्र समाज द्वारा उपेक्षित, शोषित एवं निम्न वर्ग के हैं जिनका दुखदर्द पाठकों की आंखों में भी आंसू ला देता है, उनके पात्र पाठक के हृदय को झकझोर कर रख देते हैं। उनके रेखाचित्रों और संस्मरणों में कथा साहित्य की सी रोचकता और सरसता है। 'लछमा' में लछमा के बारे में वे लिखती हैं , 'मार्ग में तीन दिन कुछ खाने को न मिल सका। लछमा हंसकर कहती है–जब बहुत भूखा हुआ तब पीली मिट्टी का एक गोला बनाकर मुंह में रखा और आंख मूंदकर सोचा 'लड्डू खाया, लड्डू खाया' बस फिर बहुत सा पानी पी लिया और सब ठीक हो गया।'

'भाभी' रेखाचित्र में वे भाभी के बारे में लिखती हैं 'प्राय: निराहार और निरंतर मिताहार से दुर्बल देह से वह कितना परिश्रम करती थी, यह मेरी बालक बुद्धि से छिपा न रहता था।.....खंडहर जैसे घर और लंबे चौड़े आंगन को बैठ–बैठ कर बुहारना, आंगन में कुएँ से अपने और ससुर के स्नान के लिए ठहर–ठहर कर पानी खींचना और मैले कपड़ों को काठ की मोगरी से पीटते हुए रुक–रुक कर साफ करना .....अंधेरी रसोई की कोठरी के घुटते हुए गीली कुछ सूखी राख से चांदी–सोने के समान चमकाकर तथा कपड़े से पोंछकर रखते समय शिथिल उंगलियों से छूटते हुए बर्तनों की झनझनाहट मेरे मन में एक नया विषाद भर देती है।''

महादेवी जी का निवास भी किसी तपोवन से कम नहीं जहां मनुष्यों के अतिरिक्त मानवेतर प्राणी भी थे तभी तो वे गौरी गाय, गिल्लर–गिलहरी, सोना हिरनी, खरगोश, कुत्ता–कुतिया आदि की बात कर सकीं जो पाठकों की स्मृति में सदैव सजीव रहेंगे। सभी रेखाचित्रों को महादेवी जी ने अपने जीवन से ही लिया है। उन्होंने अनुभूत सत्यों को जस का तस अंकित किया है। उन्होंने स्वयं लिखा है 'इन स्मृतिचित्रों में मेरा जीवन भी आ गया है।''श्रृंखला

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

की कड़ियाँ' में महादेवी जी के ऐसे निबंध हैं जिनमें भारतीय नारी की विषम परिस्थितियों को अनेक दृष्टि बिंदुओं से देखने का प्रयास किया गया है। महादेवी जी नारी जाग्रति और नारी सम्मान के प्रति सजग रही है। आपने नारी की दयनीय स्थिति के लिए उत्तरदायी सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का एक समाजशास्त्री की भांति विश्लेषण किया। उन्होंने 'श्रृखला की कड़ियाँ' समर्पित की है 'जन्म से अभिशप्त, जीवन से संतप्त किंतु अक्षय वात्सल्य वरदानमयी भारतीय नारी को।' महादेवी जी ने पुस्तक की भूमिका में स्पष्ट लिखा है कि अन्याय के प्रति मैं स्वभाव से असहिष्णु हूँ अत: निबंधों में उग्रता की गंध स्वाभाविक है। भारतीय नारी जिस दिन अपने सम्पूर्ण प्राण वेग से जाग उठे उस दिन उसकी गति रोकना किसी के लिए संभव नहीं। 'हमारी समस्याएँ' निबंध में वे लिखती हैं '.....स्त्री केवल पत्नी के रूप में ही समाज का अंग नहीं है अत: उसे उसके भिन्न-भिन्न रूपों में व्यापक तथा सामान्य गुणों द्वारा ही समझना समाज के लिए आवश्यक तथा उचित है।.....स्त्री न घर का अलंकार मात्र बनकर जीवित रहना चाहती है, न देवता की मूर्ति बनकर प्राण प्रतिष्ठा चाहती है।' श्रृंखला की कड़ियों के सभी निबंध महादेवी जी के तेजस्वी ,साहसी एवं प्रखर विश्लेषण क्षमता को प्रकट करते हैं।

'पथ के साथी' महादेवी जी का महत्वपूर्ण संस्मरण संकलन है जिसमें साहित्यकारों के शब्दचित्र भी हैं और रेखाचित्र भी हैं। महादेवी जी ने गुरुवर रवीन्द्रनाथ टैगोर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, निराला, पंत, प्रसाद एवं सियारामशरण गुप्त जैसे लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकारों के साथ बिताए समय को अत्यंत आत्मीयता एवं तल्लीनता के साथ प्रस्तुत किया है। वे लिखती हैं कि 'अपने अग्रजों एवं सहयोगियों के संबंध में अपने आप को दूर रखकर कुछ कहना सहज नहीं होता। मैंने साहस तो किया है..... मेरी दृष्टि के सीमित शीर्षों में वे जैसे दिखाई देते हैं, उससे वे बहुत उज्जवल और विशाल हैं' इसे मानकर पढ़ने वाले ही उनकी कुछ झलक पा सकेगें।' इन महापुरुषों से जुड़े संस्मरण महादेवी जी के विश्व इतिहास में ज्ञान के भी साक्षी हैं। इन निबंधों की भाषा भी साहित्यिक, परिष्कृत एवं प्रांजल है। संस्मरण रवीन्द्रनाथ ठाकुर में वे लिखती हैं 'जिनकी छाया में हमारे युग की यात्रा आरंभ हुई, जिनकी वाणी में हमने नए जीवन की प्रथम पुकार सुनी है और जिनकी दृष्टि ने अंधकार को भेदकर हमें भविष्य का पहला उज्जवल संकेत दिया है, उनके अवश्यम्भावी अभाव की कल्पना भी हमारे लिए साह्य नहीं होती।

रेखाचित्र एवं संस्मरणों के अतिरिक्त उनके गद्य साहित्य का एक बहुत बड़ा अंश ज्ञानगंभीर ,दार्शनिक और गहन विवेचनपरक निबंधों से भी बना है। ये निबंध एक छायावादी कवयित्री की अपने समय और समाज के प्रति जागरूक और मुखर दृष्टि को ही उद्घाटित नहीं करते बल्कि वर्तमान परिस्थितियों में बहुत कुछ सोचने को भी बाध्य करते हैं। ये निबंध अपनी दुरूहता के कारण सामान्य पाठक के लिए भले ही न हों किन्तु साहित्यकर्मियों एवं गंभीर अध्येताओं के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इन निबंधों में साहित्य, सांस्कृति, दर्शन, धर्म, शिक्षा, भारतीय समाज की संरचना, विसंगतियाँ आदि पर गंभीर मनन चिंतन किया गया है जिससे उनकी बहुमुखी प्रतिभा तथा विस्तृत चिंतन संसार उद्घाटित हुआ है। महादेवी जी ने 'साहित्य और साहित्यकार' 'शिक्षा का उद्देश्य' 'समाज और व्यक्ति' 'साहित्यकार की आस्था' 'छायावाद' 'रहस्यवाद' 'यथार्थ और आदर्श' 'संस्कृति का प्रश्न' आदि शीर्षक पर गंभीर चिंतन मनन करते हुए उत्कृष्ट कोटि के साहित्यिक निबंध लिखकर हिंदी निबंध साहित्य को समृद्ध किया है। महादेवी जी का गद्य उनकी कविता की अपेक्षा अधिक विस्तार तथा प्रामाणिकता से उनके व्यक्तित्व , उनकी सोच, उनमें चिंतन के विविध पहलुओं को हमारे सामने प्रकट करता है। उनके गद्य साहित्य में समय-समय पर दिए गए उनके भाषण भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं जो उनकी बौद्धिक, दार्शनिक प्रतिभा को प्रकट करते हैं। जहाँ रेखाचित्रों संस्मरणों में उनका संवेदनशीन, आत्मीय, मानवीय एवं करुणा तथा संवेदना से भरा रूप प्रकट हुआ है। वहीं गंभीर निबंधों में गुरुता, गंभीर चिंतन मनन एवं विद्धतापूर्ण गहन ज्ञान का रूप दिखलाई देता है।

स्पष्ट है कि महादेवी वर्मा मात्र एक प्रसिद्ध छायावादी कवयित्री ही नहीं हैं वरन् उनकी रचनाओं में गद्य साहित्य के विविध रंग भी दिखलाई देते हैं। जो उनकी लेखनी की अद्भुत क्षमता के परिचायक हैं। उनका गद्य साहित्य हिंदी साहित्य की अनमोल धरोहर है। यह विस्मय का विषय ही है कि महादेवी जी का प्रथम परिचय एक गद्यकार के रूप में न होकर कवयित्री के रूप में होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महादेवी वर्मा - निबंधों की दुनिया - प्रधान संपादक - निर्मला जैन , वाणी प्रकाशन दिल्ली ।
2. श्रृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली ।
3. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद ।
4. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - राधाकृष्णन प्रकाशन दिल्ली ।
5. मधुमती - जनवरी 2006 - राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ।

****

राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों में नारी

प्रमीला *

प्रस्तावना – सृष्टि रचना का आधार नारी और पुरुष दोनों को ही माना जाता है। दोनों के बिना संसार की कल्पना करना भी असंभव है। भारतीय समाज आरम्भ से ही पुरुष प्रधान देश रहा है, परन्तु फिर भी वैदिककाल में नारी का सम्मान सर्वोपरि था। नारी को देवी का दर्जा दिया जाता था किंतु उत्तर वैदिक युग से नारी की स्थिति गिरने लगी। मुगलशासन काल में तो वह विलासिता की वस्तु समझी जाने लगी और मध्यकाल में उसे अनिष्टकारक माना जाने लगा। उसके जीवन को पुरुष ने विभिन्न कुरीतियों द्वारा और अधिक संघर्षमय बना दिया। सती–प्रथा, दहेज–प्रथा, अनमेल–विवाह और बाल–विवाह जैसी कुप्रथाओं से उसका जीवन कठिन होता चला गया। डॉ. स्वर्णलता के शब्दों में– 'दहेज की प्रथा प्राय: समाज के उच्च वर्ग और मध्य वर्ग में पायी जाती है। लेकिन मध्यवर्ग में दहेज विवशता का प्रतीक है, तो उच्च अथवा अभिजात वर्ग में प्रदर्शन का'[1] 'हिन्दू समाज में वैवाहिक समस्या को जटिल बनाया है 'दहेज प्रथा ने, अनेक सुन्दर, सुशिक्षित और सुसंस्कृत लड़कियाँ समुचित दहेज के अभाव में असुन्दर, मूर्ख और असंस्कृत लड़कों को ब्याह दी जाती है।' राजेन्द्र मोहन भटनागर के साहित्य में हमें नारी जीवन की विविध समस्याओं के दर्शन होते हैं। उनके 'तरुण संन्यासी' नामक उपन्यास में विवेकानंद विवाह के प्रति उदासीन हैं, परन्तु उनके पिता धनाढ्य कन्या पक्ष को छोड़ना नहीं चाहते, वे दहेज के प्रति अपनी मानसिकता इस रूप में व्यक्ति करते हैं,

'बेटे, एक सुशील लड़की है'
नरेन्द्र मौन।
'कन्या पक्ष धनाढ्य है।'
नरेन्द्र फिर मौन।
'वह स्वेच्छा से दहेज से दस हजार रूपये देने को तैयार है।'[3]

मात्र दहेज ही नहीं बल्कि अनमेल विवाह के बोझ तले भी नारी दबती चली जा रही थी। विलासी पुरुष अपनी कन्या समान स्त्री को अपनी पत्नी बनाने से हिचकिचाता नहीं था। प्रेमचन्द ने अनमेल विवाह के कारण नारी के नष्ट होते जीवन का बड़े मार्मिक चित्र अंकित किए है। नारी की अशिक्षा उसकी उन्नति में सबसे बड़ी बाधा थी। राजेन्द्र मोहन भटनागर ने भी महापुरुषों के जीवन के अंशों को उठाकर इस समस्या की ओर संकेत किया है। 'कुली बैरिस्टर' उपन्यास में कस्तूरबा गाँधी इसी पीड़ा को सहती हुई दिखाई दी हैं। जब गाँधी जी ने उन्हें दूसरे व्यक्तियों की शौच–सेवा हेतु कहा तो उसकी दबी कुण्ठा उभर कर सामने आई– 'तुम कैसे पति हो, जो मुझे अनपढ़ होने की सजा इस प्रकार दे रहे हो? कोई पढ़ी–लिखी पत्नी होती तो वह इस प्रकार काम में हाथ बँटाती?'[4] इसी प्रकार वह स्त्री और पुरुष के मध्य भेद व्यक्त करते हुए कहती है– 'तुम क्या जानो और क्या होती है? मर्द सब एक से हैं, चाहे पढ़े या बे पढ़े। उन्हें तो सवारी करनी आती है। हुक्म चलाना वे अपनी जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं। उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं कि दूसरे में भी जान है, उसका भी दिल है। वह भी कुछ चाहती है। वह मर्द की जूती नहीं, जब चाहा पहना, जब चाहा उतारा। वह औरत है धर्मपत्नी नहीं।'[5]

राजेन्द्र मोहन भटनागर ने नारी के मात्र असहाय व दयनीय रूप को ही प्रकट नहीं किया बल्कि कमला नेहरू के रूप में नारी की सहनशीलता को भी अभिव्यक्त किया है– 'कायदे आजम' उपन्यास में सरोजिनी नायडू कमला नेहरू के बारे में एक अंग्रेज महिला एडविना को बताती है–

'तुम नेहरु के लिए यह नहीं कर सकती, क्योंकि वह अन्दर से अंग्रेजी सभ्यता का कायल है।'
'उसने भी अपनी पत्नी....'
'तुम्हारा मतलब कमला से है?'[6]
'हाँ एकदम कमला से'
'क्या?'
'वह अंग्रेजी नहीं जानती थी उनके तौर–तरीकों से दूर थी।'
'कमला बेहद खूबसूरत थी।'
'पर अभागी।'

उक्त उदाहरण के द्वारा राजेन्द्र मोहन भटनागर ने स्पष्ट करना चाहा है कि अभिजात्य वर्ग में भी अशिक्षित नारी उपेक्षित जीवन जीने को विवश थी।

नारी का सर्वोत्तम रूप माँ का माना गया है। नारी का मातृत्व रूप अत्यन्त श्रद्धेय है। 'हमारे समाज में स्त्रियों से संबंधित एक ही छवि, एक ही अवधारणा तथा आदर्शों की अभिव्यक्ति हुई है। मुख्यत: वृतांत में प्राय: भारतीय समाज को समर्पित पत्नी और वात्सल्यमयी मातृ छवि के सर्वोपरि रूप की चर्चा की जाती है। मातृ रूप में स्त्री की गरिमा, मातृ शक्ति के रूप में देवी और राष्ट्रवाद के सन्दर्भ में मातृभूमि की परिकल्पना सांस्कृतिक परम्परा में प्रतिष्ठित है।'[7] 'बच्चों के लालन–पालन, खाने–पीने, वर्तमान और भविष्य के निर्माण की जितनी चिन्ता माँ को होती है, उतनी समस्त परिवार के सदस्य को नहीं होती।'[8] विवेकानन्द भी अपनी माँ के वात्सल्य रूप के बारे में 'तरुण संन्यासी' नामक उपन्यास में यही सोचते हैं– नरेन्द्रनाथ दत्त अर्द्ध सम्मोहित अवस्था में अपनी करुणामयी, ममतामयी, त्यागमयी और पालनमयी के रूप में उसके चित पर उभरती जा रही थी।'[9]

भटनागर ने नारी–जीवन के प्रत्येक पक्ष को चित्रित किया है। माँ के केवल वात्सल्य रूप को ही नहीं, बल्कि उसकी दृढ़ता व शक्ति को भी प्रस्तुत किया है। इन्दिरा गाँधी अपने पुत्र संजय गाँधी के शव को स्वयं अपने समक्ष सिलवाती हैं– 'नि:संदेह उनमें गहरी अन्दरुनी ताकत थी और उन्हें अपने देश और देशवासियों से बेहद प्यार था। उनकी चट्टानें दृढ़ता का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि 23 जून 1980 को वह अपने पुत्र संजय की

* शोधार्थी (हिन्दी) वनस्थली विद्यापीठ, (राज.) भारत

क्षत्-विक्षत देह को डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल में खड़ी अपने सामने सिलवा रही थी और उन मर्मान्तक तथा झकझोरने वाली घड़ियों में, जिनमें बड़े से बड़ा पहाड़ भी आर्द्र हो बह पड़े, वे एकदम शांत और तटस्थ बनी रही।'[10]

इस प्रकार कहा जा सकता है भटनागर ने नारी जीवन के विविध पक्षों को चित्रित किया है। माँ के केवल वात्सल्य रूप को ही नहीं बल्कि उसकी दृढ़ता व शक्ति को भी प्रस्तुत किया है। नारी के विभिन्न रूपों के माध्यम से उन्होंने समाज में नारी की अहम् भूमिका को वर्णित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वर्णलता तलवार, हिन्दी उपन्यास और नारी समस्याएँ, पृ. सं. 60
2. वही, पृ. सं. 60
3. राजेन्द्र मोहन भटनागर, तरुण संन्यासी, पृ. सं. 23
4. राजेन्द्र मोहन भटनागर, कुली बैरिस्टर, पृ. सं. 183
5. वही, पृ. सं. 183
6. वही, पृ. सं. 191
7. मंजुलता गुप्ता, राजस्थान दिवस, पृ. सं. 10
8. राजेन्द्र मोहन भटनागर, दंश, पृ. सं. 91
9. वही, तरुण सन्यासी, पृ. सं. 38
10. वही, इन्दिरा प्रियदर्शिनी, पृ. सं. 25

****

शुक्ल जी के निबंधों में मनोभाव निरूपण

डॉ. पारसमणि गुप्ता *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम भावों या मनोविकारों का स्वरूप विवेचन सर्वप्रथम आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने ही किया है। आपसे पूर्व निबंधकारों ने मनोविकार पर निबंध लिखे है परंतु उनका उद्देश्य हमेशा नैतिक शिक्षा देना ही रहा है।

यह शुक्ल जी की ही देन है कि उन्होंने भावों या मनोविकारों के वास्तविक स्वरूप को पाठक के सामने प्रस्तुत किया है। आचार्य भरत से लेकर आज तक इन भावों का वास्तविक स्वरूप किसी ने नहीं दिखाया है। इस सिद्धांत में केवल नौ स्थायी भावों या तैतीस संचारी भावों का नाम भर गिना दिया जाता रहा है जबकि इस सिद्धांत का भवन ही इन भावों पर आधारित है।

शुक्ल जी ने अपने रस सिद्धांत को अधिक मनोवैज्ञानिक एवं सफल बनाने के लिए इनका विवेचन किया है।

भाव या मनोविकार के निरूपण में शुक्ल जी प्रथम उसकी परिभाषा देते है,'किसी आती हुई आपदा की भावना या दु:ख के कारण के साक्षात्कार से जो एक प्रकार का आवेगपूर्ण अथवा स्तम्भनकारक मनोविकार होता है, उसी को भय कहते है।' अथवा, 'साहसपूर्ण आनंद का नाम उत्साह है।'

इस प्रकार की परिभाषा आप हर मनोविकार के विवेचन के शुरू में देते है। ये परिभाषाएँ इतनी सटिक और सफल है कि देखते ही बनती हैं। .....भय के संबंध में.....आती हुई आपदा की भावना, दु:ख के कारण का साक्षात्कार, आवेगपूर्ण और स्तम्भनकारक, ये चार बातें है। आपदा की भावना और दु:ख के कारण से यह स्पष्ट होता है कि भय, दु:ख वर्ग का मनोविकार है। मनुष्य में भय कब उत्पन्न होता है, जब उसे यह मालूम पड़े कि उस पर कोई आपदा आने वाली है। इस आपदा के साक्षात्कार की कल्पना से उसमें भय नामक मनोविकार का संचार होता है। अब शुक्ल जी ने इसके दो लक्षण बताये है–आवेगपूर्ण और स्तम्भन कारक। जब आदमी भयभीत होता है तो वह उस आपदा से बचने के लिए भाग खड़ा होता है, परन्तु कभी–कभी ऐसा होता है कि अत्यधिक आतंक के कारण उसकी ज्ञानेन्द्रियॉ शिथिल हो जाती है और वह स्तम्भित हो जाता है। अत: पहले वाला प्रकार आवेगपूर्ण, दूसरा स्तम्भन कारक हुआ। एक में गति आती है और एक में मनुष्य गतिहीन हो जाता है। वैसे देखने में ये दोनों एक दूसरे के विरोधी से प्रतीत होते है, परन्तु है दोनों आवश्यक। इनमें से एक रूप को भी परिभाषा से हटा लिया जाए, तो उसमें अत्याप्ति को दोष उत्पन्न हो जाएगा।

ठीक इसी प्रकार उत्साह की परिभाषा है, – साहसपूर्ण आनंद का नाम उत्साह है। इससे स्पष्ट है कि उत्साह उसी को कहा जायेगा जिसमें साहस परन्तु आनंद भी साथ हो।

शुक्ल जी का परिभाषा देने का ढंग एकदम सटिक और वैज्ञानिक है। शुक्ल जी अपने निबंधों में वर्णित भाव का अन्य समान या विरोधी भावों में अन्तर या समानता स्पष्ट करते है।

'क्रोध और घृणा में जो अन्तर है वह यहॉ देखा जा सकता है। क्रोध का विषय पीड़ा या हानि पहुँचाने वाला होता है। इससे क्रोधी उसे नष्ट करने में प्रवृत्त होता है। घृणा का विषय इन्द्रिय या मन के व्यापार में संकोच मात्र उत्पन्न करने वाला होता है। इसमें मनुष्य को उतना उग्र, उद्वेग नहीं होता और वह घृणा के विषय की हानि करने में तुरंत बिना कुछ और विचार किए प्रवृत्त नहीं होता।' (चिंतामणि 'घृणा' पृष्ठ क्रमांक 94–95)

मनोविकार का स्वरूप समझाने के लिए शुक्ल जी कई उपाय करते है। भाव या मनोविकार कोई साकार या ठोस पदार्थ नहीं है। इसीलिए जब तक यह साकार या बिम्ब रूप में सामने न आता है, जब तक इसकी सही पहचान नहीं हो जाती है, तब तक परिभाषा मात्र प्रस्तुत करने से किसी भाव को नहीं समझाया जा सकता। भाव का आधार है, प्राणी और वह भी सर्वाधिक रूप में मनुष्य। मनुष्य की शारीरिक, चेष्टाओं, क्रियाओं, मुद्राओं आदि में विशेष परिवर्तन होने से ही किसी भाव का पता चलता है। जब हमें किसी अनुभव, चेष्टा या प्रयत्न के बारे में मालूम होता है कि उसका सम्बन्ध अमुक भावना या इच्छा से है, तब तक हमें किसी मनोविकार का ठीक–ठीक पता चलता है। इसी अनुभव, चेष्टा, इच्छा और प्रयत्न को मनोविकार के स्वरूप के स्पष्टीकरण में सहायक मानकर शुक्ल जी लिखते है, 'यदि किसी प्रिय के आने का समाचार पाकर हम चुपचाप ज्यों के त्यों आनंदित होकर बैठे रह जाए या थोड़ा हंस भी दे तो यह हमारा उत्साह नहीं कहा जाएगा।' हमारा उत्साह तभी कहा जायेगा, जब हम अपने मित्र का आगमन सुनते ही उठ खड़े होंगे। उससे मिलने दौड़ पडेगे। उसके ठहरने आदि के प्रबंध में प्रसन्न मुख इधर–उधर आते जाते दिखाई देंगे।

इस प्रकार मनोविकारों के स्पष्टीकरण के लिए शुक्ल जी मनुष्य की मानसिक और शारीरिक हलचलों को भी सहायक मानते है और उसका उल्लेख उन्होंने अपने हर निबंध में किया है। उनके निबंध साहित्य जगत के मील के पत्थर साबित हो रहे है। मनोभाव को समझाने के लिए सर्वप्रथम उन्होंने चिंतामणि में भाव या मनोविचार निबंध लिखा है जिसमें स्पष्ट है भाव क्या है, कब वे मनोविकार बनते है। उनके प्रसिद्ध निबंध–क्रोध, ईष्या, उत्साह, लज्जा और ग्लानी, भय, करूणा, लोभ और प्रीति में एक मनोवैज्ञानिक की पैनी नजर से भावों का विश्लेषण कर, व्याख्यात्मक उदाहरण शैली को अपनाकर भावों की बारीकियों एवं उनके स्वरूप का वर्णन किया है। उनकी नजर से भाव और उनके उपभाव कोई छूटा नहीं हैं। यह निबंध शुक्ल जी की हिन्दी जगत को सबसे बड़ी देन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चिंतामणि–रामचंद्र शुक्ल।
2. चिंतामणि निबंध–घृणा।
3. चिंतामणि निबंध–उत्साह।
4. हिन्दी निबंध का विकास–डॉ. ओंकारनाथ शर्मा।
5. साहित्य समीक्षा– डॉ. दशरथ ओझा।
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल–डॉ. शिवनाथ।
7. मनोविज्ञान–डॉ. यदुनाथसिंह।

****

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

संगीत कला - ऐतिहासिक परिचय तथा महत्व

डॉ. बी. वर्षा *

शोध सारांश – हमारे सांस्कृतिक जीवन में ललित कलाओं का विशेष महत्व है। ललित कलाओं में संगीत विशेषत: अपना एक अलग स्थान रखता है। मनुष्य का जीवन और संगीत दोनों एक दूसरे के अभिन्न अंग हैं। मनुष्य के सांसारिक जीवन का शायद ही कोई ऐसा पहलू होगा, जहाँ संगीत का दखल न हो। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त संगीत मानव जीवन के साथ जुड़ा है। सृष्टि के निर्माण से ही संगीत का अस्तित्व रहा है। वैदिक युग, भारत के सांस्कृतिक इतिहास में सबसे प्राचीन युग माना जाता है तथा इस युग में संगीत साधना के अनेक उल्लेख मिलते हैं, जिससे यह स्पष्ट है कि संगीत हमारी प्राचीनतम धरोहर है और इसलिये संगीत का स्थान साहित्य और कलाओं में सर्वोपरि है।

प्रस्तावना –सृष्टि के कण-कण में संगीत व्याप्त है। हमारे भावों को प्रकट करने का सुंदर एवं मधुर कलापूर्ण माध्यम है - संगीत। कहा जाता है कि जबसे मानव पृथ्वी पर आया तभी से कला का जन्म हुआ और मानवीय विकास के साथ-साथ कला का भी विकास हुआ। संगीत, साहित्य और कला ये मानव जीवन के तीन महत्वपूर्ण पक्ष है, जिसके बारे में यह कहा जाता है कि यदि मानव जीवन में इन तीन में से कोई पक्ष न हो तो उसे साक्षात पशु की संज्ञा दी जानी चाहिये। मुख्यत: ललित कलाओं को पाँच भागों में वर्गीकृत किया जाता है -

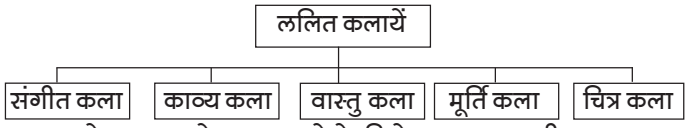

प्रत्येक कला को व्यक्त करने के लिये एक माध्यम की आवश्यकता होती है और कला का माध्यम बदलते ही कला का स्वरूप भी बदल जाता है। कलायें भी मुख्यत: दो भागों में बँटी होती है।

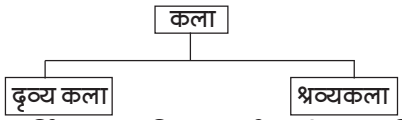

वास्तुकला, मूर्तिकला तथा चित्रकला की आनंद अनुभूति के लिये नेत्रों की आवश्यकता होती है, क्योंकि ये कलायें दृश्यकला के अंतर्गत आती है तथा श्रव्यकला के अंतर्गत आने वाली संगीत कला में नेत्र तथा कर्ण इन दोनों इंद्रियों की सहायता ली जाती है, जिससे आनंद की रसानुभूति बड़ी सहजता से होती है, इसलिये संगीत का स्थान सर्वोपरि माना गया है।

संगीत के विकसित स्वरूप पर प्रकाश डालने से पूर्व उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को जानना आवश्यक है। इतिहासकारों की अवधारणा है कि भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम प्रमाण वेद हैं। भारतीय संगीत का प्रारूप भी वेदों में मिलता है। वेदों को ईश्वरीय ज्ञान माना जाता है, जो चार भागों में विभाजित है -

1. ऋग्वेद - ज्ञानकाण्ड
2. यजुर्वेद - कर्मकाण्ड
3. सामवेद - उपासना काण्ड
4. अथर्ववेद - विज्ञान काण्ड

सामवेद में संगीत कला का परिचय मिलता है। इतिहास की दृष्टि से संगीत के इतिहास को भी चार भागों में बाँटा गया है -

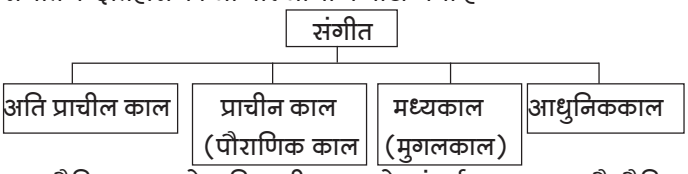

वैदिक काल को अति प्राचीन काल के अंतर्गत माना जाता है। वैदिक युग का प्रारंभ आर्यों के आगमन से माना जाता है। वास्तव में आर्य लोग भारत के ही मूल निवासी थे और जहां से ये लोग सम्पूर्ण विश्व में फैले। इनका संगीत इतना उत्कृष्ट था कि जहाँ भी गए उस जगह पर अपने संगीत की छाप छोड़ी। वैदिक युग में संगीत अपनी उत्कृष्टता की पराकाष्ठा पर था। सर्वसाधारण जन में संगीत को समझने की शक्ति थी। ब्राह्मण वर्ग के हाथ में मुख्य रूप से संगीत की बागडोर थी। समाज भी संगीतज्ञों को उच्च दृष्टि से देखता था। उनका समाज में मान-सम्मान था। इस काल में कला एवं चरित्र पर विशेष बल दिया जाता था। इस काल के ग्रंथों में उदात्ता, अनुदात्ता और स्वरित इन तीन स्वरों का उल्लेख मिलता है और इन्हीं तीन स्वरों पर साम गायन होता था। आगे चलकर एक-एक स्वर बढ़ते गये और वैदिक काल में साम गायन सात स्वरों में होने लगा। नाटकों का जन्म इसी युग की देन है। पवित्रता, भक्ति और संगीत इनका घनिष्ठ सम्बन्ध इस काल की प्रमुख विशेषता है।

वैदिक युग से पौराणिक काल में आते-आते संगीत का कोई विशेष विकास नहीं हो पाया। संगीत में जो पवित्रता एवं निर्मलता वैदिक युग में थी, उतनी इस युग में नहीं रही। संगीत चरित्र से हटकर उच्छृंखलता की ओर बढ़ रहा था। फिर भी समाज में संगीतकारों का जीवन संतुलित रूप से चल रहा था। इस युग की मुख्य विशेषता 'संगीत उत्सव (समन)' का चलन था। कंठ संगीत का विकास इस युग में बड़ी तेजी से हुआ। इस काल के पश्चात संगीत ने रामायण तथा महाभारत काल में बहुत तेजी से विकास किया। रामायण काल में संगीत एकबार पुन: अपनी दिव्य आभा को छू रहा था। समाज में सार्वजनिक रूप से संगीत के आयोजन होने लगे। जब श्रीरामचंद्रजी चौदह वर्ष का वनवास समाप्त कर अयोध्या लौटे तो वीणा तथा मृदंग वाद्य यंत्रों से उनका स्वागत किया गया और नारियों ने मंगलगान गाते हुए श्रीरामचंद्रजी का स्वागत किया। शिक्षा एवं विद्धता की दृष्टि से तो रावण सर्वगुणसम्पन्न

* सहायक प्राध्यापक (कंठ संगीत)शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

था ही, वह शौर्य और शास्त्र ज्ञान के साथ-साथ महान संगीतज्ञ भी था। महाभारत काल में भगवान श्रीकृष्ण संगीत के महान पंडित हुए, उनकी बांसुरी की मधुर स्वरलहरियाँ आज भी गुंजायमान है, उनका संगीत पर पूर्ण अधिकार था। इस काल में अनेक प्रकार के नृत्यों का जन्म हुआ। संगीत का उच्चतम रूप इस काल में दिखाई दिया।

लगभग डेढ़-दो हजार वर्षों तक वैदिक संस्कृति एवं धर्म का बोलबाला रहा, किन्तु ब्राह्मणों के कठिन कर्मकाण्ड एवं बँधनों के कारण उनका विरोध होने लगा और जैन युग एवं बौद्ध युग का प्रादुर्भाव हुआ। जैन युग में संगीत पर से ब्राह्मणों का एकाधिकार समाप्त हो गया। इस युग में संगीत के पाँच आधार स्तम्भ निर्मित हुए जो 'पंचशील' के नाम से मशहूर हुए। प्रतियोगिताओं का चलन इस युग की विशेषता है। बौद्धकाल में संगीत का उपयोग मानव मात्र की भलाई एवं कल्याण के लिये होता था। इस काल में लोक संगीत का चलन कम होता गया और शास्त्रीय संगीत पुन: अपनी लोकप्रियता बरकरार रखने में सफल रहा। बौद्ध युग में नारियों ने संगीत में बड़ा योगदान दिया। बौद्ध युग संगीत का समृद्धशाली युग माना जाता है।'थेरी गाथा'का संग्रह, जो कि बौद्ध भिक्षुणियों का भाव प्रणव गीतों का संग्रह है, इस काल की महत्वपूर्ण घटना है।

इसके पश्चात का काल, मौर्य काल माना जाता है, जिसमें लोकसंगीत का अधिक प्रचार हुआ संगीत का आध्यात्मिक सौन्दर्य पुन: उभरने लगा और संगीतज्ञों का समाज में पुन: आदर स्थापित हुआ। संगीत का स्वर्णयुग गुप्तकाल माना जाता है। समुद्रगुप्त स्वयं महान संगीतज्ञ था। इस काल में शास्त्रीय संगीत अधिक प्रचारित हुआ। सितार की उत्पत्ति इसी काल में हुई। इस काल में अनेक महान कवि एवं संगीतज्ञ हुए, जिसमें महान नाटककार कालिदास एवं कवि भास के नाम उल्लेखनीय हैं। इस काल में साधारण जनता का संगीत, साहित्य तथा कला को समझने का स्तर उच्चकोटि का था। इस काल में देश धन-धान्य से परिपूर्ण था, इसलिये इस युग में संगीत, साहित्य तथा कला की भरपूर उन्नति हुई, जिससे गुप्तकाल स्वर्णयुग माना जाता है। सन् 1525 ई. से मुगल काल का प्रारंभ माना जाता है। मुगल शासकों ने संगीत के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बाबर, जो कि स्वयं एक अच्छा गायक था और संगीत को एक महान शक्ति के रूप में स्वीकार करता था। ख्याल, कव्वाली, गज़ल आदि गायन शैलियाँ इसी काल में प्रचलित हुई। ख्याल गायकी का प्रचार इस काल में ज्यादा हुआ। बाबर का बेटा हूमायूं भी भारतीय संगीत का बड़ा प्रशंसक था। सन् 1556 ई. में राजा मानसिंह ने ध्रुपद गायन शैली का प्रचार किया। बैजू बावरा, नायक बक्सू जैसे गायक इनके राज दरबार में थे। इस काल से भारतीय संगीत की दो धारायें स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी। एक जो उत्तरी भारत में मुस्लिम संस्कृति की पृष्ठभूमि पर थी तो दूसरी दक्षिण प्रान्त में अपने प्राचीन रूप को लिये हुए प्रवाहित हो रही थी। अकबर के दरबार के नौ रत्नों में मियाँ तानसेन जैसा संगीतज्ञ था तो न जाने इस काल में कितने ही प्रसिद्ध कवि और गायकों ने अपने कार्य से संगीत को विकसित किया। कवि सूरदास, मीरा, कबीर, तुलसीदास, पुण्डरिक विट्ठल आदि कई नाम उल्लेखनीय हैं। मुगल काल में ही कई ग्रंथों की रचना, कई वाद्यों का आविष्कार हुआ। जहांगीर, शाहजहां आदि मुगल शासकों ने भी संगीत को आगे बढ़ाने में अपनी महत्ती भूमिका निभाई, किन्तु मुगल काल का एक ही शासक था जो संगीत का कट्टर विरोधी था - औरंगजेब। उसने कभी भारतीय संगीत को समझने का प्रयास ही नहीं किया। फिर भी संगीत के क्षेत्र में अनेक कार्य इस काल में हुए। मुहम्मद शाह रंगीले मुगल वंश के शासक थे, जो अत्यन्त संगीत प्रेमी थे। इनके दरबार में सदारंग, अदारंग नामक ख्याल रचियताओं ने ख्याल निर्माण में उल्लेखनीय कार्य किया। इसी काल में टप्पा गायन शैली का आविष्कार शौरी मियाँ ने किया। ठुमरी, सुगम संगीत आदि गायन शैलियाँ भी पल्लवित होने लगी। मुगल वंश के अंतिम शासक के रूप में बहादुरशाह जफर संगीत प्रेमी था, वह स्वयं गीतों की रचना करता था तथा संगीतज्ञों, कवियों तथा विद्धानों का आदर करता था। बहादुरशाह जफर की मौत के बाद संगीत का संरक्षण करने वाला कोई नहीं था।

सन् 1850 ई. से आधुनिक काल माना जाता है, जब अंग्रेजों का आगमन भारत में हुआ। अंग्रेज भारतीय संगीत को हेय दृष्टि से देखते थे, जिसके कारण संगीत को कोई विशेष आश्रय नहीं मिला, लेकिन फिर भी कई अच्छे ग्रंथों की रचना उन्नीसवी शताब्दी में हुई। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने बंगाली संगीत में बड़ा परिवर्तन कर रवीन्द्र संगीत की नींव रखी। इस काल की महत्वपूर्ण घटना घराना प्रथा का विकास था, जिसकी नींव राजपूत काल में ही पड़ चुकी थी। ब्रिटिशकाल की महत्वपूर्ण घटना है कि संगीत के क्षेत्र में दो महान संगीतज्ञों ने जन्म लिया - पं. विष्णुनारायण भातखण्डे और पं. विष्णुदिगंबर पलुस्कार। इन दोनों विभूतियों ने संगीत के इतिहास में ऐसे प्रशस्त कार्य किये जिससे संगीत जगत हमेशा इनका ऋणी रहेगा। संगीत सम्मेलनों का आयोजन, स्वरलिपि निर्माण, संस्थागत शिक्षण प्रणाली आदि ऐसे कई कार्य इन दोनों गुणीजनों के द्वारा किये गए, जिससे आज की वर्तमान पीढ़ी संगीत की मधुरता, गहराई को समझने में सक्षम है।

संगीत का मुख्य गुण है - आनंद की अनुभूति, और यही आनंद नाद के कारण उत्पन्न होता है, इसलिये कहा गया है - ऊँ नाद ब्रह्माय विग्महे, ओंकाराय धीमहि तन्नोश्रुति: प्रचोदयात्' (नाद ब्रह्मगायत्री मंत्र)

संगीत को सीखना ही नाद को समझना है और जो व्यक्ति अपना सर्वस्व भूलकर नाद से तादात्म्य स्थापित करता है, वास्तविक रूप से वही नाद का शाश्वत अर्थ समझ पाता है। नाद की उपासना एवं सेवा भारतीय संस्कृति की प्राचीन काल से चली आ रही अलौकिक परम्परा है। मानव जीवन के तीन शाश्वत मूल्य - सत्यम्, शिवम् तथा सुन्दरम्, ये हमारी संस्कृति के आधार स्तम्भ हैं। आदिकाल से ही मानव आनंद तथा शांति की खोज करता आया है और प्रकृति के सौन्दर्य से प्रभावित होता रहा है। स्वयं के विकास के साथ-साथ मानव की कल्पना सृष्टि से अपना तादात्म्य स्थापित करती रही है और प्रकृति को और अधिक सुंदर रूप देने की चेष्टा करती रही है। इन्हीं चेष्टाओं से ललितकलाओं का जन्म हुआ।

कला के अंतर्गत कला की अनेक शैलियाँ, तकनीक, कौशल, काव्यशास्त्र तथा नाट्य को समाहित किया गया। विज्ञान और सौन्दर्य की शास्त्रीय विधाओं को भी इसके अंतर्गत लिया गया। इस प्रकार कलायें मानव जीवन से हर प्रकार से जुड़ी हुई है। आदिमानव भी अपने उद्‌गारों, अपनी खुशियों आदि को झूमकर, नाचकर अथवा ताली बजाकर व्यक्त करता था। संगीत का भी सम्बन्ध गायन, वादन तथा नृत्य से है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक इसके विकसित स्वरूप को देखा जा सकता है। संगीत का प्रयोग मुख्यत: जनमानस के मनोरंजन के लिये होता है, ऐसी सोच समाज में व्याप्त है, किन्तु संगीत के द्वारा मनुष्य न केवल अपने भावों को उचित प्रकार से व्यक्त कर सकता है, बल्कि ईश्वर को साधने का सशक्त माध्यम भी बना सकता है, क्योंकि संगीत केवल स्मृति में रहने वाला तत्व है। नवीनता एवं रंजकता संगीत का धर्म है। नित्य नूतन आविष्कारों को अंगीकार करने के पश्चात भी भारतीय संगीत ने अपनी गौरवशाली परम्परा की श्रृंखला को नहीं तोड़ा है। प्राचीनकाल से आज तक संगीत की कड़ियाँ एक-दूसरे से जुड़ी

हुई है। संगीत मानव जाति को एक विशेष प्रकाशमयी दिशा की ओर ले जाने, आध्यात्मिक प्रवृत्ति को जाग्रत करने, भौतिक तत्वों से दूर ले जाकर मोक्ष प्राप्ति के मार्ग की ओर ले जाने का कार्य करता है।

अत: आज भी संगीत का महत्व बरकरार है। इस महत्वपूर्ण धरोहर को कायम रखने, संरक्षित रखने का उत्तरदायित्व हम सभी का है, जिससे पुष्प रूपी संगीत, समाज में पुष्पित होता रहे, पल्लवित होता रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उस्ताद ए रहमान खां - संगीत ज्ञान दर्पण, शिल्पी प्रकाशन, कपूरथला, पंजाब (2014)
2. राजश्री - सांस्कृतिक शिक्षा के उद्विकास में संगीत का योगदान, राधा पब्लिकेशन, नईदिल्ली (2003)
3. डॉ. जौहरी सीमा - सांगीतिक निबंधमाला, पीयूष प्रकाशन, दिल्ली (2001)
4. डॉ. जोशी उमेश - भारतीय संगीत का इतिहास, संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. संगीत कला विहार, मासिक पत्रिका, मई-2010
6. संगीत कला विहार, मासिक पत्रिका, अक्टूबर-2010
7. संगीत कला विहार, मासिक पत्रिका, अक्टूबर-2013
8. संगीत कला विहार, मासिक पत्रिका, नवम्बर-2013
9. संगीत कला विहार, मासिक पत्रिका, फरवरी-2014

****

संत ज्ञानेश्वर जी के अभंग (एक सांगीतिक प्रदेय)

डॉ. श्रीपाद आरोणकर *

शोध सारांश – संत ज्ञानेश्वर महाराज का जन्म शक् संवत 1197 को हुआ। संत ज्ञानेश्वर महाराष्ट्र के अद्भुत संत हैं। लोकभाषा के रूप में आपने मराठी में अभंगों का सृजन किया। सहज एवं सरल लोक भाषा में संवाद स्थापित करने के कारण अभंग संगीत जगत में भी महत्वपूर्ण स्थान पाते हैं। विश्व कल्याण की भावना संत ज्ञानेश्वर में निहीत थी।

शब्द कुंजी – संत ज्ञानेश्वर, निर्गुण, सगुण, अभंग, लोकभाषा, विश्वकल्याण, आध्यात्म ।

प्रस्तावना – संत ज्ञानेश्वर सर्वश्रेष्ठ साधक तो थे ही परंतु ऐसे अद्भुत संतपुरूष थे जिनके प्रत्येक शब्द में आत्मानुभूति दिख पड़ती है। ज्ञानी भक्त की योग्यता को परिभाषित करने वाला उनका व्यवहार व जनसामान्य को समझ में आने वाली भाषा में उनका संवाद अभंग के रूप में व्यक्त होता है। अभंग का अर्थ ही है जो भंग न हो। अर्थात् ऐसा आध्यात्मिक संवाद जिसमें ईष्वर के निर्गुण निराकार रूप को, उसकी शक्ति को, उसकी भक्ति को, जन सामान्य तक निर्बाध रूप से पहुंचाया जा सके। संत नामदेव जी के समकालीन ज्ञानेश्वर महाराज लोगों से संवाद करते थे वे अभंग के रूप में हमें प्राप्त होते हैं। संत ज्ञानेश्वर के ग्रंथ ज्ञानेश्वरी में काव्य और आध्यात्म का अद्भुत संगम दिखाई देता है।

निर्गुण निराकार ब्रह्म सगुण साकार रूप में संत ज्ञानेश्वर के अभंग में अवतरित होते हैं। परमेश्वर से संवाद साधते समय अभंग अपने आप उनके मुख से प्रगट होते हैं। भक्तिकाल के अन्य भक्ति कवियों की तरह ही संत ज्ञानेश्वर के अभंग में सामाजिक सामंजस्य की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। संपूर्ण विश्व की आत्मिक उन्नति के लिए संत ज्ञानेश्वर ने अक्षर ब्रह्म का सहारा लिया, जो नाद ब्रह्म की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुति के साथ अभंग के रूप में आज भी वैश्विक परिदृश्य में अपना स्थान रखता है।

सांगीतिक प्रदेय – अभंग –लोकभाषा में जनसामान्य से सांगीतिक संवाद लोकभाषा में जन सामान्य से सांगीति संवाद को हम अभंग कह सकते हैं। अभंग में विश्व कल्याण के लिए सहज सरल धुन उगम रागों के माध्यम से अपने भाव ज्ञानेश्वर महाराज व्यक्त करते हैं।

लोक संगीत में भी हम पाते हैं, विषय वस्तु जन सामान्य से जुड़ी होती हैं। अभंग में जनसामान्य का मार्गदर्शन किया गया है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए अपने कर्म में लगे होने के बावजूद भगवतनाम संकीर्तन को किस प्रकार हमें आत्मसात करना है, संत ज्ञानेश्वर महाराज ने सरल शब्दों में बताया है।

1. लोकधुनों के माध्यम से अभंग की प्रस्तुति होती है।
2. भैरवी, काफी, खमाज, पीलू, भूप, आदि रागों में हमें अभंग प्राप्त होते हैं।
3. वर्तमान महान संगीतज्ञों ने भी महाराष्ट्र की भक्ति परंपरा में संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, कें अभंगों को अपनी प्रस्तुतियों में पर्याप्त स्थान दिया है।
4. वारकरी सम्प्रदाय जिनके आराध्य विट्ठल भगवान हैं उसमें भी अभंग एक आवश्यक अंग पाया गया है।
5. लोकसंगीत में रचनायें सामान्यत: 4 या 5 स्वरों वाले रागों में पायी जाती हैं। अभंग लोकसंगीत की इस शर्त को भी पूरा करता है।
6. बंदिशों के सदृश विषयवस्तु अभंग में रहती है। अभंग में प्रकृति के प्रति प्रेम, भक्तिपरक रचनायें, अध्यात्मिक तत्व ज्ञान को सहज एवं सरल रूप से प्रस्तुत किया जाता है।
7. अभंग सामान्यत: कहरवा, धुमाली आदि तालों में गाये जाते हैं।
8. संगीतज्ञों ने धुन उगम रागों के अलावा, वर्तमान प्रचलित रोगों में भी अभंग को लोकप्रिय किया है।
9. महाराष्ट्र की प्रचलित नाट्य विद्या में भी अभंगों का पर्याप्त रूप से उपयोग होता है।
10. अभंग शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत एवं वर्तमान सुगम संगीत में अपने संवाद कौशल के कारण समान रूप से लोकप्रिय है।

अभंग 1

तुज सगुण म्हणों कीं निर्गुण रें।
सगुण निर्गुण एकु गोविंदु रे।।
अनुमाने ना अनुमाने ना।
श्रुति नेति नेति म्हणती गोविंदु रे।।
तुज स्थूळ म्हणों कीं सूक्ष्म रे।
स्थूळसूक्ष्म एकु गोविंदु रे।।
तुज आकारू म्हणों कीं निराकारू रे।
आकारू निराकारू एकु गोविंदु रे।।
तुज दृश्य म्हणों की अदृश्य रे।
दृश्यअदृश्य एकु गोविंदु रे।।
निवृत्तिप्रसादें ज्ञानदेव बोले।
बापरखुमादेविवरू विठ्ठलु रे।।

अभंग 2

देवाचिया द्वारीं उभा क्षणभरी।
तेणें मुक्ति चारी साधियेलया।।
हरि मुखें म्हणा हरि मुखें म्हणा।
पुण्याची गणना कोण करी।।
असोनी संसारीं जिव्हे वेगु करी।

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

वेदशास्त्र उभारी बाह्या सदा।।
ज्ञानदेव म्हणे व्यासाचिये खुणें।
ढ्हारकेचे राणे पांडवां घरीं।।

अभंग 3

योग याग विधी येणें नव्हे सिद्धी।
वांयाचि उपाधी दंभ धर्म।।
भावेंवीण देव न कळे नि:संदेह।
गुरूवीण अनुभव कैसा कळे।।
तपेंवीण दैवत दिधल्यावीण प्राप्त।
गुजेंवीण हित कोण सांगे।।
ज्ञानदेव सांगे दृष्टांताची मात।
साधूचे संगती तरूणोपाय।।

निष्कर्ष – संत ज्ञानेश्वर महाराज शब्द ब्रह्म के द्वारा नादब्रह्म का आवाह्न करते हैं। आध्यात्म को न केवल भक्ति के माध्यम से अपितुआत्मानुभूति के माध्यम से स्वीकार करने का मार्ग सुझाते हैं।

शब्द लय युक्त 8-8 मात्राओं में विभक्त हैं एवं सहज सरल अभंगों के माध्यम से विश्वकल्याण की भावना से ओतप्रोत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री ज्ञानेश्वरांचे सार्थ अभंग शतक, वामन देशपाण्डे, मुंबई धार्मिक प्रकाशन।
2. श्री ज्ञानेश्वर माउली, दीपक भागवत, गीता प्रेस गोरखपुर।
3. पत्र पत्रिकायें।

****

Shift From Objective To Subjective Factors For Improving Education In Government Schools

Dr. Anil Kumar Jain * Gaurav Jain **

Introduction - Indian education system has come a long way in the 68 years of independence with multiple achievements like near universal primary enrolment and extension of the education system to all children between 6-14 years to its name. Yet India held the second to last position in Program for International Student Assessment (PISA), only beating Kyrgyzstan in 2009. India did not even participate in the assessment after 2009 citing that the criterion was biased against Indian students. This inequality between influx of resources and outcomes in terms of quality of education and results is staggering.

Government's focus over the past years was clearly seen in the Right to Education Act (RTE) of 2009. The Act described the objective factors that the government schools are needed to fulfil such as No. of teachers, playground and working toilets. These factors are crucial to estimate the facilities provided to students and have been the focus area of government for decades. In 2014 alone, Government ordered 19166 new schools to be built and 19.84 lakhs vacancies to be filled, which are in line with previous trend of building school infrastructure. These targets are easy to achieve, count and show as a proof of the work done, unlike quality of education. Results were a good way to account for the generated outcome but with No Detention Policy, you can't get a feedback in terms of the results before eighth standard. Surveys and estimation by independent agencies and NGOs like Pratham, provide us a chance to see the result this huge investment in school infrastructure has provided. According to ASER 2014 report, less than half of class V students were able to read a class II text and only a quarter of the class V students can do a two digit subtraction.

India's growth has been fuelled by our skilled working class and with Hon. Prime Minister Narendra Modi's 'Make In India' campaign, we will be in need of more and more skilled labour to fuel and sustain India's growth. ASER 2014 shows a decade long trend of education indicators in India, which point to increase in no of students clearing eighth standard but a sharp decline in the quality which is also reflected in the passing rate of ninth standard. It is crucial to take a step back and understand what all factors constitute to the quality of education outcome and focus our efforts and resources on the right spot in order to get the maximum results and maybe enable us to sustain our economic growth.

Background - The Indian education policy started with National Policy on Education (NPE) in 1968, followed by second National Policy on Education in 1986 and modification to the second policy in 1992. The first policy was a foundation stone and was focused more on how to create a uniform education system in India. The first attempt on outlining measures to improve the standard of education in India was done in the second NPE with what was called as the "child centric approach". The second NPE also saw the launch of 'Operation blackboard', a nationwide mission to equip all of the government schools with a blackboard. This was followed by multiple projects by the Government of India in the later years to increase the school infrastructure by expanding the no of schools, teachers and facilities available in those schools.

The efforts by the government showed an result that was reflected in the literacy rate and enrolment rate, which are the only two consistently available data after the independence. The following graph shows how the literacy rate increased in between 1951 to 2011. The rise can be attributed to an independent state which made education accessible to people and the governments initiatives.
(**Graph see in the last page)**

These infrastructure and facilities based projects got an added impetus with the Right to Education Act and we have seen a rapid increase in no of schools in order to reach the mark of one school in every 3 km radius. This has been accompanied by a proportionate increase of teachers, as a school needs at least two teachers even if the enrolment in the school is below 10 students. The following table describes the recent development work by the government.

Item	Total Sanctions in 2014
Primary school opening	1135
Upper Primary school opening	220
Construction of Primary Schools	1909
Construction of Upper primary schools	152
Construction of Additional classrooms	2844
Construction of Separate Girls toilet	20514

Table 1: School Infrastructure allowances in 2013-2014 under the RTE-SSA
Source: MHRD Annual Report 2014

*Asst. Professor (Political Science) Govt. Girls College, Ratlam (M.P.) INDIA
** Undergraduate Student, Indian Institute of Technology, Kharagpur (West Bengal) INDIA

Since the 1990s, we have developed better indicators of education which not only report the literacy rate but also give us an estimate of the quality or standard of education. Some of the indicators include National Survey of Education, National learning achievement survey by NCERT and independent surveys like ASER. These surveys and reports have provided us a better peek into the outcome of education system and in turn improved the feedback system. The following figure shows some of the parameters that the ASER uses over the last decade. (**Graph see in the last page)**

The above graph clearly shows the decline in standards in the past few years. Though the other national surveys might not exactly match the trend line but they do tally with the numbers in the more recent surveys. This brings us to a very crucial question, what went wrong which started the decline and we were unable to continue the growth as we have seen since independence.

Effect on Results - Analysing the factors that affect the classroom education is a pre-requisite to understanding the how our education policy has played in the past few years. In order to understand these factors better, we have segmented them into two major categories: Objective and subjective factors.

Objective factors are those factors which are easier to see, and report like the no. of teachers in a school, toilets in the school or no. of schools in a district for that matter. These factors are clear, when reporting and there is no ambiguity and at the same time these factors are limited to what is seen outside the classroom. These factors are usually concerned with the infrastructure and other allied facilities which are an enabling factor for the teachers in the classroom. These can be further classified into direct and indirect factors with reference to impact on educational outcome of students. For example, the no of teachers to pupil ratio in a school has a direct impact on the educational outcome of the students.While on the other hand, we can't see a direct relation between no of toilets in a school to the educational outcome. There is an indirect relation between impact on educational outcome and no of toilets, as it affects the attendance and which in turn affects results.

Subjective factors on the other hand include factors such as pedagogy used in the classroom, children grouping and support of administration of school towards innovation in classroom. As the name suggested these factors are hard to measure, evaluate and enforce on. This has been the reason for a long neglect of these factors because these are not quite helpful while explaining the work done or milestones achieved on a given project. These factors can have a very direct and significant effect on the education of students with factors like the pedagogy used and methods of evaluation affecting the daily learning schedule of the students. Thus these factors can again be segmented on the basis of impact onto the educational outcome of students as direct and in-direct factors. Indirect factors include factors such as scope for professional development of teachers, which in turn dictates the satisfaction of teachers with their job and hence affects the quality of education imparted by them. **(Diagram see in the last page)**

Both subjective and objective factors contribute equally to the quality of education and both require the other in order for the education level to increase. This is equally hard to achieve as government agencies are motivated to focus more on the objective factors as these are easier to report and account for, and thus look better on a progress report than the subjective factors. While at the same time these factors are easier to show to the general public and thus are also supported by the ruling government. This has led to a lot of impetus on the objective factors especially in the past few decades. The first National policy on education on the other hand was more focused on the subjective factors in contrast to the recent policies, striking a balance between both two, with the 3 prong language policy and establishing language as one a key ingredient of bridging the gap between knowledge and literacy.

Our education policy is reminisce of the British education system that Lord Macaulay brought to India and has since then seen little modification. This needs to be modified in order suit the changing dynamics of the country and the world around and in order to ensure that our young generation is able to match pace with the world. The improvement to the education system inadvertently means that there needs to be a focus on subjective factors affecting education while maintaining the importance of objective factors as factors enabling factors for education.

Recent Shift - In recent years we have seen a revival in the government focus on education with the most important being the ongoing drafting of the new policy on education. The recent revival has been accompanied by a shift as well with the Continuous Comprehensive Education (CCE) model and No Detention policy (NDP). These were major steps from the government since the launch of child centric approach in the second NPE, which lead to nationwide change in how classroom education is perceived with shifting focus from cramming in facts to a more practical, activity based approach where the students learn in a stress free environment without the fear to tests. The concept behind the CCE is very innovative and novel but has received a mixed response. Similarly, the No Detention policy which was launched withthe aim to ensure that students at an early age are not forced to study under the pressure of passing, but has received a negative feedback from the teachers.

A recent study by Gaurav (2015), studied the reason behind perception of teachers towards these policies, which indicated a lack of proper framework to support the execution of these policies, limited understanding among the lower officials and exploitation of these policies by the students as the reason for the negative feedback of the teachers. For example, CCE is a very innovative approach as useful for the children as well but can be only implemented where the size of a classroom is near 30. The negative feedback can be considered a small setback in the government's shift towards focusing more on the subjective factors as well.

The government seems to have learned from these setbacks and is working towards improving the currently implementations before coming up with new policies in education.

The Global Shift - The world's top nations in terms of school education Finland, Norway and South Korea all have a few common traits and these include focus on 'innovating IN the classroom rather than ON the classroom'. Almost all of these nations have moved from teaching facts towards teaching how to search for facts and learn in today's world where information is available at your fingertips and more importantly how to analyse the facts presented to you. This shift was accompanied by bringing the innovation in pedagogy from textbooks to classrooms and also making the teaching profession not only one of the most respected profession but also one of the most desirable professions.

India differs from these nations in a lot of ways, from our economic and socio-political background to our ties with the British system of education, but there are a lot of things that we can learn from these nations in terms of how they shifted from their old education system to the current one. Another similar example is our commonwealth friend Australia which received the same education system as we did but has taken great strides in innovating education and most recently with launching a new standard for teachers. Australia has lot of similarity with India as it also has faces the issue of teaching a diverse population with different economic background, though not to an extent that India does. Yet the Australia's new teaching standard can serve as a guideline for the Indian policy makers to see how they tackled the issue of providing teachers freedom to teach at the same time ensuring that they have a benchmark to compare to and improve in the process.

Conclusion - This paper has tried to discuss the shifting focus of national educational policy from objective factors affecting quality of education towards subjective factors. Our national policy started with a very balanced view on education but due to lack of proper enabling factors it saw a shift towards developing the infrastructure and other facilities in nation. This provided a boost to the literacy in India and helped us achieve the status as a powerhouse of skilled man power, but in the past few decades the loss of focus on subjective factors has led to a decline in the quality of education that has been more visible by the availability of better indicators to assess the quality of education over the past decade. The availability of resources, infrastructure and other objective factors now demand for a shift towards more subjective factors as was done by top ranking nations in education indices in the past. The government has taken baby steps towards this direction with the CCE but needs to focus more on aspects like teacher training and their professional development, focusing on bringing new pedagogical practices to the classroom. There is required shift from objective to subjective factors in order to improve the quality of education in India.

References :-

1. National Policy on Education, 1968. (1968). Government of India
2. National Policy on Education, 1986. (1986). Government of India
3. National Policy on Education - modification of 1992. (1992). Government of India
4. 86th Amendment on Education (2002). Government of India
5. Plan of Action 1992 on National Policy on Education of 1986
6. Right to Free and Compulsary Education Act – 2009 (2009). Government of India
7. Annual State of Education (ASER) Rural Report. (2014). Pratham& ASER Centre
8. Do Schools get their Money – PAISA Report. (2014) Accountability India
9. Ministry of Human Resource and Development - Annual Report 2013-14. (2014). Department of School Education and Literacy, Ministry of Human Resource and Development
10. Kingdon, Geeta Gandhi (Oct 2005) Public and Private Schooling: The Indian Experience. Oxford University Presented in conference – "Mobilizing the private Sector for public education" at Harvard University – Oct 5, 2005
11. Cheney , Gretchen R., Ruzzi, Betsy B., &Murlidharan, Kartik, (Nov 2005) A profile of Indian Education System Presented to New Commission on the skills of American Work Force
12. Jain, Gaurav (2015). Education at Government school: Reality check and recommendation – Infrastructure and Teaching Standards. Unpublished manuscript, Rakshak Foundation, New Delhi
13. Maharashtra Government to close down 4000 government schools this year. (April 24, 2015). DNA
14. UNESCO report lauds India's Progress. (April 10, 2015). The Hindu
15. Innovation in Education – How to increase elementary education in a state. (Aug 19, 2012). Business Today

(See Figure 1,2, 3 in next page)

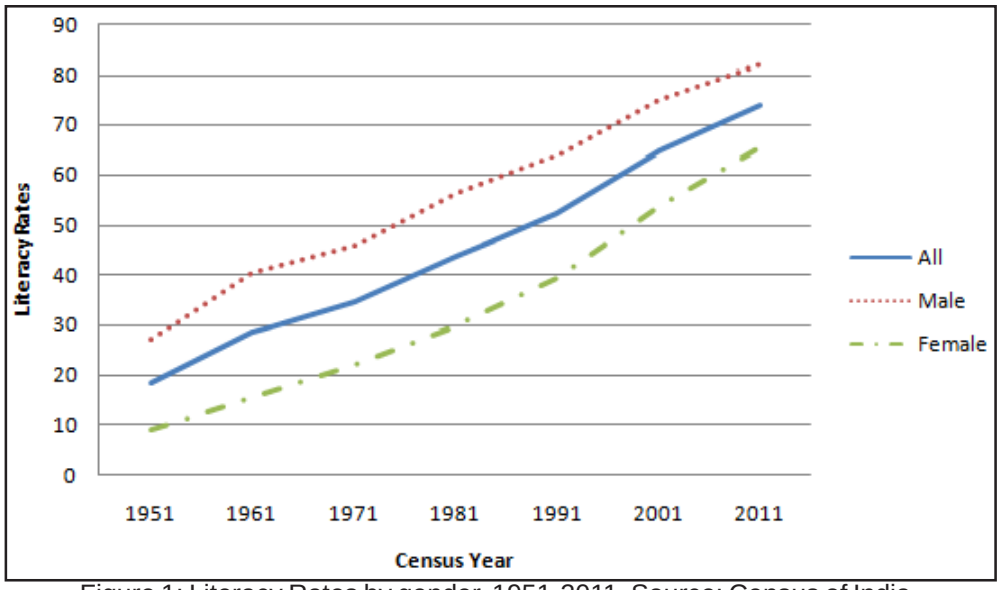

Figure 1: Literacy Rates by gender, 1951-2011. Source: Census of India

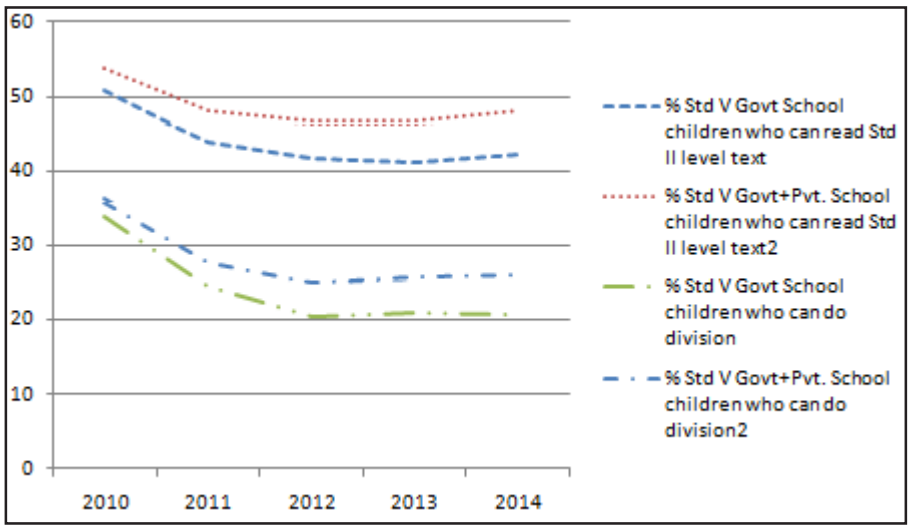

Figure 2: Trend line of educational indicators from 2010-2014, Source: ASER 2014

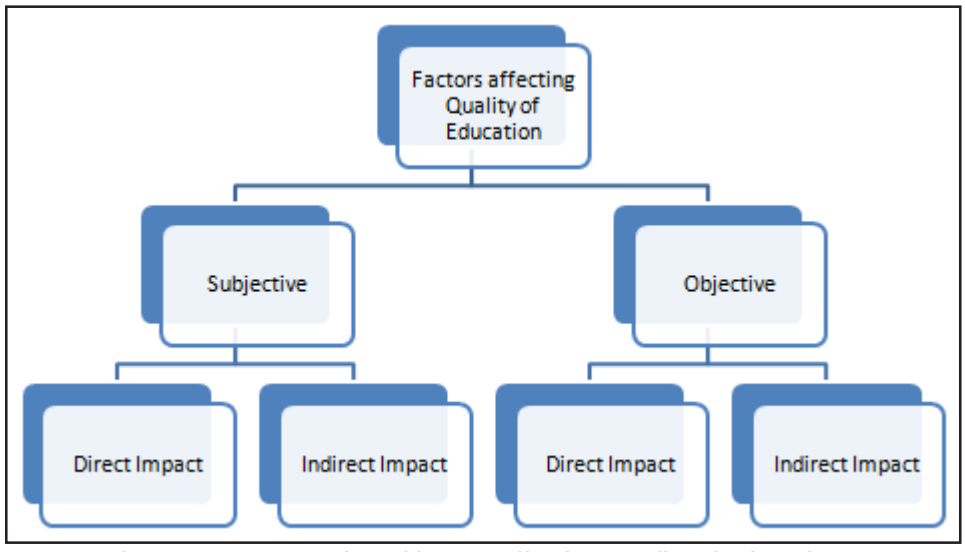

Figure 3: Segmentation of factors affecting Quality of Education

Reading On Text Paper Versus Computer Screen - Effects On Reading Skill

Dr. Sarita Garg*

Abstract - This paper examined differences in reading skills on text paper versus computer screen. The data was collected from 100 students of class/ grade x on the basis of stratified random sampling. The test was developed and standardized by the researcher himself. It is inferred that students who read texts in print scored significantly better on the reading skill test than students who read the texts digitally..Overall the reading skill , Vocabulary and Quiz score in print text is more as compared to computer screen in a secondary school context.

Introduction - When children have a purpose for reading, they find that purpose not only directs their reading towards a goal, but helps to focus their attention. The value of strong student reading skills is in having a purpose for reading. Purposes for reading may come from teacher directed questions, questions from class discussions, brainstorming with fellow students, or from the individual student. Along with a question, it is a good idea for the student to pose predictions of the outcome and problems which need to be solved. These may be generated by the student or the teacher, but the teacher should use these to guide students in the needed direction for the assigned selection. Students should also be organized before they read. It is important that the skills they bring to the printed page help determine what they understand and how much, or how well, they comprehend the subject matter.

Student reading skills can be enhanced by certain strategies before reading ever begins. For example, a student can research a topic before he or she ever reads the text by examining the title or selection that is to be read. They can determine if they have previous knowledge of the subject. This will help in understanding what they plan to read. Discussions in and out of class help students discover what they bring to the reading, what their fellow students bring, as well as shared experiences. By sharing different views, they will gain more insight, which will be helpful the next time they read. There is an ongoing transition of reading from print to screen and the book is challenged by an increasing number of digital reading devices (computers and laptops, e-books, tablet devices, smart phones). To what extent does such a shift affect reading comprehension? This is the topic of the present study.

Student reading skills: Developed and Enhanced - Student reading skills are also developed and enhanced with visual aids. Pictures and other visual material can activate prior knowledge. Using the Internet, for example, to search for pictures related to a title/topic to give a student a visual images of what they are about to read. Asking a teacher for background about the subject matter also helps. Other strategies include doing additional research, becoming familiar with the vocabulary, structuring a proper working environment that is conducive to learning.

Literature Review - There exists a large body of research on the impact and effect of different aspects of digital textuality on reading comprehension. Many studies have been addressing the impact of hypertext structure on cognitive aspects of reading and comprehension.

A recent review (DeStefano & LeFevre, 2007) concluded that hypertext structure tends to increase cognitive demands of decision making and visual processing and this additional cognitive load, in turn, impairs reading comprehension performance.

(Wästlund, Reinikka, Norlander, & Archer, 2005), two experiments compared production (writing) and comprehension performance. The authors found that in both experiments, performance in the computer condition was inferior to that of the paper presentation condition, both in terms of writing and reading comprehension.

Keywords -
- Reading skills.
- Screen reading.
- Print reading.

Research questions- What is it about the reading technologies - in Text and on computer screen - that affected the reading skills?

Objectives -

1. To explore effects of the technological interface on reading skill in a secondary school context.
2. To explore effects of the technological interface on reading pronunciation mistakes in a secondary school context.
3. To explore effects of the technological interface on Vocabulary in a secondary school context.
4. To explore effects of the technological interface on Quiz

***Asst. Professor (Education) Career College, Bhopal (M.P.) INDIA**

score in a secondary school context.

Methodology -

Participants of the Study - 10 tenth class students selected from secondary schools in Bhopal. 50 students selected by purposive method who can read PDF on a computer and 50 students randomly selected for the study.the students were divided into two groups, where the first group read two texts (1400–2000 words) in print, and the other group read the same texts as PDF on a computer screen. In addition pretests in reading pronunciation mistakes, Vocabulary, Quiz score were administered.

R**esults and I**nterpretations.

Hypothesis -1 - There is no significant difference between in reading skill in print text and computer screen in secondary schools students.

Table No. 1 (See in the last page)

It was found from this table that the mean score of reading skill in print (M -46.65) is higher than the (M-40.88) computer screen . This shows that the reading skill in print text is more as compared to reading skill in computer screen. The t-test was calculated to test the significant difference between the mean scores of reading skill in print and computer screen . the computed 't' value 2.33 is more then the critical value 1.98 at .05 level for df = 98. It means (2.33> 1.98) . The results indicate that there is significant difference between in reading skill in print text and computer screen in secondary schools students.Thus hypothesis No.1 is accepted.

Hypothesis -2. - There is no significant difference between in reading pronunciation mistakes in print text and computer screen in secondary schools students.

Table No. 2 (See in the last page)

It was found from this table that the mean score of reading pronunciation mistakes in computer screen (M-48.15) is higher than the (M-43.80) print text. This shows that the reading pronunciation mistakes in computer screen is more as compared to reading pronunciation mistakes in print text . The t-test was calculated to test the significant difference between the mean scores of reading pronunciation mistakes in print text and computer screen the computed 't' value 2.31 is more then the critical value 1.98 at .05 level for df = 98. It means (2.31> 1.98) . The results indicate that There is significant difference between in reading pronunciation mistakes in print text and computer screen in secondary schools students. Thus hypothesis No.2 is rejected.

Hypothesis -3 - There is no significant difference between in Vocabulary in print text and on a computer screen in secondary schools students.

Table No. 3 (See in the last page)

It was found from this table that the mean score of Vocabulary in print (M-55.02) is higher than the (M-48.27) computer screen . This shows that the Vocabulary in print is more as compared to reading skill in computer screen. The t-test was calculated to test the significant difference between the mean scores of reading skill in print and computer screen . the computed 't' value 4.69 is more then the critical value 1.98 at .05 level for df = 98. It means (4.69> 1.98) . There is significant difference between in Vocabulary in print text and on a computer screen in secondary schools students. Thus hypothesis No.3is rejected.

Hypothesis -4 - There is no significant difference between in Quiz score in print text and computer screen in secondary schools students.

Table No. 4 (See in the last page)

It was found from this table that the mean score of Quiz score in print text (M-43.01) is higher than the (M-32.14) computer screen . This shows that the Quiz scores in print text is more as compared to Quiz score in computer screen. The t-test was calculated to test the significant difference between the mean scores of Quiz score in print text and computer screen . the computed 't' value .528 is less then the critical value 1.98 at .05 level for df = 98. It means (.528< 1.98) . There is no significant difference between in Quiz score in print text and computer screen in secondary schools students.Thus hypothesis No.4 is accepted.

Main findings - The following mentioned findings indicate the effectiveness of technological interface on reading skill in a secondary school context.

1. Result revealed that students who read texts in print scored significantly better on the reading skill test than students who read the texts digitally. The results indicate that there is significant difference between in reading skill in print text and computer screen in secondary schools students.
2. Pronunciation mistakes in reading revealed that students who read texts in computer screen scored higher than students who read print texts. The results indicate that There is significant difference between in reading pronunciation mistakes in print text and computer screen in secondary schools students.
3. Result revealed that the Vocabulary in print is more as compared to reading skill in computer screen. There is significant difference between in Vocabulary in print text and on a computer screen in secondary schools students.
4. Result revealed that students who read texts in Quiz score significantly better on the Quiz score test than students who read the texts digitally. The results indicate that There is no significant difference between in Quiz score in print text and computer screen in secondary schools students.

Recommendations -

1. The most important criterion in text selection is probably students' interest and their level of proficiency in English language.
2. Using a variety of attractive teaching strategies in EFL class is also a way to enhance students' interests in reading.
3. Effective reading, depends on individual users' familiarity with the reading tools that they are using and the purpose for which they are reading.

4. This suggests that it will not be long before electronic reading might be a better choice than paper reading for reading for comprehension. Such a claim, of course, depends on the familiarity of readers with the interface of that reading technology and its ability to allow for the reading features listed here.

References :-

1. Beach, R. (1979). The Effects of Between-Drafts Teacher Evaluation Versus Student- Self-
2. Evaluation on High School Students' Revising of Rough Drafts. Researchin the Teaching of English, 13, 111-119.
3. Beaven, M. H. (1977). Individualized goal setting, self-evaluation, and peer evaluation. In C.R. Cooper and L. Odell (Eds.), Evaluating Writing: Describing, Measuring, Judging (pp. 135-156). Urbana, IL: National Council of Teachers of English.
4. Bridwell, L. (1980). Revising Strategies in Twelfth Graduate Students' Transactional Writing. Research in the Teaching of English, 14, 197-222.
6. Brown, J.D. (1994). Research methods for Applied Linguistics: Scope, characteristics, and standards. In A. Davies & C. Elder (Eds.); The handbook of applied linguistics (pp. 476-500). Oxford: Blackwell.

Table No. 1

Mean, SD's, standard error, degrees of freedom, calculated t values, table t values and Significance

Variable	Group	No. of	Mean cases	S.D	Degrees of Freedom (D.F.)	Calculated t- values	Table- t values	Significance (.05level)
Reading skill	print	50 text.	46.65	16.42	98	2.33	1.98	Significant
	computer screen	50	40.88	12.75				

Table No. 2

Mean, SD's, standard error, degrees of freedom, calculated t values, table t values and Significance

Variable	Group	No. of	Mean cases	S.D	Degrees of Freedom (D.F.)	Calculated t- values	Table- t values	Significance (.05level)
reading pronunc-	print text.	50	43.80	14.92	98	2.31	1.98	Significant
iation mistakes	computer screen	50	48.15	16.78				

Table No. 3

Mean, SD's, standard error, degrees of freedom, calculated t values, table t values and Significance

Variable	Group	No. of	Mean cases	S.D	Degrees of Freedom (D.F.)	Calculated t- values	Table- t values	Significance (.05level)
Vocabulary	print text.	50	55.02	4.25	98	4.69	1.98	Significant
	computer screen	50	48.37	7.88				

Table No. 4

Mean, SD's, standard error, degrees of freedom, calculated t values, table t values and Significance

Variable	Group	No. of	Mean cases	S.D	Degrees of Freedom (D.F.)	Calculated t- values	Table- t values	Significance (.05level)
Quiz score	print text.	50	43.01	15.60	98	.528	1.98	Notsignificant
	computer screen	50	32.14	19.78				

****

Theoretical Rationale Of Effectiveness In Mathematics Teaching- An Overview

Kumud Dikshit *

Abstract - A significant number of students find it difficult to learn mathematics. The nature of mathematics makes difficult for the students to learn. There is no denying fact that a well articulated method of teaching of mathematics is the need of the hour. The present study deals with the theoretical basis for the effectiveness of mathematics teaching so as to overcome the difficulties faced by the students in the subject of mathematics.

Introduction - Recent years have seen increased research on methodology of teaching as an essential aspect of effective teaching and learning (Bryant and Driscoll, 1998; McMillan, Myran and Workman, 2002; Stiggins, 2002). It is becoming more and more evident that an effective methodology of teaching is an integral component of the teaching and learning process (Gipps, 1990; Black and Wiliam, 1998). It is regarded that effective mathematics teaching requires understanding what students know and need to know. Ampiah,Hart, Nkhata and Nyirenda (2003) contend that a teacher needs to know what children are able to do or not if he/she is to plan effectively.Research has revealed that most students perceive mathematics as a difficult subject, which has no meaning in real life(Countryman, 1992; Sobel & Maletsky, 1999; Van de Walle, 2001). This perception begins to develop at the elementary school where students find the subject very abstract and heavily relying on algorithm, which the students fail to understand. This trend continues up to middle, high school and college. By the time students get to high school they have lost interest in mathematics and they cannot explain some of the operations (Countryman, 1992). According to Countryman (1992), the rules and procedures for school mathematics make little or no sense to many students. They memorize examples, they follow instructions, they do their homework, and they take tests,but they cannot say what their answers mean.

Most research studies in both education and cognitive psychology has reported weaknesses in the way mathematics is taught. The most serious weakness is the psychological assumption about how mathematics is learned, which is based on the "stimulus-response" theory (Althouse, 1994; Cathcart, Pothier, Vance & Bezuk, 2001; Sheffield &Cruikshank, 2000). The "stimulus-response" theory states that learning occurs when a "bond" is established between some stimulus and a person's response to it (Cathcart,Pothier, Vance & Bezuk, 2001). Cathcart et al.(2001) went further to say that, in the above scenario, drill becomes a major component in the instructional process because the more often a correct response is made to stimulus, the more established the bond becomes. Under this theory children are given lengthy and often complex problems, particularly computations with the belief that the exercises will strengthen the mind. Schools and teachers need to realize that great philosophers, psychologists, scientists, mathematicians and many others created knowledge through investigation and experimentation (Baroody & Coslick, 1998;Phillips, 2000). They understood cause and effect through curiosity and investigation. They were free to study nature and phenomenon, as they existed.Teaching mathematics is providing experiences that will enable children to discover relationships and construct meaning.

Concept of teaching - Gage (1987) defined teaching "as any interpersonal influence aimed at changing the ways in which other persons can or will behave."

From this definition it is clear that teaching involves more than one person and the behavioural influence of one person changes the behaviour of others. But it does not specify the persons involved in teaching. A similar stand has been taken by Hough and Duncan (1970). According to them, "teaching is an activity, a unique professional, rational and humane activity, in which one creatively and imaginatively uses himself and his knowledge to promote the learning and welfare of others". In their definition Hough and Duncan has stressed the involvement of more than one person in the teaching act and given teaching the status of a professional, rational and humane activity. Teaching has also been seen by them as a creative and imaginative activity instead of a sheer mechanistic way of influencing human behaviour.

Concept of Effective teaching - It is safe to say that everyone, every parent, grandparent, young person and citizen in our country would like to have the assurance that all our children are being taught and prepared for college, for future work and for life in the Twenty-First Century. In order to achieve this, we need to ensure that those who teach our children incorporate the qualities of effective teaching in their professional lives. In essence, we need every teacher in our schools to be an effective teacher. Effective teaching is a set of behaviours that teachers incorporate into their daily professional practice. These involve a deep understanding

*Research Scholar, Chaudhary Charan Singh University, Meerut (U.P.) INDIA

of the subject matter, learning theory and student differences, planning, classroom instructional strategies, knowing individual students assessment of student understanding and proficiency with learning outcomes. They also include a teacher's ability to reflect, collaborate with colleagues and continue ongoing professional development.

Concept of Effective teacher - Research offered a plethora of definitions of an effective teacher. Clark (1993, p. 10) wrote that, "Obviously, the definition involves someone who can increase student knowledge, but it goes beyond this in defining an effective teacher." Vogt (1984) defined effective teaching to the ability to provide instruction to different students of different abilities while incorporating instructional objectives and assessing the effective learning mode of the students. Collins (1990), while working with the Teacher Assessment Project established five criteria for an effective teacher:

(a) is committed to students and learning.
(b) knows the subject matter.
(c) is responsible for managing students.
(d) can think systematically about their own practice, and
(e) is a member of the learning community (Clark, p. 11).

One distinguishing quality that effective teachers seem to have is, that in all their approaches to planning, designing and implementing instruction and assessment, their focus is on "student learning" to inform their own teaching. Effective teachers know who their students are. They know their students' learning styles, their strengths and their deficits as learners. They are masters of their subject matter…but more importantly, effective teachers are always focused on their students' learning.

A Model of Teachers' Thought and Action - It is beneficial to look at teacher's thought processes (Figure 1) as it could increase our understanding of how and why the process of teaching looks and works as it does. Teacher thought processes complements the larger body of research on teaching effectiveness: this is because how teachers think, act and react determine effective teaching (Clark and Peterson, 1986).Teachers' actions and their observable effects are important as what is inside the teachers' head is translated here. Therefore, this model depicts two important domains that involves the teaching process. Each domain is represented by a circle. The first domain is the teachers' thought processes comprising teachers' interactive thoughts and decisions, teacher planning (preactive and postactive thoughts) and teachers' theories and beliefs. Teachers' thought processes occur "inside teachers' heads" and therefore they are unobservable and they are **measurable**. The second domain contains teachers' actions and their observable effects comprising teachers' classroom behaviour, students' classroom behaviour and student achievement. The phenomena involved in the teacher action domain are more **easily measured** and are more easily subjected to empirical research methods than are the phenomena involved in the teacher thought domain. Thus the variables for this particular research contained in both domains.The relationship between teacher classroom behaviour, student classroom behaviour and student achievement are reciprocal and therefore it is represented as cyclical or circular.This is because teacher behaviour affects student behaviour, which in turn affects student behaviour and ultimately student achievement. Alternatively, students' achievement may cause teachers to behave differently toward the student, which then affects student behaviour and subsequent student achievement.Teacher's interactive thoughts and decisions and their preactive thoughts and decisions are important because they determine teachers' interactive teaching. Teachers think differently during interactive teaching compared to their thinking while not interacting with students.Thus teacher planning includes the thought processes that teachers engaged in prior to and after classroom interaction.

Conclusion - Teaching mathematics is providing experiences that will enable children to discover relationships and construct meaning. Students should be assisted to see the importance of mathematics not by rote learning but by investigating and relating to real-life situations. Giving students dozens and dozens of problems to solve does not help them to understand mathematics, if anything it frustrates them even more. The more they do things they cannot understand or explain, the more they get frustrated. Thus teachers' theories and beliefs represents the rich store of background knowledge teachers have that affects their planning and their interactive thoughts and decisions.

References :-

1. Althouse, R. (1994). Investigating mathematics with young children. New York: Teachers College Press.
2. Ampiah, J.G., Hart, K., Nkhata, B., & Nyirenda, D.M.C.(2003). Teachers' guide to numeracy assessment instrument (DfID-funded research project report).Nottingham: University of Nottingham.
3. Askew, M., Brown, M., Johnson, D., Rhodes, V., & Williams,D. (1997). Effective teachers of numeracy. London:Kings College
4. Baroody, A.J., & Coslick, R.T. (1998). Fostering children's mathematical power: An investigative approach to K-8 mathematics Instruction. Mahwah: Lawrence Erlbaum Associates.
5. Bezuk, N.S. Cathcart, W.G. Vance, J.H., & Pothier, Y. M.(2001). Learning mathematics in elementary and middle schools. Columbus: Merrill Prentice Hall.
6. Black, P., & Wiliam, D. (1998). Inside the black box: Raising standards through classroom assessment, Phi Delta Kappan.Countryman, J. (1992). Writing to learn mathematics:Methods that work. Portsmouth: Heinemann.
7. Gipps, C. (1990) Assessment: A teachers' guide to the issues,London: Hodder and Stoughton.
8. Stiggins, (1998). Classroom assessment for student success.Washington: National Education Association.
9. Vygotsky, L. (1987). Thought and Language. Cambridge, MA:MIT Press.

शिक्षा आयोग एवं शिक्षा - (एक अध्ययन)

डॉ. प्रीति जोशी *

शोध सारांश – शिक्षा का अर्थ है - 'व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास शिक्षा का अर्थ केवल विशेषज्ञ पैदा करना नहीं है, बल्कि नैतिक, सामाजिक और कलात्मक विकास के साथ-साथ विवेकशील भी बनाना है, ताकि व्यक्ति विवेकपूर्ण ढंग से सोचे और उत्तरदायी एवं नैतिकता पूर्ण व्यवहार करें।

हर बच्चा अपनी प्राकृतिक क्षमताओं के साथ इस धरती पर जन्म लेता है, हमारी शिक्षा का उद्देश्य यही होना चाहिए कि हमारे शिक्षक उनकी प्राकृतिक क्षमताओं को पहचान कर उनको संवारे। पिछडे हुए वर्ग को समान अवसर देकर उनकी सामाजिक, आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाऐं। शिक्षा से उत्पादकता में वृद्धि, राष्ट्रीय आय में वृद्धि, सामाजिक राष्ट्रीय भावना का विकास एवं नैतिक मूल्यों में वृद्धि हो, साथ ही शिक्षा से नेतृत्व क्षमता का विकास हो सके। 'ये देश को सही नेतृत्व प्रदान कर उन्नति की ओर अग्रसर कर सके। अत: निश्चित ही भारत में शिक्षा को स्तरीय बनाने के लिए सरकार द्वारा शिक्षा आयोग का गठन किया गया है, जिससे शिक्षा का मूल उद्देश्य स्पष्ट हो सके। अत: दुनिया में साक्षरता का औसत है, 84% यानी भारत से 10% अधिक। मात्र 3% शोध पत्र ही प्रकाशित होते है। अत: शिक्षा पर 'शोध एवं विकास' की नितांत आवश्यकता है।

प्रस्तावना – स्वामी विवेकानंद ने कहा कि 'अपनी इच्छा शक्ति और भावों को नियंत्रित कर लिया जाय और वह लाभदायक बन जायें, तो वह शिक्षा है? शिक्षा एक व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास करती है, शिक्षा का अर्थ केवल विशेषज्ञ पैदा करना नहीं है, बल्कि शिक्षा से नैतिक, सामाजिक और कलात्मक विकास के साथ-साथ विवेकशीलता भी बनती है। हम एक शिक्षित व्यक्ति से यह अपेक्षा करते हैं कि वह विवेकशील होकर उत्तरदायी एवं नैतिकतापूर्ण ढंग से व्यवहार करें। शिक्षा आत्मसात के महत्व और एक व्यक्ति को निर्देशित और परिचित करने का प्रयास हैं।

एक आश्चर्यजनक खोज में यह पाया गया कि 98% माता-पिता लड़कों के लिए तब 89% माता-पिता लड़कियों के लिए शिक्षा को आवश्यक मानते है। इसलिए यह सच्चाई नहीं है कि गरीबी और अज्ञानता स्कूल छोड़ने का और स्कूल में कम अनुपस्थिति का मुख्य कारण हैं।

डॉ. राधाकृष्णन् का कथन है कि 'आयोग' को शिक्षा प्रणाली के सभी स्तरों पर एवं सभी पहलुओं पर सर्वे का सुझाव दिए जाने चाहिए ताकि शिक्षा प्रणाली सभी स्तरों पर समृद्ध हो सके।

गुनार मिर्डल का कथन है - साक्षरता संसार का मार्ग प्रशस्त करती है अन्यथा वे बंद पड़े रहते है, महात्मा गांधी ने लैंगिग समानता की स्थापना के लिये स्त्रियों की शिक्षा को आवश्यक माना।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता 65.46% है जो आबादी के अनुपात में बहुत कम हैं।

अमर्त्य सेन ने कहा है - दुनिया की बड़ी आबादी को शिक्षा से वंचित रखा गया, तो धरती पर अन्याय और असुरक्षा बरकरार रहेगी। पढ़ लिख नहीं पाना और संवाद में असमर्थता दरिद्रता और असुरक्षा की चरम स्थिति है, शिक्षा के प्रसार से इस असुरक्षा को खत्म किया जा सकता है।

शिक्षा का उद्देश्य – शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य है - पिछडे हुए वर्ग को समान अवसर प्रदान करना जिसमें शिक्षा को एक शस्त्र के रूप में लेकर उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाना है।

शिक्षा ऐसी हो जो उनका पूर्णरूपेण रूपान्तरण कर दे अर्थात् सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूपान्तरण, जिससे उनका जीवन खुशहाल बन सके। इसी उद्देश्य को लेकर विभिन्न शिक्षा आयोगो ने शिक्षा के उद्देश्यों के संबंध में सुझाव दिए है।

उत्पादकता को बढ़ाना, जिससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो, क्योंकि भारत साधनों की भूमि हैं, लेकिन शिक्षा के अभाव में इन साधनों का कुशलतम प्रयोग नहीं हो रहा है, अत: शिक्षा उत्पादकता से संबंधित होना चाहिए।

राष्ट्रीय सेवा योजना एवं राष्ट्रीय केडटेकार्पस हर स्कूल एवं महाविद्यालय में छात्रों के लिए अनिवार्य किया जाना चाहिए, क्योकि राष्ट्रीयता की भावना को विकसित किया जाना जरूरी है। चूंकि भारत विभिन्न जाति, धर्म, भाषा और संस्कृति का देश है, अत: 'अनेकता में एकता' का पाठ हर छात्र के मन में विकसित, किया जाना जरूरी है। इसे हम स्कूल एवं महाविद्यालयों में छात्रो को भाषा, साहित्य, दर्शन, धर्म, इतिहास के द्वारा एवं पैटिंग, संगीत, डांस, ड्रामा कैम्प अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पढ़ाया जाना चाहिए, जिससे छात्रों को अपने राष्ट्र की संस्कृति एवं राष्ट्रीय भावना का विकास हो सके एवं भाषायी बाधा दूर हो सके।

शिक्षा का उद्देश्य छात्रो में प्रजातांत्रिक मूल्यों को विकसित किया जाना भी होना चाहिए जिससे जीवन मूल्य भी विकसित हो सके।

विज्ञान की शिक्षा, शिक्षा का एक अहम् हिस्सा है जो उच्च शिक्षा में भी आवश्यक है।

शिक्षा नेतृत्व के लिए आवश्यक है। जिससे कि छात्र इसे समझकर स्कूल नेतृत्व कर देश की प्रगति में अपना सहयोग दे सके।

ढेबर समिति – स्टेन्ले, स्मिथ, बेन तथा एण्डरसन ने ठीक ही लिखा है - 'बालकों को आधुनिक समाज में विश्लेषण करने में कोई सहायता नहीं दी जाती, जिसमें वे रहते है। उन्हें यह नहीं बताया जाता है कि विद्यालय या महाविद्यालय एक सामाजिक संस्था है, तथा इसका उस समाज से घनिष्ठ संबंध है, जो इसका पोषण व नियंत्रण करता हैं।'

माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952-53 के अनुसार - शिक्षा में सुधार करने के लिए हमें पहला कदम विद्यालय एवं समुदाय के संबंधों को फिर से जोड़ने के लिए उठाना चाहिए और उन दोनों के उस घनिष्ठ संबंध को पुन: स्थापित करना चाहिए जो औपचारिक शिक्षा के कारण टूट गया है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

रतनलाल बिहारी के अनुसार – 'किसी समाज की किसी काल में जो नई उपलब्धियॉ रही, उनसे उस समय के समाज को अवगत कराना और तदनुकुल उस समय के समाज की जीवन शैली में परिवर्तन करना आधुनिकीकरण के अन्तर्गत आता है। इस युग में विज्ञान के क्षेत्र में खोजे हुई है, आज हम भारत में आधुनिकीकरण की बात करते है, तो हमारा तात्पर्य भारतीय समाज को विज्ञान के महत्व को स्वीकार करने और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसका उपयोग करने के लिए तैयार करना होता है।'

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की शिक्षा की वास्तविक स्थिति व समस्याओं को जाना। तभी श्री यू.एन. ढेबार की अध्यक्षता में सन् 1960-61 में ढेबर समिति का गठन किया गया। इस समिति ने भारत की राज्य एवं केन्द्र सरकारों से आग्रह किया कि विशेष कार्यक्रम व निर्देशन में अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लोगो में परिवर्तन लाने के लिए इनमें प्राथमिक शिक्षा का विकास किया जाए। इस समिति ने निम्न सुझाव दिए।

1. इनके क्षेत्रों में विशेष विद्यालय स्थापित किए जाए।
2. इन जातियो में नि:शुल्क शिक्षा, मध्यान्ह भोजन, पुस्तके, यूनिफॉर्म के रूप में दी जाय।
3. इन जातियों की शिक्षा व्यवस्था में हस्तलिपि का विशेष ध्यान दिया जाय।
4. शिक्षकों को आवास की विशेष सुविधा प्रदान की जाय।
5. आयोग ने अनुसूचित जाति व जनजाति की बालिकाओं के लिए आवासीय आश्रम स्कूल बनाने का प्रस्ताव किया जो इनकी शिक्षा के लिए उपयोगी साबित हो सके। सन् 1964-66 में कोठारी आयोग बना। इस समय सरकार शिक्षा की स्थिति से पूर्णरूपेण अवगत थी। अत: सरकार ने शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए इस आयोग का गठन किया। लेकिन इन आयोगो की सिफारिशे सफल नहीं हो सकी। जिसका परिणाम यह हुआ कि शिक्षा में जो कमियाँ थी, वह बरकरार रही, इन कमियों को दूर करने के लिए सरकार ने एक नाम आयोग को गठित करने की सलाह दी, जिसमें शिक्षा के सभी स्तर पर विकास हेतु सामान्य सिद्धांन्त और नीतियो को लागू किया जाय और यही कोठारी आयोग के रूप में आया।

इस आयोग में 17 सदस्य थे, जिनमें पांच सदस्य जो शिक्षाविद् थे, वे इंग्लैण्ड, अमेरिका, फ्रांस, जापान एवं रूस से थे।

इस आयोग का मुख्य उद्धेश्य शिक्षा में उत्पादकता को बढ़ाना, आधुनिकीकरण को बढ़ाना सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक गुणों का विकास करना था। जिससे एक स्वस्थ एवं उन्नत समाज देश के सामने हो।

कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) ने कहा कि आधुनिकीकरण इस सीमा तक विकसित, न किया जायें कि वह पश्चिमीकरण हो जाए एवं सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों को नष्ट कर दें। अत: शिक्षा में आधुनिकीकरण एवं सांस्कृतिक का उचित समन्वय होना चाहिए।

भारतीय जनतंत्र को सफल बनाने के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने भारत की राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अनेक उद्धेश्यों की चर्चा की।

भारतीय शिक्षा ऐसी हो, जिससे जनतांत्रिक नागरिकता का विकास हो सके। प्रत्येक बालक में उसकी प्रकृति के अनुसार ऐसे बौद्धिक, सामाजिक तथा नैतिक गुणों का विकास करना आवश्यक है, जिनके आधार पर, वह देश की राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक सभी समस्याओं के विषय में चिंतन कर निर्णय हो सके।

छात्रों में शिक्षा ऐसी हो, जो छात्रों में सहयोग, सहनशीलता, अनुशासन, सामाजिक चेतना जैसे गुणों का विकास किया जाना आवश्यक है।

शिक्षा से श्रम के प्रति श्रद्धा का भाव जागृत करना भी आवश्यक है तथा पाठ्यक्रम में ऐसे व्यवसायों को शामिल किया जाए, जिससे छात्र अपनी रूचि में अनुसार प्रशिक्षण प्राप्त कर अपने जीवन में अपनाना चाहे, जिससे देश प्रगति की ओर अग्रसर हो सके।

समस्याएँ – भारतीय शिक्षा प्रणाली में सबसे गम्भीर समस्या है, 'ड्रॉप आऊट रेट की 50% से अधिक जो बच्चे पहली कक्षा में आते है, वे आठवीं कक्षा तक आते आते स्कूल छोड़ देते हैं।

DISE (District Information System for Education) और National University for Educational Planning and Administration 2008-09 के अनुसार –

प्राथमिक कक्षाओं में कुल 134.4 मिलियन बच्चों ने प्रवेश लिया, लेकिन कक्षा 6 से 8 तक यह गिरकर 53.4 मिलियन रह गए। इसका मुख्य कारण है शिक्षा प्रणाली का आकर्षण न होना। शिक्षा बच्चों को आकर्षित नहीं कर पा रही है।

'प्रोब' रिपोर्ट ने चौंकाने वाले ऑकड़े प्रस्तुत किए है। 52% स्कूलों में खेल के मैदान नहीं है, 89% के पास शौचालय नहीं है। 59% स्कूलो में स्वच्छ पानी पीने की व्यवस्था नहीं है, 26% के पास ब्लेकबोर्ड का अभाव है, 77% स्कूलों में पुस्तकालय ही नहीं है। 58% बच्चे प्राथमिक शिक्षा पूरी होने से पूर्व ही शाला त्याग देते है। मात्र 6% ही महाविद्यालयीन शिक्षा में प्रवेश लेते है।

अत: शिक्षा के लिए आवश्यक साधनों के अभाव में हमारी शिक्षा एक मजाक बनकर रह गई है। शिक्षा प्रणाली में परीक्षाओं में सुधार की भी आवश्यकता है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली आज एक ऐसी चुनौती बन गई है, जिस पर पुन: चिंतन की आवश्यकता है, आज शिक्षण संस्थाओं में जहॉ एक और आधुनिक तकनीकों, सुविधाओं की सिफारिश की गई है, वहीं स्तरहीनता, शिक्षक व छात्रों के बीच वैचारिक असंतुलन, प्रदत्त सुविधाओं का दुरूपयोग एवं वचन की बात भी उठी है।

आज समय है मूल्य परक एवं रोजगार आधारित साथ ही राष्ट्रीयता की भावना एवं नैतिकता से युक्त शिक्षा प्रणाली का।

इस क्रम में विभिन्न शिक्षा आयोगो ने सिफारिश की है, लेकिन विचारणीय मुद्दा यह है कि कितने अंशो में उसका पालन हो रहा है।

देश की 26% आबादी आज भी निरक्षर है, 4% ऐसे है, जिन्होंने स्कूल का मुंह तक नहीं देखा है, भारत की साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ की साक्षरता दर भारत की साक्षरता दर से कम है जो चौकाने वाला हैं।

हमारी शिक्षा व्यवस्था को बेहतर बनाने के लिए जरूरी है, कि शिक्षक बनने के इच्छुक युवाओं के लिए दो वर्षीय डिग्री को बदलकर पांच वर्षीय करना चाहिए। जैसा कि दुनिया के अधिकांश देशो में है, जहाँ शिक्षक एक अच्छी शिक्षा पाते है।

शिक्षकों की योग्यता एवं प्रभाव बढाने के लिए उन्हें बेहतर सहयोग उपलब्ध कराना होगा।

सरकारी स्कूलों की शिक्षा व्यवस्था सुधारने के लिए निवेश करना होगा, सार्वजनिक स्कूलो में बिना अच्छी शिक्षा के दुनिया का कोई लोकतांत्रिक देश तरक्की नहीं कर सकता, क्योंकि अच्छे समाज एवं लोकतंत्र की नींव इन्हीं स्कूलों की शिक्षा व्यवस्था की मजबूती से संभव होती है।

फिनलैण्ड के शिक्षक दुनिया में खास है। वहॉ ऐसे लोगों को शिक्षक हेतु चुना जाता है, जो अपना श्रेष्ठतम बच्चों को देने के लिए तैयार होते है। अत: शिक्षा ऐसी हो जिससे वह शिक्षा का उद्देश्य स्वयं सोच सके।

तालिका – 1

साक्षरता के लिहाज से भारत के दस शीर्ष राज्य

क्र.	राज्यसाक्षरता	प्रतिशत
1.	केरल	93.91
2.	लक्षद्धीप	92.28
3.	मिजोरम	91.58
4.	त्रिपुरा	87.75
5.	गोआ	87.40
6.	दमनदीप	87.07
7.	पांडुचेरी	86.55
8.	चण्डीगढ	86.43
9.	दिल्ली	86.34
10.	अण्डमान निकोबार	86.27
11.	छत्तीसगढ	71.04
12.	मध्यप्रेदश	70.63

पडौसी देशों की साक्षरता –

1.	चीन	95.1
2.	श्रीलंका	90.8
3.	म्यांमार	89.9
4.	नेपाल	55.5
5.	पाकिस्तान	50.2
6.	बांग्लादेश	53.5

Census 2011 के अनुसार

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शिक्ष का सागर – माधवन, जयपुर पब्लिकेशन।
2. योजना – अक्टूबर 2015
3. स्वराज्य की दिशा – डॉ. भीमराव अम्बेडकर, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ एकेडमी।
4. जनांकिकी – बी.सी. सिन्हा।
5. आर्थिक वृद्धि एवं विकास – वी.सी. सिन्हा।
6. वेब दुनिया।

****

विद्यार्थी जीवन और रैगिंग

पूजा नागर *

प्रस्तावना – प्रत्येक सभ्य समाज के विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। समाज के सामाजिक आर्थिक, नैतिक विकास का माध्यम शिक्षा होती है। स्वस्थ समाज के निर्माण से स्वस्थ राजनीति की एक स्वस्थ परम्परा निर्मित होती है। जिसके परिणामस्वरूप एक कुशल राजनीति, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान स्थापित करती है।

अत: शिक्षा के प्रसार एवं विकास हेतु शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना की जाती है। शैक्षणिक संस्थानों में एक आदर्श वातावरण स्थापित करना आवश्यक है। इस आदर्शवादी शैक्षणिक संस्थान के विकास की संकल्पना के परे उच्च शिक्षा संस्थानों में एक शैक्षणिक जीवन की बुराई संत्रापित करती है जिसे रैगिंग कहते हैं। रैगिंग एक ऐसी सामाजिक बुराई है जो समाज के युवा वर्ग को शिक्षा के क्षेत्र में भय , हिंसा एवं विचलन कारित करती है। साधारणत: यह घटना देखने में आती है की महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में वरिष्ठ छात्रों द्धार कनिष्ठ छात्रों को मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। इन घटनाओं से संत्रापित कई छात्र छात्राओं के भविष्य की परिणीति न केवल उनके व्यवसायिक व सामाजिक जीवन को प्रभावित करके होती है वरन उनके जीवन के साथ जुड़े सुनहरे भविष्य के सपने का अंत आत्महत्या के साथ होता है। रैगिंग जैसी सामाजिक बुराई के विरूद्ध कई मामले राज्य सरकार एवं न्यायपालिका के संज्ञान में आए हैं। रैगिंग से संबंधित मामलों में न्यायपालिका ने कठोर रूख दिखाते हुए शैक्षणिक संस्थाओं में दिशा निर्देश जारी किए गए। यह कार्य न सिर्फ न्यायपालिका के न्यानिर्णयन तक सीमित है वरन राज्य एवं केन्द्र सरकार भी इसके समाधान हेतु कठोर दंडात्मक कानून बनाने के लिए बाध्य है।

उपरोक्त समस्या के प्रति संवेदना रखते हुए शोधार्थी इस विषय पर शोध करने के लिए प्रेरित हुआ। शोधकर्ता का यह मानना है कि विधि समाज के विभिन्न पहलुओं को नियंत्रित एवं संचालित करने की प्रभावशाली व्यवस्था है। इसी प्रकार रैगिंग जैसी समस्या को विधिक उपचार से निषिद्ध किया जा सकता है।

चूंकि यह एक ऐसी बुराई है जिसमें सामाजिक पहलू भी संलिप्त है। इसलिए सामाजिक उपचार भी, समस्या के समाधान का सशक्त माध्यम है।

रैगिंग का अर्थ एवं प्रकृति – विश्वविद्यालयों में सत्र के आरम्भ में नए विद्यार्थियों के प्रवेश के साथ, वरिष्ठ विद्यार्थियों के द्धारा नये सत्र में विद्यार्थियों का स्वागत किया जाता है। स्वागत के अन्तर्गत विद्यार्थियों का सामान्य परिचय सम्मिलित होता है जो कि विद्यार्थियों का, महाविद्यालय के साथ समायोजन का प्रथम चरण होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि रैगिंग नए विद्यार्थियों के परिचय की एक सामान्य प्रक्रिया है।

चाहे कोई प्रक्रिया या विचारधारा, निर्जीव व सजीव वस्तु अथवा प्राणी क्यों न हो समय के प्रभाव से अछूती नहीं रहती है। अपने जन्म से लेकर परिपक्वता तक की अवस्थाओं में इसका विकास हुआ है। रैगिंग भी उनमें से एक प्रक्रिया है। परिवर्तनशीलता, प्रकृति का सामान्य नियम है, इसी तरह प्रत्येक वस्तु अथवा प्राणी जो कि इस प्रकृति में अस्तित्ववान है परिवर्तित होते हैं न सिर्फ वे परिवर्तित होते हैं वरन दूसरों को प्रभावित करते भी है। जो कि स्वीकार्य भी है किन्तु महत्वपूर्ण यह है कि परिवर्तनशीलता , देश समाज व मानवता के लिए कितनी उपयोगी है एवं वह इसको किस रूप में प्रभावित कर रही है। अत: यह परिवर्तित रूप विकृत भी हो सकता है एवं अपने सुधार की प्रक्रिया में अनवरत भी हो सकता है।

रैगिंग जोकि परिचय की एक सामान्य प्रक्रिया है वह भी समय के साथ-साथ परिवर्तित हुई है किन्तु परिवर्तनशीलता की यह कड़ी गलत दिशा में जाकर गतिमान हुई एवं गंतव्यस्थल पर जाकर एक सामाजिक बुराई के रूप में स्थापित हुई।

रैगिंग परिचय की एक सामान्य प्रक्रिया जो कि स्वागत की एक कड़ी है वर्तमान में सिर्फ स्वागत का एक दिखावा मात्र है। वास्तविक धरातल पर वह एक शरारती प्रक्रिया रह गयी है जिसकी शरारत की कोई सीमा नहीं है जो कि अमानवीयता की सीमा को तोड़कर किसी भी रूप में की जाती है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थी नये विद्यार्थियों को रैगिंग के माध्यम से प्रताड़ित करते हैं व उनके सामने इस तरह के लक्ष्य रखे जाते हैं। जिनको पूरा किया जाना पीड़ादायक होता है किन्तु रैगिंग करवाने वाले को हर्ष प्रदान करता है।

रैगिंग की प्रकृति– भारतीय शैक्षणिक संस्थानों में रैगिंग की जड़े एक परम्परा के तौर पर बहुत गहरी नहीं है। रैगिंग भारतीय शैक्षणिक संस्थाओं की देन न होकर पश्चिम की देन है। यूरोपियन विश्वविद्यालयों में रैगिग की शुरूआत परिहास के माध्यम से हुई थी जो विद्यार्थियों के द्धारा किये जाते थे किन्तु धीरे-धीरे इस परम्परा का विस्तार पूरे विश्व में हुआ। भारत में यह ब्रिटिश परम्परा की देन है। भारत स्वयं को इस अमानवीय कृत्य से मुक्त नहीं करा पाया। अत: रैगिंग का सबसे विकृत रूप भारत में पाया जाता है।

यह कहा जाता है कि मनुष्य की कल्पना शक्ति सीमाओं से परे होती है यह सृजनात्मक भी हो सकती है एवं विध्वंसकारी भी। जब यह सृजनात्मक होती है तब नये समाज का निर्माण करती है एवं इतिहास में अपना गौरवशाली स्थान बनाती है। वहीं जब यह विध्वंसकारी होती है तब समाज में अशांति, अविश्वास उपद्रव एवं मानवीय मूल्यों के पतन का कारण बनती है। प्राय: देखने में यह प्रतीत होता है कि अमानवीय कल्पना को हमारे सामाजिक राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्थाओं में प्रवेश नहीं दिया जाता है। फिर हमारी यही व्यवस्थाऐं कहां कमजोर हो जाती है एवं हमें परिवर्तन की आवश्यकता महसूस होती है या कभी-कभी तो इन्हें जड़मूल से ही समाप्त करने की बात कहीं जाती है। प्रत्येक कल्पना या विचारधारा स्वयं में कल्याणकारी योजना को समाहित कर समाज में प्रवेश करती है किन्तु उसी समाज का एक छोटा

* शोधार्थी, माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सा वर्ग इसकी अहमियत को समझे बिना इसे दुष्कृति में मोड़ देता है । इस परम्परा का निर्वहन इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली पीढ़िया, उसमें अपनी एक नई सोच को समाहित कर, निरंतर करती हैं। जब हम रैगिंग की बात करते हैं तब यह बात भी साबित होती है कि मनुष्य की विकृत, अमानवीय, दूषित कल्पना भी सीमाओं से परे होती है । रैगिंग की शुरूआत सामान्य परिचय से होती है व अन्त परिहास पर, परन्तु इसका स्वरूप अपनी परिपक्वता तक आते-आते विकृत हुआ । यह अलग बात है कि यह अपनी विकृति की ओर चली गयी । विकृति के कारण रैगिंग के अमानवीय व अश्लिल तत्वों ने मर्यादा व नैतिकता का हास कर दिया है रैगिंग के नाम पर कई प्रकार से विश्वविद्यालयों में छात्रों को उत्पीड़ित किया जाता है । उनमें कुछ प्रचलित रूप इस प्रकार है –

1. **ड्रेस कोड रैगिंग–** इसके अंतर्गत प्रथम वर्षीय छात्रो से समय विशेष की कक्षाओं में पृथक ड्रेस पहनने के लिए कहा जाता है। कई शैक्षणिक संस्थानों में विशिष्ट कक्षा के लिए विशिष्ट ड्रेस निर्धारित की जाती है किन्तु यह इतना आसान नहीं है जैसा कि दिखाई देता है कई मर्तबा इस तरह की ड्रेस पहनने का आदेश दिया जाता है जो कि दिखने में अनोखी होती है जैसे वर्ष भर सफेद व काले रंग की ड्रेस पहनना, सर पर अधिक तेल लगाना विशिष्ट तरीके से बालों को संवारना जो कि उनकी कि अलग पहचान को बताता है, जिससे वे अन्य लोगों के उपहास का कारण बनते हैं, इस तरह की क्रियाएं विद्यार्थियों के लिए तकलीफ देय होती है जो कई बार क्लेश का कारण भी बनती है ।

2. **सामान्य परिचय–** सत्र के प्रथम दिन सामान्य परिचय लिया जाना, परिचय के अन्तर्गत स्वयं के बारे में सामान्य जानकारी होती है जैसे नाम, पता इत्यादि, यह रैगिंग का प्रथम चरण होता है एवं अंतिम भी । किन्तु वर्तमान में रैगिंग यही तक सीमित नहीं है। एक विद्यार्थी अपनी अमानवीय दूषित कल्पना की पूर्ति हेतु अपने कृत्य को रैगिंग का वेष धारण करवाते हुए अनवरत जारी रखता है ।

3. **शारीरिक उत्पीड़न–** शारीरिक उत्पीड़न रैगिंग का सबसे अभद्र रूप है, जो कि सामान्यत: महाविद्यालयों में पाया जाता है इसके अन्तर्गत शारीरिक अंगों का विवरण पूछना या बताने के लिए कहना।

4 **अनैतिक हास्यास्पद क्रियाएँ–** प्रथम वर्षीय विद्यार्थियों से किसी फिल्म विशेष के किसी पात्र की नकल करवाना। इसके अलावा वरिष्ठ विद्यार्थियों के द्वारा कई बार मूर्खतापूर्ण हरकते भी करवायी जाती है जैसे पेड़ पर चढ़ना या पेढ़ का चुम्बन लेने के लिए किसी लड़की या लड़को को मजबूर करना ।

5 **छात्रावास रैगिंग–** बाहर से आए हुए विद्यार्थियों का जीवन रैगिंग के कारण छात्रावास में असुरक्षित रहता है जूनियर के द्वारा सीनियर के कमरों की सफाई करवाना, कपड़े धुलवाना, अपने लिए वस्तु सामग्री मंगवाना। शोध अध्ययन में भी कई बार जूनियर की सहायता ली जाती है ।

6 **मादक पदार्थों का सेवन–** विद्यार्थी जो मादक पदार्थों का सेवन नहीं करते हैं उन्हें बलपूर्वक , जबरदस्ती नशीले पदार्थों का सेवन करवाया जाना।

प्रभाव– रैगिंग मानव दुर्व्यवहार का अमानवीय रूप है रैगिंग से संबंधित, स्तब्ध कर देने वाली कई घटनाएं सामने आ रही है । वर्तमान समय में शैक्षणिक जगत कई तरह की समस्याओं का सामना कर रहा है । जिसमें रैगिंग एक ऐसी प्रथा है जो समय के साथ बुराई में तब्दील होती जा रही है विशेषकर व्यावसायिक पाठ्यक्रम में , जैसे मेडिसीन, इंजीनियरिंग मेनेजमेंट में, रैगिंग अधिक प्रभावित करती है किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से यह विद्यार्थी के परिजन, संरक्षक, समाज एवं उससे भी आगे वह देश के भविष्य को प्रभावित करती है न सिर्फ आर्थिक रूप से वरन सांस्कृतिक एवं राजनैतिक रूप से भी। अत: रैगिंग से संबंधित विभिन्न पहलु इस प्रकार हैं–

विद्यार्थी जीवन पर रैगिंग का प्रभाव– रैगिंग की अनचाही चोट पहुंचाने वाली मानसिक व शारीरिक घटनाएं स्थाई रूप से पीड़ित के मन को प्रभावित कर सकती है । उसके मनोभावनों में डर उत्पन्न कर सकती है । फलस्वरूप वह आने वाले कई वर्षों तक उससे मुक्त नहीं हो पाता है। घृणित भाव पीड़ित विद्यार्थी के मन में जाग्रत हो सकते हैं। स्वयं को दूसरों की अपेक्षा हीन महसूस करने लगता है। कहीं न कहीं इन घटनाओं से विद्यार्थी का जीवन प्रभावित होता है । यहां तक कि ये घटनाएं व्यवसायिक जीवन को भी प्रभावित कर सकती है । रैगिंग एक ऐसी घटना है , जो यदि घटती है तो विद्यार्थी के जीवन के प्रत्येक पहलु को प्रभावित करती है । विद्यार्थी जो कि रैगिंग का विरोध करते हैं, उन्हें अपने वरिष्ठ के क्रोध का शिकार होना पड़ता है । वे अलग-थलग कर दिये जाते हैं । सौहार्दपूर्ण वातावरण उन्हें नहीं मिल पाता है । वे जो कि हार मान जाते हैं यह उनके चरित्र को चरितार्थ करती है इसका प्रभाव उनके आगामी जीवन पर होता है ।

महाविद्यालयों पर रैगिंग का प्रभाव – रैगिंग न सिर्फ विद्यार्थी जीवन को प्रभावित करती है वरन वे शिक्षण संस्थान जहां पर की वे अध्ययन कर रहे हैं उनको भी प्रभावित करती है शिक्षण संस्थान मानव मूल्यों को निर्मित करने की एक संस्था मानी जाती है जहां से की देश के उज्जवल भविष्य की कामना की जाती है इस हेतु सरकारी व गैर सरकारी कई शिक्षण संस्थान कार्यरत हैं जिन पर देश की अर्थव्यवस्था का एक हिस्सा खर्च किया जाता है। हमारी आर्थिक विकास का आधार यही संस्थान है या दूसरे शब्दों में वह देश के विकास की नींव होती है । यदि नींव ही कमजोर होगी, तब उस पर बनी ईमारत से मजबूती की आशा नहीं की जा सकती है। ठीक उसी तरह यदि रैगिंग हमारे मानवीय मूल्य में कोई बुराई संत्रापित करती है या उससे प्रभावित करती है तब वह दीमक की भांति उसे खोखला कर देगी । रैगिंग उसी बुराई का नाम है जिसका जन्म शैक्षणिक संस्थान होता हैं जहां इनका पालन-पोषण होता है। वे शिक्षण संस्थान जहां भी इस तरह की घटनाएं हो रही है समाज से प्राप्त अपनी प्रतिष्ठा को खो देते हैं ।

समाज पर रैगिंग का प्रभाव– रैगिंग प्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थी एवं शिक्षण संस्थान को प्रभावित करती है किन्तु इसका अप्रत्यक्ष प्रहार समाज पर होता है। देखने से यह प्रतीत होता है कि यह महाविद्यालय के परिसर में घटित होने वाली एक घटना है एवं सरकार, मीडिया व समाज की सोच भी परिसर के अंदर तक ही सीमित हो जाती है अत: यह केवल महाविद्यलाय में घटित होने वाली एक ऐसी सामान्य घटना है जिसे समाज के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से स्वीकार कर लिया गया है किन्तु यह तथ्य कोई नहीं देख पाता है की यह समाज को भी प्रभावित कर रही है । रैगिंग करने वाला एवं पीड़ित दोनों ही समाज से निकलकर आते है एवं वे शिक्षण संस्थान जहां पर सभ्य समाज को निर्मित करने की शिक्षा दी जाती है यदि वही सभ्यता का हनन होगा, तब एक असभ्य समाज का संगठन ही संभव है ।

निष्कर्ष– विद्यालयीन जीवन प्रत्येक विद्यार्थी के जीवन का महत्वपूर्ण समय होता है। इस समय संजोये पल उसके जीवन के सबसे यादगार लम्हों में से एक होते हैं किन्तु कुछ विद्यार्थियों के लिए यह एक ऐसा अभिशॉप बन जाता है जो उनकी इच्छा के विरूद्ध उनके भविष्य का निर्धारण कर देता है। रैगिंग के भय की छाप पीड़ित के मस्तिष्क पर जीवन भर रहती है जो उसके आत्मबल को कमजोर कर देती है। हत्या आत्महत्या एवं सदोष मानव वध, रैगिंग से संबंधित

सामान्य घटना है। कुछ समय पहले तक रैगिंग महाविद्यालय और छात्रावास तक ही सीमित थी किन्तु अब इसका विस्तार विद्यालय तक भी हो गया है। हत्या एवं आत्महत्या की घटनाएं विद्यालयों में भी होने लगी है। न्यायपालिका एवं विधायिका के प्रत्यनों के फलस्वरूप रैगिंग की घटनाएं सामाजिक परिदृष्य में उभरकर अवश्य आयी है किन्तु समाज रैगिंग के प्रति आज भी उतना जागरूक नहीं है जितना की होना चाहिये। अत: अब समय आ गया है कि समाज विशेषत: विद्यार्थी वर्ग इसके अमानवीय प्रभावों के प्रति जागरूक हो क्योंकि यह विद्यार्थी से जुड़ी समस्या हैं। देश के उज्जवल भविष्य हेतु विद्यार्थी वर्ग को स्वयं से अग्रसर होना होगा। देश व समाज की आर्थिक राजनैतिक व सामाजिक प्रगृति विद्यार्थी पर निर्भर करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Law relating to ragging, Naman mohnot
2. Ragging in educational institutes:A Human right perspective-Author-Madhvi chopra

****

विद्यार्थियों में कौशल उन्नयन समाज की महत्वपूर्ण गतिविधि (विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय –2)

सुनील कुमार सिकरवार *

शोध सारांश – उच्च शिक्षा का प्रयोजन व्यक्ति के जीवन में उच्च मूल्यों की स्थापना करना है । इसके लिए अध्ययन व प्रबंधन करने वाले सभी हितग्राहियों में समेकित प्रयास की जरूरत है । उच्च शिक्षा में परिवर्तन की लहर है जिसका श्रेय विद्यार्थी, प्राध्यापक एवं प्रबंधन की श्रेणी को दिया जा सकता है । आज विश्व परिदृश्य में चुनौतियों से निपटने के लिये संधारणीय विजय के साथ–साथ गुणात्मक विकास भी आवश्यक है । परम्परा एवं प्रगति के बीच आज उच्च शिक्षा द्वदंग्रस्त है । केवल डिग्री मात्र से युवा अपनी जीविका की ग्यारंटी नहीं पा सकता । अत: उच्च शिक्षा में प्रौद्योगिकी परिवर्तन के साथ ही जीवन मूल्यों एवं विशाल कौशल की जानकारी दी जाना आवश्यक हैं अत:हमारे विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में उन बातों का समावेश होना आवश्यक है जो कि विद्यार्थियों में इन गुणों एवं नैतिक मूल्यों को विकसित कर सकें,विद्यार्थियों के समग्र व्यक्तित्व विकास के द्वारा एक श्रेष्ठ समाज के निर्माण हेतु महाविद्यालय का पाठ्यक्रम **'लक्ष्य'** निर्धारण का कार्य करता है। अत: **उत्कृष्ट पाठ्यक्रम के पहलू ही** श्रेष्ठ व्**यक्ति, समाज एवं विश्व** का निमार्ण कर सकते हैं।

प्रस्तावना – शिक्षा के क्षेत्र में उच्च शिक्षा का विशिष्ट स्थान है। उच्च शिक्षा समाज की महत्वपूर्ण गतिविधियों प्रशासन व्यापार रक्षा स्वास्थ्य संचार कला साहित्य के लिए मानव संसाधन सुलभ कराती है। उच्च कोटि के वैज्ञानिक साहित्यकार नेता तथा दार्शनिक विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों के प्रांगण से ही उत्पन्न होते हैं। प्राचीनकाल में गुरुकुलों तथा आश्रमों में उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। बौद्धकाल में हमारे देश में उच्च शिक्षा के लिए बड़े–बड़े विश्वविद्यालयों की स्थापना हो चुकी थी। मुगलकाल में मदरसों में शिक्षा की व्यवस्था थी। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में उच्च शिक्षा निरंन्तर विकास की ओर अग्रसर हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के लिए गठित अंतर्राष्ट्रीय आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार उच्च शिक्षा आर्थिक विकास की प्रेरक शक्ति है। वह ज्ञान का भण्डार भी हैं और ज्ञान का अर्जन भी। अत: कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा का महत्व निर्विवाद है स्वयं विश्व बैंक ने भी सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए उच्च शिक्षा को महत्वपूर्ण माना है। उच्च शिक्षा संस्थान ही ऐसे व्यक्तियों को नवीनतम ज्ञान और तकनीकी से प्रशिक्षित करते है जो शासकीय सेवा उद्योग एवं अन्य व्यवसायों में जिम्मेदारी निभाते है। शिक्षा का उद्देश्य मूल रुप से चरित्र का निर्माण करना है। उच्च शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक शैक्षणिक और सांस्कृतिक विकास की रीढ़ है। शिक्षा मनुष्य को संस्कारवान और मानवीय चरित्र को उदातीकृत करने का सबसे कारगर हथियार है। डॉ जे.बी. विलनियम का मानना है कि शिक्षा को मानव संसाधन विकास में राष्ट्रीय निवेश के रुप में लिया जाना चाहिए। जवाब देही के प्रश्न पर नीति–निर्धारण एवं वित्तीय संस्थाओं को गहन विचार करना होगा क्योंकि इस क्षेत्र में लागत अधिक और वसूली निम्न है। शिक्षा का विकास राष्ट्रीय प्राथमिकताओं राष्ट्रीय परिवेश एवं अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण के अनुरुप होना चाहिए। केन्द्र एवं राज्यों की सरकारी एजेंसी आयोजना संघ निजी एवं सार्वजनिक प्रबंध लोकोपकारी संस्था विद्यार्थी शिक्षक प्रशासनिक अधिकारी और सामान्य जनता सभी को इस बात पर ध्यान देना होगा कि न केवल वित्तीय दृष्टि से अपितु मानव संसाधन विकास की दृष्टि से भी यह निवेश सार्थक सिद्ध हो। अगर ऐसा न हुआ तो न केवल निवेश व्यर्थ होगा अपितु उत्तम के स्थान पर साधारण बौद्धिकता का निर्माण देश के लिए अहितकर ही सिद्ध होगा। ब्रिटिश काल में उच्च शिक्षा का उद्देश्य सीमित था और वह था मैकालियन सिद्धांत के अनुरुप भारतीयों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना जिसका केवल खून एवं रंग भारतीय हो परन्तु शौक मिजाज एवं सोच पूरी तरह अंग्रेजी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में उच्च शिक्षा के विकास पर केन्द्र सरकार ने काफी बल दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय जहाँ देश में कुल 19 विश्वविद्यालय और 735 महाविद्यालय थे। अब उनकी संख्या में कई गुना वृद्धि हो चुकी है, लेकिन हम अभी भी उच्च शिक्षा के वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल है। आज देश में उच्च शिक्षा प्राप्त बेरोजगारों की संख्या में दिन दूनी रात चौगनी वृद्धि परिलक्षित हो रही है। विद्यार्थियों में ज्ञानार्जन की ललक और शिक्षकों में शिक्षा प्रदान करने की प्रवृति का घोर अभाव है। विश्वविद्यालय परिसर में निरुद्देश्य छात्र हड़ताल कक्षाओं का बहिष्कार शिक्षकों के प्रति दुर्व्यवहार और छात्राओं के साथ छेड़खानी की घटनाओं में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। यह सब विद्यार्थियों में बढ़ती हुई अनुशासनहीनता का परिणाम है। आज देश के ज्यादातर विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक वातावरण दूषित होता चला जा रहा है। कुल मिलाकर देखा जाय तो उच्च शिक्षण संस्थाओं में प्रशासनिक कार्यकुशलता की कमी है, वित्तीय संसाधन का अभाव है तथा छात्रों और शिक्षकों के निजी जीवन में उदारता नैतिक आदर्शो का घोर अभाव है। 21 वीं सदीं की शिक्षा उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने वाली होती जा रही है। बाजारवाद शिक्षा परिसरों में भी पसरता जा रहा है। हम शिक्षा के दल दल में धस रहे हैं जो हमें हृदयहीन लाचार और आत्महीन बना रही है। हमारे आदर्श हमसे छूटे जा रहे है। हम लगातार आत्मनिर्भर बनने की कोशिश में परजीविता की ओर बढते जा रहे हैं। भारतीय आम जनता परम्परागत शिक्षा को ही रोजगार का साधन बनाती है लेकिन इस दौर में स्थिति बिल्कुल बदल चुकी हैं इस तरह की आशा रखने वाले युवाओं को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। अब वे दिन लद चुके जब परम्परागत शिक्षा प्राप्त कर रोजगार प्राप्त हो जाता था। उच्च शिक्षा का अनियोजित विस्तार हुआ है, लेकिन नौकरी के अवसरों में उस अनुपात में

*सहायक प्राध्यापक (रसायनशास्त्र) शहीद चंद्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

वृद्धि नहीं हो पा रही है। इस सबके बावजूद उच्च शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण के युग में विश्व समुदाय के बीच उच्च शिक्षा का महत्व बढ़ता जा रहा है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मान जनक स्थान दिया जाता रहा है। उच्च शिक्षा के प्रति विश्व की सरकारें भी अपने आय का बहुत बड़ा हिस्सा निवेशित करती दिख रही हैं। जहाँ शिक्षा ही समाज एवं राष्ट्र के विकास की रीढ है वहाँ भारतीय सरकारों को भी इस पर अधिक ध्यान देने की जरुरत है। अपेक्षाकृत उच्च शिक्षा में भारतीय शासन ने सम्मानजनक धन निवेश किया है परन्तु कुछ वर्ष पूर्व अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल एजूकेशन की वार्षिक रिपोर्ट ओमेन डोर 2008 इस बात का इशारा करती है कि अभी उच्च शिक्षा में भारत को वैश्विक केन्द्र बनने में बहुत समय लगेगा। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्राध्यापक निरंजन कुमार ने ओपेन डोर 2008 की रिपोर्ट के अनुसार हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए लिखा है कि यदि भारतीय छात्रों द्वारा प्रति वर्ष विदेश में खर्च की जाने वाली धनराशि यदि देश में रह जाये तो उच्च शिक्षा की काया पलट होने में देर नहीं लगेगी। रिपोर्ट के अनुसार अकादमिक सत्र 2007-08 में अमेरिका में उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिये आने वाले छात्रों में रिकार्ड संख्या 94563 भारतीय छात्र की सख्या 2001 में सबसे ज्यादा चल रही है। अमेरिका में इस वर्ष 6.23 लाख विदेशी छात्र आए जिनमें सबसे अधिक 15 प्रतिशत भारतीय छात्र हैं। विदेशी छात्रों की इस आवक से यहाँ की युनिवर्सिटी और सरकार दोनों खुश हैं क्योंकि न केवल ये छात्र भारी-भरकम फीस चुकाते हैं, बल्कि शिक्षा के अलावा खाने-पीने रहने और अन्य खर्चो की वजह से बड़ी मात्रा में रोजगार पैदा करते है। उच्च शिक्षा को लेकर शीर्ष भारतीय उद्योग संगठन एसोचैम की भी एक रिपोर्ट आई है। इसके अनुसार अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, जर्मनी, सिंगापुर आदि देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये 4.50 लाख से भी अधिक भारतीय छात्र हर साल जाते है। इस रिपोर्ट के अनुसार इस पलायन की सबसे बड़ी वजह है पर्याप्त संख्या में उच्च गुणवत्ता वाले संस्थानों का अभाव होना इसके अनुसार आई.आई.टी. और आई.आई.एम में प्रवेश न पाने वाले 90 प्रतिशत छात्रों में कम से कम 20-25 प्रतिशत छात्र बाहर चले जाते है। इस अध्ययन के अनुसार ये छात्र विदेशों में लगभग 48 हजार करोड रुपये प्रतिवर्ष खर्च करते है। इस धन में विश्व स्तर के कम से कम 20 इंजीनियरिंग और मैनेजमेंट इंस्टीट्यूट खोले जा सकते है। इसके अतिरिक्त भारत में रोजगार में लगे लगभग 46 करोड़ लोगों में से केवल पॉच प्रतिशत के पास ही व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण है जबकि दक्षिण कोरिया में 95 प्रतिशत जापान में 80 प्रतिशत और जर्मनी में 75 प्रतिशत तक लोग व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण से लैस है। व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण का अभाव हमारी उत्पादकता को प्रभावित करता है। चीन में व्यावसायिक शिक्षा के लिये पांच लाख से ज्यादा संस्थान है जबकि भारत में ऐसे संस्थान मात्र तीस हजार ही है। भारतीय छात्रों द्वारा बाहर खर्च की जाने वाली इतनी बड़ी राशि हर वर्ष अगर देश में रह जाए तो हमारी उच्च शिक्षा की कायापलट होने में देर नहीं लगेगी। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि 11वीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा के लिये सरकार का कुल अनुमानित खर्च 84943 करोड़ रुपये है। अगर भारत में विश्व स्तर के संस्थान होते तो न केवल हम इस राशि का उपयोग अपने लिये करते बल्कि बड़ी संख्या में बाहर से भी विदेशी छात्रों को आकर्षित करने में सफल होते। अमेरिका के अलावा आस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड, कनाडा आदि जगहों से 4-5 लाख विदेशी छात्र आते है। वही भारत में विदेशी छात्रों की संख्या सिर्फ 27 हजार है। सिंगापुर जैसे अत्यंत छोटे से देश में डेढ लाख से अधिक छात्रों के प्रवेश की योजना है। उच्च शिक्षा संस्थानों की दुनिया में रेटिंग करने वाली प्रमुख संस्था क्वाक्वारेली साइमंड्स हर साल शीर्ष दो सौ शिक्षण संस्थानों की सूची निकालती है। इसमें भारत के केवल दो ही संस्थान 2008 में जगह बना पाए। वे भी 150 रैंक के बाद जबकि टाप 50 में एशिया के ही चीन, जापान, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया, आदि के कई संस्थान है। एसोचैम के अनुसार अगर हम उच्च शिक्षा का समुचित विकास कर सके तो भारत न केवल लगभग 24 लाख करोड़ रुपये की आय अर्जित कर सकेगा, बल्कि इसके द्वारा तकरीबन 10 लाख अतिरिक्त रोजगार भी पैदा होंगे। सरकार ने एक राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की स्थापना की थी। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने 2006 में अपनी अनुशंसाए और उच्च शिक्षाके लिये भावी रुपरेखा सरकार को सौंप दी। इसमें अन्य चीजों के अलावा सरकर, राजनेताओं और नौकरशाही के हस्तक्षेप से उच्च शिक्षा संस्थान सरकार के नियंत्रण से बाहर है। यह रिपोर्ट भारत में उच्च शिक्षा के नये आयाम खोलने की दिशा में अत्यंत दूरगामी है। सरकार ने इस दिशा में कुछ कदम उठाने शुरु किये है, जैसे 11वीं योजना में 30 केन्द्रीय विश्वविद्यालय तीन इंडियन इंस्टीट्यूट, ऑफ साइंटिफिक एंड एजुकेशनल रिसर्च दो स्कूल आफ प्लानिंग एंड आर्किटेक्चर दस नेशनल इंस्टीटयूट आफ टेक्नोलोजी और 20 इंडियन इंस्टीट्यूट आफ इनफार्मशन टेक्नोलोजी खोलने का प्रस्ताव है। वर्तमान में भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली में 504 विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर की संस्थायें शामिल है। इनमें 243 राज्य विश्वविद्यालय 53 राज्यों के निजी विश्व विद्यालय 40 केन्द्रीय विश्वविद्यालय 130 मान्य (डीम्ड) विश्वविद्यालय 33 राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं (संसद के अधिनियमों के तहत स्थापित) और 5 विभिन्न राज्यों के कानूनों के तहत स्थापित संस्थाएं शामिल है। इनके अलावा 2565 महिला महाविद्यालयों सहित 25951 महाविद्यालय भी है। ग्यारवीं योजना के प्रारंभ के समय 19 केन्द्रीय विश्वविद्यालय 7 भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान 20 राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान 2 भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान 6 भारतीय प्रबंधन संस्थान और 1 योजना और वास्तुकला विद्यालय के अलावा केन्द्र द्वारा वित्तपोषित कुछ अन्य शिक्षण संस्थाएं थी। ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तकनीकी और उच्च शिक्षा के अनेक संस्थान खोले गये है। 13 नये केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना के अलावा 3 प्रांतीय विश्वविद्यालयों को केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में परिवर्तित किया गया है। 8 नये आई.आई.टी 7 नये आई.आई.एम 3 नये आई.आई. एसई आर, 2 नये एस.पी.ए और अनेक नयी पॉलिटेक्निक संस्थाएं भी स्थापित की गई है। इनके अतिरिक्त 10 नयी राष्ट्रीय औसत की तुलना में कम सकल नामांकन अनुपात वाले शैक्षिक रुप से पिछडे हुए जिलों में 374 महाविद्यालयों की स्थापना पर विचार किया जा रहा है। विश्वस्तरीय 14 विश्वविद्यालयों अथवा नवोम्मेशी विश्वविद्यालय और 20 नये आई.आई.टी. संस्थानों की स्थापना का विचार अभी प्रारंभिक अवस्था में है। ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना में यद्यपि विस्तार समावेशन और उत्कृष्टता अथवा सुगमता, समानता और गुणवत्ता पर जोर दिया जा रहा है, उच्च शिक्षा संस्थानों का विकास उतनी तेजी से नहीं हो पाया है, जितनी वृद्धि भर्ती की दर में हुई है। प्रकट और अप्रकट मांग की तुलना में तो यह और भी कम है। शिक्षण वर्ष 2009-10 के प्रारम्भ में विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की औपचारिक प्रणाली में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों की संख्या 136.42 लाख बताई जाती है। यह प्रतिशत सकल भर्ती अनुपात का करीब 12.9 प्रतिशत है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सकल भर्ती अनुपात के मामले

में विश्व औसत 26.7 प्रतिशत है जबकि विकसित देशों में 13 प्रतिशत रहा है। अत: सकल भर्ती अनुपात को सम्माजनक स्तर तक ले जाने के लिए और अधिक विश्वविद्यालय और महाविद्यालय खोलने होगे। गुणवत्ता शिक्षा का एक महत्वपूर्ण पहलू है। संस्थाओं के कामकाज की नियमित समीक्षा से इसे सुनिश्चित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. शासन का दृष्टि पत्र गुणवत्ता वर्ष 2011-12 एवं गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012-13
2. रचना द्धिमासिकी अंक 97 अगस्त 2012 हिंदी ग्रथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
3. रचना द्धिमासिकी अंक 98 अक्टूबर 2012 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 36,40,48,60
4. रचना द्धिमासिकी अंक 67 अगस्त 2007 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
5. दैनिक जागरण समाचार पत्र इन्दौर 3 जून 2007 पृ0 10
6. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता के आयाम

डॉ. मंजु सक्सेना * डॉ. ए. के. सक्सेना **

प्रस्तावना – भारत में उच्च शिक्षा का लम्बा इतिहास रहा है। प्राचीन काल में यहाँ 'तक्षशिला' और 'नालन्दा' विश्वविद्यालय थे, जिनमें देश–विदेश के विद्यार्थी अध्ययन के लिए आते थे। आधुनिक काल में उन्नीसवीं सदी में यहाँ कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। स्वाधीनता के पश्चात् वर्ष 1950 में देश में 25 विश्वविद्यालय और 3,60,000 विद्यार्थी थे। 1953 में यूजीसी की स्थापना हुई। 1956 में संसद के एक कानून द्वारा उसे वैधानिक दर्जा मिला। वर्ष 2000 में देश में 178 विश्वविद्यालय थे जिनमें लगभग 74,00,000 विद्यार्थी अध्ययनरत थे। वर्ष 2014 में यहाँ 677 विश्वविद्यालय और 38000 महाविद्यालय कार्यरत थे जिनमें 8.17 लाख शिक्षक तथा 2,80,00,000 विद्यार्थी अध्ययनरत थे। इस प्रकार देश की उच्च शिक्षा प्रणाली अमेरिका और चीन के बाद दुनिया की सबसे बड़ी प्रणाली बन गई, किन्तु उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पीछे छूट गई। आज वैश्वीकरण के दौर में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देश की सबसे बड़ी आवश्यकता है। भारत में गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा के आयाम निम्नानुसार है –

1. उपयुक्तता का आयाम – विश्व–प्रसिद्ध वैज्ञानिक चार्ल्स डारविन का विकासवाद का सिद्धान्त यह प्रतिपादित करता है कि सबसे समर्थ प्रजाति अपना अस्तित्व बनाये रखती है, जबकि असमर्थ प्रजातियां कालान्तर में अपना अस्तित्व खो देती है। जीव विज्ञान का यह सिद्धान्त शिक्षा व्यवस्था पर भी लागू होता है। जो व्यवस्था स्वयं को समर्थ एवं सक्षम बनाये रखेगी वही अस्तित्ववान रहेगी। अत: अब यह सोच कि शिक्षा केवल ज्ञान के लिए है बदलकर 'शिक्षा आर्थिक प्रगति के लिए है' का सोच विकसित हो रहा है। अनुपयुक्त से उपयुक्त की यात्रा निम्नानुसार सम्पन्न होती है –

विषय	अनुपयुक्त	उपयुक्त
शिक्षा योजना की गति	धीमी	तेज
पाठ्यक्रम	शिक्षक केन्द्रित	विद्यार्थी केन्द्रित
विद्यार्थी	निष्क्रिय सीखने वाले	सक्रिय सीखने वाले
ज्ञान का प्रदाय	शिक्षण के द्वारा	सीखने के अनुभव द्वारा
विद्यार्थियों का सम्बन्ध	छपाई की पीढ़ी से	डिजिटल पीढ़ी से
शिक्षा सेवा	समान स्थान,समान समय	कोई भी स्थान, कोई भी समय
ज्ञान प्रदाय स्थल	विश्वविद्यालय परिसर	सर्वभौमिक परिसर
प्रतिस्पर्धा	नहीं	राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय
विद्यार्थियों की आवश्यकताएं	द्वितीयक	प्राथमिक
शिक्षकों का दायित्व	शिक्षा संस्थान के प्रति	विद्यार्थियों एवं समाज के प्रति
प्रेरण	आंतरिक संवेग	बाह्य संवेग

2. समता का आयाम – 'सर्वाधिक समर्थ का अस्तित्व संरक्षित रहता है।' यह जंगल का नियम एवं पशुओं का माइण्डसेट है, जबकि 'दुर्बलतम का अस्तित्व संरक्षित रखना' सभ्य समाज का नियम एवं मानवीय माइण्डसेट है। कौटिल्य का भी मत्स्य रूपक है कि 'चूंकि बड़ी मछली की प्रवृत्ति छोटी मछली को खा जाने की होती है, अत: राज्य को अपनी शक्ति और अधिकार का उपयोग कमजोर के पक्ष में करना चाहिए।' महात्मा गांधी ने भी सबसे कमजोर के अस्तित्व–संरक्षण का समर्थन करते हुए कहा था कि 'जब भी आप संशय की स्थिति में हों, तो सबसे गरीब और कमजोर व्यक्ति का चेहरा याद करें और स्वयं से पूछें कि आप जो कदम उठाने का सोच रहे हैं क्या वह उसके किसी उपयोग का है?'

समर्थ बनने के लिए नई प्रौद्योगिकी, आधुनिक सुविधाएं एवं विशेषज्ञ शिक्षकों की आवश्यकता है। इसके फलस्वरूप होने वाली शुल्क वृद्धि और कमजोर के अस्तित्व पर संकट को रोकने के लिए राज्य के द्वारा सहयोग, नवाचारी वित्तीय प्रबन्धन तथा शिक्षा के प्रति समग्र दृष्टिकोण आवश्यक है।

3. सह–अस्तित्व का आयाम – 'समर्थतम् के अस्तित्व' और 'दुर्बलतम के सहयोग' के ही समान महत्वपूर्ण है 'विशिष्टतम का संरक्षण।' 'विशिष्टतम का संरक्षण' के निहितार्थ निम्नांकित हैं –

- विशिष्टपन की संस्कृति में सह–अस्तित्व की स्वतन्त्रता होती है।
- इसमें विभिन्न समाजों के लिए सांस लेने का स्थान उपलब्ध होता है।
- विशिष्टपन पर आधारित जैव–विविधता उपयोगी है।
- प्रकृति के विशिष्टपन के लक्षण की सराहना की जाती है।

21वीं सदी की शिक्षा के लिए यूनेस्को द्वारा गठित अंतर्राष्ट्रीय आयोग ने शिक्षा के निम्नांकित चार स्तम्भ बताये हैं –

1. जानने के लिए सीखना।
2. करने के लिए सीखना।
3. सह–अस्तित्व के लिए सीखना।
4. कुछ होने के लिए सीखना।

उक्त आयोग द्वारा बताये शिक्षा स्तम्भों में से तीसरा स्तम्भ 'सह–अस्तित्व' है। सम्राट अशोक ने भी कहा है 'समरसता सर्वश्रेष्ठ है।'

4. उत्कृष्टता का आयाम – वैश्विक चुनौती का सामना करने के लिए भारत के पास सामर्थ्य है। भारत उस कस्तूरी मृग के समान है जिसकी नाभि में कस्तूरी की गंध होती है, किन्तु जो अन्य स्थानों पर उसकी खोज करता रहता है। भारत की निम्नांकित योग्यताएं हैं –

- भारत के पास समृद्ध सांस्कृतिक, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विरासत है।
- भारत के पास कृषि अनुसन्धान की सुदृढ़ नींव है।
- भारत के आई.आई.टी. और आई.आई.एम. ने उत्कृष्टता को अर्जित किया है।
- भारत में भौगोलिक विविधता है।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय के.पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अंग्रेजी) शासकीय महाविद्यालय, घट्टिया, जिला – उज्जैन (म.प्र.) भारत

- भारत अंग्रेजी में प्रवीणता रखता है।

भारत की क्षमताएं निम्नानुसार हैं –

- भारत कला, भाषा–विज्ञान,दर्शन, संस्कृति एवं आयुर्वेद में शिक्षा प्रदान कर सकता है।
- भारत कृषि में वांछित पाठ्यक्रम प्रदान कर सकता है।
- भारत प्रौद्योगिकी एवं प्रबन्धन में प्रशिक्षण प्रदान कर सकता है।
- भारत विदेशी विद्यार्थियों को शिक्षण सुविधा उपलब्ध करवा सकता है।
- भारत विदेशियों को अंग्रेजी माध्यम में उच्च शिक्षा प्रदान कर सकता है।

5. स्व–सशक्तिकरण का आयाम – मनुष्यों में शक्ति के चार आयाम होते हैं – शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक। गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति को इन चारों आयामों में सशक्त बनाना होना चाहिए। इस पृष्ठभूमि में स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–'हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जो चरित्र का निर्माण कर सके, जिसके द्वारा मानसिक शक्ति का विकास हो, बुद्धि का विस्तार हो, एवं जिसके द्वारा कोई स्वयं के पैरों पर खड़ा हो सके। उन्होंने यह भी कहा था – 'प्रत्येक आत्मा में दिव्यता होती है। हमारा लक्ष्य, आंतरिक एवं बाह्य प्रकृति को नियंत्रित कर इस दिव्यता के प्रकटन का होना चाहिए।' विद्यार्थियों का समग्र व्यक्तित्व विकास निम्नांकित माध्यमों से किया जा सकता है –

- खेलकूद
- एन.एस.एस.
- एन.सी.सी.
- मानवीय मूल्यों का शिक्षण
- योग
- ध्यान

मन की अभिवृत्तियाँ – हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में एक सर्वेक्षण रोज़गार प्राप्ति एवं उसके कारणों के विषय में करवाया गया था, जिसमें पाया गया कि जब किसी व्यक्ति को रोज़गार मिलता है एवं वह उसमें सफल होता है, तो 80 प्रतिशत प्रकरणों में ऐसा उसकी अभिवृत्तियों के कारण होता है, मात्र 20 प्रतिशत प्रकरणों में ऐसा उसके स्मार्टनेस एवं तथ्यों तथा आंकड़ों को याद रखने की उसकी क्षमता के कारण होता है।

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के डॉ. विलियम जेम्स के अनुसार उनकी पीढ़ी की सबसे बड़ी खोज यह है कि मनुष्य अपने मन की अभिवृत्तियों को बदल कर अपने जीवन को बदल सकता है।

इस पृष्ठभूमि में यह आश्चर्यजनक है कि शिक्षा में 100 प्रतिशत राशि उन तथ्यों तथा आँकड़ों को पढ़ाने में खर्च की जाती है जो कार्य में सफलता के मात्र 20 प्रतिशत की भागीदारी होती हैं। हमारी अधिकांश अभिवृत्तियाँ हमारे विकास के प्रारम्भिक वर्षों में आकार ले लेती है।

सृजनात्मकता – 113 देशों के बच्चों के सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि –

6 वर्ष की आयु में – भारतीय बच्चे सर्वाधिक प्रतिभावन होते हैं।
16 वर्ष की आयु में – भारतीय बच्चा 26वें स्थान पर पहुंच जाता है।

इससे निष्कर्ष निकलता है कि प्रचलित शिक्षा–व्यवस्था से भारतीय बच्चे की सृजनात्मकता का क्षय होता है। एक अन्य परीक्षण से परिणाम निकला है कि 12वीं कक्षा में एक भारतीय विद्यार्थी की सृजनात्मकता पहली कक्षा में उसकी क्षमता की मात्र 10 प्रतिशत रह जाती है।

6. सीखने का आयाम – अंग्रेज़ी साहित्य के महाकवि अलफ्रेड टेनीसन की विश्व–प्रसिद्ध कविता 'यूलीसीज़' के निम्नांकित अंश मानव–मन की अनवरत सीखने एवं नित–नूतन अनुभव प्राप्त करने की उत्कट अभिलाषा का भव्य चित्रण करते हैं –

To follow knowledge like a sinking star,
Beyond the utmost bound of human thoughts.

. . . . . .
. . . for my purpose holds
To sail beyond the sunset, and the baths
Of all the western stars, until I die.

. . . . . .
Yet all experience is an arch wherethro'
Gleams that untravell'd world, whose margin fades
For ever and for ever when I move.

सीखने से आशय अपने प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक ज्ञान एवं कौशल अर्जित करना है। 21वीं सदी में सीखने वाले के लिए वाँछित गुण निम्नानुसार हैं –

1. सीखने की योग्यता : स्वयं सीखने की क्षमता
2. जीवन पर्यन्त सीखने की ललक
3. अन्य शिक्षा–क्षेत्रों से ज्ञान प्राप्त करने की योग्यता
4. एक टीम के रूप में कार्य करने की योग्यता
5. वाणिज्यिक शिक्षा क्षेत्रों की जानकारी
6. सृजनात्मक कौशल
7. समन्वयन कौशल
8. अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण
9. आई.टी. के उपयोग की योग्यता
10. पारम्परिक शिक्षा क्षेत्रों के बीच कार्य करने की योग्यता
11. स्थायी विकास के प्रति प्रतिबद्धता।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भारत की स्थिति – उच्च शिक्षा के क्षेत्र में 19वीं सदी में ब्रिटेन का और 20वीं सदी में अमेरिका का वर्चस्व रहा। यह पर्याप्त सम्भव है कि 21वीं सदी भारत की हो। विश्व अब यह विश्वास करता है कि प्रशिक्षित भारतीय मानव शक्ति अपेक्षाकृत बेहतर गुणवत्ता और महत्व की है। यह अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2020 के पश्चात् विश्व भर से प्रति वर्ष 40 लाख शिक्षित एवं प्रशिक्षित भारतीय मानव–शक्ति की आवश्यकता होगी। भारत में विभिन्न क्षेत्रों में विश्व का नेतृत्व करने के लिए संसाधन, कौशल, सामर्थ्य और सम्भावनाएं हैं। हमें आवश्यकता है :

1. अपनी क्षमताओं के दोहन की
2. एक अच्छी कार्य–संस्कृति विकसित करने की
3. समरसता स्थापित करने की
4. एक सकारात्मक माइण्डसेट विकसित करने की
5. राष्ट्रीय लक्ष्यों को दृष्टि में रखने की।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि हम उच्च शिक्षा में अपनी गुणवत्ता को सुधारें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मोहनदास करमचंद गांधी, 'मेरे सपनों का भारत' (1969), सर्व सेवा संघ, वाराणसी
2. मदन मोहन झा, 'समावेशी शिक्षा : दृष्टिकोण और प्रक्रियाएं'(2003), प्रकाशन संस्थान, दिल्ली
3. जे.पी. नाईक, 'शिक्षा आयोग और उसके बाद' (1998), वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर
4. मारिया मांटेसरी 'ग्रहणशील मन' (1997), ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली
5. मूनिस रजा, 'शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम' (1999) ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली।

विशिष्ट शिक्षा की अवधारणा एवं समन्वित शिक्षा की उसमें उपादेयता

जयबाला गुप्ता *

प्रस्तावना – विशिष्ट बालक को समझने के लिए सर्वप्रथम सामान्य बालक को ठीक–ठीक तरीके से समझना आवश्यक होगा। सामान्य बालक औसत शारीरिक वाले स्वस्थ बालक होते है, जिनका बौद्धिक स्तर 90 से 110 बुद्धिलब्धि सीमा के मध्य होता है। सामान्य बालक सभी विषयों का समान रूप से महत्व देते हुए अध्ययन कार्य में संलग्न होता है। जो भी कक्षाध्यापक उसे कक्षा का कार्य सम्पादन करने के लिए कहता है उसे वह मनपूर्वक पूरा करता है। उसका व्यवहार भी समान रूप से समाज के अनुकूल होता है।

कुल मिलाकर सामान्य बालक में निम्नांकित विशेषताएँ होती है–

1. बौद्धिक स्तर सामान्य रूप से 90 से 110 बुद्धित्व सीमा तक स्तर होता है।
2. अधिकांश बालकों मेंऔसत शैक्षिक उपलब्धि होती है।
3. सभी विषयों में समान रूप से महत्व दिया जाता है।
4. दिया गया कक्षा कार्य और गृहकार्य लगन के साथ पूरा करने में छात्र सक्षम होता है।
5. समाज मेंअपेक्षित व्यवहार करते है। अर्थात् सामाजिक कार्यों में रचनात्मक सहयोग प्रदान करते है।

विशिष्ट बालक – उस से भिन्न श्रेणी का बालक होता है। मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षाशास्त्रियों ने विशिष्ट बालक को निम्नांकित बालकों को परिभाषित किया जा सकता है–

क्रो एवं क्रो के अनुसार– 'विशिष्ट प्रकार या विशिष्ट पद किसी गुण या उनके युक्त व्यक्ति पर लागू होता है, जिसके कारण वह व्यक्ति साथियों का ध्यान अपने विशिष्ट रूप से आकृष्ट करता है तथा इससे उसके व्यवहार की अनुक्रियाएँ भी प्रभावित होती है।'

इसी प्रकार एस.ए.किक के अनुसार– 'एक विशिष्ट बालक वह है जो कि शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विशेषताओं में किसी सामान्य बालक से उस सीमा तक विचलित होता है, जब वह अपनी माताओं के अधिकतम विकास हेतु सहायता, निर्देशन, विद्यालयीन कार्यक्रमों में परिमार्जन या विशिष्ट शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता रहती है।'

एस.के. किर्स के अनुसार– विशिष्ट बालक की अवस्था इस प्रकार निर्धारित की जा सकती है–

1. विशिष्ट बालक शारीरिक, मानसिक, संवेदनात्मक एवं सामाजिक विशेषताओं मेंजिसके विकास के लिए विशिष्ट सहायता, निर्देशन और विद्यालयीन कार्यक्रमों के विशिष्ट शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता रखता है।

इसका अर्थ स्पष्ट है कि विशिष्ट बालक के सर्वांगीण विकास के लिए सहायता, निदर्शन और विद्यालयीन कार्यक्रम में परिमार्जन के लिए विशिष्ट सेवाओं की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार से विशिष्ट बालक के लिए शारीरिक अपगंता और निर्बलताओं से पीड़ित की विशिष्ट प्रकार की शिक्षा व्यवस्था होना जरूरी है।

विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण निम्नानुसार किया जाता है।

1. शारीरिक रूप से भिन्न– जिसमें
   (अ) सवेदिक रूप से विकलांग (ब) गतीय रूप से विकलांग
   (स) बहुल विकलांग
2. मानसिक रूप से विचलित
   (अ) प्रतिभाशाली बालक (ब) सृजनात्मक बालक
   (स) मंदबुद्धि बालक
3. शैक्षणिक रूप से भिन्न
   (अ) शैक्षिक रूप से समृद्ध (ब) शैक्षिक रूप से पिछड़ा
   (स) किसी विशिष्ट विषय को सीखने मेंअयोग्य (द) सम्प्रेषण बाधित
4. सामाजिक रूप से विचलित
   (अ) संवेगिक रूप से परेशान बालक (ब) असमायोजिक बालक
   (द) वंचित बालक (द) समस्यात्मक बालक
   (इ) माता–पिता द्वारा तिरस्कृत बालक

उक्त विशिष्ट बालक के वर्गीकरण में मानसिक रूप से विचलित वर्गीकरण में प्रतिभाशाली बालक और सृजनात्मक बालक दोनों का वर्गीकरण सकारात्मक प्रवृत्ति के बालक है और मंदबुद्धि बालक नकारात्मक प्रवृत्तिवाला वर्गीकरण है। इसी प्रकार से शैक्षणिक रूप से भिन्न वर्गीकरण में शैक्षणिक रूप से समृद्ध वर्गीकरण सकारात्मक है।

इस प्रकार 3 वर्गीकरण सकारात्मक है और शेष वर्गीकरण नकारात्मक है।

शारीरिक रूप से विशिष्ट बालक के रूप में विकलांग बालक तीन वर्गों में विभाजित है–

1. सांवेदिक रूप से विकलांग बालक
2. गतीय रूप से विकलांग बालक
3. बहुल विकलांग बालक रखे गये है।

2. गतीय रूप से विकलांग बालकों में शारीरिक रूप से अपंग पोलियो, लकवा, अनियमित रक्तचाप, दुर्घटना या लंबी बीमारी से पूर्ण या आंशिक रूप से विकलांग, अर्थात् इन बालकों की श्रेणी में शारीरिक रूप से विकलांग आते हैं।

3. बहुल विकलांग में अधिक रूप से विकलांग जैसे– सेरिबल पाल्सी, मिर्गी पेरिफ्लेजिया आदि रोग से ग्रस्त विकलांग आते है। इस प्रकार शारीरिक विकलांग बालकों मेंसभी श्रेणी के विकलांग आते है।

मानसिक रूप से विकलांग मेंप्रतिभाशाली और सृजनात्मक बालक सकारात्मक प्रवृत्ति के बालक है, जिनमें प्रतिभाशाली, विलक्षण बुद्धि के बालक आते है, जिनकी बुद्धिलब्धि 120 से अधिक होती है। सृजनात्मक बालकों में औसत से अधिक सृजनात्मक का गुण होता है। यह बालक औसत बुद्धिलब्धि से अधिक बुद्धिलब्धिता होता है, किन्तु मानसिक रूप से विशिष्ट बालक मंदबुद्धि बालक नकारात्मक गुण से युक्त होता है, जिसकी बुद्धिलब्धि औसत से कम होता है। ऐसे बालक के लिए विशिष्ट शिक्षण पद्धतियों के द्वारा आंशिक रूप से विकसित किया जा सकता है।

* शोधार्थी, जे.जे.टी. यूनिवर्सिटी (राज.) भारत

शैक्षणिक रूप से विशिष्ट बालकों में समृद्ध बालक सामान्य बालकों की तुलना मेंजल्दी सीख जाता है, क्योंकि इसकी ग्राह्य शक्ति उच्च स्तरीय होती है, लेकिन प्रतिभाशाली बालकों को भी सामान्य बालकों की श्रेणी में रखा जाता है, जिसके कुछ दुष्प्रभाव भी देखने को मिलता है। जिस विषय में वह समृद्ध होता है उस विषय मेंसामान्य बालकों के साथ रहने से उसकी सीखने की प्रवृत्ति धीमी होने का खतरा होता है। उसके साथ अन्य विषयों मेंवह समृद्ध नहीं होता है, तो उसके साथ सामान्य बालक की श्रेणी में वह पिछड़ जाता है। इस प्रकार समृद्ध बालक की स्थिति में अलग-अलग विषयों की स्थिति में विषमता उत्पन्न होती हैं।

किसी समय में अमेरिका में 'क्लासलेस' शिक्षा का प्रयोग किया गया था, जिसमें एक ही बालक अलग-अलग विषयों में अलग-अलग कक्षाओं में पढ़ाई करता है। जैसे उदाहरण के लिए कोई बालक गणित में अत्यधिक कुशाग्र है, तो वह उच्च शिक्षा में पढ़ेगा जिस लायक वह योग्यताधारी हो यदि वह भाषा में कमजोर होगा तो वह निम्न कक्षा मेंअध्ययन करेगा। अर्थात् एक ही छात्र अपनी योग्यता के अनुसार और ग्राह्य शक्ति के अनुसार वह भिन्न-भिन्न कक्षाओं में अध्ययन करेगा, लेकिन इस प्रकार की पद्धति का प्रयोग भारत जैसे राष्ट्र के लिए किसी भी पाठ्यक्रम में संचालित नहीं किया जाता। वस्तुत: छात्र भिन्न-भिन्न विषयों में भिन्न-भिन्न स्तर की योग्यता रहा है, लेकिन उसे एक ही कक्षा मेंसभी विषय पढ़ना पड़ता है। फलत: गणित में कोई छात्र प्रथम श्रेणी प्राप्त करता है, तो भाषा ज्ञान के संबंध मेंवह तृतीय श्रेणी तक ही योग्यता रख पाता है, क्योंकि जन्मजात प्रवृत्ति अलग-अलग छात्रों मेंअलग-अलग होती है।

शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालक शैक्षणिक रूप से पिछड़े रह जाते है, उनके भिन्न-भिन्न कारण हो सकते है। जैसे दोषयुक्त शैक्षिक वातावरण, त्रुटिपूर्ण विधियों का प्रयोग और मंदबुद्धि का होना पिछड़ेपन के लिए जिम्मेदार होते है। कुछ छात्र विशेष विषय सीखने में कठिनाई अनुभव करते है। आमतौर पर गणित और विज्ञान जैसे विषयों को पढ़ाने में छात्र कठिनाई अनुभव करते है। मूलत: इन विषय में अध्यापक ही प्रथम रूप से जिम्मेदार होते है, क्योंकि शिक्षक की सर्वांगीण रूप से सभी विषयों में निष्णात नहीं रहते, जिन विषयों मेंवे निष्णात नहीं होते, उनको पढ़ने वाले छात्र भी उन विषयों मेंकमजोर होते है।

सामाजिक रूप से विशिष्ट बालकों मेंसंगी साथियों तथा अध्यापकों के पक्षपाती एवं हतोत्साहित व्यवहार के कारण छात्र संवेगिक रूप से विचलित हो जाते है। कुछ छात्र अपनी पारिवारिक परिस्थितियों के विषय होने से पढ़ाई के प्रति उदासीन रहने लगते है। ऐसे बालकों को असमायोजित बालक के रूप में शिक्षाविदों ने पहचाना है। कुछ विद्यार्थी किन्हीं परिस्थितियों के कारण अथवा स्वाभाविक जन्मजात प्रवृत्ति के कारण उग्र स्वभाव के होते है, ऐसे बालक भी सामाजिक रूप से विशिष्ट बालकों में गिने जाते हैं, जहाँ उनके स्वभाव को नियंत्रित रखने के लिए पालकों और शिक्षकों को अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार विशिष्ट बालकों की भिन्न-भिन्न श्रेणियाँ वर्गीकृत की गई हैं तद्नुसार उनके लिए विशेष शिक्षा प्रबंध करने की आवश्यकता होती है। जैसे उदाहरण के लिए दृष्टिहीन बालक के विकास के लिए उसके ब्रेललिपि के माध्यम से शिक्षा देने की जरूरत हैं। श्रवण बाधित व्यक्ति के लिए श्रवण योग्य स्थिति के लिए वैज्ञानिक उपकरण की जरूरत होती है।

सामान्य बुद्धि वाले छात्रों ने कुछ छात्र हाथ या पाँव से अपंग है, तो उसके लिए शैक्षिक दृष्टि के विकास के लिए अपंग स्थिति से उबरने के लिए विशेष संसाधनों की जरूरत होगी।

विशिष्ट बालक सामान्य स्कूलों मेंसामान्य कक्षाओं से लाभ नहीं उठा पाते। उन्हेंविशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता होती है। यदि इस प्रकार के विशिष्ट बालकों के लिए उचित शैक्षणिक संसाधन और विशिष्ट प्रशिक्षण की भी आवश्यकता होती है। अभिभावकों को चाहिए कि वे विशिष्ट बालकों की शिक्षा संबंधी जरूरतों को पूरा कर, जो किसी भी प्रकार से विकलांग है, विशेष रूप से अंधे, बहरे, गूंगे बालकों के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम और विशिष्ट शिक्षण विधि की जरूरत है। ऐसे विशिष्ट बालकों के लिए अभिभावकों और शिक्षकों के प्रति उन बालकों के लिए विश्वास, स्नेह और सुरक्षा की आवश्यकता है। उनके साथ ही ऐसे विशिष्ट बालकों के लिए विशेषज्ञ शिक्षकों की भी आवश्यकता है।

विकलांग बालकों को रोजगारमूलक काम धन्धा और नियमित प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है। जैसे दृष्टिहीन बालकों के लिए संगीत शिक्षा के माध्यम से रोजगार की संभावना प्रबल हो सकती है, जो कुछ विकलांग जो अंधे नहीं हों, उन्हें उनकी शारीरिक स्थिति के अनुसार कताई, बुनाई, सिलाई, कटाई, पाक विद्या सीखाई जा सकती है, जिससे इन लोगों को भी आत्मविश्वास और आत्मरक्षा की भावना जागृत हो सके।

शिक्षा में एकीकरण की अवधारणा - विशिष्ट बालकों मेंव्यक्तिगत आवश्यकताओं के आधार पर शिक्षा केन्द्रों पर विशिष्ट कार्यक्रमों के साथ सामान्य शिक्षण कार्यक्रमों की योजना बनाना, शारीरिक रूप से बाधित छात्र तथा सामान्य छात्रों के आपसी वार्तालाप और परम्परित वार्तालाप द्वारा विचारों का आदान-प्रदान करना, बाधित छात्रों के साथ सामान्य छात्रों द्वारा साथ-साथ संसाधनों का आदान-प्रदान करना, बाधित बालकों के साथ सामान्य छात्रों और नागरिकों के साथ एक साथ काम की योग्यता बनाना आदि एकीकरण के प्रयास के कारण शारीरिक रूप से अपंग तथा सामान्य बालकों की एक ही शिक्षण संस्था मेंप्रबंध करने से अपंग बालक भी सामान्य छात्रों के साथ मुख्यधारा में जोड़ने का उपक्रम शुरू किया जा सकें।

इससे भी छात्रों के साथ समानता के अधिकार जानने में सहयोग मिल सकेगा, जिससे बाधित और सामान्य छात्रों में कार्य सीखने के लिए सामान्य वातावरण उत्पन्न होने में सहयोग मिल सकेगा। इस रूप मेंसमन्वित शिक्षा विशिष्ट शिक्षा का नया प्रगतिशील स्वरूप हो सकेगा।

शारीरिक व मानसिक रूप से बाधित बालकों की शिक्षा की दिशा में एक नया प्रयास किया जा रहा है। बाधित बालकों को सामान्य बालकों के साथ सामान्य स्कूलों मेंशिक्षा प्रदान की जा रही है। सन् 1986 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार 'जहाँ तक संभव होगा, आंशिक रूप से बाधित बालकों तथा हाथ/पैर से कार्य करने मेंअसमथ बालकों की शिक्षा सामान्य बालकों की शिक्षा के समान होगी।'

गंभीर रूप से बाधित बालकों के लिए जिला मुख्यालयों पर आवासीय शिक्षण संस्थाएँ स्थापित की जाय, जिससे गंभीर रूप से बाधित बालकों की शिक्षा को प्रेरित किया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बारकर एच.जे.-इन्ट्रोडक्शन टू एक्सपेक्शनल चिल्ड्रन, मेकमिलन कं. तृतीय संस्करण, 1959
2. क्रो एवं क्रो- विशिष्ट बालक।
3. डॉ. आभारानी बिस्ट-विशिष्ट बालक, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
4. डॉ. हंसराज पाल-प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, हि.मा. कार्यालय, दिल्ली।
5. म.प्र. राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल, सामर्थ्य 2011- विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2006

****

उच्च शिक्षा की भूमिका और समाज के प्रति संस्थागत जवाबदेही

प्रो. एस.सी. राठौर *

प्रस्तावना – भारत देश प्रारभ से ही मूल्य प्रधान देश रहा है। शिक्षा और संस्कृति दोनों का उद्देश्य चरित्र निर्माण तथा आध्यात्मिक मूल्य परख व्यक्तित्व विकास है। पंरतु परंपरागत मूल्यों को तीव्र गति से विघटन और भौतिकता के दवाब में टूटते परिवार। एकल परिवारों के इस एकांत ने आज की नई पीढ़ी को जिस दोराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है। वहां एक और विलासिता और वैभव से परिपूर्ण जीवन है , और दूसरी तरफ अपराधों से भरी दिशा विहीनता। बुरे संस्कार जहां उसे पतनोन्मुखी बनाते है वहीं अच्छे संस्कार उसे आत्मबल प्रदान करते है। उसके जीवन में सकारात्मकता तभी संभव है जब वह अपनी संस्कृति के आधारभूत सिद्धांतो का नियमबद्ध तरीके से पालन करें। ऐसे में ऐसी शिक्षा पद्धति की उसे आवश्यकता है जो उसके सांस्कृतिक मूल्यों को प्राथमिकता देना सिखा सकें। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता इसमें महत्ती भूमिका निभा सकती है।

भारतीय संस्कृति ऐसी ही है जहां समाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का प्रत्यारोपण बालक के व्यक्तित्व में प्रारभ से ही किया जाता है तथा बचपन से ही सहिष्णु, संवेदनशील, सकारात्मक होने के लिए प्रेरित किया जाता है।

पंरतु आज की युवा पीड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मोहजाल में फसकर उनके द्वारा दिये जाने वाले उच्च सैलेरी पैकेजों के प्रलोभन में आकर पैसा बनाने की मशीन बनती जा रही है। उनकी महत्वकांक्षाऐं उन्हें देश छोड़ने पर मजबूर कर रही है भारत देश और स्वयं के समाज के प्रति उनकी जवाबदेही से वह मुंह मोड़ रही है।

'भारत को आजकल 21वीं सदी की विश्वशक्ति के रूप में देखा जाने लगा है। इस रास्तें में कई बाधाऐं भी है सबसे बड़ी बाधा उच्च शिक्षा संबंधी प्राथमिकताऐं जिसे पिछले कुछ समय में काफी नजर अंदाज किया है। कुलपतियों के राष्ट्रीय सम्मेलन में मानव संसाधन मंत्री ने उच्च शिक्षा को ऐसा बीमार बच्चा कहां था जिसे तुरंत इलाज की जरूरत है। ताकि देश के युवा वर्ग को अच्छे अवसर दिये जा सके। 11वीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा को केन्द्रीय विषय बनाया गया है। आधुनिक शिक्षा में क्रांति लाने के लिए विज्ञान की शिक्षा और शोध पर सबसे ज्यादा जोर दिया जाना चाहिए। लेकिन उच्च शिक्षा की खस्ता हालत को देखते हुऐ यह संदेह अवश्य है कि भारत विकास की दर को बनाये रख पायेगा कि नहीं'।

वर्ष 2020 तक भारत की आबादी का 64 प्रतिशत हिस्सा कार्यक्षम जनसंख्या की श्रेणी में संभवत: आ जायेगा जिसकी औसत आयु 29 वर्ष होगी। यानी यह दुनिया की कुल कार्यक्षम आबादी का 5वां हिस्सा होगा। आज इंटरनेट का उपयोग करने वाले 76 प्रतिशत से भी अधिक भारतीय 35 वर्ष से कम आयु वाले है और इनमें भी 42 प्रतिशत 15–25 वर्ष आयु समूह के है। पिछले 10 वर्षो के भीतर ही भारत की युवा आवादी 35.3 करोड़ से बढ़कर 43.0 करोड़ हो गई है। भारत के कुल मोबाईल फोन उपयोगकर्ताओं में 10 करोड़ गांवों में निवास करते है इनमें बड़ी तादात ग्रामीण युवाओं की है। इस युवा आबादी की सोच कुछ कर गुजरने की संभावनाओं का नया ब्रह्मांड तलाशने की है। आज इन युवाओं के सपनों को हकीकत में बदलने के लिए उच्च शिक्षण संस्थाओं की भूमिका एवं समाज के प्रति संस्थागत जवाबदेही एक सोचनीय प्रश्न है।

बहरहाल हमने जल्द ही युवा पीढ़ी को कार्यकुशल बनाने के प्रयत्न नहीं किये तो वर्ष 2020 तक भारत में बेरोजगारों की संख्या बढ़कर 48 करोड़ तक भी पहुंच सकती है। यह एक हकीकत भी है कि आज भारत की कुल कार्यक्षम आबादी का 5 प्रतिशत हिस्सा की कार्यकुशल है। वर्ष 2020 तक भारत की कार्यक्षम आबादी 90 करोड़ होगी। अत: उच्च शिक्षण संस्थाओं में ऐसे स्किल डेवलपमेंट की हमें सख्त जरूरत है। जो उच्च शिक्षा प्राप्त कर रोजगार करा सकें। युनाईटेड नेशंस पॉपूलेशन फंडस (यू.एन.एफ.पी.ए) ने अपनी '1.8 अरब नौजवानों की ताकत नामक रिपोर्ट जारी करते हुऐ कहा था कि इनेवोटर बिल्डर और रीडर होते है , लेकिन ऐसा वे तभी कर सकते है जब उनके पास कौशल अवसर और निर्णय लेने की क्षमता हो दुनिया के 1.8 अरब युवाओं वाले भारत में ही जल्द ही ऐसी उच्च शिक्षा सुनिश्चित करने की कोशिश नहीं की गई तो हमारा 'डेमोग्राफिक डिविडेंट' एक डेमोग्राफिक डिजास्टर' भी बन सकता है।

उच्च शिक्षण संस्थाओं की भूमिका – आज के नवीन युग में ऐसी शिक्षण संस्थाओं की महती भूमिका है जिनमें वेल्यू ऐडेड कोर्स चलाए जाते हो। किसी भी पाठ्यक्रम की सफलता उसकी 'वेल्यू एडीसन' से होती है, बिना इसके अध्ययन कर निकलने वाला विद्यार्थी जीवन में तथा अपने कार्यक्षेत्र में ऊँचाईयों हासिल नहीं कर सकता।

प्रतियोगिता के इस दौर में शिक्षार्थी ऐसी शिक्षण संस्थाओं का चुनाव करते है जो उन्हें ऐसे पाठ्यक्रम उपलब्ध करावें जो बाजार की मांग को ध्यान में रखते हुऐ उनके कैरियर के निर्माण में सहायक हों।

विश्वविद्यालय और शिक्षण संस्थाओं को शोध और बौद्धिक गतिविधियों का केन्द्र होना चाहिए लेकिन हमारे ज्यादातर विश्विद्यालय शोध के लिए नहीं अपितु राजनीति की खबरों के लेकर सुर्खियों में रहते है भारत को ऐसे में कुछ विश्वविद्यालयों की जरूरत है जिनकी शोध के लिए पूरी दुनिया में एक पहचान हो। उम्मीद है भारत यह महसूस करेगा कि महज ज्यादा पैसा लगाकर या नये कालेज या विश्वविद्यालय खोलकर शिक्षा व्यवस्था की इस सड़न का उपचार नहीं किया जा सकता है।

उच्च शिक्षा का मुख्य मकसद छात्रों को आलोचनात्मक ढंग से सोचना, सीखना ,उनकी बौद्धिक क्षमता को विस्तार देना और उनकी जागरूकता बढ़ाना है। तो इस लिहाज से अब तक की भारतीय शिक्षा पूरी तरह से नाकाम ही रही है। भारत प्रत्येक वर्ष 25 लाख स्नातक तैयार करता है परंतु इनकी गुणवत्ता अच्छी नहीं है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, इछावर (म.प्र.) भारत

ऐसे में युवाओ की सदाशयता, आत्मनिष्ठता, स्वावलम्बन तथा आत्मनिर्भता और नैतिकता को बचाये रखने के लिए उनके व्यक्तित्व में नैतिकता व्यवहारिकता तथा माननवीयता के साकारात्मक स्वरूप की आवश्कता है। **इसके लिए आवश्कता है –** पुराने एवं नवीन पाठयक्रमों के मध्य तालमेल बिठाने की जो युवा पीढी में अध्ययन एवं शोध के प्रति रूची जाग्रत करें। बुनियादी रूप से कमजोर, अशिक्षित पालकों की संतानों, नियमित रूप से शिक्षण संस्थाओं में उपस्थित न होने वाले शिक्षार्थियों तथा संचार साधनों के आकर्षण में लिप्त होकर दुराचरण की और अग्रसर होती युवा पीढ़ी की दरकार है कि उन्हें संस्था में विषय विशेषज्ञों द्वारा उनकी क्षमताओं और कमियों को देखते हुए इस तरह से शिक्षा प्रदान की जाना चाहिए कि उनकी शिक्षा उन्हें रोजगारोन्मुखी बना सकें। स्वास्थ्य शिक्षा गुणवत्ता, न्याय , उद्यम और कौशल प्रदान करने वाली शिक्षा उसके व्यक्तित्व को गुणवत्ता प्रदान करती है, योग्यता का निर्धारण कर उसे मापदण्डों पर खरा उतारती है। आकलन की प्रक्रिया उसके मनोबल को बढ़ाकर प्रदर्शन को बेहतर बनाती है। यही हमारी समाज के प्रति सच्ची जवाबदेही होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 12.01.2016 नवदुनिया
2. 01.01.2016 दैनिक भास्कर
3. उच्च शिक्षा विभाग द्वारा जारी एसएसआर तैयार करने हेतु दिशा निर्देश।

****

गुणवत्ता व गुणवत्ता विस्तार वर्ष की कार्ययोजना (विशेष संदर्भ - उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय -1)

सुनील कुमार सिकरवार *

शोध सारांश - म0प्र0 शासन द्वारा **गुणवत्ता विस्तार वर्ष** सत्र 1011-12 में प्रारंभ हुआ व वर्तमान में भी सफलतम् प्रयासों द्वारा जारी है, जिसका उद्देश्य छात्रों के सर्वांगीण विकास एवं गुणवत्ता में वृद्धि करना है। छात्र अपने शैक्षणिक गतिविधियों के साथ-साथ नवाचारों से जुडकर सफलता की ओर निरन्तर अग्रसर हैं। उच्चशिक्षा विभाग के अंतर्गत गुणवत्ता प्रबंधन के तहत् । अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि मूलभूत संरचनाएँ एवं शिक्षण संसाधनों के प्रयोग से हमें गुणवत्ता प्रबंधन के बारे में जानना बहुत ही आवश्यक है शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल एक बार सीखना नहीं हैं बल्कि यह जीवनभर सीखते चलने का उपक्रम है। सतत् अध्ययन निरंतर अधिगम और सतत मूल्यांकन के बिना किसी काम में गुणवत्ता नहीं आ सकती। सेमेस्टर पद्धति अपने हितग्राहियों के कार्य को मात्र सम्पन्न नहीं करती, बल्कि उसमें गुणवत्ता की सुगंध भी पैदा करती है। यह सभी लोगों के सामूहिक एवं स्वैच्छिक क्रियाकलापों का नतीजा है।

प्रस्तावना - म.प्र. की उच्चशिक्षा में सुविधाएं उपलब्ध कराने और गुणवत्ता में सुधार करने के लिए शासन द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहे है। प्रदेश के युवा और ऊर्जावान, माननीय उच्च शिक्षा मंत्री जी के अथक प्रयास से उच्च शिक्षा में गुणवत्ता लाने हेतु 2011-12 को गुणवत्ता वर्ष एवं 2012-13 को गुणवत्ता विस्तार वर्ष घोषित कर उच्च शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन किए, जिसके सुखद परिणाम परिलक्षित हो रहे हैं। 2011-12 के दृष्टिपत्र में विस्तृत दिशा निर्देश के अन्तर्गत पठन-पाठन का विकास, वृक्षारोपण, खाली कक्षाओं में छात्रों की संख्या को बढ़ाना अध्यापन के तरीकों में बदलाव साफ सफाई अभिव्यक्ति प्रोत्साहन कम्प्यूटर जागरुकता, स्वरोजगार कार्यक्रम माडल टेस्ट कार्यशालाओं का आयोजन न्यूज लेटर का प्रकाशन सामूहिक सूर्य नमस्कार प्राणायाम एवं प्रतिभा बैंक का गठन मोटिवेशन कार्यक्रम तथा भाषा सुधार आदि कार्यो के साथ गुणवत्ता विस्तार 2012-13 के लिए गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ट की स्थापना शिक्षकों का स्वमूल्यांकन सत्रारंभ में शून्य सेतु कक्षाओं का आयोजन अध्ययन अध्यापन में आधुनिक तकनीक का प्रयोग सुधार अभियान का विस्तार प्रतिभा बैंक का उन्नयन ई-न्यूज (प्रत्रिका) का प्रकाशन अध्यापन के दौरान पर्यावरणीय चेतना पर विशेष बल हाईटेक पद्धति से वृक्षारोपण कार्यक्रम को प्रोत्साहन सूक्तियों का संग्रह या विचारकोश की रचना एम्बेसडर प्राध्यापक योजना का विस्तार तथा उच्च स्तरीय पुस्तकालय का संकल्प आदि अनेक विषयों पर केन्द्रित विस्तार वर्ष में अनेक कार्य किए गए। उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त उच्च शिक्षा में गुणवत्ता विस्तार हेतु अनेक प्रस्तावों पर भी गौर किया जा रहा है। जिनमें प्रमुख रुप से पुस्तकालय आधुनिक तकनीक से शिक्षा मेधावी छात्र पुरस्कार उत्कृष्ट प्राचार्यो को पुरस्कार आदि अनेक योजनाएं गतिशील है। देखा जाए तो एम्बेसडर प्राध्यापक योजना प्राध्यापकों का डिप्लायमेंट रेमेडियल की कक्षाएं भाषा सुधार एवं लेखन शुद्धता शोध संगोष्ठी कार्यशाला राष्ट्रीय सेवा योजना खेलकूद विवेकानंद कॅरियर मार्ग दर्शन प्रकोष्ठ प्रतिभा बैंक आदि अनेक ऐसी कार्ययोजनाओं को अमल में लाने से निश्चित ही उच्च शिक्षा में गुणवत्ता लाने और गुणवत्ता को विस्तार देने में विशेष सफलता प्राप्त हुई है। म.प्र. के उच्च शिक्षा से जुड़े समस्त महाविद्यालय जो गुणवत्ता विहीन हो चुके थे वे अब गुणवत्ता युक्त हो गये है, आवश्यकता इस बात की है कि गुणवत्ता युक्त उच्च शिक्षा से जुड़े महाविद्यालयों के गुणवत्ता को बरकरार रखने की। वास्तविकता तो यह है कि जो छात्र सेमिनार क्रिज अध्ययन अध्यापन प्रजेंटेशन अभिव्यक्ति क्षमता आदि अनेक महत्वपूर्ण कार्यो से अनभिज्ञ रहे है वे आज गुणवत्ता वर्ष और गुणवत्ता विस्तार के चलते दूसरे प्रदेशों के छात्रों को भी मार्गदर्शन देने में सक्षम हो चुके हैं। देखा जाए जो आज मध्यप्रदेश के 342 शासकीय तथा 636 अशासकीय महाविद्यालयों में सुधार की अनेक योजनाओं को विस्तार दिया जा रहा है। आन लाईन एडमीशन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है इसने पारदर्शिता को बरकरार रखते हुए छात्र-छात्राओं में एक विशेष जगह बनाली है। ग्रामीण छात्राओं को प्रोत्साहित करने हेतु गांव की बेटी योजना का विस्तार किया जाना और उन्हें पॉच हजार रु. की राशि प्रदान करना निश्चित ही गांव की बेटियों को आगे बढ़ने का एक सुनहरा अवसर राज्य शासन ने प्रदत्त किया है। प्रतिभा किरण योजना के अन्तर्गत छात्राओं को छात्रवृत्ति देना छात्राओं के सुनहरे भविष्य की ओर संकेत करना है, इससे उनमें आत्मश्विास की वृद्धि तो होगी ही साथ ही उनकी शिक्षा को आगे भी जारी रखने का हौसला बुलंद होगा।

अब आवश्यकता है उच्च शिक्षा में गुणवत्ता को निरंतर विस्तार देने की इसके लिए प्राध्यापकों के साथ-साथ प्रशासन व छात्र-छात्राओं को भी साथ लेकर चलने की आवश्यकता है। क्योंकि गुणवत्ता एक या दो वर्षो में लाना या लाकर उसे उस हाल में छोड देना उसे पुन: गुणवत्ताविहीन कर देना है। अत: गुणवत्ता निरंतर जारी रहने वाली प्रक्रिया है, आज का युवा वर्ग जो भटकाव की ओर अग्रसर है उन्हें सही दिशा देने की अत्यन्त आवश्यकता है उन्हें रचनात्मक और रोजगारमूलक कार्यक्रमों व गतिविधियों से जोड़ना होगा, रोजगार के अवसर देने होंगे व उनमें आत्मविश्वास को जागृत करना होगा। म.प्र. की उच्च शिक्षा में गुणवत्ता को ओर भी अधिक सशक्त करने हेतु प्राध्यापकों को प्रोत्साहित करने व उन्हें पुरस्कृत करने और उन्हें साथ लेकर चलने की भी आवश्यकता है। इसके लिए शासन को समय-समय पर जुझारु और क्रियाशील अध्ययन अध्यापन करने वाले अकादमिक कार्यो में दक्ष प्राध्यापकों से विचार विमर्श करने की नितांत आवश्यकता है।

* सहायक प्राध्यापक (रसायनशास्त्र) शहीद चंद्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

म.प्र. की उच्च शिक्षा में गुणवत्ता को और भी अधिक विस्तार देने के लिए निम्नांकित बिंदुओं की ओर और भी अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है–

1. भाषा सुधार हेतु प्रत्येक माह शुद्ध लेखन प्रतियोगिता व प्रत्येक छः माह में भाषा सुधार कार्यशाला का आयोजन करना जिससे छात्र–छात्राओं में भाषा के प्रति रुचि निरंतर बनी रहे।
2. छात्र–छात्राओं को सामान्य ज्ञान के लिए एक व्याख्यान 06 माह में आयोजित करने के साथ–साथ सप्ताह में एक पीरियड भी लगवाया जाए।
3. प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु पुस्तकालय में उनसे संबंधित पुस्तकों के साथ–साथ प्रत्येक दिन पाठ्यक्रम से संबंधित अध्यापन कार्य करवाया जाए।
4. कम्प्यूटर की अनिवार्यता को देखते हुए छात्र–छात्राओं के साथ–साथ प्रत्येक प्राध्यापकों को भी उससे जोड़ा जाए, क्योंकि साहित्य के विषय में भी कम्प्यूटर स्नातक व स्नातकोत्तर के पाठ्यक्रमों से जुड़ा हुआ है, शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ छात्र व प्राध्यापक इनसे अनभिज्ञ हैं, अतः इसे अनिवार्य रुप से प्रशिक्षण के माध्यम से उन्हें उसके योग्य बनाया जाएं।
5. छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के विकास हेतु बाहर के विद्धानों को समय–समय पर महाविद्यालय में बुलाकर व्याख्यान कराए जाएं।
6. छोटे–छोटे तकनीक व उपयोगी कौशल सिखाना, शहरों के परिवेश में छोटे–छोटे रोजगारमूलक कौशल सिखाना स्थायी रुप से लागू किए जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. शासन का दृष्टि पत्र गुणवत्ता वर्ष 2011–12 एवं गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012–13
2. रचना द्विमासिकी अंक 97 अगस्त 2012 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
3. रचना द्विमासिकी अंक 98 अक्टूबर 2012 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 36,40,48,60
4. रचना द्विमासिकी अंक 67 अगस्त 2007 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
5. दैनिक जागरण समाचार पत्र इन्दौर 3 जून 2007 पृ0 10
6. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

रैगिंग निवारण में विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय की भूमिका

पूजा नागर *

प्रस्तावना – महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय एक ऐसी संस्था है जो प्रत्यक्ष रूप से रैगिंग निवारण में अपना योगदान देती है। यह रैगिंग से सम्बंधित विधि को सीधे तौर पर क्रियान्वित करती है। रैगिंग महाविद्यालय एवं छात्रावास में घटित होने वाली घटना है। इसलिए भी इनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है एवं समाज भी इनकी सकारात्मक भूमिका की उम्मीद करता है। नि:संदेह अन्य की बजाय इसकी भूमिका महत्वपूर्ण है।

प्रारंभिक स्तर पर रैगिंग से संबंधित घटनाएं सामने आने पर शिक्षक, महाविद्यालय प्रशासन एवं अनुशासन समिति के द्वारा कार्यवाही की जाती है। शैक्षणिक संस्थाओं के द्वारा किये जाने वाले व्यवहार की प्रकृति समस्या निवारण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। जो की इस प्रकार है।

विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय के द्वारा अपनाये जाने वाले उपाय– रैगिंग जैसी क्रिया में विद्यार्थी की संलग्नता का मुख्य कारण, प्राप्त होने वाला हर्ष है। किन्तु यह अन्य विद्यार्थी को मानसिक व शारीरिक पीड़ा देकर प्राप्त किया जाता है। इसके माध्यम से वह अपने मनोबल एवं शक्ति का प्रदर्शन करता है यहां पर कालेज प्रशासन, विद्यार्थी एवं उनके माता–पिता को रैगिंग के दुष्परिणामों के प्रति जागरूक कर इसे प्रतिबंधित किया जा सकता है। एक शिक्षक ही विद्यार्थी को यह संदेश दे सकता है कि रैगिंग किसी भी रूप में विद्यार्थी के लिए लाभदायक सिद्ध नहीं हुई है। यह एक निन्दनीय कृत्य है। महाविद्यालय परिसर एवं छात्रावास में यह संदेश प्रेषित किया जाना चाहिए की रैगिंग से संबंधित क्रिया को अनदेखा एवं सहन नहीं किया जायेगा। दोषी विद्यार्थी पर्याप्त दण्ड का पात्र होगा। इसके अतिरिक्त कालेज प्रशासन अपनी प्रतिबद्धता दिखाकर एक अनुशासनात्मक वातावरण निर्मित कर सकता है। संस्था के द्वारा रैगिंग निषेध कार्यक्रम प्रारंभिक स्तर पर सत्र में प्रवेश के समय और रैगिंग निषेध विधि के विज्ञापन के माध्यम से किया जा सकता है। प्रवेश हेतु इच्छित विद्यार्थी को, विवरण पुस्तिका, प्रवेश फार्म, एवं अन्य साहित्य जारी किया जाना चाहिये जिसमें स्पष्ट शब्दों में यह अभिलिखित किया जाना चाहिए कि रैगिंग जैसी क्रिया यहां प्रतिबंधित है। यदि कोई विद्यार्थी संलग्न पाया जाता है तब वह पर्याप्त दण्ड से दंडित होगा, जिसका विस्तार महाविद्यालय से निष्कासन तक हो सकता है या सीमित समय के लिए महाविद्यालय एवं कक्षा से निलंबन सहित जुर्माना।

इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार से भी दंडित किया जा सकता है।

1. विद्यार्थी को प्राप्त होने वाले अन्य लाभ एवं छात्रवृत्ति का स्थगन
2. कार्यक्रम में प्रस्तुति देने से बहिष्कृत करना
3. परीक्षा परिणाम रोक लेना
4. छात्रावास, भोजनालय, से निष्कासन एवं निलंबन

रैगिंग से संबंधित विधि, संविधि का कोई प्रावधान या अध्यादेश है तब उसे विद्यार्थी एवं उसके माता–पिता की जानकारी में लाया जाना। प्रवेश आवेदन फार्म एवं नामांकन पत्र, रैगिंग निषेध वचनबद्धता के साथ मुद्रित होना चाहिए की विद्यार्थी एवं उनके माता–पिता रैगिंग के दुष्परिणामों एवं कालेज प्रशासन के द्वारा अपनायी जाने वाली योजनाओं के प्रति जागरूक है यदि वे दोषी पाये जाते हैं तब वे उत्तरदायि होंगें। इसी प्रकार की समान वचनबद्धता विद्यार्थी के माता पिता से भी ली जाना चाहिए एवं दोनों के द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए। यदि कोई संस्था प्रथम बार इस प्रकार की व्यवस्था ला रही है तब संस्था को यह निश्चित कर लेना चाहिये कि पूर्व एवं नये विद्यार्थी एवं उनके माता पिता के द्वारा यह हस्ताक्षरित किया गया है या नहीं। सूचना पत्र में समस्त जानकारी सन्निहीत होगी जैसे की रैगिंग जैसी घटना होने पर किसे सूचित किया जाय, फोन नम्बर, सहायता, इत्यादि। नये विद्यार्थी की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए संबधित व्यक्ति का पता एवं फोन नम्बर दिया जाना चाहिये और आवश्यकता पड़ने पर उसे अपने वरिष्ठ की सहायता न लेनी पड़े ताकि वह अपने वरिष्ठ के प्रति बाध्य महसूस न करें।

कालेज प्रबंधन, प्रिंसिपल एवं शिक्षकगण नये विद्यार्थी से बात करें। रैगिंग के विरूद्ध उनके कर्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति जागरूक करें उनमें यह आत्मविश्वास जगाए कि रैगिंग से संबंधित कोई भी घटना यदि उसकी जानकारी में आती है या फिर वे स्वयं इसका शिकार बनाये जाते हैं तब वह कालेज प्रबंधन को बिना किसी भय के शिकायत करें। संस्था के प्रबंधक एवं प्रशासक तुरंत एक मीटिंग में शिक्षक एवं विद्यार्थियों को सम्बोधित करें तथा समस्या के त्वरित समाधान हेतु उपाय सुझाना एवं उनमें सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना प्रेषित करें।

सत्र के प्रारंभ में संस्था को वरिष्ठ शिक्षकगण, छात्रावास प्रशासन एवं वरिष्ठ विद्यार्थियों से मिलकर एक कमेटी का गठन करना चाहिए। जिसका कार्य रैगिंग से सम्बंधित घटनाओं पर निगरानी, उसकी पुनरावृत्ति रोकना, तथा दोषी को स्वयं दंण्डित करना या, समस्या के ऊपर अपने निष्कर्ष, अनुशंसा एवं सुझावों को प्रशासन के सामने रखना ताकि वह उचित निर्णय ले सके। स्थानीय लोग एवं विद्यार्थी को, रैगिंग से होने वाले दुष्प्रभावों के बारे में जागरूक करना एवं किस सीमा तक यह विद्यार्थी के जीवन को प्रभावित कर सकती है। जहां आवश्यकता हो वहां उद्देश्य की पूर्ति हेतु विज्ञापन, सूचना पटल व संकेतों का उपयोग करना। यदि संस्था, रैगिंग की पुनरावृत्ति रोकने में असफल रहती है या संस्था के प्रबंधन ने अनुशासन बनाये रखने में उपेक्षा की है तब यह दायित्व प्रिंसिपल एवं संस्था के प्रशासन में सम्मिलित व्यक्तियों का भी होगा। इसी प्रकार समान उत्तरदायित्व छात्रावास प्रशासन का भी होगा।

यदि रैगिंग अनियंत्रित हो जाती है या यह अपराध संज्ञेय हो जाता है तब पुलिस में इसकी रिपोर्ट की जाना चाहिए। पुलिस को संस्था के अध्यक्ष या अन्य नामित व्यक्ति की उपस्थिति में, परिसर में आने की अनुमति दी जाना चाहिए। पुलिस प्रशासन से यह आशा करते हैं कि उसकी जानकारी में आने

* शोधार्थी, माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

पर वह उचित कार्यवाही करेगी। एवं कार्यवाही करते समय इस बात का ध्यान रखेगी की वह एक विद्यार्थी से व्यवहार कर रही है न की एक अपराधी से। पुलिस की कार्यवाही हिसांत्मक नहीं होना चाहिए। पुलिस का व्यवहार इस प्रकार का हो की विद्यार्थी अपने कृत्यों में सुधार करें। यूजीसी के द्वारा शैक्षणिक संस्थाओं को दिशा निर्देश भी जारी किया गया है। इस तरह की जानकारी प्रेस के माध्यम से जनता में जारी की जा सकती है।

समाज में रैगिंग के प्रति एक सशक्त धारणा यह है की रैगिंग जैसी क्रिया का अस्तित्व समाज एवं महाविद्यालय प्रशासन के द्वारा इन घटनाओं को नजर अंदाज करना, तथा मूक होकर अपना समर्थन देना, के कारण है। रैगिंग जैसी क्रियाओं की धारणा समाज में उत्पन्न होती है एवं समाज के ही द्वारा पोषित भी होती है फिर यही से यह महाविद्यालय में प्रवेश करती है। अत: विधिक उपायों के अलावा हमें सामाजिक उपायों को भी अपनाये जाने की आवश्यकता है

महाविद्यालय एवं छात्रावास में रैगिंग निषेध हेतु दिशा निर्देश – सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा दिये गये दिशा निर्देशों से समय–समय पर रैगिंग के अमानवीय स्वरूप को शिक्षा जगत से समाप्त करने का प्रयास किया गया है। न्यायमित्र गोपाल सुब्रमण्यम मि. PP राव, मि. अल्ताफ, अमहद, के द्वारा प्रस्तुत वाद में न्यायालय के द्वारा दिये गये निर्णय एवं राघवन कमेटी के द्वारा दिये गये सुझाव का पालन किया जाना चाहिये। जो इस प्रकार है –

1. सत्र के आरंभ में संस्था अपने यहाँ व्यवसायिक परामर्शदाताओं की नियुक्ति, नये विद्यार्थियों से वार्तालाप हेतु करें। तथा उन्हें आगामी जीवन के बारे में उचित सलाह तथा परिस्थितियों से संव्यवहार विशेषत: छात्रावास जीवन में अन्य विद्यार्थियों के साथ सामंजस्य स्थापित करना सिखाये।
2. कक्षा के प्रारंभ के दूसरे या तीसरे सप्ताह में, वरिष्ठ विद्यार्थी के आगमन के साथ ही, आगे का कार्यक्रम सूचीबद्ध कर लिया जाना चाहिए।
3. रैगिंग निषेध हेतु प्रारूप, UGC के द्वारा तैयार किया गया है। आवश्यकतानुसार इसे लागू किया जाना चाहिए एवं अन्य नियंत्रक संस्थाए भी इसे अपनाये जैसे की AICTE, MCI, PCI, NCI इत्यादि।
4. अमन काचरू की घटना से यह साबित होता है कि वर्तमान विधि व्यवस्था रैगिंग के निषेध हेतु पर्याप्त नहीं है। वर्तमान विधान को सख्ती के साथ लागू किया जाना चाहिए तथा संस्था के अध्यक्ष एवं प्रशासन यदि रैगिंग के निराकरण में असफल रहते है तब उनके विरूद्ध भी पर्याप्त दण्ड की व्यवस्था हो। इसके अतिरिक्त संस्था के अध्यक्ष, प्रशासन शिक्षक वर्ग, गैर शिक्षक वर्ग, जो रैगिंग की शिकायतों के प्रति असंवेदनशील एवं उदासीन है उनके विरूद्ध विभागीय जॉच की जाए।
5. न सिर्फ विद्यार्थी वरन शिक्षक वर्ग को भी रैगिंग की समस्या एवं इसके रोकथाम के प्रति संवेदनशील होना चाहिए। शिक्षक वर्ग, गैर शिक्षक वर्ग, प्रशासन के अन्य अधिकारी एवं कर्मचारी भी इस समस्या व इसके परिणाम को लेकर गंभीर रहे।
6. प्रिंसिपल, के द्वारा प्रत्येक शिक्षक, गैर शिक्षक वर्ग, कर्मचारी, परिसर में सफाई करने वाले सेवक, वार्डन केन्टीन चलाने वाले सेवक इत्यादि को, रैगिंग जैसी घटना न होने के लिए उत्तरदायी बनाया जाय, तथा उनकी जानकारी में आने वाली रैगिंग की प्रत्येक घटना के बारे में वह तुरंत सूचित करे तथा इन्हें सेवा में लिए जाने से पूर्व यह उनकी सेवा शर्त का अनिवार्य अंग होगा, बाद में उनकी सेवा के अवलोकन का भी आधार होगा।
7. सामान्यत: रैगिंग जैसी घटना, कालेज के केन्टीन एवं छात्रावास के भोजनालयों में घटित होती है अत: वहां कार्य करने वाले कर्मचारियों को यह निर्देश दे की वह सख्ती के साथ इन घटनाओं की निगरानी करें। तथा ऐसी कोई घटना होने पर प्रशासन को तुरंत सूचित करे।
8. नये विद्यार्थियों का छात्रावास वरिष्ठ विद्यार्थियों के छात्रावास से पृथक होगा। संस्था इस तथ्य को सुनिश्चित करेगी या विश्वास दिलायेगी की नये विद्यार्थियों के छात्रावास की निगरानी या निरीक्षण, सुरक्षा गार्ड, वार्डन व स्टॉफ मेम्बर्स के द्वारा किया जा रहा है। वरिष्ठ विद्यार्थी का प्रवेश सख्ती के साथ निषेध किया जायेगा।
9. वह विद्यार्थी जो कि छात्रावास में, प्रवेश लेता है, उसका छात्रावास के वार्डन के साथ स्थापित सौहार्दपूर्ण संबंधों का उत्तरदायित्व ग्रुप के प्रभारी पर होगा। जिस छात्रावास में प्रभारी के ग्रुप के विद्यार्थी निवास करते हैं वहां अकस्मात निरीक्षण करेगा।
10. सामान्यत: छात्रावास में रैगिंग महाविद्यालय में कक्षा की समाप्ति के पश्चात होती है। इस समय छात्रावास परिसर में निगरानी होना चाहिए
11. छात्र के माता–पिता संरक्षक के लिए यह अनिवार्य होगा कि उनकी जानकारी में रैगिंग की घटना आने पर वह संस्था के अध्यक्ष को सूचित करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Vishwa Jagriti mission through ……V/S central Govt, throught cabinet indiankanoon.org.doc, 04/05/2001 case no….writpetittion (civil)655 of 1998 petitioner.
2 Law relating to ragging ,it is a crime ….Don't risk it,naman mohnot,Universal Law Publication co.pvt. Ltd.new delhi india 2014 edition.
3 university of kerala V/S council, pre-college kerla.
4 Ragging in india (Lambert m surhone, mariam T tennoe, susan F Henssonow.
5 A.I.R –All India Reporter.

****

Yoga And Traditional Exercise Cures Dental, Bones And Muscles Problems

Dr. Rajesh Masatkar *

Abstract - Problem of teeth, bones and muscle can be cured by breathing exercise which provides lots of oxygen to the each and every cell of a body. Due to the presence of sufficient amount of oxygen in a cell, It functions well. And by doing traditional exercise metabolic activities and systems get balance Such as Nervous, Circulatory, Skeletal, Digestion, Respiratory, Reproductive, Endocrine, Excretory, Muscular, Immune, Urinary and Lymphatic system work properly. For good health, daily routine of life and nutrition is very important factor in our life.
Keywords - Yoga, Pranayam, Asana.

Introduction - In India health problem arising in every family, 95% families in India have health problem. Today's new born babies have several problems relating to jaundice, weight loss and etc. The age group between 35 to above have dental, bones problem in each family. The dental and bones problem are major problem of the today's life style, because people do not care their health, lack of nutritive food and irregular life style is the cause of this problems.. By keeping above problem in my mind, I short out this problem with the help of Yoga and Traditional exercise.

Objectives -

1. To makes healthy society, states and our country.
2. Minimize the intake of medicine
3. To cures diseases without side effects of medicines.
4. To minimize the treatment cost.

Methodology and Study Area - To solve above problem I use two methods of exercise, those are breathing exercise and traditional exercise. I also focused on daily routine of life style and nutritive food habit of a person. For this study I have taken my own body.

Observation – In observation I have taken two tables. These tables show improvement of health from year 2008 to 2015. Table 1 show improvements of health on the basis of only breathing exercise from year 2008 to 2012. But in Table 2 show improvements of health on the basis of breathing exercise, traditional exercise, daily routine and nutrients from year 2012 to 2015.

Table 1 (See in the last page)

Table 2 (See in the last page)

Result – From above observation table. I found that yoga and traditional exercise is very important for keeping good health in our daily life. For getting above result I have divided following study in four parts.

A. Breathing Exercise.
B. Traditional Exercise.
C. Daily Routine of life.
D. Nutritive food.

A. Breathing Exercise - Breathing exercise is very helpful in maintaining our health. There are three main popular breathing exercises present in yoga, their names are given below.

1. Bhastrika Pranayam
2. Kapal Bhati Pranayam
3. Anulom Vilom Pranayam

By practicing these three breathing exercise daily for 15 min. to 30 min. each in morning time or evening time. During performing these breathings exercise your stomach must be empty. **I practice these three pranayams from last seven years**. Due to these breathings exercise oxygen level in our body may get increased and metabolic activities get balanced. Degenerate cells may get start to regenerate. Digestion and absorption of nutritive food also increase in our body.

B Traditional Exercise - By doing traditional exercise metabolic activities of body becomes normal, excessive fat get burn, strengthening our muscles. If muscles become strong than bones automatically gets strong and comes in proper shape. Traditional exercise may be of following type.

1. Surya Namaskar.
2. Dand Baithak
3. Running
4. Yoga Asanas

1. Surya Namaskar - By doing surya namaskar daily body gets flexible. If you practice daily surya namaskar minimum 30 and maximum 100 times than your body get fit within 2 or 3 months. **I do 30 times surya namaskar daily.**

2. Dand Baithak - It is actual traditional exercise. There are several Dand and Baithak but I have practiced 12 Dand and 08 Baithak for exercise. These exercises are hard to do but it is helpful in making body strong and muscular. By doing these exercise our BMI Body Mass Index comes in normal parameter and also increases the absorbing power

*Asst. Prof. (Botany) Govt. Degree College, Nainpur, Distt. Mandla (M.P.) INDIA

of different types of vitamins, minerals and salts in our body.

3. Running - Running is a good exercise. Its make our respiratory system strong. If you runs 2 to 3 km daily means your body get fit. While running do not take breathe through mouth. It is very harmful for our health because several micro-organisms directly enter into our stomach. If you do not take care of this means your hard work goes to wastage. It shows negative result to you.

4. Yoga Asana - Yoga asana is our traditional exercise. It makes our body more flexible and strong. There are several asanas. You may practice according to your needs such as Sirsasana, Sarvangasana, Halasana, Chakarasana, Mandukasana, Vajarasana, Gaumukhasana, Markatasana and etc. while doing asanas note one thing that if you perform sirsasana means you remain in such posture for 1 to 5 min. according to your strength. For getting maximum benefit you can do these each asanas for 5-5 min daily. According to your strength.

C. Daily Routine of life - Daily routine means work of our daily life such as get up time, sleeping time, eating time, drinking water time and etc. it should be in proper time. I know that many people have night duties, but you may adjust time for our life as possible as you can do. According to my knowledge, I follow following daily routine time for my healthy life.

1. I get up early in the morning around 3:30 am.
2. Drink 3 tumbler of warm water with 10ml of Amla and 10 ml Aloe vera juice.
3. After that I go for fresh.
4. Than I do breathing exercise for One and half hour.
5. After that i do some traditional physical exercise and asana for 30 min.
6. After exercise I take rest for 5 to 10 min.
7. After rest I take bath and breakfast.
8. After that according to my work i do that.
9. I take my lunch between 11 to 11.45 am.
10. After 1 hour 30 min. of lunch I drink water.
11. After that I drink water in a regular interval of 2 hours.
12. After that around 4 to 5 pm. I take some juices or fruits. According to season.
13. In last I take my dinner around 7:30 to 8:00 pm.
14. After 1 hour of dinner I take one tumbler of milk and go for bed.
15. In this way I completed my routine after taking 6 hour night sleeping.

By following above routine I am healthy.

D. Nutrition - For maintaining our health food is an important factor in our life. Following direction are helpful in maintaining healthy life.

1. I eat nutritive foods and avoid junk, fast food.
2. I eat fresh cooked food and fruits as possible as I can intake .
3. I eat salads during lunch and dinner time daily.
4. I take germinate grams and moong in my breakfast.
5. I eat curd during lunch.
6. After one hour of lunch I drink whey occasionally
7. Around 4 to 5 pm I take some fresh fruits.
8. I avoid warehouse repine fruits and pesticides used fruits
9. I buy fresh fruits from market such as Guava, Papaya, and Water melon from villager and eat according to season.
10. I avoid excessive intake of Sugar, Salt, Maida and Fried items in my diets.
11. I eat cow ghee and milk.
12. I eat jaggery (Gud) instead of sugar.

Nutritive food provides balance diet to our body. It is enough to keep ourselves healthy

Analysis of Old And New Clinical Reports (See in the last page)

Evidences – From the above clinical analysis reports, it is clear that I had acidity problem in year 2006 and after that I started yoga in year 2008 and now at present I am healthy. It is proved that due to combination of yoga and traditional exercise unhealthy person can be recover quickly.

Discussion - Depending on timing of breathing exercise its shows effect on health of a person. If a person can do 15 min, 30 min or 1 hour daily yoga than their effect will be different on their body. According to their bodies' nature, normal person can perform 15 min breathing exercise daily. Person having some problem can do 30 min. breathing exercise. If a person suffering from some specific disease than he can perform 1hour breathing exercises daily.

Traditional exercise strengthening our bone and teeth. After practicing traditional exercise absorbing of vitamins, minerals and salts are increasing in our body. Normal person can do easily whole exercise. If a person having some problem can do less exercise for 1 or 2 years. After that he will be performing more exercise because his bone and muscle get stronger than before. Due to traditional exercise calcium deposition level increase in our teeth and bones. Interdental and interradicular bones become stronger than before. Due to the support of Interdental and interradicular bones hardness of our teeth depend in our body. According to my daily routine of time table keeps me healthy for forever. Body's health depends on type of food we take. Junk and acidic food may cause several diseases in human beings and also degenerate our body cells fastly.

Findings -

1. By doing daily yoga and traditional exercise body remain healthy.
2. Yoga provides sufficient oxygen to the body and mental relaxations or peace to the mind.
3. Traditional exercise gives sufficient strength to the body. Due to regular exercise absorption of calcium, vitamins and other minerals increase.
4. Due to absorption of calcium bone and teeth become very strong.
5. Healthy teeth and bones are the symbols of good health.

Suggestions - If we are doing regular yoga, traditional exercise and asanas from age of 9 than your body remain healthy forever.

1. Avoid excessive intake of sugar, salts, maida, fried item, junk foods, and cold drinks in our diets.
2. Eat fresh cooked food and fresh fruits.
3. Give time to your body for doing yoga and traditional exercise, than you will see you have lots of time for doing your works and achieving your goals.
4. By doing yoga and traditional exercise every family, society and young generation remain healthy.
5. Young generation is the future of our nation. If they have strong body and sharp mind than our nation become develops.

Conclusion – yoga and traditional exercise is given by our old great saint of India. It is our old custom. Yoga gives peace of mind and traditional exercise gives flexible and strong body.

Apart from this daily routine and nutritive food is also very important for maintaining healthy life. Everybody wants healthy life but those who are aware of this they can maintain their health. Healthy life gives you many things in your life in comparison to unhealthy life. There is old says that health is a wealth means if you have good health than you will get most of happiness in your life.

References :-

1. Pt. Shri Ram Sharma (2012) Chiryouvan Avam Shashavat Soundary Akhand Jyoti Sansthan, Mathura.
2. Swami Ramdev (2005) Yoga Sadhana V Yoga Chikitasa Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
3. Swami Ramdev (2005) Pranayam Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
4. www.nhs.uk/.../dentalhealth/pages/gum-disease-and overall-health.aspx
5. www.hc-sc.gc.ca/hl-vs/iyh-vsv/life-vie/dent-eng.php
6. www.huffingtonpost.com/.../mouth-health-how-bad-teet_b_397133.html
7. www.sharecare.com/health/.../how-tooth-decay-affect-body
8. https://yogainternaltional.com/…/smart-mouth-13-ways-to-keep-the-dentist-away
9. www.everydayhealth.com/...health/.../healthy-mouth-healthy-body.aspx.

Table 1
Comparative Health Progress After Doing Breathing Exercise Only.
From Year 2008 to 2012

S.No.	Health on 2008	Health on 2012	Remarks
1	I have acidity problemswith vomiting, feelingunconscious	No acidity.	I can do breathing exercise only from 2008 to 2012
2	Fat deposited around stomach.	There is loss of fat, but not in proper manner and body shape	There is slow improvement in my health.
3	Having teeth and gumsproblems	Having little improvement in teeth and gum.	During this period I am not so serious about yoga and nutritive food.
4	Body is hard and stiff	Body is soft and strong	
5	Body is weighted	Body is light	

Table 2
Comparative Health Progress After Doing Breathing, Traditional Exercise, Daily Routine and Proper Intake Nutrition. From Year 2012 to 2015

S.No.	Health on 2012	Health on 2015	Remarks
1	Having fat deposited around stomach and other part in my body.	There is no such unnecessary fat in my body.	Due to yoga and traditional exercise extra fat gets burn.
2	Body is not in proper shapeand flexible.	Body is in proper shape and more flexible.	Due to yoga asanas
3	Having teeth and gumsProblems	Teeth and Gum are very fine and strong	Note : X-Ray of upper and lower teeth shows improvement in interdental and interradicular bone.Due absorption of calcium.
4	Bones of the body are less stronger	Bones of the body are more strong.	
5	Body is weighted	Body is light	Traditional exercise gives sufficient strength to the body.
6	Body is less active	Body is more active	
7	Body is less muscular	Body is muscular	
9	Intake of nutritive food is not maintained properly.	Intake of nutritive food maintained properly.	Due to follow of daily routine time table.

Analysis of Old And New Clinical Reports

Report No.	Date of Diagnosis	Place of Diagnosis	Name of Diagnosis	Problem reported	Remark
Report 1	23/10/2006	Nagpur	Gastroscopy Report	Reflux oesophaitis grade IV	Means acidity
Report 2	16/01/2016	Nainpur	Haemogram	Normal	Hgb. Is 13.6,,Platelet count 449000
Report 3	16/01/2016	Nainpur	Urine Analysis Report	Normal	No Problem
Report 4	16/01/2016	Nainpur	X-ray of lower left 6,7 teeth	Normal	Teeth are strong due to . deposition of calcium
Report 5	16/01/2016	Nainpur	X-ray of upper left 6, tooth	Normal	Earlier tooth was weak but now it is strong.

Report 1

Report 2

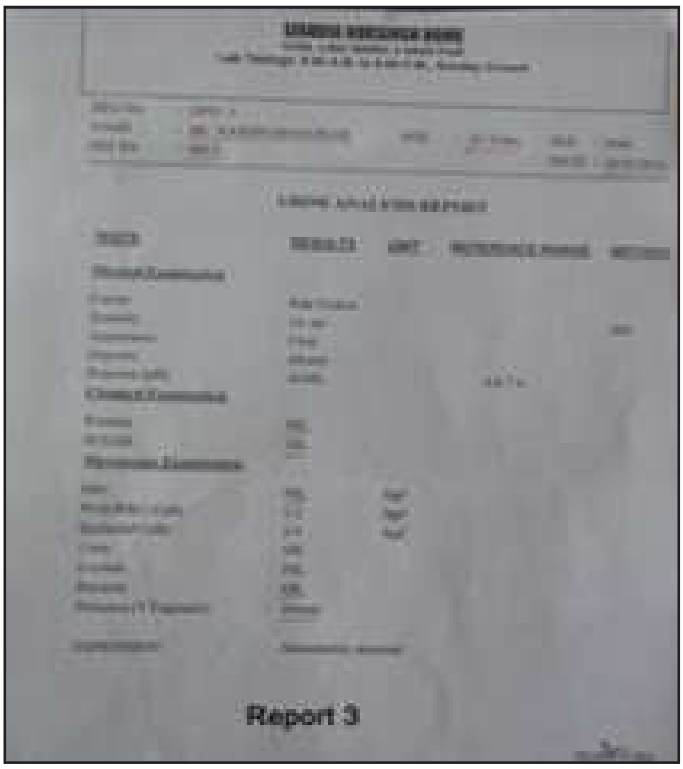

Report 3

Report 4

Report 5

****

Effect Of Ujjaiyei Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players

Grace S. Singh * Dr. V. Perumal **

Abstract - The study is aimed at tracing out the effect of Ujjaiyei Pranayama on psychomotor variables of Hand reaction time and Leg reaction time of Volleyball players. 21 subjects were selected initially with a mortality of 9.5% (Two subjects). Pretest-posttest randomised group design was applied on selected variables. The subjects were in their own schedule with addition of Pranayama for the experimental group. However there was a significant increase in the performance of both the variables. This might be attributed to the effect of Pranayama on nervous system. Thus Pranayama might be recommended as a supplementary exercise for enhancement of Reaction time.
Key words - Pranayama, Psychomotor, Volleyball, Reaction time.

Introduction - Yoga is believed to bring fitness and vigour to physical body along with harnessing of our will and emotions to improve our power of analysis, insight and vision (Bhadoria, 2004). The word yoga means 'unity' or 'oneness' and is derived from the Sanskrit word 'Yuj' which means 'to join'. This unity or joining is described in spiritual terms as the union of the 'individual consciousness' with the 'universal consciousness'. On a more practical level, yoga is a means of balancing and harmonizing the body, mind and emotions. This is done through the practice of Asana, Pranayama, Mudra, Bandha, Shatkarma and Meditation (Saraswati, 2004). Pranayama is the yogic science of breathing.

It is a systematic exercise of respiration, which makes the lungs stronger, improves blood circulation makes the man healthier and bestows upon him the boon of a long life (Jayachitra). Pranayama is more important because it produces deeper effects as far as the outcomes are concerned. In simple words it could be said that asanas are more linked with muscular system, whereas the Pranayama is concerned with nervous system of the body. Unlike other Paranayama Ujjaiyei can be practised throughout the year with certain limitations. In Ujjaiyei Pranayama, both the nostrils are kept open during puraka and rechaka but the glottis is kept partially closed, narrowing the air-pasage at the level of vocal cords (Bhadoria, 2004). The positive effect of practicing yoga, and pranayama in particular, on different cardio-respiratory is well established (Sharma, Meena, Sharma, Meena, Meena, & Chauhan, 2013) however the neurological benefits of yoga have interested scientists all over the world. It has been reported to be beneficial in both peripheral nerve function as well as central neuronal processing (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012). In technical sports, beautiful and graceful movements are products of psychomotor and coordinative abilities. To a great extent it determines the maximum limits to which sports performance can be improved in several sports, specially the sports which depends largely on technical and tactical factors (Singh, 1991). Thus yoga and Pranayama is very well expected to influence different psychomotor functions of human beings. Even there are a few studies in which effect of Pranayama has been tested on reaction time (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran, 2005).

Unlike in the past, modern volleyball is not based on stereotyped pattern of attack where in players hit hard in standard conditions of play. Nicholas(1979) has recomended power, agility, coordination, flexibility,muscular , cardio-respiratory endurance, concentration, quick thinking and reaction times as the performance indicators in volleyball. High class teams now rely on artful and accurate sets, varied in form and agile moves of the front line players to display skilful movements in offense. In modern volleyball, which is a typical game of polystrctured complex movement top notch result requires certain somatic functional and kinesiological characteristics of players including psychomotor abelities. (Yadav & Avadesh, 2014). Further they have also found significant relationship of psychomotor abilities with volleyball playing ability. In the context of nural effect of ujjaiyei pranayama and demand of psychomotor abilities in volleyball, the present study aims at evaluating the use of pranayama to develop psychomotor abilities in Volleyball players.

Objective - To evaluate the effect of Ujjaiyei Pranayama on Psychomotor variables (Hand reaction time & Leg reaction time) of volleyball players.

Methods -

Selection of subject - For the purpose of the study 21 volleyball players (μ_{age} 20.5 ± 1.15) were selected randomly from a volleyball sports club (Approx. training age of 2 years). They were randomly divided into two groups . Group I & II were assigned 10 & 11 players respectively. The treatment

*Research Scholar, Karpagam University, Coimbatore (T.N.) INDIA
**Professor (Physical Education) Karpagam University, Coimbatore (T.N.) INDIA

(Experimental & Control) group was also assigned randomly divided to minimize the effect of extraneous variables. However during the course of the study two players from experimental group discontinued and thus nine players were considered for the final analysis in the experimental group.

Hypothesis -

$H_{0\ (Hand\ reaction\ time)}$: μ_{Adj}-Po-Ujjaiyei = μ_{Adj}-Po-Control

$H_{0\ (Leg\ reaction\ time)}$: μ_{Adj}-Po-Ujjaiyei = μ_{Adj}-Po-Control

Experimental design and protocol - For the purpose of the study *Pretest-Posttest Randomized groups design* (Thomas, Nelson, & Silverman, 2005) was used. The treatment was imparted for 6 weeks, with a daily (excluding Sunday) 30 min session before their regular practise session by a regular yoga practitioner. During testing three trails were provided and the best score was considered. The reaction time of hand & leg was measured through 'Reaction time apparatus', supplied by Anand Agencies, Pune. ANCOVA (Verma, A text book on sports statistics, 2009) was applied and the level of significance was set at 0.05. IBM SPSS Ver. 20 (Trail Version) was used for the analysis of the data.

Criterion measures -

Variable	Test	Unit
Hand Reaction Time	**Electronic reaction time apparatus** (Manual of Reaction time apparatus)	**Sec**
Leg Reaction Time	**Electronic reaction time apparatus** (Manual of Reaction time apparatus)	**Sec**

Results - Findings pertaining to descriptive statistics and Analysis of Covariance of reaction time and speed are presented in table 1-6

Table 1 - Statistics of Leg Reaction time measured in Post testing Descriptive

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	.2285	.0089854	9
Control Group	.2326	.0347979	10

Table 1 denotes that post test reaction time of experimental group was better than control group and that the variation in experimental group is also less than control group.

Table 2 - (See in the last page)

Table 3 - (See in the last page)

Table 3 denotes that there exists a significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.001) is less than 0.05, however the difference of mean is also significant at 0.01 level of significance.

Table 4 - Descriptive Statistics of Speed measured in Post testing

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	.1813	.0104129	9
Control Group	.1838	.0083971	10

Table 4 denotes that post test Hand reaction time of experimental group was better than the control group and that the variation in control group is less than the experimental group.

Table 5- (See in the last page)

Table 6 - (See in the last page)

Table 6 denotes that there exists highly significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.008) is less than 0.05. as well as 0.01 **(Graph See in the last page)**

Conclusion- In the research work undertaken to study the effect of Ujjaiyei Pranayama on Volleyball players, the null hypothesis may be rejected at 5% level of significance in both the cases of Hand Reaction time as well as Leg reaction time. Thus it can be concluded that Ujjaiyei Pranayama is effective in improving Hand reaction time of volleyball players. It is also effective in improving the leg reaction time. The reaction time is a product of nervous system in the body i.e. much of the performance of reaction time is controlled by central nervous system and Pranayama has deeper effect on nervous system of our body as it has been found effective in improving reaction time in many of the earlier studies (Bhadoria, 2004; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran, 2005; Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012). Bhavanani, Ramanathan, & KT (2012) have found the Pranayama to be effective for improving reaction time of mentally retarded children; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran (2005) have also found Pranayama to be effective for improvement of reaction time. However the subjects of the study were not very high level players and they had a training of around two years. Thus the limit to which Pranayama can improve reaction time remains a matter of question and needs to be investigated further. Further there is a need to explore this further by manipulating the duration and intensity of the Ujjaiyei Pranayama. Thus on the basis of current study it can be concluded that Ujjaiyei Pranayama might be effective for enhancement of reaction time in volleyball players.

References :-

1. (n.d.). Manual of Reaction time apparatus . Pune: Anand Agencies.
2. 50 Meter Dash. (n.d.). Retrieved 5 24, 2014, from Topendsports: http://www.topendsports.com/testing/tests/sprint-50meters.htm
3. Abu-Saleh, K. M. (2009). The Effect of Volley Ball Training Program on The Reaction Time. Scientific Journal of King Faisal University (Humanities and Management Sciences) , 10 (1).
4. Bhadoria, B. P. (2004). Effect of pranayama on selected physiological variables and coordinative abelities amond engeneering students. Gwalior: Unpublished thesis.
5. Bhavanani, A. B., Ramanathan, M., & KT, H. (2012). Immediate effect of Mukha bhastrika (a bellows type pranayama) on Reaction time in mentally challenged adolescents. Indian J Physiol Pharmacol , 174-180.
6. Binboga, M., & Suveren, S. Reaction Time Comparison Of Young Volleyball Players In Smasher and Setter

Positions. The Online Journal of Recreation and Sport , 1 (3).
7. Foroghipour, H., Monfared, M. O., Pirmohammadi, M., & Saboonchi, R. (2013). Comparison of Simple and Choice Reaction Time in Tennis and Volleyball Players. International Journal of Sport Studies , 3 (1), 74-79.
8. Jayachitra, M. (n.d.). Effect of pranayama and bandha prctise on selected physiological variables among adolescent girls.
9. Kundu, U. B., & Pramanik, T. N. (2014). Effect of Asanas and Pranayama on Self-concept of school going children. International Journal of Scientific and Research Publications , 4 (1), 1-17.
10. Mackenzie, B. (2004). Ruler Drop Test. Retrieved 05 27, 2014, from www.brainmac.co.uk: http://www.brianmac.co.uk/rulerdrop.htm
11. Madanmohan, Udupa, K., Bhavanani, A., Vijaylakshmi, P., & Surendiran, A. (2005). Effect of slow and fast pranayams on reaction time and crdiorespiratory variables. Indian J Physiol Pharmacol , 3 (49), 313-318.
12. Saraswati, S. S. (2004). Asana Pranayama Mudra Bandha. Munger, Bihar, India: Yoga Publications Trust.
13. Sharma, M., Meena, M., Sharma, R. B., Meena, C. B., Meena, P. D., & Chauhan, N. (2013). STUDY ON THE EFFECT OF YOGA (YOGASANS, PRANAYAM AND MEDITATION). Ind. J. Sci. Res. and Tech , 2 (1), 89-95.
14. Singh, H. (1991). Science of sports training. New Delhi: DVS Publication.
15. Thomas, J. R., Nelson, J. K., & Silverman, S. J. (2005). Research Methods in Physical Activity (5th Edition ed.). Human Kinetics.
16. Verma, J. P. (2009). A text book on sports statistics. Sports Publication.
17. Verma, J. P. (2011). Statistical methods forsports and physical education. New Delhi: Tata McGraw-Hill.
18. Yadav, R. C., & A. k. (2014). Relationship of psychomotor abelities to the playing abelities of interuniversity level volleyball players. International Journal of behaivoural, social and movement sciences , 3 (2), 102-106.

Table 2 - Descriptive statistics of Leg Reaction time in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	.229[a]	.000	.229	.230
Control Group	.232[a]	.000	.231	.232

a. Covariates appearing in the model are evaluated at the following values: Reaction time leg (Pre) = .231437.

Table 3 - Analysis of Covariance for post test data on Leg Reaction time

Dependent Variable: Reaction time (Post)

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	2.223E-005	1	2.223E-005	15.837	.001*
Error	2.246E-005	16	1.404E-006		
Total	1.022	19			

a. R Squared = .998 (Adjusted R Squared = .998)
*Significant at 0.05 level of significance

Table 5 - Descriptive statistics of Speed in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	.181[a]	.001	.180	.183
Control Group	.184[a]	.001	.183	.185

Table 6: Analysis of Covariance for post test data on Speed

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	3.410E-005	1	3.410E-005	9.337	.008
Error	5.844E-005	16	3.652E-006		
Total	.635	19			

a. R Squared = .962 (Adjusted R Squared = .957)

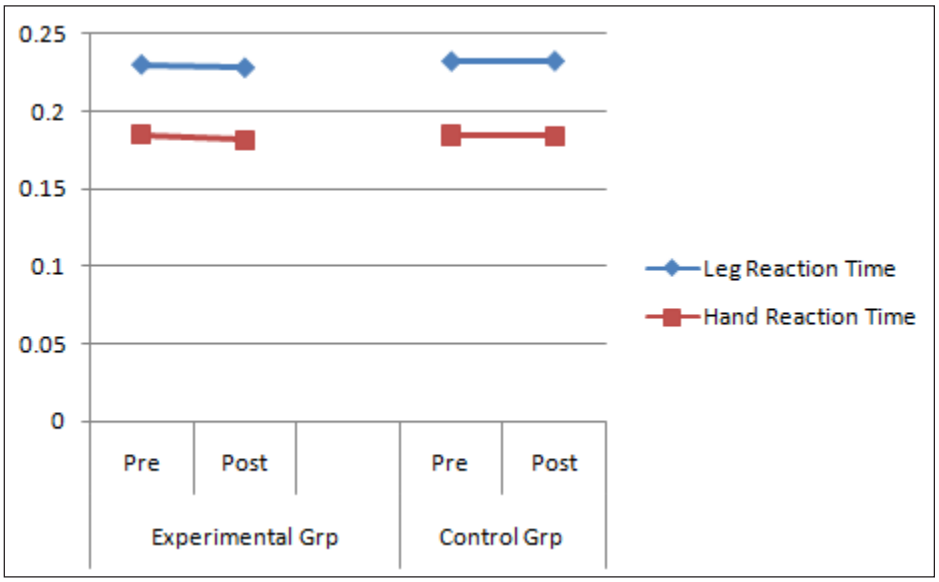

Figure 1- Comparative means of pre and post test results in treatment Groups

****

लिम्बाराम अहारी का खेल प्रशिक्षक के रुप में प्रदर्शन

डॉ. गजेन्द्र सिंह सरोहा * मधु कंवर **

प्रस्तावना – पद्म श्री अवार्ड से सम्मानित तीरंदाजी के अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी को उनके नाम से राजस्थान का बच्चा–बच्चा वाकिफ है। लिम्बाराम तीरंदाजी खेल का पूरे विश्व के चुनिंदा खिलाड़ियों में से एक उत्कृष्ट खिलाड़ी रहा है। लिम्बाराम बाल्यावस्था से ही विलक्षण प्रतिभा का धनी रहा है। खिलाड़ी जीवन में अपने शानदार खेल प्रदर्शन द्वारा सबको प्रभावित किया है। वैसे ही अपने खेल प्रशिक्षक के रुप में भी उनका कार्यकाल उत्कृष्ट रहा है। जिससे उनकी प्रतिभा से हर खिलाड़ी प्रभावित है। लिम्बाराम ने अपने खिलाड़ी जीवन के बाद वर्ष 2007 से प्रशिक्षक की सेवाऐं निरन्तर रुप से दे रहे है। राजस्थान सरकार ने वर्ष 2007 में ग्रामीण एवं पिछड़े इलाकों से खेल प्रतिभाएं तराशने हेतु कुछ स्पेशल खेल प्रशिक्षक लगाने की घोषणा की थी। उसी बजट घोषणा की पालना हेतु वर्ष 2007 में ही लिम्बाराम एवं श्यामलाल को राजस्थान में तीरंदाजी खेल प्रशिक्षक नियुक्त किया गया था। राजस्थान में तीरंदाजी के खिलाड़ियों को अच्छा प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन मिलने से अच्छे तीरंदाजी उभरकर सामने आये। लिम्बाराम का राजस्थान में तीरंदाजी का प्रशिक्षक लगने से इस खेल का अच्छा माहौल तैयार हुआ।

भारतीय खेल प्राधिकरण ने वर्ष 2010 में नई दिल्ली में होने वाले राष्ट्रमण्डल खेलों के लिए अच्छी तीरंदाजी टीम बनाने का लक्ष्य रखा था। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर, राजस्थान में लिम्बाराम के प्रशिक्षक के रुप में सफलता को देखकर भारतीय तीरंदाजी टीम का मुख्य प्रशिक्षक के पद पर लिम्बाराम को वर्ष 2009 में नियुक्त कर दिया गया।

लिम्बाराम ने भारतीय तीरंदाजी टीम के साथ कड़ी मेहनत सच्ची लग्न के साथ कार्य किया। तथा टीम के खिलाड़ियों को सकारात्मक सोच के साथ सदैव आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। जिससे खिलाड़ियों में नियमित अभ्यास एवं सच्ची लग्न से खेल प्रदर्शन में सुधार आता गया। लिम्बाराम का खेल प्रशिक्षक के रुप में राष्ट्रमण्डल खेलो में शानदार प्रदर्शन रहा। जिसको ध्यान में रखकर भारतीय खेल प्राधिकरण ने लिम्बाराम के कार्यकाल को बढ़ाते हुए वर्ष 2012 में होने वाले लंदन औलंपिक खेलों के लिए भारतीय तीरंदाजी टीम का मुख्य प्रशिक्षक नियुक्त कर दिया गया। जिसको भी लिम्बाराम ने बखूबी निभाया एवं टीम ने इस दौरान अच्छा प्रदर्शन किया। लिम्बाराम के प्रशिक्षण से भारतीय तीरंदाजी टीम का प्रदर्शन शानदार रहा है। जो निम्न प्रकार है –

वर्ष 2009 में सेन्टो डोरमिंगो में आयोजित वर्ल्ड कप (स्टेज–1) में 1 स्वर्ण, एवं 2 रजत पदक भारतीय तीरंदाजी टीम को प्राप्त हुए। इसी वर्ष मई 2009 में पोरिक क्रोटिया में भारतीय तीरंदाजी टीम ने 2 स्वर्ण पदक प्राप्त किए। इसी वर्ष जून 2009 में टर्की में आयोजित वर्ल्ड कप में भारतीय तीरंदाजी टीम ने 1 रजत, एवं 2 कास्य पदक प्राप्त किया सितम्बर 2009 में कोलकत्ता में आयोजित 4वीं एशियन आर्चरी (ग्रांड प्रिक्स) में भारतीय तीरंदाजी टीम को 7 स्वर्ण पदक, 1 रजत पदक, 3 कास्य पदक प्राप्त हुए। नवम्बर 2009 में ही बाली इण्डोनेशिया में 2 स्वर्ण पदक, एवं 2 रजत पदक भातीय तीरंदाजी टीम को प्राप्त हुए।

3 से 8 फरवरी 2010 में ढाका बांग्लादेश में आयोजित सेफ खेलो में भारतीय तीरंदाजी टीम को 4 स्वर्ण पदक, 1 रजत पदक, एवं 2 कास्य पदक प्राप्त हुए थे। फरवरी 2010 में ही कुआलालुम्पुर मलेशिया में आयोजित प्रथम एशियन जी.पी. प्रतियोगिता में भारतीय तीरंदाजी टीम को 3 स्वर्ण पदक, 6 रजत पदक एवं 2 कास्य पदक प्राप्त हुए।

मार्च 2010 में नई दिल्ली भारत में आयोजित 'कॉमन वेल्थ गेम्स'' में भारतीय तीरंदाजी टीम ने शानदार प्रदर्शन करते हुए (टेस्ट इवेन्ट) में 4 स्वर्ण पदक, 5 रजत पदक, 4 कास्य पदक सहित कुल 13 पदक प्राप्त किए। मार्च 2010 में ही बैंकॉक थाइलैण्ड में आयोजित दूसरे (द्वितीय) एशियन जी.पी. प्रतियोगिता में भारतीय तीरंदाजी टीम ने 7 स्वर्ण पदक, 2 रजत पदक, 1 कास्य पदक प्राप्त किया। इसी वर्ष मई 2010 में पोरिक क्रोटिया में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–1 में रिकर्व मेन टीम को रजत पदक प्राप्त हुआ। इसी वर्ष जून 2010 में अन्टल्या टर्की में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–2 में रिकर्व मेन में टीम को स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। इसी माह में (Taoyuan Chinese Taipei) में आयोजित तृतीय एशियन आर्चरी ग्राण्ड प्रिक्स में कम्पाउण्ड मेन में भारतीय तीरंदाजी टीम पुरुष वर्ग में रजत, कम्पाउण्ड महिला वर्ग में स्वर्ण में स्वर्ण पदक, कम्पाउण्ड पुरुष व्यक्तिगत स्पर्धा में 1 स्वर्ण, 1 रजत एवं कास्य पदक प्राप्त किया। महिला वर्ग व्यक्तिगत वर्ग में स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

अगस्त 2010 में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–3 में भारतीय तीरंदाजी टीम ने (रिकर्व) रजत पदक प्राप्त किया। इसी वर्ष शंघाई (चीन) में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–4 में भारतीय टीम को रिकर्व मेन में भारतीय टीम को स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ।

वर्ष 2010 में नई दिल्ली में आयोजित कॉमन वेल्थ गेम्स में रिकर्व मेन की व्यक्तिगत स्पर्धा में स्वर्ण पदक, 1 रजत पदक प्राप्त किया। रिकर्व मेन में टीम को स्वर्ण पदक, प्राप्त हुआ। रिकर्व महिला व्यक्तिगत स्पर्धा में स्वर्ण पदक, रजत पदक प्राप्त हुआ। रिकर्व महिला वर्ग में टीम को स्वर्ण पदक, प्राप्त हुआ कम्पाउण्ड मेन में टीक को रजत पदक प्राप्त हुआ। कम्पाउण्ड महिला वर्ग में कास्य पदक प्राप्त हुआ।

वर्ष 2010 में ही (Gaungzhou China) में आयोजित 16वीं एशियन गेम्स में भारतीय तीरंदाजी टीम में रिकर्व मेन व्यक्तिगत स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया। रिकर्व मेन में टीक स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया। रिकर्व महिला टीम स्पर्धा में कास्य पदक प्राप्त किया।

* सहायक प्राध्यापक (शारीरिक शिक्षा) पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

वर्ष 2011 में पोरिक क्रोटिया में आयोजित वर्ल्ड कम स्टेज–1 में भारतीय तीरंदाजी टीम में रिकर्व पुरुष टीम स्पर्धा वर्ग में रजत पदक प्राप्त किया। इसी वर्ष 2011 में ढाका बांग्लादेश में आयोजित तृतीय एशियन ग्राण्ड प्रिक्स एण्ड एशियन यूथ आर्चरी में भारतीय तीरंदाजी टीम ने 11 स्वर्ण पदक, 5 रजत, 4 कास्य पदक प्राप्त किए।

वर्ष 2011 में ही (Antalya) टर्की में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–2 में भारतीय तीरंदाजी टीम ने रिकर्व महिला वर्ग की टीम स्पर्धा में कास्य पदक प्राप्त किया। रिकर्व संयुक्त स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया। वर्ष 2011 में ही में ही आयोजित प्रतियोगिता में भारतीय महिला वर्ग में रिकर्व में टीम स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया। इसी वर्ष 2011 में (Turin Italy) में आयोजित वर्ल्ड कप स्टेज–3 में रिकर्व महिला व्यक्तिगत स्पर्धा में रजत पदक, रिकर्व महिला टीम स्पर्धा में रजत, रिकर्व संयुक्त स्पर्धा में रजत,
कम्पाउण्ड महिला टीम स्पर्धा में भी रजत पदक प्राप्त किया।

इसी वर्ष 2011 में (Legnica Poland) में आयोजित यूथ वर्ल्ड चेम्पियनशिप में रिकर्व महिला व्यक्तिगत स्पर्धा में स्वर्ण पदक, रिकर्व महिला वर्ग टीम स्पर्धा में कास्य पदक, रिकर्व पुरुष टीम स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया।

वर्ष 2011 में ही शंघाई चाइना में आयोजित वर्ल्ड कम स्टेज–4 में रिकर्व महिला व्यक्तिगत स्पर्धा में कास्य पदक, रिकर्व महिला टीम स्पर्धा में स्वर्ण पदक, कम्पाउण्ड पुरुष वर्ग में टीम स्पर्धा में रजत पदक प्राप्त किया। वर्ष 2012 में बैंकॉक थाइलैण्ड में आयोजित प्रथम एशियन ग्राण्ड प्रिक्स प्रतियोगिता में रिकर्व पुरुष में रजत पदक प्राप्त किया।

इस प्रकार लिम्बाराम ने खेल प्रशिक्षक के रुप में सराहनीय प्रदर्शन करके सब को प्रभावित किया है जिससे अनेक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतिभाएं निखरकर सामने आ रही हैं। आगामी आने वाला समय भारतीय तीरंदाजी खेल के लिए स्वर्णिम होगा।

References :-

1. Zeilger, earle.f. (19790 history of physical education and sports Engle wood cliffi Prentice hall, inc.) p.245-46.
2. Kamlesh, M.L. 1988. Physical education: facts and foundation. P.B. Publication Faridabad, P.54.
3. Sing. Ajmer et ai (2000) Modern taxt book of physical education, health and sports kalyani publishers, Ludhiana.
4. Singh. Ajmer et.al_(2008) Essentials of physical education, Olympic movment: Kalyani publisher, Ludhiana. P.- 548-549.
5. NCERT (2009) Psychological aspects of physical education: Saraswati house pvt.Ltd new delhi. P. – 96-97.
6. Report of the working group on sports and physical education formulation of 12th five year plan (2012-17) oct. 2011. Govt of India, minisry of youth affaires and sports, department of sports.
7. Varma K. (2014) – arjuna award Rajkumar ahlawat. An eminent athelete: His personality as coach and add administrator – A cas4e study unpublisher doctoral thesis, department of physical education Banasathali University.
8. Vats. Amit (2014) padamshree madhumita Bist an Indian Badminton player. A case study, unpublished doctoral thesis. Department of physical education Banasathli University .

****

स्मार्ट फोन का नर्सिंग छात्राओं पर प्रभाव (नर्सिंग स्कूल इन्दौर के विशेष संदर्भ में)

कमलिनी विनसेन्ट * डॉ. अमृता खत्री **

प्रस्तावना – मोबाईल का शाब्दिक अर्थ है गतिशील, चलायमान एवं चलता फिरता। www.dict.hinkhoj.com के अनुसार मोबाइल का आविष्कार 1940 में पाश्चात्य देशों में फोन के रूप में हुआ। भारत में यह तकनीक 1994 में अस्तित्व में आयी (हिन्दुस्तान, अनोखी, 2012) यह उपकरण व्यक्ति के सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन को गति प्रदान करता है। भारत जैसे विकासशील देश में सकल फोन घनत्व जहाँ 1996 में 1.3 था, वहीं अब यह प्रति 100 व्यक्ति पर 56 हो गया है। (शर्मा, जे.एस. 2010) तकनीकीगत जीवन शैली को प्रति युवा वर्ग अपेक्षाकृत अधिक आकर्षित एवं प्रभावित हुआ है एवं यह आम संस्कृति भारतीय समाज में दिन-प्रतिदिन लोकप्रिय हो रही है। (सिंह योगेन्द्र, 2008)

मोबाईल तो नर्सिंग छात्राओं के जीवन का इतना अहम हिस्सा बन गया है कि एक दिन भी मोबाईल के बिना जीना उनके लिये मुश्किल हो गया है। मनोरंजन से लेकर दुनिया से जुड़ी सारी ताजा खबरें आप अपने फोन पर कहीं भी कभी भी देख सकते है।

अध्ययन का उद्देश्य-

1 मोबाईल तकनीक एवं छात्राओं के संबंधों का विश्लेषण करना।
2. नर्सिंग छात्राओं द्वारा मोबाइल तकनीक को प्रयोग करने का आधार।
3. नर्सिंग छात्राओं को मोबाईल की आवश्यकता ज्ञात करना। छात्राओं के जीवन में परिवर्तन का अध्ययन करना।
4. मोबाईल तकनीक का अस्पताल पर पड़ने वाला प्रभाव जानना।

अध्ययन क्षेत्र एवं सीमाएँ –प्रस्तुत शोधपत्र इन्दौर जिले के नर्सिंग स्कूल के छात्राओं 2014व 2015 के अध्ययन पर आधारित है। इस अध्ययन का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है। अत: उसके निष्कर्षों का बड़े वृहद क्षेत्र में सामान्यीकरण करना उचित प्रमाणीकरण नहीं होगा।

समग्र एवं निदर्शन- नर्सिंग स्कूल इन्दौर में कुल छात्राओं की संख्या 141 है। जिनमें से केवल 100 विद्यार्थियों को अध्ययन हेतु चयनित किया गया है। उत्तरदाताओं के चयन हेतु देव निदर्शन की नियमित क्रमांकन सूची विधि का प्रयोग किया गया है। चूँकि प्रस्तुत शोध-पत्र में मोबाईल तकनीक का नर्सिंग छात्राओं पर पड़ने वाले प्रभावो , विषय को विश्लेषित करते हुए, तथ्यों का आँकड़ों के माध्यम से मात्र विवरण एवं विवेचन किया गया है, इसलिए प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक शोध प्ररचना की प्रकृति का है।

तथ्य संकलन तथा शोध प्ररचना – प्रस्तुत शोध-पत्र हेतु तथ्य संकलन की दोनों विधियों को अपनाया गया है। प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्तकार एवं अवलोकन का प्रयोग किया गया तथा द्वितीयक आंकड़े विभिन्न पुस्तक, पत्र पत्रिकाओं तथा शासन के अभिलेखों और इंटरनेट से लिए गए है।

सारणी क्रमांक 1

नर्सिंग स्कूल की छात्राओं में मोबाईल प्रयोग की आवश्यकता का कारण

क्रमांक	संपर्क	संस्था	प्रतिशत
1	घर/परिवारिक	20	20
2	शैक्षणिक/ज्ञानवर्धन	55	55
3	व्यवसायिक	16	16
4	अन्य (मनोरंजन)	09	09
	योग	**100**	**100**

स्त्रोत – सर्वेक्षण पर आधारित है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिकांश सारणी से ज्ञात होता है कि अधिकांश नर्सिंग छात्राओं (60 प्रतिशत) शैक्षणिक व ज्ञानवर्धक बातों के लिए मोबाईल का प्रयोग करती है। 20 प्रतिशत ऐसी है जिन्होंने सम्पर्क एवं अस्पताल हेतु माबाईल का प्रयोग उद्देश्य बताया। 16 प्रतिशत ने कहा अपनी जीविका के संसाधनों को जोड़ने के लिए व्यवसायिक उपयोग किया जाता है। 09 प्रतिशत ऐसी छात्रा है जो इसे अपने मनोरंजन के लिए उपयोग करती है।

सारणी क्रमांक 2

नर्सिंग छात्राओं को मोबाईल उपकरण की आवश्यकता

क्रमांक	आधार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अत्यन्त आवश्यक	58	58
2	आवश्यक	40	40
3	कह नहीं सकते	00	00
4	अनावश्यक	02	02
	योग	**100**	**100**

58 प्रतिशत उत्तरदाता नर्सिंग छात्राओं का मानना है कि वर्तमान सामाजिक, मनोरंजनात्मक, शैक्षणिक, व्यवसायिक एवं प्रतिष्ठा सूचक के रूप में मोबाईल अत्यन्त ही आवश्यक है। 40 प्रतिशत नर्सिंग युवाओं में मोबाईल को किसी न किसी रूप में आवश्यक माना है। केवल 02 प्रतिशत उत्तदाता नर्सिंग छात्राएं ऐसी थी जिन्होंने मोबाईल को अनावश्यक माना। उनका कहना था कि मोबाईल के बिना भी सभी काम किए जा सकते है। अध्ययन से स्पष्ट है कि 96 प्रतिशत नर्सिंग छात्राएं मोबाईल को आवश्यक मानती है।

* नर्सिंग ट्यूटर, स्कूल ऑफ नर्सिंग, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** माता जीजाबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सारणी क्रमांक 3

क्रमांक	आधार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	प्राकृतिक चित्र	45	45
2	धार्मिक चित्र/प्रतीक	25	25
3	पारिवारिक सदस्य का चित्र	25	25
4	सेलीब्रिटी का चित्र	05	05
	योग	**100**	**100**

सारणी क्रमांक 03 के अवलोकन से स्पष्ट है कि कई सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों के पश्चात् वर्तमान के आधुनिकता के दौर में भी नर्सिंग छात्राओं प्राकृति एवं धार्मिक भावनाओं के नजदीक है। साथ ही पारिवारिक रिश्तों को भी अहमियत देते है। निश्चय ही युवा पीढ़ी एक ही समय में धार्मिक एवं प्रत्यक्षवादी दोनों ही चिंतन स्तर की जी रही है। तथ्यों के अवलोकन से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 45 प्रतिशत नर्सिंग छात्राऐं अपने मोबाईल पर प्रकृति से संबंधित वाल पेपर का इस्तेमाल करती है। धार्मिक एवं पारिवारिक सदस्यों के चित्रों का वाल पेपर के रूप में प्रयोग करने वाली नर्सिंग छात्राओं की संख्या 25-25 प्रतिशत केवल 5 प्रतिशत नर्सिंग छात्राऐं सेलीब्रिटियों के चित्रों को अपने मोबाईल वाल पेपर बनाया है।

मोबाईल तकनीकी एवं सामाजिक संबंधों में मजबूती – स्थानीय एवं वैश्वीय लोग एक कड़ी में बंधे है। संचार साधनों में वृद्धि, सूचना तकनीक एवं आवागमन के साधनों के प्रसार मोबाईल तकनीक के आविष्कार आदि में व्यक्ति को अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो से जोड़ा है (दोसी एस.एल. 2010) तथा सामाजिक संबंधो की दूरी को कम किया है।

अध्ययन के दौरान नर्सिंग छात्राओं से यह जानकारी चाही गई कि क्या वे मानते है कि मोबाईल तकनीकी से मरीज और नर्सेस संबंध मजबूत हुए है तथा संबंधों में दूरी कम हुई है।

तब निम्नलिखित तथ्य प्राप्त हुए है-

क्रमांक	अभिवृत्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	सहमत	89	89
2	असहमत	04	04
3	कह नहीं सकते	07	07
	योग	**100**	**100**

मोबाईल तकनीकी से सामाजिक संबंधो में मजबूती आती है। ऐसी मानने वाली 89 प्रतिशत छात्राऐं है जबकि 7 प्रतिशत ऐसी छात्राऐं है जिन्होंने कोई राय व्यक्त नहीं की है। जबकि 4 प्रतिशत छात्राओं का मानना है कि इससे औपचारिकता बढ़ती है।

तकनीक एवं सामाजिक स्वास्थ्य – इससे मोबाईल टावरो की संख्या बढ़ गई है एवं विद्युत चुम्बकीय विकिरण का दायरा बढ़या है। मोबाईल के अत्यधिक प्रयोग से शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। हृदयघात, भावेन्द्रियों का खराब होना, साइबर क्राईम, अश्लील संदेश का सम्प्रेषण, एकाग्रता में कमी आई है।

सकारात्मक प्रभाव – नर्सिंग स्कूल की छात्राओं का मानना है कि मोबाईल से वह घर परिवार और मरीजों के सम्पर्क में रहती है इन कार्यों को करने के लिए छात्राओं के समय की बर्बादी होती है थी जो बहुत कम हो गई है।

1. नई-ई दवाओं और उनके प्रयोग के बारे में जानकारी मिलती है। साथ ही किन दवाओं के हानिकारक प्रभाव होनें से उन्हें बाजार से बेचने के लिए प्रतिबंध कर दिया गया है जानकारी प्राप्त होती है।
2. स्कूल की छात्राऐं गेम खेलने और गाना सुनने मूवी देखना के लिये इसका उपयोग करती है।

नकारात्मक प्रभाव – अधिक उपयोग से धन की बर्बादी होती है। मरीज की उपस्थिति नहीं होने से भावनाओं का प्रदर्शन का अभाव होता है। मोबाईल से निकलने वाले रेडियेशन का भी स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभव पड़ता है।

निष्कर्ष – मोबाईल के प्रयोग से छात्राओं के जीवन में परिवर्तन आया है। इससे अधिक प्रयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक परिणाम देखने को मिले है। ये स्मार्ट फोन सुविधा वरदान नहीं सिर्फ आवश्यकता है। मोबाईल तकनीकी सुलभता, सरलता एवं आनन्य का आधार है साथ ही नर्सेस एवं मरीजों के संबंधों को निकट ला रहा है। इस तकनीक का प्रयोग सकारात्मक, रचनात्मक एवं विकासात्मक कार्यों के लिए किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.dict.hinkhoj.com
2. हिन्दुस्तान, अनोखी, (2012) शनिवार, 03 मार्च
3. शर्मा, जे.एस. (2010) नियम चुनौतियाँ व भविष्य (लेख), नवम्बर, योजना।

****

महिलाओं के विरूद्ध हिंसा (घरेलू हिंसा निषेध अधिनियम, 2006 के विशेष संदर्भ में)

चित्रा कुँवर चुन्ड़ावत *

प्रस्तावना – स्वाधीनता के बाद हमारे भारतीय समाज में महिलाओं के समर्थन में उनके सशक्तिकरण के लिए बनाए गए कानूनों, महिलाओं की शिक्षा के फैलाव और महिलाओं की धीरे–धीरे बढ़ती हुई आर्थिक स्वतंत्रता के बावजूद असंख्य महिलाएँ अब भी वर्तमान समय वर्ष–2016 में घरेलू हिंसा का शिकार है। वर्तमान में मौजूद महिलाओं के विरूद्ध हिंसा को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. आपराधिक हिंसा जैसे – बलात्कार, अपहरण, हत्या आदि।
2. घरेलू हिंसा जैसे – दहेज संबंधी मृत्यु, पत्नी को पीटना, लैंगिक दुर्व्यवहार, विधवाओं, वृद्ध महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार इत्यादि।
3. सामाजिक हिंसा जैसे – पत्नी/पुत्रवधु को मादा भ्रूण की हत्या के लिए बाध्य करना, महिलाओं से छेड़छाड़ करना, संपत्ति में महिलाओं को हिस्सा देने से इंकार करना, पुत्रवधू को और अधिक दहेज लाने के लिए बाध्य करना इत्यादि।

आपराधिक हिंसा – आपराधिक हिंसा के अन्तर्गत बलात्कार, अपहरण, हत्या इत्यादि कृत्य आते हैं। बलात्कार की समस्या सभी देशों में गंभीर मानी जाती है। फिर भी सांख्यिकीय रूप में भारत में यह पाश्चात्य समाज की तुलना में इतनी गंभीर नहीं है। उदाहरणार्थ – अमेरिका की बलात्कार के अपराधों की प्रतिवर्ष दर लगभग 26 है, कनाडा में 8 तथा इंग्लैण्ड में 5.5 है। इसकी तुलना में भारत में इसकी 0.5 प्रति लाख है। आयु के हिसाब से बलात्कार 16 से 30 वर्ष के आयु समूह में सर्वाधिक है।

एक नाबालिग (18 वर्ष से कम लड़का तथा 16 वर्ष से कम आयु की लड़की) को उसके कानूनी अभिभावक के बिना बहला फुसलाकर भगा ले जाने को अपहरण कहते हैं। माता–पिता का नियंत्रण और परिवार में स्नेहपूर्ण संबंधों का अभाव तथा भगा कर ले जाने वाले पीड़ित के सम्पर्कों तथा लड़की के किसी परिचित व्यक्ति के साथ घर से भगा ले जाने के निर्णायक कारण होते हैं। मानव हत्या विशेष रूप से नर अपराध है यद्यपि लिंग के आधार पर हत्याओं और उनके शिकारों/पीड़ितों से संबंधित अखिल भारतीय आँकड़े उपलब्ध हैं। फिर भी यह सर्वविदित है कि मानव हत्या के महिला शिकार पुरूषों की तुलना में कम है। महिलाओं की हत्या के प्रमुख कारण छोटे–मोटे घरेलू झगड़े, अवैध संबंध और स्त्रियों की लंबी बीमारी होती है।

घरेलू हिंसा – घर में महिलाओं से मारपीट, यौन उत्पीड़न, गाली गलौच करना, भावनात्मक या शारीरिक उत्पीड़न करना इनमें से कोई भी अपराध करने की धमकी देना तथा दहेज की माँग पर परिजनों द्वारा उत्पीड़न आदि घरेलू हिंसा के अन्तर्गत आते हैं।

दुनिया भर में – तीन में से एक महिला अथवा लगभग एक अरब महिलायें शारीरिक हिंसा, जबर्दस्ती शारीरिक संबंध बनाने या जीवन भर प्रताड़ित होने का दर्द झेलती है और वह भी अपने ही घर के किसी सदस्य अथवा करीबी मित्र के द्वारा।

- हत्या की शिकार 70 प्रतिशत महिलाओं को उनके पुरूष साथी ही मारते हैं।
- केन्या में सप्ताह में कम से कम एक मामला ऐसा देखने में आता है कि जहां एक महिला की हत्या उसका पुरूष मित्र ही करता है।
- मिस्त्र में 35 प्रतिशत पत्नियां अपने पति के हाथों निरंतर हिंसा का शिकार होती है।
- बोलिविया में 20 तथा उससे अधिक उम्र की 17 प्रतिशत शादी के साल भर के भीतर घरेलू हिंसा का शिकार हो चुकी होती है। अमेरिका में हर 15 सेकंड में एक महिला अपने पति, प्रेमी अथवा रिश्तेदारों के हाथों पिटती है।

भारत में – यूनीसेफ में वर्ष 2015 की एक रिपोर्ट के अनुसार देश में 16 वर्ष से ऊपर की 1.9 प्रतिशत किशोरियाँ यौन शोषण का शिकार हो चुकी होती हैं।

घरेलू हिंसा के कारण –

1. कभी–कभी हिंसा की शिकार महिला अपने व्यवहार से जो कई बार अनजाने में होता है, अपने स्वयं के उत्पीड़न की स्थिति उत्पन्न कर देती है।
2. हिंसा के कुछ प्रकरण उस समय होते हैं जबकि आक्रामक नशे में और अत्युत्तेजक एवं लड़ाई करने की मनोदशा में होते हैं और उन्हें यह समझ में नहीं आता है कि उनके इन कार्यों के क्या परिणाम होंगे?
3. महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के कुछ मामलों में उनकी प्रति घृणा और द्वेष की भावना होती है।
4. कभी–कभी आकस्मिकता के कारण जो ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देते हैं जिनके परिणामस्वरूप हिंसा हो जाती है।
5. महिलाओं के प्रति हिंसा में व्यक्तित्व की विशेषताएं भी कार्य करती हैं। वे विशेषताऐं – अत्यधिक शक्की, वासनामयप्रभाव, विवेकहीनता, व्यभिचारी, आसानी से भावनात्मक रूप से अशांत, ईर्ष्यालु, यौन आकर्षक बढ़ रहा सांस्कृतिक प्रदूषण इत्यादि।

घरेलू हिंसा (निवारण) विधेयक – 23 जून 2005 को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने घरेलू हिंसा रोकने के लिए एक विधेयक के प्रस्ताव को मंजूरी दी है। 26 अक्टूबर 2006 से यह कानून पूरे देशभर में लागू हो गया है प्रमुख प्रावधान निम्नवत हैं :–

1. प्रस्तावित विधेयक में उन महिलाओं को भी संरक्षण दिया गया है जिनका प्रताड़ित करने वाले के साथ कोई रिश्ता है और वे एक ही घरमें

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

साथ-साथ रहते हों। उनक बीच का रिश्ता विवाह या किसी अन्य बंधन जैसे गोद आदि लेने का परिणाम है तो भी उसको शामिल किया गया है इसके अलावा संयुक्त परिवार में रह रहे विभिन्न लोगों के साथ जुड़े रिश्तों को भी इससे शामिल किया गया है।

2. ऐसी महिलाऐं भी विधेयक के तहत संरक्षण की अधिकारी होगी जो प्रताड़ित करने वालों के साथ बहन, विधवा, माँ या अकेली महिला के रूप में रहती है।
3. विधेयक के कानून बन जाने के बाद महिलाओं को अपने पति के घर में रहने का अधिकार भी मिल जायेगा। भले ही उसके नाम से हो या न हो।
4. विधेयक में घरेलू हिंसा के विस्तार में व्याख्या की गयी है। इससे शारीरिक, आर्थिक, भावनात्मक, यौन उत्पीड़न या इनकी धमकी के अलावा महिला या उसके परिजनों से दहेज की माँग को भी इसके दायरे में रखा गया है।
5. विधेयक के कानून बनने पर संरक्षण अधिकारी नियुक्ति किये जायेंगे और मामलों के पंजीकरण तथा पीड़ित को चिकित्सा आदि की सहायता उपलब्ध कराने के लिए गैर सरकारी संगठनों आदि की सेवाएं ली जायेगी। (राष्ट्रीय महिला आयोग, रिपोर्ट-2012)

कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ किया गया दुर्व्यवहार – कार्यस्थलों पर महिलाओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार को रोकने के लिए समय-समय पर उच्चतम न्यायालय ने भी इस संबंध में प्रभावी दिशा निर्देश जारी किए हैं। इन दिशा निर्देशों के अनुसार महिलाओं के साथ किए गए यौन उत्पीड़न के अन्तर्गत निम्नलिखित कृत्य आते हैं –

- शारीरिक सम्पर्क बनाया या बनाने का प्रयास करना।
- यौनेच्छा संतुष्टि की माँग करना।
- कामुक चित्र प्रदर्शित करना।
- कामुक टिप्पणी करना।
- अन्य किसी भी तरह का आचरण जो कामुक प्रकृति का हो।

पीड़ित महिलाओं के कल्याण हेतु अपनाऐ गए उपाए – पीड़ित महिलाओं के लिए सरकार ने निम्नलिखित योजनाऐं नीतियाँ बनायी हैं –

स्वाधार – कठिन परिस्थितियों में पड़ने वाली महिलाओं के लाभ के लिए परिवार कल्याण विभाग ने वर्ष 2001-2002 से केन्द्रीय क्षेत्र में एक नई योजना स्वाधार शुरू की है। इस योजना के अन्तर्गत पीड़ित महिला का आवास, खाना-पीना, कपड़े, स्वास्थ्य की देखभाल और परामर्श की सुविधा, शिक्षा, जनजागरण के जरिये सामाजिक और आर्थिक पुनर्वास के कदम, आचरण संबंधी प्रशिक्षण के जरिये कामकाजी हुनर और व्यक्तित्व का विकास किया जाता है।

अल्पकालिक आश्रय गृह – शार्ट स्टे होम की योजना जुलाई 1999 में शुरू की गयी। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड द्वारा चलायी जा रही इस योजना का उद्देश्य उन महिलाओं और लड़कियों का संरक्षण तथा उन्हें पुनर्वास देना है जो पारिवारिक तनावों, सामाजिक उपेक्षा तथा नैतिकता के नाम पर उभरे खतरों की वजह से सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक समस्याओं से जूझ रही है। इस योजना के अन्तर्गत 6 महीने से लेकर 3 वर्ष तक अस्थायी आश्रय, केसवर्क और परामर्श सेवाऐं, चिकित्सा देखभाल तथा मनोवैज्ञानिक उपचार इत्यादि किया जाता है जिससे कि वह पुन: सामान्य जीवन जी सकें।

परिवार परामर्श केन्द्र – इस योजना का उद्देश्य भी ऐसी महिलाओं को परामर्श या रेफरल सेवा या पुनर्वास सेवा उपलब्ध करना है जो परिवार या समाज के अत्याचारो से पीड़ित है या जो पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओं तथा विवादों से परेशान है ये केन्द्र स्थानीय अधिकारियों जैसे – पुलिस थाने तथा अल्पकालिक आश्रय गृहों जैसे संस्थानों से मिलकर कार्य करते हैं।

महिला अधिकारिता के लिए राष्ट्रीय नीति – हाल ही में पारित की गई जिसका उद्देश्य महिलाओं की अधिकारिता, प्रगति तथा विकास लाना तथा महिलाओं के खिलाफ सभी तरह के भेदभाव खत्म करना और जीवन के सभी क्षेत्रों में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना है।

महिला अधिकारिता से संबद्ध संसदीय समिति – वर्ष 1997 में गठित इस समिति ने 30 सदस्य (लोकसभा से 20 तथा राज्य सभा से 10) होते हैं। इसका कार्य राष्ट्रीय महिला आयोग की सिफारिशों पर विचार करना और महिलाओं की स्थिति तथा दशा में सुधार हेतु विभिन्न कार्यो को सुनिश्चित करना है।

राष्ट्रीय महिला आयोग –यह सांविधिक संस्था – नेशनल कमीशन फॉर वूमेन एक्ट-1999 के तहत गठित की गयी है। यह संविधान तथा अन्य कानूनों के अन्तर्गत महिलाओं की सुरक्षा से संबद्ध प्रावधानों की समीक्षा करती है। यह महिलाओं की शिकायतें दूर करने के लिए याचिकाऐं भी स्वीकार करता है और महिलाओं की प्रगति के लिए अनुसंधान कार्य भी सम्पन्न करता है। आयोग के सदस्य जेलों तथा रिमांड होम आदि का मुआयना करते हैं। आयोग महिलाओ से संबंधित विषयों/ मुद्दों के बारे में विचारविमर्श कर सकता है। यह पारिवारिक महिला अदालतें भी लगाता है जिनमें महिलाओं से संबंधित अनेक पारिवारिक और दीवानी विवादों को हल कर दिया जाता है।

निष्कर्ष – उपरोक्त शोध तथ्यों के अनुसंधान के उपरांत हम कह सकते हैं कि घरेलू हिंसा पारिवारिक, सामाजिक विघटन का एक प्रमुख कारक है, परिवार विघटन का दुष्प्रभाव समाज की विभिन्न संस्थानों जैसे विवाह, नातेदारी, धर्म, संस्कृति पर भी अवश्य पड़ता है। देश के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है कि समाज के आधे वर्ग (महिलाओं) को प्रताड़ित करने के स्थान पर उसे प्रोत्साहित किया जाये। वर्तमान समय में महिलायें मानव जीवन के सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर रही है लेकिन यह भी स्वीकारने योग्य तथ्य हैं कि ज्यों-ज्यों बालिकाओं एवं महिलाओं को संरक्षण देने हेतु कानूनी प्रावधान किये गये त्यों-त्यों उन पर अत्याचार बढ़ते ही गये हैं। भारतीय नारी श्रम से नहीं घबराती हैं किन्तु आँसुओं की चिंता करते हुए वह रोटी, असामान्य व्यवहार, अपमान, शोषण से अवश्य घबराती है। अब वह समय आ गया है कि महिलाओं से संबंधित घरेलू हिंसा रोकने संबंधी विषय को और अधिक उलझाना नहीं, सुलझाना होगा। पीड़ित महिलाओं को दुत्कारना नहीं स्वीकारना होगा, तभी सन् 2020 तक भारत को एक पूर्ण विकसित राष्ट्र बनाने में भारतीय महिलायें अपना पूर्ण योगदान दे सकेगी। आइये इसके लिए हम सब भारतीय मिलजुलकर समन्वित एवम् संगठित प्रयास करें तथा इन पंक्तियों को साकार स्वरूप प्रदान करें –

'नारी तुम केवल श्रृद्धा हो, विश्वास रजत, नग-पग-तल में,
पियूष स्त्रोत सी बहा करों, जीवन के सुंदर समतल में।'

.... कामायनी – जयशंकर प्रसाद

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुर्मू, डेविड (2010) : महिला एवं कानून, सं. डॉ. ए.पी. साहू, जर्नल फॉर सोशल डेवलपमेंट।
2. मोदी, डॉ. अनिता : ग्रामीण महिला सशक्तिकरण, सरकारी प्रयास – चुनौतियाँ, कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, अंक-10, अगस्त-2013, पृ-28

3. त्रिपाठी, डॉ. रेणु (2008) : महिला सशक्तिकरण : वायदे और हकीकत, रोहित पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण।
4. वोरा, आशारानी (1983) : भारतीय नारी दशा एवं दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. सक्सेना, योगेन्द्र नारायण (1999) : बढ़ता हुआ नारी उत्पीड़न–पुलिस के लिए बनता चुनौती, साहित्य भवन, आगरा।
6. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी (2010) : सामाजिक मानवशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा (उत्तर प्रदेश)
7. नाटिवि, पी.एन. (2012) : महिला संरक्षण एवं न्याय, अरविंद प्रकाशन, उदयपुर (राजस्थान)
8. आहूजा, राम (1999) : महिलाओं के विरूद्ध हिंसा, रावत पब्लिकेशन, जयपुर
9. Boreland, Maried (1986) : Violence in the Family, Manchester Publication
10. प्रतियोगिता दर्पण, सिविल सर्विसेस क्रॉनिकल, इंडिया टुडे, मंथन, पत्रिकाएँ तथा नईदुनिया, जनसत्ता, पत्रिका, दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, रोजगार समाचार(दिल्ली), रोजगार निर्माण (भोपाल), कम्प्यूटर इंटरनेट पर उपलब्ध विषय से संबंधित शोध अध्ययन सामग्री।

****

भारत में पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का विवेचनात्मक अध्ययन

प्रो. हेमन्त शर्मा * अरविन्द अतुलकर **

प्रस्तावना – मनुष्य ही एक ऐसा जीवन्त प्राणी है जो अपने ज्ञान का आदान-प्रदान करता है। अत: इस आदान-प्रदान को करने के लिऐ उसे ज्ञान का संग्रह केवल मानव मस्तिष्क में ही नहीं हो सकता है। बल्कि ज्ञान का संग्रह सबसे अधिक हमें पुस्तकों से ही प्राप्त होता है और मानव सभ्यता के विकास में सर्वांगीण भूमिका निभाता है। मानव ने प्राचीन समय से ही अपनी सभ्यता, संस्कृति, आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, तकनीकी एवं वैज्ञानिक घटनाओं को संग्रहित करके रखा और प्राचीन समय में मिट्टी की पट्टियों, शिलालेखों, पेपीरोज, ताड़ के पत्ते, पेड़ों की छालों, भोजपत्रों आदि का मानव ने लिखने के लिए किया। इसके बाद जब मुद्रण कला का आविष्कार हुआ तब ये जानकारियाँ मानव के लिये मानव द्वारा कागजों की पुस्तकों पर उपलब्ध करवाई गई। मानव के विकास के लिए ज्ञान जगत के समस्त विषयों का मूल केन्द्र पुस्तकालय ही हुआ करते थे।[1] प्राचीन समय में शिक्षा, संस्कृति, धर्म, ज्योतिष, आयुर्वेद एवं विज्ञान आदि विषयों के समस्त गतिविधियों के केन्द्र विशाल पुस्तकालय ही हुआ करते थें। प्राचीन काल में पुस्तकालय सेवाओं का स्वरूप उतना उत्कृष्ट नहीं था जितना की वर्तमान समय में है लेकिन वर्तमान के पुस्तकालयों से कहीं ज्यादा अधिक गुणात्मक दृष्टि से बड़े एवं साहित्य सम्पन्न प्राचीन पुस्तकालय थे। जिनका लाभ उस समय के अध्ययनरत् छात्रों को प्राप्त हुआ करता था। इस काल के बाद नवीन मध्यप्रदेश राज्य का गठन मध्यभारत, विन्ध्यप्रदेश, भोपाल तथा महाकौशल क्षेत्रों को मिलाकर किया गया था। भारत में पुस्तकालय आन्दोलन का इतिहास सही अर्थो में स्वतंत्रता के पश्चात् प्रारम्भ हुआ किन्तु स्वतंत्र भारत में समय की गति के साथ पुस्तकालयों की व्यवस्था और स्वरूप में जो परिवर्तन हुए उनका व्यापक प्रभाव बाद में पुस्तकालय आन्दोलन पर पड़ा। 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक विज्ञान के वे आधारभूत सिद्धान्त जो इस समय पुस्तकालयाध्यक्षों का विश्व भर में मार्ग-दर्शन कर रहे है वे प्रकाश में ही नहीं आये थे। बदलते युग की माँग के अनुरूप पुस्तकालयों का स्वरूप भी बदला और वे नि:शुल्क सेवा प्रदान करने वाली सामाजिक संस्थाओं के रूप में परिवर्तित हो गये है।[2]

उद्देश्य– भारत में पुस्तकालय आन्दोलन के विकास का अध्ययन करने के लिए इसके विकास काल को दो काल-खण्डों में विभाजित किया गया है-

1. भारत में आजादी के पूर्व पुस्तकालयों का विकास।
2. भारत में आजादी के पश्चात् पुस्तकालयों का विकास।

आजादी के पूर्व में उक्त युग सम्मिलित किये गये है जो इस प्रकार है –

- प्राग्वैदिक युग – 5000 ई.पूर्व से 2500 ई.पूर्व
- वैदिक युग – 2500 ई.पूर्व से 500 ई.पूर्व
- बौद्ध युग – 500 ई. से 1200ई.
- मुस्लिम युग – 1200 ई. से 1700 ई.
- संधि युग – 1700 ई. से 1813 ई.
- ब्रिटिश युग – 1813 ई. से 1947 ई.

भारत में पुस्तकालयों के विकास के युगों को जानने के लिये हम 5000 ई.पूर्व से 1947 ई. तक पुस्तकालयों के इतिहास का अध्ययन में पुस्तकालयों के इतिहास एवं विकास को दर्शाया गया है। इस में यह बताया गया है कि प्राचीन काल से ही पुस्तकालय मानव के सर्वांगीण विकास की आधारशिला थे।

उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन – किसी भी विषय पर शोध करने से पूर्व उस विषय से संबंधित साहित्य का पुनरावलोकन करना अतिआवश्यक होता है। भारत में पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का विवेचनात्मक अध्ययन के विभिन्न पक्षों पर कई अध्ययन सम्पन्न हुए है। इसमें कुछ प्रमुख अध्ययन निम्न प्रकार से है –

1. **अग्रवाल, श्यामसुन्दर (1983)** – 'भारत में महाविद्यालय ग्रंथालयों का विकास और उच्चशिक्षा में उनकी भूमिका' उपयुक्त लेख में महाविद्यालयीन ग्रंथालयों के विकास पर विस्तृत अध्ययन, विकास की विधियों, ग्रंथालयों के कार्य एवं ग्रंथालयों से संबंधित सुझाव के साथ-साथ शिक्षा में ग्रंथालयों की क्या भूमिका है का उल्लेख किया गया है।
2. **शर्मा, सी.डी. (1986-97) –** 'भारत में विश्वविद्यालय ग्रंथालय एवं उनकी समस्याएँ' प्रकाशित लेख विश्वविद्यालय ग्रंथालय के महत्व को दर्शाते हुए उसके उद्देश्यों की विवेचना की है। विश्वविद्यालय ग्रंथालयों के विभिन्न अव्यवों, पाठकों, पाठ्य-सामग्री और कर्मचारी वर्ग की समस्याओं का वर्णन किया है तथा उनके सुधार हेतु सुझाव दिये है।
3. **सोलंकी, एम.के. (2012) –** 'अनुसंधान विधियाँ' लेखक ने इस पुस्तक में अनुसंधान विधियों का सूक्ष्म अध्ययन बहुत ही सरलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। जिसमें उन्होंने अनुसंधान की प्रकृति एवं पृष्ठभूमि, शोध समस्याओं, उपकल्पना के प्रकार, सांख्यिकी के प्रकार, सार्थकता, महत्वशीलता एवं सैद्धांतिक समीक्षा का वर्णात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है।
4. **मिश्र, विवेक (2014)** – 'शोध प्रविधि' इस पुस्तक में लेखक ने विस्तार पूर्वक एवं विवेचनात्मक अध्ययन में सामाजिक शोध के विभिन्न पहलुओं के माध्यम से शोध का महत्व, उद्देश्य में बताया कि शोध की मूल इकाई मानव है एवं सरकारी व सामाजिक महत्व पर प्रकाश डाला और शोध डिजाईन, प्रतिचयन, अवलोकन, प्रश्नावली, साक्षात्कार, आँकडों का प्रबंधन, विश्लेषण का उल्लेख किया है और बताया कि उक्त के बिना शोध कार्य संभव नहीं हो सकता है। शोध के सभी पहलुओं का अध्ययन को सरलता पूर्वक प्रस्तुत किया गया है।

शोध प्रविधि – प्रस्तावित शोध के अंतर्गत भारत में पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का विवेचनात्मक अध्ययन करने हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक तथ्यों का संकलन किया गया है। इसमें द्वितीय स्त्रोतों में पुस्तक, समाचार-पत्र, लेख, आलेख, पत्र-पत्रिकाऐं, इंटरनेट, वेबसाईड की सहायता से अध्ययन

* विभागाध्यक्ष, पुस्तकालय विज्ञान अध्ययनशाला, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)भारत
** शोधार्थी, पुस्तकालय विज्ञान अध्ययनशाला, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)भारत

प्रस्तुत किया गया है।

1. भारत में आजादी के पूर्व पुस्तकालयों का विकास –

1. प्राग्वैदिक युग – इस युग का आधार सिंधु सभ्यता थी एवं हंटर तथा राधाकमल मुखर्जी के अनुसार सिंधु सभ्यता के निवासियों को ऐसी लिपि का ज्ञान था। जिसमें 400 अक्षर थे और वे इस लिपि को पढ़ व लिख सकने में सक्षम थे और भोजपत्रों एवं उनके द्वारा लिखे गये आलेख अब विलुप्त हो गये है। किन्तु इस युग में भोजपत्रों पर लिखा जाना संकेत करता है कि उस काल में ये पुस्तकालय जैसे स्थान हुआ करते थे जिनमें भोजपत्रों एवं आलेखों को सुरक्षित रखा जाता था।

2. वैदिक युग– इस युग में आर्यो का भारत में आगमन हुआ और वे संस्कृत भाषा बोलते थे व ब्राह्मी लिपि में लिखते थे साथ ही सुदूर ग्रामों मे बसे गुरूकुलों में वेद, इतिहास, व्याकरण, पुराण, सैन्य विज्ञान, ज्योतिष, शिल्प, संगीत एवं चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी और गुरूकुल में ग्रंथागार भी थे जिन्हें लघु पुस्तकालयों की संज्ञा दी जाती थी।

3. बौद्ध युग – 6वीं शताब्दी ई.पूर्व भारत में बौद्ध और जैन दो धर्मो का उदय हुआ। संघों और मठों की स्थापना हुई तथा मठों में ग्रंथ संचय करना एवं ग्रंथों की प्रतिलिपी करना इनका उद्देश्य माना जाता था और चीन व जापान आदि देशों से ज्ञान पिपासु आकर इन ग्रंथों से शिक्षा प्राप्त कर लाभान्वित हुये एवं भारत में आये तत्कालीन यात्रियों ने स्वीकार किया कि नालन्दा जैसे विश्वविद्यालय केन्द्रों में पुस्तकालय थे। जिनसे विश्व के अनेक देशों के विद्वानों ने अध्ययन कर माना कि भारत के पुस्तकालयों में ज्ञान का विशाल भण्डार उपलब्ध है। जो कि बुद्धों के प्रमुख शिक्षा के केन्द्र तक्षशिला, नालन्दा, बलभी एवं विक्रमशिला थे। ये सभी विश्वविद्यालय विशाल पुस्तकालयों से सुसज्जित थे। इस काल में दक्षिण भारत में भी पर्याप्त कार्य किया गया जिसे दक्षिण भारतवासी संगम युग के नाम से सम्बोधित किया करते थे एवं पुस्तकालय की परम्पराओं को विकसित किया।

4. मुस्लिम युग – बौद्ध धर्म के ह्रास के बाद भारत में मुस्लिम शासन का उदय हुआ। इस काल में शिक्षा अरबी भाषा के माध्यम से दी जाती थी। उच्चशिक्षा के अनेक केन्द्र बने। आगरा, दिल्ली, जौनपुर, गुजरात, मालवा, इलाहबाद, बीजापुर शिक्षा के केन्द्र थे। मुगल सम्राटों का पुस्तक प्रेम जगत् प्रसिद्ध था। नगरकोट का पुस्तकालय तथा बीदर में महमूद गवां द्वारा संस्थापित पुस्तकालय तत्कालीन पुस्तकालय थे। अकबर का पुस्तकालय विशेष रूप से प्रसिद्ध था जिसमें 25000 श्रेष्ठ ग्रंथ संचित थे। जहांगीर के काल में राज्य को प्राप्त होने वाली अघोषित सम्पत्ति को विद्यालय और पुस्तकालयों के विकास पर खर्च किया जाता था। इस काल में प्रत्येक शिक्षण संस्थान में अपना स्वतंत्र पुस्तकालय होता था।

5. संधि युग– मुगल शासन के पतन से लेकर अंग्रेजों के प्रभुत्व जमने तक का समय संधि युग के नाम से जाना जाता है। इस काल में पुस्तकालयों की स्थापना और प्रगति के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य नहीं हुये। सन् 1812 में स्थापित मद्रास की मद्रास लिटरेरी सोसायटी लायब्रेरी देश का प्रमुख पुस्तकालय था। जिसे हम मद्रास गवर्नमेंट ओरियंटल मैनुस्क्रिप्ट लायब्रेरी के नाम से जाना जाता था इस पुस्तकालय में संस्कृत तथा दक्षिण भारतीय भाषाओं में विलुप्त तथा हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का बहुत बडा संग्रह था।

6. ब्रिटिश युग – अंग्रेजों के भारत में उदय होने से लेकर भारत को स्वतंत्रता प्राप्त होने तक का समय ब्रिटिश युग कहलाता है। 18वीं शताब्दी के अंत में बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास के स्थानों के ब्रिटिश निवासियों ने सशुल्क पुस्तकालयों की स्थापना की थी। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सशुल्क पुस्तकालय अन्य स्थानों में भी खोले गये। इस काल में सार्वजनिक राज्य, केन्द्रीय शोध, शैक्षणिक पुस्तकालयों की स्थापना की बहुतायात से हुई। सन् 1847 से सन् 1900 तक 12 तथा सन् 1901 से सन् 1947 तक 8 महत्वपूर्ण पुस्तकालयों की स्थापना हुई।[3]

उपरोक्त में स्वतंत्रता पूर्व भारत में पुस्तकालयों के विकास क्रम को छ: युगों में विभक्त निम्नानुसार किया है प्राग्वैदिक युग, वैदिक युग, बौद्ध युग, मुस्लिम युग, संधि युग, ब्रिटिश युग का उल्लेख कर यह बताया गया है कि आजादी से पूर्व पुस्तकालयों के विकास के लिए उल्लेखनीय कार्य किये गये। भारत देश प्राचीन काल से ही बौद्धिक ज्ञान के भण्डार के लिए विख्यात रहा है। जिसमें प्राचीन ग्रंथालयों जैसे– नालंदा, तक्षशिला, कौशाम्बी आदि की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इनके अतिरिक्त प्राचीन भारत में बल्लभी, विक्रमशिला, मिथिला, उज्जैन तथा नादिया के ग्रंथालय भी महत्वपूर्ण थे। लेकिन आधुनिक काल में भारत ग्रंथालयों के क्षेत्र में पाश्चात्य देशों की अपेक्षा अत्यधिक पिछड़ा रहा है। भारत में आधुनिक काल में ग्रंथालयों की आवष्यकता सन् 1800 ई. के बाद ही बड़ी तीव्रता के साथ अनुभव की गई थी। भारत में सार्वजनिक ग्रंथालयों के क्षेत्र में सर्वप्रथम प्रयास कलकत्ता लाइब्रेरी सोसाइटी द्वारा एक सार्वजनिक ग्रंथालय की स्थापना कर किया गया। इसके बाद सन् 1830 में बम्बई में बाम्बे जनरल लाइब्रेरी तथा सन् 1835 में कलकत्ता में इम्पीरियल लाईब्रेरी की स्थापना की गई। सन् 1850 में ग्रेट ब्रिटेन में ग्रंथालय अधिनियम लागू हो जाने का कुछ प्रभाव भारत के बंगाल प्रांत विशेषकर कलकत्ते पर भी पड़ा जिसके परिणाम स्वरुप बंगाल के अन्य शहरों में भी ग्रंथालय स्थापित किये गए।[4] जैसे– मदनापुर में राजनारायण बसु मेमोरियल लाइब्रेरी सन् 1851 में हुबली में, सन् 1854 में कृष्णा नगर, सन् 1856 में, आरपाडा में सन् 1859 में, चन्द्रनगर में सन् 1870में, सोनपुर में सन् 1877 में दक्षिणेश्वर में रामकृष्ण लाइब्रेरी सन् 1879 में स्थापित की गई जो सार्वजनिक उपयोग हेतु स्थापित की गई थी, सन् 1902 में लार्ड कर्नल के प्रयासों से इम्पीरियल लाइब्रेरी तथा कलकत्ता पब्लिक लाइब्रेरी को मिला दिया गया तथा सन् 1903 में इस ग्रंथालय के द्वारा सर्वसाधारण के लिए खोल दिये गये। इस नवीन लाइब्रेरी के ग्रंथालयी ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन के सहायक ग्रंथालयी श्री जॉन मैकफलैन नियुक्त किए गए थे। सन् 1933 में आसुदौला इसके ग्रंथालयी बनाये गए तथा सन् 1935 में इस ग्रंथालय में एकट्रेबिग कोर्स भी प्रारम्भ किया गया था तथा इसी वर्ष यहां पर अखिल भारतीय ग्रंथालय संघ की स्थापना की गई थी। बाद में ग्रंथालय का स्वरूप राष्ट्रीय ग्रंथालय का कर दिया गया था। आज यही ग्रंथालय हमारे देश का राष्ट्रीय ग्रंथालय है।

ग्रंथालय आन्दोलन का सार्थक प्रयास सन् 1910 में भारत की देशी रियासत बड़ौदा के तत्कालीन शासक सर श्री सयाजीराव गायकवाड़ (तृतीय) द्वारा अपने प्रान्त के ग्रंथालयों के संरक्षण एवं रख–रखाव हेतु एक स्वतंत्र विभाग खोलकर किया गया। सन् 1915 में प्रथम भारतीय ग्रंथालय विज्ञान पत्रिका लाइब्रेरी मिसलेनी यहां से ही प्रकाशित की गई। बोर्डन साहब के प्रयासों से बड़ौदा राज्य में ग्रंथालय का विकास एवं संख्या में वृद्धि तीव्रगति से होने लगी। सन् 1947 तक इस राज्य में 194 ग्रंथालयों को अपने निजी भवनों में स्थापित करा चुके थे।[5]

ग्रंथालयों संघों ने भी भारत में ग्रंथालय आन्दोलन की गति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सन् 1920 में अखिल भारतीय सार्वजनिक ग्रंथालय संघ की स्थापना का प्रयास हुआ लेकिन विधिवत् रूप से इस संघ की स्थापना सन् 1933 में हो सकी। इस संघ का प्रमुख कार्य

ग्रंथालयियों हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था करना तथा उनकी स्थितियों में सुधार करना था।

2. भारत में आजादी के पश्चात् पुस्तकालयों का विकास – भारतीय ग्रंथालय संघ ने सन् 1946 से सन् 1953 तक एबजिला (ABGILA) नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन किया। सन् 1955 में भारत में आईस्लिक (IASLIC) की स्थापना हुई। राष्ट्रीय स्तर के इन संघों के अतिरिक्त देश के विभिन्न प्रान्तों में ग्रंथालय आन्दोलन को गति प्रदान करने के लिए राज्य स्तरीय ग्रंथालय संघों की स्थापना हुई। जिससे पुस्तकालयों का नियोजित विकास हो पाया। 1 नवम्बर 1956 को नये मध्यप्रदेश राज्य का गठन किया गया था। इस राज्य की चार इकाईयों (मध्य भारत, विध्यप्रदेश, भोपाल तथा विदर्भ) को मिलाकर विशाल राज्य मध्यप्रदेश गठित हुआ। आजादी के पूर्व सन् 1946 को सागर विश्वविद्यालय की स्थापना की गई इसके संस्थापक डॉ. सर हरीसिंह गौर ने जुलाई सन् 1946 में 20 लाख रूपये दान देकर सागर विश्वविद्यालय नाम से की और आजादी के पश्चात् मध्यप्रदेश राज्य में पहला विश्वविद्यालय सन् 1956 में विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन बना इसके बाद राज्य स्तरीय ग्रंथालयों संघों की स्थापना मध्यप्रदेश सन् 1957 में की गई और भारत में प्रथम पुस्तकालय अधिनियम 1948 में पारित हुआ।[6]

देश में स्वतंत्रता के पूर्व पुस्तकालयों का समुचित नियोजित विकास नहीं हो पाया था। लेकिन स्वतंत्रता के बाद 15 अगस्त 1947, 26 जनवरी 1950 से वर्तमान तक पुस्तकालयों के क्षेत्र में बहुत ही उल्लेखनीय विकास हुआ। इसमें कम्प्यूटर की क्रांति का उद्भव होने के कारण पुस्तकालयों की पहुँच आम व्यक्तियों, शोधार्थीयों, कर्मचारियों, शिक्षकों तक आसानी से हो सकी है।

उपरोक्त में भारत के पुस्तकालयों की प्रभावशीलता का विवेचनात्मक उल्लेख प्रस्तुत किया गया है, जिसमें पुस्तकालयों के दो काल का वर्णन किया जिसमें पहला स्वतंत्रता पूर्व देश में पुस्तकालयों के विकास को बताया कि देश में प्राचीन समय में शिक्षा, संस्कृति, धर्म, ज्योतिष, आयुर्वेद एवं विज्ञान आदि विषयों की गतिविधियों के केन्द्र पुस्तकालय हुआ करते थे और यह मनुष्य के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का स्वरूप उत्कृष्ट नहीं था, लेकिन वर्तमान के पुस्तकालयों से कहीं अधिक गुणात्मक दृष्टि से बडे एवं साहित्य सम्पन्न पुस्तकालय थे और मानव ने इनकी सहायता से अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को जाना और प्राग्वैदिक युग, वैदिक युग, बौद्ध युग, मुस्लिम युग, संधि युग एवं ब्रिटिश युगों का विस्तार पूर्वक उल्लेख किया गया है, इन युगों में पुस्तकालयों के विकास को बताया गया और दूसरा आजादी के बाद देश में पुस्तकालयों के क्षेत्र में तीव्र गति से विकास हुआ और इस दिशा में कम्प्यूटर के रूप में एक क्रांति हुई, जिसके द्वारा पुस्तकालयों को नया जीवन मिला और आज देश ही नहीं समस्त विश्व के पुस्तकालयों को कम्प्यूटर की सहायता से किसी भी समय पढ़ व देख सकते है। आजादी मिलने से लेकर आज तक देश में पुस्तकालयों के प्रबंधन में उल्लेखनीय कार्य हुऐ है। जो मानव के विकास में सर्वांगीण भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शास्त्री, द्वारका प्रसाद : पुस्तकालय विज्ञान का परिचय, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स्, इलाहा बाद, 1971 पृ.क्र. 82-85
2. अग्रवाल, श्यामसुन्दर : ग्रंथालय तथा समाज, आर. बी. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 1994 पृ.क्र. 31-48
3. सक्सेना, एल.एस. : पुस्तकालय संगठन तथा व्यवस्थापन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2010 पृ.क्र. 156-160
4. (पूर्वोक्त) अग्रवाल, श्यामसुन्दर पृ.क्र. 44
5. गोपीनाथ, कालभोर : पुस्तकालय शिक्षा और समाज, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2001 पृ.क्र. 274-279
6. रंगनाथन, एस.आर. : भारत में ग्रंथालयों का विकास, ग्रंथालय विज्ञान खण्ड 1 पृ.क्र. 15-16
7. सोलंकी, एम.के. : अनुसंधान विधियाँ, माधव प्रकाशन आगरा, 2012.
8. मिश्र, विवेक : शोध प्रविधि, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2014
9. सिंह, सोनल : ज्ञान जगत स्वरूप संरचना एवं विकास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1998.
10. कपूर, श्यामनारायण : प्राचीन भारत के पुस्तकालय, हिंदुस्तानी, 4 (6) 1936 पृ. 451

****

पर्यावरण प्रदूषण और उसके नियन्त्रण

डॉ. जे. एल. हनोते *

प्रस्तावना – हमारे चारों ओर जो भी प्रकृति है एवं मनुष्य द्वारा निर्मित वातावरण है, ये सभी मिलकर पर्यावरण का निर्माण करते है। जिस मिट्टी में पेड़–पौधे अंकुरित होकर बड़े होते है, जिस धरती पर हम रहते है, जो हम पीते है, जिस वायु में हम साँस लेते है, जिन वस्तुओं को हम खाकर अपनी भूख शान्त करते है, वे सभी वस्तुएं हमारे पर्यावरण का निर्माण करती है।

पर्यावरण प्रदूषण आज वर्तमान में भीषण समस्या है। आने वाले समय में जहरीले विषाक्त एवं दम घोटने वाले वातावरण की कल्पना से ही मानवता चीत्कार कर उठती है। वास्तविकता में यह प्रदूषण भी मानव की वैज्ञानिक तकनीक एवं शक्तियों का परिणाम है। 21वीं शताब्दी में जनसंख्या वृद्धि के कारण सम्पूर्ण मानवजाति के सामने प्रकृति एवं पर्यावरण को लेकर अस्तित्व कमजोर होने की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है। यद्यपि पर्यावरण सन्तुलन की विशेष स्थिति प्राणियों में पायी जाती है, फिर भी पर्यावरण की अपनी एक सीमा है। इस सीमा से परे पर्यावरण अपने आप ही प्रदूषित हो जाता है।

जनसंख्या वृद्धि के कारण अनेक प्रकार से पर्यावरण प्रदूषित होता है। क्योंकि आज विश्व में दिन–प्रतिदिन पर्यावरण प्रदूषण की दर अत्यंत तीव्र होती जा रही है। आणविक विस्फोट, रासायनिक रिसाव, कीटनाशक दवाएं, रासायनिक खादे बढ़ता हुआ औद्योगीकरण आदि से भी पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि हो रही है।

वनों के विनाश का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव – वनों के विनाश का पर्यावरण पर तीव्र एवं प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जो निम्न प्रकार है :–

1. वनों के विनाश से मृदा अपर्दन तेजी से होता है जिसका पर्यावरण एवं मानव दोनों पर ही पड़ता है।
2. वनों के विनाश से जब प्रदूषण होता है क्योंकि वनों की कटाई से मृदा अपर्दन होता है। परिणाम स्वरूप मृदा वर्षा के जल के साथ बहकर नदियों के जल में एकत्रित हो जाती है जिससे नदियों का जल स्तर घट जाता है तथा प्रदूषण बढ़ जाता है।
3. वन विनाष के कारण तूफानों, बाढ़ों आदि के विनाशकारी बाढ़ वृद्धि होती है। जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ जाता है।
4. वन विनाश के कारण कई उपयोगी पादप व जन्तु प्रजातियां नष्ट हो जाती है जिसके कारण जीवित कोषों एवं प्राकृतिक संसाधनों में कमी आती है।
5. वनों के विनाश के कारण हरित गृह प्रभाव पड़ता है जिससे भू–मण्डल का ताप बढ़ जाता है जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने में सहायक होता है।
6. वन आच्छादिन क्षेत्र मनोहारी दृश्य पैदा करते है, जिससे मन को शांति प्राप्त होती है, किन्तु वनों की कटाई से दृश्यों का विनाश हो जाता है।

भारत की स्थिति – भारत में इस दिशा में बहुत कम अनुसंधान हुये है। यहां कोयले और पेट्रोलियम के दहन और धातुओं के विघटन के परिणामस्वरूप निकली हुई सल्फरडाइ ऑक्साइड गैस ही अम्ल वर्षा का प्रमुख कारण है। जहां एक ओर मुम्बई, कोलकत्ता और दिल्ली जैसे बड़े शहरों में सल्फरडाइ ऑक्साइड की सान्द्रता के अधिक होने के कारण स्थिति काफी गम्भीर हो चुकी है, वहीं अहमदाबाद, कानपुर और हैदराबाद जैसे औद्योगिक नगरों में भी खतरे की घंटी बज चुकी है। राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान (नीरी), कानपुर द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार मुम्बई में सबसे ज्यादा सल्फरडाइ ऑक्साइड गैस वातावरण में निर्मुक्त होती है। अम्लीय प्रदूषण का दूसरा बड़ा स्त्रोत धातुओं (ताँबा, सीसा और जस्ता) का विघटन है। ताँबे के विगठन से 11000 टन और जस्ते से 21000 टन सल्फरडाइ ऑक्साइड गैस निर्मुक्त होती है। साथ ही गंधक का तेजाब बनाने वाले संयंत्रों और कागज उद्योगों से ही सम्पूर्ण सल्फरडाइ ऑक्साइड का 4 प्रतिशत निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त दूसरे उद्योगों और घरेलू कार्यो में ईधन के दहन से निकली सल्फरडाइ ऑक्साइड नाइट्रोजन ऑक्साइड और दूसरी गैसें भी पर्यावरण को निरन्तर प्रदूषित करती रहती है।

भारत में शाहजहाँ और मुमताज के अमर प्रेम का उज्जवल प्रतीक, विश्व पर्यटक का आकर्षक केन्द्र और संगमरमरी बदन वाला कला का अद्धितीय स्मारक ताजमहल भी अम्ल वर्षा की चपेट से मुक्त नहीं रह सका है। ताजमहल से 40 किलोमीटर दूर स्थित मथुरा तेलशोधक कारखाने से निकलने वाली गैस से ताजमहल के लिए दिन–प्रतिदिन खतरा बढ़ता जा रहा है। इस गैस के दुष्प्रभाव से श्वेत धवल संगमरमर पीला पड़ना प्रारंभ हो गया है। इस तेल शोधक कारखानें के अतिरिक्त ताज के चतुर्दिक 250 अन्य छोटे–बड़े उद्योगों और रेल्वे शंटिग यार्डो के विषैले धुएँ ने समस्या की गंभीरता को और बढ़ा दिया है। मात्र तेल शोधक कारखाने से ही प्रतिदिन निकलने वाली अनुमानित सल्फरडाइ ऑक्साइड गैस 5 टन है। इसके कुप्रभाव का इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। दिल्ली स्थित लाल किले का सुर्ख रंग भी दो रेल्वे यार्डो से निकले धुएँ के कारण फीका पड़ने लगा है। कितने ही अन्य ऐतिहासिक स्मारक और कलात्मक भवन इस जहरीली वर्षा के कुप्रभाव से विनाश की ओर कदम बढ़ा रहे है। इनके सौन्दर्य के संरक्षण की ओर अभी तक कोई विशेष प्रयत्न नहीं किये गये है। यद्यपि इसके प्रति जागरूकता बढ़ी है। संगमरमर और अन्य पत्थरों पर अम्ल वर्षा के प्रभाव की गंभीरता को देखते हुए ही इसे स्टोन लेप्रसी या स्टोन कैन्सर का नाम दिया गया।

पर्यावरण प्रबन्ध/नियन्त्रण –

1. मानवीय कार्यो द्वारा प्रकृति के घटकों की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव न पड़े जिससे जल, मिट्टी, वायु तथा वनस्पति अपने प्राकृतिक रूप में उपयोग के बाद भी बनी रहे।
2. प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों का उपयोग अत्यन्त परिवकृत विधि द्वारा किया जायें, जिससे संसाधनों की पुनर्जनित प्रक्रिया प्रभावित न हो सकें।

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

3. अनवीनीकरण संसाधन एवं ऐसे संसाधन जिनका पुनर्निर्माण दीर्घ अवधि में होता है अथवा पुन: होता ही नहीं है, अर्थात अनवीनीकृत संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाये कि आगे वाली पीढ़ी भी इनसे लाभान्वित हो सके।
4. मनुष्य के ऐसे बहुत से क्रिया–कलाप है जो आज के आर्थिक क्रिया–कलाप है जो आज के युग में प्रतिस्पर्धात्मक हो गये है। प्रतिस्पर्धा ने इन क्रियाओं को और भी अधिक तीव्र कर दिया है जिससे स्थानीय पर्यावरण का ह्रास और पर्यावरण प्रदूषण की समस्याएँ जन्म ले रही है। उत्पन्न समस्याओं पर अतिशीघ्र नियन्त्रण की आवश्यकता है।
5. प्रकृति में स्वत: ही शुद्धिकरण की क्षमता होती है। पारिस्थितिकी तन्त्र की स्थिरता एवं उत्पादक निरन्तर बनी रहे। यह पर्यावरण प्रबन्धन की मूल विचारधारा है।
6. पर्यावरण प्रबन्धन में संसाधनों के संरक्षण उनके दीर्घकालिक उपयोग और अधिकाधिक उपयोग की योजना समाहित होती है।
7. पर्यावरण प्रबन्धन क्षेत्रीय पर्यावरण समस्याओं का तत्काल किया गया समाधान है।
8. उत्पाद के साथ सह उत्पाद भी पर्यावरण प्रबन्धन का अंग है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि, यदि पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का तत्काल समाधान न ढूंढा गया तो हम अपनी अनमोल धरोहरों को तो खो ही बैठेंगे, मानव जीवन और स्वास्थ्य को होने वाली गंभीर हानि से स्वयं को तथा आने वाली पीढ़ियों को भी शक्तिहीन बना डालेंगे। वायु द्वारा प्रवाहित सल्फर प्रदूषणों के कारण अनेक श्वांस रोगों जैसे–दमा और ब्राकाइटिस का भय भी बना रहता है। अमेरिका के शोधकर्ता लियोनार्ड हैमिल्टन के अनुसार तो जीवाश्म ईधनों के दहन से निकले एसिड सल्फेट प्रतिवर्ष 7500 से लेकर 1,20,000 मौतों के उत्तरदायी है। उद्योगों और जीवाश्म ईधनों के दहन एवं धातुओं के विगठन से निकलने वाली विषैली गैसों के निपटान की समुचित व्यवस्था पर गंभीरता पूर्वक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

जनजातीय महिलाओं के विकास में स्वसहायता समूह की भूमिका (अलीराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

दिलीप चौंगड *

प्रस्तावना – हमारा समाज पितृसत्तात्मक समाज है। आधुनिक काल तक के स्त्री विमर्श के अध्ययनों से ज्ञात होता है कि समाज में लिंग आधारित भेद सभी स्तरों पर मौजूद हैं। न सिर्फ भारतीय समाज में अपितु वैश्विक स्तर पर भी लिंग आधारित भेद स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। **O'Conell(1994)** के शब्दों में, 30 विकासशील देशों के आंकड़े बताते हैं कि 1–4 वर्ष की आयु में बालिका की मृत्यु दर बालक से कहीं ज्यादा है । बालक के शिक्षा व स्वास्थ्य का ध्यान रखा जाता है, वहीं बालिकाओं को घरेलू कार्य व छोटे भाई–बहनों की जिम्मेदारी दे दी जाती है। **Moser (1993)** के अनुसार विकासशील देशों में महिलाएं तिहरी भूमिका का निर्वहन करती हैं।

1. प्रजनन कार्य – बच्चों का प्रजनन, पालन पोषण व विकास।
2. उत्पादक कार्य – घरेलू उत्पादन (कृषि कार्य)।
3. सामुदायिक प्रबंधन– जल प्रबंधन, स्वास्थ्य एवं शिक्षा।

ये सभी कार्य स्वैच्छिक व अवैतनिक होते हैं। **Michel,A. (1991)** का मत है कि शुरूआती दौर से आज तक सभी समाजों में स्त्री के लिए विशिष्ट निर्धारित व्यवहार होते रहे हैं। समाजीकरण की प्रक्रिया में स्त्री को बचपन से लड़की की तरह बैठना, चलना, बोलना और व्यवहार सिखाया जाता है और लड़कों को सबल बनाया जाता है। ग्रामीण भारत में 90 प्रतिशत कार्यशील महिलाओं की आबादी लघु एवं कुटीर उद्योग में लगी है।

भारत में भी गरीबी की समस्या प्रबल है और गरीबी की मार स्पष्टतया महिलाओं पर अधिक प्रभावी होती है । संपन्नहीनता, निरक्षरता, शिक्षा, कला–कौशल, की कमी तथा तकनीकी कार्यकुशलता की कमी के चलते महिलाएं विकास से कोसों दूर होती है। **World Bank** के अनुसार कोई भी देश तब तक विकसित नहीं हो सकता जब तक की उसकी आधी आबादी (महिलाओं) को विकास के समान अवसर नहीं मिलते। अत: हम सभी को महिलाओं को विकास के समान स्तर तक लाने में सहायता देनी होगी हालांकि भारत के संविधान में महिला के लिए समान अधिकारों और अवसरों का प्रावधान किया गया। **Karat,Vranda** ने अपने अध्ययन में पाया है कि विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका आदि के जरिए भी महिलाओं की प्रगति में बाधाएं खडी की जाती हैं। इस तरह हमारा समाज अपनी आधी शक्ति की योग्यता और उसकी क्षमता से वंचित है।

भारतीय समाज में अधिकांश महिलाएं कम आय वाले कार्यों में असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत हैं। समान कार्य के लिए समान वेतन अधिनियम 1976 लागू होने के बाद भी स्त्री व पुरूष की मजदूरी में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। ग्रामीण भारत में मजदूरी रिपोर्ट में स्त्री व पुरूष को मिलने वाली मजदूरी में 27.6 प्रतिशत अंतर पाया गया है। यदि महिलाओं के ऐसे सभी कार्यों की गणना की जाय तो गांव में 88 फीसदी व शहरों में 68 फीसदी महिलाएं आर्थिक दृष्टि से उत्पादक है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि महिलाओं का विशेषकर जमीनी स्तर की महिलाओं का जीवन आज भी कठिन व चुनौती भरा है। जनजातीय महिलाओं को रोजगार के अवसर कम प्राप्त होते हैं, तथा उनके जीवन स्तर में सुधार कम हो पा रहा हैं। इसका मुख्य कारण ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में सीमित प्रभाव रहा है। इन कार्यक्रमों का लाभ ग्रामीण इलाकों में रहने वाली जनजातीय महिलाओं तक नहीं पहुंच पा रहा है। इसलिए सामान्य विकास कार्यक्रमों के साथ–साथ महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम भी चलाए जाए।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सर्वप्रथम सन् 1954 में सरकार ने ग्रामीण विकास कार्यक्रम की शुरूआत की, लेकिन महिलाओं की वास्तविक भागीदारी का प्रारम्भ सन् 1974 में हुआ। महिलाओं की व्यवहारिकता और निपुणता को दिखाने के लिए गरीबी निवारण एवं विकास कार्यक्रमों की आवश्यकता पर जोर दिया। ग्रामीण विकास के अन्तर्गत महिला रोजगार के प्रसार से महिलाओं की समाज के सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में उनका सहयोग लगातार बढ़ रहा है। जैसा कि सन् 1995 में मानव विकास रिपोर्ट में बताया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में महिला का कार्य सहभागिता की दर अधिक है। भारतीय श्रम में महिलाओं का योगदान एक तिहाई है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में 90 प्रतिशत व शहरी क्षेत्रों में 10 प्रतिशत महिलाएं असंगठित क्षेत्र में कार्यरत् है। भारत सरकार ने महिलाओं के उत्थान के लिये प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना में भरसक प्रयास किया गया है किन्तु विडम्बना यह है कि आज भी पुरूष प्रधान समाज होने से इसका लाभ महिलाओं को प्राप्त नहीं हो पा रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन के निम्न उद्देश्य निर्धारित किए गए है –

1. स्वसहायता समूह के माध्यम से सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण को ज्ञात करना।
2. स्वसहायता समूह एवं जनजातीय महिलाओं में जागरूकता के संबंध में जानकारी प्राप्त करना।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – प्रस्तुत अध्ययन हेतु अलीराजपुर जिला चयन किया गया है। यह जिला 17 मई , 2007 को अस्तित्व में आया है। यह जिला पूर्व मे झाबुआ जिले में सम्मिलित था। यह जिला पहाड़ी, पठारी व रेगिस्तानी इलाका है जो पूर्व–पश्चिम में गुजरात के दाहोद और छोटा उदयपुर (गुजरात) जिले की सीमा को छुता है। दक्षिण में महाराष्ट्र की सीमा तथा पूवी–दक्षिण में धार और बड़वानी जिले की सीमा को छूता है। इस जिले में 85 प्रतिशत भील, भिलाला, बारेला और पटेलिया जनजाति के लोग निवास करते हैं।

समग्र एवं निदर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए अलीराजपुर जिले के सोण्डवा विकासखण्ड का चयन किया गया क्योंकि इस विकास खण्ड में

* शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर, अलीराजपुर (म.प्र.) भारत

स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना (SGSY) और मध्यप्रदेश ग्रामीण आजीविका मिशन तथा गैर सरकारी संगठन 'आशा और प्रयास' संस्थाओं द्वारा जनजातीय महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण के तहत बहुत उल्लेखनीय कार्य किये गये। अध्ययन में 50 महिलाओं के समूह में 500 महिलाएं सदस्य है इन्हें अध्ययन का समग्र माना गया है। अध्ययन के लिए दो स्तरों में निदर्श का चयन किया गया है जिसमें प्रथम स्वसहायता समूह का चयन (15) द्वितीय चयनित स्वसहायता के लाभार्थियों का चयन (150) उत्तरदाताओं का चयन दैव निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया।

आसा एवं प्रयास संस्था द्वारा संचालित कार्यक्रम – आसा एवं प्रयास संस्था द्वारा अध्ययन क्षेत्र में कार्यक्रम/परियोजना के क्रियान्वयन के दौरान मुख्य रूप से दो प्रकार की गतिविधियों को शामिल किया जिनमें एक वे होती है, जिनमें किसी एक व्यक्ति को लाभ प्राप्त होता है एवं दूसरी वे जिनसे संपूर्ण गाँव को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से लाभ प्राप्त होता है। स्वसहायता समूह द्वारा संपन्न की गई गतिविधियाँ जैसे –किराना दुकान, दोना पत्तल बनाना, गुड़िया एवं गलसन बनाना इत्यादि शामिल है जिनसे व्यक्तिगत लाभ प्राप्त होता है।

लाभार्थियों द्वारा चयनित कार्यक्रम

क्रं.	किया गया कार्य	आवृत्ति	प्रतिशत
1	शासकीय संस्थाओं द्वारा स्वंय सहायता समूह बनाना	30	20.00
2	शासकीय स्वसहायता समूह द्वारा आटा चक्की स्वरोजगार	12	08.00
3	दोना पत्तल बनाना	12	08.00
4	गुड़ियों को बनाना	20	13.33
5	महिलाओं के श्रृंगार गलसन बनाना	13	08.66
6	एनजीओ द्वारा स्वंय सहायता समूह बनाना	20	13.33
7	एनजीओ द्वारा स्वसहायता समूह से आटा चक्की स्वरोजगार	15	10.00
8	एनजीओ से दोना पत्तल बनाना	14	09.34
9	एनजीओ से गुड़ियों को बनाना	14	09.34
	योग	150	100

उक्त तालिका से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में चयनित सरकारी संगठन द्वारा की गई गतिविधियों में 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शासकीय संस्थाओं द्वारा स्वसहायता समूह बनाये गये बताया जिसमें आटा चक्की, 8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने 8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने दोना पत्तल उपलब्ध कराना 13 प्रतिशत उत्तरदाताओं गुड़ियाँ बनाने 8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला श्रृंगार गलसन बनाना हेतु बनाया गया तथा 13 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने एनजीओ द्वारा स्वसहायता समूह बनाये गये बताया जिसमें आटा चक्की, 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने 9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने दोना पत्तल उपलब्ध कराना 9 प्रतिशत उत्तरदाताओं गुड़ियाँ बनाने का कार्य किया गया।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि स्वसहायता समूह से जुड़ने के पश्चात महिलाएँ निर्णय लेने की प्रक्रिया में सक्षम होती पायी गई।

1. स्वसहायता समूह के सदस्यों द्वारा की जाने वाली सामाजिक गतिविधियाँ व उसमें सहभागिता से संबंधित तथ्यों का विश्लेषण करने से स्पष्ट हुआ है कि सामाजिक गतिविधियाँ तथा, स्वास्थ्य से संबंधित गतिविधियाँ, वैधानिक अधिकार एवं योजनाओं से सम्बंधित गतिविधियों में उत्तरदाताओं द्वारा सहभागिता की जाती है।
2. स्वसहायता समूह व महिलाओं की मजबूत आर्थिक स्थिति से संबंधित तथ्यों का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि सामाजिक स्तर को बढ़ाने तथा परिवार के पालन पोषण, घरेलू खर्चो की पूर्ति तथा बचत आदि में वृद्धि करने में स्वसहायता समूह सफल हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. MYRADA(2002) 'Impact Of Self Help Groups (Group Processes) On The Social/Empowerment Status Of Women Members In Southern India.' Paper presented at the Seminar on SHG-bank Linkage Programme at New Delhi,pp.221-223
2. Shrivastav, Alka (2006) 'Women Self Help Groups in the Process of Rural Development.' Women in Rural Development.pp.81-100.
3. Ramchandran, S., Subbiah, A. and Ravishankar ,A.K. (2008. 'Self Help Groups and Rural Development in Tamilnadu: A Micro Level Examination. 'Women in Rural Development.pp. 101-122.
4. EDA Rural Systems (2010) ' Self Help Groups in India: A study of Lights and Shades'. Gurgaon, India: EDA Rural Systems. pp.1-4 Reddy, C.S. (2005)'Self-Help Groups: A keystone of Microfinance in India Women Empowerment and Social Security', APMAS, Hyderabad.pp1-19.
5. Sriraman, V.P. (2012) ' Microfinance, Self Help Groups and Women Empowerment – current issues and concerns'. pp.19-24
6. Dubey S.C. (1990) Tradition and Development, Vikas. Publication : New Delhi. pp.141-143
7. हाईडी हार्टमेन, (2001) मार्क्सवाद और नारीवाद के बीच अप्रिय विवाह, सन्धान, अप्रैल–जनू पृ.114
8. O `Connel, Helen. (1994) women and the family. london : Zed Books Ltd.P.34
9. Moser, caroline O.N.(1993) Gender planning and Development : Theory, practice and Trainning. London: Routledge P. 36.32
10. Michel, A., (1991) African women, development and the North sout relationship : In : M Dalla costa 8 G.Dalla costa (Eds) paying the price : Women and the politics of intermational economi stratery London: zed Books P. 123
11. Sen, Amarty, (1999) Development as Freedom. New York: Alfred A.knopf. P. 126.
12. World Bank, (2001) Engendering Development: through gender equality in rights, Resources, voices. New York: oxford university press. P. 323.
13. Reskin, Barbara, and Heidi Hartmann, eds. (1991) Women's work Men's Work: Sex Segregation on the Job. Washington, DC: National Academy Press. PP. 66.

14. Avirgan, T., Bivens, L. J., & Gammage, S. (Eds). (2005) Good jobs, bad jobs, no jobs: Labormarkets in Egypt, El Salvador, India, Russia, and South Africa. Washington, DC:Economic Policy Institute.pp.98
15. U.N.D.P. (1995), Human Development Report 1995, NewYork: Oxford University Press. P. 236.
16. World Bank (2006). Microfinance in South Asia: Towards financial inclusion for the poor. Washington, DC: World Bank. PP. 212-218
17. कारत, वृदां (2006), जीना है तो लडना होगा : सामायिक प्रकाशन नई दिल्ली।
18. Toward Equlity Report. (1974) Department of Social Welfare, Ministry Of Education and Social Welfare, New Delhi. PP. 62-66
19. National Commission on Self Employed Women and Women in informal Sector, 1988 Shram Shakti. Department of Women and Child Development, Indian Govertment: New Delhi. PP. 44-52
20. Fletschner, Diana. (2008) 'Rural Women's Access to Credit:Market Imperfections Intrahousehold Dynamics.' Elsevier Ltd. PP. 310-316.

****

प्रधानमंत्री जन धन योजना –2014

डॉ. नीना गोयल *

प्रस्तावना – प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 15 अगस्त 2014 को अपने भाषण में कहा था कि उनका सपना है, कि देश के हर नागरिक का अपना एक बैंक बचत खाता होना चाहिए, जिससे उनका विकास होगा। इसी तारतम्य में उन्होंने प्रधानमंत्री जनधन योजना की घोषणा की, एवं यह योजना 28 अगस्त 2014 से लागु की गई। योजना गरीबो को ध्यान में रखकर बनाई गई है, जिससे उनमे बचत की आदत का विकास हो भविष्य की सुरक्षा का भाव जागे, आत्मविश्वास मे वृद्धि हो, तथा जीवनशैली में परिवर्तन हो, गरीब ग्रामीण एवं किसान नागरिकों एवं परिवारो को जागरूक एवं सुरक्षित करना योजना का अहम भाग है। यह योजना वित्तीय एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने का एक राष्ट्रीय मिशन है। वित्तीय सेवा एवं सामाजिक सुरक्षा में बैंकिंग हस्तातंरण क्रेडिट (ऋण) बीमा, पेंशन आदि शामिल है। योजना जिस भी देशवासी का एक भी बैंक खाता नहीं है। उनसे बचत खाता खोलने की एक अपील है। योजना लागु करने से पूर्व रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के बैंक में खाता खोलने संबंधी नियम बहुत सख्त थे कोई भी खाता खोलने के लिए न्यूनतम राशि एवं वैध पहचान पत्र होना अनिवार्य था। जनधन योजना के अंतर्गत इस अनिवार्यता को समाप्त करके किसी भी भारतीय नागरिक/परिवार द्वारा किसी भी बैंक में शून्य बैलेंस से एवं बिना आई डी प्रूफ के खाता खोला जा सकता है। साथ ही बालक अथवा बालिका का 10 वर्ष की आयु में अभिभावक के साथ संयुक्त खाता खोला जा सकता है जिसे संबंधित 18 वर्ष की आयु पूर्ण करने पर संचालित कर सकता है।

खाता खोलने के लिए निम्नलिखित दस्तावेजों की आवश्यकता होती है–

1. आधार कार्ड
2. आधार कार्ड नहीं होने की स्थिति में वोटर आईडी, ड्राइविंग लाइसेन्स,पेन कार्ड ,पासपोर्ट ,मनरेगा कार्ड।
3. उपरोक्त कोई भी दस्तावेज नहीं होने पर उसका वेरिफिकिशन लोरिस्क केटेगरी के अंतर्गत करके खाता खोला जा सकता है। इस हेतु केन्द्र सरकार, राज्य सरकार ,बैंको अथवा अन्य सार्वजनिक उपक्रम द्वारा जारी फोटोयुक्त पहचान पत्र (आई सी) अथवा किसी गजेटेड ऑफिसर द्वारा अभिप्रमाणित फोटोयुक्त पहचान पत्र मान्य होगें।

योजना के लाभ/सुविधा – योजना केवल बैंक खाता खोलना ही नहीं है बल्कि इसके अन्य लाभ एवं सुविधाऍं है –

1. शून्य बेलेन्स एवं सरलता से बचत खाता खोला जाना । खाते पर न्यूनतम 30000 रू जीवन बीमा एवं 1लाख रू तक दुर्घटना बीमा की सुविधा यह सुविधा उन्हीं लोगों को दी जऐगी जिन्होंने 26 जनवरी 2015 से पहले खाते खोले है।
2. 6 माह तक संतोषजनक लेनदेन एवं संचालन होने पर ओवर ड्राफ्ट की सुविधा यह सुविधा औसत मासिक शेष का चार गुना एवं अधिकतम पाँच हजार रूपए होगी। परिवार के खाते की दशा मे सुविधा विशेष रूप से महिला सदस्य को दी जायेगी।
3. जमा राशि पर बचत खाता ब्याज दर से ब्याज प्राप्त होना।
4. भारत में धन हस्तांतरण की सुविधा ।
5. रूपै कार्ड की सुविधा जिसका उपयोग एटीएम कार्ड की तरह किया जा सकता है। कार्ड का उपयोग एक माह में चार बार नि:शुल्क किया जा सकता है।
6. 45 दिन में कम से कम एक बार रूपै डेबिट कार्ड उपयोग करने पर दुर्घटना बीमा सुरक्षा एक लाख रूपए तक ।
7. सरकारी स्कीमों का लाभ डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांन्सफर सुविधा ।
8. पेंशन एवं बीमा पर लागू।
9. यदि किसी नागरिक का पहले से बैंक खाता है तो वह इस खाते को जनधन योजना खाते में स्थानांतरित करवा सकता है एवं सभी सुविधाएँ ले सकता है।
10. छोटा (स्माल) खाता खोलने की सुविधा जो बिना किसी वैध प्रमाण पत्र के स्वंय के घोषणा के आधार पर खोला जा सकता है एवं संतोषजनक लेनदेन होने पर खाताधारक को एक वर्ष की अवधि में उचित वैध दस्तावेज बैंक को जमा कराना होगा।

घोषणा के समय प्रारंभ में योजना में 7.5 करोड़ बैंक खाते खोलने का लक्ष्य रखा गया था। एक वर्ष में 19.72 करोड़ से अधिक बैंक खाते खोले गए। 16.8 करोड़ रूपे कार्ड जारी किए गए। खातो में लगभग 28699.65 करोड़ रूपए जमा किए गए। 125697 बैंक मित्रों को कार्य सौंपा गया जिन्होंने एक सप्ताह में सबसे अधिक 18096130 बैंक खाते खोलने का गिनीज वर्ल्ड रिकार्ड बनाया। यद्यपि शून्य बेलेन्स से लाखों खाते खोलना लोगों की आदत में बदलाव लाना की वे बैंक खातो का उपयोग करें एक बड़ी चुनोती थी ,किन्तु बैंको का सकारात्मक सहयोग जनता एवं सरकारी मशीनरी की भागीदारी द्वारा इस विशाल कार्य को संभव करने का योगदान अनुकरणीय हैं। आज प्रत्येक खाता धारक डायरेक्ट बेनिफिट ट्रान्सफर योजनाओं का लाभ ले रहा है। वर्ष 2015 में लगभग 40 हजार करोड़ रूपया लाभार्थियों को सीधे हस्तांतरित किया गया। इस योजना ने लगभग 3.34 करोड़ निष्क्रिय एवं नकली खातो की पहचान कर उन्हें बन्द करने में मदद की। ताजे आंकड़ो के अनुसार 45 प्रतिशत जनधन योजना में खोले गए खातो में कोई लेनदेन नहीं हुआ है खाते शून्य बैंलेस पर ही बने हुए है संचालन नहीं होने के कारण खाताधारक योजना के लाभो से वंचित है। बैंको को ऐसे खातों में रखरखाव का खर्चा निकालना मुश्किल हो रहा है। एक बैंक खाते का परिचालन जारी रखने का खर्च 250 रू वार्षिक आता है।

आजादी के 67 वर्ष बाद भी भारत में बडी संख्या में ऐसी आबादी थी जिन्हें बैंकिग सेवाएं हासिल नहीं थी योजना ने इस बुनियादी समस्या का

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

समाधान कर धन का उपयोग अनुत्पादक कार्यो से उत्पादक कार्यो की और अग्रसर किया है।योजना के लागू होने से बिचोलियों का महत्व कम हुआ। भ्रष्टाचार में कमी आई किसानो को सीधा लाभ खातों में मिलने लगा। अनुदान की राशि इन्द्रा आवास योजना ,टायलेट बनाने का पैसा, गैस सब्सिडी की राशि खाद बीज आदि अनेक सरकारी योजनाओं का लाभ हितग्राही को सीधे खातो में राशि जमा कर प्राप्त हो रहा है। निंरतर प्रचार–प्रसार एवं बैंकों के सकारात्मक सहयोग के कारण एक वर्ष बाद आज इस योजना ने लाखों भारतीयों के जीवन और भविष्य को बदल दिया है।प्रधानमंत्री जीवनज्योति बीमा योजना, प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना ,अटल पेन्शन योजना , विभिन्न ऋण योजनाओं ,शिशु ऋण,किशोर ऋण, तरूण ऋण आदि अनेक योजनाओं का लाभ जनधन योजना में खाता खुलवाकर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। खातो का संचालन संतोष जनक होने पर खाता धारक को आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा प्राप्त है। आम जनता के लिए बुनियादी बैंकिग सुविधा एवं सेवा उपलब्ध कराने का अभूतपूर्व प्रयास सफलता की ओर अग्रसर हैं। योजना का अगला चरण 15 अगस्त 2015 से व 14 अगस्त 2018 रखा गया है। जिसका उद्देश्य माइक्रो बीमा एवं पेंशन उपलब्ध कराना है तथा खातो को स्वालंबन पेंशन योजना से जोड़ना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बैंकिग न्यूज
2. नई दुनिया, दैनिक जागरण, चेतना समाचार पत्र
3. www.pmjdy.govt.in

****

भारत में पर्यावरणीय समस्याएँ और सरकार की नीतियाँ

महेन्द्र सिंह चौहान *

प्रस्तावना – हमारे चारों ओर का वातावरण जो कि हमें व अन्य जीवधारियों को प्रभावित करता है, पर्यावरण कहलाता है। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या व आर्थिक विकास के कारण भारत जैसे विकासशील देश में अनेक प्रकार की पर्यावरणीय समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। इसके पीछे शहरीकरण व औद्योगिकीकरण में अनियंत्रित वृद्धि, बड़े पैमाने पर कृषि का विस्तार तथा तीव्रवृद्धि तथा जंगलों का नष्ट होना है। प्रमुखत: पर्यावरण मुद्दों में वन एवं कृषि, भूमिकरण संसाधन, रिक्तीकरण पर्यावरण क्षरण, सार्वजनिक स्वास्थ्य, जैव विविधता में कमी, पारिस्थतिकी प्रणालियों में लचीलेपन की कमी, गरीबों के लिए आजीविका सुरक्षा शामिल है।

माना जा रहा है कि देश की जनसंख्या वर्ष 2016 तक 1.26 अरब तक बढ़ जाएगी। वह इस बात का संकेत है कि 2050 तक भारत दुनिया में सबसे अधिक आबादी वाला देश होगा और चीन का स्थान दूसरा होगा। दुनिया में कुल क्षेत्रफल का 24 प्रतिशत परन्तु विश्व की जनसंख्या का 18 प्रतिशत धारण कर भारत का अपने प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव काफी बढ गया है। कई क्षेत्रों पर पानी की कमी, मिट्टी का कटाव और कभी वनों की कटाई, वायु और जल प्रदूषण के कारण बुरा असर पड़ रहा है। नुकसान भूमिक्षरण, जैवविविधता के उपयोग के बदलते स्वरूप में ऊर्जा की बढ़ती माँग को प्रेरित किया है। अंतिम परिणाम वायु प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और जल प्रदूषण के रूप में दिखाई देर रहा है।

भारत की पर्यावरणीय समस्याओं में विभिन्न प्राकृतिक खतरे विशेष रूप से चक्रवात और वार्षिक मानसूनी बाढ़ें, बढ़ती हुई व्यक्तिगत खपत, औद्योगिकीकरण ढ़ाँचागत विकास, निम्नस्तरीय कृषि पद्धतियाँ और संसाधनों का असमान वितरण है और इनके कारण भारत में प्राकृतिक वातावरण में अत्यधिक परिवर्तन हो रहे हैं। एक अनुमान है कि खेती योग्य भूमि का 60 प्रतिशत 1) भूमि कटाव, 2) जल भराव और 3) लवणता से ग्रस्त है एवं मिट्टी की ऊपरी परत में से प्रति वर्ष 4.712 अरब टन मिट्टी कटाव के कारण खो रही है। सन् 1947 से 2002 के बीच पानी की औसत वार्षिक उपलब्धता प्रति व्यक्ति 70 प्रतिशत कम होकर 1822 घन मीटर रह गयी है और भू–गर्भ जल का अत्यधिक दोहन हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश इसके भौगोलिक क्षेत्र का 18.84 प्रतिशत (637.000 वर्ग कि.मी.) है। देश भर में वनों के लगभग आधे मध्यप्रदेश 20.7 प्रतिशत और पूर्वोत्तर के सात प्रदेशों 25.7 प्रतिशत में पाए जाते हैं। इनमें से पूर्वोत्तर राज्यों के वन तेजी से नष्ट हो रहे हैं। वनों की कटाई ईंधन के लिए लकड़ी और कृषि भूमि के विस्तार के लिए हो रही है। वह प्रचलन औद्योगिक और मोटर वाहन प्रदूषण के साथ मिलकर वातावरण का तापमान बढ़ा रहा है जिसकी वजह से लवण का स्वरूप बदल जाता है और अकाल आने की आवृत्ति बढ़ जाती है।

भारत में 3119 शहरों व कस्बों में 209 में आंशिक रूप से तथा केवल 8 में मल जल की पूर्ण रूप से उपचारित करने की सुविधा है। डब्ल्यू एच.ओ. ने वर्ष– 1992 की एक रिपोर्ट में बताया है कि भारत के अनेक शहरों में अनुपचारित नाली का पानी तथा दाह संस्कार के बाद अधजले शरीर सीधे ही गंगा नदी में बहा दिये जाते हैं। यहाँ तक कि भारत एम.आई.आर. और पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा किए गए संयुक्त अध्ययन से पता चला कि दिल्ली के आसपास के जिलों में भूमिगत जल तथा जल के पानी में विस्ट सीमा एमपीएल से कहीं अधिक मात्रा में कैल्शियम, मैग्नीशियम, फ्लोराइड, मरकरी तथा बीटा एडसल्फान व हेप्टाफ्लोर जैसे कीटनाशक पाए गऐ। इसके अलावा पानी में सीओडी तथा बीओडी (रासायनिक व जैव रासायनिक ऑक्सीजन की मात्रा) अमोनिया, फॉस्टेट, क्लोराइड क्रोमियम तथा क्लेरपायरीफोस जैसे कीटनाशक भी अधिक मात्रा में थे। भूमिगत जल में भी निकल मेलेनियम पाए गए, और जल में पानी में सील, निकल और कैडमियम की उच्च सांद्रता मिली है।

भारतीय शहर वाहनों और उद्योगों के उत्सर्जन से प्रदूषित है। सडक पर वाहनों के कारण उड़ने वाली धूल भी वायू प्रदूषण में 33 प्रतिशत कण का योगदान करती है। भारत में वायू प्रदूषण का सबसे बडा कारण परिवहन की व्यवस्था है। 15 मार्च 2009 में पंजाब में यूरेनियम विकिरण का मामला प्रकाश में आया, इसका कारण ताप विद्युत ग्रहों द्वारा बनाई गई राख थी। इनमें पंजाब के फरीदकोट तथा भटिंडा जिलों में बच्चों में गंभीर जन्मजात विकार पाए गए।

भारत सरकार के पर्यावरण एवं मंत्रालय द्वारा समय पर पर्यावरण की सुरक्षा हेतु उचित कदम उठाए गए हैं। इसे लागू किया गया। यह 4 अध्याय 26 धाराओं में विभाजित किया गया है एवं प्रत्येक स्तर पर भारत सरकार द्वारा पर्यावरण सुरक्षा संबंधी कदम उठा गई है। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत महत्वपूर्ण बिन्दु समाहित किए गए हैं –

जैसे –

1. पर्यावरण की गुणवत्ता के संरक्षण हेतु सभी आवश्यक कदम उठाना।
2. पर्यावरण प्रदूषण के निवारण, नियंत्रण हेतु राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बनाना और उसे क्रियान्वित करना।
3. पर्यावरण की गुणवत्ता में मानक निर्धारित करना।
4. पर्यावरण सुरक्षा में संबंधित अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारें, अधिकारियों और संबंधित के काम में समन्वय स्थापित करना।
5. ऐसे क्षेत्रों का परिसीमन करना जहाँ किसी भी उद्योग की स्थापना अथवा औद्योगिक गतिविधियाँ संचालित की जा सके। उक्त अधिनियम का उल्लंघन करने वालों के लिए कठोर दण्ड का प्रावधान है।

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, भानपुरा, जिला – मंदसौर (म.प्र.) भारत

6. भारतीय संविधान के चतुर्थ अ भाग में पर्यावरण संरक्षण एवं विकास कर्तव्य माना गया है। जिला पर्यावरण समिति का प्रावधान है जिसका पदेन अध्यक्ष जिला कलेक्टर होता है। भारत सरकार हिमालय के पर्यावरण को बचाने की नीति बनाने की प्रक्रिया में भी है, इस संबंध में हिमालयी यंत्र के राज्यों के साथ परामर्श किये जा रह हैं। हिमालय सहित विकारों को पर्यावरणीय संरक्षण कार्यक्रम में प्राथमिकता पर रूक गया है।

अभी तक पर्यावरण संरक्षण के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों ने लगभग 30 कानून बनाए हैं। केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण की स्थापना 1995 में हुई। वन अनुसंधान संस्थान की स्थापना देहरादून में की गई है एवं केन्द्रीय पर्यावरण अनुसार 33 प्रतिशत भू-भाग पर वन होना अनिवार्य है। पर्यावरण से संबंधित चिपको आन्दोलन की शुरूआत की गई जिसका उद्देश्य था कि वनों की सुरक्षा, जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण-1974 में लागू हुआ। वायु प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम-1981 में लागू किया गया। भारत सरकार द्वारा पर्यावरणीय विभाग की स्थापना 1980 में की गई थी। पर्यावरण एवं स्वास्थ्य मानव विकास की दिशा में 26 जनवरी 1997 से दिल्ली में सार्वजनिक स्थलों पर धूम्रपान निषेध किया गया है।

वर्तमान समय में पर्यावरणीय समस्याऐं प्रमुख रूप से एक गंभीर विषय के रूप में उभर कर सामने आई है, जिसके कारण हमारा मानव जीवन प्रतिदिन तेजी से परिवर्तित हो रहा है जिसके लिए बदलाव के लिए हम स्वयं जिम्मेदार है। प्राकृतिक रूप से तो यह अन्य माध्यम से पर्यावरण को हानि तो पहुँचा रही है जिसके कारण गंभीर बीमारियाँ भी उत्पन्न हो रही हैं। जल की कमी स्वच्छ वायु के अभाव के साथ-साथ भूमि प्रदूषण ध्वनि प्रदूषण का स्तर बढ़ा है। सरकार द्वारा निश्चित रूप से कुछ महत्वपूर्ण नीतियाँ पर्यावरण में सुधार हेतु क्रियान्वित की गई है परन्तु यह भी सच है कि वास्तव में वे इतनी कारगर साबित नहीं हो पाई है। इस हेतु अधिक से अधिक उच्च श्रेणी की नीतियाँ बनाने की, इसमें अपनी सहभागिता देनी चाहिए, जिससे पर्यावरण संबंधी समस्याओं से निजात मिल सके।

शोध समाचार – भारत में पर्यावरणीय समस्याऐं आज एक प्रमुख मुद्दा बन कर उभरा है जिसके कारण जनजीवन पर अप्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ रहा है। लेकिन जो प्रभाव पड़ रहा है वह पूर्ण रूप से जीवन के प्रतिकूल ही नजर आता है। पर्यावरणीय समस्याऐं दिन-प्रतिदिन बहुत ही तेजी से बढ़ रही है। जिसको रोकने के प्रयास काफी हद तक नाकाम ही साबित हो रहे हैं। सरकार के द्वारा भी कुछ कदम इस दिशा में उठाए गए हैं परन्तु ऐसा कोई भी स्तर नजर नहीं आ रहा है जिससे यह माना जा सके कि भारत में पर्यावरणीय समस्याऐं अब नियंत्रण में हैं और जीवन सुरक्षित है। इसे लिए पर्यावरण की विपरीत स्थिति में सुधार हेतु इस शोध पत्र के माध्यम से यह कोशिश की गई है कि इस विषय पर सरकार द्वारा और उचित प्रयासों की जरूरत है तथा सरकार के साथ-साथ देश में नागरिकों को भी इस बारे में गंभीरता से विचार करना चाहिए। जो प्रयास नाकामी रहे हैं, उन पर विचार-विमर्श की गई आवश्यकता होगी एवं पर्यावरण की गिरती हुई स्थिति को सरकार नागरिकों को मिलकर ही एक साथ संभालना होगा। इस शोध पत्र के माध्यम से सरकार नागरिकों एवं व्यवसायियों को पुन: जागरूक करने का एक प्रयास कर रही है। पर्यावरण के मुद्दे पर विस्तृत चर्चा की भी आवश्यकता महसूस हो रही है। इस हेतु कार्यशाला आयोजित की जानी चाहिए। इस समस्या से निजात पाने के लिए हमें कुछ प्रयास स्वयं करने होंगे जैसा कि जनसंख्या नियंत्रण, वनों की कटाई पर रोक, जंगलों को नष्ट होने से रोकना, नदियाँ की सफाई आदि। भारत में पर्यावरणीय समस्याऐं और सरकार की नीतियां एक गंभीर विषय के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत है जिसमें और अधिक सुव्यवस्थित, क्रमबद्ध सम्पूर्ण शोध की आवश्यकता महसूस हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चन्द्रप्पा, रमेश, रवि, जी.आर. : 'पर्यावरणीय समस्याऐं विधि और प्रौद्योगिकी एवं भारतीय परिप्रेक्ष्य' रिसर्च इंडिया प्रकाशन, दिल्ली, 2009
2. जनसंख्या संदर्भ, ब्यूरो, 2001
3. भारत का राजपत्र 'भाग II खण्ड, 3,342005 II' नई दिल्ली, जुलाई, 20, वर्ष-2011
4. सुमन, संजय : 'सामान्य ज्ञान डाइजेस्ट', उपकार प्रकाशन, आगरा, वर्ष-2011
5. Chaudhary, Amrita, 'Buddha Nallaha the Toxic Vein At Malwa' Indian Express, May, 21, Year-2008.
6. A special report in India : Creaking Gooding Infrastructure is India's Biggest Handicap' The Economist, December, 11, Year-2008.
7. www.himduonnet.com
8. Yadav, Priya, 'Uranium Deforms Kids in Faridkot' The Times of India, April, 2, Year-2009.

****

नारी सशक्तिकरण एवं वर्तमान परिवेश

डॉ. कविता चौकसे *

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी कथन चरितार्थ है – 'अगर अंहिसा हमारे अस्तित्व का नियम है तो हमारा भविष्य महिलाओं के हाथ में है।'
प्रसिद्ध फ्रांसीसी समाजशास्त्री चार्ल्स फेरियन ने ठीक ही कहा है –

'किसी राष्ट्र की सामाजिक व्यवस्था और राजनीति में स्त्रियो को जैसा स्थान प्राप्त हो उससे यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि राष्ट्र कितना सभ्य और सुसंस्कृत है।'

1985 में नेरोबी में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन मे सर्वप्रथम महिला सशक्तिकरण को परिभाषित किया गया। महिला सशक्तिकरण भौतिक, आध्यात्मिक, शारीरिक, राजनीतिक सभी स्तरो पर महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त बनाने की प्रक्रिया।

इतिहास इस बात का साक्षी रहा है कि वैदिक काल से ही महिलाओं को महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त थे, भारतीय पौराणिक साहित्य में नारी को अत्यंत उच्च सिंहासन पर विराजमान किया गया है। भारत में विद्या की देवी सरस्वती है, शांति की देवी पार्वती और धन की देवी लक्ष्मी। हमारे देश में गार्गी मैत्रियों आदि महान दार्शनिक महिलाऐं हुई है,जिसको सम्मानजनक स्थान प्राप्त थे।

किसी भी समाज की खुशहाली का आधार उस समाज में महिलाओं के स्तर व उन्हें प्राप्त सम्मान से आंका जा सकता है। जिस समाज में महिलाओं को बराबरी का दर्जा प्राप्त है। वो विकास एवं प्रगति की दौड में समकालीनों से मीलो आगे रहे है नेपोलियन बोनापार्ट जैसे सेना नायक ने महिलाओं को शिशु व समाज दोनों की प्राथमिक पाठशाला स्वीकृत हुए आधुनिककालों में विभाजित किया जा सकता है।

प्राचीन काल में महिला सम्मान व सशक्तिकरण का स्वर्ण युग था। महिला सम्मान के पराभव का आरम्भ उत्तर स्मृतिकालीन युग से माना जा सकता है जब महिलाओं के जीवन का त्रिविमीय विभाजन कर उसे क्रमश: पिता, पति, पुत्र के अधीन कर दिया गया है मध्ययुग आते – आते महिलाओं की समाज में स्थिति व सम्मान पतन व भयावह स्थिति में पहुँच गया। महिला को समाज में उनका खोया सम्मान दिलाने के लिये सामाजिक विधिक दोनों ही स्तरो पर सारगर्भित प्रयास हुऐ। जिनके फलस्वरूप महिलाओं की सामाजिक स्थित में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। महिला सशक्तिकरण के तमात अभियानो और आन्दोलन का ही परिणाम था। कि 20 वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे सीरियाओ भंडार नायके,गोल्ड मायर, माग्रेट थ्रेचर, इन्दिरा गाँधी, बेनजीर भुट्टो जैसी वैश्विक विभूतियॉ देखी जिनकी अभूतपूर्व सफलताओं ने पूरे विश्व में महिलाओं को सम्मान बढाया, लेकिन आज महिलाओं को सम्मान तो मिल रहा है और महिलायें भी सशक्त हो रही है, पर फिर भी बहुत सी चुनौतियाँ महिलाओं के सामने है।ये चुनौतियाँ है – जिनमें अशिक्षा, राजनैतिक ढाचा एवं सामन्वादी सोच, लिंगीय भेदभाव, गरीबी, जातिवाद,असमानता और समग्र विकास का अभाव, कन्या भ्रुणहत्या,बाल विवाह, दहेज, शोषण, पुरातन सोच आदि।

महिलाओं पर होने वाले अत्याचार और अन्याय को देखते हुए कहा जा सकता है महिलाओं कि स्थिति प्राचीनकाल से ही अधिक चिन्ताजनक है आज महिलाऐ, बालिकाऐ अकेले घर से निकलने ये असुरक्षा महसूस कर रही है।

राष्ट्रीय महिला अयोग की रिपोर्ट के अनुसार देश प्रत्येक 54 मिनिट मे एक बलात्कार प्रत्येक 26 मिनिट में एक छेड़छाड़, प्रत्येक 43 मिनिट मे अपहरण और 102 मिनिट मे एक दहेज हत्या/आत्महत्या का अपराध घटित हो रहा है। दिनांक 16दिसम्बर 2012 निर्भया ज्योतिसिंह काण्ड के बाद महिलाओं के विरूद्ध यौन हिंसा की रोकथाम के लिये बनाए गये कडे क़ानून के बाबजूद भी इन घटनाओं में कोई कमी नही आ रही है। बल्कि सामूहिक बलात्कार की बहुत सारी घटनाऐं सामने आ रही ,दिल्ली रेल्वे स्टेशन के पास डेनमार्क की महिला के साथ बलात्कार, म.प्र.में स्विटजरलैड की महिला के साथ बलात्कार राजधानी दिल्ली मे दिसम्बर 2012 को पेरामेडिकल की छात्रा के साथ चलती बस मे सामूहिक बलात्कार इन्दौर में तो हद ही हो गई गोदली मासूम बालिका के साथ कई दिनो तक बलात्कार किया गया और उसकी हत्या कर दी। इन्दौर का बहुचर्चित कविता रैना की हत्या कारण संबंध बनाने से इन्कार किया तो कविता रैना के 6 टुकडे कर दिये, धर्म का चोला पहनने वाले बापू आशाराम पर शौषण का आरोप लगा जिसने धार्मिक भावना पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया गये। ऐसी घटनाए है, जिससे पूरे समाज के लिए कलंक है पूरे देश को शर्मनाक कर दिया। इन घटनाओं ने कानून व्यवस्था और प्रशासन पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है।

संवैधानिक व्यवस्थाऐं (प्रावधान) – इस समस्या के समाधान हेतु महिलाओं के सामाजिक सुधार की आवश्यकता जोर पकडने लगी जिसका प्रतिफल आज महिलाओं कि सुरक्षा एवं उनके सामाजिक उत्थान के लिए सती प्रथा अधिनियम 1929, हिन्दु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856, शारदा एक्ट 1924,हिन्दु स्त्री सम्पति का अधिकार(अधिनियम)1937, विवाह विच्छेद अधिनियम 1959, हिन्दु उत्तराधिकारी 1956 एंव दहेज निरोधक अधिनियम 1986, स्त्रियों और कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956, श्रमिक महिलाओ के हक में कारखाना अधिनियम 1948, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, महिलाओं का कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संरक्षण अधिनियम ए 2013,महिला संरक्षण अधिनियम 2005। महिलाओं का उत्पीडन की शिकायत के लिए दो धाराऐं भारतीय दण्ड सहिता की धारा 354 या 509 इसके पश्चात अनुच्छेद 142, आदि। इस सभी अधिनियमों से महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में

* राजनीति शास्त्र, शासकीय महाविद्यालय, मनावर (म.प्र.) भारत

निश्चित ही सुधार हुआ है।

निर्भया ज्योतिसिह काण्ड के बाद यौन हिंसा की रोकथाम के लिये अत्यंत कडे क़ानून बनाये गये दाण्डिक विधि (संशोधन अधिनियम 2013) द्वारा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 और 354 मे संशोधन कर बलात्कार यौन हिंसा की परिभाषा को और व्यापक बनाया गया है उसमे नई धाराएँ जोडकर घूरना, पीछा करना, छूना, जैसे कृत्यो को दण्ड़नीय अपराध की परिभाषा मे शामिल किया गया है साथ ही दण्ड की मात्रा भी बढाई गयी है।

महिलाओ पर होने वाले अत्याचारो को समाप्त करने के लिए विश्वस्तर पर सम्मेलन आयोजित हुए निम्न मुख्य है –

1. प्रथम विश्व महिला सम्मेलन – मेक्सिको सिटी 1975
2. द्वितीय विश्वमहिला सम्मेलन – कोपन हेगन 1980
3. तृतीय विश्व महिला सम्मेलन – नेरोबी 1985
4. चर्तुथ विश्व महिला सम्मेलन – पेइचिग 1995
   20साल बाद 5 वॉ सम्मेलन
5. पंचम विश्व महिला सम्मेलन बीजिगं 20 फरवरी 2015

महिलाओं को भी स्वंय पर हो रहे अत्याचार के आगे नहीं झुकना चाहिए। अपने अधिकार के प्रति दृढ़ रहकर जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखते हुए समाज में अपनी नयी भूमिका के लिये स्वंय को तैयार करना चाहिए। निर्भया काण्ड के बाद आयी जाग्रति ने महिलाओं के साथ बलात्कार होने के बाद बलात्कारियों के विरूद्ध खुलकर बोलने का साहस पैदा किया जो पहले बदनामी के डर से चुप और सहमी, डरी रहती थी।

देश के इतिहास में पहली बार शक्ति मिल गैंगरेप मामले में आरोपियो को फॉसी की सजा धारा 376 (ई.) भारतीय दण्ड संहिता के अर्न्तगत दी गई यह इसलिए संभव हो पाया क्योंकि फोटो पत्रकार केसाथ बलात्कार के बाद एक टेलीफोन आपरेटर ने इन्ही व्यक्तियों द्वारा किये गये बलात्कार की शिकायत करने का साहस दिखया। लेकिन आज भी इस प्रकार की घटनाओं को उजागर करने वाली महिलाओं की संख्या बहुत कम है महिलाओं को अपने प्रति हो रहे शौषण के विरूद्ध आवाज उठानी होगी तभी सशक्तिकरण साकार होगा अन्यथा नहीं।

संदर्भ ग्रथं सुची :-

1. हंस – 30 मार्च 2001
2. नीति मार्ग – 30 मार्च 2010
3. पत्रिका – 2 जनवरी 2014
4. पत्रिका – 10 दिसम्बर 2015
5. महिला सशक्तिकरण – निधि भारद्धाज।
6. महिला के प्रति अपराध – प्रज्ञा शर्मा।
7. भारतीय राजनीति – सुषमा यादव।
8. स्वयं के विचार।

****

Effect of some selected Agrochemicals on stomatal behaviour of *Cyamopsis tetragonoloba* (Linn) Taub.

Dr. Indu Bala Soni*

Abstract - The paper reports the effect of eight selected agrochemicals (2, 4-D, McPA, TCA, Dalapon, Tribunil, $NaClO_3$ NaF and Lasso)on stomatal behaviour(stomatal index and stomatal opening) of a vegetable crop *Cyamopsis tetragonoloba (Linn.) Moench.* Maximum stomatal index at 500 ppm concentration of agrochemicals for the upper epidermis was found with 2, 4-D and minimum with Tribunil treated leaves. Maximum stomatal index for the lower epidermis was found with $NaClO_3$ and minimum with Tribunil treated leaves.

Effect of different agrochemicals on stomatal opening in light incubated (for 24 hours) isolated epidermal peeling of *C. tetragonoloba* was found maximum stomatal opening at 50 ppm concentration with Tribunil and minimum stomatal opening with Lasso.

Introduction - An herbicide is a pesticide used to kill unwanted plants. The Herbicides causes the anatomical changes in plants. Plant biochemical and physiological processes are effected by herbicides (Yang *et al*, 2006; Jung *et al*, 2004; Ha *et al*, 2003; Warabi*et al*, 2001) causing morphological and anatomical modifications (Kamble, 2007; Guh and Kuk, 1997).

Herbicide application in plants caused considerable changes in the leaf anatomy. Stomatal length, width number of stomata mm^2 and stomatal index greatly effected by application of Isoxaflutole, Imazamox, Flurochloridone and Alachlor herbicides (Prakash *et al*, 1978; Anastasav, 2010 and Semerdjieva*et al*, 2015). Herbicide like 2,4-D also caused anatomical variations in leaf, stem, root and petiole of *Cassia tora* (Kamble, 2013). Herbicides like 2, 4, 5-T, 2,4-D and McPA in Stachytarpheta found to decrease the potassium accumulation in guard cells and also stopped wide opening of stomata (Pemadasa and Jeyaseelan 1976).No information has been available on the effect of eight different herbicides 2,4-D, McPA, TCA, Dalapon, Tribunil, Sodium fluoride, Sodium chlorate and Lasso on stomatal characteristic of the crop *C. tetragonoloba*.

Material And Methods: The experiment was conducted in a split plot design (RCBD) with three replicate using *Cyanopsis tetragonoloba* (Linn.) Taub. Variety Pusa Nav Bahar, treated with three different concentrations (100 ppm, 500 ppm and 1000 ppm) of eight agrochemicals 2,4-D, McPA, TCA, Dalapon, Tribunil, Sodium fluoride, Sodium chlorate and Lasso. The agrochemicals were applied by foliar spray using manual pump. For analysis of stomatal characteristics fully developed leaves of guar were collected at milking (Zadoks scale 70) stage (Zadoks*et al*, 1974). Stomatal characteristics of leaves were determined by following the method of Rajendra*et al.* (1977). The epidermis of leaf was peeled off and transferred into slide along with cover slip. The number of stomata and the number of other epidermal cells were counted at 100X magnification (10 x objective and 10 x ocular) from whole field of view. The stomatal density was calculated as the number of stomata per square millimeter (Stace, 1965). Stomatal index was calculated which relates the number of stomata per unit area (S) to the number of epidermal cells per unit area (E) (Salisbury, 1927).

Stomatal index (SI) = [S / (E + S)] x 100

Stomatal opening (size) were measured using an ocular micrometer under microscope (10 x objective and 10 x ocular). The stomatal size was converted to micrometer and then average was taken. The data were subjected to analysis of variance (Steel *et al*, 1997).

Results And Discussion: From the observations on the effect of various agrochemicals on the stomatal index presented in Table-1 reveal that all the substances tried promote stomatal index for the upper epidermis upto a certain concentration, which being 100 ppm for Tribunil; 250 ppm for TCA; 500 ppm for 2,4-D, McPA and Lasso; 1000 ppm for Dalapon and Sodium fluoride and 2000 ppm for Sodium chlorate. A comparative effect of various agrochemicals at their concentration of 500 ppm reveal that Tribunil is most inhibitory and the trend in this respect is as follows:

* Associate Professor (Botany) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

Agrochemical	Tribunil>	TCA>	Lasso>	McPA>
Stomatal Index%	15.83	18.13	18.88	20.17
Upper epidermis	Dalapon>	$NaClO_3$>	NaF >	2,4-D
	20.63	22.24	22.73	24.23

The stomatal index for the lower epidermis was also observed to show a promotory effect by all the agrochemicals tried the concentration for McPA, Lasso, Dalapon, Sodium fluoride and Sodium chlorate promoting the stomatal index remained the same as that for upper epidermics, while Tribunil, TCA and 2,4-D remained promontory upto a slightly higher concentration i.e. upto 250 ppm (Tribunil), or 1000 ppm (TCA) and (2,4-D).

The values for stomatal index of lower epidermis as observed for various agrochemicals at a concentration of 500 ppm were found to be in the following order:-

Agrochemical	Tribunil>	TCA>	Lasso>	NaF>
Stomatal Index%	18.36	19.84	22.42	24.36
Lower epidermis	McPA>	2,4-D >	Dalapon>	$NaClO_3$
	25.46	25.57	28.56	29.81

The observations when subjected to analysis of variance showed that all the data are significant at 1% level. Observations on the effect of various agrochemicals on stomatal opening presented in Table 2 suggest that the stomatal opening in *C. tetragonoloba* is inhibited by all the agrochemicals tried and the inhibition was concentration dependent.

The stomatal opening in response to 50 ppm concentration of various such substances used reveal a following trend:-

Agrochemical	Lasso>	2,4-D>	$NaClO_3$>	NaF>
Stomatal	2.4	2.5	2.8	3.0
Opening(μ)				
	McPA>	TCA>	Dalapon>	Tribunil
	3.1	3.3	3.5	3.8

The variation in stomatal index as observed may be ascribed to the change in the environmental conditions pertaining to water relations and nutritional conditions (Salisbury, 1927). Fluctuation in stomatal opening provide the mechanism for the regulation of transpiration. Many agrochemicals affect water and carbondioxide exchange of plants and it affects the photosynthesis. Considerable work is available concerning the mode of action of herbicides (Audus, 1976), the reports of effect of herbicides on stomatal regulation are scanty.

Table–1. Effect of different Agrochemicals on stomatal opening in light incubated (for 24 hours) isolated epidermal peelings of *C. tetragonoloba*.

Treatment(Conc. in ppm)		μ
	Control	4.5
2,4-D	10	3.6
	50	2.5
	100	1.8
McPA	10	3.5
	50	3.1
	100	2.5
TCA	10	3.6
	50	3.3
	100	2.1
Dalapon	10	3.8
	50	3.5
	100	2.5
Tribunil	10	4.1
	50	3.8
	100	3.0
Sodium Fluoride	10	3.5
	50	3.0
	100	2.6
Sodium chlorate	10	3.6
	50	2.8
	100	2.5
Lasso	10	3.1
	50	2.4
	100	1.8

Table–2 (see in next page)

References:-

1. Anastasov, H. 2010. Influence of Oxyfluorfen on some anatomic induces in the leaves of Virginia tobacco plant (*Nicotianatabacum* L.) Biotechnol. Biotech. Eq., 24: 33-35.
2. Audus, L.J. 1976. Herbicides. Academic Press, London.
3. Guh, J.O. and Y.I. Kuk, 1997. Difference in absorption and anatomical response to protoporphyrinogen oxidase inhibiting herbicides in wheat and barley. Korean J. Crop Sci., 42: 68-78.
4. Ha *et al*, 2003. Transgenic rice plants expressing Bacillus protoporphyrinogen oxidase gene show low herbicide oxyfluorfen resistance. Biol. Plant, 47: 277-280.
5. Jung *et al*, 2004. Dual targeting of *Myxococ cusxanthus* protoporphyrinogen oxidase into chloroplast and mitochondria and high level oxy fluorfen resistance. Plant Cell Environ., 27: 1436-46.
6. Kamble, S.I. 2007. Effect of spray application of oxyfluorfen anatomical characters of *Hibiscus cannabinus* Linn. Bio Sci. Biotech. Res. Asia. 4: 671-674.
7. Kamble, S.I. 2013. Effect of agrochemical (2, 4-D) on anatomical aspects of *Cassia tora* Linn. Biosci. Biotech. Res. Asia, 10(2) : 885-89.
8. Pemadasa, M.A. and K. Jeyaseelan, 1976. Some effect of three herbicidal auxins on stomatal movement. New Phytol., 77: 569-573.
9. Prakash *et al*, 1978. Effect of some herbicides on the epidermis of *Vicia sativa* L. Weed Res., 18: 379-380.
10. Rajendra*et al*, 1977. A modified technique for stomatal study of the leaf epidermis in Triticeae. Stain Technol., 52(1): 9-12.
11. Salisbury, E.J. 1927. On the causes and ecological significance of stomatal frequency, with special

reference to the woodland flora. Philos. Trans. Royl Soc., 216: 1-65.
12. Semardjieva*et al*, 2015. Anatomical changes in tobacco leaf after treatment with isoxaflutole. Intr. J. Curr. Res. Biosci. Plant Biol., 2(7): 51-56.
13. Slace, C.A. 1965. Cuticular studies as an aid to plant taxonomy. Bull. British Museum (NaF. Hist.) Bot., 4: 1-78.
14. Steel *et al*, 1997. Principles and Producers of Statistics. 3rd Ed. McGraw Hill, New York.
15. Warbi*et al*, 2001. Resistance of a Soyabean cell line to oxyfluorfen by overproduction of mitochondrial protoporphyrinogen oxidase. Pestic. Manage Sci., 57: 743-748.
16. Yang, K., S. Jung, Y. Lee and K. Back 2006. Modifying *Myxococcusxanthus* proto porphyrinogen oxidase to plant codon usage and high level of oxyfluorfen resistance in transgenic rice. Pestic. Biochem. Physiol; 86: 186-194.
17. Zadoks*et al*, 1974. A decimal code for growth stages of cereals. Weed. Res., 14: 415-421.

Table–2. Effect of foliar spray (Agrochemicals) on stomatal index of *C. tetragonoloba.*

Treatment (Conc. in ppm)		Stomatal index (%)	
		Upper epidermis	Lower epidermis
Control		18.33	18.38
2,4-D	100	24.74	26.19
	500	24.23	25.57
	1000	17.77	23.83
McPA	100	23.55	25.97
	500	20.17	25.46
	1000	-	-
TCA	250	19.09	23.46
	500	18.13	19.84
	1000	16.88	18.99
Dalapon	250	23.90	29.56
	500	20.83	24.07
	1000	18.91	23.38
Tribunil	100	18.86	21.37
	250	16.25	18.46
	500	15.83	19.36
Sodium Fluoride	100	24.25	24.99
	500	22.73	24.36
	1000	21.10	23.63
Sodium chlorate	500	22.24	29.81
	1000	19.95	19.96
	2000	18.64	19.79
Lasso	100	23.44	24.42
	500	18.88	22.42
	1000	-	-
S.Em ±		1.0644	0.7564
C.D. at 5%		3.02	2.15
C.D. at 1%		4.03	2.86

Analysis of variance

Source of variation	df	Upper epidermis				Lower epidermis		
		SS	MS	F		SS	MS	F
Within 2,4-D	2	1.2659	0.6329	<1		132.1208	66.0604	19.44**
Within MCPA	2	972.8558	486.4279	283.36**		1322.9126	661.4563	194.61**
Within TCA	2	8.8322	4.4161	2.57*		33.8078	16.9039	4.97*
Within Dalapon	2	41.4176	20.7088	12.06**		51.4824	25.7412	7.57**
Within Tribunil	2	13.9834	6.9967	4.08*		17.5382	8.7691	2.58*
Within Sodium Fluoride	2	15.2430	7.6215	4.44*		2.7794	1.3897	<1
Within Sodium chlorate	2	11.2298	5.6149	3.27*		223.7046	111.8523	32.91**
Within Lasso	2	1102.9929	551.4964	321.26		926.6816	463.3408	136.32**
Between agrochemicals	7	784.3989	109.1981	63.61**		912.4426	130.3489	38.35**
Control vs treated	1	2.3581	2.3581	1.37*		17.7370	17.7370	5.22*
Error	50	85.8325	1.7166			169.9428	3.3989	
Total	74	3020.4079				3811.1498		

* Significant at 5% level.
** Significant at 1% level.

****

महावीरचरित का रस-विवेचन

डॉ. कौशल्या शर्मा *

प्रस्तावना – महाकवि भवभूति की प्रथम कृति महावीरचरित सप्त अंकात्मक नाटक है, जिसमें श्रीराम चन्द्र के पूर्वचरित का रोचक वर्णन हैं। राम सीता विवाह से लेकर राम-रावण युद्ध के बाद राम राज्याभिषेक तक की घटनाओं का इसमें विस्तारपूर्वक वर्णन हैं।

महावीर चरित में प्रमुख रस वीर है, रौद्र बीभत्स एवं अद्‌भुत इसके अंग रस है। सभी रसों के स्थायी भाव के अनुरूप विभाव, अनुभाव एवं व्याभिचारी भावों के संयोग से रस निष्पत्ति सम्पूर्ण नाटक में परिलक्षित होती हैं। नाटक के नायक राम के उत्साह की अभिव्यक्ति प्रथम अंक में ही हो जाती है। महर्षि ने आदेश दिया, तब राम ने कहा 'भगवन्! स्त्री खल्वियम्।' यह उचित भी है, स्त्री पर प्रहार करना वीर का लक्षण नहीं है। विश्वामित्र ने जब यह कहा कि यह दया करने योग्य स्त्री नहीं है, अपितु ब्राह्म्ण समूह की मृत्यु स्वरूप है, तब राम ने ताटका का वध कर दिया। यहाँ पर राम वीर रस के स्थायी यउत्साह' के आश्रय है, ताटका आलम्बन विभाव, विश्वामित्र का कथन उद्दीपन विभाव, ताटका की ओर राम का जाना एवं तीव्र बाणों का प्रहार अनुभाव हैं, राम की 'धृति' व्याभिचारी भाव है।

द्धितीय अंक में क्षत्रिय संहारी परशुराम के आने की नेपथ्य में घोषणा होने पर राम उनसे मिलने के लिये शीघ्रता करते हैं। सखियाँ कुमार, अलं तावत्त्वरया कहकर रोकने का प्रयास करती हैं, तब राम का 'नोत्सवा: परावधीरणावैरस्यमर्हन्ति कथन उनके अदम्य उत्साह की अभिव्यंजना करता है।

आत्मविश्वासी राम परशुराम के शान्त एवं उग्र दोनों रूपों की[1] सेवा करने में समर्थ हैं, उनका हाथ एक और तपस्वी मुनि के चरण स्पर्श करने के लिये आगे बढना चाहता है, दूसरी ओर नवशिक्षित धनुर्विद्या के उपयुक्त कार्य को करने के लिये चलना चाहता है।[2] यह अवसर शिष्टाचार पालन के अनुपयुक्त है, अतएव वे अयमहं मो:! इत इतो भवान्। कहते हैं। परशुराम भी राम के सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाते हैं, किन्तु वीरव्रत का पालन करने के लिये विवश हैं। अद्‌भुत वीर को प्राप्त कर उनका वक्ष:स्थल रोमांचित हो उठता है और अपने हृदय से लगाने की इच्छा व्यक्त करते हैं। राम 'भगवन् परिरम्मणं प्रस्तुतप्रतीपमेतत' कहकर आत्म गौरव को व्यक्त करते हैं। परशुराम राम के शोभा, सत्त्वगुण से ज्वलित तेज धर्म, मान, विजय और पराक्रम से युक्त शरीर को देखकर अनेक कल्पनाएँ करते हैं, जो राम के 'महावीरत्व' को अभिव्यक्त करती हैं।[3]

'राम का वध करना पड़ेगा' इस बात का परशुराम को 'खेद' होता है और उनके नयन सजल हो जाते हैं, किन्तु राम के 'भार्गव ! ज्ञायते मामनुकम्पसे इति 'एवं 'आ:। सत्यमेव करूणया परिक्षिप्तोऽसि'[4] साहसपूर्ण व्यंग्य जहाँ एक ओर धैर्य को व्यक्त करते है, वहीं दूसरी ओर परशुराम को उत्तेजित कर देते हैं। परशुराम अपनी प्रशंसा करते है,[5] जिसे राम नृशंसता की संज्ञा देते हैं, इस पर परशुराम उन्हीं के शब्दों में गर्व को व्यक्त करते हैं।[6]

जनक और शतानन्द की निषेधाज्ञा के कारण राम को धनुष उठाने का अवसर नहीं मिल पाता है और कंकण मोचनार्थ अन्त: पुर में बुलाये जाते हैं। अन्त: पुर का कार्य पूर्ण करने के पश्चात् तृतीय अंक में राम गुरुजनों को नमस्कार करते हुए घोषणा करते है-

'पौलस्त्यविजयोद्दामकार्तवीर्यार्जुनद्धिषम्।
जेतारं क्षत्रवीर्यस्य विजयेयनमोऽस्तु व:।।[7]

राम की इस घोषणा में 'गर्व' व्याभिचारी भाव अभिव्यक्त हुआ है।

पंचम अंक में राम और बाली के संवादों में वीर रस का प्रस्फुटन हुआ है। बाली को हर्ष है कि परशुराम को पराजित करने वाले राम से मिलकर उसकी रणलिप्सा की पूर्ति हो जायेगी। राम से मिलने पर उन्हें धनुष ग्रहण करने के लिये कहता है, तब राम 'किं त्वशस्त्रेषु युष्मासु कथं रामोऽस्तु सायुध:' कहते हैं, यह सुनकर बाली हँसते हुए यगर्व' व्यक्त करता है- 'हे महाक्षत्रिय। हम लोग दया के पात्र नहीं है, जो आप इस प्रकार दया दिखा रहे हैं। मेरा पराक्रम विश्वविख्यात है, वचनों से क्या प्रकट किया जाये ? युद्ध के लिये तैयार हो जाओ, तुम सत्यप्रिय तथा सच्चे मनुष्य हो। शस्त्रों का नहीं होना मेरी विजय में बाधक नहीं है और यदि तुम शस्त्र के लिये आग्रह करो तो यह पहाड़ तो हैं ही, वानर इन्हें ही शस्त्र मानते हैं।[8]

षष्ठ अंक में मन्दोदरी रावण के 'उत्साह' को उद्दीप्त करना चाहती हैं, किन्तु अहंकारी रावण के सामने उसके समस्त उद्दीपन निष्फल हो जाते हैं। रावण उसकी बातों का उपहास करता है और अपने 'गर्व' की श्लाघा करता है।[9] संदेशवाहक अंगद की कटूक्तियाँ सुनकर तथा यह ज्ञात होने पर कि राक्षसों का संहार हो रहा है और शिलाघात से पुरद्धार तोड़ा जा रहा है, रावण उद्दीप्त होता है। इन्द्र आदि देवों का राम के प्रति पक्षपात भी रावण के 'क्रोध' को बढाने में सहायक होता है और वह वीरोचित संकल्प करता है[10] और युद्धार्थ भयंकर गति से प्रस्थान करता है। उसके अनुभाव का वर्णन सौन्दर्य से परिपूर्ण है।[11]

युद्ध के लिये सन्नद्ध शत्रु को देखकर भी रामचन्द्र अडिग हैं। 'साहस' और धैर्य की यह उत्कृष्ट स्थिति है। मेघनाद के वध हेतु धनुष चढ़ाने में तत्पर श्रद्धानत लक्ष्मण को छोड़कर युद्धवीर रावण को लक्ष्य करके रामचन्द्र द्धारा अपने धनुष की प्रत्यंचा को स्पर्श करना अनुभाव है। राम की सेना (वानरों) का 'उत्साह' भी चित्ररथ के (ये वानर भी लड़ाई में अपना ही नाम ऊँचा करना चाहते हैं, राम के पास तो केवल पाँच-छ: ही है।) 'अहा ! कथमेते

* व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा. राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

वनौकसोऽपि महति सपत्नसंगरे स्वाभिधानयोगमेव ख्यापयन्त: पंचषा: केवल रामभद्रपादमूलमासेवन्ते।'[12] कथन से अभिव्यक्त होता है। लक्ष्मण के साथ हनुमान् का धैर्यपूर्ण साहस उनके युद्धोत्साह को अभिव्यक्त कर रहा है। संजीवनौषधि हेतु पूरा पर्वत ही लाने में हनुमान् के द्वारा दिखाये गये पराक्रम का वर्णन करते समय रोमांचित होना, प्रलयकाल के समान धूलवृष्टि गिरना, टेढ़ी, पूँछ से टकरा जाने के कारण नक्षत्र मण्डल का झटकना आदि अनुभावों की अभिव्यक्ति हुई है। दोनों ओर की सेवा के अग्रभाव में स्थित वानरों और राक्षसों के परस्पर युद्ध के वर्णन में भी वीर रस के स्थायी भाव 'उत्साह' की अभिव्यक्ति हुई है।

रौद्र रस – महावीरचरित के तृतीय अंक में रौद्र रस की प्रधानता है। वसिष्ठ और विश्वामित्र परशुराम को शान्त करने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु विफल रहते हैं तथा परशुराम को राम का अनिष्ट करने के लिये दृढसंकल्प जानकार शतानन्द क्रुद्ध होकर परशुराम को कहते हैं –'आ: शक्तिरस्ति कस्य वा विदेहराजन्यस्य राजर्षेर्याज्यस्य मे प्रेयसश्छायामप्यवस्कन्दितुम्, किं पुनर्जामातरम्।' इसके पश्चात् परशुराम के उत्तर से शतानन्द का एवं शतानन्द के प्रत्युत्तर से परशुराम का 'क्रोध' उद्दीप्त हो जाता है। परशुराम पृथ्वी को राम, जनक और दशरथ से रहित कर देने की घोषणा करते हैं, जिससे जनक का 'क्रोध' भी उद्दीप्त हो जाता है और उनका निवृत्त क्षात्र–तेज प्रदीप्त होकर धनुष का प्रयोग करने हेतु तत्पर हो जाता है। दशरथ जनक को तो शान्त करते हैं, किन्तु परशुराम के 'त्वमप्यपर: प्रभविष्णुरिव मामवस्कन्दयसि।—'[13] कथन को सुनकर दशरथ उत्तेजित हो जाते हैं तथा अपने कर्तव्य (दुर्दान्तों का दमन करने) की याद दिलाते हैं, जिसका विश्वामित्र समर्थन करते हैं। परशुराम और भी क्रुद्ध होकर महर्षि वसिष्ट को भी अपने से कम तपस्वी एवं ज्ञानी बताते हैं, इस आक्षेप से विश्वामित्र, दशरथ और जनक क्रुद्ध होकर एक साथ जामदग्न्य की भर्त्सना करते हैं, तब परशुराम इस अपमान को सहन नहीं कर पाते हैं और पृथ्वी को बाईसवीं बार क्षत्रियरहित रहने की प्रतिज्ञा कर लेते हैं।

परशुराम की उक्त प्रतिज्ञा विश्वामित्र के 'क्रोध' को और भी उद्दीप्त कर देती है, जिनकी अभिव्यक्ति उनके दक्षिणहस्त द्वारा शापोदक एवं वामहस्त द्वारा धनुष खोजने से होती है। परशुराम अपने तप एवं कुठार से दोनों को शान्त करने की बात कहते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण अंक में परस्पर रोष–सम्भाषणों द्वारा 'क्रोध' स्थायी भाव के उद्दीप्त होने से रौद्र रस की निष्पत्ति होती है।

श्रृंगार – प्रथम अंक में राम और लक्ष्मण द्वारा सीता और ऊर्मिला को देखने से अनुराग उत्पन्न होता है। द्वितीय अंक में परशुराम की ओर उन्मुख राम को रोकने के प्रयत्न में मुग्धा सीता का स्नेह, जो अभी तक आभिजात्य के कारण गूढ था, अभिव्यक्त हो जाता है, परशुराम के मुख से 'भो भो: परिष्कन्दा:। क्व रामो दाशरथि:' सुनकर सीता की आशंका बढ़ जाती है और वह अन्य कोई उपाय न देखकर राम का धनुष पकड़कर कहती हैं – 'आर्यपुत्र ! न तावद्युष्माभिर्गन्तव्यं यावत्ततो नागच्छति।' राम धनुष छोड़कर जाना चाहते हैं, तब सीता स्वयं राम को बलपूर्वक पकड़ लेती है। राम और जामदग्न्य के उत्तेजनापूर्ण वार्तालाप के समय सीता कभी आँखों में आँसू, कभी सन्तोष की साँस लेकर और कभी संग्राम–श्री को हाथ जोड़कर अपना प्रेम व्यक्त करती है।

सीता–हरण के पश्चात् विप्रलम्भ श्रृंगार का पंचम अंक में कतिपय स्थलों पर चित्रण हुआ है। सीता के लिये करूणा मर्मच्छेद कर रही है। वे सीता को मधुर वाणी सुनाने के लिये कहते हैं –

प्रिये हा हा क्वासि प्रकिर मधुरां वाचमथवा
पराभूतैरित्थं विलपनविनोदोऽप्यसुलभ:।[14]

रावण द्वारा हरकर ले जाते समय सीता की अनसूया नामांकित चादर गिर गयी थी यह बात श्रमणा के मुख से सुनकर राम की 'रति' उद्दीप्त हो जाती है, वे मूर्च्छित हो जाते हैं। तदनन्तर सीता के अभिज्ञान–दर्शनार्थ वे ऋष्यमूक पर चले जाते हैं। इस प्रकार वीर रस प्रधान होने पर भी नाटक में श्रृंगार के दोनों पक्ष संयोग एवं वियोग का चित्रण यत्र–तत्र हुआ है।

बीभत्स – प्रथम अंक में ताटका के स्वरूप वर्णन[15] एवं उसकी मृत्यु के दृश्य में तथा पंचम अंक में श्मशानानल से कबन्ध के दिव्य पुरूष के रूप में प्रकट होने के वर्णन में जुगुप्सा स्थायी भाव की प्रधानता होने के कारण बीभत्स रस है।

अद्भुत – राम के कर–स्पर्श से खण्डित धर्नुदण्ड की टंकार ध्वनि, जृम्भकास्त्रों के वर्णन[16] एवं हनुमान द्वारा संजीवनौषधि हेतु पूरा पर्वत उठा लाने में 'अद्भूत' रस का संचार हुआ है।

करुण – बाली का वध होने पर नील आदि के विलाप,[17] विभीषण के अतिरिक्त रावण के वंश के समूल नष्ट होने के कारण लंका के विलाप में करुण रस की व्यंजना हुई है।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि भवभूति की प्रसिद्धि के आधारभूत ग्रंथ उत्तरामचरित के आधार महावीरचरित में वीररस प्रधान है, जिसका स्थायी भाव 'उत्साह' है, परन्तु प्रसंगवश अन्य भावों के साथ यथोचित संयोजन से रसानुभूति हृदयग्राहिका है। वैसेही जैसे लालवर्ण के पुष्पों की माला बीच–बीच में हरे, पीले और श्वेतवर्णी पुष्पों से आकर्षिका एवं मनमोहिका हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भवभूति– महावीरचरित 2/26
2. वही, 2/30
3. वही, 2/41
4. वही, 2/पृष्ठ 98, 99
5. वही, 2/48
6. वही, 2/49
7. वही, 345
8. वही, 5/51
9. वही, 2/14
10. वही, 6/25
11. वही, 6/27,30
12. वही, 6/278
13. वही, 3/पृष्ठ 130
14. वही, 5/28
15. वही, 1/35
16. वही, 1/46
17. वही, 6/9

****

The Views of Sri Aurobindo on Philosophy and Education

Dr. Sitaram*

Abstract - Sri Aurobindo the poet and playwright, the aphorist, translator, and prose writer, but also Sri Aurobindo the philosopher and visionary.Aurobindo Ghose is a well- known philosopher and humanist. He is also known as a renaissance person. He is known for his philosophical insights, but has also written extensively on education, and its different components such as curriculum, school, relationship of teacher and pupil, discipline, and philosophy of education which are relevant even today.He preached various aspects of philosophy such as Brahmacharya, philosophy of Dharma and Karma, spiritual growth and learning through philosophical and scientific means. His mission in life was to bring out the divine within every individual through integral yoga and turn that person into a divine being. In 1926, with the help of his spiritual collaborator, MirraAlfassa (referred to as 'The Mother') he founded the Sri Aurobindo Ashram. The rest of Aurobindo' s life was spent in the Ashram doing yoga and meditation for spiritual growth and development. He died on 5th December 1950 at Pondicherry.
Keywords-Renaissance, integration, philosophy, spirituality.

Introduction - The present paper presents SriAurbindo Ghose as a versatile writer who has written extensively on Indian philosophy and culture. His writings cover a wide range of topics which are relevant to Indian society even today. Ghose had profound knowledge of disciplines such as science, literature, psychology, sociology, political science, philosophy and others and that is the reason why he could cover such a wide range of subjects .The present study focusses on the understanding the life philosophy and educational philosophy of Aurobindo. Inorder to understand some concepts of education given by himand estimate the impact of his thoughts on present system of education. Aurobindo's life philosophy is a synthesis of idealism, realism, naturalism and pragmatism. According to him, Jnana (knowledge), Bhakti (devotion) and Karma (work ethics) can lead man to the divine path. But synthesis of spirituality, creativeness and intellectuality is essential for a sound personality. Spirituality is the master key of the Indian mind. He had also faith in creativeness of India and its strong intellectuality.

Aurobindo Ghosh was a multifaceted genius – a great philosopher, a freedom fighter, an eminent educationist and a true Yogi. He started his journey as a political thinker and became a spiritual integralist. He showed us the path to the highest spiritual growth. His philosophy was based on his philosophy of life i.e., on brahmacharya, practice of Yoga and spiritual penance. He believed in integral education, based on his philosophy of education, leading man to the fullest extent through harmonious development of his self – physical, vital, mental, psychic and spiritual. He translated his ideals into a system of education through his Pondicherry Ashram School, now named as Aurovile.A balance between the multicoloured shades of life makes life as a whole. He had a greatfaith in the Gita that there should be a proper balance among knowledge, devotion and work. God, the Purushothama can be achieved through Nishkam Karma, never–ending meditation, devotion and feeling of unity of all things in God. So Aurobindo was strong supporter of the basic unity of truth through synthesising the different views of Indian thoughts. Such integral approach can solve various problems of human life.He was nominated for the Nobel Prize in Literature in 1943 and for the Nobel Peace Prize in 1950. His major writings include A System of National Education; The Life Divine; Savitri: A Legend and a Symbol ;The Essential Aurobindo: Writings of Sri Aurobindo; Synthesis of Yoga; Powers Within and Gems from Sri Aurobindo .Aurobindo's concept of 'education' is vastly different from that of traditional approaches to education. According to him, acquiring information is not the aim of education; it must build powers of the human mind and spirit'. Aurobindo Ghose was an idealist to the core. He narrates the kind of education, we need in our country in the following words- 'We need an education proper to the Indian soul temperament, and culture that we are in quest of, not indeed something faithful merely to the past, but to the developing soul of India, to her future need, to the greatness of her coming-self creation, to her eternal spirit'Aurobindo emphasised that education should be imparted in accordance with the needs of modern life. He believed that education should create such citizens who are dynamic and able to face any challenge in the modern society.Aurobindo emphasised that the main aim of

* Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

education is to promote spiritual development. According to him every human being has a fragment of divine existence within himself and education can scan it from each individual to its full extent.Despite having western education Aurbindo Ghose was critical of the education system of his times. He was aware of the fact that the education system which was in existence had just turned to be a machine of knowledge and did not touch upon the needs and spirits of citizens of modern times. Aurobindo's observation was that 'education to be true must not be a machine made fabric, but a true building or living aura of the powers of the mind and spirit of human being' .According to Aurbindo Ghose, education is not just about working in a laboratory or collecting information by reading books. If education must be imparted meaningfully, a healthy balance must be achieved between the body and mind. Aurbindo Ghose compared the European system of education with that of India and said that the European system had its own limitations despite its advancement. It does not give the kind of weightage that needs to be given to the knowledge of human psychology and looks into temporary achievements.The Teacher is not an instructor or task maker. He is a guide who shows students how to equip their instruments of knowledge and achieve progress. Instead of imparting knowledge teachers show the pathway to search for knowledge on their own. The teacher's job is to make the student understand and appreciate the true value of knowledge. This principle however operates differently for children, adolescents and adults.Aurobindo Ghose widely known as a philosopher and spiritual guru has written extensively on issues relating to education that have enormous contemporary relevance. Education according to him is not just about acquiring information but building the powers of the human mind and spirit. He speaks of education which is suitable for Indian soul, temperament and culture. He synthesised western scientific rationalism with eastern transcendent metaphysics into a holistic narrative of reality. Aurobindo emphasised that education should be in accordance with the needs of modern life but include the core ideas and methods of ancient education. He wanted education to be child centric and build the right type of emotions, habits and motivate the child to engage in the right type of acts.

According to Aurobindo Ghose, education does not just mean working in a laboratory or collecting information by reading books. Educating a student is not like the work of a carpenter or a sculptor. According to him true education happens only when there is a semblance between the human body and mind. He pointed out six aims of education, these being physical development, training senses, mental development, development of morality, development of conscience and spiritual development. He stressed the teacher's role in imparting knowledge and wanted teachers to train students and not impose their views on them. He wanted the mother tongue to be the medium of instruction. Aurobindo desired that students must maintain a continuous contact with their institutions through alumni associations. To Ghose the mind has to chalk out the course of its growth. Education must train the senses and powers of the mind by developing the powers of logical reasoning. He also stressed on the need for students to develop their powers of observation and imagination. The ultimate aim of education according to Aurobindo was to bring out the divine within students to the surface.Ghose believed that education is a creative process. Where there is compulsion creativity is hampered. There is always a dichotomy between freedom and discipline. Both seem to go in opposite directions. The secret of integral education lies in achieving a proper synthesis between discipline and education. Discipline should be transformed into self- discipline and not imposed or forced by others. According to him, each child is different and a child 's interest in a given activity must be respected. A child must not be forced to engage in an activity in which he/she is not interested. Teachers must recognise the differences among students and encourage them to pursue their interests. It is the teacher's duty to counsel, motivate and bring out the best in students.

According to Aurobindo Ghose, if a student is given lot of information it does not lay a sound foundation. Information is almost similar to the study materials that are given to students for reference, but it does not make a student intelligent. If education confines itself to accumulation of knowledge it cannot be called 'real education'. A balance must be struck between the various faculties of memory, imagination, perception and reason which are the edifices of thought and knowledge and the tools and material used in education. In his view, memory, judgments and creative powers are ever growing faculties that give a boost to education. In a series of short essays the author shows how Sri Aurobindo synthesised India's ancient philosophy and spirituality, sciences, arts, culture, nationalism, dharma, languages, and linguistics by introducing new lines of development and thought that helped awaken India to her destiny.According to him, mind of man isimperfect and it can be transformed into super mindwhich can have an understanding of the integraltruth. He said, "Man will become a super mind.Super mind will have a super mental consciousness.Consciousness of Sat–Chit–Anand" (Ravi, 2011).When one attains a super mind, he becomes asuperman. Such transformations is possible throughPurna Yoga, which can further help one to realisethe supreme, the Purushothama.According to Aurobindo, individual soul isin the continuous process of evolution to attain thesupreme soul. To him, "Life is not for life alone,but for God. There is an inner law and meaning forall things depending on the supreme." (Ravi, 2011)If we neglect such inner laws &spirituality, it will result in the decay of humansocieties. He remarked, "the radical defect of allcivilization has been the neglect of the spiritualelements"

Aurobindo believed in the synthesis of theidealism, realism, naturalism and pragmatism. Hetried to translate his philosophical ideals into asystem of education that would help the youngchild to develop his interest, creativity,

mental,moral and aesthetic senses. True education shouldfocus on the four layers of mind-chitta, manas,buddhi and intuition. Chitta is the passive memoryand needs no training. Manas is the sixth sense.Buddhior intellect works at the higher level ofjudgement, manipulation and generalisation conclusion. Intuition brings direct vision of knowledge.Education, in its true sense should bring out thelatent powers of child to make him complete inevery respect. In his words, "Education is helpingthe growing soul to draw out that is in itself (Ravi,2011). Education that ensures complete or integraldevelopment i.e., physical, vital, mental, psychic and spiritual aspects of the child, is called integraleducation. Such education can give the child a flexible shape so that he may be able to facechallenges and meet the changing and growingneeds of complex life .The teacher should play a vital role in theprocess of education through inculcation of self–control, humanityand spiritual equality. Accordingto Aurobindo, "one must be a saint and a hero to bea good teacher". "The teacher is not an instructor ortask master, he should be a helper & guide. Hisbusiness is to suggest and not to impose. He doesnot impart knowledge to him. He shows him how toacquire knowledge for himself"(Ravi, 2011). So theteacher should not impose anything on the child.Rather as a helper & guide he should stimulate thechild to develop himself naturally with fullfreedom .Aurobindo was a distinguished philosopherand educationist who formulated rich philosophicalideas and educational thoughts to enrich oureducational systemcomprehensively. His thoughts are relevant today and should be adoptedto solve the problems of our educational system.

Conclusion- So we may conclude that his educationalthoughts are comprehensive, very much relevant,modern, and psychological in nature. His integraleducation can combine human body, mind, intellect& soul together to meet full purpose of life. He wasa great supporter of national system of educationwhich is associated with his integral education.Through such national system of education we canachieve national integrity, preserve and promoteour culture and tradition. As a result nationalreconstruction will be achieved.

References:-

1. Taneja, V.R. (2004) Educational thoughtand practice(P. 48-57), sterling publishers,new delhi,
2. Sri Aurobindo(1969) The foundations of Indian Culture(P. 236-308), Sri Aurobindo Society, Kolkata.
3. Aggarwal, J.C. (2002), Theory & Principles ofEducation (P.150-155) Vikas Pub. House Education
4. Dash, M. (2004) Education In India, (P. 112-118) Atlantic pub.
5. Sharma, S.R. (2003) Principles of Education (P.90-95) Mohit Pub.
6. Pruti, R.K. (2005) Education in Modern India(P. 110-115) Sonali Pub.
7. Johri, P.K. (2005) Foundation of Education (P.152-158) Anmol Pub., New Delhi.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

XRD Studies of Locally Sourced Asbestos

Dr. Nira Talesra*

Introduction - The crust of the earth has many elements in different chemical states. Silicon and oxygen are abundantly present; some minerals are also rich in iron content [Perkins, 2002]. In minerals, two oxidation states of iron, the ferrous 2+ and the ferric Fe3+ are found. They are seen to occupy lattices with tetrahedral or octahedral symmetry. X-ray diffractometry gives quick information about the composition of the minerals [Klug, 1974].

Amphiboles In Aravallis: Asbestos belongs to the double chain silicate amphibole mineral. Anthophyllite and actinolite asbestos are two significant minerals mined from the southern, hilly Aravali terrain of Rajasthan. Normally, asbestos industries use fibrous minerals directly mined from this region.

The site and depth of occurrence of the mineral, the temperature, pressure and atmospheric conditions to which it has been subjected, the environmental weathering and exposure, cause variations in the structure, lattice parameter, local symmetries at various sites and quantity and type of various cations present in these sites.

X-Ray Diffraction: X-rays were discovered in 1895 by the German physicist, Wilhelm Konrad Röentgen. They are electromagnetic radiation of very short wavelength, approximately in the range 0.5 – 2.5 Å. In 1912, another German physicist, Max von Laue, discovered the phenomenon of x-ray diffraction by crystals.It is governed by the famously simple Bragg's law.This law can be applied in two ways. A crystal with planes of known spacing d can be used to determine the wavelength of the radiation. Alternatively, by using x-rays of known wavelength and measuring the angle, the spacing d of various planes in a crystal can be determined. Hence, x-ray diffraction can be used for structure analysis [Stanjek, 2004]. Since single crystal specimens of most minerals are not available, the powder method is widely employed for determining lattice parameters with high precision.

Qualitative Analysis Using X-Ray Diffraction Pattern: A given substance always produces a characteristic diffraction pattern, whether this substance is present in the pure state or as a one constituent of a mixture of substances. This fact is a basis for the diffraction method of chemical analysis.

Qualitative analysis for a particular substance is accomplished by identification of the pattern of that substance. Qualitative analysis is also possible because the intensities of the diffraction lines due to one phase of the mixtures depend on the proportion of that phase in this specimen.

Identification Of Constituent Compounds: The particular advantage of diffraction analysis is that it discloses the presence of the substance, as it actually exists in the sample and not in terms of its constituent chemical elements. For example, if a sample contains the compound AxBy, the diffraction method will disclose the presence of AxBy as such whereas ordinary chemical analysis would show only the presence of elements A and B. Further more, if the sample contained both AxBy and AxBz both of these compounds would be disclosed by the diffraction method, but chemical analysis would again indicate only the presence of A and B.

Compound Fingerprinting: The powder pattern of the substance is characteristic of that substance and forms a sort of fingerprint by which the substance may be identified. A system of classifying the known patterns is needed so that the pattern which matches the unknown can be located quickly;this activity is covered by the Joint Committee on Powder Diffraction Standard (JCPDS).

Methodology: Identification of the unknown sample begins with its diffraction pattern. Sample preparation should result in fine grain size and in a minimum of preferred orientation. In the present work, an x-ray diffractometer manufactured by Rigaku Corporation, Japan, has been used. Called the MiniFlex, it is operated using 30kV, 15mA tube output voltage and current respectively. The size of focal spot is 1mm x 10mm, causing a highly intense beam. The target metal is Copper, which produces x-rays whose Kα line has a wavelength of 1.542Å. The intensity of this characteristic line for 30kV operating voltage is about 90 times that of the

*Department of Physics, Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

wavelengths immediately adjacent to it in the continuous spectrum. Beryllium is used as the x-ray tube window material as it is highly transparent to x-rays. The sample holder is a disc-shaped Aluminium container with an inner radius of 1.0cm and depth of 0.1cm. Nickel filter is used for other X-ray component suppression. A NaI (Tl) scintillator is used for detection of the diffracted x-rays. It is mounted on a vertical type goniometer having 15cm radius. The allowed range of angle measurement varies from values of 2^0 to 150^0. The scanning speed during irradiation may vary between 0.01 and 100^0 per minute. A Bernard water-circulating pump with a capacity to pump over 3.0 litres of water per minute is installed with the unit to provide adequate cooling of the target.

Data Recording Software: The Rigaku Standard Software has several options, which are set such that necessary and sufficient data can be recorded. In particular, the start and stop angle and the scan speed are set.

Results: The Rajsamand samples sourced from Deogarh and Kuathal showed the sample to consist of Anthophyllite with presence of Actinolite besides traces of Chlorite andTalc; the XRD showed a maximum at 29.2degrees. Relative intensity of any other constituent's peak was less than a quarter that of Anthophyllite.

The Mandal sample sourced from Bhilwara territory showed Actinolite as the primary constituent. At the same time, it had significant part of Anthophyllite also; talc and chlorite were present in lesser proportion. To corroborate the empirical understanding, we run anXRD for hand-picked threads of the Maandal sample. It showed complete match with the ICDD card no. 41-1366 for the collating material as Actinolite.

Table 1

Conclusion: Anthophyllite and Actinolite were the principal constituents of the selected mineral samples. Both are hydroxylated silicates and contain Mg and Fe, as corroborated by our studies through chemical elemental analysis. One form of actinolite listed in the ICDD cards does not contain iron at all. This did not match with any of the samples under the present study.

References:-

1. Perkins, D., 2002. Mineralogy, 2nd edition, Pearson Education: 2,1653.
2. Klug, H.P., and Alexander, L.E., 1974. X Ray Diffraction Procedures, 2nd edition, John Wiley & Sons Inc., New York.
3. Stanjek, H. and Hausler, W., 2004. Hyperfine Interactions: 154, 107.

Table 1: Powder diffraction data of pure asbestos hand-picked threads:

Peak number	Peak position(2θ)	Relative Intensity (I/I_0)	Collating material	ICDD card No. of collating material	Integrated intensity of peak (counts)
1.	10.2	13	Actinolite	41-1366	287.41
2.	19.1	06	Actinolite	41-1366	147.68
3.	21.0	12	Actinolite	41-1366	296.44
4.	27.0	26	Actinolite	41-1366	401.53
5.	28.1	16	Unindexed	-	317.52
6.	28.8	100	Actinolite	41-1366	2639.20
7.	32.0	15	Actinolite	41-1366	339.89
8.	48.8	08	Actinolite	41-1366	156.21
9.	56.5	07	Actinolite	41-1366	115.34
10.	59.4	08	Actinolite	41-1366	135.08

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Mossbauer Spectroscopic Study of Rajsamandasbestos

Dr. Nira Talesra*

Introduction - Studies of the hyperfine fields present in materials give an important clue to the understanding of many of the properties exhibited by materials. For instance, in many of the minerals, both oxidation states of iron are present. The oxidation states vary, both qualitatively and quantitatively, with heat treatment. A systematic study of the hyperfine fields at different sites gives an understanding of the mechanism of oxidation [Bancroft, 1967].

As iron is present as a component, Mössbauer studies provide an excellent method for the microscopic examination of the hyperfine fields present at different crystallographic sites.

Advantage Of Mossbauer Spectroscopy: The technique of Mossbauer spectroscopy has a unique distinction compared to Chemical and X-ray diffraction techniques that it is powerful to determine Fe2+ and Fe3+in solid materials including a host of geological materials. Mössbauer spectroscopy can reveal minor amounts of magnetically ordered phases (as low as 1-2%), which are not detectable by other methods like x-ray diffraction [Wertheim, 1964].

Mössbauer Effect: In 1957, the German physicist, Rudolf Ludwig Mössbauer discovered that in certain cases appreciable fractions of the gamma-ray spectrum emitted by some excited nuclei may be undisturbed by nuclear recoil or lattice vibrations and the consequent Doppler effects.

The unique feature of Mössbauer effect is its ability to resolve minute nuclear energy differences [Varma, 2005].

Methodology: The important units of the spectrometer are grouped as follows:

1. Mössbauer source and absorber
2. γ-ray detection and amplification system
3. Doppler velocity drive system
4. Data acquisition system

Essential to all Mössbauer experiments is a radioactive isotope, which acts as a source of radiation in the Mössbauer experiment. A 25mCi ^{57}Co(Rh) obtained from M/s Amersham Inc., U.K., was used in the present study.

Mössbauer absorbers were prepared from finely ground powders of the samples. The mesh size was about 300. Powders of the samples were thoroughly mixed with high purity boron nitride, packed in copper rings of one square cm area and covered with thin aluminium foils. The detection unit consists of Krypton-CO2 filled proportional counter and charge sensitive preamplifier.In the present study, the PC-KR-1 detector and the CSP 400B preamplifier from Austin Science Associates, Inc. were used.

Before and after each sample run on the Mössbauer data acquisition system, a calibration spectrum of Natural iron was recorded. The calibrations and peak positions were checked to ensure that there is no drift in velocity.

Curve Fitting : The samples studied in the present work typically gave rise to a small number of discrete sextets. They were analyzed using the least squares curve-fitting program for strongly overlapping Lorentzians [Meerwal, 1975]. The fitting procedure used in this FORTRAN IV program was selected to yield a maximum region of convergence in the presence of strongly overlapping lines.

Result: Mössbauer spectra of all the samples from the Deogarh, Kuathaland Maandalregion were characterized as Anthophyllite and Actinolite by X-ray diffraction. The room temperature Mössbauer spectra of both reveal the presence of magnetic hyperfine fields and overlapping quadrupole doublets.

Computer analysis of the spectra showed that the magnetic hyperfine field corresponds to 330 kOe, 432 kOe and 501 kOe.

The isomer shift values for all the samples lie in the range 1.08 to 1.18 mm/s. Out of the two doublets, the outer doublet has a larger quadrupole splitting but lesser intensity than that of the inner doublets.

Some of the anthophyllite samples also contained metallic iron as impurity. These impurities, normally mistaken as natural magnetic impurities, could be detected only through Mossbauer studies. The Mossbauer parameters of anthophyllite and actinolite showed a small variation,

*Department of Physics, Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

indicating the presence of varying amount of impurities. The amount of iron going to these sites varies from region to region for both anthophyllite and actinolite, indicating the effect of environmental and weathering effects during mineral formation.

Conclusion: Hyperfine field studies of select asbestos samples show isomer shift and quadrupole splitting which helps assign cationic position of bi- and tri-valent iron in these minerals.

References:-

1. Bancroft, G.M., 1967. Physical Review, 26A, 17.
2. Wertheim, G.K., 1964. Mossbauer Effect: Principles and Applications, Academic Press, New York.
3. Varma, J., Bhandari, R.C., Somayajulu, D.R.S., 2005. Fundamentals of Nuclear Physics. CBS Publishers and Dist., New Delhi.

****

सौराष्ट्र विलय में सरदार बल्लभ भाई पटेल का योगदान

डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान*

प्रस्तावना – सौराष्ट्र का इतिहास प्राचीन है। सौराष्ट्र की भूमि ने भारत को धार्मिक पुरूष दिये हैं और वीर योद्धा भी दिये हैं। भगवान श्री कृष्ण की द्वारका सौराष्ट्र में ही थी। भक्त सुदामा और नरसिंह मेहता सौराष्ट्र में ही जन्मे थे। वंदनीय पुरूष स्वामी दयानन्द सरस्वती सौराष्ट्र के ही सपूत थे। वीरांगना सती रणुकदेवी सौराष्ट्र की ही पुत्री थी और युग पुरूष महात्मा गाँधी का जन्म स्थल भी सौराष्ट्र में ही है। हिन्दू धर्म के चार मुख्य धर्मों में एक द्वारका सौराष्ट्र में समुद्र तट पर स्थित है तथा बारह ज्योर्तिलिंगो में से एक सोमनाथ में हैं। अशोक के अभिलेख गिरनार व जूनागढ़ में मिले है। इस प्रकार ऐतिहासिक, धार्मिक व राजनीतिक दृष्टि से यह क्षेत्र महत्वपूर्ण माना जाता है।

सौराष्ट्र में जूनागढ़, नवानगर, भावनगर, ध्रांगध्रा, पोरबंदर, मोरवी, गोंडल, जाफराबाद, बीकानेर, पालीताना, ध्रोल, लीम्बड़ी, राजकोट और बदवाण जैसे चौदह सलामी का अधिकार रखने वाले बडे राज्य थे। सत्रह अ – सलामी राज्य थे और 191 अन्य दूसरे छोटे राज्य या तालुके थे। इन राज्यों के कुल क्षेत्रफल 22000 वर्गमील क्षेत्रफल में लगभग 40 लाख की आबादी थी। इस क्षेत्रफल और आबादी में अलग–अलग हुकूमत वाले लगभग 860 घटक थे। एक राज्य के प्रदेश में अन्य 20 राज्यों के प्रदेश मिले होते थे। इसलिये कानून और व्यवस्था की रक्षा करना भी कठिन हो जाता था। ऐसी परिस्थिति में भारत की स्वतंत्रता के बाद तथा अंगरेज सरकार के पोलिटिकल विभाग का अन्त हो जाने के बाद रिक्त स्थान को यदि भरा न जाता, तो राजकाज और शासन व्यवस्था में कठिनाई पैदा हो जाती। इसलिए भारत सरकार के रियासती मंत्रालय ने यह जिम्मेदारी सौराष्ट्र के कमिश्नर के रूप में श्री एम.एम.बूच नामक एक आई.सी.एस. अधिकारी को सौंपी।

सौराष्ट्र की प्रजा राजनीतिक दृष्टि से जाग्रत थी। काठियावाड़ की राजनीतिक परिषद को वर्षों तक महात्मा गाँधी और सरदार वल्लभ भाई पटेल का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ था। पहले छोटे राजा प्रजा द्वारा राज्य के खिलाफ चलाये जाने वाले आन्दोलनों को दबाने के लिये ब्रिटिश सरकार की मदद लेते थे, लेकिन बाद में छोटे–छोटे राज्यों की प्रजा की राजनीतिक लड़ाई में देश की समस्त जनता का तथा कांग्रेस का समर्थन और बल उसे प्राप्त हो गया। इससे वहां का वातावरण उग्र हो गया था और कुछ राज्य तो अपने प्रदेश में कानून और व्यवस्था की रक्षा करने में बिल्कुल असमर्थ हो गये थे। जैसे मूली नामक एक छोटा सा राज्य था। उसकी प्रजा ने जबरन राज्य के दफ्तरों, अदालतों, सरकारी इमारतों तथा जेलों पर अधिकार कर लिया था। इसी तरह ध्रागध्रा के किसानों ने ऐसा ही आन्दोलन खड़ा किया और राजा के महल की ओर प्रयाण करने की तैयार की। सरदार पटेल ने इस हिंसक और गैर जिम्मेदारी से किये जाने वाले आन्दोलन की कड़े शब्दों में निन्दा की और ध्रांगध्रा की प्रजा को सलाह दी कि उससे जिम्मेदार प्रजाकीय संस्था के द्वारा भारत से न्याय मांगना चाहिये।

इस प्रकार सौराष्ट्र के प्रत्येक राज्य में उत्तरदायी शासन तंत्र रचने की मांग प्रजा द्वारा की जाने लगी। भावनगर पहला राज्य था जिसने उत्तरदायी शासन तंत्र की मांग को महसूस किया। भावनगर के महाराजा इस विषय में मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु गांधीजी के पास गये। गांधी जी ने उन्हें सरदार पटेल के पास भेजा। सरदार पटेल ने महाराजा को सलाह दी कि आपको प्रजा की मांग स्वीकार करना चाहिये। यह निर्णय किया गया कि श्री बलवंतराय मेहता को मुख्यमंत्री बनाकर प्रजा के प्रतिनिधियों का मंत्रिमण्डल बनाया जाए। इसके अलावा गांधी जी राजा के लिये व्यक्तिगत खर्च की जितनी रकम तय कर दें उतनी रकम स्वीकार करने के लिये भावनगर के राजा तैयार हो गये।भावनगर के इस शुभारम्भ का सौराष्ट्र के सभी कार्यों पर गहरा प्रभाव पड़ा, परन्तु सरदार पटेल मात्र इससे संतुष्ट नहीं थे कि छोटे बडे राज्यों में उत्तरदायी प्रजातंत्र की स्थापना हो जाये वरन् वे चाहते थे कि समस्त सौराष्ट्र के राज्यों को मिलाकर एक संघ बना दिया जाये। रियासत मंत्रालय ने इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु एक योजना प्रस्तुत की थी जो इस प्रकार थी सौराष्ट्र के चार राज्य समूह रचे जायें– भावनगर, नवानगर, जूनागढ़ और ध्रांगध्रा। इन चार समूहों में सौराष्ट्र के सारे छोटे–छोटे राज्यों को मिला दिया जाये। परन्तु इसमें एक समस्या थी कि छोटे राज्य ऐसा मानते थे कि उनके साथ अन्याय हुआ है तथा बडे राज्यों को इससे लाभ होगा। इसके अलावा ये चार घटक प्रशासन को चलाने में भी सफल नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में सरदार पटेल को एकमात्र संभव मार्ग यही दिखाई दिया कि जूनागढ़ के साथ सौराष्ट्र का एक घटक रचा जाये, इस संबंध में सरदार पटेल ने सौराष्ट्र के नेताओं से स्वयं तथा श्री वी.पी. मेनन को भेजकर विचार विमर्श करके एक योजना बनाई। जिसके अनुसार सौराष्ट्र के छोटे – बडे सब राज्यों को मिलाकर संयुक्त सौराष्ट्र का एक घटक रचा जाये। दो लाख की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि के चुनाव के आधार पर संविधान सभा की स्थापना की जाये। संविधान सभा जो नियम और कानून बनाये उसके अनुसार चुने गये प्रजा के प्रतिनिधियों की विधानसभा सम्पूर्ण उत्तरदायी राजतंत्र के

* लेक्चरर (राजनीति विज्ञान) एस.एम.बी. राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

सिद्धांत पर संयुक्त सौराष्ट्र का शासन चलाये। विधानसभा के बनाये हुए कानून कायदों के अनुसार राज्य का मुल्की विभाग और न्याय विभाग कार्य करें, भविष्य में यदि भाषावार राज्यों की रचना का निर्णय हों तो सौराष्ट्र का यह घटक उस राज्य में मिला दिया जाये। इस घटक के बने हुए राज्यों में एक मुख्य जिम्मेदार व्यक्ति (गर्वनर) के बदले तीन मुख्य व्यक्तियों की एक समिति रहेगी जिनमें नवनगर के राजा, भावनगर के राजा तथा तृतीय सदस्य होगा सलामी के अधिकार वाले अन्य बडे राज्यों द्धारा चुना गया प्रतिनिधि।

उपर्युक्त योजना भारत सरकार ने सौराष्ट्र के राजाओं के सामने रखी। 15 जनवरी 1948 को भावनगर में उत्तरदायी शासन का उद्धाटन सरदार पटेल द्धारा हुआ। इस अवसर पर सौराष्ट्र के सभी राजा इस योजना पर विचार-विमर्श करने के लिये एकत्र हुए। इस योजना में इस बिन्दु पर विचार किया गया कि सौराष्ट्र की उन्नति और प्रगति किस प्रकार हो। भावनगर व ध्रांगध्रा के महाराजा तो सौराष्ट्र संघ हेतु सहमत थे, नवानगर के महाराजा ने भी भारत सरकार की इस योजना पर स्वीकृति दे दी। भावनगर के जाम साहब ने यह समझ लिया था कि संयुक्त काठियावाड़ का विकल्प रियासतों का विघटन होगा, जो या तो बम्बई में मिला दी जायेंगी या किसी दूसरे प्रकार से समाप्त कर दी जायेंगी। इस प्रकार आपसी विचार विमर्श के बाद, काठियावाड़ के शासक एक संघ बनाने के लिये सहमत हो गये। सलामी रियासतों के शासकों ने अपनी एक परिषद् बनाई और जाम साहब को रियासत का प्रथम अध्यक्ष या राजप्रमुख चुना। अन्य शर्तें एक प्रतिज्ञापत्र में लिखा ली गई, जिस पर सब शासकों ने हस्ताक्षर कर दिये। यह प्रतिज्ञापत्र एक आदर्श समझा जाने लगा और बाद में अन्य रियासत संघ ने भी उसका अनुसरण किया। प्रतिज्ञापत्र पर सलामी रियासतों और सलामी रियासतों के शासकों ने हस्ताक्षर किये परन्तु अर्ध अधिकार क्षेत्रीय एवं गैर-अधिकार क्षेत्रीय रियासतों और तालुके के शासकों से एक समझौता पत्र पर हस्ताक्षर करने को कहा गया, जिसके द्धारा वे अपनी जागरों और तालुकों को संयुक्त काठियावाड़ रियासत में विलय करने के लिये सहमत हो गये। इसके पश्चात् राजाओं के प्रिवीपर्स की रकम तय की गई थी। जो इस प्रकार थी- पिछले तीन वर्ष की आय की जो औसत वार्षिक रकम थी उसमें से प्रथम पाँच लाख की रकम का 15 प्रतिशत, फिर दूसरे पाँच लाख अर्थात् दस लाख तक की रकम का 10 प्रतिशत और दस लाख से अधिक की रकम का 7.5 प्रतिशत देना तय हुआ, लेकिन किसी भी राजा को दस लाख से ज्यादा प्रिवीपर्स की रकम नहीं मिल सकती थी। इसके अलावा राजाओं की निजी सम्पत्ति, जमीन जायदाद, महल वगैरह के तथा अन्य अधिकार उसी तरह स्वीकार किये गये जिस तरह उड़ीसा और छत्तीसगढ़ के मामले में स्वीकार किये गये थे। यह बात भी स्वीकार कर ली गई कि उन्हें मिलने वाली प्रिवीपर्स की रकम सभी प्रकार के कर से मुक्त होनी चाहिये। ये सभी बातें ब्यौरेबार निश्चित हो जाने के बाद और सौराष्ट्र के सभी राजाओं ने 23 जनवरी 1948 को सौराष्ट्र के संयुक्त राज्य के करार पर हस्ताक्षर कर दिये। इस अवसर पर श्री वी.पी. मेनन ने कहा कि - 'एक महीने पहले तक भी कोई शासक यह नहीं सोचता था कि उसे इतनी जल्दी अपनी रियासत और शासन से विदाई लेनी पडेगी। जो चीज इनके वंश में पीढी दर पीढ़ी चली आई थी और जिसे वे पवित्र समझते थे वह मानो निमेषमात्र में ही लोप गई थी, यद्यपि सभी अपने को साहसी, प्रसन्न दर्शाते थे फिर भी मानसिक वेदना की मोटी रेखाएं उनके चेहरों पर उभरी हुई थीं। न तो कटक में और न कानपुर में ही ऐसा दृश्य देखा था जैसा राजकोट में दिखा। यहाँ का दृश्य अन्तिम अंश तक हृदय द्रावक था और मेरे स्मृति पटल पर हमेशा अंकित रहेगा।'

सौराष्ट्र संघ की योजना से गाँधीजी बहुत प्रसन्न हुए, परन्तु वे यथार्थवादी थे, इसलिये श्री मेनन की सारी बातें सुनकर उन्होंने कहा था कि यह तो बड़ी जिम्मेदारी हमारे सिर पर आ गई है। सौराष्ट्र के संयुक्त राज्य की शासन व्यवस्था कुशलता से चलाने वाले कुशल शासक हमें कहाँ से मिलेंगे फिर वे बोले कि 'अच्छा अब सरदार को ही यह काम सौंपना होगा। वे ही व्यवस्था कर सकते हैं।'

संयुक्त काठियावाड़ संघ का शुभारम्भ सरदार वल्लभभाई पटेल ने जामनगर में 15 फरवरी 1948 को किया। जामसाहब को राजप्रमुख के पद की शपथ दिलाई गई। मुख्यमंत्री उछारंगराय देबर तथा मंत्रिमंडल के अन्य मंत्रियों ने भी शपथ ग्रहण की उस अवसर पर जवाहरलाल नेहरू ने जाम साहब का अभिनन्दन करते हुए कहा कि - 'सौराष्ट्र के भावी उत्कर्ष और प्रगति की दिशा में यह इस युग का सर्वोत्तम कार्य कहा जायेगा।' जाम साहब ने उस अवसर का अपने हृदय की भावना व्यक्त करते हुए कहा - 'कोई ऐसा न माने कि सौराष्ट्र के सब राजा राज्य करते थक गये थे इसलिये अथवा किसी धमकी से दबकर उन्होंने संयुक्त सौराष्ट्र की योजना स्वीकार की है। हमने इस उद्देश्य से यह योजना सहर्ष स्वीकार की है कि इससे समस्त सौराष्ट्र की प्रगति होगी, भारत देश की अखंडता स्थापित होगी और सौराष्ट्र की प्रजा की उत्तरदायी राज्य तंत्र की अभिलाषा पूरी होगी।'

नये संघ की राजधानी हेतु जामनगर व राजकोट में विवाद हो रहा था। इस समस्या को सुलझाने हेतु एक समिति नियुक्ति की गई। सभी बिन्दुओं को मद्देनजर रखते हुए यह निर्णय किया गया कि राजधानी राजकोट में ही रहेगी।

नवम्बर 1948 में एक पूरक प्रतिज्ञा पत्र तैयार किया गया। इस संयुक्त कठियावाड़ संघ का नाम परिवर्तित कर 'संयुक्त सौराष्ट्र राज्य' कर दिया गया। जनवरी 1949 में दूसरा पूरक प्रतिज्ञा पत्र तैयार किया गया, जिसमें जूनागढ़, माणाबदर, मांगरोल, बांतवा, बावरियावाड़ और सरदारगढ़ के सौराष्ट्र के साथ एकीकरण और उनका एक एकक में संगठन पूरा हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पटेल राजवी, हिन्द के सरदार, पृष्ठ-270
2. मेनन वी.पी. दि स्टोरी आफ दि इंटीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृष्ठ-179-80
3. वही, पृष्ठ-181
4. गुजरात समाचार, दिनांक 16-01-48
5. हॉडा राजेन्द्र लाल, देशी रियासतों में स्वाधीनता संग्राम का इतिहास, पृष्ठ-262
6. व्हाईट पेपर ऑन इण्डियन स्टेट्स, पृष्ठ-50-51
7. मेनन वी.पी. दि स्टोरी आफ दि इंटीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृष्ठ-195
8. वही, पृष्ठ-195
9. संदेश, दिनांक 16-02-48

परिवर्तनों का युग – सल्तनत युग

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

प्रस्तावना – परिवर्तन समाज का शाश्वत नियम है। समाज में परिवर्तन प्रागैतिहासिक, ऐतिहासिक अथवा आधुनिक सभी प्रकार के समाजों की विशेषता रही है, भले ही उसकी गति कहीं तीव्र तो कहीं मंद हो सकती है। समूह के आकार में वृद्धि, शासन एवं अर्थव्यवस्था में परिवर्तन सामाजिक संरचना का रूपान्तरण, धार्मिक विश्वासों का नवीन महत्व, विज्ञान दर्शन का विकास, युद्ध एवं आपदा इत्यादि ऐसे तत्व हैं, जो परिवर्तन के कारक बनते हैं। एक समाज का राजनैतिक ढांचा बहुधा परिवर्तित होता रहता है। परिवर्तन एक व्यापक प्रतिक्रिया है। प्राय: राजनैतिक ढांचे का बदला हुआ स्वरूप ही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक एवं भौतिक परिवर्तनों का आधार बनता है। सभी समाजों में मूलभूत संरचना हर वक्त परिवर्तन के दौर से गुजरती रहती है। भारतीय इतिहास में ऐसे ही अनेकानेक परिवर्तन सल्तनत काल में विशेषत: दिखाई देते हैं।

सन् 1192 ई. के तराइन के युद्ध में राजपूतों पर मोहम्मद गौरी की विजय को भारतीय इतिहास का परिवर्तन कारक वर्ष माना जाता है। इसके बाद ही भारत में तुर्क शासन एवं दिल्ली सल्तनत की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ। सन् 1206 में मोहम्मद गौरी की मृत्यु के उपरांत कुतुबुद्दीन ऐबक ने गौरी द्वारा विजित प्रदेश पर दिल्ली सल्तनत की नींव रख दी जो सन् 1526 ई. तक रही। यहीं से भारत के इतिहास में अर्थात सन् 1206 ई. से लेकर 1739 तक का काल मध्यकाल माना जाता है, जो मुस्लिम शासन का युग था। जिसमें सल्तनत एवं मुगल काल दोनों ही सम्मिलित हैं। सल्तनत काल में भारत के इतिहास में यह प्रथम अवसर था जबकि यहां स्थायी रूप से विदेशी शासन एवं मुस्लिम शासन स्थापित हुआ था। यह शासन पूर्णत: इस्लामी कानून शरिअत पर आधारित होने के कारण पिछली राजव्यवस्था से नितान्त भिन्न था। इसके कारण देश की राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक इत्यादि सभी व्यवस्थाओं में परिवर्तन आये। यही कारण है कि सल्तनत युग को यदि परिवर्तन का युग कहा जाये तो उपयुक्त होगा।

राज्य के स्वरूप एवं शासकों की नीति में परिवर्तन– युग में जातिवाद पर आधारित राजनैतिक संगठन का स्थान ऐसी राजनीतिक व्यवस्था ने ले लिया जो जिसमें सामाजिक समानता को महत्व दिया गया था एवं वंश के महत्व को कम करके समस्त सामाजिक बंधनों को झकझोर कर रख दिया था। जबकि इससे पूर्व शासन पर लगभग एक ही वर्ग राजपूत वर्ग का ही आधिपत्य था एवं उसमें भी एक ही राजपूत वंश के व्यक्तियों का ही राजसत्ता पर हक माना जाता था। इसके विपरीत सल्तनत युग में तो प्रारंभ में गुलाम वंश में तो शासकों में ऐसे शासकों की प्रधानता रही जो अपने जीवन काल में कभी न कभी, किसी के गुलाम रह चुके थे तथा न ही वे उच्च वंशीय थे। राजनैतिक क्षेत्र में यह परिवर्तन पहली बार दिखाई देता है। बिखरे–बिखरे राजपूत शासन की तुलना में सल्तनत शासक केन्द्रीयकरण में विश्वास रखते थे एवं उन्होंने संपूर्ण साम्राज्य में सुदृढ़ शासन की स्थापना की। इस दिशा में बाधक बने विद्रोहियों का दमन करने स्वयं बलबन दोआब गया। सल्तनत युग में नवीन परिवर्तन लाने वाले शासक के रूप में बलबन का स्थान सर्वोपरि है, जिसने सुल्तान के पद की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये विशेष प्रयास किये। उसने राजपद के गौरव को बढ़ाया एवं लौह एवं रक्त नीति का अनुसरण कर राज्य में शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित की जो लम्बे समय से भारतीय राजनीति में उपलब्ध नहीं थी। यही परिवर्तन विकास का कारण बना, सल्तनत काल में प्रशासन में नवीन प्रयोगों का भी प्रारंभ हुआ। अलाउद्दीन खिलजी की बाजार व्यवस्था बड़ा आर्थिक परिवर्तन था। मुहम्मद –बिन–तुगलक के दोआब में कर वृद्धि की योजना ने आय बढ़ने के साथ कर बढ़ने के सिद्धांत को स्थापित किया। उसने अपनी दूसरी योजना राजधानी परिवर्तन योजना में सभी नागरिकों का दिल्ली से दौलताबाद जाना अनिवार्य कर दिया। जिसमें अनेकों नागरिकों की देवागिरि में मौत भी हो गयी। किंतु वास्तविकता यह है कि यह एक नवीन परिवर्तनकारी प्रयोग था जो सुल्तान की योग्यता को दर्शाता है। इसी प्रकार एक नया परिवर्तन लाने का प्रयास 'सांकेतिक मुद्रा प्रचलन' योजना थी जिसे मुहम्मद–बिन–तुगलक ने चीनी व ईरानी शासकों की प्रेरणा से चलाया था। जिसमें सांकेतिक मुद्रा चलाकर बहुमूल्य धातुओं का क्षरण रोकने का प्रयत्न दिया गया किंतु स्वार्थवश प्रजा ने घरों में नकली सिक्के ढालने शुरू कर दिए। इसी प्रकार खुरासान विजय का प्रयास भी सल्तनत युग में सुल्तान मोहम्मद तुगलक द्वारा आक्रमक नीति के चयन के रूप में परिवर्तन का संकेत देता है। इसी प्रकार कराजल अभियान की भी योजना बनायी गई जो इसी की एक कड़ी मानी जाती है। सुल्तान मोहम्मद तुगलक प्रयोगधर्मी, बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्धान था किन्तु उसका इतना विरोध होने पर भी वह शासक बना रहा। इस परिवर्तन से दृष्टिगोचर होता है कि सुल्तान का पद वंशानुगत हो गया था।

आर्थिक परिवर्तन का युग – सल्तनत युग में भारत के इतिहास में यह प्रथम अवसर था। जबकि इस्लाम पर आधारित धार्मिक शासन स्थापित हुआ था। मुस्लिम सत्ता की स्थापना केवल राजसत्ता का परिवर्तन मात्र नहीं था। इससे सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों का नया दौर प्रारंभ हुआ। इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू यह था कि यह अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में भी महती परिवर्तन आये। सल्तनत कालीन प्रशासन ने राजपूती सामंती समाज की तुलना में उत्तम आर्थिक व्यवस्था का निर्माण किया। नवीन शासक दस्तकारी के माध्यम से विभिन्न उत्पादनों में रूचि रखते थे। उन्हें दस्तकारों

* व्याख्याता (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

की जाति से कोई लेना देना नहीं था। प्रो. मोहम्मद हबीब के मत में यह परिवर्तन इतना आधारभूत था कि इसे शहरी क्रान्ति तथा ग्रामीण क्रान्ति का नाम दिया है।

इस युग में शहरी अर्थव्यव्स्था के स्वरूप में अनेक नवीन परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। विशेष रूप से देखा जाए तो तकनीकी क्षेत्र में विकास के परिणामस्वरूप उत्पादन में सुधार हुआ एवं वृद्धि हुई। शहरों का आकार एवं संख्या भी बढ़ी। जिसके परिणाम स्वरूप व्यापार एवं वाणिज्य का भी विकास हुआ।

तकनीकी क्षेत्र में परिवर्तन – इस युग में पूर्वी इस्लामी देशों से आए कारीगरों के साथ नवीन तकनीक के प्रवेश ने इस युग के भारत के तकनीकी क्षेत्र में अनेक नवीन परिवर्तन दिखाई देने लगे। अनेक दस्तकार, व्यापारी, कला प्रेमी विविध कारणों से जब भारत आए तो उन्होंने अपनी तकनीक को यहां व्यवहारिक रूप प्रदान कर उत्पादन प्रारंभ किया। ये शिल्प, तकनीक एवं व्यवसाय में अत्यन्त पटु थे। यह काल दास प्रथा का भी युग था। इन दासों को भी विविध प्रशिक्षण दिए जाते थे। जिसमें उन्हें तकनीकी प्रशिक्षण भी दिया गया तथा तकनीक का विकास होता चला गया। इन दास श्रमिकों का भी इस दिशा में उल्लेखनीय योगदान रहा। इस युग में दस्तकारों के एक नवीन वर्ग का उदय हुआ। इससे पूर्व शिल्पी जातिगत आधार पर उत्पादन कार्य में लगे होते थे, जैसे चर्मकार चमड़े का, लुहार लौहे की सामग्री का उत्पादन करते थे किंतु सल्तनत युग के अधिकांश दस्तकार मुस्लिम थे जो जाति प्रथा के कठोर बंधन से मुक्त थे तथा स्वदेशी एवं भारतीय दोनों तकनीक से परिचित थे। यह प्रथम अवसर था, जबकि भारतीय दस्तकारी एवं तकनीकी उत्पादन के क्षेत्र में व्यावसायिक प्रतिद्धन्दिता का प्रारंभ हुआ। वस्त्र, धातु, कागज, जहाज निर्माण, चमड़ा आदि उद्योगों में नवीन तकनीकी विकास हुआ धातुओं से रसायन बनाने का कार्य भी इसी युग की देन है। पत्थर, सोने और चांदी पर मीनाकारी का काम, जामदानी कलाबत्तु, जरदोजी, किमखाब आदि तकनीक भी सल्तनत काल की ही देन है।

बाजार एवं व्यापारिक क्षेत्र के अधिकारी – सल्तनत काल का एक नवीन परिवर्तन राज्य में बाजारों का उचित प्रबंध लागू करने हेतु तथा व्यापारियों की सहायता एवं संरक्षण देने हेतु राज्य की ओर से पृथक से कर्मचारियों के पद सृजत किए गए एवं उन पर योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति की गयी। जितने भी शाही कारखाने थे। वे एक प्रथम श्रेणी के मालिक के निरीक्षण में कार्य करते थे। इन मालिकों को मुतसर्रिफ कहते थे, जो अपना हिसाब दीवान-ए-वजारत में प्रस्तुत करते थे। मुतसर्रिफ के अतिरिक्त अन्य कर्मचारी शहना एवं गुमाश्ता थे जो बाजार का प्रबंध देखते थे। बाजार का सबसे बड़ा अधिकारी 'दीवान-ए-रियासत कहलाता था जिसकी नियुक्ति स्वयं सुल्तान करता था। उसके नीचे भी विभिन्न कर्मचारी कार्य करते थे- शाहनाज (निरीक्षक), बरीद (लेखक), मुहमिन। शाहनाज बाजार के कार्यो पर नियंत्रण एवं देखरेख करता था। बरीद बाजार में घूम-घूम कर वहां की समस्त सूचनाएं शाहनाज को भेजता था। मुहमिन वेश बदलकर बाजार में घूमता था तथा अनियमित कार्यों की सूचना प्रशासन तक पहुंचाता था। बाजारों की व्यवस्था का यह परिवर्तन शुभ संकेत था।

नवीन आर्थिक प्रयोगों का युग – इस युग में सुल्तानों ने प्रयोगधर्मिता की नीति अपनाई। सर्वप्रथम अलाउद्दीन खिलजी ने बाजार व्यवस्था के रूप में मूल्य नियंत्रण का सिद्धांत लागू किया, जिसके अंतर्गत वस्तुओं के मूल्य, पूर्ति, विक्रय स्थान इत्यादि सुल्तान द्वारा निर्धारित कर दिये गये तथा बाजार पर पूर्णत: नियंत्रण स्थापित किया गया यह एक अभिनव प्रयोग था। इसी प्रकार सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक ने जहां राजधानी परिवर्तन योजना लागू की वहीं आर्थिक क्षेत्र में सांकेतिक मुद्रा प्रचलन योजना लागू की जिसके अंतर्गत सुल्तान की साख पर सस्ती धातुओं की मुद्राएं चलायी गयी। यद्यपि यह योजना विफल हुई तथापि यह अभिनव प्रयोग बहुत दूरगामी कदम था। आज इतनी शताब्दियों के बाद भारत में सांकेतिक मुद्रा ही प्रचलित है और न केवल भारत में वरन् लगभग सभी देशों में भी मुद्रा सांकेतिक ही प्रचलन में है। सल्तनत युग में लाया गया यह परिवर्तन दर्शनीय है।

राज्य द्वारा संचालित उद्योग या शाही कारखाने – इस युग में औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादन कार्य कई प्रकार के कारखाने कर रहे थे। राज्य द्वारा संचालित उद्योग या शाही कारखाने निजी स्वामित्व वाले उद्योग इत्यादि। राजपरिवार एवं उससे जुड़ी हुई वस्तुओं का उत्पादन राज्य द्वारा संचालित उद्योगों द्वारा किया जाता था। इसमें श्रेष्ठ कारीगर अपनी कला को प्रदर्शित करते थे तथा इनका उत्पादन उच्चस्तरीय होता था। बेकारी की समस्या को कम करने में भी इनका महत्वपूर्ण स्थान था। इनके उपकरण भी श्रेष्ठ होते थे। ये कारखाने दिल्ली तथा प्रान्तों के बड़े नगरों में स्थापित थे। शाही आवश्यकताओं को पूर्ण करने का दायित्व इनका ही होता था। अकेले फीरोज तुगलक ने ही 36 कारखानों की स्थापना की थी। इनमें दासों को भी काम दिया जाता था। शम्से शिराज अफीफ लिखता है कि '12000 दास शिल्पकार बन गए।' ये शाही कारखाने इस युग की अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा थे।

सिक्कों के प्रचलन में वृद्धि – यद्यपि प्राचीन काल में व्यापारिक लेनदेन में सिक्कों का प्रचलन हो गया था फिर भी वस्तुविनियम प्रणाली भी विद्यमान थी। सल्तनत युग में सिक्कों के प्रचलन में अभूतपूर्व उन्नति हुई जिससे व्यापार वाणिज्य एवं अर्थव्यवस्था का चहुंमुखी विकास संभव हो सका। इत्तुतमिश के काल से इस युग में सिक्के ढाले गए जिसने 175 ग्रेन वजन का पूर्णत: अरबी ढंग का चांदी का सिक्का ग्रेन चलाया जिसे टंका कहते थे। इसके अतिरिक्त जीतल, बहलोली सिक्का, ताँबे का टंका इत्यादि अन्य महत्वपूर्ण सिक्के थे, जो व्यापारिक लेन देन के आधार थे। यह युग सिक्कों में सुधार के लिये भी जाना जाता है। मुहम्मद तुगलक ने सांकेतिक सिक्के चलाने का असफल किंतु महत्वूपर्ण प्रयास किया। फीरोज तुगलक ने जनता की सुविधा को ध्यान में रखते हुये आधा जीतल और चौथाई जीतल बराबर एक टंका तथा 256 चौथाई जीतल बराबर एक टंका भी चलाया। व्यापारियों द्वारा मार्ग की जोखिम को टालने हेतु बीमा करवाना भी इस काल की विशेषता रही।

स्थायी सेना की नींव – अलाउद्दीन खिलजी (1296 – 1316 ई) प्रथम सुल्तान था,जिसने भारत में स्थायी सेना की नींव रखी। उसकी सेना में पैदल सेना के अतिरिक्त 4,75,000 अश्वारोही थे। मिश्रित राष्ट्रीयता वाली सेना भी इस युग की विशेषता थी। सल्तनत की सेना में तुर्की, ईरानी, मंगोल, अफगान, हब्शी, भारतीय मुसलमान, हिन्दु आदि विविध भांति के धर्म एवं राष्ट्रीयता के सैनिक सम्मिलित होते थे।

शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन – प्राचीन भारत में शिक्षा पद्धति वैदिक परम्परा पर आधारित थी। गुरूकुल, पाठशालाएं प्राचीन भारत में शिक्षा प्रदान करने का केन्द्र थी। किन्तु सल्तनत काल इस्लामी शासन का युग था। धर्म परिवर्तन की नीति के कारण अब भारत में मुसलमानों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही थी। यह कारण है कि भारत के शैक्षिक जगत में

इस्लामी शिक्षा भी सम्मिलित हो गयी, जिसके केन्द्र के रूप में मकतब एवं मदरसे स्थापित होने लगे थे, जहां मौलवी शिक्षा देने का कार्य करते थे। हिन्दू पाठशालाओं के साथ पण्डित या पुजारी भी मंदिरों में हिन्दुओं को शिक्षित कर रहे थे।

संगीत के क्षेत्र में परिवर्तन – तुर्कों के साथ संगीत की इस्लामी पद्धति एवं शैली का भारत में आगमन हुआ। भारतीय संगीत पहले ही यहां समृद्ध स्थिति में था। सल्तनत युग में इस क्षेत्र में समन्वय एवं मिलन के अभिनव प्रयोग किए गए। भारतीय एवं ईरानी संगीत शैली के समन्वय से एक नवीन समन्वित संगीत शैली का जन्म हुआ। भारतीय वीणा एवं ईरानी तंबूरे के सम्मिश्रण से सितार का जन्म हुआ। इसी प्रकार प्राचीन भारतीय वाद्य मृदंग ने परिवर्तित होकर तबले का रूप धारण कर लिया। नये राग–रागिनियों का भी इस युग में विकास हुआ। खयाल, कव्वाली का विकास इसी युग की देन है। संगीत की शैलियों में सम्मिश्रण एवं विकास की एक नवीन परम्परा इस युग में प्रारंभ हुई, जो मुगलकाल में विकास के चरम शिखर तक पहुंची।

भक्ति एवं सूफी आन्दोलन – सल्तनत युग में नवीन शासन के साथ इस्लाम का भी बडे पैमाने पर प्रसार होने के कारण यहां के धार्मिक क्षेत्र में हलचल पैदा हुई। इस क्षेत्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य भक्ति आन्दोलन का आरंभ होना हौ कहा भी गया है –

'भक्ति द्राविड़ ऊपजी, लय आय रामानंद'

निराशा एवं रूढ़ियों से भरे भारतीय समाज को झकझोरने का काम भक्ति आन्दोलन ने किया तथा उन्होंने सामाजिक एकता का सन्देश दिया। इसी प्रकार मुस्लिम समाज की बुराइयों के निवारण का कार्य सूफी आन्दोलन ने किया। इसने शासक एवं शासित वर्ग के मध्य कड़ी के रूप में कार्य किया तथा समन्वयवादी दृष्टिकोण से हिन्दू–मुस्लिम एकता का वातावरण तैयार किया। इनके चिश्तिया सम्प्रदाय ने तो समाज में नवीन परम्पराएं भी विकसित की जो हिन्दू एवं बौद्ध प्रथाओं से मिलती जुलती थीं। इसी प्रकार शेख निजामुद्दीन औलिया से शिक्षा लेने हजारों लोग दूर–दूर से आते थे। इन दोनों आन्दोलनों ने सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में नवीन शक्ति एवं गतिशीलता का संचार किया। इस युग के सन्त कवि जायसी, कुतुबन, मुल्ला दाउद, अमीर खुसरो, कबीर, गुरूनानक, दादू, संत बाबा फरीद, हजरत निजामुद्दीन औलिया आदि समन्वयवादी संस्कृति के जीवन्त प्रतीक बन गये।

स्थापत्य कला के क्षेत्र में हिन्दू–मुस्लिम शैली का विकास – तुर्क आक्रमणकारियों के साथ मुस्लिम स्थापत्य शैली में निपुण अनेक शिल्पकार, वास्तुकार, चित्रकार, संगीतकार इत्यादि भी साथ आये। उनके आगमन से पूर्व भारत में हिन्दू शैली स्थापित थी। नवीन वास्तुकारों ने जब भारतीय कारीगरों एवं सामग्री के माध्यम से यहां निर्माण कार्य करवाए, उनमें इस्लामी के साथ हिन्दू शैली का प्रभाव भी स्पष्टत: दिखाई देता है। इसे ही आगे चलकर हिन्दू–मुस्लिम शैली का नाम दिया गया। मुस्लिम शैली पर ईरानी इत्यादि अनेक शैलियों का प्रभाव पड़ा था, हिन्दू वास्तुकला की विशेषताएं थी स्तंभ, शिखर, अलंकरण, ईंट व पत्थर की जुड़ाई में मिट्टी के गारे का प्रयोग इत्यादि। इस प्रकार दोनों ही शैलियों में मूलभूत अन्तर होते हुए भी दोनों के तत्वों के समन्वय के फलस्वरूप हिन्दू–मुस्लिम कला शैली का विकास हुआ। सल्तनत के अतिरिक्त क्षेत्रीय राज्यों में भी वास्तुकला का विकास हुआ। इनकी शैली दिल्ली की हिन्दू–मुस्लिम शैली से थोड़ी भिन्न थी तथा उसमें स्वयं की मौलिक विशेषताऐं भी थी। इस प्रकार स्थापत्य या वास्तुकला के क्षेत्र में अनेक नवीन परिवर्तन आए। यही स्थिति चित्रकला के क्षेत्र में भी थी किन्तु तत्कालीन साक्ष्य नष्ट हो जाने से आज वह प्रत्यक्ष रूप में उपलब्ध नहीं है तथापि अमीर खुसरो की नूरे सिपेहर, देवल देवी रिवज़ खां, मुल्ला दाऊद के हिन्दी काव्य 'चांदायन' में चित्रों का व्यापक वर्णन मिलता है।

संगीत कला के क्षेत्र में परिवर्तन – तुर्क जब भारत आये तब अपने साथ ईरान व मध्य एशिया में पल्लवित उनकी संगीत परम्परा भी लाये। उनके पास अनेक वाद्य थे जैसे रवाब, सारंगी, इत्यादि। संगीत को धर्म नियमों के विरूद्ध मानने के कारण सुल्तानों ने इसे प्रश्रय नहीं दिया फिर भी अलाउद्दीन खिलजी, मुहम्मद –बिन–तुगलक, कैकुबाद, जलालुद्दीन खिलजी आदि स्वंय संगीत प्रेमी होनेके कारण इसके विकास के सहयोगी बने। अलाउद्दीन खिलजी के समय में अमीर खुसरो श्रेष्ठ संगीतकार था जिसने सितार, तबले, ख्याल, कब्बाली आदि का निर्माण कर संगीत जगत को उपकृत किया। फीरोज तुगलक के समय संगीत ग्रंथ राग दर्पण का फारसी भाषा में अनुवाद किया गया। जौनपुर तोड़ी, भैरवी, सिंदूरा, रसूली तोड़ी आदि का आविष्कार किया गया। ग्वालियर के राजा मानसिंह तथा काश्मीर दरबार भी इस क्षेत्र में विशेष योगदान दे रहे थे। राजा मानसिंह को भी राग ध्रूपद का जन्मदाता माना जाता है।

भाषा एवं साहित्यिक क्षेत्र में परिवर्तन – दिल्ली के सुल्तानों की मातृभाषा तुर्की थी, धर्म की भाषा अरबी तथा प्रशासन की भाषा फारसी थी। तुर्कों ने अरबी, फारसी के शब्दों के प्रयोग से अनेक क्षेत्रीय भाषाओं को समृद्ध बनाया तथा इस सम्मिश्रण से 'उर्दू' भाषा का जन्म हुआ जो लिपि से अरबी फारसी जैसी तथा उच्चारण में हिन्दी जैसी थी। यह एक नया परिवर्तन था। इसे उत्तर भारत में हिन्दवी तथा दक्षिण भारत में दक्कनी कहा जाता था। इस युग में क्षेत्रीय भाषाएं एवं उनका साहित्य भी बहुत उन्नति करता है। जिसमें पंजाबी, बंगाली, गुजराती, अवधी, ब्रज, भाषा का विशेष योगदान रहा। इस समय अनुवाद की परम्परा ने भी साहित्य जगत को समृद्ध बनाया।

इस प्रकार सल्तनत युग परिवर्तन ही परिवर्तनों का युग है। इसने समाज के सभी वर्गों, परंपराओं, रहन–सहन के स्तर आदि में अनेक परिवर्तन किये। इसी कारण सल्तनत युग को परिवर्तनों का युग कहा जाता है जो पूर्णत: उचित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मदन जी.आर. –परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र – पृष्ठ क्र.01
2. श्रीवास्तव आशीर्वादी लाल – भारत का इतिहास – पृष्ठ क्रमांक 264
3. डायनेस्टिक हिस्ट्री – वॉल्यूम II – पृष्ठ क्रमांक 720
4. प्रसाद ईश्वरी – हिस्ट्री ऑफ मिडीवल इण्डिया – पृष्ठ क्रमांक 197
5. बदायूंनी – मुन्तख बुत्तवारीख – भाग एक – पृष्ठ क्रमांक 237
6. बरनी जियाउदीन – तारीख–ए–फीरोजशाही – पृष्ठ क्रमांक 434
7. श्रीवास्तव ए.एल. – दि सल्तनत ऑफ देहली – पृष्ठ क्रमांक 283
8. रिजवी, ए.ए. – तुगलक कालीन भारत भाग एक
9. तुगलक फिरोज शाह – तारीख–ए–फीरोजशाही – रामपुर पोथी – पृष्ठ क्रमांक 301
10. अबुल फजल– तबकात–एक–अकबरी, भाग एक – पृष्ठ क्रमांक 204
11. इसामी –फुतुह–उस–सलातीन– अनुवाद –ए.ए. निजामी – पृष्ठ क्र. 445
12. शर्मा एस.आर. – दि क्रीसेन्ट ऑफ इण्डिया – पृष्ठ क्रमांक 102
13. निजामी ,के.ए. –रिलीजियस एण्ड पॉलिटिक्स – पृष्ठ क्रमांक178
14. बरनी जियाउद्दीन – तारीख–ए–फिरोजशाही – पृष्ठ क्रमांक 344

The Doctors' Ways Are Best, When We Are In Our Worst

Dr. Chakrapani Upadhyay*

Introduction - Doctors – It is in their ability to shape destinies, spark laughter, and heal wounds that their work finds meaning. Every prescription, chosen thoughtfully, is able to enlighten or brighten someone's life. Nevertheless, some lives may be past the stage of enlightening or brightening, as per the scope and limits of modern medicine. The frontiers of STEM continue to expand continually in all dimensions, yet remain finite at all times. One possible, though contentious, answer to it, is to empower the doctor and his patient, to decide the final verdict. Every being has a right to live. Some also believe that they have a right to decide when to end it, especially if pursuing it leads to loss of comfort, dignity, and ease.

Definition: Euthanasia ends a life deemed not worth living. The doctor is called upon to assist the patient in doing so. Euthanasia is derived from the Greek word *euthanatos,* meaning good death (*eu* stands for well or good, *thanatos for* death); it refers to the practice of ending life in a painless manner. It is defined as a deliberate intervention undertaken with the express intention of ending a life, to relieve intractable suffering pain and misery. The term is understood to mean that a person with a terminal illness should be allowed to commit suicide or assisted suicide or to decline life-prolonging treatment, where a disease would otherwise prolong their suffering to an identical result**.**

IS THIS RIGHT RIGHT?

There is a worldwide debate on an individual's right to die. This right assumes ethical or institutional entitlement of an individual to die. It implies that a person with a terminal illness be allowed to end life to put a stop to sufferings and declining quality of life. This raises a number of ethical and legal issues and creates a plethora of moral and professional dilemmas. Is this right right? Is it right that people live for extended periods with chronic, painful or debilitating and incurable conditions? The argument is whether human beings have the right to decide when and how to die.

The Doctors' Dilemma: Concurrent to the debate over euthanasia, is the debate over the doctors' dilemma. The doctors' ways are taken for granted as the best in support of the health and well-being of the patient. But what if the health is compromised beyond redemption. When and who is qualified to declare a person's condition incurable? Is euthanasia a continuation of palliative care by doctors? How far should doctors respect their patient's autonomy, particularly a wish to die? Should treatment modalities be governed by the patient's wishes? Advances in expertise and equipment have enabled the medical profession to exercise more control over the processes of life and death. It is imperative to infer how far to stretch their implementation. When suffering from intolerable and unstoppable pain or distress, patients are vulnerable and unduly fearful about potential worsening and deteriorating life. Denial of euthanasia seems cruel and inhumane. It seems like denial of the human right to die. But do doctors have a right to practice withdrawal of treatment, directly or indirectly? And do they even have a right to think of actively assisting mortality? Given the oaths and pledges that doctors take and adhere to, these questions pose professional, ethical and moral dilemmas that each individual doctor faces with each individual such patient.

Classification: Euthanasia is classified as **active** or **passive** and as **voluntary** or **involuntary. Passive euthanasia** entails withdrawing medical treatment with the deliberate intention of causing death. **Active euthanasia** is the process of taking specific steps that lead to the death of the patient; it may involve injecting a poison, usually a lethal overdose of analgesics or sedatives.

The difference between active and passive forms lies in whether something is *done* to end life or something is *not done* that would have preserved life. In **Voluntary** form when the patient requests in person that requisite action be taken to end his life or that life-saving treatment be stopped, with full knowledge that this will lead to death. **Involuntary** euthanasia is when a patient's life is ended without the patient's knowledge and consent. In **Physician-Assisted Suicide (PAS)**, a doctor provides the means to end life but does not administer it [Manning 1998]. The line of division is so fine that it is often breached, made ambiguous or assumed tantamount to abetted coercion with vested interests in court-room or coffee-table debates.

***Lecturer (Sociology) Government College, Pratapgarh (Raj.) INDIA**

A Sentence To Provoke Thought: Most patients with terminal illness may or may not consider euthanasia or Physician Assisted Suicide seriously; few pursue options actively. Time and family issues, scourge of treatable concurrent factors like underlying depression, affordability, limitations of resources, real fear or disenchantment with the situation may affect decision-making. Many more patients may be concerned about involuntary euthanasia than currently discuss it with their physicians. The doctor must also consider medico-legal issues. Who would accept their judgment or their right for such judgment? It is best to remember that every good intent should also be seen as one. Euthanasia must not become a legal sword in the hands of devils.

Reference:-

1. Manning, Michael, M.D., (1998), "Euthanasia and Physician-Assisted Suicide: Killing or Caring?" Paulist Press, New Jersey, ISBN: 0-8091-3804-2.

****

अमूर्त कला के विविध आयाम

डॉ. चेतना टिक्कीवाल*

शोध सारांश – अमूर्त कला आधुनिक कला की एक ऐसी अभिव्यक्ति है, जिसमें कलाकार बाहरी यथार्थ या वस्तुओं के प्रत्यक्ष रूप को चित्रित करने के बजाय भावनाओं, विचारों और कल्पनाओं को प्रतीकात्मक या रूपात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। यह कला केवल दृश्य नहीं होती, बल्कि संवेदनाओं, अनुभवों और आंतरिक चेतना का रूप होती है। अमूर्त कला की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह दर्शक को किसी निश्चित वस्तु या दृश्य की पहचान में नहीं बाँधती, बल्कि उसे अपनी कल्पनाशक्ति के माध्यम से अर्थ खोजने की स्वतंत्रता देती है। अमूर्त कला का उद्भव 20वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में हुआ जब कलाकारों ने परंपरागत यथार्थवादी चित्रण से हटकर नई कलाभाषा की खोज की। वासिली कंडिस्की, पीट मोंड्रियन, पाब्लो पिकासो, और जैक्सन पोलक जैसे कलाकारों ने अमूर्त कला को नई दिशा दी। भारत में भी अमूर्त कला का विकास स्वतंत्रता आंदोलन और आधुनिक चेतना के साथ हुआ। भारतीय कलाकारों में वी. एस. गायतोंडे, एस. एच. रजा, तैयब मेहता, रामकुमार, और जगदीश स्वामीनाथन ने अमूर्त कला के विविध रूपों को अपनी कृतियों में साकार किया। अमूर्त कला के विविध आयामों में रूप, रंग, रेखा, बनावट, गति, लय और संतुलन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह कला बाह्य दृश्यता से अधिक आंतरिक अनुभव पर केंद्रित होती है। जहाँ यथार्थवादी कला में आकृति या रूप की स्पष्टता होती है, वहीं अमूर्त कला में रूप विखंडित या लुप्त हो जाता है, और उसके स्थान पर भावनात्मक ऊर्जा और कल्पनाशीलता का संचार होता है। यह कला न केवल सौंदर्य की दृष्टि से, बल्कि दार्शनिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कृ क्योंकि यह मनुष्य के भीतर के सत्य, संवेदना और आध्यात्मिकता की खोज का माध्यम बनती है। अमूर्त कला का एक प्रमुख आयाम 'रंग' है। रंग यहाँ केवल सजावट नहीं बल्कि भावनाओं का प्रतीक बन जाता है। रेखाएँ और आकृतियाँ स्वतंत्र होती हैं, जो मनोभावों की तरंगों का संकेत देती हैं। इस कला में रचना की प्रक्रिया स्वयं एक खोज होती है कलाकार अपने अनुभवों को आकार देने के लिए किसी निश्चित ढाँचे का अनुसरण नहीं करता, बल्कि आत्मानुभूति के प्रवाह में सृजन करता है।

शब्द कुंजी –अमूर्त कला, आधुनिक कला, रंग, रेखा, रूप, सृजन, कल्पना, भावना, आध्यात्मिकता, संवेदना, अभिव्यक्ति, रूपात्मकता, सौंदर्य, अनुभव, प्रतीक, चेतना, समकालीनता, संतुलन, दार्शनिक दृष्टि, भारतीय कलाकार।

प्रस्तावना – अमूर्त कला आधुनिक युग की सबसे प्रभावशाली कलात्मक अभिव्यक्तियों में से एक है। यह कला उस पारंपरिक दृष्टिकोण से भिन्न है जिसमें कलाकार प्रकृति, व्यक्ति या वस्तु को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है। अमूर्त कला में कलाकार वास्तविकता की नकल नहीं करता, बल्कि अपनी आंतरिक संवेदनाओं, भावनाओं, अनुभवों और कल्पनाओं को रंगों, रेखाओं, रूपों और बनावटों के माध्यम से व्यक्त करता है। यह कला किसी निश्चित वस्तु या दृश्य को दर्शाने के बजाय मनुष्य के भीतर के भावजगत को प्रकट करती है। अमूर्त कला केवल दृश्य अनुभव नहीं, बल्कि संवेदनात्मक और आध्यात्मिक अनुभव का माध्यम है।

1. अमूर्त कला की उत्पत्ति और विकास – अमूर्त कला का उद्भव 20वीं सदी के प्रारंभिक दशकों में यूरोप में हुआ। यह उस समय की औद्योगिक क्रांति, आधुनिक विज्ञान और सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों का परिणाम थी। कलाकारों ने पाया कि परंपरागत यथार्थवादी कला अब उनकी जटिल भावनाओं और विचारों को व्यक्त करने में सक्षम नहीं रही। इसी असंतोष से अमूर्त कला की जन्मभूमि तैयार हुई।

वासिली कंडिस्की को अमूर्त कला का जनक माना जाता है। उन्होंने रंगों और रेखाओं को केवल सजावट नहीं, बल्कि भावनाओं की भाषा माना। उनके अनुसार,'कला को दृश्य यथार्थ से मुक्त होना चाहिए और आत्मा की गहराइयों को प्रकट करना चाहिए।' उनके बाद पीट मोंड्रियन, पाब्लो पिकासो, मार्क रोथको, जैक्सन पोलक और पॉल क्ली जैसे कलाकारों ने अमूर्तता के विविध रूपों का विस्तार किया।

अमूर्त कला के दो प्रमुख प्रकार माने जाते हैं ज्यामितीय अमूर्तता और भावनात्मक अमूर्तता पहले प्रकार में कलाकार आकृतियों, रेखाओं और संतुलन पर ध्यान केंद्रित करता है, जबकि दूसरे में भावनाओं की तीव्रता, गति और अनियंत्रित रंग-रेखाओं की भूमिका प्रमुख होती है।

2. भारतीय संदर्भ में अमूर्त कला – भारत में अमूर्त कला का विकास स्वतंत्रता आंदोलन और आधुनिक चेतना के साथ जुड़ा है। भारतीय कलाकारों ने पश्चिम से प्रभावित होकर अमूर्तता को अपनाया, लेकिन उसमें भारतीय आध्यात्मिकता और प्रतीकवाद का समावेश किया। भारतीय अमूर्त कला के अग्रणी कलाकारों में वी. एस. गायतोंडे, एस. एच. रजा, तैयब मेहता, रामकुमार, जगदीश स्वामीनाथन, और अकबर पदमसी के नाम प्रमुख हैं। एस. एच. रजा की 'बिंदु' श्रृंखला भारतीय दर्शन और ब्रह्मांडीय ऊर्जा की प्रतीक है। बिंदु उनके लिए सृजन का मूल केंद्र था, जो न केवल दृश्य रूप से प्रभावशाली बल्कि आध्यात्मिक अर्थों में गहन था। वी. एस. गायतोंडे की कलाकृतियाँ मौन, ध्यान और आत्मिक अनुभव का प्रतीक हैं। उनके चित्रों में कोई निश्चित आकृति नहीं होती, बल्कि प्रकाश और रंग

*व्याख्याता (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

की लहरों से आत्मानुभूति का संसार रचा जाता है। रामकुमार ने अमूर्तता के माध्यम से शहरों की भीड़भाड़ और अकेलेपन की अनुभूति को रूप दिया।

3. अमूर्त कला के प्रमुख आयाम – अमूर्त कला अनेक आयामों से परिपूर्ण है — सौंदर्य, दार्शनिकता, संवेदना, और आध्यात्मिकता इसके प्रमुख आधार हैं।

(क) रूप और रेखा – अमूर्त कला में रूप ठोस नहीं होता, बल्कि संकेतात्मक होता है। रेखाएँ यहाँ गति, दिशा और ऊर्जा का प्रतीक बन जाती हैं। कभी ये रेखाएँ शांति और संतुलन का भाव देती हैं, तो कभी असंतुलन और उथल-पुथल का।

(ख) रंग – रंग अमूर्त कला की आत्मा हैं। हर रंग का अपना मनोवैज्ञानिक अर्थ होता है कृ नीला गहराई और शांति का, लाल ऊर्जा और आवेग का, पीला प्रकाश और जीवन का प्रतीक है। कलाकार रंगों के माध्यम से भावनाओं को रूप देता है।

(ग) बनावट और संरचना – अमूर्त कला में बनावट का प्रयोग गहराई और लय उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। कभी-कभी मोटे ब्रश स्ट्रोक, कभी-कभी रंगों की परतें या धब्बे रचना में जीवंतता लाते हैं।

(घ) भावनात्मकता और आध्यात्मिकता – अमूर्त कला केवल दृश्य आकर्षण तक सीमित नहीं है। यह कलाकार के आंतरिक जगत की अभिव्यक्ति है। अनेक कलाकारों ने इसे ध्यान और साधना की प्रक्रिया के समान माना है। रजा और गायतोंडे जैसे कलाकारों के लिए यह आत्मानुभूति का साधन थी।

4. भारतीय परंपरा में अमूर्तता – यद्यपि अमूर्त कला आधुनिक आंदोलन के रूप में जानी जाती है, परंतु भारत में अमूर्तता की परंपरा बहुत पुरानी है। मंदिरों की भित्तिचित्रों, मंडलों, यंत्रों, प्रतीकों और लोककला में अमूर्त रूप सदैव विद्यमान रहे हैं। 'श्री यंत्र' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें ज्यामितीय आकृतियों के माध्यम से ब्रह्मांडीय ऊर्जा और आध्यात्मिक संरचना का चित्रण होता है।

भारतीय लोककला जैसे मधुबनी, वारली, गोंड और फड चित्रकला कृ में भी अमूर्तता के तत्व पाए जाते हैं। यहाँ आकृतियाँ प्रतीकात्मक होती हैं और जीवन, प्रकृति तथा अध्यात्म से गहराई से जुड़ी होती हैं।

5. अमूर्त कला और आधुनिक समाज – आज के तकनीकी और जटिल समाज में अमूर्त कला व्यक्ति की भीतरी आवाज और भावनात्मक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का माध्यम बन गई है। यह कला हमें यह सिखाती है कि वास्तविकता केवल आँखों से देखी जाने वाली चीजों में नहीं, बल्कि हमारे भीतर की अनुभूतियों में भी निहित है। अमूर्त कला दर्शक को अपने भीतर झाँकने और अपने अनुभवों के अर्थ खोजने के लिए प्रेरित करती है।

निष्कर्ष – अमूर्त कला आधुनिक कला का वह स्वरूप है जिसने दृश्य यथार्थ की सीमाओं को तोड़ते हुए अभिव्यक्ति के नए क्षितिज खोले हैं। यह केवल आकृतियों और रंगों का खेल नहीं, बल्कि मनुष्य की आंतरिक चेतना, भावनाओं और विचारों की अनुभूति का सशक्त माध्यम है। अमूर्त कला में कलाकार अपनी अनुभूतियों को किसी निश्चित रूप या वस्तु में नहीं बाँधता, बल्कि उन्हें स्वतंत्र रूप से रंगों, रेखाओं और संरचनाओं के माध्यम से व्यक्त करता है। इस दृष्टि से यह कला आत्म-अभिव्यक्ति की चरम सीमा का प्रतीक है। यदि हम अमूर्त कला के विविध आयामों का विश्लेषण करें, तो यह स्पष्ट होता है कि इसमें सौंदर्यबोध, आध्यात्मिकता, भावनात्मक गहराई और वैचारिक स्वतंत्रता चारों तत्वों का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। जहाँ पारंपरिक कला यथार्थ को पुन: प्रस्तुत करती है, वहीं अमूर्त कला यथार्थ के परे जाकर अनुभव के सत्य को व्यक्त करती है। इसमें कोई निश्चित आकृति नहीं होती, परंतु हर रंग और रेखा अपने आप में एक भावना, एक विचार और एक लय को दर्शाती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो अमूर्त कला केवल आधुनिक आंदोलन नहीं है, बल्कि यह भारत की प्राचीन सांस्कृतिक परंपराओं से भी गहराई से जुड़ी है। मंदिरों की ज्यामितीय नक्काशी, मंडल और यंत्र चित्रण, लोककला की प्रतीकात्मक रचनाएँ सबमें अमूर्तता के मूल तत्व निहित हैं। यही कारण है कि भारतीय कलाकारों ने पश्चिमी अमूर्तता को अपनाते हुए उसे अपनी सांस्कृतिक आत्मा और आध्यात्मिक दृष्टि से जोड़ा। एस. एच. रजा के चित्र भारतीय दर्शन के 'ब्रह्म' और 'सृष्टि के केंद्र' की अवधारणा को मूर्त करते हैं। वहीं गायतोंडे की कलाएँ मौन और ध्यान की उस प्रक्रिया को व्यक्त करती हैं जो अमूर्तता को आत्मानुभव में परिवर्तित करती है। इन कलाकारों ने यह सिद्ध किया कि अमूर्त कला केवल दृश्य आनंद नहीं, बल्कि आत्मिक अनुभूति का माध्यम है। अमूर्त कला का एक प्रमुख आयाम यह भी है कि यह कलाकार और दर्शक के बीच संवाद को नए रूप में परिभाषित करती है। यहाँ कलाकार कोई निश्चित अर्थ नहीं थोपताय बल्कि दर्शक को अपने अनुभवों और संवेदनाओं के आधार पर चित्र से संवाद करने की स्वतंत्रता देता है। इस तरह अमूर्त कला देखने वाले को सोचने, अनुभव करने और अपनी व्याख्या गढ़ने के लिए प्रेरित करती है। यही इसका सबसे गहन और लोकतांत्रिक पक्ष है। आज के तकनीकी और भौतिकतावादी युग में, जब मनुष्य बाहरी उपलब्धियों में उलझा हुआ है, अमूर्त कला हमें भीतर झाँकने, अपनी आत्मा से जुड़ने और अपने भावजगत को पहचानने का अवसर देती है। यह कला आधुनिक मनुष्य के लिए ध्यान का माध्यम बन जाती है कृ एक ऐसी प्रक्रिया जिसमें बाहरी शोर से दूर, व्यक्ति अपनी मौन गहराइयों से संवाद करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, रमेश. भारतीय आधुनिक कला का विकास. नई दिल्ली: राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, 2010
2. सिंह, अर्चना. अमूर्त कला: स्वरूप और संवेदना. वाराणसी: भारती प्रकाशन, 2015
3. गुप्ता, संजय. भारतीय चित्रकला का इतिहास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2008
4. रजा, एस. एच. बिंदु: कला और दर्शन. मुंबई: ललित कला अकादमी, 1999
5. गायतोंडे, वी. एस. अभिव्यक्ति के आयाम. नई दिल्ली: आधुनिक कला संग्रहालय, 2002
6. चतुर्वेदी, मीनाक्षी. आधुनिक भारतीय चित्रकला. प्रयागराज: गगन प्रकाशन, 2014
7. पॉल क्ली. द आर्ट ऑफ सीइंग. लंदन: टेट मॉडर्न, 1920
8. कंडिस्की, वासिली. कला में आत्मिकता. मॉस्को: आधुनिक कला प्रकाशन, 1912 (हिंदी अनुवाद, 2005)

****

Strategies for Prevention of lake degradation with special reference to lakes of Udaipur, Rajasthan

Dr. Vinita Rathore *

Introduction - The freshwater bodies are important owing to their socio-economic values, through domestic water supply, irrigation, fisheries, agriculture, wildlife, energy production, recreation and tourism. Based on their location, lakes could be classified into two categories- rural and urban lakes. Degradation is a natural process in all lakes. Rural lakes are primarily for agriculture and domestic use of scarce population. Degeneration of rural lakes is a slow process as compared to urban lakes which is dependent on the density of the habitation settled around them. Water quality declinations of lakes adversely affect the biological diversity and productivity of lakes.It is reported that several thousand species have become extinct and fish production has declined as a result of degradation [1]. A survey conducted by Wild Life Institute of India has revealed that 70-80% of fresh water marshes and lakes in the gangetic plains have been lost during the last five decades [1]

Causes of Degradation: A number of urban lakes have been degraded by human activities at a rapid rate. The principal water quality problems are pollution, urbanization, anthropogenic activities and agricultural practices which lead to eutrophication. Eutrophication is a natural process of maturing of a lake from oligotrophic to eutrophic by nutrient enrichment. Depending upon the rate of organic enrichment, maturation time may vary from hundreds to thousands of years [2].However, eutrophication is accelerated by human interference and is called as cultural eutrophication. Durve et. al [3] reported that the lakes where humaninterference is more receive a large amount of detergents which increases its phosphate content. During drought condition and dry season, agriculture is permitted in the marginal areas of these lakes. Fertilizers and pesticides are used in such plantations. These remains on the bottom and get dissolved in the lake water during monsoon. The key elements nitrogen and phosphorus enters the lake water. This results in the luxuriant growth of vegetation in the lakes which choke the water body and help the process of eutrophication leading to swamps and bogs. The pesticides may enter aquatic food chain and in the process eliminates certain animals and plants species affecting biodiversity. Unrestricted dumping of sewage and toxic chemicals from industries and oil from motor boats has killed many fishes and aquatic plants.

Sedimentation is another reason of degradation [4]. Poor agriculture practices, highway construction around the lakes, land development activities, construction of hotels near the lake basins, deforestation on the steep shoreline slopes contribute sediment inflows into the lakes and fills lake basin.

Sedimentation makes the lakes shallower, decreasing the volume of water available for recreation, promotes higher evaporation rates, increases watertemperature, lowers dissolved oxygen level, stimulate algal blooms, decrease light penetration, provides additional rooting sites for water weeds, promote fish kills and inhibit recreational boating, swimming and fishing

Prevention Strategies: Management of any water body depends on its use. The urban lakes are generally used for drinking water, recreation and other domestic purposes. The lake succession progressively makes the water of the lake unfit for drinking. Also degraded lakes are less valuable than normal lakes and represent loss of economic benefits. As such restoration of lakes or their stabilization through prevention from degradation is most important. Degradation can be controlled biologically or a-biologically.

Biological remedial measures:

1. Promotion of nutrient removing plants like duck weeds and Eichhornia and their periodical harvest.
2. Introduction of phytophagus, detrivorous, omnivorous fishes and also those which directly feed on organic debris, for example common carp, tilapia and grass carp.
3. Aeration of the lake by fixing several floating fountains which pump out bottom deoxygenated water and spray it over the lake surface to achieve its natural oxygenation and in the process develop oxic layer at the bottom. This promotes bacterial decomposition of organic compounds. As an alternative, submerged water

*Associate Professor (Zoology) SMB Government PG College, Nathdwara, Rajsamand (Raj.) INDIA

aerators could be used at several places in the lake to oxygenate hypolimnion and bottom layer.

4. Removal of algal blooms from water surface helps in removal of phosphate.

Abiological or ecotechnological methods are diverting sewage out falls, prevention of solid waste disposal in the vicinity of lakes, preventing bathing, defecation, washing of vehicles, clothes etc. in and on the banks of lakes.

Sediment yield from the watershed area should be reduced by installing silt traps at the entry of point sources, prevention of overgrazing by livestock and plantation for checking the entry of eroded soil from non pointsources. The motor boats should be replaced by paddle boats.

Phosphates can be removed by precipitation in inflowing water or in lakes. Acidic pH of lake can be altered to alkaline by addition of calcium hydroxide. Durve and Sharma[5] suggested use of plastic beads, sheets, dyes or soot to reduce penetration of the light in l which in turnreduces eutrophication.

Status of Udaipur lakes: The "City of Lakes" Udaipur located at latitude 24°35' and longitude 73°42' is surrounded by Aravali ranges. The lake system of Udaipur forms an integral part of easterly flowing river Berarch and its tributaries in southern Rajasthan. This lake system includes 8-9 lakes joined together by their periodic overflows or link canals.

The then rulers of Udaipur had constructed theses reservoirs for irrigation, recreation and to maintain the underground water level. These lakes were once very deep and transparent and had much bigger water spread than today.Now these lakes are severely threatened with rapid aging and possible early extinction due to anthropogenic activities of humans which come under cultural eutrophication. The shallowing of the lakes started as the denudation of the surrounding hilly ranges resulting in excessive soil erosion. Presently, all the lakes became shallow and some of them totally dry up in summers. Recreational activities of man also lead to degradation. The tourists and visitors throw the leftovers of meals into the lakes, on which aquatic weed feeds and multiply at a faster rate choking the lakes.

In Udaipur lakes, the incoming sewage sludge from the surrounding habitation and hotels enters into the lakes. Six thousand residential houses accommodating over 33000 populations, over 60 hotels and guest houses release all sorts of dirt and drain water into the lake complex. Also, municipal garbage, waste of construction works, 400-500 tonnes of solid wastes dumped on the banks of the lakes on 42 spots, 118 open air defecation spots, 73 bathing ghats and 45 drain spots contribute to the organic load especially of nitrate, nitrite and ammonia-nitrogen on the lake bottom [5].

All above had adversely affected the chemical status of water of the lake system. The comparative study of lakes of Udaipur in 1974-75, 2004-05 and latest 2007-09 shows significant increase in all the limnological parameters which attributes a lake to be eutrophic/mesotrophic. There is an increase in surface water temperature which may be attributed to shallowness of lakes. There is a decline in minimum as well as maximum values of depth of visibility measured by secchi disc. This is due to increase in turbidity caused by suspended particles and planktonic blooms [2].pH is an important factor affecting biological activities and trophic status of a water body. The pH of the water is gradually tending higher towards alkaline side. As per water clarity, Durve and Sharma [5] classified lake Pichhola and Fatehsagar as eutrophic and moderately eutrophic lakes respectively.

The floating flowering plant Eichhornia occasionally develops dense growth at times over the entire water surface of Lake Pichhola indicates higher nutrient loads, degrading water and sediment conditions [2]

The reversal of eutrophication should be the first step towards prevention. This could be done by several measures such as desilting, developing silt traps at and entry of point sources, diverting sewage out falls, plantation etc. Aeration should be done by several floating fountains in different portions of lakes and submerged water aerators to oxygenate the hypolimnion and bottom layers.

The lakes serve as aesthetic, scientific, educational, recreational and sporting values which should be conserved and protected from being early extinction.

References:-

1. Ramachandra, T. V. (2001). Restoration and management strategies of wetlands in developing countries. Pub. Electronic Green Journal, Issue15, ISSN:1076-7975
2. Sharma, M.S., Meena, S., Sharma, V., Malara, H.and Sharma, R. (2007) Eutrophication Process in an Urban Lake System of Udaipur. The Proceedings of DAE-BRNS National Symposium on Limnology. Feb. 19-21, Udaipur. Pp31-34.
3. Durve, V.S., Sharma, L.L. and Sharma, B.X. (2007) Wetlands-their Conservation for Aqua-culture, Public Health, Tourism and Biodiversity with Special Reference to Rajasthan. In Ecology & Fisheries of Wetlands in India. Ed.Prof.M.P.Singh Kohli. Pub. Indian Society of Fisheries Professionals, Mumbai India, Pp87-114.
4. Helfrich, L.A., Parkhurst, J. and Neves, R. (2005) Guide to understanding and Managing Lakes: Part-1.Virginia Cooperative Extension
5. Durve, V.S. Sharma, L.L. (2007) Reversal of eutrophication: an Eco-technological approach for the management of Udaipur lake system. The Proceedings of DAE-BRNS National Symposium on Limnology. Feb.19-21, Udaipur. Pp51-55.

****

प्रकृति की संवेदनाओं के चितेरे लालचन्द मारोठिया

डॉ. रेखा पंचोली*

प्रस्तावना – कला संवेदना का सम्प्रेषण है व कलाकार उसका भावपूर्ण संवाहक 'साधारणत: संवेदन या संवेदना शब्द का अर्थ होता है, अनुभव करना, सुख–दु:ख आदि की प्रतीति करना बोध ज्ञान अथवा अनुभूति। संवेदन शब्द के मूल में वेद शब्द है। वेद से वेदन और वेदन से संवेदन शब्द बना है। यदि संवेदन का उपर्युक्त अर्थ ही ग्रहण किया जाए तो 'संवेदनीय' का अर्थ होगा अनुभव करने योग्य अथवा बोध कराने योग्य। अंग्रेजी में संवेदन के करीब पड़ने वाले शब्द हैं– संसेशन, फीलिंग सेंसिहिविटी। अंग्रेजी पर्याय के अनुसार संवेदना शब्द के अन्तर्गत इन्द्रियानुभव भावानुभव, सहानुभूति, अनुभव प्राप्ति की प्रक्रिया आदि का समाहार हो जाता है।'[1] अर्थात् मानव जीवन के अनुभवों के आधार पर जो ज्ञान हमें प्रत्यक्ष अपनी इन्द्रियों के माध्यम से होता है। वह संवेदना की परिधि में आता है।

'साहित्य में इसे 'सिम्पैथी' और 'फैलोफीलिंग' (सहानुभूति और सह–अनुभूति) के अर्थ में ग्रहण करते हुए यू परिभाषित करने की चेष्टा की गई है 'मूलत: वेदना या संवेदना का अर्थ ज्ञान या ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव है। इसके अनुसार संवेदना उत्तेजना के सम्बन्ध में देह रचना की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया है जिसमें हमें वातावरण की ज्ञानोपलब्धि होती है। संवेदना हमारे मन की चेतना की वह कूटस्थ अवस्था है जिसमें हमें विश्व की वस्तुविशेष का बोध न होकर उसके गुणों का बोध होता है।'[2] अर्थात् संवेदना का अर्थ ज्ञान के मानसिक अनुभूति के प्रत्यक्षीकरण से लिया जाता है।

प्रत्येक संवेदनीय कलाकार अपनी युगीन अन्तचेतना से संवेदित होकर चित्र निर्माण की प्रक्रिया की ओर प्रेरित होता है और इस प्रकार कलाकार की संवेदनशीलता अपनी सार्थक अभिव्यक्ति के माध्यम से जीवन्त हो उठती है 'और युगीन बोध जब कलाकार चेतना से सम्पृक्त होकर अपने सम्प्रेषित स्वरूप में लोक चेतना से जुड़ जाता है, तभी श्रेष्ठ कलाकृति का निर्माण होता है। जिसकी सृजनता एवं सार्थकता का मूलभूत तत्व मानव संवेदना ही होती है।'[3] अर्थात् एक कलाकार प्रकृति की सर्जना में ही संवेदना के छंद रचना है। 'प्रकृति का सीधा सम्बन्ध कलाकार का अपना परिवेश तथा विषय वस्तु की संवेदनाओं से रहता है। इन संवेदनाओं में उसके पूर्व अनुभूत क्षण जहाँ शामिल होते हैं, वहीं वह अनुभूत अनुभवों के आधार पर अपनी संवेदना के अर्थ का संयोजन भी करता है। प्रकृति केवल ज्यों का त्यों चित्रण करना ही नहीं अपितु गहरी संवेदनशीलता का ही परिणाम है। जितनी गहन संवेदनशीलता होगी उस सृजन की प्रभावोत्पादकता भी बढ़ेगी। चित्रकार लालचन्द मारोठिया के भावुक मन ने अपने परिवेश संवेद्य विषय को अपने अन्तस की गहराईयों के धरातल पर उतारा है। उनके सृजन संसार में भी इनकी संवेदना ने एक अद्भुत हलचल उत्पन्न कर दी है। इनकी चित्राकृतियाँ नूतनता और प्रयोगशीलता के प्रवाह से बँधी है।'[4] प्रकृति के संस्कारों ने इनकी चित्राकृतियों में अद्भुत सौन्दर्य का विस्तार किया है। मारोठिया की चित्राकृतियाँ संवेदना, सादगी से परिपूर्ण व कलात्मक दक्षता का कौशल लिए हुए है। अत: लालचन्द मारोठिया ने प्रकृति के प्रांगण में ही सौंदर्य व संवेदना की श्री वृद्धि की है। यही बिम्बों की सार्थक अभिव्यक्ति मारोठिया जी के सम्पूर्ण दृश्य चित्रों में स्पष्ट परिलक्षित होती है।

प्रसिद्ध भारतीय विचारक 'रामानुज प्रकृति को ईश्वर का अंश तथा ईश्वर के द्वारा परिचारित मानते हैं। प्रकृति स्वयं सृष्टि नहीं करती, प्रत्युत ईश्वर की अध्यक्षता में ही वह सृष्टि का कार्य करती है। इस प्रकार रामानुज ने ही प्रकृति की सार्थकता को सम्पन्न किया तथा उसके प्रति एक सरस भावना का संचार किया।'[5] अर्थात् रामानुज ने प्रकृति के कण–कण में ईश्वरीय सत्ता के दर्शन किए हैं और उन्होंने सम्पूर्ण प्रकृति को ईश्वर का रूप माना है। जिसके द्वारा सम्पूर्ण प्रकृति चलायमान है। उसी प्रकार मारोठिया ने प्रकृति को ईश्वर का रूप मान उसकी आराधना की है व प्रकृति की संवेदनशीलता को अपने चित्रों का विषय बनाया।

चित्रकार 'लालचन्द मारोठिया का जीवन जीतना ही गुरूत्वपूर्ण और दर्शन जितना उदात्त है, उनका सृजन भी उतना ही भव्य है। कलाकार मारोठिया (जन्म 8 सितम्बर 1949) इसी कोटि के विरल चित्रकारों में से एक हैं। उनका स्नेह संवलित सात्विक जीवन तथा व्यापक अनुशीलन उनकी संवेदनशील रचनाओं में बहुधा प्रतिफलित हुआ है। उनके द्वारा विरचित रेखाचित्र, दृश्य चित्र, ऐतिहासिक, सामाजिक चित्र, धार्मिक चित्र, प्राकृतिक चित्रों में जो भावभीनापन है, का वैशद्य है तथा वस्तु सत्य को देखने की कांत दर्शिता है वह एक प्रकार से उनके व्यक्तित्व का ही प्रतिबिंब है।'[6] अर्थात् मारोठिया का संवेदनशील व्यक्तित्व उनकी कृतियों में निरूपित होता है।

लालचन्द मारोठिया के द्वारा रचित रेखाचित्र उनके संवेदनशील व्यक्तित्व की प्रतिछाया का आभास करवाते हैं। उन्होंने एक कुशल चितेरे की भाँति अपने रेखाचित्रों में सौन्दर्यात्मक भावों की शुद्धता का सृजन कर हर कृति को नवीन भूमि प्रदान की है। जो आपकी सौन्दर्य पूर्ण दृष्टि का द्योतक है। आपने अपनी अद्भुत सौन्दर्य परिकल्पना तथा हृदयगत संवेदनशील भावनाओं से पशु–पक्षियों और मानव व प्रकृति के जीवन चित्रों का सृजन कर ऐसा अद्भुत अलौकिक कला संसार प्रस्तुत किया है जो मानव व प्रकृति के मध्य एक परम्परागत अटूट संबंध का स्मरण कराता है।' जिसमें प्रकृति की अद्भुत सौन्दर्य अभिव्यक्ति है उनकी कृतियों में मछलियाँ, जीवाश्म, आदि मानव, नारी, पर्वत, शेर, भालू, मोर, कंगारू व

* * सह आचार्य (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

प्रकृति के समस्त उपादान मारोठिया की संवेदनशीलता का मूल परिचय रहे हैं।

प्रेम – सृष्टि के आरंभ से ही प्रेम मनुष्य की एक मूल वृत्ति मानी जाती रही है और यह वृत्ति पशु–पक्षी तथा सम्पूर्ण जगत में समान रूप से विद्यमान रहती है। मनुष्य एक संवेदनशील प्राणी है। लालचन्द मारोठिया ने जिस प्रेम की अभिव्यक्ति प्रस्तुत रेखांकन के माध्यम से की है। वह प्रकृति के उपादानों के माध्यम से सांकेतिक रूप से चित्र रूप में अभिव्यक्त हुई है। कलाकार ने मानवीय सम्बन्धों में स्त्री–पुरूष के संस्पर्शिता को परिभाषित किया है। स्त्री व पुरूष के प्रेम सम्बन्धों को रहस्यानुभूति के धरातल पर एक उदात्त वृत्ति के रूप में चित्रित किया है। रेखाचित्र में जीवन की गति की नई छवियाँ मिलती है। आपस में एक दूसरे से लिपटी तो कभी ताने–बाने से रूपाकारों को ग्रहण करती लताएँ मानव की भाँति आलिंगनबद्ध दिखाई दे रही है। रेखाचित्र में आकारों को छायाकृति की भाँति प्रस्तुत कर सफेद कागज पर ठोस काले क्षेत्रों की रचना अथवा बाह्य रेखा को अपनाते हुए आकारों को सजीव रेखाच्छादनों से टैक्सचर की विशिष्टता को उजागर करना मारोठिया के रेखांकन का अंग है। 'प्रेम मनुष्य की मूल–वृत्ति या इच्छा शक्ति है। वही मूल संकल्प है। उसके बिना सृष्टि का विकास सम्भव नहीं है। पाश्चात्य् मनोविज्ञान में प्रेम के लिए, जिसका अर्थ मूल 'कामुकता' है। फ्रायड ने प्रारंभ से इस शब्द का प्रयोग उसके मौलिक अर्थ में ही किया था, पर आगे चलकर मनोविश्लेषण शास्त्र में उसका प्रयोग इच्छा शक्ति अथवा सम्पूर्ण जीवन शक्ति के अर्थ में होने लगा।'[7] 'यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि फ्रायड ने 'काम' अथवा 'कामुकता' के अन्तर्गत उन सभी कार्यों तथा व्यवहारों को सम्मिलित किया है। जिन्हें सामान्य रूप से प्रेम, स्नेह, प्रीति आदि शब्दों से सम्बोधित किया जाता है। दूसरे शब्दों में फ्रायड के अनुसार व्यक्ति के वे सभी कार्य कामुक हैं जो किसी न किसी रूप में उसे सुख प्रदान करते हैं।'[8] 'फ्रायड के अनुसार 'लिबिडोय केवल प्रौढ़ कामुकता नहीं है, वह सभी प्रकार का प्रेम है, चाहे वह प्रेम माता–पिता, भाई–बहन, मित्र, संतान और आदर्श के लिए हो या स्वयं ईश्वर की भक्ति हो। 'लिबिडोय वस्तुत: एक तृष्णा है। जिसकी पूर्ति होते रहना मानसिक स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। आधुनिक पाश्चात्य मनोविज्ञान में भी प्रेम को मानव जीवन के लिए रचनात्मक और कल्याणकारी बतलाया गया है। आधुनिक पाश्चात्य एवं भारतीय कलाकारों की रचनाओं की तरह लालचन्द मारोठिया की कला पर भी फ्रायड के मनोविश्लेषण का प्रभाव प्रेरक के रूप में पड़ा है। यही कारण है कि मारोठिया की प्रस्तुत कृति में 'लिबिडोय और प्रेम संबंध के ऊपर विचार किया गया है।'[9] रेखाचित्र सं. 1

'मारोठिया ने चित्र सृजन के विविध–पक्षों को अपने चित्रों के माध्यम से संवेदना के धरातल पर उकेरा है। मारोठिया ने अपनी कोमल संवेदनाओं के पंख फैलाकर पशु–पक्षियों और प्रकृति के उन्मुक्त जीवन को अपने चित्रों में यथार्थ पूर्ण जीवन अभिव्यक्ति दी है। पक्षी चित्रण में कहीं पंख फड़फड़ाते और खुले आकाश के विस्तार में उड़ान भरते तो कहीं–कहीं पक्षियों के आपसी प्रेमालाप की मोहक संवेदनाएँ मुखरित होती दिखाई देती है। अपनी अद्भुत सौन्दर्य परिकल्पना तथा संवेदनशील भावनाओं से आज भी मारोठिया पशु–पक्षियों और प्रकृति की उन्मुक्त जीवन के चित्रों का सृजन करके ऐसा कला संसार प्रस्तुत करते हैं।'[10] जहाँ पक्षियों की संवेदनाएँ सौन्दर्यपूर्ण रूप में अभिव्यक्त हुई है।

दो पक्षी – प्रस्तुत कृति में कलाकार ने पक्षियों का सूक्ष्मतम निरीक्षण कर प्रकृति का तादृश्य वर्णन किया है पक्षियों की स्वछन्द उड़ान देख ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो दो काले बादलों के बीच बिजली चमक उठी हो बार–बार पंखों को हिलाकर विद्युत की त्वरित गति से ही दृश्यमान कर रहे हो। इन पंछियों की उड़ने की गति को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा है। मानो वे जल से सटकर उड़ रहे हो। तूलिका के सशक्त प्रयोग से इस भ्रम को भावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। सूरज की सुनहरी छाँव पृथ्वी के गर्भ से ओझल होती हुई प्रतीत होती है। इन पक्षियों की उड़ान अपने आद्र स्वर में नभ को आन्दोलित करती हुई प्रतीत हो रही है। जिससे आकाश का सुनापन मुखरित हो उठा है। पंख फड़फड़ाते और खुले आकाश के विस्तार में उड़ान भरते पक्षियों के आपसी प्रेमालाप का मोहक दृश्य देखने को मिल रहा है। गहरे हल्के स्लेटी रंग का प्रयोग कर पानी तथा आकाश में श्वेत रंग के बादलों का अंकन किया है, वही लम्बे आकृति के अनूठे वृक्षों को आकर्षक वृक्षावलियों के साथ चित्रित कर भू–दृश्य को अधिक आकर्षक बना दिया है। चित्र में पेड़ों के झुरमुट को हरियाली के साथ उसके चमकते पीताम्बरी धारण करती हुयी वृक्षावलियों की श्रृंखलाओं को भावपूर्ण ढंग से चित्रित किया गया है। चित्र सं.1

'मारोठिया ने प्रकृति के बहुविध रूपों को अपनी संवेदना से संपृक्त कर इस कला कौशल के साथ चित्रित किया है कि इनके दृश्य चित्रों में जहाँ प्रकृति की उत्फुल्लता है वही मानवीय संवेदनाएँ भी मुखरित हुई है। इन्होंने प्रकृति को अपनी रचनात्मक एवं सृजनात्मक दृष्टि से देखा तथा कलात्मक अन्वेषण के बाद उसे एक संवेदनात्मक रूप में चित्रित किया।'[11]

दृश्य चित्र – प्रस्तुत कृति में टहनियों और जड़ों की विभिन्न आकृतियों का बारीकी से चित्रण किया गया है। मनुष्य और जीव जन्तुओं के भीतर छिपी संवेदना का रागात्मक, अनुरागात्मक तथा भावात्मक लगाव प्रदर्शित हो रहा है। कलाकार ने मानवीय रूप में प्रकृति का चित्रण का आरोपण किया है। आपस में वही उलझी जड़े टहनियां कोमलता के साथ एक–दूसरे में भावात्मक रूप में नजर आ रही। कृति में सम्पूर्ण धरती, मनुष्य, पेड़–पौधों, जल–जीव जन्तुओं में एक गहरा मैत्री भाव या प्रेम भाव प्रदर्शित हो रहा है। पत्थरों को किसी सजावटी उपादान की भाँति अलग–अलग स्थितियों में संयोजित किया हैं। हरे, नीले, पीले, लाल रंगों का प्रभाव दृश्य को ओर अधिक आकर्षक व सौन्दर्य पूर्ण बना रहा है। वहीं दूसरी ओर प्रकृति को कलाकार ने संवेदना व कला के अनुभवों में पिरोया है। 'चित्र में कलाकार की कल्पना के बिम्ब विधान प्रौढ़ और प्रांजल है। मारोठिया ने अपनी प्रस्तुति कृति में बिंबो का सफल प्रयोग किया है। बिंब अंग्रेजी के 'इमेज' (Image) शब्द का हिन्दी रूपांतरण है। बिंब कल्पना और स्मृति की वह क्रिया है, जो शब्दों द्वारा रूप (चित्र) प्रस्तुत करके दर्शक के मन को प्रभावित करता है। बिंब–विधायक कल्पना पुनरूपादक कल्पना होती है। चित्रकार अतीत की घटनाओं, स्थितियों और अनुभूत पदार्थों को उनके रंग ध्वनि गति, आकार–प्रकार के साथ चित्रों के रूप में उपस्थित करता है। इस प्रकार बिंब एक ऐसी प्रक्रिया है जिनके द्वारा एक कलाकार अपने हृदयगत भावों का शेष सृष्टि के साथ संबंध स्थापित करता हुआ सुंदर एवं सजीव कल्पना चित्रों का निर्माण कर और उन चित्रों के माध्यम से कल्पना के सत्य का साक्षात्कार कराता है।'[12]

'मानव शास्त्रियों के अनुसार मानव इस दृश्यमान जगत में अपने इन्द्रिबोध के आधार पर जो भी अनुभव प्राप्त करता है वह अनुभवों की उसके मानस पर पहले कुछ रंगों और रेखाओं वाली एक अस्पष्ट–सी आकृति अंकित हो जाती है। वह आकृति निश्चित रूपेण किसी मूर्त्त पदार्थ अथवा अस्तित्व का आभास देती है। जब हमारे मन: चक्षुओं के समक्ष कोई जागतिक

वस्तु भी उसे अपने ध्यान पट पर अंकित किये रहना चाहते हैं तो उस तन्मयता की अवस्था में हमारे चेतन-अचेतन स्तरों पर वे पूर्ण अनुभूत मूर्त्त आकृतियाँ ही झिलमिलाने लगती है। इस प्रकार बिम्ब का सम्बन्ध मूलत: मानव मन के चेतन अचेतन स्तरों से स्पष्ट ही सिद्ध है।'[13] चित्र सं. 2

चित्रकार मारोठिया के चित्रों में जो प्राकृतिक बिम्ब आए है वे राजस्थान जिले के बेणेश्वर धाम के प्राकृतिक भू-दृश्य को देखकर उन सुरम्य दृश्यों को कैनवास पर अंकित करने से अपने को रोक नहीं पाये। मारोठिया के प्रकृति बिम्ब उनके दृश्यमान में अपने इन्द्रिय बोध के आधार पर जो भी अनुभव प्राप्त किया अपने मानस पर रंगों और रेखाओं की एक आकृति निर्मित कर दी। इस प्रकार मारोठिया के प्रकृति बिम्ब उनके मन के चेतन-अचेतन स्तरों से सम्बन्धित है।

अत: निष्कर्ष लालचन्द मारोठिया ने पेड़, तने, पत्थर, मछलियाँ, मशरूम, प्रकृति के लगभग सभी अवयवों व घटकों में मानवीय संवेदनाओं की ज्योति से प्रज्जवलित कर पर्यावरण संरक्षण का संदेश तो दिया ही है। साथ ही मारोठिया के चित्रों में प्रकृति की संवेदनात्मक अनुभूति का सुमधुर गान सुना जा सकता है। रंगों व रेखाओं की संवेदना सूर्य के आभा मण्डल के समान सर्वत्र सौन्दर्य का प्रसार कर रही है। प्रकृति के सौन्दर्य को चित्रात्मक रूप में दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। और उसे रंग और रेखाओं में आबद्धकर फलक पर अपने चित्रण का विषय बनाया है। इन बिम्बों का आभास एक संवेदनशील चित्रकार ही अनुभव कर सकता है। जिसे मारोठिया जी ने सहज रूप से आत्मसात कर सौन्दर्यपूर्ण भावाभिव्यक्ति दी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शर्मा, डॉ. हरिचरण, सर्वेश्वर का काव्य सृष्टि और दृष्टि, गौतम बुक कम्पनी, राजा पार्क, जयपुर, संस्करण-2011, पृ.सं.119
2. सिंहन, विमला, समकालीन ललित निबन्ध, श्याम प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर, प्रथम संस्करण-1998, पृ.सं. 114
3. भारद्धाज, डॉ. वीरेन्द्र, अग्निसागर : संवेदना और शिल्प, संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृ.सं. 41
4. गौतम, आर.बी., आंतरिक संवेग का प्रतिफलन, जय चक्रवर्ती की कला, कला दीर्घा दृश्य कला की अंतरदेशीय पत्रिका, संपादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन, उत्कर्ष प्रतिष्ठान, 1/95 गोमती नगर, लखनऊ, अप्रैल 2013, अंक 26, पृ.सं.29
5. माथुर, डॉ. वीणा, प्रसाद का सौन्दर्य दर्शन, बाफना प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर, संस्करण-1971, पृ.सं. 93
6. सिंह, डॉ. राधिका, महादेवी वर्मा के काव्य में लालित्य योजना, प्रकाशन नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-1979, पृ.सं. 1
7. वर्मा, महादेवी, सृजन और शिल्प रणजीत सिंह, जय भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-1997, पृ.सं. 158-159
8. जायसवाल, डॉ. सीताराम, मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ, प्रथम संस्करण-1963, पृ.सं. 433
9. वर्मा, महादेवी, सृजन और शिल्प रणजीत सिंह, जय भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-1997, पृ.सं. 159-160
10. मारोठिया, लालचन्द्र, प्रकृति के नये आयाम, टेक्नोक्रेट प्रिन्टर्स प्रा.लि., जयपुर, संस्करण-2011, पृ.सं.57
11. वही, पृ.सं. 12
12. बोरसे, श्रीमती पूनम, नागार्जुन के काव्य में जीवन दर्शन, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण-2012, पृ.सं. 222-223
13. शर्मा, सन्तोष, महादेवी वर्मा का बिम्ब बोध और प्रतीक सृजन आर्य बुक डिपो, करोल बाग दिल्ली, तृतीय संस्करण-1996, पृ.सं. 4

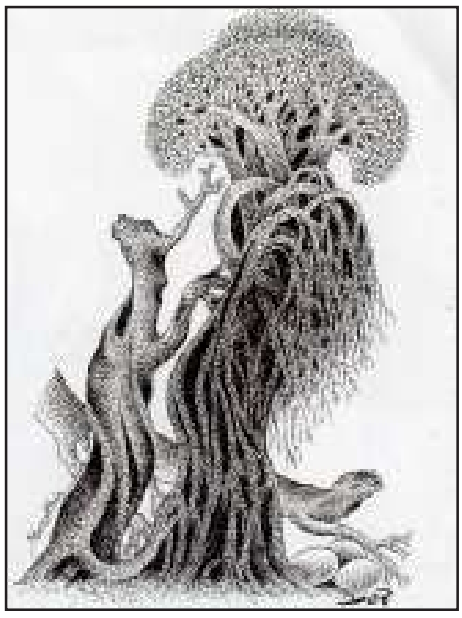

रेखाचित्र सं. 1

चित्र सं. 2

चित्र सं. 3

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) January to March 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

चतुरी चमार और वाजिब उल अर्ज का कर्ज: निराला के कथा-शिल्प और नव-जागरण का अनुशीलन

डॉ. रमेश यादव*

शोध सारांश – सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के एक ऐसे युगप्रवर्तक रचनाकार हैं, जिन्होंने कविता के साथ-साथ गद्य विधाओं को भी नई वैचारिक और शिल्पगत ऊंचाइयों पर पहुँचाया। प्रस्तुत शोध आलेख निराला की प्रसिद्ध कहानी 'चतुरी चमार' के माध्यम से उनके कथा-संसार में अंतर्निहित दलित चेतना, वर्गीय विषमता, सामाजिक नव-जागरण और शिल्पगत अनूठेपन का गंभीर अनुशीलन करता है। आलोचकों ने अक्सर निराला के यथार्थवाद को तत्कालीन किसान आंदोलनों से जोड़कर देखा है, परंतु यह आलेख इस पारंपरिक स्थापना से आगे बढ़कर 1920-30 के दशक में उत्तर भारत में सक्रिय 'आदि हिन्दू आंदोलन' और स्वामी अछूतानंद के वैचारिक प्रभावों के आलोक में चतुरी की चेतना का विश्लेषण करता है। साथ ही, यह शोध आलेख कहानी में प्रयुक्त 'आदिको' शब्द की सायास भाषाई संरचना, विधागत संकरता (संस्मरण, रेखाचित्र और रिपोर्ताज का अंतर्संबंध) तथा 'वाजिब उल अर्ज' जैसी सामंती-परंपरागत शोषण व्यवस्था के खिलाफ उठते लोकतांत्रिक और विधिक प्रतिरोध को रेखांकित करता है।

शब्द कुंजी – निराला, चतुरी चमार, वाजिब उल अर्ज, आदि हिन्दू आंदोलन, विधागत संकरता, दलित चेतना, भाषाई सौंदर्य।

प्रस्तावना और शोध की पृष्ठभूमि – महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के समूचे रचना संसार में बगावत की गंध और विद्रोह की चिंगारी कूट-कूटकर भरी हुई है। उनकी कविताएँ जहाँ पाठक को अपनी ओर चुंबक की तरह खींचती हैं, वहीं उनका गद्य साहित्य समाज के उन हाशिए के लोगों की आवाज बनता है, जिन्हें मुख्यधारा के भद्र समाज ने सदियों से बहिष्कृत कर रखा था। सन 1990 के दशक में जब हिन्दी में दलित साहित्य का उभार हुआ, तब कुछ पारंपरिक मठाधीशों ने निराला और प्रेमचंद के उदाहरणों को सामने रखकर इस नई साहित्यिक चेतना को खारिज करने का प्रयास किया। इसके विपरीत, प्रगतिशील और दलित विचारकों (जैसे कँवल भारती) ने निराला के साहित्य का पुनर्मूल्यांकन करते हुए उसमें छिपी वास्तविक क्रांतिकारी चेतना को उजागर किया।

निराला की कहानियों में 'चतुरी चमार' एक मील का पत्थर है। यह कहानी महज एक शोषित व्यक्ति का करुण आख्यान नहीं है, बल्कि यह अपने शिल्प रूप, विकास और विषय विस्तार में एक अत्यंत जटिल सामाजिक संरचना को उद्घाटित करती है। कहानी में एक तरफ चतुरी चमार है, जिसके लिए समाज में 'सुख' एक अनुपलब्ध दशा है, और दूसरी तरफ ब्राह्मण निराला (पात्र के रूप में) हैं, जो भले ही धनपति नहीं हैं, पर भद्र समाज से संबंध रखने के बावजूद अपने स्वाभाव और अहं के कारण निरंतर अभावों और सामाजिक अलगाव से जूझ रहे हैं। इन दोनों चरित्रों की सामाजिक स्थिति में गहरे अंतर के बावजूद उनकी तात्कालिक परिस्थितियाँ उन्हें एक समान धरातल पर लाकर खड़ा कर देती हैं। प्रस्तुत आलेख का मुख्य उद्देश्य इसी फासले और निकटता की पड़ताल करना है ताकि निराला और उनके समय के सामाजिक यथार्थ को अधिक विवेक सम्मत ढंग से समझा जा सके।

छायावादी करुणा और निराला का प्रगतिशील यथार्थ – छायावादी रचनाकारों में निराला और महादेवी वर्मा दोनों के यहाँ करुणा का भाव अत्यंत प्रबल रहा है। जहाँ महादेवी के यहाँ यह भाव अंतर्मुखी और आध्यात्मिक रहस्यों की ओर मुड़ जाता है, वहीं निराला में करुणा अंत: और बाह्य दोनों स्तरों पर सामाजिक यथार्थ से टकराती है। रीति काल या आरंभिक आधुनिक काल की कविताओं में उपेक्षितों की वेदना को प्राय: स्त्री की मातृ भूमिका या विरह के अश्रुओं (जैसे सूरदास की पंक्तियाँ) तक सीमित रखा गया। स्त्री की आँखों में छिपे उस पानी के पार देखने की जो सामर्थ्य निराला के पास थी, वह उनके समकालीनों में विरल है। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता इसका अनुपम उदाहरण है, जहाँ इलाहाबाद के पथ पर तपती धूप में पत्थर तोड़ती मजदूर स्त्री की आँखों में वह दृष्टि दिखाई देती है जो प्यार खा रोई नहीं'। उसका आत्म-सम्मान उसके आँसुओं को कश्मकश में अटकाए रखता है और वह भीख मांगने के बजाय श्रम का रास्ता चुनती है। द्विवेदी युगीन कवियों के यहाँ शोषितों के प्रति दया या 'उद्धार' का एक सामंती/आभिजात्य भाव था, जैसा कि हीरा डोम की प्रसिद्ध रचना 'एक अछूत की शिकायत' में परिलक्षित होता है। इसके विपरीत, निराला की रचनाओं में शोषित-दलित समाज महज दया का पात्र बनकर नहीं आता, बल्कि वह एक तीखे 'प्रश्न' के रूप में उपस्थित होता है। वह अपने अधिकारों और पूर्ण आत्म-सम्मान के साथ व्यवस्था के सामने खड़ा होता है। कविता की सीमा जहाँ स्थान और काल के सामाजिक विस्तार को पूरी तरह समेट नहीं पाती, वहीं निराला अपनी कहानियों में इस विषय की सामाजिक पहचान को पूर्ण विस्तार देते हैं। 'चतुरी चमारश इसी गद्यात्मक विस्तार की परिणति है।

विधागत संकरता और शिल्प की नवीनता– निराला ने 'चतुरी चमार' के माध्यम से पारंपरिक कथा-ढांचे को पूरी तरह से तोड़ दिया है। प्रसिद्ध मार्क्सवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में: 'देवी और चतुरी चमार में कहानी का पुराना ढांचा टूट गया है अथवा निराला के हाथ से छूट गया है... इनमें परिवेश और पात्र ज्यों के त्यों उठाकर रख दिए गए हैं,

* प्रवक्ता (हिन्दी) राजकीय महाविद्यालय, बिधूना, औरैया (उ.प्र.) भारत

उनका मेकअप नहीं किया गया है।'

इस रचना की विधा को लेकर आलोचना जगत में एक दिलचस्प बहस रही है। वस्तुत: यह रचना किसी एक विधा के खांचे में फिट नहीं बैठती, बल्कि इसमें निम्नलिखित विधाओं का अनूठा संकर रूप दिखाई देता है:

1. **संस्मरण:** लेखक ने अपने जीवन के तीसरे दशक में बैसवारे (उन्नाव) में व्यतीत किए गए समय और चतुरी से जुड़ी वास्तविक स्मृतियों व अनुभूतियों को इसमें संजोया है।
2. **रेखाचित्र:** शब्दों के माध्यम से चतुरी के बाह्य और आंतरिक चरित्र को अत्यंत सजीवता से उकेरा गया है।
3. **आत्मकथात्मक प्रसंग:** साहित्यिक मठाधीशों द्वारा कलकत्ता/शहरों से बहिष्कृत किए जाने के बाद निराला के स्वयं के निर्वासन का सत्य इसमें बोलता है।
4. **ललित निबंध और रिपोर्ताज:** ग्रामीण परिवेश के दृश्यों का जीवंत और तीखा वर्णन इसे रिपोर्ताज के स्तर तक उठा देता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुकरण पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह रचना 'बारह आना कहानी है और शेष चार आना में अन्य विधाओं के तत्व हैं।' कहानी की बनावट को गति देने वाले तीन मुख्य प्रसंग हैं:

1. निर्गुण गवौने और भगत जगाने का प्रसंग, जिससे श्वाजिब उल अर्जश् की सामंती पीड़ा उभरती है।
2. अर्जुनवा (चतुरी का पोता) की शिक्षा और उस रास्ते में खड़ी सामाजिक-जातीय दीवार।
3. जमीन पर डिक्री का जमींदारी फरमान और अंतत: विधिक रूप से उस सामंती भय का अवसान।

'वाजिब उल अर्ज' परंपरा और सामंती शोषण का संजाल- कहानी का वैचारिक तनाव 'वाजिब उल अर्ज' के इर्द-गिर्द बुना गया है। 'वाजिब उल अर्ज' वास्तव में परंपरा से चले आ रहे वे लिखित और अलिखित मध्यकालीन सामंती कानून और दस्तावेज थे, जिनकी आड़ लेकर जमींदार, तालुकदार और उच्च जातियाँ भूमिहीन किसानों, मजदूरों और दलितों के श्रम का क्रूरतापूर्वक शोषण करती थीं। चतुरी इसी शोषण के चक्रव्यूह में फंसा हुआ है। निराला उसके इस आंतरिक द्वंद्व को बहुत मार्मिक शब्दों में व्यक्त करते हैं:'वह एक ऐसे जाल में फंसा है जिसे वह काटना चाहता है... भीतर से उसका पूरा जोर उमड़ पड़ रहा है पर एक कमजोरी है जिसमें बार-बार उलझकर रह जाता है।'

चतुरी की यह चिंता महज उसके तात्कालिक जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि वह अपने भविष्य (अपनी आने वाली पीढ़ी) को भी इस शोषण-तंत्र से मुक्त कराना चाहता है। कहानी का अंत इसी चिंता के निवारण के साथ होता है, जब कानूनी तौर पर यह स्पष्ट हो जाता है कि 'काका, जूता और पुर वाली बात अब्दुल अर्ज (वाजिब उल अर्ज) में दर्ज नहीं है'। यहाँ चतुरी की जीत पारंपरिक सामंती कानूनों के बरक्स आधुनिक कानूनी और लोकतांत्रिक व्यवस्था के प्रति उसके बढ़ते विश्वास को प्रकट करती है।

नव-जागरण के दो ध्रुव: डॉ. रामविलास शर्मा की स्थापना बनाम आदि हिन्दू आंदोलन- एक अत्यंत महत्वपूर्ण विमर्श यह है कि चतुरी के भीतर इस सामाजिक बदलाव और अधिकारों के प्रति चेतना का उदय कहाँ से होता है? डॉ. रामविलास शर्मा अपनी पुस्तक 'निराला की साहित्य साधना' में इस यथार्थवादी चेतना का श्रेय अवध के तत्कालीन किसान आंदोलन और निराला के उससे जुड़ाव को देते हैं।

परंतु, कहानी के सूक्ष्म पाठ से यह स्थापना पूरी तरह पुष्ट नहीं होती। निराला के यहाँ ग्रामीण जीवन के प्रति कोई रूमानी या काल्पनिक दृष्टिकोण (खामख्याली) नहीं है। वे कलकत्ता जैसे आधुनिक नव-जागरण के केंद्र में रह चुके थे, अत: बैसवारे के पाषाण काल जैसे पिछड़े ग्रामीण समाज के प्रति उनके मन में एक तरह का हेय भाव और अलगाव था। वे इस कूपमंडूकता से बाहर निकलने के लिए व्याकुल दिखाई देते हैं।

वास्तव में, चतुरी के भीतर की इस चेतना को समझने के लिए हमें 1920 के दशक में उत्तार भारत में स्वामी अछूतानंद 'हरिहर' द्वारा चलाए गए 'आदि हिन्दू आंदोलन' के आलोक में देखना होगा। इस आंदोलन ने दलित दृष्टि से धर्म, परंपरा और सामाजिक मान्यताओं को पुनर्परिभाषित किया था।

विश्लेषण के आयाम	**पारंपरिक दृष्टिकोण (डॉ. रामविलास शर्मा)**	**नवीन शोधपरक दृष्टिकोण (आदि हिन्दू आंदोलन)**
चेतना का स्रोत	अवध का किसान आंदोलन	आदि हिन्दू आंदोलन और कबीरपंथ का वैचारिक प्रसार
परिवर्तन का माध्यम	वर्गीय संघर्ष और आर्थिक अधिकार	शिक्षा, विधिक जागरूकता और सामाजिक अस्मिता
निराला की भूमिका	वैचारिक किसान-हितैषी मार्गदर्शक	गहन मानवीय संवेदना और वेदांती समता बोध

कहानी में चतुरी का कबीरपंथी होना महज एक संयोग नहीं है। आदि हिन्दू आंदोलन का केंद्रीय शब्द 'आदि' था, जिसके तहत देश की मूल निवासी मेहनतकश जातियों को 'आदि निवासी' माना गया (जैसे दक्षिण में आदि द्रविड़, पंजाब में आदि धर्म)। चतुरी इसी वैचारिक नव-जागरण की उपज है, जिसके कारण वह हीरा डोम जैसी निरीहता से आगे बढ़कर एक 'चतुर' और सचेत नागरिक के रूप में उभरता है।

भाषाई सोद्देश्यता: 'आदिको' शब्द की सायास विरचना- निराला अपने स्वभाव में भले ही फक्कड़ और मस्तमौला रहे हों, परंतु अपनी साहित्यिक भाषा के चयन में वे सर्वदा सजग, नियंत्रित और सायास थे। कहानी में एक अनूठा शब्द 'आदिको' तीन अलग-अलग प्रसंगों में आया है, जो निराला के गहरे भाषाई व्यंग्य और सामाजिक समझ को प्रकट करता है:

1. **साहित्यिक मठाधीशों पर व्यंग्य:** 'चतुरी चतुर्वेदी आदिको से संत साहित्य का अधिक मर्मज्ञ है...' यहाँ निराला उन तथाकथित उच्चवर्णीय संपादकों पर चोट करते हैं जो केवल पत्रिकाओं का संपादन करते हैं, जबकि चतुरी जैसा कर्मयोगी जूतों का संपादन करते हुए भी जीवन दर्शन को बेहतर समझता है।
2. **ग्रामीण निम्न जातियों का प्रसंग:** 'कई घरों की लड़के बच्चे समेत श्चरस रसिक रघुपति लोध आदिकोश् के सहयोग से मजीरे ढफलियां आदि लेकर वह रात आठ बजे आकर डट गया...' यहाँ यह शब्द सामूहिक श्रमजीवी अस्मिता को रेखांकित करता है।
3. **राष्ट्रीय आंदोलन की विफलता पर कटाक्ष:** 'इन्हीं दिनों देश में आंदोलन जोरों का चला यही जो चतुरी आदिको के कारण फिस्स हो गया...'

यहाँ 1930 के दशक के पूना पैक्ट और पृथक निर्वाचन के दौर के हिंदू समाज के अंतर्विरोधों पर तीखा प्रहार है, जहाँ मुख्यधारा का आंदोलन दलितों की वास्तविक आकांक्षाओं को समेटने में विफल रहा।

निराला ने 'आदि' (अव्यय) के साथ 'को' (कर्म कारक विभक्ति) लगाकर तत्कालीन भद्र समाज की उस बनावटी सहानुभूति और भीतर छिपे वर्चस्ववादी रवैये (बनावटी आदिक) पर तीखा प्रहार किया है, जो 'विशाल भारत' या 'चाँद' जैसी पत्रिकाओं में दलित उद्धार के नाम पर महज हिंदुओं की संख्या कम न होने देने की चिंता से ग्रस्त थे।

मानवीय संवेदना, वेदांत और सामाजिक न्याय का पक्ष – पात्र के रूप में निराला का चतुरी के प्रति जुड़ाव क्रमिक रूप से विकसित होता है। आरंभिक संकोच और अनिच्छा के बाद, जैसे-जैसे सामंती दमन बढ़ता है, निराला का जुड़ाव गहरा होता जाता है और वे अपने घर को 'हाउस ऑफ कॉमन्स' का रूप दे देते हैं, जहाँ केवल शूद्र और दलित समाज के लोग आनंद, उत्सव और तत्वज्ञान की चर्चा के लिए जुटते हैं।

वैचारिक रूप से निराला जहाँ स्वामी विवेकानंद और शंकराचार्य के वेदांत दर्शन से प्रभावित थे, वहीं उनका तीव्र ऐंद्रिक बोध उन्हें यथार्थ की धरती पर बनाए रखता था। जब चतुरी का पोता 'अर्जुनवा' ब्राह्मण बालकों के सामाजिक प्रहार से भीतर ही भीतर आक्रोश से सुलगता है, तो निराला उसके इस आंतरिक संताप और वेदना को तुरंत पहचान लेते हैं। यद्यपि निराला यह जानते हैं कि इस व्यवस्था की जड़ें इतनी गहरी हैं कि उन्हें आसानी से मारना 'सहज साध्य नहीं है', फिर भी वे व्यावहारिक धरातल पर बदलाव के पक्ष में खड़े होते हैं। जब उनका स्वयं का पुत्र इस जातीय विषमता को लागू करने का प्रयास करता है, तो निराला अपने पुत्र के विरोध में जाकर दलित बालक अर्जुनवा के पक्ष में खड़े होते हैं और चतुरी के मुकदमे के लिए गवाह तैयार करते हैं।

निष्कर्ष – निराला की कहानी 'चतुरी चमार' का निष्कर्ष आने वाले एक नए, लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण समय की ओर ठोस संकेत करता है। यह कहानी स्पष्ट करती है कि भारत का शोषित और दलित समाज अब केवल करुणा या उद्धार का याचक नहीं रहा, बल्कि वह चेतना के धरातल पर पूरी तरह आत्मनिर्भर और संपन्न हो चुका है। वह अपनी मुक्ति का मार्ग सामंती दया में नहीं, बल्कि 'शिक्षा' और 'कानूनी लोकतांत्रिक ढांचे' के भीतर तलाश रहा है। चतुरी का यह विश्वास कि शिक्षित होना ही इस दलदल से बाहर निकलने का एकमात्र रास्ता है, आधुनिक दलित चेतना का मुख्य प्रस्थान बिंदु है। निराला का यह आलेख रूपी कथा-शिल्प सामाजिक विषमताओं पर महज एक बौद्धिक विलाप नहीं है, बल्कि यह हाशिए के समाज के आत्म-सम्मान, संघर्ष और विधिक विजय का एक कालजयी ऐतिहासिक दस्तावेज है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, चतुरी चमार, किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. शर्मा, डॉ. रामविलास, निराला की साहित्य साधना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. नवल, डॉ. नंदकिशोर (संपा.), निराला रचनावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. भारती, कँवल, दलित साहित्य की अवधारणा और निराला, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. जाटव, डॉ. डी. आर., भारत में दलित चेतना और स्वामी अछूतानंद 'हरिहर', समता प्रकाशन, जयपुर।
6. द्विवेदी, आचार्य हजारीप्रसाद, हिन्दी साहित्य: उद्‌भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. वर्मा, महादेवी, पथ के साथी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

****